जीवन सुधा

लेखकाङ्क

दिसम्बर १९३७

सम्पादक
यशपाल जैन
बी. ए. एल-एल. बी

इस अङ्क का मूल्य २)

उत्तरीय भारत की

प्रमुख सचित्र

जीवन-सुधा

मासिक पत्रिका

के लिये **रचनाएं** भेजकर

तथा

ग्राहक बन कर और बना कर

कृतार्थ कीजिए।

वर्ष में दो सुन्दर

विशेषांक

भी आपको बिना मूल्य भेंट किए जावेंगे।

सम्पादक—यशपाल जैन
बी० ए०, एल-एल० बी०

पृष्ठ संख्या ८०
वार्षिक चन्दा ४)
साधारण अंक का मूल्य ।=)

निवेदक—व्यवस्थापक
जीवन-सुधा
चांदनी चौक, दिल्ली

Title printed at Popular Press, Delhi.

जीवन सुधा—

ले-ख-कां-क

विशेषांक

सम्पादक

यशपाल जैन

बी. ए., एल-एल. बी.

पृष्ठ संख्या २६०  चित्र संख्या ४०

—प्रकाशक—

बृहत् आयुर्वेदीय औषध भाण्डार

जौहरी बाजार देहली

वार्षिक मूल्य ४) | इस अङ्क का मूल्य २)

Printed and published प्रकाशक तथा मुद्रक—पं० महावीर प्रसाद त्रिपाठी वैद्य, मोहन प्रेस दिल्ली में मुद्रित

आवश्यक सूचनाएँ



१. रचनाएँ कागज पर केवल एक ही ओर शुद्ध व साफ तौर पर जगह छोड़ कर लिखी होनी चाहिए। पैंसिल से लिखी हुई रचनाएँ स्वीकार नहीं की जावेंगी।

२. अश्लील रचनाएँ नहीं आनी चाहियें।

३. अस्वीकृत रचनाएँ तभी लौटाई जासकेगी जबकि उनके साथ जरूरी टिकट होंगी।

४. समालोचना के लिए पुस्तक की दो प्रतियाँ आनी चाहिये। एक पुस्तक पर केवल स्वीकृति मात्र ही दी जा सकेगी।

सम्पादक—
जीवन सुधा चाँदनी चौक
दिल्ली



विषय-सूची





देश की वीर देवी



स्वर्गीया माता स्वरूपरानी नहरू

माता स्वरूप रानी के देहावसान की सूचना पाकर हमें अकथनीय वेदना हुई है। माता जी देश की एक वीर देवी थीं; उनका देश प्रेम ही सबसे बड़ा अनुराग था, उसी के निमित्त उन्होंने अपने सुपुत्र जवाहरलाल जी तथा पति स्वर्गीय पं० मोतीलाल जी एवं अन्य कुटम्बियों को सहर्ष समर्पित कर दिया था—स्वयं भी पीछे न रहीं, स्वतन्त्रता के संग्राम में बहादुरी से लड़ीं और कई बार लाठी प्रहार भी हंसते हंसते सहे।

पं० जवाहरलाल जी तथा उनके कुटुम्बियों के साथ संवेदना प्रगट करते हुये हम ईश्वर से प्रार्थना करते हैं कि वे माता स्वरूपरानी की स्वर्गीय पवित्र आत्मा को शांति दें और शोक पीड़ित परिवार को इस अपार दुःख के सहने की शक्ति प्रदान करें।

सम्पादक



स्वर्गीय राजवैद्य, शीतलप्रसाद जी, रसायन शास्त्री
('जीवन-सुधा' के जन्मदाता)



वर्ष ७ } वि० सम्वत् १९९४, वीर निर्वाण सम्वत् २४६५ { दिसम्बर-जनवरी १९३७

प्रभु या दास ?

[श्री मैथिलीशरण गुप्त]

—:—

बुलाता है किसे हरे हरे,
वह प्रभु है अथवा दास ?
उसे आने का कष्ट न दे अरे,
जा तू ही उसके पास ।

———

विलम्ब

[श्री दिनेश नंदिनी]

—*—

परदेशी,

तुम्हारे आगमन में विलम्ब क्यों हुआ ?

यौवन की संध्या अलसा गई, जीवन की संध्या में रूप का ज्वार स्थित रहा,

कोकिला की मौन ने वसन्त के आगमन को बांध रखा,

उषा के लाल कपोलों पर प्रतीक्षा का ज्वार ज्यों का त्यों ढुलका रहा।

वाणी शृंगार से बेवसी उगल पड़ी।

यौवन की संध्या अलसा गई, न जाने भैया मेरे ! तुम्हारे—

आगमन में विलम्ब क्यों हुआ ???

————

मत बना !

सखी !

मुझे शृंगारकला में पटु न बना, वे तो मुझे देखते ही मुख मोड़ लेते हैं।

वसन्त ! मेरे कौमार्य का कटि-बंध ढीला न कर। वे तो मेरी छाया मात्र से भड़क कर दूर भागते हैं;

मनोज ! मेरी कनक देह में अपना आवास न बना;

उनके मेरे बीच तो अवज्ञा का अरुणा-चल खड़ा है !!

—



श्री मैथिली शरण गुप्त

मिलन

[श्री रामकुमार वर्मा]

—※—

मेरी साँसों की धारा।
कितने जीवन में बह कर,
पा सकी न कूल किनारा॥
दुख-अन्धकार फैला था,
मरुभूमि सदृश थी आशा,
उस समय तुम्हारी स्मृति के—
आँसू ने दिया सहारा॥
जीवन की कठिन शिलाएँ,
जब मार्ग रोक लेती थीं,
तब नीचे से किस ध्वनि में-
तुमने था मुझे पुकारा॥
इस विस्तृत नभ के नीचे,
जीवन-संध्या छाई थी।
तब झिल मिल प्रतिबिम्बित था-
चिर प्रेम-मिलन का तारा॥
जब तक बहती जावेगी,
यह दो लहरों की धारा,
मैं, मैं न रहूँ, साँसों में,
बहता हो रूप तुम्हारा॥

——

श्रीमती वर्मा की काव्य-साधना

[श्री प्रताप नारायण सिंह 'पद्म']

—:※:—

कविता शाब्दिक परिभाषा की वस्तु नहीं है। वह हृदय की निर्झरणी है जो स्वच्छंदता पूर्वक हंसती, विहँसती तथा किलकती हुई प्रवाहित होती है। कविता को परिभाषा में परिमित करने के प्रयत्न सैकड़ों वर्ष पूर्व से हो रहे हैं। किसी ने कुछ कहा तो किसी दूसरे ने कुछ और। इस प्रकार अनेक विद्वानों ने अनेक परिभाषाएँ कीं; परन्तु एक के विचार दूसरे से भिन्न ही रहे। हम सभी विद्वानों की परिभाषाओं में से हिंदी संसार के सर्व श्रेष्ठ समालोचक रामचन्द्र जी शुक्ल की परिभाषा को सर्वोत्कृष्ट समझते हैं। "कविता ही मनुष्य के हृदय को स्वार्थ-संबंधों के संकुचित मंडल से ऊपर उठाकर लोक-सामान्य भावभूमि पर ले जाती है जहाँ जगत् की नाना गतियों के मार्मिक स्वरूप का साक्षात्कार और शुद्ध अनुभूतियों का संचार होता है। इस भूमि पर पहुँचे हुए मनुष्य को कुछ काल के लिये अपना पता नहीं रहता। वह अपनी सत्ता लोक सत्ता में लीन किए रहता है। उसकी अनुभूति सबकी होती है या हो सकती है।" वस्तुतः सच्ची कविता वह है जो एक के हृदय से होकर दूसरे के हृदय में समावेश कर जावे अथवा जिस कविता के पढ़ने से मानव जाति काल और सीमा को भूल जाती है। सभी कोई देखते हैं गर्वोन्नत हिमालय को, कल-कल करती हुई प्रवाहिता जाह्नवी को; परन्तु उसे कवि अपनी साधारण आंखों से नहीं देखता वरन् अपने अंतर्चक्षु से देखता है जिसमें परिकल्पना का समन्वय रहता है। अतः उसे हिमालय में 'तपस्या लीन यती' का आभास होता है और वह जाह्नवी को प्रियतम की पद-धूलि के अन्वेषण में निरत पाता है। इस प्रकार बाह्य जगत् अंतर्जगत में समाविष्ट हो, एक अभिनव ज्योति से युक्त होकर हमारे सम्मुख उपस्थित होता है। जिस कविता में हृदय की सच्ची अनुभूति और कल्पना का सामंजस्य होगा वही स्वान्तः सुखाय के साथ ही लोक-हित में भी समर्थ हो सकेगी। जिन कविताओं का निर्माण सिर्फ कला को ही सम्मुख रखकर किया जाता है वह कभी भी, दो-चार व्यक्तियों को छोड़कर, सभी के द्वारा आदृत तथा सम्मानित नहीं हो सकेगीं।

प्रागैतिहास के अध्ययन से पता चलता है कि प्राचीन काल में यहाँ बहुत-सी रमणियाँ विदुषी तथा साहित्य-मर्मज्ञा थीं। उन्होंने अपनी विद्वता से कितने विद्वानों को पराजित किया था। कुछ समय पूर्व भारतीय रमणियाँ हिंदी-साहित्य-सेवा से विमुख थीं अर्थात हिंदी-क्षेत्र में उनका पदार्पण नहीं हुआ था; परन्तु आज यह देख कर प्रसन्नता होती है कि हिंदी-संसार रमणियों से सूना नहीं है। उसमें एक से एक बढ़ कर रत्न उद्भासित हो रहे हैं। उन्हीं रत्नों में से श्रीमती महादेवी वर्मा भी एक हैं, जो अपनी अनुपम काँति तथा निराली सुषमा के कारण उद्दीप्त हो रही हैं। इनका हिंदी-संसार में अपना खास स्थान है। हिंदी के सर्वोच्च स्थान-प्राप्त कवि सुमित्रानंदन जी पंत के उपराँत इन्हीं की परिगणना होती है। कितने विद्वान इन्हें दूसरी मीरा कहा करते हैं, जो सर्वथा उपयुक्त ही है।

इनकी कविताओं का प्रधान विषय वेदना, करुणा, लघुता और नश्वरता है। संसार में सुख, दुख सर्वदा से रहते आये हैं। हम किसी के

सुख में न प्रसन्न होते हैं और न उत्फुल्ल ही; परन्तु किसी क्षुधा-पीड़ित भिखारी को देख कर, जिस का पेट पीठ में मिलता जा रहा है हमारे हृदय में करुणा का स्त्रोत उमड़ पड़ता है। इससे प्रकट हो जाता है कि दूसरे के दुख से हम दया-द्रवित होकर उसके कष्ट का निवारण नहीं भी करें; परन्तु उसके प्रति सहानुभूति अवश्य करेंगे। यदि कोई किसी मृत्यु का समाचार सुनता है तो ये शब्द उसके हृदय से अवश्य ही निकल पड़ते हैं–हाय! वह मर गया! चाहे मृत्यु-ग्रस्त आदमी उससे परिचित हो अथवा अपरिचित। सुख दो व्यक्तियों के बीच में दीवाल के सदृश आकर उपस्थित हो जाता है। उसके मद से मानव जाति प्रमत्त हो जाती है और साथ ही अंधी भी। उसकी आँखों में मद लाल रंग का स्वरूप धारण कर आविर्भूत होता है जिसके कारण वह अपने आपको भी भूल जाती है; परन्तु दुख में ऐसी बातें नहीं पाई जातीं। दुख मानव जाति को मानवता की सामान्य अनुभूति-भूमि परसे विचलित नहीं होने देता। वह सबों को अनुराग के रंगों में अनुरंजित किये रहता है। उस समय उसे कोई पराया नहीं मालूम होता, सब अपने-से दीख पड़ते हैं। इस प्रकार जहाँ सुख मनुष्य को अभिमानी, प्रमत्त तथा अन्धा बना देता है वहाँ दुख उसको विनयी, नम्र तथा विचारशील बनाता है। अतएव हम श्रीमती वर्मा को वेदना का स्वागत तथा उसकी कामना करते हुए पाते हैं।

जीवन के दो प्रधान अंग होते हैं—गाना (सुख) और रोना (दुख)। जब मनुष्य उल्लसित तथा प्रफुल्लित रहता है उस समय 'गाने' में ही आनंद की उपलब्धि होती है। किसी को सुख के दिनों में 'रोना' नहीं भाता। जब मनुष्य का हृदय व्यथा-पीड़ित तथा विमर्दित रहता है तब उसको रोने से कभी अवकाश ही नहीं मिलता। इसी भाव को वर्तमान काल के राष्ट्रीय कवि मैथिलीशरण जी गुप्त ने इन पंक्तियों में अभिव्यक्त किया है:–

"रोना-गाना बस यही जीवन के दो अंग।"

श्रीमती वर्मा इस विषय की वेदना से व्यथित होकर रोने में ही सुख मानती हैं।

इनकी कृतियाँ (कविता-संग्रह) निम्नलिखित अनुक्रम के अनुसार प्रकाशित हुई हैं—'नीहार' 'रश्मि' 'नीरजा' और 'सांध्य गीत'। 'सांध्य-गीत' का प्रकाशन अभी हाल में ही हुआ है। ये पुस्तकें एक-से एक बढ़कर हैं। 'नीहार' में सूक्ष्म परिकल्पनाओं तथा उद्भावनाओं की अधिकता है। इसमें सूक्ष्म कल्पनाओं का कुशलता से समावेश हो सका है। 'रश्मि' की कविताओं में गम्भीर दार्शनिक भावनायें पाई जाती हैं। 'नीरजा' में श्रीमती वर्मा की अलंकरण प्रियता और प्रकृति की सुषमा के प्रति विह्वलता के भाव परिलक्षित होते हैं। और 'सांध्य-गीत' में सर्वोत्कृष्ट सरस, सुस्निग्ध और मधुरतम गीतों का संग्रह है।

अर्वाचीन काल में ऐसा कोई भी क्षेत्र नहीं है जिसमें किसी न किसी रूप में 'वाद' की उत्पत्ति न हुई हो? यदि हम इस युग को 'वादों' का आविर्भाव काल' कहें तो कोई अत्युक्ति न होगी। हिन्दी कविताओं में भी बहुत-से 'वादों' की सृष्टि हुई है। उसमें छायावाद, हृदयवाद, निराशावाद, हाला वाद, आदि प्रमुख हैं। अब यह विचारणीय है कि श्रीमती वर्मा की कविताओं की परिगणना किस 'वाद' में की जानी चाहिए। कोई कवि कविता की रचना 'वाद' को सम्मुख रखकर नहीं करता। यदि करता है तो उसकी कविता साम्प्रदायिकता के कारण लक्ष्य-भ्रष्ट हो जाती है। कविता हृदय का उद्गार है। वह स्वयं ही कवि-हृदय से धारा के समान फूट पड़ती है। कविता मस्तिष्क की वस्तु नहीं, हृदय की है। इस प्रकार यह स्पष्ट हो गया कि किसी भी कवि की सभी कविताऐं एक ही 'वाद' के अंतर्गत परिमित नहीं हो सकतीं। श्रीमती वर्मा की अधिकांश कविताएं 'हृदयवाद' के अन्तर्गत आ सकती हैं। हृदयवाद के विषय में कुछ कहने के पहले

छायावाद क्या है, यह जान लेना भी आवश्यक हो जाता है। कवीन्द्र रवीन्द्र के शब्दों में कहेंगे—"The Poetry of mysticism might be defined on the one hand as a temperamental reaction to the vision of reality, on the other as a form of a prophecy".

भाव यही है कि छायावादी कविता एक ओर तो सत्य के स्वरूप की ओर निर्देश करती है दूसरी ओर एक भविष्यवाणी का रूप ग्रहण करती है। एक ओर उसकी छाया में सांत का मिलाप अनन्त से होता है और दूसरी ओर वह एक अमर सन्देश का वहन करती है। *जो वस्तु अथवा विषय हृदय को बहुत ही प्रिय है, सुखद है तथा आनन्द स्रोत में बहाने वाला है, उसकी परिकल्पना तथा उद्भावना ही हृदय वाद की सृष्टि करती है। इसमें कवि की प्राकृतिक-सुषमा के प्रति जिज्ञासु-पूर्ण-सरस तथा स्निग्ध कल्पनायें रहती हैं। इनकी कविताएँ हृदयवाद की तो हैं ही; परन्तु इसमें करुण भावों का समावेश हुआ है, जो इनकी विशेषता है।

इस संसार में दुख का ही विस्तृत साम्राज्य है। यहाँ सुख के दर्शन दुर्लभ हैं। यहां वेदना का अकाँड ताँडव और पीड़ाओं का भीषण हाहाकार मचा हुआ है। इस चतुर्दिश दुखमय संसार के बीच रह कर तथा उसका अनुभव कर कवियित्री का जीवन भी दुखमय हो गया है। उनकी आँखों के सम्मुख पीड़ा ही पीड़ा दृष्टिगोचर होती है। अतएव आप उसी में प्रियतम को ढूढ़ती है। यदि आप का प्रियतम मिल भी गया तो भी वे अपनी संगिनी पीड़ा को नहीं विस्मरण करना चाहती। आप प्रियतम में भी पीड़ा की खोज करेंगी।

"पर शेष नहीं होगी यह
मेरे प्राणों का क्रीड़ा,
तुमको पीड़ा में ढूँढा
तुम में ढूँढूँगी पीड़ा।

कितनी वेदना है इसमें। और कितनी है करुणा से ओत प्रोत! कवियित्री की सारी संपत्ति वेदना है, जीवन वेदना है, और उच्छ्वास भी है वेदना से परिपूर्ण।

आप अपने आँसू का हार गूँथती हैं, किसको उपहार देने के लिए? जिसने दुख को पाला है, जो पीड़ा को सुगन्धित चन्दन के सदृश समझता है, जिसे तूफ़ानों की छाया में ही आलिंगन का बोध होता है, जिसे जीवन की पराजय में ही विजयोल्लास की प्राप्ति होती है। देखिए, निम्न लिखित पंक्तियों में पर-दुख-कातरता की कैसी अच्छी व्यंजना हुई है—

"प्रिय जिसने दुख पाला हो !
जिन प्राणों से लिपटी हो,
पीड़ा सुरभित चन्दन-सी;
तूफानों की छाया हो
जिसको प्रिय आलिंगन-सी,
जिसको जीवन की हारें
हों जय के अभिनन्दन-सी,
वर दो यह मेरा आँसू
उसके उर की माला हो !"

वेदना की चोटों से, पीड़ा से, कसक से तथा जलन से जो सुख की प्राप्ति होती है वह किसी दूसरी वस्तु से सुलभ नहीं। पीड़ा और वेदना की ज्वाला में घुल-घुल कर जलने में जैसा मधुर आनंद मिलता है, क्या यह और कहीं संभव है? आपको भी वेदना की 'दीवानी चोटों' के मधुर प्रहार सहने में ही सुख मिलता है—

"मेरी आहें सोती हैं
इन ओठों की ओटों में
मेरा सर्वस्व छिपा है
इन दीवानी चोटों में।"

श्रीमती वर्मा में वेदनामय गीतों की रचना करने की अद्भुत क्षमता है। आप प्रियतम से मिलना चाहती हैं तो वेदनामयी साधना के ही

*—साहित्य समालोचना प्रो०—रामकुमार वर्मा

द्वारा। आपके जीवन का सार वेदना ही है। देखिए निम्नलिखित पंक्तियों में करुणामयी साधना को—

"मधुर-मधुर मेरे दीपक जल !
युग-युग प्रति-दिन, प्रतिक्षण, प्रतिपल;
प्रियतम का पथ आलोकित कर !
सौरभ फैला विपुल धूप बन;
मृदुल मोम-सा घुल रे मृदु तन;
दे प्रकाश का सिंधु अपरिमित,
तेरे जीवन का अणु गल-गल !
पुलक-पुलक मेरे दीपक जल !"

साहित्य और दर्शन का घनिष्ट सम्बन्ध है। उच्च कोटि के साहित्य में दार्शनिकता का अस्तित्व अवश्यमेव रहता है। सूक्ष्म दृष्टि से देखने पर यह स्वत: प्रकट होजाता है। श्रीमती वर्मा की कविता में जगत्, जीव और ब्रह्म की सात्विक विवेचना भी पाई जाती है। जिस प्रकार अश्रु कण का अस्तित्व नेत्रों में तथा जलकणों का अस्तित्व वारिधरों में वर्तमान है, उसी प्रकार असीम का अस्तित्व असीम के बहिर्गत स्थलों में नहीं है— उसी में है। इस भाव की अभिव्यक्ति 'मेरा पता' शीर्षक नामक कविता में स्पष्ट रूपेण हुई है:—

"क्या पता देंगे घनों को वारि-बिन्दु अपार ?
क्या नहीं दृग जानते निज आंसुओं का भार ?"

अपना परिचय और इतिहास देते हुए वर्माजी कहती हैं—

मैं नीर भरी दुख की बदली
विस्तृत नभ का कोई कोना।
मेरा न कभी अपना होना,
परिचय इतना इतिहास यही
उमड़ी कल थी मिट आज चली,
मैं नीर भरी दुख की बदली।

ब्रह्म (प्रियतम) के वियोग के कारण भव्य कवियों की आत्माएं सर्वदा उद्विग्न रहा करती थीं। उनकी आत्मायें व्याकुलता का शिकार बन रही थीं। उन भक्त कवियों में से कुछ के प्रियतम निराकार थे, कुछ के साकार। श्रीमती वर्मा भी अपने प्रियतम की उपासना वियोगिनी के सदृश करती हैं। उनके प्रियतम निराकार नहीं साकार रूप में परिवर्तमान हैं:-

"मुझे न जाना अलि ! उसने
जाना इन आंखों का पानी;
मैंने देखा उसे नहीं
पदध्वनि है केवल पहचानी।
मेरे मानस में उसकी स्मृति
भी तो स्मृति बन आती;
उसके नीरव-मन्दिर में
काया भी छाया होजाती;
क्यों यह निर्मम खेल सजनि !
उसने मुझसे खेला है ?"

ललित कला के पांच भेदों में से काव्य भी एक है। यहाँ हम इसका 'संकुचित' अर्थ ले रहे हैं। काव्य की परिगणना सर्व श्रेष्ठ कलाओं में होती है। काव्य कला और संगीत कला का अन्योन्याश्रय का भाव तो है ही, साथ ही चित्रकला का संबंध भी कुछ कम नहीं है। जिस कविता में मधुर हृदय-स्पर्शी तथा सरस कल्पनाएं रहती हैं और साथ ही जिसके पढ़ने से हमारे नेत्रों के सामने भाव चित्र रूप में प्रकटित होते हैं, उसकी परिगणना सर्वोत्कृष्ट कविता में होती है। निम्नलिखित पंक्तियों में प्रात:कालीन अनुरंजित आकाश, सुगंधित वायु का बहना, वृक्षों के पल्लव का हिलना, बाल-तितली का उड़ना, आदि भावों की बड़ी सुन्दर व्यंजना हुई है—

" सौरभ का फैला केश-जाल
करतीं समीर-परियां विहार;
गीली केसर मद झूम-झूम,
पीते तितली के नव कुमार;
मर्मर का मधु-संगीत छेड़—
देते हैं हिल पल्लव प्रतान!"

इसके पढ़ने से प्रात:कालीन नैसर्गिक सुषमा का चित्र-सा खिंच जाता है।

इस विश्व में मानव जाति जितने कर्म करती हैं उन सबों के अंतर्गत उसका स्वार्थ सन्निहित रहता है स्वार्थ का व्यापक रूप ही परमार्थ है। विश्व-वैद्य बापू जी का स्वार्थ देश-सेवा और जनता का कल्याण करना ही है। हम कह सकते हैं कि पूज्य गांधी जी ने परमार्थ(परमार्थ शब्द को नहीं, उसके अर्थ को) को ही स्वार्थ बना लिया है। श्रीमती वर्मा अपने आराध्य की अर्चना इसलिये नहीं करती हैं कि उन्हें अमरता की प्राप्ति हो, बल्कि ऐसा करना उनका कर्तव्य है। यहाँ किसी का यह कहना कि श्रीमती वर्मा स्वार्थ-रहित होकर अपने प्रियतम की प्रार्थना करती हैं, ग़लत होगा। आप में स्वार्थ का सूक्ष्मरूप अंतर्निहित है, अमरता की प्राप्ति होने पर मनुष्य के पास जो एक मर मिटने का अधिकार रहता है, वह सदा के लिये जाता रहता है। अतएव आप अपने मिटने के अधिकार को सुरक्षित रखना चाहती हैं, खोना नहीं चाहतीं—

"क्या अमरों का लोक मिलेगा
तेरी करुणा का उपहार ?
रहने दो हे देव ! अरे
यह मेरा मिटने का अधिकार ।"

जब कोई अपने कर्म में अनवरत निरत रहता है तब वह फल की प्राप्ति के आनंद का उपभोग उस साधना में ही करता है। वह प्रत्येक क्षण आनंदोदधि में डुबकी लगाता रहता है। जब उसका अभीष्ट सिद्ध हो जाता है तो उसे पुन: आनन्द की उपलब्धि नहीं होती। फल की प्राप्ति के कुछ समय के अनंतर ही आनन्द विलीन हो जाता है। हम कह सकते हैं जो सुख प्रयत्न या साधना में प्राप्त होता है वह फल की प्राप्ति पर सम्भव नहीं। श्रीमती वर्मा अपने प्रियतम से प्रार्थना करती हैं कि इस क्षितिज के उस पार सन्निकट ही रहो। आप प्रियतम की प्राप्ति के लिये प्रयत्न करती हैं; परन्तु प्राप्ति की कामना से नहीं; बल्कि आप सदा प्रयत्नवान् ही रहना चाहती हैं:—

"इस अचल क्षितिज-रेखा से,
तुम रहो निकट जीवन के,
पर तुम्हें पकड़ पाने के
सारे प्रयत्न हों फीके।"

इस संसार के सारे कार्य आशा पर ही निर्भर होते हैं। यदि किसी को एक बार किसी काम में सफलता नहीं मिली तो वह सोचता है कि दूसरी बार अवश्य सफल होऊँगा। बिना आशा के कोई कार्य हो ही नहीं सकता। श्रीमती वर्मा जी जीवन-रूपी-पात्र में दुःख की वारुणी से परिपूर्ण प्याली को भरकर कुछ देर तक प्रतीक्षा करती हैं कि किसी असीम शक्ति के स्पर्श से जीवन सफलीभूत हो जायगा। उस प्याली में सुख-दुख के बुद-बुदे कैसे उठते हैं और विलीन हो जाते हैं—

"सुख-दुख की बुद्-बुद् सी लड़ियां
बन-बन उसमें मिट जातीं,
बूंद-बूंद होकर भरती वह,
भर कर छलक-छलक जातीं।"

नव रसों में से हम करुण रस को ही सर्व श्रेष्ठ मानते हैं। कितने विद्वान शृंगार-रस को 'रसराज' की उपाधि देते हैं, पर हम उनसे सहमत नहीं हैं। करुण रस की श्रेष्ठता के विषय में दो शब्द कह देना अनुचित न होगा। यहां हमारा विचार करुणा रस का विश्लेषण करना नहीं है। सिर्फ दो-चार विद्वानों के विचारों को उद्धृत कर देने से ही हमारे विचार की पुष्टि हो जायगी! आदि कवि वाल्मीकि के हृदय से क्रौंच पक्षी के बध की व्यथा से आदि श्लोक "मा निषाद"···उद्गार के रूप में प्रकट हुआ था। इसके उद्धृत होने का एक मात्र कारण करुणा ही है। सभी विद्वान् इसी श्लोक को पहिली कविता मानते हैं। इधर हिंदी-संसार के कविवर सुमित्रा नन्दन जी पंत भी कहते हैं—

"वियोगी होगा पहला कवि,
आह से उपजा होगा गान;
उमड़कर आंखों से चुपचाप,
बही होगी कविता अनजान ॥"

इसी भाव की अभिव्यक्ति शैली कवि की निम्नलिखित पंक्तियों में हुई है :—

"Our sweetest songs are those
That tell of saddest thoughts."

आपकी रचनाएं अंगरेजी की आलंकारिता, भाषा शैली तथा भावनाओं से प्रभावित हुई हैं। आपकी कविताओं में स्निग्धता, सरसता, सरलता सजीवता तथा स्निग्ध प्रवाह है। कविताओं में अंतर तम के निगूढ़तम भावनाओं की बारीकी से व्यंजना हुई है। आपकी कविताओं के प्रत्येक शब्द से सुषमा, सौष्ठव तथा अंत:प्रदेश की मधुरतम आशा टपकी पड़ती है जो सुज्ञान-वारि से अभिसिंचित है। कविताओं की प्रत्येक पंक्ति हृदय से निकली हुई प्रतीत होती है। भावों में मार्मिकता और सुबोधता है, उलझन तो लेश-मात्र भी नहीं। आपकी प्राय: सभी कविताएं मधुरता की मधुर धारा से परिप्लावित हैं। आपकी भाषा भी भाव के अनरूप ही है। यह प्रवाह युक्त, संयत तथा परिमार्जित रूप में प्रयुक्त हुई है। भाषा पर आपका अधिकार है आप उसे अपनी इच्छानुसार जिधर चाहती हैं, उधर मोड़ लेती हैं।

जीवन-राग

[यशपाल, बी. ए. एल-एल. बी.]

—※—

सुनादे एक बार फिर आज—
प्रिये ! जीवन का भूला राग।

चिर—परिचित वीणा ले फिर से,
टूटे तार मिला कर झट से,
तारों से आच्छादित नभ में,
गूंज उठे तव राग।

कम्पित स्वर में गाए तू जब,
जग की सोती पीड़ा भी तब—
अंगड़ाई ले उठे आह भर,
और करे चीत्कार।

शिथिल, क्लांत, सूखा, मेरा तन,
शोकातुर, चिन्तित, व्याकुल, मन
थकित हृदय भी सिहर उठे,
हो भीषण हाहाकार।

सुनादे एक बार फिर आज—
प्रिये ! जीवन का भूला राग।

कहानी—

उस किनारे

[श्री जैनेन्द्रकुमार]

मैं क्यों अपनी कहानी कहने चली हूँ, मैं नहीं जानती। पर यहाँ इतनी ऊँचाई पर चीड़ के दरख्तों से घिरे अस्पताल में पड़े-पड़े कभी बहुत सूना लग आता है। एक ऐसा खोखलापन चारों ओर से मुझे घेर लेता है, कि लील ही लेगा। समय खाली रहता है और उस समय की शून्यता पर अपने इस तमाम जीवन की व्यर्थता यहाँ से वहाँ तक मुझे लिखी जान पड़ती है। उसको सामने देखकर जीना मुश्किल होजाता है। ऐसी ही घड़ी में मैं सोच बैठी हूँ कि चलो अपनी कहानी ही लिखूँ।

खुद ही सोचती हूं कि इसमें किसका क्या लाभ होगा? लाभ कहीं कुछ भी नजर नहीं आता है। जो कहती हूं, क्या वह कभी छपेगा भी? शायद नहीं छपेगा—पर छपने न छपने के बारे में मेरे मन में विचार भी कुछ नहीं है। फिर क्यों मैं कहानी कहती हूं, ठीक ठीक जानती नहीं। इतना जानती हूं कि ऐसे मेरा समय कुछ तो कटेगा। नहीं तो वह नहीं कटता है, उल्टे काटता है।

अस्पताल में हूं। अकेली हूं, बस नौकर एक साथ है। बच्चे दूर हैं और वह—वह भी दूर हैं। पर उनकी बात, उनकी याद करते डर होता है। किस मुंह से वह बात करूं! अपने ही हाथों से मैंने उन्हें दूर कर दिया है। अपने ही हाथों मैंने अपना अभाग्य बनाया है। कभी मेरी सोने की गृहस्थी थी। आज वह सब कुछ उजड़ गया है।

अपने ही कर्मों मैंने उजाड़ा है। और आज यद्यपि मैं जानती हूं कि मुझे छोड़ और कुछ भी नहीं बिगड़ा है, वही गृहस्थी आज भी लहलहाती हुई जुड़ सकती है। पर नहीं, मैं उसके योग्य नहीं।

डाक्टरों ने जान लिया है कि रोग काफ़ी आगे बढ़ गया है, थर्ड स्टेज है। फिर भी यहां के भले डाक्टर को आस है और वह कहता रहता है कि देखो, खुश रहना चाहिये, चिन्ता नहीं करनी चाहिये, आदि। बेचारा डाक्टर! वह मुझे खुश रखता है, बहलाने की बातें करता है, हर प्रकार से वह मुझ पर महरबान है। जाने कैसे मेरे नाम के गौरव के प्रति उसमें संभ्रम है, मेरे प्रति उसका बहुत उदार भाव है—पर बिचारा डाक्टर क्यों नहीं जानता है कि मुझ जैसी के जीने में अब अर्थ शेष नहीं रह गया है। मुझ में भी कुछ शेष नहीं रह गया है। आयु मेरी अभी ३०-३२ वर्ष की है—ठीक है। लेकिन इतनी आयु भी मेरे लिए क्यों बहुत नहीं है। आज तो यही मुझे पता नहीं चल पाता है कि विधाता ने इतने वर्षों का जीवन देकर भी मुझे यहां क्यों भेजा? मैंने क्या किया? किस बल पर मैं अब और अधिक जीने की इच्छा कर सकती हूं?

बरामदे में खाट बिछ जाती है। मैं लेटती हूं तब देखती हूं-सामने सिर्फ फैलावट है; न मकान है; न मनुष्य है; न कोई और है-केवल दृश्य सामने है। जैसे समस्त बस एक चित्र फैला हो, बीच में बाधा कोई न हो। कुछ ही दूर पर धरती ढल गई है। वहां ढाल पर सटे-सटे

बहुत से चीड़ के दरख्त हैं। धरती वह ढलती हुई जाने फिर कहां अथाह में पहुंच गई है। उसके आगे मैदान है, यों बिछा है जैसे प्रतीक्षा में हो। वहां कहीं सफ़ेद पीले मकानों के चिन्ह भी दीखते हैं। कहीं हरियाली इकट्ठी होगई है, कहीं मटमैला रंग भी फैला है। पर दूर होते-होते यह सब कुछ मानों एक धुंधली रेखा में सिमट कर समाप्त होजाता है। फिर क्या रह जाता है, क्या रह जाता है?

बरामदे में खाट पर पड़ी-पड़ी इस अनन्त दूर तक बिछे चित्र को देखती रहती हूं। इसकी समाप्ति कहां है? जहाँ मेरी आंखों की दृष्टि समाप्त है, वहां वह भी समाप्त है। अन्यथा वह अनन्त ही है। इस चित्र के विस्तार में सभी कुछ का स्थान है। मेरा भी कोई स्थान होगा, काली बूंद की भी कोई जगह होगी। वह बूंद अपने आप में तो काली ही है फिर विधाता जाने इस निरंतर बनते हुए और बिगड़ते हुए, फिर भी सदा मौजूद इस चित्र पर मेरी जैसी काली बूंद के कालेपन से किस अभिप्राय की पूर्ति होतीहै? ओह, वह अभिप्राय मेरी समझ में कुछ भी नहीं आता है। होगा अगर वह कुछ, तो होगा। आज तो मैं उस कालेपन से बेहद अधिक त्रस्त हूं।

जान गई हूं, मैं धीमे-धीमे किनारे लग रही हूं। किनारे के उस पार क्या है? कौन जाने। पर जोभी है, अथाह है। उसी अथाह, अगाध, अनन्त के किनारे लगती जारही हूं। कोई यहाँ कुछ कहता है, कोई कुछ कहता है। अनुमान असंख्य हैं। वे सभी झूठ और सभी सच हैं। झूठ इसीलिए कि अनुमान हैं, सच भी इसीलिये कि आखिर अनुमान तो हैं ही। उस किनारे के पार जो गम्भीर वास्तविकता है-पर नहीं, उसकी बात नहीं सोचूंगी। मुझे ख्याल रखना चाहिये कि मेरा स्वास्थ्य ख़राब है। मैं खांसी की ऋणी हूं कि वह बार-बार जल्दी-जल्दी आजाती है और मुझे याद दिला देती है कि मैं एक तुच्छ रोगिणी स्त्री हूं।

मैं तुच्छ हूं, रोगिणी हूं—सचमुच और कुछ नहीं हूं। फिर भी वक्त काटने के लिये यह कहानी कहती हूं। सच कहूं तो मुझ में लोभ बना है कि कभी यह कहानी छपे और लोगों की आंखों में आवे। ऐसा हुआ और लोगों ने मुझपर करुणा की तो मैं आशा करती हूं कि अपने परलोक में मुझे सांत्वना पहुंचेगी। परलोक में मुझे कैसे वह सांत्वना पहुँच जायेगी, यह जानती तो नहीं हूँ। शायद नर्क वहां मेरे लिये तय्यार हो। फिर भी आज यह कहानी लिखते समय मेरे मन में अपने अज्ञात और अनिश्चित पाठक की करुणा पाने की साध तो अवश्य ही है। कहते हैं परलोक की पूँजी धर्म है। सो धम तो मैं कुछ नहीं जानती। पर इस प्रकार की करुणा भी वहां काम आती होगी, ऐसा मेरे मन को लगता है।

कोई हैं जो अन्तर्यामी हैं। वह कहाँ हैं? क्या उनका स्वरूप है? यह मैं कुछ भी नहीं जानती हूं—जानने की चाहना भी नहीं होती है। पर वह अन्तर्यामी तो मेरे भीतर का सब कुछ जानते हैं। उन्हें पाऊँ तो चरणों में निवेदित होकर कहूँ– तुम भला क्या नहीं जानते हो। तब जो कुछ मैंने किया उस पर कैसे तुम जा सकते हो? क्यों कि जो कुछ भी मैं हूं, सबकी सब तुम्हारे आगे प्रगट हूं।

आज ही डाक से एक चिट्ठी आई है। जवाब भी लिख चुकी हूं। चिट्ठी स्वामी की थी। लिखा था कि 'तुम्हारी हालत का पता तुम्हारी माता जी से मिलता रहता है। एक बार तुम्हें देखने आना चाहता हूं। उसके लिये तुम अनुमति दो तो पत्र लिखना। अगर यह सोचो कि मुझे नहीं आना चाहिये तो पत्र मत लिखना।' यह भी लिखा था कि 'सुखदा, देखो, पैसे के, कारण किसी प्रकार का कोई कष्ट मत उठाना। मैंने जवाब में अपनी माता को लिख दिया है कि

अगर उनका पत्र आये तो लिख देना कि मेरी हालत ठीक होती जा रही है, उनके आने की जरूरत नहीं है। और उन्हें यह भी लिख देना कि अगर उनसे बने तो यहां मुझे वह पत्र न भेजा करें।

दोपहर को जब डाक आई थी तभी जबाब में मैंने माँ को ख़त लिख दिया था। अब भी इस तीसरे पहर जब कि अकेले सुनसान में काग़ज़ों को सामने लेकर अपनी कहानी लिखने बैठी हूं, तब भी मालूम होता है कि हतभागिनी मैं ऐसा ही जवाब देने के योग्य थी। मुझसे क्यों नहीं हो सका कि अपने पति से खुलकर लाख-लाख क्षमा मांगलूँ, और लिख दूँ कि तुम तुरन्त आजाओ, जिससे कि तुम्हारे चरणों की धूल अपने माथे में लगाने को पासकूं नहीं तो हर घड़ी मैं अन्त की ओर सरकती जा रही हूँ!—नहीं, मैं वह कुछ भी नहीं लिख सकी। आज इसी से तो अत्यन्त अवश होकर अपने अभाग्य की कहानी कहने बैठी हूं, अन्यथा मन की पीड़ा सही नहीं जाती है।

दो बरस, शायद तीन बरस, बाद यह चिट्ठी उनकी मुझे मिली है। यह दो-तीन बरस किस भांति वह बिना चिट्ठी डाले रहे होंगे, क्या मैं यह नहीं जानती हूँ? और आखिर इन बड़े-बड़े तीन बरसों के बाद किस असह्य सहिष्णुता की सामर्थ्य के कारण यह पत्र लिख सके होंगे, क्या यह भी मैं नहीं जानती हूं? लेकिन आज मैं इसी योग्य हूं कि मां की मार्फ़त उन्हें लिखा दूं कि नहीं, कृपा है; मेरे बारे में सोचने का कष्ट आप न कीजिये.................।

.........पर अब आगे न लिखूंगी। थक गई हूं। इस तरह लिखती ही जाऊंगी तो कहानी भी आरम्भ न होगी,—मन की व्यथा ही निकलेगी। अब छोड़ती हूं। कल से कहानी शुरू करूंगी—बाहर डाक्टर भी आते मालूम होते हैं......।

* * *

डाक्टर के पैरों की आहट मानों सिर पर ही आगई। सुखदा ने झटपट काग़ज छिपा दिया। वह तुरन्त खड़ी हुई कि जाकर खाट पर लेट जाय। वह कुछ घबरा रही थी। पलंग की ओर बढ़ी—पर डाक्टर सामने थे। सुखदा ने अनायास कहा, 'ओह! डाक्टर!'

डाक्टर ने साभिवादन पूछा—

"कहिये, क्या होता था?"

"कुछ नहीं, कुछ नहीं—"

"कुछ नहीं ही सही, पर देखिये इस वक्त दिल और दिमाग़ को आराम मिलना चाहिये।"

सुखदा ने विलक्षण भाव से मुस्करा कर कहा "वही तो मिल रहा है, डाक्टर।"

कह कर वह थकी हुई सी डाक्टर के सामने ही पलंग पर लेट गई। बोली,

"इस करवट लेट सकती हूं?"

"ज़रूर लेट सकती हैं।"

"तो सामने आप बैठिये। कुर्सी ले लीजिये।"

डाक्टर बैठ गये और यथावश्यक बातें होने लगीं।

—:०:—

नीति के दोहे

महात्मा भगवानदीन

— ० —

हित चिन्तक को रिपु समझ, मूरख देय निकार,
सांप समझ अन्धा तजे ज्यों पुष्पों का हार ॥ १ ॥

दाता वह जो दान दे, खुद ग़रीब घर जाय,
पवन जाय ज्यों मूक को नित प्रति गंध सुंघाय ॥ २ ॥

वर्षों जीवित रह मरें इक क्षण ज्योति दिखाय,
ज्यों वर्षों बारूद घिस इक क्षण में उड़ जाय ॥ ३ ॥

रिपु को कोसूं किस तरह रिपु का रिपु मैं आप।
बिजली रिपुता पर पड़े, रिपुता बेशक पाप ॥ ४ ॥

मन को ठण्डा रख सके, बस दे दान अमीर,
जैसे रिजते घड़े में, ठण्डा रहता नीर ॥ ५ ॥

रिपु पुचकारें नृप हमें, रिपु वंछित अपनाय,
आक जवास जराय ज्यों, जल कण दूह उगाय ॥ ६ ॥

उपजे रहे, विनाश हो, ज्ञेय अवस्था तीन,
ब्रह्मा, विष्णु, महेश कह, रहें प्रसन्न प्रवीण ॥ ७ ॥

कलयुग के राजा सभी, हाड़ मांस की मूर्ति,
दर्शन दे सकते हमें, वे न सकें स्फूर्ति ॥ ८ ॥

देव बना पाषाण के, जो पूजे वह मूर्ख,
लगे तोड़ने जो उन्हें, सवा मूर्ख वह मूर्ख ॥ ९ ॥

खट्टी बातें जो करें, दब मीठे बतरांय,
मीठे होते पाल दब, आम जो अति खटरांय ॥ १० ॥

भारतीय, अन्दर न कुछ बाहर गोल मथोल,
जैसे पीछ चुनार की मोटी, भीतर पोल ॥ ११ ॥

दबा न छोटे को, बड़ा तुझ को देय दबाय,
टकराता तरु को पवन, पर्वत से टकराय ॥ १२ ॥

सुजनों तक में दुष्ट मिल देता फूट कराय,
यथा फिटकरी दूध गिर, नीर क्षीर बिलगाय ॥ १३ ॥

पर पहले पड़ बली हो, राष्ट्र अबेर सबेर,
सूत बने जैसे रुई चर्खे के पड़ फेर ॥ १४ ॥

अवनत हित ईश्वर सदा, उन्नत डाले फोड़,
प्यासी धरती सींचता, बादल तोड़ मरोड़ ॥ १५ ॥

फटी बवाई पगन इक, पर पीड़ा ले जान,
सब बिधि ही बिपरीत है, तू हमसे भगवान ॥ १६ ॥

धर्म गढ़े जाते रहें, इक इक के प्रतिकूल,
मनुज न सब जब तक बनें इक माला के फूल ॥ १७ ॥

खुले हृदय जिस दिन करे, सबको प्रेम बिलीर्ण,
उस दिन उसकी आंच में तू होगा जर्तार्ण ॥ १८ ॥

समझाने पर बहुत ही, मन दे हाथ पसार,
पर पसार कुछ दिनों को, पड़ जाता बीमार ॥ १९ ॥

समझाने पर बहुत ही मन दे हाथ पसार,
पर पसार कुछ दिनों तक, चलता वही विचार ॥ २० ॥

भूल कभी न छोड़ना आन भरोसे काम,
जान बूझकर छोड़ना, पर उसका परिणाम ॥ २१ ॥

वह स्वतंत्र जो और को दे स्वतंत्र करवाय,
पढ़ा सके जो और को पंडित वही कहाय ॥ २२ ॥

नये-नये लेखकों से

[श्री प्रभाकर माचवे]

—※—

सुधीर को मैं बचपन से जानता हूँ। भला लड़का है, पढ़ने में भी मन लगाता रहता है। दुनिया की बातों को अच्छी तरह समझता है। जड़ बुद्धि नहीं है। तोभी परसों जब सुधीर की बड़ी बहन शान्ता मुझ से आकर कहने लगी कि—सुनो तो, सुधीर लेखक बन गया है। तो मैं ने वह खबर ठीक उतने ही अचरज और घबराहट से सुनी, मानों मुझे कोई कह रहा था—सुधीर पागल हो गया है।

और बाद में मैंने सोचा कि मेरा अनुमान बहुत गलत नहीं था। परसों वह प्रकाश जी का लड़का, सुना कविता बनाने लगा। और कल की ही तो बात है कि डाक्टर साहब की दुधमुँही लड़की इन्दु ने क्या लिख डाला—गद्य-काव्य! तोबा, तोबा। यही बीस के पहले-पहले तक की उम्र, कहलो कैशोर्य। क्या इस उम्र में भी कुछ लिखना हो सकता है? यह रचना करने का बच्चों में बढ़ता हुआ मर्ज क्या है, क्यों है, कैसे है। इसका इलाज क्या, इसको योग्य दिशा-दर्शन क्या दिया जा सकता है, वग़ैरह बातें मैं सुधीर को समझा देना चाहता था। सुधीर का वैसे घर किसी गांव में है। सुधीर, इसी साल इंटर के दूसरे साल में गया है। पर देखो, वह सुधीर आ भी गया और हमने कुछ बात शुरू कर दी।

मैंने पूछा-कैसे हाल चाल हैं, सुधीर? प्रसन्न तो हो। पढ़ाई वग़ैरह?

सुधीर ने मानो 'दुनिया क्या है' ऐसे लापरवाह और विश्वस्त भाव से कहा—'पढ़ाई का क्या। उसे क्या कुछ करना होता है? वह तो हो ही जायगी। पर यह बताइये कि आजकल के नये लेखकों में आपको किसकी कहानी, किसकी काव्य रचना अच्छी लगती है?'

मुझे उम्मीद नहीं थी कि मेरा ऐसे सवाल के साथ पाला पड़ेगा। मैंने पूछना चाहा—नये और पुराने लेखक की बात छोड़ो। तुम्हारा पढ़ना-लिखना तो ठीक चल रहा है न? और यह तो बताओ, तुम इस बेरा छुट्टियों में गांव क्यों नहीं गये? क्या शहर की जिन्दगी ज्यादह भाती है?

पर उसने बात काट कर कहा—'वाह जी आप बड़े नामी-गिरामी साहित्यक कहलाते हैं और मेरी जिज्ञासा का समाधान नहीं करते। मुझे उम्मीद नहीं थी कि, साहित्यक भी इतनी नीरस बातें कर सकता है। यह उसने ऐसे कहा मानो उसका अहंकार आहत हो रहा हो।

मुझे इन दो बातों से ही नये-नये बने हुए लेखक में, दो बातों का दोष बनकर घर कर बैठना नजर आ गया, एक तो दुनिया को 'अच्छे-बुरे' के खानों में से बड़ी जल्दी से बाँट डालने की उत्सुकता, धैर्य का अभाव और दूसरी बात रस की एक बड़ी संकुचित और विचित्र कल्पना।

मैंने तो भी उसे टालकर जानबूझकर पूँछा—'सुधीर, क्या ग़ैरजरूरी बात करते हो। तुम ने यह भी सोचा है कि पढ़कर आगे क्या करोगे।'

सुधीर तो उस वक्त स्वप्न-लोक की अतीन्द्रिय परियों के सुकोमल स्पर्श से पुलकित, किसी सूने में आंखें टांगे, जबर्दस्ती वास्तव से अपने को विच्छिन्न करने की कोशिश में है। उसके लिये भविष्य कुछ नहीं, चिंता कुछ नहीं। एक तरह की पीनक है। मैंने अपने आप से पूछा-'क्या इस नशेबाजी को मस्ती

कहना होगा ? क्या इसी को हम भावना की उत्कटता का जन्म कहें ? क्या यह जन्म प्रामाणिक है ? क्या इसमें से निकला हुआ लेखन अनुभूति की सच्चाई और गहराई से उपजा होसकता है ? क्या यह छद्म और अवास्तव पर आधारित कल्पना विलास और ख़यालों की रंगीनी नहीं ? वह सब क्या है ?'—ऐसे कई सवालों से मेरा चित्त जब मेघस हो चला, तभी मैंने सोचा, अब दूसरी तरह बात करूं।

और कहा—'मैंने सुना है तुमने लिखना शुरू किया है। क्या लिखा—गद्य या पद्य ?'

'कुछ नहीं, कुछनहीं।' बेहद झेंपता हुआ सुधीर मानो मानशील होता चला; और तोभी उसमें का कुछ बाहर से उधार लिया हुआ सा जो अहं-भाव था वह मिटता मुझे नहीं देखा। मैंने सोच लिया कि यह आत्मलीनता का अतिरेक (too much subjectivity) क्या नये लेखक में और साहित्य में, जहां कहीं हो, ख़तरा नहीं है ? क्योंकि इस तरह की भित्तिपर मुक्त-वायु-जीवी और विश्व-प्राण संवर्धक साहित्य पैदा ही नहीं हो सकता। यह सुधीर वाला लेखन तो किसी मुग़ल अन्तःपुर में शाही शान से रहने वाली रूपगर्विता सा है, जिसकी असल क़ीमत सिर्फ़ इतनी-सी होती है कि किसी भी दिन जब अन्तःपुर के किनखाब के पर्दे फाश हुए, और वह नाचीज बांदी, अपने आपमें बेहद अपूर्ण और ग़रीब-कहीं की न रहजाय !

सुधीर आगे कह रहा था-'वह पड़ोसियों के यहां विश्वम्भर है न, वह ऐसी 'वंडरफ़ुल' कहानियां लिखता है कि मैं क्या आप से कहूं। आप तो अब पुराने होचले। आपके साहित्य की अब क़द्र म्यूज़ियम में रखने से इतनी ही रहेगी। पर वह ऐसी 'रीयलिस्टिक' और रसमय चीजें लिखता है कि—'

'मैं तुमसे तुम्हारे लिखने के बारे में पूंछ रहा था। तुम दुनिया भर की बातें सुनाने लगे। सिर्फ़ सुनाने नहीं, साधिकार समीक्षा के साथ बताने लगे। सुधीर, समीक्षा-शंका से उपजा हुआ साहित्य क्षणिक रस दे सके, पर ज्यादह काम का, टिकाऊ और क्रियावान साहित्य तो नहीं होता। और क्यों जी, तुम यह भी सोचते हो कि साहित्य में भी कोई नई-पुरानी आत्मा होती है। क्या आत्मा भी कोई फ़ैशन या पैटर्न है जो बदलती चली जाय। यह सब नासमझी है तुम्हारी, सुधीर।'

'नासमझी ? नया तो नया ही रहेगा। पुरानी क्यों नहीं ? अब चण्डीप्रसाद 'हृदयेश' का सा शब्द-जंगल खड़ा कीजिये और देखिये कौन पढ़ता है। और अब कोई पोप जैसी या महावीर-प्रसाद द्विवेदी जैसी ब्रह्मचर्य पर कविता पसन्द करेगा ?'

'पहले यह ठहरालो, सुधीर, कि तुम या नये कहलानेवाले लेखक क्या जमाने की पसन्द पर लिख रहे हो। क्या वही तुम्हारा अन्तिम साध्य है। और युग-रूचि तो इतनी अस्थिर और क्षण-क्षण परिवर्ती है कि उसके आधार पर लिखने की आत्मा कुछ ठहर ही नहीं सकेगी।'

'नहीं, नहीं—किसी के लिये क्यों, हम अपने लिये लिखते हैं। लिखते हैं, इसलिये लिखते हैं। और वैसे ही आप कहते हैं तो दुनिया से, आस-पास की देशकाल परिस्थिति के प्रभाव से छुटकर अलहदा लेखक क्या रहेगा ? शून्य,...'

मैं—'अच्छा, इतना तुम समझ लेते हो सुधीर ? फिर भी लिखने का मर्ज तुम्हें लगा है। ताज्जुब है। क्या तुम नहीं सोचते, लिखना अकर्मण्यों का धन्धा नहीं है ? जो कर्मशील होंगे वे भला आसमान में आंखें टांगे, लिखते ही क्यों बैठे रहेंगे ? बात असल में यह है कि आदमी दो तरह के होते हैं—अन्तर्वर्ती, बहिर्वर्ती। हर एक अपनी स्थिति से असन्तुष्ट है। जीवन इसी दृष्टि से एक निरन्तर द्वंद्व है। अब लो, तुम में भी कुछ अभाव है। तुम चाहते हो, हर कोई

चाहता है कि अपनी अपूर्णताओं में से पूर्ण की ओर बढ़े। अभाव सब भर जायं; पर आदमी कम्बख्त कमजोरियों का ऐसा मद्दर है कि वे अभाव पुरते ही नहीं, लाख कोशिश करते जाओ। अब इस अभावपूर्ति की प्रक्रिया में से लेख भी एक है। न वह है स्वान्तः सुखाय, न है वह जनहिताय। वह तो एकदम से अनिवार्य और अवश्यम्भावी मन की चाहना है। उसे रोको, जीवन की अभिव्यक्ति की राह रुकती जान पड़ती है। इसीलिये लिखना है। अब कहो, सुधीर, तुमने क्या लिखा है ? समझलो कि वही लिखना सचा है जो अनिवार्यता से उत्प्रेरित है। अन्यथा लिखने के नाम पर कागज रंगना है, वक्त जाया करना है, दिमाग खराब करना है, पागलपन है।'

सुधीर—'मैंने इतना ज्यादा सोचा-बोचा तो नहीं है। मैं भावना को बुद्धि के और मनन के discipline से बचा रखना चाहता हूं। मैंने तो कविता लिखी है।'

मैं–'शुभ किया है। मैं कब कहता हूँ तुम भावना को वर्दी पहनाओ। पर प्रकृति को भी नियमित रहना पड़ता है। क्या तुम कह सकते हो, सुधीर, कि कला कभी भी असंयम में बस सकेगी। अरे, आत्म नियमन कब मुक्ति की राह का रोड़ा बना है। मुक्ति के माने तो दायित्व—ज्ञान है। न समझो अपनी मर्यादाएं, न कहो अपने को मुक्त। मनुष्य का स्वातंत्र्य ससीम होगा। मर्यादा–हीन मुक्ति के कुछ माने नहीं।'

सुधीर–'फिर आप दार्शनिकपन बघारने लगे। मैंने कहा न, इसीलिये मैंने मुक्तछंद में कविता नहीं लिखी। महादेवी के छंद में लिखी है।

मैं—'महादेवी का छन्द ! यह क्या बला है ? क्या कविता जो भावना का सहजतम, सच्चा उद्गार है उसे किसी कटे-कटाये बैठने वाले दर्जी के से नाप में से बहना लाजमी है सुधीर, छंद का अर्थ जानते हो—छांदोग्योपनिषत् कभी पढ़ी थी? फिर यह क्या है महादेवी का छंद ? वैसे तो बैंड बजाने वाले भी नई फिल्म की तर्ज झट से अपनी क्लोरोनेट पर बैठा लेते है। मर्यादाएं बनाओ। अपने हाथों उन्हें खींचो। मर्यादा मौलिक हो। साहित्य में किसी के पिछलग्गे न बनो। साहित्य के साम्राज्य में ए. डी. सी. नहीं हुआ करते।'

सुधीर—आप बस कुछ कहने–सुनाने तो देते नहीं अपनी ही छाँटते जाते हैं—तो वह कविता 'गीत' है।

मैं—बहुत हर्ष के समाचार हैं कि तुम्हारी कविता गीत है—गीत क्यों कहते हो, किसी ने गाया भी है उसे अब तक ठीक से। मैं तुम्हारे बारे में जानता हूं कि तुम्हारा संगीत का अभ्यास प्रायः शून्य है। फिर अब तुम्हारी कविता का विषय क्या है ?

सुधीर–विषय, विषय, वह ऐसे कह नहीं डाला जा सकता। वह कोई राधेश्याम की रामायण थोड़ी ही है। वह आपादशीर्ष रहस्यवादी रचना है। उसमें दुनिया को बताया गया है एक मदिरालय। प्रेम है साकी, वह शराब पिलाता है। आत्मा पीती है, छकती है। और बाद में वह वासना प्रेम वगैरह-वगैरह भौतिक, रोहिक, बंधन कुछ नहीं, पाप-पुण्य कुछ नहीं का पैग़ाम देती है। और अन्त में ऐसे मजेदार रूपक से कहा गया है कि जैसे शिरीष के फूल भर–भर जाते हैं वैसे यह सुन्दर मिट्टी की काया झड़ जावेगी और बचेगा वृन्त–वृन्त। वृन्त क्या हुआ काल—बस इत्ता भी नहीं आप समझे ?

मैं मुंह बाये सुधीर का यह प्रलाप सुन रहा था। मैं ताड़ गया कि अवश्य सुधीर के दिमाग में कोई कीड़ा रेंग रहा है जो उससे इस तरह असंबद्ध और दूरीकृत कल्पना-निरंकुशता बुलवा रहा है। (मानों यह भी पं० बनारसीदास जी या प्रिंस क्रोपाटकिन का कोई अराजकवाद हो) और घबराकर एक सच्चे मनोविज्ञानिक जैसे मैंने तर्क लगाकर कारण मीमांसा करने पूछा—'क्यों आज तुम्हें क़ब्ज-वब्ज तो कहीं नहीं था। तबियत बिल्कुल साफ़ तो है न ?'

सुधीर जैसे एकदम चिढ़ गया। उसने सोच लिया कि दुनिया में उसकी कविता समझने वाले शायद दो ही जीवधारी हो सकते हैं। एक तो वह खुद, दूसरा उसका वह दोस्त, जिसकी उसने पहिले ही तारीफ़ कर दी थी और तारीफ़ का बदला जो निंदा से कैसे चुका सकता था ? मुझे सुधीर के चेहरे पर elegy (विलाप-काव्य) लिखने की जबर्दस्त स्फूर्ति हुई। उसे रोक कर मैंने दूसरा कारण खोजा।—'क्यों, मैंने सुना है तुम्हारे अड़ोस-पड़ोस में कोई लेखिका भी—तुम्हारे जैसी ही नई-नई, लिखने के फ़न में दीक्षित रहती है।

अबकी बार ककड़ी बराबर छू गई। वह तिलमिला कर बोला—'वह लिखती है ऊल-जलूल उसे भी कोई तमीज़ है। वह क्या जाने लिखने की बात ? बेहूदा, बदशकल, बेमतलब, बेतरतीब गद्य-काव्य-लेखिका!' मैंने सुधीर की गालियों की बौछार पूरी सुनी नहीं। इस छोटी सी बच्चों की की स्पर्द्धामय मूर्खता से मुझे बड़े बड़े साहित्यकार कहलाने वालों की असहिष्णुता की बात याद आगई। और मन ही मन मानों किसी ने याद दिलाई—आदमी आख़िर कुछक प्रवृत्तियों का शिकार बना रहता है—आख़िरी दमतक। उस चांदमारी से बचने भागने की कोशिश का ही नाम आदर्शोन्मुख जिन्दगी है। वे प्रवृत्तियाँ हैं क्षुधा, भय, सुख, स्वार्थ, मैथुन आदि।

तो क्यों, सुधीर, उसके लिखने की बात छोड़ो उससे अगर तुम्हारी शादी हो जाय ?'

और सुधीर ने अनपेक्षित रूप से लम्बा चेहरा बना लिया, एक सर्द सी निसास छोड़ी। और भारी आवाज़ में कहा—'विश्वम्भर की वह पहिली कहानी है न एक impressionalistic tragedy है (यानी एक छाया वादी दुखान्त कथा)। (और जैसे मेरी प्रश्नार्थक मुद्रा देखकर आगे सुनाने लगा उसका वह आजीवन न भुलाने जैसा हृदय पर आघात है। उसकी एक अमुक लड़की से होने वाली थी शादी। सो नहीं हुई। (होती भी क्यों ?) मैंने मनमें कहा—नहीं तो यह विश्व साहित्यकी अमर(?)कलाकृति फिर जी कैसे जाती ? और यह आजीवन कौमार्य व्रत साधे, रात में तारे गिनते, वेदनावादी गल्पें रचते बैठता है।'

मेरा मन इस मूर्खतापूर्ण बात पर करुणा से भर आया। इस समाज व्यवस्था के दोष पर उतना नहीं, जितना उस युवक के कच्चे दिल पर मुझे तरस हुआ। ऐसा ही अन्दर-अन्दर घुटने वाला, सस्ता रमण्या समय (Cheap romanticism से भरा) भावुकता के नाम पर अप्रबुद्धि लेखन करते रहने की एक बहक सी इधर लड़कों और लड़कियों में बढ़ती चली जारही है, जिसमें रुका-वट डालना सामाजिक हित की दृष्टि से, बहुत ज़रूरी है।

यह माना जाने लगा है कि आदमी की कमज़ोरी ही पूजनीय अंश है, (यथा शरद के उपन्यास) पर मेरे ख्याल से ऐसा विश्व—करुणा वाद हमारी असामर्थ्य, भीरुता, अप्रबुद्धता और कायरता का द्योतक है। हमें यह आंसू-आह-ऊह अब ज्यादा नहीं चाहिये। मास्को की घड़ी में रात के बारह बजे Internationale (रूस का राष्ट्र-गीत) जोर-जोर से पुकार रहा है 'Reason in revolt now thunders.' विवेक विद्रोही बन-कर गरज रहा है। कहां है भारत, कहां है हिन्दी, कहां है सुधीर, और कहां है बेचारे की स्वीकृत-अस्वीकृत ज़रा-ज़रा सी प्रेयसियाँ, इस महान कर्म-चक्र में ?

'सुधीर, (यानी नये-नये लेखक) तुम जान लो, लिखना किसके लिये और कैसे होगा। लिखना rationalize (प्रबुद्धि) करना होगा। बनना होगा objective (सर्वात्मदर्शी) और यह राजा-रानी के इश्क के क़िस्सों के Romance के पाश फेंक देने होंगे, क्योंकि युग कुछ और मांग रहा है। आजका जग दूसरी ही तरफ़ इशारा कर रहा है।

(शेष १८ वें पृष्ठ पर)

भावुकता बनाम भावज्ञता

[श्री इलाचन्द जोशी]



हमारे छायावादी साहित्य में कुछ आचार्यों तथा कुछ उदीयमान प्रतिभाशाली नवयुवक कवियों की कविताओं को छोड़कर शेष सब रचनाओं में कोरी छिछली भावुकता (जिसे अंगरेजी में Cheap sentimentalism कहते हैं) इस प्रकार सघनता से छाई हुई है जिस प्रकार एक छिछले तालाब के ऊपर सिवार छाई रहती है। मैं भावुकता के महत्व को खर्व नहीं करना चाहता, पर मेरी यह ध्रुव धारणा है कि जो भावुकता बुद्धि द्वारा सुसंयत और अनुशीलन द्वारा सुसंस्कृत नहीं होती वह या तो साहित्य की चिर-प्रगतशील धारा में बह जायगी। या स्वयं एक बावड़ी के आबद्ध जल की तरह चिर-प्ररुद्ध होकर साहित्य के नन्दन कानन के मुक्त वातावरण के बीच में दुर्गन्धि फैलाने के सिवा और कुछ नहीं कर पावेगी।

भावुकता ऐसी नहीं होनी चाहिये कि साबुन के फेनिल बुद्बुदों की तरह वायु की तरङ्गों में कुछ समय के लिये लम्बी उड़ान भरकर सदा के लिये विलीन हो जाय। उसका आधार निरी हवाई कल्पना नहीं, बल्कि कोई वास्तविक Concrete सत्य होना चाहिये। उसका मूल उद्गम आकाश की शून्यता नहीं, बल्कि अन्तर्प्राण की मार्मिक अनुभूति हो। अर्थात् कवि के लिये कोरा भावुक नहीं, बल्कि भावज्ञ होना आवश्यक है। भावज्ञता-रहित भावुकता कुछ समय के लिये भले ही हृदय में मीठी वेदना उपजाने में समर्थ हो, पर उसका खोखलापन अन्त को प्रकट होकर रहता है। फ्रेंच और जर्मन साहित्य का तुलनात्मक अध्ययन करने में इस बात का उदाहरण स्पष्ट हो जायगा।

रूसो के समय में फ्रेंच लोगों ने निरी भावुकता के फेर में पड़कर उसके उद्दाम वेग को अत्यन्त उच्छृंखल बना दिया। रूसो की सुन्दर भावुकता में भावज्ञता की पुट रहने से उसका महत्व फिर भी किसी अंश तक स्थायी रहा। भावज्ञता का आधार किसी न किसी हद तक रहने से रूसो की भावुकता का असर कुछ समय तक अत्यन्त प्रखर तथा मर्म-भेदी बना रहा और पीछे भी किंचित् परिमाण में स्थिर रहा। पर जहां-कहीं वह कोरी भावुकता के आवेग में तूफ़ान की तरह बहता चला गया, वहाँ उसने अपने-आपको भी धोखा दिया और दूसरों को भी भ्रमजाल में डाल दिया। इस प्रकार के निराधार भाव-प्रवणता का प्रभाव अधिक समय तक स्थायी न रह सका और शून्य में विलीन हो गया। जिन-जिन फ्रेंच लेखकों ने रूसो का अनुसरण किया (और ऐसे लेखकों की संख्या आवश्यकता से बहुत अधिक रही) वे भी आँधी की तरह आये और उसी तरह मिट भी गए। फ्रेंच साहित्य में एक मात्र विक्टर ह्यूगो (Victor Hugo) ऐसा कवि रहा है

सुधीर, तुम्हें क्या मंजूर है : घर में बैठे चार तुकें जोड़ते बैठना या जीवन में जिनके ज़िन्दा रहने तककी तुक नहीं मिल पाती ऐसे बेतुकों के लिये और कर्मण्य तरुणों का संघ जोड़ना। मेरा सवाल सभी नये-नये लेखकों से है। सुधीर,लिखो मगर मानवता के लिये लिखो।

'Against all the oppressors with all the oppressed'

——

Romain Rolland

जीवन-सुधा



श्री इलाचन्द जोशी

जो भावज्ञता के रस में पूर्णतया शराबोर था। उसकी भावुकता उसकी भावज्ञता के सागर की अतल गहराई के ऊपर तैरने वाली फेनिल लहरियों के लोल लीला-लाभ के अतिरिक्त और कुछ नहीं है।

बहुत लोगों की धारणा है कि फ्रेंच साहित्य संसार की अन्य सब भाषाओं के साहित्य से श्रेष्ठ है। यह लोगों का भ्रम है। यूरोपियन साहित्य के वास्तविक मर्मज्ञों ने कभी उसे विशेष महत्व नहीं दिया। फ्रांस का कोई कवि वह सबर्थ कालेरिज, शेली, बायरन आदि अंगरेज कवियों सुगम्भीर भावज्ञता-समावित कविता की समकक्षता कदापि न कर सका। कारण यही है कि पूर्वोल्लिखित अंगरेज कवि कविता में जीवन की गहन मार्मिकता का दर्शन और जीवन में गम्भीर-काव्य कला का प्रदर्शन किया करते थे और कल्पना को शून्य में लटकने वाले इन्द्रधनुष की वर्णच्छटा तथा धूप में निरुद्देश्य भटकने वाले बादलों के निस्सार रेशमी संसार तक ही सीमित नहीं रखते थे।

फ्रेंच साहित्य की तुलना में यदि जर्मन साहित्य को हम सामने रखें तो मालूम होगा कि उसकी धारा ही कुछ दूसरी है। आधुनिक जर्मन साहित्य का प्रारम्भ ग्येटे-युग से होगा। ग्येटे (Goeithe) अपनी सर्व प्रथम रचना 'वेर्टर' (Werther) में भावुकता के प्रवाह में बह गया था। इस भावुकता का प्रभाव प्रारम्भ में बड़ा जबर्दस्त रहा और उसकी बाढ़ में बहुत से लेखक बह गये। पर यह प्रभाव स्वभावतः अधिक समय तक स्थायी न रह सका। ग्येटे शीघ्र ही अपनी भूल समझ गया। इसलिये उसकी परवर्ती रचनाओं में सत्व हीन भावुकता के बदले जीवन के वास्तविक तत्व से निचोड़े गए रस की ही प्रचुरता पाई जाती है, जिसकी चरम परिणति हम उसकी संसार प्रसिद्ध रचना फ़ौस्ट (Faust) में पाते हैं। केवल ग्येटे ही नहीं, शिलर, लैसिंग, हाइने (Heine) आदि श्रेष्ठ जर्मन कलाकारों में हम यही विशेषता पाते हैं। जर्मनों ने मूल प्राणशक्ति को अपनाया और फ्रेंचों ने केवल हृदय के अस्थिर आवेगमयी प्रवृत्तियों का फुत्कार बाहर निकालने में ही अपनी सारी चेष्टा समाप्त कर दी।

रस सृष्टि करना ही साहित्य-कला का मूल उद्देश्य है, सन्देह नहीं। मीठी भावुकता में भी एक विशेष रस है, इस बात को कोई अस्वीकार नहीं कर सकता। पर वह रस अंगूर, अनार और संतरे की तरह है जो आसानी से, बिना अधिक परिश्रम के निचोड़कर निकाला जा सकता है। ऐसा रस थोड़ी देर के लिए कलेजे को ठण्डा कर सकता है, पर नव-जीवन का उत्पादन नहीं कर सकता। जीवन की शक्ति का संचार करने वाला रस वही हो सकता है जो पारे तथा अन्यान्य धातुओं की तरह कठिन आंच में तपकर रस-सिन्दूर। आदि के रूप में परिणत होता है, अर्थात् जो भावज्ञता तथा जीवन की मार्मिक अनुभूति द्वारा परिपुष्ट होता है। श्रेष्ठ कलाकार एक प्रकार का रासायनिक है जो जीवन के कठिन से कठिन तत्वों को भी अपनी आत्मा के रसायनिक यंत्र में परिपक्व करके अभिनव रस के रूप में परिणत कर देता है।

भूल भुलैयां

[श्री उषादेवी मित्रा]

—✻—

सरजू प्रसाद ने जब आंखें खोलीं तो पाया अपने को अस्पताल के एक कमरे में। एक अचम्भे से वह ताकने लगा। सुध उसकी बिलकुल जाती रही हो, ऐसा नहीं, किन्तु कुछ भूल में, कुछ गलती में वह रहा। था वह एक उच्छ्रंखल, विलासी युवक।

दुनिया में सरजूप्रसाद था अकेला—बिलकुल अकेला। असहाय, सम्पत्ति विहीन। कुछ थोड़ा-सा पढ़ लिया था। न उसे चिन्ता थी, न किसी बात की भावना।

किन्तु फिर भी उसके रहन-सहन को देखकर लोग उसे अमीर सोचते। सिल्क के कुरते, महीन धोती, क़ीमती जूता पहन कर मोटरों में घूमता फिरता। शराब के बिना मिनट भर भी न चलता। वेश्याएं उसे देखकर झुककर सलाम करतीं।

एक छोटा-सा मकान भाड़े पर ले रखा था। मकान का भाड़ा सालभर का बाक़ी पड़ा था। मांगने पर लम्बी-लम्बी ऐसी लाख-दो लाख की बातें करता कि मकान मालिक से सुनते ही बनता। नौकर-चाकर कुछ नहीं थे, न घर में खाने को। इन सब बातों का उसके मन में विचार मात्र नहीं था। सरजू सङ्गीतज्ञ था। शहर में वह एक प्रसिद्ध गवैया कहलाता था। धनवानों के घर उसका आदर सत्कार होता। जब रुपयों की उसे बहुत जरूरत पड़ती तो राजा-महाराजों के घर चला जाता और गायन के बदले दो-चार सौ लेकर लौटता। दो दिन में सब फूंक देता। भोजन होटल से मंगाता या तो अमीरों के घर से आ जाता। राजा, जमीदारों के घर से सदा उसके गाने के लिए निमन्त्रण आता। कभी स्वीकार करता, कभी अनायास अस्वीकार कर देता। रुपयों-पैसों को वह कंकड़, कूड़े-सा समझता।

और समझता जीवन को एक ख़ुशी। बस, ख़ुशी—ख़ुशी, गहरी ख़ुशी। जीवन का मूल्य था उसके निकट इतना ही। वह अनायास कह देता—शराब पियो, चाप, कटलेट खाओ। नित नयी-नयी रूपसी से मिलो, बस करना क्या है। आये तो इस दुनिया में ख़ुशी मनाने के लिए हैं न? दुनिया भर में यह जो ख़ुशी का मेला लगा हुआ है उसी में यदि हम भी सौदा करते रहें, तो ख़राब क्या है?

वह जानता ख़ुशी को, पहँचानता ऐयाशी को। दुःख, दारिद्र, अभाव की भावना उसकी दुनिया में थी नहीं, और न बिछुड़ने की सम्भावना। मिलने की रागिनी उसकी बांसुरी सदा आलापा करती। तो ऐसा ही एक सरजूप्रसाद जब पड़ गया बीमार तो चकराना-सा रह गया। शराब पी-पी कर उसका लिभार ख़राब होगया था। उस पर जोर से बुख़ार और निमोनिया होगया तो मित्र उसे अस्पताल ले आये।

दो दिन के बाद सरजू ने आंखें खोलीं तो पाया अपने को नूतन स्थान में, और पाया कराहते हुए दूसरे पलंग पर एक रोगी को। बड़ा-सा कमरा था। चार पलंग थे, जिनमें एक ख़ाली था,

और एक में वह स्वयं। दो में दो और रोगी। रात होगई थी। नर्स टेबल पर झुकी कुछ लिख रही थी। बाहर के पेड़ पर पेचक बोल उठा। सरजू के खुशी भरे जीवन में कुछ खटका सा, और वह भी पहली बार। रात की अँधेरी, मरीजों का संग, अस्पताल का कमरा, पेचक की पुकार, बूढ़ी नर्स और अपनी बीमारी, यह सब मिलाकर उसे वह स्थान प्रेतपुरी-सा लगने लगा। वहाँ से भाग जाने के लिए वह एक दम अस्थिर होगया। चाहने लगा कि उठकर भाग आवे। और वैसा न हो सकने से बिलकुल घबरा गया।

नर्स दवा लेकर सिरहाने आगई— "पी लीजिए।"

"तुम कौन हो?" उसने रूखे स्वर से पूछा।

"नर्स हूं, महाशय।"

"नहीं–नहीं, तुम हो प्रेत लोक की प्रेतिनी।" बूढ़ी नर्स मुसकराई—"हाँ, और प्रेतों की सेवा करती हूं।" न जाने क्यों सरजू अत्यन्त प्रसन्न होगया। बोला, "तुम झूठ नहीं बोलतीं, इसलिए अच्छी हो"।

"हाँ, और आप भी अच्छे हैं, इसे पी लीजिए।"

"हाँ-हाँ, पीलूंगा। शराब ही से तो मैं जीता हूं। दे दो।"

नर्स ने दवा पिला दी।

मुँह बिचकाकर सरजू ने कहा—"कैसी शराब है यह शराब! तुम्हारे प्रेतलोक में क्या अच्छी शराब नहीं मिलती?"

"नहीं।" शान्त स्वर से नर्स बोली और फिर धीरे से चली गई। सन-सन-सन पवन बहता और बाहर पेचक बोल रहा था।

(२)

रात आधी से ज्यादा निकल चुकी थी। अस्पताल में सन्नाटा छाया था। दालान में बिजली का प्रकाश था। कमरे में धीमा प्रकाश फैल रहा था। बाहर पेचक कराह रहा था, और सरजू जाग रहा था। पलंग का रोगी निस्तेज-सा हो रहा था। उसका कराहना बन्द था। कमरे में डाक्टर, नर्स आ–जा रहे थे। बार-बार उस रोगी की नब्ज देख रहे थे। दवा, इनजैक्शन दे रहे थे। रोगी का मुँह विकृत हो रहा था और सरजू उस मुख पर दृष्टि निबद्ध किए पड़ा था।

उसके देखते ही देखते रोगी को वहाँ से लोग उठाने लगे। छिन्न–मलिन वस्त्र पहने एक स्त्री अचानक पहुँच गई। हृदय में वह एक मृत-प्राय शिशु को दबाए थी। स्त्री रोगी के पैर से लिपटकर सिसकने लगी।

"चुप-चुप चिल्लाओ नहीं।" डाक्टर बोला। उस स्त्री को देख कर सरजू रोमाञ्चित हो गया। इस नर कंकाल की जगह दुनिया के किस कोने में हो सकी है? वह विस्मय से विचारने लगा— इस खुशी की दुनिया में इस मूर्त दारिद्र, कंकाल का स्थान कैसे और कहाँ हो सका है? वह विचार चला—इस प्रेतलोक में अचानक आज जिससे मेरी भेंट हो गई, क्या वह मुझसा जीवित व्यक्ति है? और इसी दुनिया का जीव है?

स्त्री उठी, डाक्टर के पैरों से लिपट कर कहने लगी— 'मुझ भिखारिन को भीख दे दो, डाक्टर जी! मेरे पति को जिलादो? बिना बाप के बच्चे मर जायेंगे। कंगालिन को भीख दे दो, डाक्टर जी! मेरे पति को जिलादो। पति की भीख! मुझ कंगालिन के पास कुछ भी नहीं है। पन्द्रह दिन का बच्चा दूध के बिना मर रहा है। सूख कर कांटा होरहा है। दो बच्चे अन्नाभाव से घर में पड़े तड़प रहे हैं। और मैं—मैं—" वह रो पड़ी। फूट–फूट कर रोने लगी।

सरजू को लगा—डाक्टर के स्वर से दया बही पड़ रही है। बोला डाक्टर—"हम कोशिश कर रहे हैं, बेटी, घबराओ नहीं, चिल्लाओ मत, धीरज धरो।"

वे सब रोगी को लेकर दूसरे कमरे में चले गये। स्त्री शीत में ठिठुरती, बच्चे को हृदय से लगा कर खड़ी ही रह गई। नर्स पहुँची, कहा—"घर चली जाओ।" "मैं उनके पास रहूंगी, माई।" विनीत स्त्री ने कहा। "नहीं, ऐसा नहीं हो सकता है। देख लिया है, अब चली जाओ।" "नहीं—मईया रहने दो! जनम गुलामी करूंगी। उनसे मुझे अलग मत करो। बच्चे भूखे मर रहे हैं, मरने दो, किन्तु उनसे मुझे अलग मत करो, विनती रखो, माई।"

"हल्ला मत करो, जाओ! बाहर जाओ।"

स्त्री दुर्निवार-सी होगई। कहने लगी—"नहीं जाऊंगी। मेरे पति, मेरे अपने पति, दुनिया के सब कुछ, और अपने ही पति के पास मैं न रहने पाऊं? कैसा अन्धेर है। भूख-प्यास जिसका मुँह देख कर सह लेती हूँ उसके पास से चली जाऊँ?" वह उन्मादिनी-सी कह चली—"किन्तु क्यों? मेरे पति के पास से मुझे हटाने वाली तुम कौन होती हो? मैं नहीं जाऊँगी, नहीं जाऊँगी।"

"तुम्हारे अच्छे के लिये कहती हूँ, बेटी।" बूढ़ी नर्स कोमल स्वर से कहने लगी—"तुम्हारे पति अच्छे हो जायेंगे। सवेरे आजाना। तुम्हारे रहने से उन्हें हानि पहुँचेगी।"

"वे अच्छे हो जायेंगे, माता?"

"हाँ!—हाँ! अच्छे होजायंगे।"

स्त्री धीरे-धीरे बाहर गई, फिर अन्धकार में एकाकार-सी हो गई। गृह निस्तब्ध हो गया। पलंग पर पड़े दूसरे रोगी का दीर्घ श्वास कमरे में मड़राने-सा लगा। अस्पताल के कोने से रोने की आवाज़ आ रही थी और उस अन्धकार में पेचक बोल रहा था।

(३)

रात कटने ही पाई थी कि कागों ने कलरव कर दिन की सम्वर्द्धना आरम्भ कर दी। सरजू ने आँखें खोलीं। रात्रि के शेष प्रहर में वह सो गया था। शरीर हलका-सा लगा। ज्वर बिलकुल उतर गया था। किन्तु फिर भी उसका मन विरक्त था। बगल के कमरे में कोई हाहाकार कर उठा। सरजू चौंक पड़ा। किसी ने कहा—"चुप—चुप, चिल्लाओ मत। घर जाकर रोओ। अस्पताल के मरीज़ घबरा जायेंगे।"

किन्तु फिर भी कोई बिलख—बिलख कर रोने लगा। सरजू का मन एक दम उचाटन हो गया। खुशी भरी दुनिया में इस आंसू के सामने उस का उच्छ्रंखल मन हतवाक हो रहा—विमूढ़ सा।

उसे लगा यह कुत्सित आंसू उसे बहाकर ले जायेंगे, ले भागेंगे। न जाने कौन सी दुर्गन्ध के नरक में उसे ढकेल देवेंगे, जहां न तो शराब की बोतलें रहेंगी और न खुशी के रंगीन गुलाब। नहीं, कुछ नहीं, पाजेब की एक हलकी-सी झंकार भी न उठ पायेगी, भौंरों की टोली न भन भनायगी। पद्म पर न मधुमक्खी गुनगुनायेगी, न कुछ। रहेंगे केवल आंसू के उमड़ते काले बादल, मेंह से झरते विरामहीन आंसू, और आंसू के असुन्दर सागर, महासागर। प्रेत का भयावह चीत्कार, जिस चीत्कार में उसकी सत्ता भी गुम जायगी। सरजू सिहर उठा। उसके कमरे के सामने से कुछ मनुष्य डोली पर शव लेकर निकल गए, एवं पीछे पीछे सर पीटती एक स्त्री।

सरजू ने उस क्षीण काया, मलिन वसना स्त्री को पहचान लिया—वही तो है जो रात में डाक्टरों के पैर से लिपटी रो रही थी। और जिसे डाक्टरों ने आश्वासन दिया था—तेरे पति अच्छे हो जायेंगे।

अभी कुछ ही घण्टे तो कटने पाए होंगे। उस व्यथातुर आंसू के सामने सरजू चकरा-सा गया। घण्टे बीत रहे थे और पृथ्वी अपनी कौतुक-क्रिया में मस्त थी। रास्ते से शहनाई की आवाज़ आने लगी, कोई बरात वधू लिये लौट रही थी। उस क्रन्दन के साथ शहनाई का स्वर मिलकर एकाकार हो गया। सरजू को एक ज़ोर का धक्का लगा दूसर बारी। आज कैसी विचित्र

बातों के रहस्य उसकी आंखों के सामने खुल रहे हैं ? सरजू विचारने लगा–खुशी के साथ रोदन को यदि पहचानने का समय आया भी तो मैं उसे सहूं कैसे ? और शहनाई की खुशी भरी आवाज के साथ क्रन्दन की मर्यादा का मेल हो ही कैसे सका ? नहीं-नहीं; वह खुशी को पहचानता है, और उसी को पहचानेगा। कोई मरे या जिए, उसे करना क्या है ? किन्तु अभी-अभी जो स्त्री अर्द्ध नग्न, उन्मादिनी-सी पति के शव के साथ चली आरही है, वह करेगी क्या ? भोजन तक जिसके पास नहीं है, बच्चों को तो आधापेट भोजन भी नहीं देसकती है, वह शव संस्कार करेगी कैसे ? कदाचित् उसी के घर के पास बरात उतरेगी, शहनाई और बैंड के स्वर के नीचे उसके रोने की क्षीण आवाज दब जायगी। कदाचित् उस आनन्द की ओर उसकी जल पूर्ण आंखें उठ पड़ेंगी और कदाचित् अपने आपकी दुलहिन बनना उसे स्मरण हो आवेगा, और उसी अतीत में वह अपने दुल्हा का स्वप्न देखेगी, एवं उसके पैर के निकट पड़े शव में तब तक लाखों चींटे लग जायँगे, उस अनशन क्लिष्ट रक्त से अपना पेट भरेंगे। भूख से विकल बच्चे माता से भोजन मागेंगे, और मां न बोलेगी तब मृत पिता से लिपट जायँगे और भोजन देने के लिए शव को खींचेंगे। जब कोई न बोलेगा तब क्षुधा पीड़ित बच्चों का शरीर पिता के बगल में शिथिल हो पड़ेगा और माता तब उठेगी, न अतीत के म्हौर बांधे दुल्हा पति को देखेगी, न वर्तमान के मृत शरीर को। नहीं, वरन वह उठेगी, बच्चों को हृदय से लगावेगी और भिक्षा-पात्र लेकर धनी के द्वार पर खड़ी हो जायगी। प्रतिवासी के घर शहनाई बजती रहेगी। मृत शरीर घर में पड़ा सड़ता रहेगा और वह भिक्षापात्र लिए घर-घर घूमती फिरेगी।

नर्स, डाक्टर आए, ज्वर देखा। सरजू चौंक पड़ा। अपने बिखरे हुए चित्त को समेट कर उसने उस ओर देखा। इन्हीं दोनों ने उस दुखिया को कल आश्वासन दिया था, और दया, सहानुभूति से इन्हीं दोनों के नेत्र कल छलछला आए थे। विस्मय-विमूढ़ सरजू ने देखा—उस दया के चिन्ह मात्र उन मुखों में नहीं है, न एक दीर्घ श्वास ही है—उस दुखिया के लिए। कर्तव्यनिष्ठ व्यक्ति-से, कलपुर्जे के बने जीव-से वह बोले–"बुखार बिलकुल नहीं है। हफ्ते भर में तुम चल फिर सकोगे।" डाक्टर चला गया। नर्स ने दवा उठाई–"पीलो।" फिर इसके बाद उसने चार्ट लिखा, दूसरे रोगी को देखा और चली गई। स्तब्ध, अचल सरजू बैठा रह गया।

अस्पताल में व्यस्तता थी। सब अपने काम में व्यस्त थे। वृक्षों पर काग पुकार रहे थे और पृथ्वी अपने कौतुक में मस्त थी।

दिन ढल चुका था। घाट से धोबी लौट रहे थे। उठ सकने की सरजू को खुशी थी। अस्पताल के बगीचे में एक बेंच पर वह बैठा था। सड़क की दुकान से गरम भुने चने की सुगन्ध आ रही थी। माली फुलवारी सींच रहा था। कमरे से रोगी के कराहने की आवाज आ रही थी। तितलियां फूलों पर काँप रही थीं और पृथ्वी अपनी धुन में व्यस्त थी। उधर सरजू को उठ सकने की खुशी थी।

फूल-पत्तियों में बैठा सरजू एक गन्धर्व–सा गन्धर्व लोक में विचरने लग गया—कल्पना के हलके पलने पर। वह भौरों-सा गुनगुनाने लगा। जाने कितने ही मीठे राग-रागनी उसे स्मरण हो आये। एक रोगी धीरे-धीरे चलकर आगया। उसके शरीर के घावों पर पट्टी बंधी थी। उग्र दवा की गन्ध से उसके आस-पास का पवन भारी हो गया। रोगी सरजू के निकट बैठ गया। विरक्ति से सरजू का मुँह कुंठित हुआ। उसने मुंह फेरना चाहा।

रोगी बोला—'क्या आपही प्रसिद्ध गवैया सरजूप्रसाद हैं ?"

व्यक्ति सरजू को परिचित-सा लगा। उसने अच्छी तरह देखा। वह एक दम सिहर उठा। जमींदार चौधरी उसके सामने था, चेहरा घाव से, फुन्सियों से ऐसा कुत्सित हो रहा था कि पहचानना एक प्रकार असम्भव-सा था। सन्देह से सरजू ने पूछा—

"आप जमींदार चौधरी तो नहीं हैं ?"

"वही हूँ।"—रोगी मलिन हंसा—"विश्वास नहीं आता? अस्पताल में छिपकर टिका हूं। रोग कुत्सित है। दुनिया से इसे छिपाना चाहता हूँ। तुमसे ? नहीं। क्योंकि हम दोनों एक ही पथ के यात्री हैं। आज इस भयानक व्याधि ने मुझे पकड़ लिया, किन्तु कल का दिन तो तुम्हारे लिये है न। "

"मेरे लिये।" भय विवर्ण मुख से सरजू ने कहा। रोगी जोर से हंस पड़ा—' हां, हां, तुम्हारे लिये। हम दोनों में न कोई कम है न ज्यादा।"

सरजू के हृदय में एक आँधी उठ पड़ी। कैसे-कैसे भीषण रहस्यों से उसकी भेंट हो रही है ? विचारने लगा वह—यह उन्माद कह क्या रहा है ? सुख सेवित शरीर, जिसे रोज क्रीम, साबुन से साफ़ किया जाता है, पाउडर जिस पर लगता है, क्रीम, सेन्ट से जिसे सुगन्धित किया जाता है, उसी शरीर पर ऐसा कुत्सित व्याधि का आक्रमण ? घृणा से पृथ्वी मुंह फेरेगी, मित्रगण, जो आज उसे आदर से पास बैठाते हैं, गान सुनते हैं, देवता सा पूजते हैं, वे ही घृणा से कल मुंह फेर लेवेंगे। मक्खी भनभनाएंगी, यह सुन्दर मुख कुत्सित हो जायगा। और पल-पल में उसका सब कुछ लुट जायगा, पल-पल में जो पृथ्वी उसका आदर करती थी, वही उससे घृणा करने लगेगी। घृणा ? हां, हां—घृणा, जैसा कि वह स्वयं अभी-अभी इस जमींदार से कर रहा है। एक पल पहले तक शायद इस व्यक्ति के लिये उसी के मन में आदर-सम्मान था। सरजू का मन जाने कैसा करने लगा। वह उठा और चल पड़ा। रोगी विस्मय से उसे देखने लगा। चहुंओर एक शान्त नीरवता थी। नर्स अपनी ड्यूटी में लगी थी। ऊंचे वृक्षों की आड़ से सन्ध्या झांक रही थी। अस्पताल में रहा, बिजली का प्रकाश। बाहर कुत्ते भौंक रहे थे और पृथ्वी अपनी धुन में व्यस्त थी।

(५)

दिन रविवार का था। पथ जनाकीर्ण हो रहा था। बाजार के लिये धनी, दरिद्र झपटे चले जा रहे थे। कोई सौदा खरीद रहा था, कोई किसी से कलह। बच्चे खिलौने की दुकान पर इकट्ठे थे। बिछुड़े साथी के गले से कोई मिल रहा था। कोई किसी से भेंट करने में जुटा था। कोई विवाह के लिये साग-भाजी खरीद रहा था। कोई पिता-पुत्र के श्राद्ध के लिये कुमढ़ों के मोल में व्यस्त था।

सरजू स्वस्थ था, कुछ दुर्बल था। अपने घर की खिड़की पर बैठा वह बाजार का दृश्य देख रहा था। पड़ोसिन वृद्धा खिड़की पर खड़ी उसकी कुशल पूछ रही थी। रास्ते के उस पार के, दो मंजिले मकान की खुली खिड़की के सामने खाट पर पड़ी एक वृद्धा अन्तिम श्वास ले रही थी। मृत्यु यातना से उसके नेत्र विस्फारित होरहे थे, जीभ निकल पड़ी थी। पुत्र कन्याएँ खड़ी उसे राम नाम सुना रहीं थीं। सरजू की आंखें उस पर गड़-सी गईं। पथ पर कोई बिरहा गाता चला जा रहा था, और पृथ्वी का रथ-चक्र एक-सा घूम रहा था।

दूसरे दिन का सबेरा जब सरजू के द्वार पर पहुँच गया तब उसका चित्त एक दम विरक्त हो रहा था, मन था सूना। वृद्धा का शव उसकी आंखों के सामने चला जा रहा था और दूसरी

वृद्धा खिड़की पर खड़ी भय विवर्ण मुँख से उस दृश्य को देख रही थी।

सरजू ने आवाज लगाई–"मांजी, क्या कर रही हो ? गंगा स्नान को न जाओगी ?"

"देख रही हूं, बेटा। कामिनी की दादी तो चल बसीं। अब मेरी बारी है, दिन निकट है।"

"दिन निकट है–दिन निकट है"–सरजू के कान में मड़राने लगा–"दिन निकट है, किसका ? वृद्धा का, वृद्धा के पति का, या तो, कदाचित् उसी का ही। उस अस्पताल के रोगी की तरह वह भी कुत्सित हो जायगा, और नहीं तो इस वृद्धा जैसे उसके बाल सफ़ेद होजायँगे, कमर झुक जायगी, आवाज में कर्कशता आवेगी और यन्त्रणा में पिस-पिस कर, घुल-घुल कर एक दिन उसकी मृत्यु हो जायगी। मारे डर के सरजू काँपने लगा। और फिर दूसरे पल परिहास से हँसा भी। कुत्सितता कैसी ? मृत्यु कैसी ? कष्ट, दुख कैसा ? वह जीवित रहेगा–इसी तरह इन्द्र-सा बना वह जीवित रहेगा। मरे दुनिया, उससे मतलब ? मरे एक दिन दुनिया, किन्तु उस एक दिन के लिये वह प्रस्तुत नहीं है।

पड़ोसिन वृद्धा की अटारी पर सरजू की दृष्टि विस्मय से विमूढ़सी हो रही। वृद्धा आइने के सामने बैठी सन से सफ़ेद बालों को संभाल रही थी; पोपले मुहँ को घुमा-फिरा कर देख रही थी। सरजू का जी उस दृश्य को देखकर अचम्भे से हतवाक्-सा हो रहा। वह विचार न पाया कि अभी जो वृद्धा दूसरी की मृत्यु से अचेतन-सी हो रही थी वही अभी शृंगार करने कैसे बैठ गई ? वृद्धा के जप की माला खूंटी पर लटक रही थी। सरजू का मन उदास था। और पृथ्वी का रथ चक्र एक सा घूम रहा था। बाहर पेचक बोल रहा था। आकाश में तारों की जमघट थी, शृगाल दूर पुकार रहे थे। तबला की ठनक मधुर थी। सामने की अट्टालिका पर युवती नारी पति-विच्छेद से करुण चीत्कार कर रही थी। सरजू का कमरा दीप-प्रकाश से उज्ज्वल हो रहा था। सरजू बैठा आकंठ शराब पीने लगा। पड़ोसिन वेश्या विहाग अलाप रही थी और पृथ्वी अपनी धुन में मस्त थी।

खिलौना

(श्री सियाराम शरण गुप्त)

—*—

'मैं तो वही खिलौना लूंगा'
मचल गया दीना का लाल,—
'खेल रहा था जिसको लेकर
राजकुमार उछाल उछाल ।'

व्यथित हो उठी माँ बेचारी—
'था सुवर्ण-निर्मित वह तो !
खेल इसी से लाल,—नहीं है
राजा के घर भी यह तो !'

'राजा के घर ! नहीं नहीं माँ,
तू मुझको बहकाती है;
इस मिट्टी से खेलेगा क्या
राज पुत्र तू ही कह तो ।'

फेंक दिया मिट्टी में उसने
मिट्टी का गुड्डा तत्काल;
'मैं तो वही खिलौना लूंगा'—
मचल गया दीना का लाल ।

मैं तो वही खिलौना लूंगा'
मचल गया शिशु राजकुमार,—
'वह बालक पुचकार रहा था
पथ में जिसको बारंबार ।'

'वह तो मिट्टी का ही होगा
खेलो तुम तो सोने से ।'
दौड़ पड़े सब दास-दासियां
राजपुत्र के रोने से ।

'मिट्टी का हो या सोने का
इनमें वैसा एक नहीं;
खेल रहा था उछल उछल कर
वह तो उसी खिलौने से ।'

राजहठी ने फेंक दिये सब
अपने रजत - हेम - उपहार;
'लूँगा वही, वही लूंगा मैं !'
मचल गया वह राजकुमार ।



श्री सियाराम शरण गुप्त

साहित्य में राजनीति का स्थान

[आचार्य चन्द्रशेखर शास्त्री]

साहित्य के लिये यदि भारत को जगद्‌गुरु की पदवी दी जाये तो सम्भवतः अयोग्य न होगा। यद्यपि आज यूरोपीय भाषाएं और विशेषकर इङ्गलिश, फ्रेंच और जर्मन भाषाएं संसार भर के सभी विषयों में अत्यधिक उन्नति कर रही हैं, उनकी यह सब उन्नति यूरोपीय इतिहास के रिनासेंस अथवा साहित्यिक जागृति काल के बाद की है। भारतवर्ष ने जितनी साहित्यिक उन्नति प्रागैतिहासिक काल कहलाने वाले समय में कर ली थी, उतनी उन्नति का उल्लेख उस समय के अन्य किसी देश के इतिहास में नहीं मिलता। आज भी ऋग्वेद संसार भर की सब से प्राचीन पुस्तक है।

यह अवश्य है कि आजकल राजनीति इतनी अधिक उन्नत हो गई है कि उसके साहित्य का सभी भाषाओं के साहित्य में एक विशेष स्थान है; किन्तु प्रश्न यह है कि क्या प्राचीन काल में भी राजनीति को इसी प्रकार मुख्य स्थान मिला हुआ था?

प्राचीन भारतीय इतिहास के प्रेमी इस बात को जानते हैं कि प्राचीनकाल में क्षत्रियों के राजा होते हुए भी मंत्रियों का पद ब्राह्मणों को दिया जाता था। वशिष्ठ और विश्वामित्र यज्ञ कराने वाले ब्राह्मण होते हुए भी अपने समय के सबसे बड़े राजनीतिज्ञ थे। प्राचीन ग्रन्थों में उन के दिये हुए उपदेशों को पढ़ने से पता चलता है कि जिस समय भारतवर्ष में काव्य, दर्शनों और नाटकों आदि की रचना नहीं हुई थी, राजनीतिक विचार उस समय भी पर्याप्त रूप में परिपक्व हो चुके थे। उस समय सब साधारण जनता विशेष शिक्षित नहीं थी। शिक्षा केवल शासकवर्ग-क्षत्रियों और ब्राह्मणों में ही थी। शासकवर्ग को तो उस राजनीति का सुन्दर ज्ञान सम्पादन करना पड़ता ही था, किन्तु बिना राजनीति की शिक्षा के उस समय ब्राह्मणों को भी विद्वान नहीं गिना जाता था। उस समय का साहित्य केवल वेद थे। अतएव ब्राह्मणों को वेदों के शाब्दिक ज्ञान के साथ-साथ राजनीति का व्यवहारिक ज्ञान भी प्राप्त करना पड़ता था। उस समय के प्रायः ब्राह्मणों के राज्याश्रित होने के कारण तो राजनीति का ज्ञान उनके लिये और भी महत्वपूर्ण एवं आवश्यक हो गया था।

यह निश्चय-पूर्वक कहा जा सकता है कि उस समय राजनीति के ज्ञान को सभी विषयों की अपेक्षा अधिक तरजीह दी जाती थी। वेदों तक के अन्दर राजनीति का बड़ा सुन्दर वर्णन हमारे इस कथन की पुष्टि में पर्याप्त प्रमाण है। उस समय की राजनीति आजकल से कम महत्व-पूर्ण नहीं थी। उस समय के राजनीति निरंकुश राजतंत्र प्रणाली (Absolute monarchy) नियमित राजतंत्र प्रणाली (Limited monarchy) अल्पसत्तात्मक शासन प्रणाली (Oligarchy) आदि सभी प्रकार की शासन विधियों से परिचित थे। उस समय राजतंत्र, गणतंत्र, और प्रजातंत्र सभी प्रकार के राज्य थे। उस समय भारतवर्ष छोटे-छोटे भागों में बंटा हुआ था। अतएव उस समय परिमित स्थान की देशभक्ति का अत्यधिक प्रचार था। इसीलिये वह लोग उस समय वैदिक युग में भी

स्वराज्य और पर-राज्य के महत्व को खूब समझते थे। ऋग्वेद के प्रथम मण्डल के ८० वें सूक्त का तो नाम ही स्वराज्य सूक्त है। इस सूक्त में कुल ११ मंत्र हैं और प्रत्येक मंत्र के अन्त में 'स्वराज्य' शब्द आया है।

सारांश यह है कि उस समय के साहित्य में राजनीति का सर्वोच्च स्थान था।

यह सत्य है कि प्राचीन वैदिक युग में भी ब्राह्मणों में वेदों के पठन-पाठन की प्रणाली पाठ रूप में ही थी। अर्थ रूप में तो वेदों को इने-गिने विद्वान् ही जानते थे। अतः वेदों के पश्चात् अर्थ रूप में पढ़ने के लिये केवल राजनीति ही रह जाती थी।

यह निश्चय है कि राजनीति के उस समय भी सुन्दर-सुन्दर ग्रन्थ उपस्थित थे। कौटिल्य अर्थशास्त्र शुक्र और बृहस्पति को राजनीति के प्राचीनतम आचार्यों के रूप में उपस्थित करता है। यद्यपि आज उनके नाम से बहुत छोटे-छोटे ग्रन्थ ही मिलते हैं; किन्तु यह जान पड़ता है कि छोटे-छोटे ग्रन्थ भी उनके प्राचीन बड़े ग्रन्थों के आधार पर ही बनाये गये थे।

महाभारत के समय तक शुक्र, बृहस्पति, विश्वामित्र, वशिष्ट और परशुराम आदि राजनीति के आचार्य समझे जाते थे। किन्तु महाभारत के समय में तीन महा धुरंधर नीति विशारदों का जन्म हुआ। इनमें भगवान् कृष्णचन्द्र सबसे प्रमुख थे। भीष्म पितामह तथा महात्मा विदुर भी उस समय के सर्वश्रेष्ठ राजनीतिज्ञों में से थे। इसप्रकार महाभारत के समय तक साहित्य में राजनीति का ही सर्वोच्च स्थान रहा।

महाभारत के बाद के डेढ़ सहस्र वर्ष के समय को भारतवर्ष का रिनासेंस अथवा साहित्यिक जाग्रति काल कहा जा सकता है। इस समय सब से प्रथम पुराण नामक एक ग्रंथ की रचना की गई, जिसमें अनेक प्रकार की कथाओं का समावेश समय समय पर किया जाता रहा। बाद में इसी पुराण के अनेक नाम देकर अनेक पुराणों की रचना की गई। इसके अतिरिक्त वेदों की व्याख्या रूप ब्राह्मण-ग्रन्थों की रचना भी इस समय ही सबसे प्रथम हुई। इन दोनों ही प्रकार के ग्रंथों में यज्ञ के साथ-साथ राजनीति को अत्यधिक महत्व दिया गया। पुराण में तो राजाओं की कथा के बहाने से राजनीति की ही शिक्षा विशेष रूप से दी गई थी। इस प्रकार इस समय भी राजनीति ने आसन को सर्वोच्च बनाए रक्खा।

महाभारत की घटना के बाद क्षत्रियों के पतन का समय आया। इस समय वह निर्बल हो गये थे। ब्राह्मण मंत्री इतने प्रबल हो गए कि राजा उनके हाथ की प्रायः कटपुतली ही बनगये। अनेक राजा उस समय धार्मिक तथा दार्शनिक चर्चा में ही अपना सारा समय बिताने लगे। मिथिला और काशी के राजदरबार तो राजनीति से बहुत दूर जा पड़े। इसी समय यज्ञ पटक, श्रौत सूत्र, संस्कार पटक, धर्म सूत्र और उपनिषदों आदि की रचना हुई। इस समय धर्म सूत्रों की रचना भी की गई, और उनेक द्वारा फिर भी राजनीति को मुख्य स्थान देने का यत्न किया गया।

चन्द्रगुप्त मौर्य के समय में यद्यपि जैन और बौद्ध साहित्य की अत्यधिक उन्नति हुई; किन्तु इस समय अकेले आचार्य विष्णुगुप्त चाणक्य अथवा कौटिल्य के अर्थशास्त्र के कारण ही राजनीति को फिर प्रधानता मिल गई। साहित्य में राजनीति को गौण स्थान वास्तव में उस समय दिया गया जब विक्रम की चौथी शताब्दी से अलंकारमय काव्य ग्रंथों का निर्माण किया जाने लगा। इस समय के राजा लोग काव्यों की मधुरता पर मुग्ध होकर काव्य धर्मज्ञ कवियों को अधिक आश्रय देते थे। महाराज विक्रमादित्य और राजा भोज इसके उदाहरण हैं। तो भी यह कहा जा सकता है कि महाराजा विक्रमादित्य के समय में भी काव्यों को राजनीति से अधिक आदर नहीं दिया गया



श्री चन्द्रशेखर शास्त्री

था। उन्होंने भारतवर्ष से शत्रुओं को निकाल कर अद्भुत पराक्रम का परिचय देकर यह सिद्ध कर दिया था कि काव्यों की शृंगार वाणी से उनके मनका ओजकम
नहीं हुआ था। कालीदास के ग्रन्थ रघुवंश में शृंगार की अपेक्षा राजनीति का कम न होना इस बात का प्रमाण है। किन्तु वह राजा भोज साहित्य माधुरी की चाशनी में इतने पग गये थे कि वह राज-काज तक से बेसुध हो गये और उनको अपने अन्तिम दिन शत्रु के जेल-खाने में बिताने पड़े।

हमें यह कहने का दुःसाहस होता है कि तत्कालीन राजाओं की निर्बलता का कारण बहुत अंशों में हमारा शृंगार-मय वर्णन वाला काव्य साहित्य ही था। महाराजा पृथ्वीराज चौहान तक इतने वीर होने हुये भी इसी शृंगार के वशवर्ती होकर गाफ़िल दशा में ही, सावधान होने से पूर्व, शत्रु द्वारा दबा लिये गये, जिससे अन्त में उनको अपने प्राणों से ही हाथ धोना पड़ा।

सारांश यह है कि यह समय साहित्य में राजनीति की अवनति का युग था और इसी कारण हमारे हिन्दू राज्यों की भी अवनति हुई।

इसके पश्चात भारतीय साहित्यों में काव्य चरित्र, दर्शन शास्त्र और भक्ति रस की बाढ़ सी आ गई। दुःखी और परतन्त्र लोग भगवान को स्मरण न करें तो और क्या करें? अतएव इस समय के भारतीय लेखकों की लेखनी में राजनीति का स्थान बहुत गौण हो गया था। मुसलमान शासकों में भी पठानों में राजनीति कम थी। उन में अलाउद्दीन खिलजी और फ़िरोज़-तुग़लक के अतिरिक्त शेष राजनीतिज्ञ कहलाने योग्य नहीं थे। हां, मुग़लों के शासन काल में शेर-शाहसूर और अकबर इतने भारी राजनीतिज्ञ थे कि उनको संसार के महान् राजनीतिज्ञों में स्थान दिया जा सकता है।

अकबर का दरबार राजनीतज्ञों का दरबार था। उसके प्रभाव से सारे देश में राजनीति का फिर उत्थान हुआ। इसके कुछ समय पश्चात् ही महाराष्ट्र में छत्रपति शिवाजी ने अपनी अभूतपूर्व राजनीति का परिचय दिया। औरङ्गज़ेब के अत्याचारों ने सोते हुये देश को फिर जगा दिया। इस समय वीर शिवाजी के अतिरिक्त, महाराणा राजसिंह और गुरु गोविंद सिंह जैसे चतुर राजनीतिज्ञ हुए। उनके आश्रय से महा कवि भूषण तथा राजपूताना के अनेक चारणों ने वीररस तथा नीति के अनेक ग्रन्थों का निर्माण किया। राजनीति ने साहित्य में एक बार फिर अपने उच्च स्थान होने की घोषणा की, किन्तु वास्तव में यह स्थायी प्रयत्न नहीं था।

औरंगज़ेब के पश्चात् निर्बल मुग़ल सम्राटों, स्थानीय मुसलमान शासकों और मरहठों ने देश के अनेक भागों पर शासन किया, किन्तु इस शासन में उच्च कोटि की राजनीति का अभाव होने के कारण उन सबको ही ब्रिटिश नीति की बुहारी ने एक झटके में ही बुहार दिया।

इस समय रेल और तार का आविष्कार होने के कारण हमको यह पता चला कि हम छोटे छोटे अंग, बंग, कलिंग या मगध आदि देशों के निवासी न होकर एक विशाल भारत-वर्ष के निवासी हैं। यूरोप के विदेशियों के हमले से हमको पता चला कि सारे भारत वासियों के (मुसलमानों सहित) राजनीतिक और आर्थिक स्वार्थ एक हैं। इसलिये इस समय सबके सब एक भारत भूमि की संतान होने के कारण देश-भक्ति के मंत्र से दीक्षित होगए।

इस समय विदेशी भाषाओं के अध्ययन से हमको पता लगा कि विदेशों में साहित्य में राज-नीति का प्रमुख स्थान है। वहां एक मजदूर बोझे को उठाये हुए भी दैनिक पत्र को अपनी जेब में डालता है और सस्ताने का अवसर

मिलते ही बोझे को एक ओर रखकर जेब से अखबार निकाल कर पढ़ने लगता है।

यद्यपि योरोप की सभी भाषाओं ने साहित्य के सभी अंगों में अत्यधिक उन्नति की है, किन्तु वहां नागरिक-शास्त्र की सब से अधिक प्रधानता है। यूरोप का प्रत्येक निवासी पहले नागरिक बनना चाहता है; वैज्ञानिक, साहित्यिक गणितज्ञ अथवा अर्थशास्त्री पीछे।

इसी नागरिक शास्त्र की उन्नति के कारण वहां साहित्य में राजनीति का प्रधान स्थान है; क्योंकि नागरिक बनते ही नागरिक अधिकारों का प्रश्न आता है। इन अधिकारों में ही वह अधिकार भी हैं, जो देश के प्रबन्ध में प्रत्येक नागरिक को प्राप्त हैं। अतएव वहां यदि सूक्ष्म दृष्टि से विचार किया जावे तो नागरिक शास्त्र का ही विकसित होकर राजनीति नाम होजाता है। अथवा यह भी कहा जासकता है कि नागरिक शास्त्र भी राजनीति का ही अंग है।

खेद है कि हम भारतवासी यूरोपवासियों के इतने सम्पर्क से भी अधिक न सीख पाए। हमारे हृदय में आज भी काव्य और उपन्यासों की अपेक्षा राजनीति के लिये मान नहीं है। यदि आज किसी से हिन्दी लेखकों के नामों को पूंछा जावे तो वह तुरन्त ही अच्छे-अच्छे कवियों और उपन्यास लेखकों के नाम गिना देगा। राजनीति तथा इतिहास आदि लेखकों को तो शायद पूंछा भी न जावेगा। यह है हमारी आजकल की दूषित मनोवृत्ति। वास्तव में जिस समाज में जिस विषय का प्रेम होता है, वह उसी में उन्नति करता है। आज राजनीति में कम प्रेम होने के कारण ही हम राजनीति में इतने अधिक पिछड़े हुए हैं।

साहित्य में राजनीति के स्थान का यूरोप के विषय में अध्ययन करते हुए हम देखते हैं कि वहां राजनीति के ग्रन्थ लिखने वालों का अधिक मान है। आजीविका की दृष्टि से भी यूरोप और अमेरिका में राजनीति के लेखकों को लेखन व्यवसाय से अधिक पैसा मिलता है। राजनीति के पश्चात् वहां अर्थ शास्त्र और इतिहास विषय के लेखक अधिक मान, प्रतिष्ठा और आजीविका प्राप्त किए हुए हैं। इसके पश्चात् वैज्ञानिकों का और फिर काव्य तथा उपन्यास आदि के लेखकों के मान का नम्बर आता है।

वास्तव में उन्नत राष्ट्र में इन विषयों के सम्मान और स्थान का यही क्रम है। किंतु अवनतिशील और पतित राष्ट्रों की दशा बिल्कुल दूसरी होती है। उन देशों की राजनीति के आत्मा का विनाश अथवा पतन होजाने के कारण वहाँ राजनीति आदि उच्च कोटि के विषयों को नीचा स्थान दिया जाता है। भारत वर्ष इस विषय का एक जीता-जागता उदाहरण है। अपने राजनीति की आत्मा के पतन के कारण ही यहां साहित्य में विभिन्न विषयों को उपरोक्त क्रम से ठीक उलटे क्रम में मान दिया जाता है। इसीलिये यहां उक्त मान का क्रम निम्नलिखित है:—

उपन्यास, काव्य विज्ञान, इतिहास, अर्थ-शास्त्र और राजनीति।

इस प्रकार साहित्य में सर्वोच्च स्थान की अधिकारिणी होते हुए भी राजनीति को भारतीय साहित्य में सबसे नीचा स्थान दिया जाता है। यही कारण है कि भारतवर्ष में लेखकों की गिनती की जाने पर पहले काव्य और उपन्यास लेखकों को ही गिना जाता है, राजनीति और इतिहास के ग्रन्थ लिखने वालों को तो कोई पूछता भी नहीं।

सारांश यह है कि वास्तव में राजनीति का साहित्य में अत्यन्त महत्वपूर्ण एवं सर्वोच्च स्थान है और वह पाश्चात्य देशों में उसको प्राप्त भी है, किन्तु भारतवर्ष में राजनीतिक जागृति के अभाव के कारण राजनीति को साहित्य में

[शेष पृष्ठ ३६ पर]

कविता और जीवन—एक कहानी

[श्री 'अज्ञेय']

—※—

मैं आपको सिर्फ कहानी नहीं, कहानी से अधिक कुछ सुनाने लगा हूँ। जरा कान लगा कर और कान से अधिक मन लगाकर सुन लीजिए। जो गाली आप देना चाहते हैं—पढ़कर आप गाली देंगे यह तो निश्चित है—उसे जरा अन्त तक रोक रखिए। 'सब्र का फल मीठा होता है'—क्या पता आपके सब्र का मुझे मिलने वाला फल, यह गाली, भी मीठी हो जाय? इस 'कहानी' पर कलम घिसने का पारिश्रमिक मुझे नहीं मिलेगा, यह तो आप जानते ही होंगे, इसलिये गाली के बारे में फ़िक्रमन्द होने के लिए आप मुझे क्षमा कर देंगे, यह उम्मीद है।

और जब 'कहानी से अधिक कुछ' कहने लगा हूँ, तब प्लाट-कथानक के झगड़े में क्या पड़ना। ये छोटी बातें कहानी के लिये ठीक होती हैं। यहाँ तो जो सामने आ जाय वही उपयुक्त है। तो लीजिए, याद आती है हरिद्वार की एक बात—

शिवसुन्दर को सूझा था कि वह कलकत्ते में रहकर गली-गली की खाक छानकर कविता करना चाहता है, तभी कविता नहीं बनती। बंगाली क्लर्क, सिख ड्राइवर, एंग्लो-इण्डियन लोफ़र-लफंगे, बिहारी कान्स्टेबल और सभी जगह के भिखमंगे—सब आदमी, आदमी, आदमी—भला यह भी कोई कविता का विषय है? इन्सान और कविता—हुह! कविता के लिए चाहिए प्रकृति, नदी-नाले, पलाश के उपवन, लता-फूल, मलय-पवन, और दूर कहीं कुछ अस्पष्ट, अदृष्ट नहीं, दूर कहीं किसी नूपुर-वलयित रहस्यमयी की पगध्वनि......और इस सूझ के उठते ही वह बोरिया-बिस्तर—बिस्तर कम बोरिया अधिक—लेकर हरिद्वार चला आया था। गुरुकुल की तरफ नहर के किनारे एकान्त में एक मकान में सिरे का कमरा उसे मिल गया था, वहीं रहकर वह कविता के भावुभाव की प्रतीक्षा कर रहा था।

वह अभी प्रकटी नहीं थी। दिन भर अरहर के खेतों में भटकना उसे अच्छा लगा था, दूर एक पहाड़ी की चोटीपर बने हुए देवी के मन्दिर की आड़में सूर्य का मुँह छिपा लेना और भी अच्छा लगा था; और शाम को गंगा की ओर से जो तेज और शीतल हवा आकर बारीक पिसे हुए रेत का परिमल उसके सारे चेहरे पर चिपका गई थी, वह भी उसे बुरी नहीं लगी थी...लेकिन अच्छे लगकर ही यह सब रह गए थे, जिस दैवी घटना की, उन्मेष की आशा उसने की थी वह नहीं हुआ था। रात को चारपाई पर लेटा-लेटा वह सोच रहा था कि क्यों नहीं हुआ वह उन्मेष, और कुछ उत्तर नहीं पा रहा था। केवल एक अतृप्ति-सी उसे घेर रही थी। वह कभी ऊँघ लेता, फिर जाग जाता, और जागने पर न जाने क्यों उसे सूना-सूना लगता और झल्लाहट होती। उसे लगता कि जीवन बहुत अधिक नीरस है, उसे जीने के लिए कविता की जरूरत है, मुखर सौन्दर्य की जरूरत है......

वह फिर ऊँघ गया, और जब वह चौंक कर जागा तब आधी रात थी। उस सन्नाटे में अकस्मात जाग जाने का कारण उसे नहीं समझ आया; वह कान लगाकर सुनने लगा कि किस स्वर ने उसे जगाया था।

कुछ नहीं। योंही जग गया वह।

लेकिन—उसे जान पड़ा कि कमरे की खिड़की के बाहर कहीं नूपुरों की ध्वनि हो रही है, रह-रह कर और बदल-बदल कर, मानो कोई स्त्री संभ्रान्त गति से चल रही है, कभी रुक कर और कभी तेजी से।

इतनी घनी रात में कौन बाहर ? और क्यों ? शिवसुन्दर पूरी तरह जाग गया। उसकी अशान्ति केन्द्रित होकर एक तनी हुई सी प्रतीक्षा बन गई।

नूपुरों की ध्वनि फिर आई। उसने कोशिश की, कान लगाकर पहँचान सके कि कहाँ से आती है, लेकिन उसे लगा कि कभी वह एक तरफ़ से आती है, कभी दूसरी।

क्या हवा ही उसे धोखा दे रही है ? रह-रह कर एक मीठा सा झोंका आ जाता है, कभी एक तरफ़ से, कभी दूसरी तरफ़ से, क्या इसी लिए तो नहीं वह स्वर भी भागता हुआ जान पड़ता ? क्योंकि किसी अभिसारिका का—यदि वह स्त्री अभिसारिका है तो, लेकिन और हो क्या सकती है?—ऐसे समय इधर-उधर भागना, वह भी जब उसके पायल इतनी ज़ोर से बज रहे हों, कुछ जँचता नहीं। कवि भी कह गए हैं, "मुखरमधीरं त्यज मञ्जीरं—"

तभी पायल बड़े ज़ोर से बज उठे—खनन्-खनन्!

शिवसुन्दर उठ बैठा। वह स्वर मानों उसके सिरहाने के पास से ही आ रहा था। उसका हृदय धकधक करने लगा—इस एकान्त निर्जन स्थल में किसी अपरिचिता का इतना साहस...

पायल फिर बजे, और शिवसुन्दर जान गया कि वे कहाँ हैं। उसके सिरहाने के पास की खिड़की के बाहर ही वह स्वर है।

लेकिन कौन है वह स्त्री, और इतनी रात वहाँ क्यों है ? और इतना हौसला कैसे है उसका कि—? शायद कोई पुंश्चली स्त्री होगी—लेकिन पुंश्चली होती, तो क्या इससे अधिक चतुर न होती, चुपचाप न आती ?

शिवसुन्दर को प्रतीत हुआ कि बहुत तेज़ गति से बहुत सा सोच जाने की ज़रूरत है। वह जल्दी-जल्दी दिनभर में देखे हुए प्रत्येक स्त्री-मुख की याद करने लगा—कौन हो सकती है जो उसके पास आई है ?

......तमोलिन से जब पान लिया था, तब वह पैसा लेते हुए सिर मटका कर मुस्करा दी थी। लेकिन उस मुस्कराहट में तो ख़ास कोई बात नहीं थी—लगी तो वह ऐसी ही थी मानों गाहक का दस्तूर हो—जैसे पान के साथ तम्बाकू मुफ़्त मिलता है वैसे ही मुफ़्त यह मुस्कान दी गई जान पड़ती थी। लेकिन कौन जाने, यह आधीरात में बजते हुए पायल भी उसके 'दस्तूर' ही में शामिल हों......

......शामको उसने हलवाई से दूध लिया था, तब हलवाई की लड़की भी बैठी थी। शिवसुन्दर एकटक उसकी ओर देख रहा है, सहसा यह जानकर वह शर्म से लाल हो आई थी और भीतर चली गई थी। शर्म क्या है? पुरुष को आकर्षित करने का एक साधन—तभी तो मारवाड़िनें पति के सामने घूँघट निकालती हैं लेकिन मेलों में अधनंगी नहा आती हैं—पति को आकर्षित करना होता है और दूसरे आदमी आदमी थोड़े ही हैं, सिर्फ़ ग़ैर हैं।

......और वह माँगने वाली औरत—ऐसी उसने कभी नहीं देखी थी। जब वह साधारण अपील से आकृष्ट नहीं हुआ, तब बोली, "तेरा धोवन पी लूँ, बाबू एक पैसा दे। तेरा थूक चाट लूँ, बाबू—"जब इससे भी उसे ग्लानि ही हुई तब—तेरे गुलाबी गालों पै मरूं, बाबू, एक पैसा दे। तेरी दाढ़ी को हाथ लगाऊँ, बाबू,—" और बढ़कर ठोढ़ी ही तो पकड़ली थी उसने......

शिवसुन्दर उस खिड़की पर जा पहुँचा। आँखें फाड़-फाड़ कर उसने बाहर देखा, कोई नहीं दीखा। वह फिर आकर चारपाई पर लेट गया।

और तभी पायल फिर बजे। वह फिर उठ बैठा।

अपने हृदय का स्पन्दन उसके लिए असह्य होने लगा। उसने फिर खिड़की पर जाकर देखा—कुछ नहीं। तब उसने एकदम किवाड़ खोल दिए और बाहर निकल आया। घरका चक्कर काटा, लेकिन कोई नहीं दीखा। वह फिर किवाड़ पर आकर रुका—कि दूर कहीं पायल फिर बजे! शायद वह स्त्री हताश होकर लौटी जा रही है, अरहर के खेतों में से वह स्वर आया था। शिवसुन्दर के भीतर उत्कण्ठा इतनी उमड़ आई थी कि अब उस रहस्य को खोल डालना बहुत जरूरी हो गया था — उस स्त्री को खोज लेना...और रात भी तीव्र गति से बीतती जा रही है, यह भी फिक्र उसे हो आई थी। नींद उसकी आँखों में नहीं थी, कुछ और था जो उसके लिए अभ्यस्त नहीं था और जिसका वह नाम नहीं जानता था......

वह लपक कर अरहर के खेत में घुसा। उसके मनमें आया, अगर मैं शब्द बेधी बाण चलाने की क्रिया जानता तो उसे बाणों से ऐसा घर लेता कि एक जगह टिक कर खड़ी रहती! लेकिन—लेकिन—

उसका हृदय धक् से हो गया—बहुत पास ही कहीं बहुत मधुर कोमल स्वर से पायल बजे—खनम्!

शिवसुन्दर की आतुर आँखों ने अन्धकार को भेद डालना चाहा, पर कुछ दीखा नहीं। उसे शीघ्र ही आने वाले सबेरे की याद आई, पर सबेरा होने से सब चौपट होजायगा! उसने धीरे से पुकारा, "कौन हो तुम?"

जवाब नहीं आया। उसने फिर कहा, "कौन हो? इधर निकल आओ।"

फिर भी उत्तर नहीं मिला। उसे बिहारी का एक दोहा याद आया—अरहर, कपास, ईख सब कट जायँगे ... अभी अरहर कटने के दिन नहीं आए, पर वह तो रात भी नहीं बीतने देना चाहता... उसने फिर पुकारा, "कहाँ हो तुम?"

उत्तर में कुछ दूरपर पायल बजे! दाईं ओर कहीं पर—लेकिन नहीं, वे फिर बजे तो उसे प्रतीत हुआ कि बाईं ओर हैं। वह खेत से बाहर निकलकर मेंड़ पर आया, हताश-सा बैठ गया।

हवा का झोंका कभी-कभी आता था, तब उसमें बसे हुए शीत से शिवसुन्दर का कुण्ठित मन और भी सिकुड़ जाता था... और तब दूर कहीं, कभी इधर, कभी उधर, पायल बज उठते थे...

रात—या यों कहें कि भोर, क्योंकि पौ फटने ही वाली थी—अत्यन्त सुन्दर थी। लेकिन शिवसुन्दर का ध्यान उधर नहीं था, वह मर्माहत-सा मेंड़ पर बैठा था...

उषा की एक लाल किरण आकाश में फिर गई, मानों देवी के आने के लिए मार्ग को बुहार गई, किसी लाल मंगल सूचक चूर्ण से चौक पूर गई। शिवसुन्दर की थकी आँखों ने देखा; चारों ओर प्रकृति का लास है—नदी है, नहर है, पलाशके फूले हुए उपवन हैं, समीरण धीरे-धीरे बहने लगा है और फिर न जाने किसके पायलों की ध्वनि उसके पास लिए आ-रहा है ...लेकिन इस सबकी जैसे उसपर छाप नहीं पड़ी। उसमें सिर्फ एक ही जिज्ञासा थी–जिसके पायल हैं, वह कहाँ है?

पायल उसके हाथ के पास कहीं बजे। उसने चौंककर देखा, वहाँ एक छोटा-सा, सूखा-सा पौधा था, और कुछ नहीं!

और पौधा हवा के झोके में फिर काँपकर बोला, खनन्!

क्षण भर शिवसुन्दर स्तब्ध रह गया, फिर मानों आकाश से गिरा...फिर उसमें एकाएक निराशा का क्रोध उमड़ आया, उसने एक ही झटके में उस पौधे को जड़ समेत नोंच लिया।

और उसके क्रोधकम्पित हाथों में भी उस

पौधे में लगी हुई पकी फलियों ने कहा, खनन !

शिवसुन्दर ने उस हताशा में मानों सत्य को देख लिया, लेकिन समझने से पहिले ही वह सत्य बुझ भी गया—उसने जाना कि वह सिर्फ कविता नहीं चाहता है, सिर्फ सौन्दर्य नहीं चाहता है, इससे अधिक कुछ चाहता है...लेकिन क्या चाहता है ? वह नहीं जानता, इतना जानता है कि वह अतृप्त रह गया है, भूखा रह गया है, चौंक कर ऐसे जाग गया है कि उन्निद्र होगया है उसे...

[२]

शिवसुन्दर धीरे-धीरे घर लौटा। रात भर की घटनाएं मानों एक पहले कभी सुने हुए ग्राम्य-गीत की एक पंक्ति में सिमट कर उसके मन में गूँजने लगीं—"तेरी पैंजनिया न्यूँ बाजे ज्यूँ बाजे बीज सणी दा !" बेवकूफ कहीं का—उलटी बात कहता है ! आखिर गँवार रहा होगा ! "बीज सणी दा न्यूँ बाजे ज्यूँ बाजे तेरी पैंजन" यों होना चाहिए था !

पर घर पहुँचते-पहुँचते वे घटनाएँ इससे भी छोटी एक सूक्त में सिमट आईं—वह जीवन माँगता है।

कविता माँगना, सौंदर्य माँगना, बेवकूफी है। जहाँ जीवन नहीं है, वहाँ कविता क्या और सौंदर्य क्या ? वे होंगे वैसे ही खोखले जैसा यह बजता हुआ सनी का बीज !

तब फिर कलकत्ता ? लेकिन कलकत्ता जीवन कहाँ है, वह तो निरा सत्य ही सत्य है, कड़वाहट ही कड़वाहट है। वाक्यं रसात्मकं काव्यं—और कड़वा अधिक से अधिक छः रसों में से एक है, तब सत्य भी जीवन का अधिक से अधिक एक छठा हिस्सा है......बाक़ी पाँच ? बाक़ी पाँच ? और कहाँ हैं, मधुरेण समापयेत । मधुर नहीं तो कुछ नहीं—वही रसों में रस है...

शिवसुन्दर की समझ में आगया कि उसने गुरुकुल की तरफ़ आकर गलती की। वह सामान लेकर हर-की-पौड़ी पहुँचा, वहाँ मेले की भीड़ को चीरता हुआ भीतर घुसा और अन्त में ठीक-ठाक करके उसने एक कमरा ले लिया जिससे गंगा और उसके पार की पहाड़ियाँ, भी दीखती थी, और इस पार घाट की सीढ़ियाँ उसपर आने-जाने वाली भक्त-भक्तिनियों की भीड़ें और ऊपर का रास्ता भी दीखता था।

सामान एक ओर रखकर वह झरोखे पर बैठ गया और नीचे झाँकने लगा।

जीवन पाने का यही ठीक ढंग है। कलकत्ते में तो आदमी पिस जाता है—वह भी किन में ? गन्दे, मैले कुचैले लोगों में जिनसे छू जाने पर दिनभर अपने शरीर में बू आती है। यहाँ और बात है—सौंदर्य भी है, लोग भी हैं, गति भी है, और फिर भी वह अलग है, इस भीड़-भड़क्के के अधीन नहीं, उससे ऊपर है, दर्शक है। दर्शक होकर ही जीवन से काव्य-रस खींचा जा सकता है—जो स्वयं उसमें पड़ गया वह तो तिल हो गया जिसे पेर कर तेल खींचा जायगा।

शिवसुन्दर की दृष्टि नीचे घाट की सीढ़ियाँ चढ़ती हुई दो स्त्रियों पर टिक गई। तभी न जाने क्यों उन्होंने भी आपस में बात करते-करते ही ऊपर देखा। शिवसुन्दर से आँख मिलने पर वे मुस्करा दीं और आगे बढ़ गईं।

हाँ, ठीक तो है। जिस चीज़ की ओर यह इशारा है, वह प्रेम ही तो है। जीवन ही तो है, क्योंकि प्रेम जीवन का मधुरतम रस है।

लेकिन मन शिवसुन्दर का चाहे जितना भागे, दृष्टि उसकी नीचे ही लगी हुई थी। दो और स्त्रियाँ उसके दृष्टि-पथ से गुजर रही थीं। शिवसुन्दर एकटक उनकी ओर देख रहा था। एक ने तिरछी चितवन से उसे देखा, वह दृष्टि मानों कौंध कर कुछ कह गई; पर दूसरी ने एक तीखी, सशंक और कुछ कुछ भीत दृष्टि अपनी संगिनी और शिवसुन्दर पर डाली और अधिक तीव्र गति से आगे चल पड़ी।

शिवसुन्दर थोड़ा-सा मुस्करा दिया। फूल के साथ कांटे तो होने ही चाहिए, नहीं तो जीवन का मजा क्या। एक ओर आकर्षण, दूसरी ओर विघ्न, यही तो है जीवन।

न जाने क्यों, स्त्रियाँ जोड़ियों में ही जा रही थीं, अकेली नहीं। एक और जोड़ा सामने से गुज़रा। इन्होंने भी न जाने क्यों झरोखे के पास आकर ऊपर देखा। उन की दृष्टि में सन्देह पहले से था, जब उन्होंने शिवसुन्दर को एकटक देखते हुए पाया तब उसमें क्रोध भी आ मिला। अवज्ञा से सिर हिला कर वे आगे निकल गईं।

शिवसुन्दर ने सोचा, विरोध में एक आकर्षण होता है, एक ललकार होती है। वह आह्वान करता है कि आओ मुझ से दो-दो हाथ खेल लो। आचार्य भी कह गए हैं कि बिना संघर्ष के, conflict के, कला का विकास नहीं होता! हो कैसे सकता है?

ज्यों ज्यों दिन बढ़ता आता था, स्नानार्थी अधिकाधिक संख्यामें आते जाते थे। जब औरतें भी झुन्ड बाँध-बाँध कर आरही थीं, और झुन्ड ही लौटने लगे थे।

एक टोली शिवसुन्दर के झरोखे के नीचे से निकली। उन कई-एक औरतों में से एक ने भी आँख उठाकर नहीं देखा, उनके लिए मानों शिवसुन्दर था ही नहीं।

शिवसुन्दर ने तड़पकर कहा "नहीं, नहीं यह नहीं है जीवन! यह झूठ है, यह असत् है, अशिव है, असुन्दर है! यह हो ही नहीं सकता। यह जीवन नहीं है!"

लेकिन वह समूह निकल गया; उसके बाद और भी कई टोलियाँ स्त्रियों की आईं और निकल गईं, पर किसी ने नहीं देखा कि जीवन का भिक्षु शिवसुन्दर झरोखे में खड़ा है, वह प्रवाह उसकी आंखों के आगे से वैसे ही निकल गया जैसे नदी के बीच में अथाह पानी बहता हुआ चला जाता पर किनारे से सटे हुए और सड़ते हुए तृण को वहीं पड़ा रहने देता है हिलाता भी नहीं...उसे लगा, वह समुद्र की लहरों द्वारा उच्छिष्ट रेत पर पड़े एक घोंघे के भीतर सड़ते हुए जीव की तरह है, कि वह इस प्रवाह के आगे जूठन की तरह अत्यंत नगण्य, क्षुद्र होगया है...

और उसने फिर तड़प कर कहा, "नहीं, यह झूठ है, यह नहीं है जीवन! मैं नहीं माँगता यह!

लेकिन वह क्या माँगता है आखिर? वह जानता है कि यह नहीं है जो उसने माँगा था; लेकिन क्या माँगा था उसने, यह तो वह नहीं जानता है। वह इतना ही जानता है कि वह क्षुद्र होगया है, अपनी आंखों में गिर गया है, जब कि आशा थी उसे बड़े हो जाने की, स्वामीत्व की...

वह झरोखे से हट गया और सोचने लगा, क्या मैं कलकत्ते लौट जाऊँ? लेकिन इस विचार से वह सहम गया। कलकत्ते में तो कविता नहीं बनेगी; यहाँ शायद—इस अतृप्ति और अपदस्थता में शायद...

विधि हँसती है। विधि हँसती है या नहीं, कौन जाने; पर वह हँसती जरूर है। मुहावरे ने उसे हँसने का हक दिया है।

लेकिन शिवसुन्दर की माँगें? उसकी अतृप्ति? उसकी वासनाएँ?

विज्ञान की कुछ पुस्तकें उसकी समस्याओं का उत्तर देने की कोशिश करती हैं। लेकिन वे विदेशी हैं। विदेशी ज्ञान शिवसुन्दर क्यों चाहे? वह हिंदी लेखक है। हिंदी राष्ट्रभाषा है। वह राष्ट्रभाषा का लेखक है! क्या इतना ही इसलिए पर्याप्त नहीं है कि वह आँखें बन्द करके गाया करे, गाया करे अपनी माँग के गान, अपनी अनुभूति के गीत, नहीं, अनुभूति के अपने अननुभव के आलाप! चाहे वह गाना उस सिखाए हुए मंगते की पुकार की तरह क्यों न हो जो एक दमड़ी की उपलब्धि के लिए पहले स्वर में दीनता लाता है, फिर उस दीन स्वर को सुन कर स्वयं मान लेता है, वह आर्त है? शिवशंकर भी तो आकाश के तारे तोड़ने का दम नहीं भरता, सामर्थ की डींग नहीं हाँकता;

अभिमान के तिक्त और कर्म के कषाय रसों से उसे क्या, वह तो 'मधुरेण समापन' चाहता है; वह तो मांगता है, सिर्फ़ मांगता है एक छदाम !

× × ×

अब आप को मौक़ा है कि आप गाली दे लें। कहानी ख़त्म हो गई है। लेकिन जो कुछ आप को कहना है जल्दी कह डालिए, क्योंकि मुझे अभी कुछ और निवेदन करना है ? मैंने कहा था न 'कहानी से अधिक कुछ' कहूंगा ?

शायद आप को लगे कि मैंने कहानी भी नहीं कही, अधिक की क्या बात। लेकिन अगर आप को यह लगा है तो आप अब तक दिल के गुबार निकाल चुके होंगे। अन्त में 'अधिक कुछ' मुझे यह कहना है कि अगर मेरी रचना में आप को 'छोटा मुंह बड़ी बात' जान पड़ी हो, तो यह सोच कर क्षमा कर दीजिए कि आख़िर मैं भी एक दुर्भाग्य का मारा हिन्दी लेखक हूँ, उस हैसियत से मैं भी आकाश के तारे तोड़ने या सामर्थ्य की डींग मारने वाला, अभिमान का तिक्त और कर्म का कषाय रस पीने वाला कौन होता हूँ, मैं भी तो मधुरेण समापयेत् के लिए माँगता हूँ सिखाए हुए आर्त्तस्वर में आप की दया का एक छदाम !

[३० वें पृष्ठ का शेष]

अधिक मान नहीं दिया जाता। इसको हम भारत-वर्ष का केवल दुर्भाग्य ही कह सकते हैं।

यद्यपि आजकल भारत वर्ष के साहित्य में राजनीति का स्थान अत्यन्त महत्वपूर्ण नहीं है; किन्तु यह निश्चय पूर्वक कहा जा सकता है कि उसका भविष्य उज्ज्वल है।

सन् १९१७ से कांग्रेस ने राष्ट्रीय जाग्रति के कार्य को इस ज़ोर-शोर के साथ उठाया है कि अब भारत वर्ष के किसान तक 'स्वराज्य' शब्द से परिचित हो गए हैं। कांग्रेस कार्य-कर्ताओं ने इस विषय में कुछ साहित्य निर्माण करने का यत्न भी किया है, किन्तु जैसा ऊपर लिखा जा चुका है, इस प्रकार के साहित्य को अभी उपन्यासों और काव्यों की तुलना में आदर नहीं मिला है।

सन् १९३७ का वर्ष भारतीय राजनीति के इतिहास में अत्यन्त महत्वपूर्ण वर्ष है। इसी वर्ष भारत कांग्रेस ने यह निर्णय किया कि प्रान्तीय कांग्रेस नेता मंत्री-पदों को ग्रहण करें। कांग्रेस के इस कार्य का इतिहास और साहित्य दोनों पर ही बहुत कुछ प्रभाव पड़ा है। जिसके फल स्वरूप राजनीति फिर अपने उस सर्वोच्च अलंकृत आसन को अपनाने के लिये उद्योग कर रही है।

आजकल की भारतीय राजनीति पर दृष्टि-पात करने से यह निश्चय पूर्वक कहा जा सकता है कि साहित्य में राजनीति का भविष्य उज्ज्वल है और वह दिन दूर नहीं है जब साहित्य में राजनीति अपने उसी ऊँचे आसन को फिर प्राप्त कर लेगी।

तुलसीदास के समय का हिन्दू समाज

[पं० रामनरेश त्रिपाठी]

—*—

भारतवर्ष ही के नहीं, संसार के इतिहास में वह दिन बड़े ही दुर्भाग्य का था, जिस दिन हिन्दुओं की स्वतन्त्रता का अपहरण हुआ। एक समय था, जब मनु ने इस देश के निवासियों के बारे में अभिमान से यह लिखा था।—

एतद्देशप्रसूतस्य सकाशादग्रजन्मनः।
स्वं स्वं चरित्रं शिक्षेरन् पृथिव्यां सर्वमानवाः॥

मनु ही ने नहीं, इस देश के समस्त ऋषियों, मुनियों, स्मृतिकारों, दार्शनिकों, कवियों और विचारकों ने संसार को सुख और शान्ति से विभूषित करना ही प्रत्येक मनुष्य के जीवन का ध्येय बताया था। हिन्दुओं के पूर्वज आर्यों ने अपने आत्मिक और सामाजिक विकास का लाभ सम्पूर्ण विश्व को देने के लिये अपना यह सिद्धान्त बना रक्खा था।—

कृण्वंतो विश्वमार्यम्।

'संसार को आर्य बनाओ।'

हिन्दू शास्त्रों के सुप्रसिद्ध यूरोपीय पंडित तथा वेद-भाष्यकार मैक्समूलर भारतवर्ष के सम्बन्ध में लिखते हैं।—

If I were to look over the whole world to find out the country most richly endowed with all the wealth, power, and beauty that nature can bestow—in some parts a very paradise on earth,—I should point to India. If I were asked under what sky, the human mind has most fully developed some of its choisest gifts, has most deeply pondered on the greatest problems of life, and has found solutions of some of them which will deserve the attention even of those who have studied Plato and Kant, I should point to India And if I were to ask myself from what literature,. we, here in Europe, we who have been nurtured almost exclusively on the thoughts of Greeks and Romans, and of one semitic race, the jewish, may draw that corrective which is most wanted in order to make our inner life more perfect, more comprehensive, more universal, in fact more truly human—a life not for this life only, but a transfigured and internal life—again I should point to India. Whatever sphere of the human mind you select for your special study, whether it be language, or religion or mythology, or philosophy, whether it be laws or custom primitive art or primitive science, everywhere you have to go to India, whether you like it or not, because some of the most valuable and most instructive materials in the history of man are treasured in India and in India only.

"यदि मुझे उस देश का पता लगाने के लिये, समस्त संसार पर दृष्टिपात करना पड़े, जो सब प्रकार के धन-धान्य, शक्ति और सौन्दर्य से, जिन्हें प्रकृति प्रदान कर सकती है, पूर्ण हो; और जो कुछ अंशों तक पृथ्वी पर स्वर्ग-सा हो, तो मैं भारतवर्ष की ओर संकेत करूँगा। यदि मुझ से पूछा जाय कि किस आकाश के नीचे मनुष्य के मस्तिष्क ने अपने चुने हुये गुणों को पूर्णतः विकसित किया है, किसने जीवन के महत्वपूर्ण प्रश्नों पर गहराई तक मनन किया और उनमें से अनेक को हल किया है, जो उन लोगों का ध्यान अपनी ओर आकर्षित करने के योग्य हैं, जिन्होंने प्लेटो और केन्ट को अध्ययन किया है, तो मैं भारतवर्ष की ओर संकेत करूँगा। यदि मैं स्वयं अपने आप से पूछूँ कि यहाँ (योरप में) हम लोग, जो कि ग्रीक, यूनानी तथा एक सेमेटिक जाति यहूदी ही के विचारों पर सर्वथा शिक्षित हुये हैं, किस साहित्य से वह सत्य, जो कि हमारे आन्तरिक जीवन को अधिक निर्दोष, अधिक व्यापक, अधिक सार्वभौमिक और वास्तव में विश्वासरूप से मानवीय बनाने के लिये आवश्यक है, तथा वह जीवन जो केवल इसी जीवन के लिये न हो, बल्कि एक आदर्श (रूपान्तरित) एवं आभ्यन्तरिक (आन्तरिक) जीवन हो, किस साहित्य से प्राप्त कर सकते हैं, तो मैं पुनः भारतवर्ष की ओर संकेत करूँगा। अपने विशेष अध्ययन के लिये मनुष्य की मेधा-शक्ति के जिस पहलू को भी आप पसन्द करें, चाहे वह भाषा हो, चाहे धर्म, चाहे पुराण, चाहे दर्शन, चाहे क़ानून हो या लोक-रीति, चाहे प्राचीन कला हो, या प्राचीन विज्ञान, सब के लिये आपको भारतवर्ष जाना पड़ेगा; चाहे आप इसे पसन्द करें या न करें, क्योंकि मनुष्य-जाति के इतिहास की अमूल्य और शिक्षाप्रद सामग्रियाँ भारतवर्ष में और केवल भारतवर्ष ही में, संचित (संगृहीत) हैं।"

पर समय के प्रभाव से सामाजिक शक्ति क्षीण होती गई और जनता पर से समाज-निर्माताओं का नियन्त्रण ढीला पड़ गया। यकायक एक भिन्न सभ्यता और भिन्न साहित्य का आगमन इस देश में हुआ, जिससे हमारी शृंखला ही नहीं टूट गई, हमारा नैतिक पतन भी प्रारम्भ हो गया। तुलसीदास के समय तक पहुँचते-पहुँचते तो हम में अनेक बुराइयों ने घर कर लिया और हम सर्वनाश की ओर डंका बजाते हुये दौड़ने लगे। तुलसीदास ने हमारे पतन का जो शब्द-चित्र खींचा है, उसे देखकर अपने प्राचीन गौरव से अभिज्ञ जन पीड़ित हो उठते हैं।

उनके समय में राज्य-शासन ऐसे हाथों में था, जो हिन्दुओं की सभ्यता की उपेक्षा ही नहीं, उसके नष्ट करने का भी पूरा प्रयत्न करता था।

शासक-समुदाय के लोग बड़ा उपद्रव करते थे और अनेक प्रकार के ढोंग रचकर, धर्म को निर्मूल करने के लिये वेद-विरुद्ध कार्य करते थे। जहाँ कहीं वे गायें और ब्राह्मणों को पाते थे, चाहे वह शहर हो या गाँव या पुरवा, उसमें आग लगा देते थे।—

करहिं उपद्रव असुर निकाया।
नाना रूप धरहिं करि माया॥
जेहि विधि होय धरम निरमूला।
सो सब करहिं बेद प्रतिकूला॥
जेहि जेहि देस धेनु द्विज पावहिं।
नगर गाँव पुर आगि लगावहिं॥

(बाल-काण्ड)

न कोई अच्छे आचरण कर पाता था, न देवता, ब्राह्मण और गुरु का सत्कार ही होने पाता था। न किसी में हरि-भक्ति थी; न कोई यज्ञ, जप और दान ही करता था। वेदों और पुराणों को तो कोई स्वप्न में भी नहीं सुनता था।—

सुभ आचरण कतहुँ नहिं होई ।
देव बिप्र गुरु मान न कोई ॥
नहिं हरि भगति जग्य जप दाना ।
सपनेहुँ सुनिय न बेद पुराना ॥
(बाल-कांड)

शासक लोग रावण की तरह अत्याचारी हो रहे थे। जप, योग, वैराग्य, तप और यज्ञ की चर्चा सुनकर वे स्वयं उठ दौड़ते थे और जप आदि करने वालों को वे रहने नहीं देते थे। संसार का आचार-विचार भ्रष्ट हो गया था; धर्म कहीं कान से भी नहीं सुनाई पड़ता था। जो कोई वेद और पुराण का मर्म समझाता था, वह बहुत प्रकार से भयभीत किया जाता था और देश से निकाल दिया जाता था।—

जप जोग बिरागा तप मख भागा
श्रवन सुनइ दससीसा ।
आपुन उठि धावइ रहइ न पावइ
धरि सब घालइ खीसा ॥
अस भ्रष्ट अचारा, भा संसारा
धरम सुनिय नहिं काना ।
तेहि बहु बिधि त्रासइ देस निकासइ
जो कह बेद पुराना ॥
(बाल-कांड)

जनता पर होनेवाले अत्याचार इतने बढ़ गये थे कि उनका पूरा-पूरा वर्णन तुलसीदास भी नहीं कर सके। हिंसा ही जिनकी प्रीति का विषय था, उनके पापों की सीमा ही क्या हो सकती थी।—

बरनि न जाइ अनीति,
घोर निसाचर जो करहिं ।
हिंसा पर अति प्रीति,
तिनके पापहिं कवनि मिति ॥
(बाल-कांड)

शासन की प्रतिकूलता से दुष्ट, चोर, जुआरी और परधन और परदारा के अपहरण करने वाले बढ़ गये थे। माता, पिता और देवता का सम्मान नहीं था। लोग साधुओं से सेवा-कार्य लेने लगे थे।—

बाढ़े खल बहु चोर जुआरा ।
जो लंपट परधन परदारा ॥
मानहिं मातु पिता नहिं देवा ।
साधुन्ह सन करवावहिं सेवा ॥
(बाल-कांड)

हिन्दुओं का शासन न रहने से धार्मिक प्रतिबन्ध उठ गया था। शासक-जाति के भय से सद्ग्रन्थ लुप्त हो गये थे और दंभियों ने अपनी-अपनी बुद्धि से कल्पना कर-करके नये मत और पन्थ चला लिये थे।—

कलिमल ग्रसे धरम सब,
लुप्त भये सद्ग्रन्थ ।
दंभिन निज मति कलप करि,
प्रगट किये बहु पन्थ ॥
(उत्तर-कांड)

वर्णाश्रम धर्म का नाश हो गया था, लोग वेदों के विरोध में लग गये थे, ब्राह्मण वेद-द्वारा धन प्राप्त करने लगे थे और राजा लोग प्रजा का भक्षण करने लगे थे। वेदों के नियंत्रण में कोई नहीं था।—

बरन धरम नहिं आस्रम चारी ।
स्रुति बिरोध रत सब नरनारी ॥
द्विज स्रुति बेचक भूप प्रजासन ।
कोउ न मान निगम अनुसासन ॥
(उत्तर-कांड)

जिसे जो पसन्द होता था, उसे ही वह अपने जीवन का मार्ग मानता था। जो तर्क-वितर्क में बहुत निपुण होता था, वही पण्डित कहलाता था। झूठे ढकोसलेवाले पाखंडी लोगों को सब लोग सन्त समझते थे।—

मारग सोइ जाकहुँ जो भावा ।
पंडित सोइ जो गाल बजावा ॥

मिथ्यारम्भ दम्भरत जोई।
ताकहु संत कहइ सबु कोई॥

(उत्तर-कांड)

जो हँसी-मजाक में पटु और झूठा होता था, वही गुणवन्त कहा जाता था। जिसकी बड़ी-बड़ी जटायें और लम्बे-लम्बे नख होते थे, वही तपस्वी समझा जाता था।—

जो कछु झूठ मसकरी जाना।
कलिजुग सोइ गुनवन्त बखाना॥
जाके नख अरु जटा बिसाला।
सोइ तापस प्रसिद्ध कलिकाला॥

(उत्तर-कांड)

शूद्र लोग ब्राह्मणों को ज्ञानोपदेश करते थे, जनेऊ पहन कर वे भूमि का दान लेते थे, स्त्रियाँ दुराचारिणी हो गई थीं, सौभाग्यवती स्त्रियाँ तो गहनों से रहित थीं और विधवायें नित्य नये-नये सिंगार किया करती थीं।—

सूद्र द्विजन्ह उपदेसहिं ज्ञाना।
मेलि जनेऊ लेहिं कुदाना॥
गुन मन्दिर सुन्दर पति त्यागी।
भजहिं नारि परपुरुष अभागी॥
सौभागिनी विभूषन हीना।
बिधवन्ह के सिंगार नवीना॥

(उत्तर-कांड)

लोग ब्रह्म-ज्ञान के सिवा दूसरी बात ही नहीं करते थे, पर वे एक कौड़ी के लिये ब्राह्मण और गुरु की हत्या कर डालते थे। शूद्र ब्राह्मणों से बहस करते थे कि क्या हम तुमसे घटकर हैं? जो ब्रह्म को जाने, वही ब्राह्मण; यह कहकर वे घुड़ककर आँखें दिखलाते थे।—

ब्रह्म ज्ञान बिनु नारि नर,
कहहिं न दूसरि बात।
कौड़ी लागि मोह बस,
करहिं बिप्र गुरु घात॥
बादहिं सूद्र द्विजन्ह सन,
हम तुम तें कछु घाटि।
जानइ ब्रह्म सो बिप्रबर,
आंखि देखावहिं डांटि॥

(उत्तर-कांड)

नीच वर्ण के लोग स्त्री के मर जाने और घर की सम्पत्ति नष्ट होजाने पर सिर मुड़ाकर सन्यासी हो जाते थे। ब्राह्मण अक्षर-ज्ञान से रहित लोभी, कामी, आचारहीन और पुंश्चली स्त्रियों से प्रेम रखने वाले होगये थे। सब लोग स्वकल्पित आचार विचार-करते थे। अवर्णनीय अनाचार फैला हुआ था।—

नारि मुई घर संपति नासी।
मूँड़ मुड़ाय भये सन्यासी॥
बिप्र निरच्छर लोलुप कामी।
निराचार सठ बृषली स्वामी॥
सब नर कल्पित करहिं अचारा।
जाइ न बरनि अनीति अपारा॥

(उत्तर-कांड)

यती लोग खूब धन लगाकर सुन्दर-सुन्दर महल बनवाते थे; तपस्वी धनी थे और गृहस्थ ग़रीब हो गये थे, राजा पापी हो गये थे; उनमें धर्म नहीं रह गया था, वे सदा दंड दे-देकर प्रजा की विडंबना किया करते थे।—

बहु दाम सँवारहिं धाम जती।
बिषया हरि लीन्हि रही बिरती॥
तपसी धनवंत दरिद्र गृही।
कलि कौतुक तात न जात कही॥
नृप पाप परायन धर्म नहीं।
करि दंड बिडंब प्रजा नितहीं॥

(उत्तर-कांड)

बार-बार अकाल पड़ता था, सब लोग अन्न बिना दुखी होकर मर रहे थे, लोग रोगों से पीड़ित थे, सुख का कहीं नाम नहीं था, अकारण ही उनमें अभिमान और क्रोध उत्पन्न होता था, उनकी आयु छोटी होगई थी, पर वे समझते थे कि कल्पांत तक उनका नाश न होगा। उनमें न संतोष था, न विवेक और न नम्रता; सुजाति

और कुजाति सभी तरह के लोग भिखमंगे होगये थे।

प्रीति, विवाह-संबंध, सब गुण और व्यापार आदि अनेक उपायों से लोग एक दूसरे को कल, बल और छल से ठगते रहते थे।—

प्रीति, सगाई, सकल गुन,
बनिज उपाय अनेक।
कल बल छल कलिमल मलिन,
डहकत एकहि एक॥
(दोहावली)

दंभ-सहित धर्म, छल-युक्त व्यवहार, स्वार्थ-मय स्नेह और रुचि के अनुसार आचार रह गया था। चोर, चतुर, ठग, नट, भँडुवे और भाँड़ ही स्वामी को प्रिय लगते थे। जो सर्वभक्षी होता था, वही परमार्थी कहलाता था। पाखंड ही सुपथ था।—

दंभ सहित कलि धर्म सब,
छल समेत ब्यवहार।
स्वारथ सहित सनेह सब,
रुचि अनुहरत अचार।
(दोहावली)

चोर चतुर बटमार नट,
प्रभु प्रिय भँडुआ भँड।
सब भच्छक परमारथी,
कलि सुपन्थ पाखंड॥
(दोहावली)

कलियुग के भक्त लोग (कबीरपंथी, गोरख-नाथी आदि) साखी, शब्द, दोहरे और किस्से-कहानियां कह कर भक्ति का निरूपण करते हुये वेदों और पुराणों की निन्दा करते थे।

साखी सबदी दोहरा,
कहि किहिनी उपखान।
भगति निरूपहिं भगत कलि
निंदहिं बेद पुरान॥
(दोहावली)

मन्दिरों और तीर्थों में बड़ा ही दुराचार फैल गया था। मानों कलयुग अपने दल-बल सहित वहाँ क़िला बांध कर बैठ गया था।—

सुर सदननि तीरथ पुरिन,
निपट कुचालि कुसाज।
मनहुँ मवासे मारि कलि,
राजत सहित समाज॥
(दोहावली)

गोंड़ और गँवार तो राजा थे और यवन महाराजाधिराज। साम, दाम और भेद से काम नहीं लिया जाता था; केवल कराल दंड ही राज्य-शासन का आधार था।—

गोंड गँवार नृपाल महि,
यमन महा महिपाल।
साम न दाम न भेद कलि,
केवल दंड कराल॥
(दोहावली)

यवन शासकों के सहधर्मी लोग मूर्त्ति के संदेह में हिन्दुओं के घर के सिल और बट्टे तक फोड़ डालते थे। उनके टुकड़ों के पहाड़ खड़े होगये थे। हिन्दू लोग कायर, क्रूर और कुपुत्र हो रहे थे, उनके घर-घर में सैकड़ों रास्ते थे। लोगों में एका नहीं था।—

फोरहिं सिल लोढ़ा सदन,
लागे अढुक पहार।
कायर कूर कपूत कलि,
घर घर सहस डहार॥
(दोहावली)

तुलसीदास के समय में गोरख-पंथियों के प्रभाव से हिन्दू समाज में जो उच्छृंखलता फैल गई थी, तुलसीदास ने उसका चित्र इन छन्दों में खींचा है।—

बरन धरम गयो आस्रम निवास तज्यो
त्रासन चकित सो परावनो परो सो है।

करम उपासना कुबासना बिनास्यो ज्ञान
बचन बिराग बेष जगत हरो सो है ॥
गोरख जगायो जोग भगति भगायो लोग
निगम नियोग ते सो केलि ही छरो सो है ।
काय मन बचन सुभाय तुलसी है जाहि
राम नाम को भरोसो ताहि को भरोसो है ॥
(कवितावली)

बेद पुरान बिहाइ सुपंथ
कुमारग कोटि कुचाल चली है ॥
काल कराल नृपाल कृपाल न
राज समाज बड़ोई छली है ॥
बर्न बिभाग न आस्रम धर्म
दुनी दुख दोष दरिद्र दली है ।
स्वारथ को परमारथ को
कलि राम को नाम प्रताप बली है ॥
(कवितावली)

उस समय लोगों की आर्थिक स्थिति बड़ी ही शोचनीय हो गई थी ।

किसबी किसान कुल बनिक भिखारी भांट
चाकर चपल नट चोर चार चेटकी ।
पेट को पढ़त गुन गढ़त चढ़त गिरि
अटत गहन गन अहन अखेटकी ॥
ऊँचे नीचे करम धरम अधरम करि
पेट ही को पचत बेचत बेटा बेटकी ।
तुलसी बुझाय एक राम घनस्याम ही तेँ
आगि बड़वागि तेँ बड़ी है आगि पेट की ॥
(कवितावली)

खेती न किसान को भिखारी को न भीख बलि
बनिक को बनिज न चाकर को चाकरी ।
जीबिका बिहीन लोग सीद्यमान सोचबस
कहैं एक एकन सों कहां जाई का करी ।
बेदहू पुरान कही लोकहू बिलोकियत
साँकरे सबै पै राम रावरे कृपा करी ।
दारिद दसानन दबाई दुनी दीनबंधु
दुरित दहन देखि तुलसी हहा करी ॥
(कवितावली)

साम्प्रदायिक मत-मतान्तरों के प्राबल्य से समाज की बौद्धिक प्रगति डाँवाडोल हो रही थी । परस्पर राग-द्वेष की बृद्धि हो रही थी, और भिन्न-भिन्न सम्प्रदाय वाले अपने-अपने विचारों का समर्थन और अन्यों का खण्डन कर रहे थे । कुछ मुनिगण अपने को देव-कोटि में गिनने लगे थे और अपने अनुयायियों से पूजा प्राप्त करने लगे थे ।—

आगम बेद पुरान बखानत
मारग कोटिन जाहि न जाने ।
जे मुनि ते पुनि आपुहि आपुको
ईस कहावत सिद्ध सयाने ॥
धर्म सबै कलिकाल ग्रसे
जप जोग बिराग लै जीव पराने ।
को करि सोच मरै तुलसी
हम जानकीनाथ के हाथ बिकाने ।
(कवितावली)

शैवों और वैष्णवों का विरोध निर्गुण और सगुण का खंडन-मंडन चरम सीमा तक पहुँच चुका था। परस्पर कलह, बितंडावाद, निंदा-अपवाद, हिंसा और प्रति-हिंसा, ये ही शिक्षित समाज के बौद्धिक विषय बन गये थे । तुलसीदास ने मानस के उत्तर-काँड में काग भुसुंडि का उनके गुरु के साथ जो विवाद वर्णन किया है, वैसी घटनायें तुलसीदास को नित्य ही देखने को मिलती होंगी ।

एक बार गुरु लीन्ह बोलाई ।
मोहि नीति बहु भांति सिखाई ॥
शिव सेवा कै फल सुत सोई ।
अबिरल भगति रामपद होई ॥
हर कहुँ हरिसेवक गुरु कहेऊ ।

सुनि खगनाथ हृदय मम दहेऊ ॥

एक बार हरमन्दिर,
जपत रहेउँ हरनाम।
गुरु आयेउ अभिमान तें,
उठि नहिं कीन प्रनाम।

(उत्तर-कांड)

पुनि पुनि सगुन पच्छ मैं रोपा।
तब मुनि बोलेउ बचन सकोपा॥
मूढ़ परम सिख देउँ न मानसि।
उत्तर प्रतिउत्तर बहु आनसि॥
सठ स्वपच्छ तव हृदय बिसाला।
सपदि होहु पच्छी चंडाला॥

(उत्तर-कांड)

ऊपर के उद्धरणों से हमारे पाठक अनुमान कर सकेंगे कि तुलसीदास के समय के और आज-कल के समय में इतना ही अन्तर है कि यद्यपि महात्मा तुलसीदास की कृपा से अब हम में तत्कालीन शैवों और वैष्णवों की कटुता नहीं रह गई है, पर अन्य विषयों में हम उस समय की अपेक्षा अधिक पतितावस्था में पहुँच गये हैं। तुलसीदास से अपने तत्कालीन समाज की दुर्दशा देखी न गई। वे व्यथित हुये, उद्विग्न हुये; पर कायर की तरह मन मसोस कर नहीं रह गये; उन्होंने अपना जीवन अपने समाज पर निछावर कर दिया। वे अशरण के शरण, भक्त-वत्सल राम को लेकर हमारे बीच में आ बैठे और उनके जीवन के प्रकाश से हमारे दुःख-पूर्ण घर के कोने-कोने को भरना प्रारम्भ कर दिया। यद्यपि हमारे दुःख कम नहीं हुये, पर जहाँ तक तुलसीदास का प्रकाश पहुँचा है, वहाँ तक हम में दुःख को धैर्य के साथ सहने की शक्ति और दुःख से निवृत्ति पाने की लालसा बढ़ गई है।

(लेखक की अप्रकाशित पुस्तक से)

ज्ञान-भूमि भारतवर्ष

[एडवर्ड कार्पेंटर]

यहाँ भारतवर्ष में भी—आश्चर्यमय, रहस्यमय हजारों मीलों के विस्तार के ऊपर,

हजारों मीलों तक फैली नारियल की कुंजों के बीच विशाल नदियों के बल खाते तटों पर, धान के खेतों के अन्तहीन विस्तार के ऊपर,

पूर्वी और पश्चमी घाटों और हिमालय के ऊपर, जंगली जानवरों से भरे विस्तीर्ण अरण्यों के बीच,

निरभ्र उज्ज्वल आकाश के नीचे—जहाँ सामर्थ्य और सौन्दर्य दोनों ही बातों में प्रचण्ड सूर्य—जहाँ पेड़ों के झुरमुटों से झांकता चन्द्रमा, ऐसा प्रखर और उज्ज्वल,

विशाल जनाकीर्ण नगरों में, वर्णों, धर्मों और मत-मतान्तरों और जातियों और परिवारों की ओट में,

जात-पांत और रीति-रिवाजों की अन्तहीन घनीभूतस्तरों के नीचे,

यहां भी, गुहाप्रविष्ट, दिव्य-ज्ञान, दिव्य-रहस्य।

युगों पहले, अन्धकारमय भूतकाल में ओझल हजारों बरस पहले,

उत्तरी पर्वतों को पार करते हुए, सत्यद्रष्टाओं की एक जाति अपने पालतू पशुओं के झुन्डों सहित,

ज्ञान-भूमि भारत में अवतीर्ण हुई,

बड़े-बूढ़े नेता बने हुए—पीछे पिछड़े हुए नहीं—

गरुड़-सम नेत्रवाले, करुणापूर्ण नेत्र वाले वयो वृद्ध,

प्रशांत मुख-मण्डलों सहित,

दृढ़-निश्चय अंकित मुखों सहित,

फुर्तीले-शरीरों पर पूरा नियंत्रण रखने वाले और उन्हें भरपूर शक्ति से संचालन करने वाले—उन्हें दीर्घावस्था तक धारण किये रहने वाले अथवा स्वेच्छा से मृत्यु को सौंप देने वाले।

इन मनुष्यों ने सूर्य अथवा तारागण के तले, विस्तृत उन्मुक्त में दोनों के बीच, स्वेच्छा से ध्यान
मग्न होकर इच्छा के भोग को भुगता और उसे परे हटा, संकल्प-विकल्प और अविद्या के
चिपटे हुए आवरणों को अपने ऊपर से उठा देने और हटा देने के पश्चात,
अविनश्वर विश्व देखा और उसी के साथ एकाकार हो गए।
उनके भीतर सूर्य और चन्द्र और नक्षत्रगण उनके भीतर भूत और भविष्य,
उनके भीतर वस्तुओं और विचारों का अन्तरतम रहस्य-उद्घटित—भूतमात्र के साथ एकाकार—
जीवन से अतीत—मरण से अतीत—प्रशांत और अपार समुद्र,
गहन-गम्भीर, अक्षय और अवर्णनीय आनन्द के।
और अब आजकल, जात-पांत और रीति-रिवाजों की घनीभूत स्तरों के नीचे छिपे पड़े हुए,
वही सत्य-द्रष्टा, वही ज्ञान।
इन हज़ारों वर्षों के बीच लंबी परंपरा अक्षुण्ण चली आती हुई,
पवित्र-विद्या गुरु-शिष्य-परंपरा-द्वारा चली आती हुई; भली-भाँति सुरक्षित;
रूढ़िमय बाहरी देखावों के नीचे, मत-मतान्तरों और जात-पांतों के समस्त बन्धनों के नीचे, नदी
की धारा के समान बहता हुआ, जिसे बांध रखने की सामर्थ्य किसी को भी नहीं,
जो समय आने पर स्वयं ही समस्त बंधनों और मत-मतान्तरों को बहा ले जायगा;
वह जीवात्मा का सत्य-स्वरूप—वह विश्व-व्यापी, विराट, उन्मुक्तजीवन-स्वतन्त्रता, समता—
लोक-आत्मा—प्रभु सर्वसाधारण का अमूल्यवीर्य

अनुवादक—डा० रामकृष्ण

मेरे ध्येय

[श्री तोरन देवी शुक्ल 'लली']

—*—

ध्येय तुम्हीं हो मेरे, मैंने फिर भी तुम्हें कहां पाया,
अपने को अतृप्त आशा में अब तक कितना भरमाया।

धन, वैभव, सौन्दर्य, सुयश भी और अनेकों माया भी
देखो हैं, पर नहीं मिल सकी वहां तुम्हारी छाया भी।

नीरस हैं यह प्रणयकथायें शुष्क विरह गाथायें भी;
मुझे निरर्थक ही जंचती हैं मोहक मूक व्यथायें भी।

धन में देखा, जन में देखा, वन में भी जाकर देखा।
मिलती तो कृतार्थ हो जाती कहीं एक धूमिल रेखा।

माया के इस महा नृत्य में अभिमानी हुंकारों में,
नहीं छिपे हो जान चुकी हूं जर्जर उलझे तारों में।

तुम्हीं न यदि मिल सके मुझे तो मुक्ति भला क्यों कर लूंगी;
पा जाने को तुम्हें कदाचित् जग में जीवन फिर लूंगी।

जब मेरे हठ पर हो मां का सहज गर्व से मुसकाना;
उस स्वर्णिम अवसर पर मेरे ध्येय अचानक मिल जाना।

———

महापुरुष

[श्री भगवतीप्रसाद वाजपेयी]

—*—

नाजिरात में बैठा हूं। ऐसा ही कुछ कचहरी का काम आगया है। यों काम चाहे न भी लगे, पर कभी-कभी जब मैं खुद ही ऐसे काम में लग जाता हूं, तो चारा क्या है ? जीवन में तृष्णा है और तृष्णा में द्वन्द्व। और फिर द्वन्द्व ही जीवन है। महाचक्र के इस आवर्त्तन में मैं क्या हूं, कौन हूं, जो कचहरी से भागता रहूं, बचता रहूं और घृणा से विवर्ण हो-होकर व्यर्थ ही में अपने मन-प्राण को आम्लान करता रहूं। द्वंद्व से भागकर, कर्तव्य-पराङ-मुख होकर, मनुष्य जायगा कहाँ ? हाँ, तृष्णा से भाग सकता है वह; किन्तु क्षणभर के लिए। क्योंकि, अचिर भविष्य में, मनस्ताप से आप ही जल-जल कर, एक बार फिर जब वह फूत्कार कर उठता है, तो सुहासिनी तृष्णा की कोमल गोद ही उसे महोल्लास का पावन जीवन देती है।

हाँ, वो मैंने कहा न, मैं नाजिरात में बैठा हूँ। कुछ सोच रहा हूँ और देख रहा हूँ। सोच-सोच कर देखता हूँ और देख-देखकर सोचता हूँ। विविधि प्रकार के चित्र सामने आ-जा रहे हैं।

एक वकील साहब पेंट में हाथ डाले हुए जारहे हैं। गति उनकी मन्द है। कोट की बाहरी जेब में मोड़कर रक्खा हुआ चश्मा झलक रहा है। साइकिल पर आये हैं और पेंट के निम्न भाग को मोड़कर जो क्लिप लगाया जाता है, वह अभी तक ज्यों-का-त्यों लगा हुआ है। उस ओर वकील साहब का ध्यान नहीं गया है। ध्यान जाय भी क्यों ? उसकी जरूरत ? सिर के बाल सफेद होगये हैं। पूरे तो नहीं, अधिकांश। लेकिन इससे क्या, बालों की सफेदी कोई चीज नहीं होती। दिल जिसका सफेद—उज्ज्वल, क्या उसके बाल कभी सफेद हो सकते हैं ? हो भी जांय, तो उनका मूल्य क्या? शरीर की वृद्धता हमारा करेगी क्या ? असल चीज मन है। और वकील साहब ने जेब में हाथ डालकर देखा, नोट कहीं गायब तो नहीं होगये। तभी उन्हें निकाल कर गिनने लगे—एक दो, तीन। ठीक तो है। दस-दस रुपये वाले तीन नोट हैं और सुरक्षित हैं। फिर दूसरे हाथ से बाहरी जेब में से चश्मा निकालना चाहा। जरा-सा उसे ऊपर को उठाया भी किन्तु फिर जहाँ-का-तहाँ रख दिया और आगे बढ़ चले। किन्तु आगे बढ़कर फिर लौट पड़े। शायद कोई चीज भूल गये हैं।

इसी क्षण एक दूसरे साहब दीख पड़े। खसखसी दाढ़ी है आपकी। बाल अभी सफेद नहीं हुए हैं। लेकिन मंशा उनकी ऐसी ही जान पड़ती है। गौर वर्ण है। सिर पर गोल, सफेद मारकीन की, टोपी है। पायजामा कुछ ऊँचा—पैरों की गर्द-गुबार से सर्वथा निश्चिन्त। हाथी-काच का पुराने ढब का जूता पहने हुए हैं।

शरीर अचकन से चिपका हुआ है, या अचकन ही शरीर से चिपक गयी है, कौन जाने? इस विषय पर मैं बहस नहीं करना चाहता। आप चाहे जो समझ लें, मुझे एतराज़ नहीं। हाँ, तो मैं आगे बढ़ता हूँ। बाईं ओर एक दुलाई बग़ल से दबाये हुए हैं और उसके नीचे चारख़ाने का एक डस्टर लटक रहा है। दायें हाथ में टोंटीदार एक लोटा भी है। ग़रज़ेकि आप इसी वक़्त देहात से चले आ रहे हैं।

मैं बाहर आ गया था। जाड़े की धूप खड़ी-खड़ी खिलखिला रही थी।

उन्होने तपाक से आदाबअर्ज़ किया, तो अपरिचय के कारण मैं क्षण भर उन्हें देखता रह गया। उत्तर में मैंने तसलीम अर्ज़ तो किया—लेकिन ज़रासा ठहर कर।

वे बोले—क्यों भाईजान, बाबू चन्दरपरकाश साहब वकील किधर तशरीफ़ रखते हैं?

मैंने कहा—जान पड़ता है—कचहरी में आप शायद पहली ही बार आये हैं।

"जी, आप बहुत बजा फ़रमाते हैं। मैं तो कम्बख़्ती का मारा आ भी गया, मगर क़सम क़ुरान की, जो इसमें एक हुरूफ़ भी झूठ हो। मेरे बुज़ुर्गवार तो इस हरामजादी से सौ कोस दूर रहा करते थे—सौ कोस!"

"यह नाज़िरात है, मुन्शी जी। यहाँ वकील लोग नहीं बैठते। वे लोग ज्यादातर या तो पश्चिम यानी मग़रिब की जानिब बैठते हैं, वहाँ उनके अलग-अलग कमरे भी हैं।—या फिर उस चौरासी गजे वाली धर्मशाला में जिधर से आप आ रहे हैं।

"अच्छा, तो आपको जो तकलीफ़ दी, उसके लिये माफ़ कीजियेगा। हुज़ूर का दौलतख़ाना?"

"मैं! मैं तो परदेसी आदमी हूँ, यहाँ ऐसे ही आ गया। (इस) ग़रीब का घर कानपुर जिले में है।"

"तभी। तभी तो मुझे ताज्जुब हो रहा था कि ऐसी शायस्ता ज़बान यहाँ अलाहाबाद में कहाँ से आयेगी! अच्छा, इजाज़त चाहता हूं—आदाबर्ज़।"

वे चले गये।

चले तो गये, लेकिन आगे बढ़कर, जो साहब उनके सामने आये, उनसे भी उन्होंने यही प्रश्न किया—क्यों भाईजान, बाबू चन्दरपरकाश वकील...... ?

"मैं बाबू चन्द्रप्रकाश का मुहर्रिर हूं कि मुअक्किल, जो उनके पीछे-पीछे घूमता होऊँ।

ऊपर से नीचे तक अंगरेज़ी ड्रेस से लक़ दक़ हैं। सरदी में सताये हुए कभी-कभी सी-सी करने लगते हैं। हवा जो चल रही है। हाथ पर हाथ रगड़ रहे हैं। मुन्शी जी के प्रश्नपर ज़रा देर ठहरे और फिर चल दिये और खीज उठे। बोले—अजीब देहाती दहक़ानी आदमी मिल जाते हैं!

ये साहब एक बैरिस्टर हैं। अपने एक मित्र से पूछकर मैं अभी जान सका हूँ। बद ज़बान बहुत हैं आप। अक़सर कहा करते हैं—दुनिया में जितने भी महा पुरुष हुए हैं, सब इसी तरह के थे। लोग बात करना तो दूर रहा, उनके सामने होकर निकलने से भी कांपते थे। आतङ्क वह चीज़ है जनाब कि मोची से मिनिस्टर तक बना सकता है!

मेरा काम होचुका है। बस, मुझे किसी तरह यहाँ चार बजा देने हैं। और अपने मित्र राजेश्वर के साथ चला जाना है। इसी नाज़िरात में वह क्लर्क है। मैंने सोचा—ज़रा-सा घूम ही लूँ। ऐसा सजीव बायस्कोप भला और कहाँ देखने को मिलेगा!

एक-एक करके कई इजलासों में घूम आया। कहीं कोई परिचित व्यक्ति नहीं देख पड़ा। न मुन्शीजी देख पड़े, न वे वकील साहब—न वे भावी महा पुरुष। और मैं सोचता यही हूँ कि इन्हीं लोगो में से कोई मिल जाता, तो अच्छा होता।

वकील साहब को केवल थोड़ी देर देखना चाहता हूँ। बैरिस्टर साहब से उलझ पड़ने की तबियत है, और मुन्शीजी से मिलकर उनकी बातें सुनने की लालसा है।

एक ओर पीपल के पेड़-तले धूप से लिपटा हुआ मैं चुपचाप खड़ा हुआ था कि राजेश्वर ने आफ़िस से बाहर आकर कहा—चलो तुमको घुमा लायें। यहाँ खड़े-खड़े अकेले में तुम्हारा जी ऊब रहा होगा...अरे सुनो महाराज, कोई ताजी गरम चीज भी बनाई है ?

"समोसे बन रहे हैं। पाव भर ले आऊँ ?"

"और कोई मीठी चीज ?"

"बरफ़ी बहुत बढ़िया है।"

"दोनों आध-आध पाव। लेकिन यहाँ मत लाना। कोई साला...। चलो, वहीं चलें। तीन बज गया। भूख उग उठी है। काम में तबियत नहीं लग रही थी।"—
कहते हुए मेरे कन्धे पर हाथ रखकर राजेश्वर चल दिया।

हम लोग अभी महाराज के पास पहुँच भी न पाये थे कि दिखलाई पड़े मुन्शीजी। राजेश्वर का साथ छोड़कर मैं तुरन्त उधर बढ़ गया। राजेश्वर पूछता ही रह गया—अरे कहाँ जाते हो ? कुछ खाये तो जाओ। लेकिन मुझे तो उस समय दूसरी ही ख़ुराक चाहिये थी।

निकट पहुँचते ही मैंने पूछा—कहिए, भेंट हुई ?

कहाँ हो सकी ! वे अपने मुक़ाम पर भी नहीं मिले। यहीं कहीं होंगे—उनके मुन्शीजी फ़रमा रहे हैं।

"उनको आप पहचानते हैं ?"

"यही तो दिक़्क़त दरपेश है।"

"तो उनके मुन्शी जी से क्यों नहीं कहा कि उनसे मिलादें।"

"कहना चाहता था, लेकिन कहता कैसे ? मुमकिन है कि इसके लिये भी वह कोई सवाल कर बैठता। आपको तो मालूम ही है कि यहाँ बिना पैसे के कोई काम नहीं होता।"

"लेकिन यह तो उसी का फ़र्ज था। इसमें पैसे की कौन बात थी ?"

"फ़र्ज क्या चीज है और किस वक़्त पर, किस जानिब से उसकी शुरूआत हुआ करती है, इसका फ़ैसला भी तो यही लोग, सुना है कि अपने आप कर लिया करते हैं।"

"चलिये। मैं आपके संग चलता हूँ। उनके मुन्शी को एक ऐसी डाँट बताता हूँ कि वह भी याद करे। यह भी नहीं सोचा कि जिनसे काम निकलता है, उनकी सहूलियत की ओर भी तो जरा गौर करना होता है !"

मैं मुन्शी जी के साथ चल दिया।

चलते-चलते मैंने पूछा—आप किस काम से तशरीफ़ लाये हैं ?

"एक रुक्के की नालिश करनी है। रुपया तमादी हुआ जाता है। दोस्तों ने कहा—डिग्री करवालो। पीछे वसूल होने का मौक़ा तो रहेगा।"

"आसामी की हैसियत क्या है ?" मैंने पूछा।

"हैसियत की बात न पूछिए। एक जोड़ी बैल की खेती करता है। जिस वक़्त रुपया लिया था, काफ़ी ख़ुशहाल था। अब वह बात तो नहीं रही; लेकिन देना चाहता, तो थोड़ा-थोड़ा करके भी दे सकता था।"—वे बोले।

"कभी आपने तक़ाज़ा भी किया ?"

"तक़ाज़ा ! तक़ाज़ा करना मैंने मुनासिब नहीं समझा। बहुत सीधा आदमी है। 'चच्चा-चच्चा' कहते उसकी जबान से फूल-से झड़ते हैं !"

मैं चुप रह गया 'तक़ाज़ा इन्होंने कभी किया नहीं ! आदमी भी वह बहुत सीधा है, और देना चाहता तो थोड़ा-थोड़ा करके दे भी सकता था। आखिर इसका मतलब क्या है ?' सोचते हुए मैंने उनकी ओर देखा। बड़े परेशान नजर आरहे थे। मुद्रा पर उद्दाम अनुशोचन स्पष्ट झलक रहा था। बोले—मेरा मतलब उसे परेशान करना नहीं

है। मैं तो महज़ क़ायदे की कार्यवाई करने चला आया हूँ। मुझे डिग्री इजराय नहीं करनी है। लेकिन इन्सान की ज़िन्दगी तो महज़ फ़र्ज़ को लेकर है न? आपने मेरा मतलब समझा कि नहीं?

अब हम लोग बाबू चन्द्रप्रकाश वकील के कमरे में थे। मुन्शी बोला—बाबू साहब आते ही होंगे। आप नाहक़ परेशान होरहे हैं। तशरीफ़ रखिये।

वे जमीन में बिछे हुये टाट पर बैठ गये।

मैंने देखा, दुलाई और लोटा एक जगह कोने में बदस्तूर रक्खा है, तो पूछ दिया—आप खाना खाचुके कि नहीं?

"खाना तो आजकल शाम को ही मिलता है, क्योंकि रमज़ान के दिन हैं।" कहते हुए यकायक उनके मुख पर सात्विक दृढ़ता का अकृत्रिम उल्लास मुखरित हो उठा। अब मैंने सोचा—राजेश्वर क्या कहता होगा।

और तब—

—राजेश्वर? वह भूखा है, क्योंकि उसने नौ बजे खाना खाया है और क्योंकि समोसे ताजे बन रहे हैं!

—और मुन्शी जी देहात से दस मील पैदल आये हैं। और उनकी भूखे मुख पर रमज़ान का मृदुल प्यार आलोकित होरहा है!

मुहर्रिर से कहा—

क्यों मुन्शीजी, इसी तरह से आप अपने वकील साहब के साथ फ़र्ज़ अदायगी किया करते हैं? ये वकील साहब से मिलने के लिए कितने उत्सुक हैं, आपको शायद इसका इल्म होचुका है। इनका काम ज़रूरी भी होसकता है, यह भी आप सोच सकते हैं, तो भी आप इनको तुरन्त उनसे मिला देने की ज़रूरत नहीं समझते! क्यों?"

तुरन्त उत्तर मिला—

"मैं एक और ज़रूरी काम में लगा हुआ था।...चलिये, आप मेरे साथ चले चलिये।"

उधर से वकील साहब आरहे थे। बहुत परेशान-से दीख पड़े। मुख पर हवाइयाँ उड़ रही थीं। अपने मुन्शी को देखते ही बोले—वे तीनों नोट मालूम नहीं कहाँ गिर पड़े।

"नोट गिर पड़े!" चकितमुद्रा से मुन्शी बोला।

"क्या फ़रमाया आपने? नोट गिर पड़े! कितने के नोट थे। कब, कहाँ गिर पड़े?" मौलाना ने पूछ दिया।

वकील साहब अप्रतिभ तो थे, किन्तु मौलाना के प्रश्न पर—'किस वक़्त, कहाँ गिर पड़े' उनके होठों पर क्षणिक हास उदय होकर अस्त हो गया। नोट कहाँ गिर पड़े हैं, यह भी क्या उनके ज्ञान की बात है?

ख़ैर साहब हम सब वकील साहब के कमरे में आकर बैठ गये।

मुन्शी बोला — बतलाइए, कहाँ खोजूं?

वकील साहब बोले—खोजने की ज़रूरत नहीं है। सुबह से ही मुझे डर लग रहा था—कहीं गिर न पड़ें। वही बात हुई। उसी जेब में और भी कई काग़ज़ात थे। कई बार इनको बाहर निकालने की ज़रूरत पड़ी थी। किसी वक़्त वे नोट भी साथ ही निकलकर गिर पड़े होंगे।...अब हो क्या सकता है? जो चीज़ जाने वाली है, उसके चले जाने में आश्चर्य क्या? (मुंशी से बोले) जाओ, मैं चेक देता हूं। बैंक से रुपया ले आओ।

"लेकिन अब तो सवा तीन हो रहा है!" मुंशी बोला।

"तो त्रिवेणी बाबू की नालिश आज भी रह गयी।" कहते हुए उसकी फ़ायल देखने लगे।

मैंने कहा—ये मौलाना बड़ी देर से आपको खोज रहे थे। देहात से आये हैं। इनको आप से ज़रूरी काम है। बेहतर होगा, आप इनकी बात भी सुनलें।

"मेरा काम ऐसा नहीं है कि उसे आज ही कर डालने की ज़रूरत हो। आप इतमीनान से

अपने कागज़ात देख लीजिये। यों भी मुझे वापस नहीं जाना है। मकान पर सारा मामला समझा दूंगा। यहाँ आपको तरद्दुद भी हो सकता है!" कह कर संकेत से मौलाना मुझे लेकर बाहर आ गये।

हम लोग फिर बाहर धूप में आकर खड़े हो गये।

मौलाना बोले—मुझे कुछ शक हो रहा है। कहिए कहूँ, कहिए न कहूँ?

"कहिए—कहिए! न कहने की बात हो, तो भी, तबियत हो तो कह डालिए।" मैंने कहा।

"एक साहब से मैंने इन वकील साहब का पता पूछा था। वे ज़रा बिगड़े दिल थे। बड़बड़ा उठे। मैं उनकी शक्ल देखता रह गया। उसके बाद इन वकील साहब को खोजने के सिलसिले में मैं जो इधर-उधर घूमता फिरा, तो वे साहब एक जगह पड़े हुए कुछ कागज़ात उठाते हुए देख पड़े। मैंने समझा—उनके होंगे लेकिन···।"

इसी 'लेकिन' के साथ उनका वक्तव्य स्थिर हो कर रह गया। मैं उस समय उनसे कुछ कह नहीं सका। सन्देह अन्ततः सन्देह ही है। उसका अस्तित्व क्या? बहुतेरी निराधार बातें मानस पर आ-आकर तैरती रहती हैं। क्षण-क्षण पर हमारे भीतर अनेक प्रश्नोत्तर उत्थित-विनष्ट होते रहते हैं। मैं कैसे कहूं कि बैरिस्टर ऐसा काम कर सकता है?

उसी क्षण राजेश्वर ने देख लिया। दूर से ही बोला—अजीब मनकी आदमी हो! मैं बुलाता ही रह गया और तुमने ध्यान नहीं दिया। महाराज के यहाँ भी मैंने इन्तज़ार किया—लेकिन तुम बेकार यहाँ खड़े-खड़े मौलाना का वक्त खराब कर रहे हो। यहाँ आये ही थे, तो कोई फ़ौजदारी का मुक़दमा देखते; कोई-न-कोई आइडिया ही मिलता। लेकिन तुम ठहरे एक नम्बर के चुग़द! ... आओ, चलो इधर। मौलाना साहब माफ़ कीजिएगा, यह मेरा माशूक़ है।

बाँह में हाथ डाल कर राजेश्वर ने मुझे अपने साथ कर लिया। मैंने और उपाय न देख कर मौलाना से कह दिया—आप वकील साहब के यहाँ तशरीफ़ रक्खें। मैं अभी आता हूँ।

राजेश्वर बोला यानी इन मौलाना को तुमने क्यों फाँस रक्खा है? इन से तुम्हारी कब की दोस्ती है? कभी इनके घर भी गये हो, बीबी फ़ातिया से भी परिचय प्राप्त किया है? सुना है, एक नम्बर हसीन है वह! सच,··· के ज़मींदार हैं ये। ये मुझे नहीं जानते, लेकिन मैं इन से परिचित हूँ।

"बड़े शैतान हो तुम। छिः छिः, ऐसी बात करते हुए तुमको शर्म भी नहीं आती। कितना शरीफ़ आदमी है यह! अरे, इन्सान की कुछ तो इज्ज़त करना सीखो!"

"आक्ख़ा! यह कहो कि बिहारी बाबू न होकर तुम कोई महात्मा हो—फ़रिश्ते! और सातवें फ़लक़ से बोल रहे हो!—अरे ज़मीन पर चलो, मियाँ, ज़मीन पर!"

"अच्छा तो मुझे जाने दो। मैं इस तरह··· मुझे यह तरीक़ा······शेम आन यू!"

उसे ज़बरदस्ती छोड़कर मैं भागने लगा, तो वह एकदम से प्रतिहत होकर बोल उठा—

"एक्सक्यूज़ मी, बिहारी बाबू! ऐम वेरी सॉरी फ़ार दिस सार्ट ऑव टॉक।"

क्षणभर तक हम दोनों मौन रहे।

राजेश्वर बोला—तुम नहीं जानते, मैं तुम्हारी कितनी इज्जत करता हूं। लेकिन मैं करूँ क्या, मैं अगर इस तरह से न रहूं, तो यह क्लर्की मेरा प्राण लेकर दम ले। तुम जानते हो, आदमी मशीन तो नहीं बन सकता।

मैं अब भी चुप रहा।

" कुछ खालो, तो मैं थोड़ा निश्चित होकर अपने काम में लगूँ। मेरे साथ ही खाया था। मैं खा भी चुका, और तुम... तुमको भूख लगी होगी।" वह बोला।

"अच्छा, मैं जरा मौलाना से मिल आऊँ। अभी आता हूँ। खाना तो अब मैं तुम्हारे घर पर ही खाऊँगा। तुम ठीक चार बजे तो मेरे साथ चल दोगे न।"

"चार बजे! चार बजे तो नाजिरजी भी नहीं उठते! अच्छा, आज उनसे कहकर कुछ पहले ही चला चलूँगा।"

मैं मौलाना के पास चल दिया। वे अभी तक वहीं खड़े-खड़े मेरी प्रतीक्षा कर रहे थे। मैं जो उनके निकट पहुँचा तो वे बोले—अब मैं लौट जाना चाहता हूँ, पंडितजी। मैं नाहक़ आया। रुपया वसूल हो, चाहे न हो। मैं उस आसामी पर नालिश कर नहीं सकता। वह जब मुझ से चच्चा कहकर बात करेगा, तो उसके सामने से मेरी आँखें लच जायँगी। थोड़े-से रुपये के लिये मैं अपनी ही नजरों में गिरना नहीं चाहता। और रुपया भी, मेरा ख्याल है, अगर मैं तक़ाजा करूँ, तो, वह दे देगा।

उन्होंने इन शब्दों के साथ अपना हाथ बढ़ा दिया। फिर हाथ मिलाते हुए वे बोले—आप से मिलकर निहायत ख़ुशी हुई! क्या आप कभी मेरे ग़रीबख़ाने पर आसकते हैं? मैं उनकी ज्योतिर्मयी मुद्रा को ही देखता रह गया। कुछ कह नहीं सका। वे बोले—आप जैसा कोई भी आदमी मेरी नज़रों से अभी तक नहीं गुज़रा था और मैं तो कभी क़यास में भी न ला सकता था कि ऐसी जगह में आप जैसे लोग भी मिल सकते हैं।

अब मुझ से चुप नहीं रहा जा सका। मैंने कहा—मैं नहीं जानता, किस तरह आपका शुक्रिया अदा करूँ?

मौलाना से विदा लेकर फिर मैं फ़ौजदारी अदालत की ओर जा पड़ा। बराण्डे में खड़े-खड़े वही बैरिस्टर साहब अपने किसी साथी से कह रहे थे—उल्लू हो तुम! —चान्स खोते हो। चान्स खोने वाला आदमी कभी राइज नहीं कर सकता। तुमको यह सुनके ताज्जुब होगा कि आज एक मिनट के कशमकश में मैंने तीस रुपये पैदा किये।



श्री जैनेन्द्र कुमार

श्री जैनेन्द्रकुमार : एक व्यक्तित्व-चित्र

[श्री प्रभाकर माचवे]

—※—

(१)

ओयामा ने तो रेखाओं में जैनेन्द्र का व्यक्तित्व खींच लिया और बड़ी सफलता के साथ। आज मैं चाहता हूं कि उसी व्यक्तित्व को शब्दों में खींचूँ और यह मैं बिलकुल भी नहीं जानता कि मैं कहाँ तक सफल हूँ गा। पर मुझे सन्तोष है कि जैनेन्द्र असफलताओं को भी उदार मन से अपना सकते हैं। साथ ही स्व० पू० प्रेमचन्दजी की आज्ञा — कि 'जैनेन्द्र पर तुम एक लेख लिखो, मनुष्य और कला दोनों पर' — का भी कैसे उल्लंघन हो सकता है? यों साहस बटोर कर मैं चलूँ, पहिले मोटी बाह्य-रेखाएँ खींचना होगा, फिर धीरे-धीरे व्यक्तित्व की सूक्ष्मताएँ और अन्त में रंग भरना होगा।

देहली में साहित्य-सम्मेलन हुए तीन साल हो गये। जैनेन्द्रजी से पहिली भेंट वहीं हुई। साहित्य-परिषद् में वे बोले; गल्प-परिषद् में बोलते-बोलते उन्हें रुक जाना पड़ा (भीड़ की मनोवृत्ति के कारण) और पहिली ही बार ऐसा जान पड़ा जैसे इस अनसँवारी-सी शाल ओढ़े हुए व्यक्ति की बोली के पीछे कुछ अवश्य है जो गहरा है, ठोस है, अनुभूत है; और यह व्यक्ति केवल बोलना है इसलिये नहीं बोलता वरन् बोले बिना नहीं रहा जा सकेगा इसलिये बोल रहा है। परिषदें आखिर परिषदें हैं, अवकाश के अभाव में बहुत कम जो भी कुछ वे बोल पाये उसमें सहजता थी, विचारों का वेग था और ऐसी कुछ बात थी जो सीधी भीतर असर डालती हुई पैठती है। उनके बोलने के बीच-बीच में अंगरेजी के शब्द अपनी खास जरूरत के साथ बिखरे पड़े थे।

पर बाद में व्यक्तिगत भेंट हुई। और परिषद् में के जैनेन्द्र और परिषद् के बाद के जैनेन्द्र में कोई फर्क न पाया; जैसे यह साहित्य-स्रष्टा जो व्यक्ति है वह एकरस व्याप्त, लगन-भरा और बिलकुल निरामय सारल्य से ओतप्रोत है; जैसे इसके व्यक्तित्व को अहम-मद छू भी न गया हो, जैसे वह पूरी तरह भूल गया है कि वह जीवन-समीक्षक से अधिक या अलग भी और कुछ है। जीवन और साहित्य को इस प्रकार एक सूत्राबद्ध पानेवाले जैनेन्द्र की अपनी निजता उनसे पहिली भेंट ही में व्यक्ति को मिलती है। अतिशय मिलनसार, निरालस और अमितभाषी। जिसका निर्दम्भ भी एक प्रकार का दम्भ लगे ऐसा यह जीव यों लगता है मानो सभा सोसाइटी या परिषदों के लिये बना ही न हो; जैसे पूरी तौर से उसे जीवन का वही फ़कीर-ढंग अपनाना है जिसे कि वह अपने 'साहित्य और समाज' (विश्वमित्र में प्रकाशित) लेख में बनिया-ढंग से अलग कर चुके हैं। या कि जो 'जल्दी में' व्यक्त किये हुए कला सम्बन्धी अपने विचारों में उपयोगी या शुष्क सत्य से परे सुन्दर होकर जो सत्य कला के सिंहासन पर विराजमान होता है उसी सुन्दर सत्य की

उपासना में जिन्दगी बिताना चाहता है। पर परिषद् या सभा या समाज जब उसे अपने में खींच ही लेता है तब भी उसके और समूह के बीच की गाँठ साफ़ अलग झलकती रहती है। 'आलोचक' कहानी में कान्फ्रेन्स में जाना और 'जरूरी भेदाभेद' में का धार्मिक सोशलिज्म, सब जैसे इसी बात के द्योतक हैं कि यह व्यक्ति सभा में पहुँचेगा भी तो उसका एक अंग बनने की अपेक्षा, उसी के पंडाल के आसपास किसी एक हरिप्रसन्न को, किसी मनोवैज्ञानिक मॉडल को खोज निकालना ज्यादह पसन्द करेगा।

बाहर से अधिक हमें जैनेन्द्र को घर में जानना होगा। वहाँ वे पुत्र, पति, पिता सब एक साथ बने रहकर भी निरन्तर पुस्तकों में रत, ज्यादह झंझटों से बचते हुए एकाकी-से रहते हैं। जीवन की जरूरी समस्याओं के साथ वे जरूरी ही क्षण देते हैं, उनसे अधिक देर उलझे रहने की क्षमता नहीं। यहाँ आशय उनके बहिरूप से है, अन्तरूप में तो जैनेन्द्र का पूरा व्यक्तित्व ही जैसे अनुभव की ऐसी एक-एक ईंट को हृदयता की, ग्राहकता की सीमेंट से जुड़कर बना हुआ है। और यही कारण है कि उनका एकाकीपन उन्हें मनहूस नहीं बना देता, तो भी सब में मिलते-जुलते रहते हुए भी वह एकाकीपन अलग झलकता रहता है, मानो वह भी जयराज के मन में की गाँठ हो। उनकी गृहस्थी का खासा खाका 'पढ़ाई' या 'एक दिन' में पाया जा सकता है। शायद एक वर्ष भी न हुआ होगा, उनकी माता का निधन हुआ और यह भी अब उनके भीतर बैठी हुई, उनकी चिन्ताशीलता को उद्वेलित करनेवाली, एक नहीं-भूली जा-सकती-ऐसी बात है। भाभी जैनेन्द्र के वैसे सगी कोई नहीं, तो भी न जाने वे अपनी रचनाओं में 'भाभी' (वातायन) राजीव और भाभी' और 'हरिप्रसन्न की भाभी' सुनीता जैसी चीज इतनी सफाई और सुन्दरता के साथ कैसे खींच ला सके हैं। जैनेन्द्र की चीजों में पग-पगपर फूट पड़नेवाला जो घरेलूपन और खासकर हिन्दू-घर और हिन्दू-नारी की सारी बेबसी और निष्ठा जैनेन्द्र के जीवन के प्रत्यक्ष और सूक्ष्म अध्ययन से पाई हुई निजी निधि है।

वस्तुतः जैनेन्द्र में, क्या जीवन में और क्या साहित्य में, घर और बाहर, व्यक्ति और समष्टि एक दूसरे के प्रति चिर-अपेक्षाशील रहे हैं। जैसे एक का दूसरे बिना अस्तित्व ही असम्भव है। और तो भी उसमें व्यक्ति और घरवाला जो तत्व है वह दूसरे के ऊपर अधिकार से रोब जमाता हुआ चलता जान पड़ता है। माना कि परख में 'दायित्व' है पर उस दायित्व से सुनीता के मन के अन्तर्मुखी दायित्व से तुलना करने पर, जैनेन्द्र की विचार-धारा का विकास अपने ही भीतर की ओर सम्मुख अधिक है यह मानना पड़ेगा और इसीसे तो परख का नायक सुनीता का हरिप्रसन्न-सा और कुछ-कुछ जयराज-सा लगता है।

यही लौकिक और अलौकिक, वास्तव और सत्य, अनेक और एक का भेदाभेद जो है वही जैनेन्द्र के व्यक्तित्व की विशेषता है। दोनों बातें जैनेन्द्र में चलती रहती हैं अपने 'कु' और 'सु' के पूरे छाया-प्रकाश के साथ-साथ। इस सब चर्चा को संक्षेप में कहना हो तो जैनेन्द्र के व्यक्तित्व के लिये ठीक वही कहा जा सकता कि जो श्र० प्रेमचन्दजी ने 'हंस' (वर्ष ३ संख्या ४) में परख पर सम्मति देते हुए कहा था—'अन्तः प्रेरणा और दार्शनिक संकोच का संघर्ष है, इतना हृदय को समोसनेवाला, इतना स्वच्छन्द और निष्कपट जैसे बन्धनों में जकड़ी हुई आत्मा की पुकार हो।'

जैनेन्द्र ऐसी सुलझन हैं जो पहेली से भी अधिक गूढ़ हों। वे इतने सरल हैं कि उनकी सरलाई भी वक्र लगे, वे इतने निरभिमान हैं कि वही उनका अभिमान है। ये परिस्थितियों से

ऐसे आबद्ध हैं कि उसी में उन्होंने अपनी मुक्ति मान ली है।

(२)

तो जैनेन्द्र के, क्या व्यक्तित्व और क्या साहित्य में एक दम आकर्षित कर लेनेवाली पहली बात है उनमें कूट-कूटकर भरी हुई सरलता। और इस रहन-सहन और बोलचाल के बहुत सीधे-से आदमी के भीतर भी क्या ऐसी ही निरभ्र, खुली-खुली अकृत्रिमता भरी हुई होगी, ऐसा प्रश्न सहसा उठ खड़ा होता है।

पर इस सरलता के अतिरेक के साथ-साथ उसमें की जिज्ञासा, कुतूहल, सब-कुछ मान लेने की वृत्ति में मिली हुई एक रहस्यमयता भरी पड़ी है। इसी रहस्य-खंड में से जैनेन्द्र की अप्रस्तुत तथा अलौकिक सृष्टि का विधान होता है।

और जैनेन्द्र का बात-चीत का ढंग अपने में कितनी अपनापन की विशेषता लेकर मूर्त हुआ है! अपना ही वाक्य-विन्यास, अपना ही शब्द-गुन्थन, अपनी ही शैली। प्रेमचन्दजी ने परख, पर सम्मति देते हुए ठीक ही तो कहा था— उनमें साधारण-सी बात को भी कुछ इस ढंग से कहने की शक्ति है, जो तुरन्त आकर्षित करती है। उनकी भाषा में एक खास लोच, एक खास अन्दाज है। और अंग्रेजी के शब्द-समूह तो इस युक्तता के साथ 'फ़िट' बैठते हुए उस बोलने में चले आते हैं कि एक ओर तो विद्यालयीन शिक्षा से अलग रह कर भी अंग्रेजी पर ऐसा प्रभुत्व जमाने वाली उस जबान पर कुतूहल होने लगता है तो दूसरी ओर उसकी गहरे पैठने चले जाने वाली वृत्ति के साथ-साथ चलते हुए कानों को थकान-सी लगने लग जाती है, जैसे वे उस जबान के साथ-साथ दौड़ सकने में असमर्थ हों। जैनेन्द्र का यही बात कहने का, लिखने का, ढंग इतना अपनत्व-पूर्ण है कि वह अननुकरणीय है। वह अद्वितीय भी इसी दृष्टि से है।

जैनेन्द्र का अपना एक खास विनोद-भाव भी है। उनके साहित्य में तो उसके दर्शन बहुत जगह होते ही रहते हैं (यथा 'मौत की कहानी' 'कश्मीर प्रवास के दो अनुभव' में 'महात्मा जी' शब्द का प्रयोग और 'अम्बुलकर'। 'टाइप' में और खासकर 'शान्ता का रंग' में) परन्तु उनके व्यक्तिगत व्यवहार में भी वह भाव अदृश्य नहीं रहता। बिल्कुल भोले भलेमानस बनकर दूसरे के जी की बात निकाल लेने का कौशल उनकी बात करने की शैली में जैसे भरा हुआ है। वह बाहर से जितनी बुद्धूपन की लगती है उतनी ही वह भीतर से दूसरों को हतबुद्ध बनाते चलती है। जैनेन्द्र की यही मौलिक विशेषता, क्या साहित्य और क्या परस्पर सम्बन्धों में, अपनी एक अमिट याद छोड़ जाती है।

जैनेन्द्र एक मनोवैज्ञानिक हैं और सो भी बहुत 'कॉन्शस' मनोवैज्ञानिक नहीं। इसी कारण जैनेन्द्र के पास पुस्तकों पर, लेखकों पर, व्यक्तियों पर, राजनीति पर, साहित्य पर अपनी एक-एक खास राय सुरक्षित रहती है और वह मन की खदान से खुरदरी निकली हुई सम्मति अनुभूति की खराद पर चढ़ कर अच्छी तरह कटी-छँटी, साफ़ और निर्भीक, चिर-उज्ज्वल रहती है। इसी चाह के कारण ही तो जैनेन्द्र हर प्रकार के व्यक्ति के साथ बड़ी ही आसानी से मिल जा सकते हैं और उस प्रयोग के लक्ष्य के अन्तरंग का कोना-कोना छानने-टटोलने पर ही उसे वे छोड़ते हैं।

अपरिग्रह उनके व्यक्तित्व का एक और मूल-विशेष है। अनावश्यक के त्याग के मोह में कभी-कभी वे आवश्यकता भी भूल जाते हैं। विरोध उनमें भी विद्यमान हैं। पर वह जैसे सब किसी अन्तिम अविरोध के लिए उपस्थित रहता है। आदर्शवादी वे अवश्य हैं पर उनका आदर्शवाद एक तरह का

स्वाभाविक मानवतावाद है; पर वे कभी-कभी आचारवादी (प्यूरिटन) रूप में हमारे सामने आते हैं। वे मूलतः जैन हैं, यह भूल कर कैसे चला जा सकेगा। (जैन का अर्थ है ज्ञानसाधक) साहित्य में इतनी साधुता आजकल बहुत वांछनीय नहीं, पर जैनेन्द्र के लिए अवांछनीय क्या है ? वे कभी बुद्धिवादी लगते हैं तो कभी भाववादी। पर मात्रवादी-प्रतिवादी के इस चक्कर में वे कभी अटकते ही नहीं। उन्हीं के अपने शब्दों में—'अपनी रचनाओं की विविधता पर मैं अप्रसन्न नहीं हूँ। न उनमें ऐसा कोई ऐसा विरोध देखता हूँ। हाँ, विविधता तो देखता ही हूँ और सब का विविध मूल्य भी आँकता हूँ। 'एक टाइप' और 'राजपथिक' में स्थान-भेद और मूल्य भेद तो है ही। पर मेरी अपेक्षा से तो दोनों ही एक-सी ही सत्य हैं।' एक पत्र का अंश)

आशय यह है कि उन्हें तो किसी भी 'वाद' में बाँधना सम्भव नहीं। वह वन्य मुक्त-धारा के समान काल और परिस्थिति के चक्करदार कटीले पथ की परवाह न करता हुआ, नये-नये पथ खोजता हुआ, सजीव-सहज-गति से आगे बढ़ना मात्र जानता है। उससे अधिक की न उसने कभी अपेक्षा की न उसे आवश्यता ही है। हमें तो इस हृदय शून्य युग में उनकी हार्दिकता पर सम्मान और उनकी आत्म-तुष्टि पर संतोष होना चाहिए। अपने जीवन से रंग लेकर अपने आदर्शों की रेखाओं में भरने, हाथों की कूँची बनाकर युग की चित्रपट पर साहित्य का अमर चित्र खड़ा करने वालों में जैनेन्द्र का भी एक नाम, इन्हीं बातों से लेना पड़ेगा।

(३)

जैनेन्द्र में घर-बाहर, सारल्य-गूढ़ता जैसा ही एक और द्वंद्व है, विनय और अभिमान है। बहुत से लोग जैनेन्द्र को अहंकारी समझते हैं, मानते हैं; पर वे वेही लोग हैं, जो कि उनके जितने समीप चाहिए उतने नहीं जा सके हैं। और दूर से रह कर किसी को कुछ भी मान लिया जा सकता है। इस बारे में मैं उनके पत्रों में से तीन अंश उद्धृत करना चाहता हूँ—'मेरे बारे में यह बात आप जानलें कि मेरी किताबों में पहुँच कम है। इसलिये मेरा जवाब थोड़ा और सादा ही हो सकता है।' और एक बार—'मैं लिखना न छोड़ूँ, हो जो हो—यह आप कहते हैं। आप ठीक हैं; लेकिन मैं अपने लिखने को वैसा महत्व नहीं दे पाता। मैं नहीं लिखता, इससे साहित्य की क्षति होती है, यह चिंता मुझे लगाए भी नहीं लगती। जब मुझ में वह भाव नहीं है, तब उसे ओढ़ूँ क्यों ? मैं उसे अपने ऊपर ओढ़ कर बैठना नहीं चाहता। साहित्यिक—एक विशिष्ट व्यक्ति मैं अपने को एक क्षण के लिए भी नहीं समझना चाहता। ऐसा समझना अनिष्ट है। ऐसी समझ, मैं देख रहा हूँ, बहुत अंश में आज हिन्दी के साहित्य को हीन बनाए हुए है। मानो जो साहित्यिक है उसे कम आदमी होने का अधिकार हो जाता है, अथवा कि वह उसी कारण अधिक आदमी है ! इसलिए मैं उस तरह की बात को अपने भीतर प्रश्रय नहीं देना चाहता। पर, मैं तो देखता हूँ, मुझे अपने ही कारण लिखना नहीं छोड़ना है। क्योंकि जब साहित्य का ज़िम्मा मेरे ऊपर नहीं है तब मेरी अपनी मुक्ति तो मेरा अपना ही काम है। और कब आत्मव्यक्तीकरण मुक्ति की राह में नहीं है ?' और अहंकार वाली बात पर उनकी स्पष्ट सम्मति पूछने पर उन्होंने लिख भेजा—'पर दिल से अहंकार निकाल डालने का तरीक़ा ही यह है कि उसे हथेली पर ले लिया जाय। जिसे निन्दा से डरना नहीं है वह प्रशंसा से डरे ? जो अपवाद पर झल्लाते हैं वे ही पर्याप्त से अधिक संकुचित हो सकते हैं। पर वे दोनों

एक रोग हैं—भीति और लालसा।' इस प्रकार जहाँ तक मैं जैनेन्द्र जी के सन्निकट रहा हूँ और आ पाया हूँ मुझे तो उँगली रखने को भी तिलमात्र स्थल नहीं मिलता जहाँ मैं उन्हें अहंकारी समझूँ। ग़लत समझने वालों के लिए उपाय ही क्या है ?

ठीक इसी तरह की, या कि इससे भी गहरी ग़लतफ़हमी जैनेन्द्र के नारीचित्रण के समझने के साथ हुई है। इधर सुनीता के प्रकाशन के बाद से तो यह होहल्ला बहुत ही मचा! दो-चार स्त्रियों के हिमायती (चाँद में श्री० 'रतन' का एक लेख और एक सुनीता पर चर्चा) जैनेन्द्र को वासना के प्रचारक, भाभी के साथ कुत्सित प्रेम के चित्रण-कर्ता कह कर चिल्ला उठे हैं। पर लोगों ने जैनेन्द्र का भाभी, बहिन, शिष्या, साली, पड़ोसिन, इन सब रिश्तों के भीतर जो मात्र नारी है और जो सुनयना (एक रात) जैसी मात्र निर्बोध अस्तित्व-प्राय है, जो कि 'सेक्स' के बन्धन से भी परे है, उस जैनेन्द्र की अतीन्द्रिय नारीत्व की धारणा-कल्पना को समझा नहीं है। सुनीता की तो बात ही दूसरी है, वह तो एक अन्योक्ति है। अन्योक्ति भूलकर, मात्र छूछे आधार ही से चिपटे रहने वालों की दशा दयनीय अवश्य कही जायगी। 'ग्रामाफ़ोन की रिकार्ड' वाली कहानी पर आक्षेपों के उत्तर चाँद में स्वयम् जैनेन्द्र जी ने ही दिए हैं। आक्षेपों की दूसरी श्रेणी इतनी अनुदार नहीं। वह जैनेन्द्र में बरबस पश्चिमी और विदेशी गंध पाने लगे हैं। पहिले तो जैनेन्द्र की कल्पना को अमौलिक मानना ही एक बड़ा साहस करना है और क्षण भर के लिए यह मान भी लिया कि यह सब बाहर का तत्त्व है, तो क्या साहित्य के क्षेत्र में भी स्वदेशी-आन्दोलन नामक वस्तु है कि जो विदेशी का बहिष्कार मनोलोक में भी किया जाय ? दूसरी बात है कि हमें नये युग के बढ़ते हुए पैरों के साथ चलना होगा, नीति के दक़ियानूसी आदर्शों की मर्यादा के घूँघट में हिन्दी की कथा, पर्दा-प्रथा के तथा और दुर्गुणों के समान ही, प्राण-वायु के अभाव में, रुग्ण-पीत, दुर्बल-काय, अस्वस्थ होती आरही है। उसे मुक्त होकर ही रहना पड़ेगा। 'सुनीता' के समान ही 'एक रात' भी अन्योक्ति है पर 'हंस' में उस पर लिखते समय क्या जनार्दनराय और 'पैरेडी' करते समय भुवनेश्वर प्रसाद दोनों ही उसका परोक्ष मूल्य पूरी तरह भूल गये थे ? भारतीय नारीत्व (देवदास की पारू), जैनेन्द्र के लिये सदा श्रद्धा की वस्तु रही है, (देखिये 'क्या देवदास ट्रेजडी है ?' चित्रपट विशेषाँक) पर इसका यह अर्थ कदापि नहीं कि वही अवस्था अन्तिम हो। कट्टो का सत्यधन से आखीर में बिदा होना और सुनीता का उलटे हुए विराम चिन्हों जैसे हरिप्रसन्न से बिदा होना इस दृष्टि से विचारपूर्वक तौली जाने लायक़ चीजें हैं। 'कुछ उलझन' की चंचल-मन नारी और 'एक रात' की सुनयना खासे विरोध के उदाहरण प्रस्तुत करते हैं। तात्पर्य, नारी के नाम से ही आलोचकों को एक दम 'चलित-चित्त' न हो जाना चाहिए, बल्कि कुछ धैर्य के साथ, जैनेन्द्र के साथ न्याय करने की कोशिश करनी चाहिए। नारी एक पहेली है और लेखनी उससे कम गूढ़ नहीं।

(४)

उनका अंतरंग सब से अधिक सहज रूप से व्यक्त होता है उनकी चिट्ठियों में। नीचे मैं उनके पत्रों में से बहुत से अंश, लम्बे भी क्यों न हों, देना चाहता हूँ, जिनसे जैनेन्द्र की 'परख' में एक 'वातायन' खुल सकता है। उन पत्रों में सवाल-जवाब भी हैं, कुछ मेरे और उनके बीच में विचार-विनिमय का सिलसिला भी है। कुछ चर्चाओं का ज़िक्र है और कुछ विवाद भी। एक बार जब मैंने उन्हें आस्कर वाइल्ड के 'मृषा का ह्रास' नामक निबन्ध के आवेश में आकर जीवन

और कला का कोई सम्बन्ध नहीं हो सकता, यों लिख भेजा था तब के उनके पत्र का कुछ भाग—

'जीवन से कला को तोड़कर मैं नहीं देख पाता। सत्याभिमुख जीवन की अभिव्यक्ति कला है। शब्दाङ्कित अभिव्यक्ति साहित्य है।

'आप देखें, जीवन के साथ सत्याभिमुख विशेषण मैंने लगाया है; अर्थात् जो हम हैं वही हमारा वास्तविक जीवन नहीं है। जो होना चाहते हैं, हमारा वास्तव जीवन तो वही है। जीवन एक अभिलाषा है! जब कला के सम्बन्ध में जीवन शब्द का उपयोग करता हूँ तब उसे आप उस चिर-अभिलाषा की परिभाषा ही में समझें। उस अर्थ में समझने से जीवन और कला का विरोध या Parallelism* उड़ जाता है।

'क्या जो होना चाहते हैं, वही हम हैं? क्य कभी भी वैसे हो सकेंगे? स्पष्टतः नहीं; किन्तु इसका क्या कभी भी यह मतलब है कि aspiration† व्यर्थ है? यह मतलब करना तो सारी गति और चेष्टा को मिटा देना है।

'आदर्श और व्यवहार में अन्तर है। वह अन्तर एक दृष्टि से अनन्तकाल तक रहेगा। उस दृष्टि से वह अनुल्लंघनीय भी है; किन्तु इसीलिए तो उस अन्तर को कम करना और भी अनिवार्य है। आदर्श अप्राप्य है, क्या इसीसे उसके साथ एकाकारिता पाने के दायित्व से हमारी मुक्ति हो जाती है?

'इसी से कला को 'कला' के ही क्षेत्र की वस्तु न मानने देकर उसे जीवन में उतारने की वस्तु कहते रहना होता है।

'जो कला वास्तव से असम्बद्ध होकर ही जी सकती है, वास्तव के स्पर्श से जो सर्वथा छिन्न-भिन्न हो रहती है, मेरे निकट तो वह ह्रस्व-प्राण ही है। मैं उसे गिनती में नहीं लाता। कला अपने भीतर भरी श्रद्धा की शक्ति से 'वास्तव' को संस्कृत करने के लिये है, उससे परास्त होने के लिये नहीं।

'कला मात्र स्वप्न नहीं। वह वास्तव के भीतर रमी हुई वास्तविकता है, जैसे शरीर के भीतर रमी हुई आत्मा। वह अधिक वास्तव है। जिस आदर्श क्षेत्र को हम कलात्मक चेतना से स्पर्श करते हैं, जिस स्वर्ग की हम इस प्रकार झाँकी पाते हैं, और उसके अह्लाद को व्यक्त करते हैं, क्या उस स्वर्ग में अपने इस समग्र शरीर और शारीरिक जीवन के समेत पहुँचे बिना हम तृप्त हों? तृप्त नहीं हुआ जा सकेगा। इसीसे तमाम जीवन के जोर से कला को पाना और वहाँ पहुँचना होगा।'

इसी पत्र का एक और भाग—'मैं चाहता हूँ छोटी और तुच्छ वस्तु मेरे लिये कहीं कुछ रह ही नहीं। धूल के कण में भी मैं परम प्रेमास्पद परम-रहस्य को क्यों न देख लेना चाहूँ जिसे परमात्मा कहते हैं? और वह परमात्मा कहाँ नहीं है। आज कीचड़ में ही उसे देखना होगा। यही आस्तिकता की कसौटी है। मूर्ति में तो अल्प श्रद्धावान भी देख पाता है। कलाकार उसी अपरिमेय श्रद्धा का प्रार्थी है। और तब कहाँ उसके हाथ Soil‡ हो सकते हैं। वह तो सब जगह अपूर्व महिमा के दर्शन कर और करा सकता है। यदि मैं खाद की उपयोगिता के सम्बन्ध में कुछ अपना मौलिक, उपयोगी अनुभव लोगों को बता सकूँ तो यह मैं साहित्यिक जैनेन्द्र के लिए कोई कलंक की बात नहीं समझूँगा, प्रत्युत श्रेय

---

* सरलता।

† आकांक्षा।

‡ मैल।

की बात ही समझूँगा। हम क्यों कला को छुई-मुई सी वस्तु, Hot-house Product * बनावें। वह शीशे में बंद प्रदर्शन की वस्तु ही बनकर रहने वाली क्यों बने; वह क्यों न महाप्राणवान, खुली दुनिया में अपने ही बल पर प्रतिष्ठित बनी खड़ी हो ?'

इसी पत्र के बाद एक दूसरे पत्र में 'सत्य' और 'वास्तव' का अन्तर समझाते हुए जैनेन्द्र लिखते हैं — 'हमको मान लेना चाहिए, जो शब्दों में आता है सत्य उससे परे रह जाता है। उसकी ओर संकेत कर सकें, यही बस है। वह भला कहीं परिभाषा में बँधने वाला है ? समस्त परिभाषाएँ जो उससे निकलीं हैं।...मैं जिसे 'सत्य' शब्द से बूझता हूँ, उसमें तो सत्ता मात्र समाई है। जगत का सच-झूठ सब उसमें है। 'वास्तव' से मेरा अभिप्राय लौकिक सत्य से है जिसको भरने के लिए सदा ही असत्य की आवश्यकता होती है। जीवन में तो द्वंद्व है ही। किन्तु लक्ष्य तो निर्द्वंद्वता है। जीवन विकासशील है। क्या कला जीवन से अनपेक्ष्य ही रह सके ? ऐसी कला तो दंभ को पोषण दे सकती है।'

ऐसे उद्धरण कहाँ तक दिये जायँ, पर जी नहीं मानता इससे एक लंबे पत्र में के कुछ लंबे अंश, अन्त में, दे ही देना चाहता हूं ...

प्र०—कला हेतु प्रधान होती है कि हेतु शून्य ?
उ०—'मैं कहूँगा कि कलाकार अपने में देखे, तो कला हेतु-प्रधान क्यों हेतु-मय होती है। कला कृति के मूल में मात्र न रहकर, उसका हेतु तो उस कृति के शरीर के साथ अभिन्न रहता है। वह अणु-अणु में व्याप्त है। कलाकार की दृष्टि से कभी कला हेतु हीन (अर्थात नियमहीन, प्रभाव-हीन) हो सकती है ? अरे वह तो हेतु-प्राण है। कलाकार के अस्तित्व का हेतु ही उसकी कला में ध्वनित, चित्रित होता है।

'लेकिन बाहर की दृष्टि से उसे सहेतुक मैं कैसे मानूँ ? इस भाँति उसे सहेतुक मानना कला-कृति और कलाकार के बीच में खाई खोदने जैसा है। मनुष्य और उसका धंधा ये दो हो सकते हैं। पर मनुष्य और उसकी मनुष्यता (यानी, उसकी भावनाएं) दो नहीं हैं। उसका व्यवसाय उसके साथ प्रयोजन-जन्य, मनुष्यता उसके साथ प्रकृति-गति है। जहाँ मानव अपनी घनिष्टता में, अपनी निजता में प्रकाशित है, वहाँ उतनी ही कला है; जहाँ अपने से अलग रक्खे हुए हेतुओं के निर्देश पर रचता है, वहाँ उतनी ही कम कला है। कला में आत्मदान है। आत्मदान सबसे बड़ा धर्म है, सब से बड़ी नीति है। सबसे बड़ा उपकार है और सबसे बड़ा सुधार है। अतः कला-सुधार, उपकार, नीति और धर्म सबसे अपरिवद्ध है। इस प्रकार कला सत्य की साधना का रूप है। वह परमश्रेय है। कला तो निःश्रेयस की साधिका ही है। जहाँ ऐसा नहीं है वहाँ वह भ्रान्त है, यह कहिए कि वहाँ कला ही नहीं है।

'बात यह है कि मानव का ज्ञान अपने संबन्ध में बेहद अधूरा है। वह अपनी ही भीतरी प्रेरणाओं को नहीं जानता। यह सही नहीं है कि वह प्रयोजन को ही सामने रखकर चलता है या चल सकता है। हेतु उसके भीतर संश्लिष्ट है, Inherent है। जिसको अहं-विकृतज्ञान में मानव हेतु मान उठता है, उसके प्रति वह सकाम होता है। वह इस तरह हेतु होता ही नहीं। मनमानी लोगों की गरजें उनके जीवनों का वास्तव हेतु नहीं हैं। इस दृष्टि से हेतुवाद एक बड़ा भारी

---

* वे पौधे इत्यादि जो अप्राकृतिक गर्मी से जीते हैं।

मायाजाल है। जो जितना महत्पुरुष है वह उतनी ही दृढ़ता और स्पष्टता के साथ जानता है कि व्यक्तिगत कारण से कोई बड़ा ही कारण उसे चला रहा है। इतिहास के सब महापुरुष इसके साथी हैं और मैं कहता हूँ कि इस व्यक्तिगत हेतु की भावना से ऊपर उठने पर ही सच्चे जीवन का आरंभ और सच्ची कला का सृजन होता है। हेतुवादी वह संसारी है जो सांसारिकता से ऊँचा उठना नहीं चाहता।...

(और तुम पूछते हो कि) अगर कला Self-expression (आत्मव्यक्ति) ही है तो फिर जीवन से उसका दायित्व क्या है?

'मैं तो आज कला को Self-expression की परिभाषा में ही समझने की इजाजत देना चाहता हूँ। यद्यपि इसमें (समझने में) खतरा है फिर भी उसी प्रकार की परिभाषा अधिक निकट और अन्ततः अधिक उपयोगी है; पर फिर भी वह तनिक भी उच्छृंखल नहीं और अधिक-से-अधिक दायित्वशील है। वह इसलिए कि जो हमारा भीतरी Self असली Self है वह बाहरी जगत् के साथ अभेदात्मक है। हम असल में विश्व के साथ एकात्म हैं। इसलिये प्रत्येक का Self-expression अगर वह अपने साथ सच्चा और जागरूक है, तो प्रेमात्मक ही हो सकता है, विद्वेषात्मक तो हो सकता ही नहीं। साधना में जो आत्मवंचना कर जाता है, उसकी बात तो मैं करूं क्या—पर साधक व्यक्ति का Self-expression कभी अहित कर नहीं हो सकता। और कलाकार साधक है। असल में साधक अनुभव करता है कि वासनाओं में उसका सच्चा 'स्व' ही नहीं है, और वह वासना-रस को अनायास छोड़ता चलता है। वह अति-सहज-भाव से दायित्वशीलता की ओर बढ़ता है और साथ ही विनम्रता की ओर बढ़ता है। इस भाँति साधक कलाकार के लिये जरूरी हो जाता है कि वह इस बाहर की कसौटी पर अपनी साधना को कसता भी रहे—कि वह उच्छृंखल, अनियमशील, अहम्मन्य तो नहीं हो रहा है। रोग की जड़ अहम्मन्यता है और कलाकार अहम्मन्यता का खोखलापन आरम्भ से ही देखता है।'

इस तरह के साधक कलाकार हैं जैनेंद्र!

(५)

इस तरह मैंने कोशिश की कि जैनेंद्र के व्यक्तित्व के आस-पास शब्दों के रेखा-बन्धन खड़े करूँ और इस प्रयास में बहुत-सी मदद उन्हीं के रंगों ने दी है। पचास-साठ कहानियों के तीन चार संग्रह वातायन, फाँसी, दो चिड़ियाँ, एक रात और दो उपन्यास—जिसमें से भी 'परख' एक बड़ी कहानी ही समझो—जैसी संक्षिप्त पूँजी के साथ अपना एक दर्शन, एक खास विचारमाला लेकर जैनेन्द्र हिन्दी में अवतीर्ण हुए हैं। और उनकी वस्तुओं का मूल्य हमारी दुर्बल लेखनी से अधिक प्रबल काल की तराजू ही आँक सकेगी।

कुछ लोग तुलनाओं पर नाराज होते हैं, पर तुलनाएँ तो होंगी ही। उसके बिना मनुष्य का सीमित परिवेक्षण आगे कैसे बढ़ेगा। किसी ने (शायद मैथिलीशरणजी ने) जैनेन्द्र में शरत् बाबू और रवीन्द्र आदि को एक साथ पा लिया तो उसमें उन (कविवर गुप्तजी) के व्यक्तिगत मत को लेकर कुढ़ने, आक्षेप करने की कौन-सी आवश्यकता है? जैनेन्द्र की प्रतिभा में स्व० ललामभूत गोर्की और प्रेमचन्द की जीवन और साहित्य को एकरस पाने की पूरी क्षमता, शरत बाबू का प्रसाद-गुण सहज-कातर आकर्षण, रवि बाबू की कल्पना और सूझ की सुघराई, मोपासाँ के उबलते हुए, स्वस्थ, सजीव वर्णन तथा चेखव का सूक्ष्म-सहृदय

मनोलोक का अध्ययन सभी गुणों के बीज विद्यमान हैं। और जैनेन्द्र पर कुछ भी कहते या लिखते समय यह कभी न भूलना होगा कि वे अभी प्रगतिमान स्थिति में हैं। उनका भविष्य-क्षेत्र अभी बहुत खुला पड़ा है और साहित्य में नवीनता की विचित्रता का स्वागत उदार-मन से करना होगा। नवीन जो है वह विचित्र होने ही के कारण स्वीकृत न किया जाय यह अप्रेम का प्रदर्शक है। 'आलोचक के प्रति' के अंत में जैनेन्द्र ने अपने आलोचक से इसी सहृदयता की अपेक्षा की है। तो यह जो कुछ लिखा गया यह जैनेन्द्र पर कभी भी अन्तिम नहीं, यह तो श्रीगणेश ही माना जाय। और सब बातें निर्णयात्मक न मानकर मेरी व्यक्तिगत भावनाओं की अभिव्यक्ति मानी जायँ।

यह जानते हुए भी कि अभी जैनेन्द्र पर लिखने का परिपक्व समय नहीं आया है, स्व० प्रेमचन्दजी की श्रद्धास्पद आज्ञा टालना कैसे हो सकता था? फिर से यह दुहराना व्यर्थ होगा कि जैनेन्द्र की विचारावलि को जो मात्र अस्पष्ट कह कर छोड़ देते हैं वे भूल करते हैं। तार्किक की-सी शुष्क नियमबद्धता न होने पर भी उनके दर्शन में एक सुसंगत सूत्र अवश्य है और वह उन्होंने अपने जीवन की क़ीमत देकर पाया है।

सारांश, जैनेन्द्र ने क्या जीवन और क्या साहित्य में यह तत्व अच्छी तरह पहिचान लिया है कि —'सत्य स्थिरता से घिरा नहीं है' न अनुशासन से परिबद्ध। काल भी सत्य ही है, काल जो बनने और मिटने का आधेय है। अतः स्थिरता सिद्धि नहीं, गति भी आवश्यक है। जीवन अस्तित्व से अधिक कर्म है।'

ताण्डव

[श्री जयशंकर 'प्रसाद']

बन गया तमस था अलक जाल,
सर्वांग ज्योतिमय था विशाल;

अन्तर्निनाद ध्वनि से पूरित,
थी शून्य-भेदनी सत्ता चित;
नटराज स्वयं थे नृत्य निरत!
था अंतरिक्ष प्रहसित मुखरित;

स्वर लय होकर दे रहे ताल,
थे लुप्त हो रहे दिशाकाल।
लीला का स्पन्दित आल्हाद,
वह प्रभा पुंज चिति मय प्रमाद ;

आनन्द पूर्ण ताण्डव सुन्दर,
झरते थे उज्ज्वल श्रम सीकर ;
बनते तारा, हिमकर दिनकर,
उड़ रहे धूल-कण से भूधर ;

संहार सृजन से युगल पाद-
गति शील, अनाहत हुआ नाद।
बिखरे असंख्य ब्रह्माण्ड गोल,
युग त्याग ग्रहण कर रहे लोल;

विद्युत कटाक्ष चल गया जिधर,
कंपित संसृति बन रही उधर ;
चेतन परमाणु अनन्त बिखर,
बनते विलीन होते क्षण भर।

यह विश्व झूलता महा दोल,
परिवर्त्तन का पट रहा खोल।
उस शक्ति शरीरी का प्रकाश,
सब शाप पाप का कर विनाश—

नर्तन में निरत, प्रकृति गल कर,
उस कांति सिंधु में घुल मिल कर;
अपना स्वरूप धरती सुन्दर,
कमनीय बना था भीषणतर;

हीरक गिरि पर विद्युत विलास,
उल्लसित महा हिम धवल हास!

माँ ने कहा था

[श्री विष्णु]

बरसात आई और चली गई। सरदियों का मौसम पूरे साज-बाज के साथ आ पहुँचा। कार्तिक की एक ऐसी ही संध्या को वह उठकर बैठ गया। उसका नाम जदु था और वह १५ वर्ष का एक लड़का था। जिस झौंपड़ी में वह लेटा हुआ था, वह बहुत ही तंग था। दरवाजे में सिर अड़ता था। कठिनता से दो आदमी उसमें सो सकते थे। आज न जाने क्यों उसने सभी कुछ गौर से देख डाला। बाहर से ठण्डी-ठण्डी हवा आ रही थी और बिछाने के नाम उसके पास पुआल का ढेर था, ओढ़ने को मैली-कुचैली दुतई का एक चिथड़ा और बदन पर सिर्फ फटी हुई एक कमीज।

मन ही मन उसने कहा—आज दिवाली है और मेरे पास रात के भोजन का भी ब्योंत नहीं। रोशनी और मिठाई......। ऊहूं! यह भी क्या मेरे करने की बात है। मुझे तो अपने पेट की सोचनी चाहिये। उसने फिर एक बार बड़ी सूक्ष्मता से झौंपड़ी को देख डाला। तब उसे कुछ पुरानी बातें याद आने लगी। याद कुछ मीठी थीं, कुछ कड़वी। इसी से आंखों में आँसू भर आए। बहुत नहीं दो साल पहिले ही की बात थी। तब माँ जीती थी। इसी झौंपड़ी के दरवाजे पर मिट्टी के तीन दीवे उसने जलाये थे। तेल के मीठे सेल और खील लेकर उसने लक्ष्मी का पूजन भी किया था। माँ ने कहा था—कुछ भी हो हिन्दू के घर में लक्ष्मी का पूजन तो होना ही चाहिये।

यही बात थी। अंधेरा बढ़ा चला आरहा था। बाहिर दूर में चहल-पहल जान पड़ती थी। 'लक्ष्मी का पूजन तो होना चाहिये।'—ऐसा सोचकर दुतई में लिपटा-लिपटा जदु बाहिर निकल आया।

जहां जदु रहता था वहाँ बड़ा अंधेरा था। दिवाली की रात में तो लगता था मानों शहर का सारा अँधेरा डर कर वहाँ आ छिपा हो। कहीं-कहीं किरोसिन तेल की डिबिया धुँआ उगल रही थी जैसे अपनी रोशनी को आपही निगल जाने की चेष्टा में हो। बच्चे बूढ़ों की चिल्लपों अलग कान फोड़े डालती थी। अँधेरे में सुना है, भूत रहते हैं, इसी से वह आवाज और भी भयानक जान पड़ी और फिर उसका ध्यान रोशनी पर लगा हुआ था। बार-बार ठोकर खाता था। सड़क पर आया तो रोशनी का कोहर बरस रहा था। दिन-सा निकला जान पड़ता था। वैसे ही रात की रोशनी में कालापन बहुत कुछ छिप जाता है फिर आज तो दिवाली थी। अमावस्या को भी ढूंढे पनाह नहीं मिलती थी। कितने ही लोग सड़क पर घूम रहे थे। वे रोशनी की आलोचना भी करते जाते थे। बच्चे—आहा जी! आहा जी!—करते हुए खुशी से चिल्ला रहे थे। कुछ उसके समवयस्क भी थे जो दुकानों की सजावट में व्यस्त थे। कुछ व्यवसाय में अपने बड़ों का हाथ बटा रहे थे।

वह धीरे-धीरे बढ़ा चला जा रहा था। "इस दुकान की रोशनी कैसी सुन्दर है!" उसने सोचा अरे! यह प्यालों में लाल-लाल शराब सी क्या

जल रही है ? और ये मोमबत्तियां ! भाड़-फन्नूस लाल-नीली बिजली की बत्तियां !...........

"उधर वे बड़े-बड़े शमादान!"

कुछ और आगे बढ़ा। बड़ी-बड़ी तसवीरें सजी हुई थीं। सुन्दर-सुन्दर खिलौने भी बिखरे पड़े थे। बाजार दिन से भी अधिक व्यस्त था।

एक बालक मचल रहा था—पिता जी ! हम महात्मा जी की तस्वीर लेंगे।

'और वह फूलदान भी।'

'और वह खिलौना।'

फिर मिठाइयों की दुकानें थीं। मिठाई के छोटे-छोटे टुकड़ों के बड़े-बड़े मन्दिर-से बनाए हुए थे और उन्हीं को तोड़-तोड़कर वे तोल रहे थे। लोग यहाँ भी खूब व्यस्त थे। थाल पर थाल चले जा रहे थे......। लगा उसे भी — मैं भी कुछ लेता। और उसे याद आया — लक्ष्मी का पूजन तो होना ही चाहिये।......

उधर बाजार की समाप्ति थी, इसी से आगे रोनक ज़रा भी नहीं थी, सब ओर सन्नाटा था। कुछ थोड़े से लोग आ जा रहे थे। शायद वे लक्ष्मी के प्रिय पात्र थे, जुआरी थे। बस मन को मन ही में समेटे-समेटे लौट पड़ा। सरदी भी पल-पल बढ़ती ही जारही थी।

(२)

इला ने आज अपनी सबसे सुन्दर पोशाक पहनी थी। खुशी से वह भरी-भरी फिरती थी। चेहरे पर थी दिल में समा न सकने वाली मधुरिमा और वह बार-बार खिड़की के पास आकर झाँक जाती थी।

आखिर उसने यशपाल को बुला ही भेजा। वह उसका पति था।

और वह आ भी गया।

इला बोली — वह पारसाल वाली बात तो आप भूल न जाओगे ना।

—क्या भला ?

ऊँ—हूँ—ऊँ, करिये याद। मैं ही क्यों बताऊँ।

यशपाल कुछ सोचने की चेष्टा-सी करने लगा, पर कुछ पा न रुका तो हँसकर बोला — आप ही कृपा कर दीजिए।

इला भी हँस पड़ी। उस हँसी में गर्व था। बोली — उस साल जब माँ थीं तो उन्होंने कहा था — लक्ष्मी पूजन के अवसर पर उन शमादानों को मत भूलना। ये...... और आगे वह कह न सकी।

यशपाल का भी गला रुंधने-सा लगा। बोला — वह भी क्या भूलने वाली बात है, इला। और सुनो इला, आज उस पाषाण प्रतिमा के स्थान पर मैं अपनी जीवित लक्ष्मी की पूजा करना चाहता हूँ......।

और तभी उसे सुन पड़ा — सरकार......

मुड़कर देखा — बिहारी था। बोला — क्या हुआ ? हाँफ क्यों रहे हो, रे।

सरकार, एक बदमाश वह शमादान लेकर भाग गया।

यशपाल चिल्ला उठा — क्या कहा ? वह भाग गया और तुम देखते रहे ......!

नहीं सरकार, बिहारी बोला —देवत और नन्दू उसे ढूंढने गये हैं।

यशपाल रुका नहीं। बिहारी को लेकर उनके पीछे ही गया। इला भौंचक्की-सी होकर यह सब देखती रही। वह कुछ कह न सकी, केवल खिड़की से उस जगमगाते हुए विशाल मार्ग की ओर देखने लगी। उसका दिल ज़ोर-ज़ोर से धड़क रहा था। बड़े परिश्रम से वह केवल इतनी ही प्रार्थना कर सकी — उस शमादान को हमसे मत छीनना, प्रभु। वह हमारी जीवन की चिर-स्मरणीय घटना का स्मारक है, देव।

और वह घटना !

माँ कहती थीं — हमारे जीवन में एक दिन



श्री रूपकिशोर जैन



श्री विष्णु

FOPULAR PRESS. DELHI.

आया जब हम सब कुछ खोकर गरीब हुये। तब तुम्हारे पिता के पास यह शमादान एक मात्र सम्पति के रूप में बचा था। वे इसे बेच ही न सके। अजीब-सी ममता थी इस जड़ वस्तु से उन्हें। भगवान की कृपा, बेटी, यह ममता फली फूली। वह दिवाली! इला बेटी! केवल इसी शमादान को लेकर उन्होंने लक्ष्मी का पूजन किया। रुपया भी एक मैं उधार माँग लाई थी। ...... और माँ कहती-कहती रो पड़ी थीं। इला भी कुछ-कुछ पिघल चली......।

'बस वही दिवाली थी। वहीं से भाग्य चमका सो चमका। अगली ही दीवाली को पूरे १०० रु० का पूजन हमने किया। भगवती की यह कृपा क्या भूलेगी, इला। इसीसे कहती हूँ—'लक्ष्मी पूजन के अवसर पर उस शमादान को न भूलना।' सोचती-सोचती इला आनन्द विभोर हो उठी।

उधर देवत, नन्दू और बिहारी को लेकर यशपाल जहाँ पहुँचा वह जदु की झोंपड़ी थी। उस समय लक्ष्मी की फटी-सी तसवीर के आगे वह घुटने टेके बैठा था। हाथ जुड़े हुए थे आँखें मिंची हुई। पास ही शमादान जल रहा था। झोंपड़ी के झरोखों (?) से होकर उसकी रोशनी दूर तक अँधेरे की छाती पर फैल गई थी। अनन्त अँधकार में मानों प्रकाश के कुछ छींटे बिखर पड़े थे। लेकिन झोंपड़ी जगमगा रही थी। जदु अनन्त श्रद्धा से लक्ष्मी को गुहार रहा था। मुरझाया हुआ चेहरा चमक आया था। शीत में ठिठरती हुई देह में भक्ति की गरमी भर चली थी। पर देवत ने देखा तो पकड़ कर झँझोड़ डाला। ऐसा घूँसा मारा कि आँखों की सारी रोशनी बाहिर आगई। नन्दू ने ठोकर मारकर झोंपड़ी से बाहर ढकेल दिया।

शमादान उसी तरह जल रहा था।

जदु इतनी मार खाकर भी उठ बैठा। उसके चेहरे पर भय का कोई चिन्ह नहीं था!

यशपाल ने कड़क कर कहा—हरामजादे, बदमाश! तूने चोरी की है।

जदु इतना ही कह सका—माँ ने कहा था हिन्दू के घर दिवाली के दिन लक्ष्मी का पूजन होना ही चाहिये।

'पर तूने चोरी क्यों की, सुअर?'

'और क्या करता, सरकार! रोशनी को पैसे कहाँ पाता और रोशनी के बिना पूजन कैसे होता।"

बिहारी ने जोर से लात जमा कर कहा—ऐसे! मेहनत नहीं होती तुम से, पाजी।

वह अब भी नहीं रोया। पड़ोस के कुछ और लोग भी आगये। वह फिर भी बोला—आपकी रोशनी इसके कारण कम नहीं हुई लेकिन मेरी झोंपड़ी जगमगा उठी है। मैंने सोचा था....वह आगे कह भी न सका था कि उस पर लातों और घूँसों का तूफ़ान टूट पड़ा। फिर उसे पता नहीं रहा कि क्या हुआ, किसने क्या कहा, उसकी लक्ष्मी पूजा की पूर्णाहुति किसने डाली और किसने शान्ति पाठ किया।

उन लोगों ने देखा— वह बेहोश हो चला है तो खींच कर पुआल पर डाल दिया। दुलई उठाई और शमादान लेकर चले गये।

(३)

यशपाल शमादान लेकर लौट आया। इला बड़ी व्यग्रता से उसकी बाट जोह रही थी। बोली—कौन था वह?

'एक भिखमंगा।'

'उसका इतना साहस।'

और तिस पर कहता भी था — माँ ने कहा था, हिन्दू के घर पर लक्ष्मी का पूजन होना ही चाहिये। हाँ—आँ—आँ।—इला अचरज से केवल इतना ही कह सकी। शमादान मिल जाने की ख़ुशी से वह कुछ भर-सी उठी थी।

फिर पूजा का आयोजन हुआ। लक्ष्मी की विशाल प्रतिमा के सामने घुटने टेक कर इलाने प्रार्थना की—माँ तुम्हारे अतुल प्रताप से हमने जीवन की क़ीमत आँकी है। तुम रुष्ट न हो जाना, देवि।

और कितना भव्य था वह दृश्य — प्रकाश से जगमग करते हुए उस पूजा-मन्दिर में धूप की सुगन्ध उड़ रही थी। लक्ष्मी की सुन्दर प्रतिमा तो मानों फूलों की प्रतिमा थी और उसके दोनों ओर जलते हुए वे बहुमूल्य शमादान अपनी रोशनी चारों ओर फेंक रहे थे। उनके ठीक सामने थे ,इला और यश। दोनो पास-पास थे दोनों एक दूसरे को देखते रहे थे......।

यशपाल ने कहा— माँ ने कहा था, लक्ष्मी पूजन के अवसर पर लक्ष्मी को न भूल जाना।

और इला बोली—देवि ! माँ ने कहा था लक्ष्मी पूजन के अवसर पर लक्ष्मी पति को न भूल जाना। यशपाल हँस पड़ा। इला भी हंसते-हंसते रुक-सी गई, न जाने क्यों।

हंसते-हंसते वह बोला–हम दोनों ने माँ की आज्ञा का पालन किया, इला !

पर इला नहीं बोली।

इला ! यशपाल ने कहा—तुम क्या सोचने लगीं ?

कुछ नहीं—यही कि उस भिखारी ने भी कहा था—माँ ने कहा था, हिन्दू के घर लक्ष्मी का पूजन होना ही चाहिये।

ऊँहूं... क्या सोचने लगीं तुम ! उसने तो यह भी कहा था—आपकी रोशनी इसके कारण कम नहीं हुई; लेकिन मेरी झोंपड़ी जगमगा उठी।

हाँ—आँ।—और वह भी हँस पड़ी।

पर यशपाल जब चला गया तो उसे फिर ध्यान आया—माँ ने कहा था......इत्यादि-इत्यादि।

उसने रोशनी में हँसते हुए कमरे को देखा और चुपके से एक मोमबत्ती बुझा दी।

देखती रही।......

फिर दूसरी बुझा दी।

देखती रही।.......

और तीसरी और चौथी।

और देखती रही।.........

सच तो कहता है— उसने देखा—कुछ भी अन्तर नहीं पड़ता। सागर में से एक चुल्लू जल ले लेने से क्या उसमें कमी पड़ जाती है ? और वह उद्विग्न हो उठी। यह कैसी बात है। उसके अन्दर कुछ उठने-सा लगा, और लगा वह सीधे-साधे रास्ते पर चलती-चलती कुछ साधारण से बढ़कर असाधारण वस्तु पागई। उसी असाधारणता के भेद को वह भेदना चाहती है, पर है वह अनुभवहीन, इसी से तड़फड़ा उठी है। गाँठ खुले तो शान्ति मिले।

बिहारी ! ओ बिहारी !—उसने पुकारा।

बिहारी दौड़ा-दौड़ा आया—आज्ञा, रानीजी ?

इलाने कहा—जब तुम भिखारी के पास पहुँचे तो वह क्या कर रहा था, बिहारी ?

बिहारी बोला—कर क्या रहा था. रानी जी ! चोर तो ढोंगी होते ही हैं। वह भी आँख मींचे लक्ष्मी की एक फटी-सी तसवीर के आगे बैठा था।

और ?

और तो कुछ नहीं था, रानी जी, शमादान जल रहा था।

इला फिर सोच में पड़ गई। इस बार गाँठ खुलती जा रही थी। माँ ने कहा था—हिन्दू के घर में लक्ष्मी का पूजन होना ही चाहिये। और वह पूजन ही कर रहा था।......पर चोरी ? हाँ, और वह करता भी क्या ? कौन उसे हंसते-हंसते सौंप देता।......विषमता क्यों ! छीः, छीः उन्हें भी तो जीने का अधिकार है, काँटे तो हमने ही बोये हैं। माँ...... की आज्ञा। अरे, यह तो होनी ही थी और यही वह कर रहा था।...... और हमने ...... ऊँ हँ—यह भी चोरी है .....

और उसी बीच में ऐसे एक के बाद एक—बहुत से भाव उनके भीतर आ-आकर चले जाने लगे। माँ की आज्ञा वाली बात ने तो उसे मथ ही डाला। बस सोचकर बोली—तुम मुझे वहाँ ले चलोगे, बिहारी ?

रानी जी ········· !

कुछ नहीं, बिहारी। लो, यह शमादान लो। कुछ मिठाई भी लो और चलो। वे १२ बजे से पहिले नहीं लौटेंगे।

और जा रही थी इला उसी अंधेरे में टटोल-टटोल कर। बिहारी आगे-आगे था। एक अजीब तरह का सन्नाटा छाया हुआ था। शमादान की रोशनी के पीछे चलती हुई इला ऐसे जान पड़ती थी, मानों स्वयं लक्ष्मी भक्तों की गुहार सुनकर धराधाम पर आगई हो। रोशनी से चौंधया कर कहीं-कहीं कुत्ते भूक पड़ते थे। झोंपड़ी का दरवाजा वैसे ही खुला हुआ था और जदु भी शायद वैसे ही लेटा हुआ था। शायद गहरी नींद में सो रहा था। इलाने उस नज़ारे को देखा और देखकर काँप उठी —क्या यही नरक नहीं है!

उसने साथ का बोझ एक तरफ रक्खा और लौट चली। वहाँ का सारा वातावरण उसे खाये जा रहा था और वह जल्दी से जल्दी निकल भागा चाहती थी। चलते-चलते उसने अपना शाल भी उसे उढ़ा दिया। बिहारी ने चाहा भी उसे जगा दे, पर इला बोली—उसे सोने ही दो। सवेरे इसे देखकर वह रात वाली बात भूल जावेगा। लक्ष्मी के भक्त को यह तो मालूम होना ही चाहिये कि रात उसके घर सचमुच ही लक्ष्मी आई थी।

(४)

सवेरा हुआ और सूरजकी किरणें चारों ओर बिखर पड़ी मानों रातभर के समुद्र मन्थन के बाद यह अमृत का घट दुनिया ने पाया। जदु की झोंपड़ी के पास भी चहल-पहल बढ़ी। चिड़ियों ने चर-पर आरम्भ की। कुत्ते कान फटफटा कर "युद्धं देहि" की सर्वप्रिय चुनौती के लिये तैयार हुए। किसी के आगमन का चिर-सन्देश लेकर कौआ भी काँ-काँ करता हुआ द्वार पर आ डटा। पर जदु उसी तरह पड़ा रहा। शायद बेचारे की हड्डियाँ दरद कर रही थीं। शायद जीवन की दौड़ में थककर वह जी भरकर सोने के लिये लेटा था। उसे जगाता भी कौन? तो भी रातवाली घटना के कारण आस-पास के लोग कौतूहल से भरे-भरे वहाँ आ ही गये। वहाँ का दृश्य देखा तो चौंक पड़े। आँखें फाड़-फाड़कर मानों जानना चाहने लगे—अरे, यह क्या सब सत्य है।

'अरे कितना क़ीमती शमादान है' —एक ने कहा।

'होगा तीस चालीस का।'

'सब माल है।'

फिर क्या था पंचों की सलाह हुई। शमादान बंट गया। फिर दुशाले की बारी आई, और-और चीजें भी वे लोग उठाकर ले गये।

'रात सचमुच इस पर भगवती की दया हुई–उन्होंने कहा।

एक बोला—लड़का है भी भगत। आठों पहर धरम में नीयत रखता है।

दूसरे ने कहा—पर जब वह उठेगा तब····?

ऊँह!—तीसरा बीचही में बोल उठा, रहे तुम भी निरे बौड़म ही। अरे जिस पर भगवती मेहरवान है उसे अब इन चीजों की चिन्ता क्या। अब तो सब यही प्रार्थना करो—भगवती उससे कभी न रूठे।

और तब सबने मन ही मन बड़ी श्रद्धा से कहा — भगवती जदु से कभी न रूठे। पर उसी दोपहर को चौकीदार ने आकर देखा—जदु की झोंपड़ी में एक लाश पड़ी थी जिस की नाक से खून बह कर गले तक जम गया था।

"जवाहरलालजी व महात्मा गाँधी का धर्म"

[श्री विचित्र नारायण शर्मा]

जवाहरलालजी के प्रति सदा मेरे हृदय में स्नेह-श्रद्धा मिश्रित एक विचित्र-सा भाव रहा है। एक अजीब-से आकर्षण का अनुभव मैं उनके प्रति करता हूँ। मैं क्या, प्राय: सभी नौजवान ऐसा ही एक भाव उनके प्रति रखते हैं। उन्हें इसीसे तो "नव युवक हृदय सम्राट" की पदवी से विभूषित किया गया है।

जवाहरलालजी वास्तव में बहुत महान बहुत उदार हैं। फिर भी कभी कभी उनके विचार मुझे कुछ अधूरे से, कुछ धुँधले से कुछ, झिझके हुए से और कुछ संकुचाये हुए से मालूम होते हैं, खासकर जब मैं उन्हें महात्माजीके सिद्धांतों विचारों या कार्यक्रम को समझने में असमर्थ पाता हूँ। महात्माजी की अहिंसा, उनकी खादी, उनकी अस्पृश्यता, उनके धर्म को जवाहरलालजी बहुधा पूर्णत: नहीं समझ पाते।

'मेरी कहानी" में उन्होंने इस पर कई स्थानों में सन्देह प्रकट किये हैं। कई बार उन्होंने महात्माजी के कार्यों को ठीक नहीं समझा! "मेरी कहानी" में तो फिर भी परिमार्जित भाषा का प्रयोग किया है, किन्तु साधारण बोल-चाल में वे इतने संकोच से काम नहीं लेते। धर्म कर्म के पुजारियों की वे कभी-कभी अच्छी खबर ले लेते हैं।

इस वजह से मेरी श्रद्धा उनके प्रति कुछ कम नहीं होजाती है। सच तो यह है, वह और भी बढ़ जाती है। मैं स्वयं एक दार्शनिक-सी, सिद्धान्तिक-सी प्रकृति का हूँ। बहस और तर्क करने में मुझे एक विशेष मज़ा आता है। बड़ी-बड़ी बात बनाने, ऊंचे-ऊंचे आदर्श छाँटने में ही मैं अधिक संतोष पा लेता हूँ। और कार्य न करने से जो अभाव रह जाता है, उसे ज्यादा महसूस नहीं कर पाता हूँ।

जवाहरलालजी ठीक इसके विपरीत हैं। वे विचार से कर्म को कहीं अधिक महत्व देते हैं। वे उन थोड़े से आदमियों में से हैं जो महात्माजी के बाद इस कर्म करने की भावना के जीवित उदाहरण हैं। 'धर्म' शब्द उनकी श्रद्धा भले ही प्राप्त न कर सके, पर धर्म-तत्व उनके जीवन का आधार है। इसी से महात्मा जी के वे इतने निकट पहुँच सके हैं। इसीसे आज ही से महात्माजी ने अपना उत्तराधिकारी उन्हें ही बना दिया है, और अपने जीते जी देश की बागडोर उनके हाथ में सौंप दी है।

महात्माजी का उत्तराधिकारी और देश का राष्ट्रपति धर्म का विरोधी-सा होने पर भी धर्म-भावना से हीन नहीं है। जवाहरलालजी को शायद स्वयं मालूम नहीं है कि वे वास्तव में इतने अधिक धार्मिक हैं। और उनका सारा जीवन वास्तविक, सच्ची धर्म-भावना से ओत-प्रोत है।

महात्माजी और जवाहरलालजी का पारस्परिक स्नेह अद्भुत है, सहज और स्वाभाविक है।

उसका सम्बन्ध मस्तिष्क से उतना नहीं है जितना दो अत्यन्त सरल और निर्मल हृदयों से है।

हमारी धारणा है अगर जवाहरलाल जी महात्मा जी की विचारधारा के भी उतना ही निकट पहुँच जाते जितना निकट वे उनके हृदय हैं, तो देश का निचश्य ही बहुत अधिक कल्याण होता। और अब जो कभी कभी महात्मा जी और जवाहरलाल जी की दो अलग-अलग-सी ध्वनियाँ निकलती हुई दिखलाई देती हैं या देश में कभी-कभी कुछ भ्रम-सा, संदेह-सा, उत्पन्न हो जाता है, यह सब फिर नहीं रहता। निश्चित विचार और दृढ़ क़दमों से हम रोज-बरोज नये नये सफ़र तय कर सकते और शीघ्र ही अपने लक्ष पर पहुँच जाते।

गाँधी जी इतने सरल हैं कि वे रहस्यमय और दुर्गम मालूम होते हैं। वे इतने धार्मिक हैं कि राजनैतिक और आर्थिक क्षेत्रों में अयोग्य समझे जाते हैं। इतने आदर्श वादी हैं कि एक स्वप्न द्रष्टा या कल्पनाओं में विचरने वाले मालूम होते हैं। और कभी-कभी रचनात्मक कार्य पर इतना ज़ोर देते हुए मालूम होते हैं कि हमारे राज-नैतिक दावे से उनका कुछ भी सीधा सम्बन्ध प्रतीत नहीं होता।

और यह सब होते हुये भी उनके व्यापक प्रभाव से, उनकी अलौकिक शक्तियों से कोई इन्कार नहीं कर सकता है और इन सबसे महात्मा जी और भी दुर्ज्ञेय, और भी दुर्गम मालूम होते हैं।

महात्मा जी रूपी इस पहेली को हर पहलू से सुलझाने का प्रयत्न इस समय नहीं किया जायगा। पर यदि हम महात्मा जी के धर्म को समझ लें तो उनके सभी कार्यों और वक्तव्यों को हम आसानी से समझ सकेंगे। फिर हमें वे एक इतनी जटिल पहेली न मालूम होंगे। वास्तव में महात्मा जी की अहिंसा उनका सत्य और उनकी सारी फिलोसफ़ी तथा उनके सारे कार्य–राजनैतिक, सामाजिक और व्यक्तिगत—उनके अपने धर्म में से ही प्रस्फुटित और विभाजित होते हैं।

महात्माजी का यह धर्म क्या है? धर्म महात्माजी का प्राण है, तथा है उनकी स्वांस और प्रतिस्वांस; दूसरे शब्दों में उनके ज़ीवन की एक मात्र कुंजी।

महात्माजी की दृष्टि में धर्म जीवन का पर्यायवाची है। धर्म को वे जीवन का विज्ञान–जीवन की कला मानते हैं। अग्नि का धर्म जिस तरह जलाना है और आग से पृथक जिस तरह वह नहीं हो सकता है, ठीक उसी तरह जीना हमारा धर्म है और जीवन से भिन्न वह (हमारा धर्म) नहीं रह सकता है। जिस वस्तु का जितना घना सम्बन्ध जीवन से है उतना ही घना सम्बन्ध उसका धर्म से भी है।

जीने में है आनन्द! इससे धर्म का ध्येय है आनन्द प्राप्त करना। हमारी सारी चेष्टाओं की गति-झुकाव सुख, आनन्द की ओर है। चाहे हमारी ये चेष्टायें हमारी जाग्रत अवस्था का परिणाम हों या सुप्तावस्था का! जिन चेष्टाओं पर हम समझते हैं हमारा कुछ भी अधिकार नहीं है, उन सबका उद्देश्य भी हमारे जीवन को हमारे अनुकूल बनाना ही है, और जो वस्तु हमारे जीवन में बाधक हो, अप्रिय हो उसे दूर करना, है। इसलिये धर्म-विज्ञान का एक मात्र कार्य है उन सिद्धान्तों को जानना या खोजना और स्थिर करना जिनके अनुसार जीवन निर्वाह करने से हमारा जीवन सुखमय हो सके, और जीवन की जो आकांक्षायें, अभिलाषायें और अपूर्णताएं हैं वह पूरी तरह पूरी हो सकें। जीवन की जितनी व्यापकता है, जितना विस्तार है उतना ही व्यापक और विस्तृत होना धर्म है। जीवन में जो समानता है वही समानता होगी धर्म में, और जीवन में जो भिन्नतायें हैं, वही भिन्नतायें होंगी धम में भी!

मूल से मानव जीवन, उसकी आवश्यकतायें जैसे एक हैं उसी तरह धर्म भी मूल में एक ही है, और उसका नाम है मानव धर्म। प्रवृति, प्रकृति, अवस्था, स्थान भेद से जीवन में जो थोड़े-थोड़े अन्तर पड़ जाते हैं वह अन्तर धर्म में भी प्रतिबिम्बित होने अनिवार्य हैं।

भावुक और मननशील या क्रियाशील व्यक्तियों के जीवन में जैसे अन्तर होगा, वैसे ही उनके व्यक्तिगत धर्म में भी अन्तर होना ही चाहिये। छोटे और बड़े में, स्त्री और पुरुष में, स्वस्थ और बीमार में, गृहस्थ और विद्यार्थी में, जिस तरह अन्तर है ठीक उसी तरह उनके धर्म में भी उतना ही अन्तर होना आवश्यक है।

यह बात हमें ठीक से समझ लेनी चाहिये। धर्म जीवन से सम्बन्ध रखता है। और जीवन की आवश्यकताओं और संभावनाओं को प्रतिबिम्ब करता है। अगर जीवन के छोटे अन्तरों को हम थोड़ी देर को भूल सकें और मुख्य-मुख्य समानताओं पर दृष्टि रक्खें और उसे समूहों और वर्गों में विभक्त कर दें, तो जीवन के विज्ञान अर्थात धर्म-विज्ञान की सृष्टि की जा सकती है। संसार के सारे धर्म वास्तव में अपने-अपने काल में, अपने-अपने स्थान में जीवन की समस्याओं के हल ही थे। वे पूर्ण न भी हों; पर उनके आधार पर हम आगे बढ़ सकते हैं। धर्म का ठीक एक विज्ञान की तरह अध्ययन कर सकते हैं और उसकी सृष्टि वैज्ञानिक दृष्टि से कर सकते हैं।

इसी से महात्मा जी किसी भी धर्म की उपेक्षा नहीं करते। सबको श्रद्धा और भक्ति से देखते हैं और चाहते हैं, दूसरे भी ऐसा ही करें। अपने धर्म को वे विशेष श्रद्धा, भक्ति अथवा प्रेम से देखते हैं। पर वह इसलिये कि उनके जीवन की आवश्यकताओं को उनका अपना धर्म ही सबसे अधिक पूरा करता है।

इस अर्थ में धर्म को ग्रहण किया जाय, यह महात्मा जी की अभिलाषा है। जिस तरह गणित शास्त्र, भूगोल या खगोल-शास्त्र अथवा फिजिक्स वा केमिस्ट्री किसी खास देश या जाति या युग की सम्पत्ति नहीं है, उसी तरह धर्म भी किसी एक जाति या देश या सदी की सम्पति नहीं है। विज्ञानों में जिस प्रकार सत्य सिद्धान्तों का अन्वेषण किया जाता है, ठीक उसी प्रकार धर्म-विज्ञान में भी सत्य सिद्धान्तों का अन्वेषण होना चाहिये। वैज्ञानिक सिद्धान्तों की रचना नहीं करता है, वह सिर्फ उनकी खोज करता है। इसी तरह अवतार, पैगम्बर, रसूल, ऋषि-महर्षि भी धर्म-विज्ञान में खोज करते थे और अपने अनुभूतों को जनता के सामने रखते थे।

विज्ञान में जैसे अनुभवों और प्रयोगों में भूल हो जाती है या भिन्न-भिन्न परिणाम आ जाते हैं उसी प्रकार धर्म भी भूलों या भिन्न परिणामों से मुक्त नहीं हैं। पर इससे धर्म की एकता मौलिक समानता नष्ट नहीं होती है। सिर्फ यह साबित होता है कि और भी अनुभवों या प्रयोगों की आवश्यकता है, और भी गहन खोज की जरूरत है।

महात्मा जी की यह विचार-शैली एकदम नई है, ऐसा नहीं है। मनु महाराज ने हिन्दू धर्म को ऐसे ही सत्य सिद्धान्तों में प्रगट करने का प्रयास किया था, इसीसे उन्होंने धर्म को आर्य या हिन्दू धर्म नहीं कहा था। उन्होंने उसका नाम रक्खा था मानव धर्म। उपनिषदों और गीता में भी यही प्रयत्न प्रत्यक्ष है। वास्तव में गीता तो एक बड़ा ही सुन्दर समन्वय है। गीता ने सब धर्मों और धर्मान्तरों को एक ही दृढ़ सूत्र में बांधने की चेष्टा की है। गीता ने तो यहां तक कहा है कि हरएक को अपनी प्रकृति और अवस्था के अनुसार अपना धर्म मानना चाहिए। अपना धर्म अगर कुछ अपूर्ण है तो वह अधिक श्रेष्ठ है, बनिस्बत दूसरे के श्रेष्ठ धर्म के, क्योंकि, वह उसके लिये नहीं है।

पौराणिक काल में भी यह समन्वय की प्रवृत्ति कार्य करती थी। इसीसे आज हिन्दू-धर्म में नाना मतमतान्तर पाये जाते हैं। हिन्दू, जैन, बौद्ध, सिक्ख, ईश्वरवादी,— अनीश्वरवादी सब इसके अन्तरगत हैं। सांख्य न्यायकर्म-मीमांसा और चारवाक आदि अनेक मत इस एक ही धर्म के भिन्न-भिन्न अंग प्रत्यंग समझे जाते हैं।

अकबर के काल में 'दीन इलाही' व उसके बाद ही भक्त कवियों की कवितायें इसी एक भावना से प्रभावित हैं। हाल में ब्रह्मसमाज, थियोसफी इसके उदाहरण हैं। स्वामी रामकृष्ण परमहंस, विवेकानन्द और रामतीर्थ आदि उसी एक भावना के देवदूत हैं।

ईसामसीह ने स्वयं कहा था, 'मैं पिछले धर्मों को नष्ट करने नहीं आया हूँ, उन्हें पूर्ण करने आया हूँ।' मुहम्मद साहिब ने पिछले रसूलों और पैगम्बरों के कार्य को झूठा या छोटा नहीं कहा है, बल्कि उन्हें इज्जत और ताजीम की नजर से देखना सिखाया है।

तात्विक या वैज्ञानिक दृष्टि से देखने का पहला परिणाम तो हुआ यह कि सब धर्मों में हमें समानता या एकता देखने और खोजने की कोशिश करनी चाहिये। और उन्हें एक ही विज्ञान के बहुत से अंग मानना चाहिये और इसी दृष्टि से भविष्य में खोज और अनुभव, प्रयोग और रचना करनी चाहिये। दूसरा परिणाम होगा धर्म की व्यापकता को समझने का प्रयत्न। धर्म फिर सातवें दिन की एक रस्म या सुबह शाम की एक ड्यूटी या पाँच बार की निमाज भर नहीं रह जायगा। धर्म तब फिर चौबीस घन्टे का साथी सहायक मित्र, सलाहकार या गुरु हो जायगा। हमें अपना सारा जीवन किस तरह व्यतीत करना चाहिये यह बतलाना ही धर्म का मुख्य काम होगा।

हम किस लिये जीयें, जीवन का क्या उद्देश्य है, उसका क्या अभिप्राय है, यह सब बतलाने का प्रयत्न धर्म का होगा। साफ है—इतने बड़े विज्ञान में फिर बहुत से अंग होंगे। इतिहास, राजनीति, समाजशास्त्र, अर्थशास्त्र, सम्पतिशास्त्र, वैद्यक आदि-आदि, सब इस एक व्यापक महान शास्त्र के अंग प्रत्यंग होंगे। वे सब मनुष्य की जरूरतों, सम्भावनाओं, आकांक्षाओं और आशाओं को पूरी करने के प्रयत्नमात्र होंगे। पर अपनी अपनी भिन्नताओं और दिशाओं में वे मनुष्य की व्यापक एकता और जीवन की शाश्वत प्रवृत्तियों की उपेक्षा न कर सकेंगे। तब धर्म विज्ञान को भी अपने को अर्थशास्त्र के मुताबिक न बनाना होगा; बल्कि अर्थशास्त्र को स्वयं अपने को धर्म विज्ञान के नियमों के अनुकूल बनाना होगा।

इसी दृष्टि से विचार करने से हमारा आज का सारा सुख और हमारे सारे तरीके बदल जावेंगे। और तब महात्माजी की राजनीति, उनका अर्थशास्त्र, उनकी खादी, उनके ग्राम उद्योगधंधे, उनकी अस्पृश्यता, मद्यपान निषेध सब सहज ही में समझ में आ जायेंगे। तब हम यह भी समझ सकेंगे कि राजनीति का नेता वास्तव में एक महात्मा भी कैसे हो सकता है।

एक समय था राजनीति हमारे जीवन में ज्यादा असर नहीं डालती थी। ग्राम पंचायतों द्वारा शासित हमारे ग्राम अपना जीवन यापन बहुधा निर्विकार रूप या निर्वाचित रूप से करते रहते थे। चाहे दिल्ली या बड़े बड़े शहरों में कैसे ही भारी से भारी उलट-फेर क्यों न हो जाँय। पर आज समय बदल गया है। हवाई जहाज, मोटर, रेल, तार, स्कूल, कालेज, विद्यालय, अखबार, प्रेस आदि-अनेक आधुनिक प्रयोगों ने गावों को नगरों में आ पटका है, और नगरों को गांवों के कोने कोने में ले जाकर फेंक दिया है। सच तो यह है कि इनकी वजह से सारा संसार एक छोटे से आँगन में

जाकर समेट कर बैठा दिया गया है। राष्ट्र इतने व्यापक हो गये हैं कि जीवन के हर एक अंग-प्रत्यंग को प्रभावित करते हैं। और इसी से राजनीति आज धर्म का सब से प्रथम अंग बन गई है। यही अर्थशास्त्र के सम्बन्ध में भी कहा जा सकता है। और इसी से हमारा राजनैतिक नेता एक महात्मा है। महात्मा का क्षेत्र है, राजनीति, अर्थशास्त्र, समाजशास्त्र आदि-आदि, और इसी से धर्म शब्द से कुछ विरोध रखते हुए भी जवाहर-लाल आज वास्तव में एक महान धार्मिक कार्य में प्रवृत्त हैं। यह प्रश्न हमें धर्म के दूसरे पहलू पर विचार करने को विवश करता है। धर्म जिस हद तक एक विज्ञान है उसी हद तक यह एक कला भी है। विज्ञान हमें ज्ञान देता है। पर यदि इस विज्ञान को हम कार्य में परिणत नहीं करते हैं—अपने जीवन में सौन्दर्य और चातुर्य को प्रयोग में नहीं लाते हैं तो उस विज्ञान से हमारा कोई लाभ न होगा। धर्म की सब से अधिक उपयोगिता है इसी में कि वह हमारे जीवन को उज्ज्वल करे, सुन्दर करे, संपूर्ण करे। अगर धर्म विज्ञान ने जवाहरलाल को कुछ दिया है तो धर्म की कला उन के जीवन में जगमगा रही है, इसे कौन इन्कार करेगा।

धर्म पर और भी गम्भीर विचार हो सकता है और बहुत से दूसरे पहलुओं से हम देख सकते हैं। पर हमारा वर्तमान उद्देश्य तो यही था कि दृष्टि विरोध होने पर भी हम महात्माजी और जवाहर-लालजी में एक ही भावना का प्रभाव देख सकें।

क्या हम आशा करें यह विचारशैली महात्माजी और जवाहरलालजी को और भी निकट लायेगी। इसकी इसमें और भी ज्यादा जरूरत है कि आज ऐसी शक्तियाँ दृष्टि-गोचर हो रही हैं जो उन्हें एक दूसरे से दूर ले जाने की कोशिश में हैं।

तुम दीपक—

[श्री तारा पांडे]

तुम दीपक हो मैं लघु पतंग !
हे देव! तुम्हारे जलने में है—
कर्म योग की मृदु-उमंग !

तुम जलते मिलती उजियाली
मैं जलता होती अँधियाली
पागल प्राणी मैं कहलाया—
प्रभु ! जला तुम्हारे संग-संग !

तुम को जीवन में शान्ति मिली
पर मुझ को केवल भ्रान्ति मिली
तुम ने यश पाया इस जग में—
मैंने खोया सब राग-रंग !

इस लाली से मैं मुग्ध हुआ
जल गया और अति क्षुब्ध हुआ
तुमने खींचा चुम्बक बन कर—
हो गए शिथिल सब अंग-अंग !

मेरा भी सुन्दर था शैशव
नत था इस वसुधा का वैभव
तुमने ही सिखलाई, हँसकर
मरने की यह नाटक उमंग !

प्रतिभा का विकास

[श्री निर्मला मित्रा]

गीली — और गन्दी गली

दाहिने हाथ पर थोड़े सड़क से हटकर

सुरंग, — सुरंग के अन्दर जहां तक चला जाए — अंधेरा घुप्,

फिर, कुछ धीमा-सा प्रकाश,—

काँच के आधार में मामूली लैम्प म्लान ज्योति फैलाकर अपना अस्तित्व पथिकों के लिये काफ़ी सोचकर जल रहा है।

बाज़ू में केफ़े —

रोटी वाले की दुकान ही।

एक बड़ा-सा कमरा, फूटे काँच पर काग़ज़ चिपका कर हैंगिंग लैम्प कमरे के बीचों-बीच लटक रहा है, और उस कमरे में यत्र-तत्र अण्डे के छिलके; सिगार के जले टुकड़े, टूटी माचिसें, और शराबों की टूटी बोतलों के ढेर!

उसी गन्दे कमरे के अन्दर बैठकर कतिपय मज़दूर-क्लास भोजन के साथ हो-हल्ला उड़ाते जा रहे हैं!

लेकिन, परसने वाली एक ही लड़की,—और इन अशिक्षित-दुर्वृत्तों की असभ्यता का प्रतिरूप मानों मूर्ति लेकर कमरे में उतर आया हो, उसी बिचारी लड़की को घेर कर अश्लील और निषिद्ध सभ्यता के ख़िलाफ़ मर्मान्तिक आचरण, प्रति मुहूर्त बर्बता को जन्म दान करने को तैयार है।

ऊँचे क़द, भूरे बाल, गेंहुए रंग का एक युवक आया, और गरदन झुकाए बाज़ू की कोठरी में प्रवेश कर गया।

अब, परसने वाली लड़की इधर मुड़ी, और परदा उठाकर युवक का खाना, एक टूटे टेबुल पर ला रक्खा—

युवक ने भरे क्रोध से ताका—

तरुणी काँप गई,

युवक धिक्कार से बोला "तुम नारी हो!"

तरुणी चुप।

"तुम इन धिकृतों की प्रणय-लीला बरदाश्त कर रही हो!"

तरुणी धीरे-धीरे बोली "क्या करूँ, पेट के लिए सहना ही पड़ता है।"

क्यों, दूसरा साधन नहीं है?"

तरुणी कुछ देर चुप रही, फिर जब मुँह उठाया तो आँखों में पानी भरा था बोली— नहीं, अन्य कोई उपाय नहीं है, चारों ओर दारिद्र और प्रवंचना का पारावार बह रहा है, अविचार और अत्याचार का शासन दण्ड पीड़ित प्रजा को दम तक नहीं लेने देता है—फिर, दुर्बल नारी के लिए—असहाय परिचारिका के लिये, इस से भला कौन-सा साधन देश में अब शेष है!"

युवक के कण्ठ से निकला "क्या, माँ, बाप, भाई, बहन, कहीं कोई नहीं है?"

"कोई नहीं है, पिता सैनिक संस्था में कर्मचारी थे, विद्रोह के झूठे अपराध से साइबेरिया भेजे गये हैं, और इस मनमाने राज में —असहाय दरिद्रों का, निपीड़ित श्रमिकों का,

अशिक्षित जनता का कोई अच्छा साधन नहीं रह सकता। पेसकफ, खुद को सोच लो न, इस गन्दी कोठरी में रहते उम्र बीत रही है, जीविका के लिये दिन-रात प्राणान्तकर परिश्रम कर रहे हो, फिर भी अवस्था ज्यों की त्यों है, तनिक भी नहीं सुधरी, तब पेट के लिये, एक नारी को, अशिक्षित जनों से भला-बुरा सुनना क्या बड़े आश्चर्य की बात है !"

रोटी टेबुल पर पड़ी रही, पेसकफ उठ खड़ा हुआ। टोप हाथ में उठाया, और जीर्ण ओवर-कोट पहन लिया। तरुणी सुरंग के द्वार तक व्यथा में भरकर आई —"पेसकफ, पेसकफ !"

लेकिन, पेसकफ नहीं, एक बर्फीली ठण्डी वायु का झकोरा उसके उद्वेग को शान्त कर बह गया —हा, हा !

× × ×

और, अपने निर्वासित जीवन में, उन्मुक्त 'भल्गा' नदी के तीर पर मैक्सिम गोर्की की क़लम से, जो दुसह्य-असहायों का, पीड़ित-प्रवंचितों का दर्दमय इतिहास निकला, वह आज अमर साहित्य है—लेकिन, युवक पेसकफ के प्रतिभा विकास के मूल में, जो ज्वालामय विदग्धता रही, वह क्या केवल गोर्की की अभिज्ञता ही रही ? प्रेरणा के मिस में — उस करुण आँखों वाली तरुणी की हृदय-व्यथा क्या कुछ भी नहीं, कोई अर्थ नहीं रखती !

इंकिलाब

[श्री प्रभाकर माचवे]

मिट चले दृष्टि में से कुहरा,
मिट चले रूढ़ियों की कारा
फोड़ दे मूर्ति प्रभु है बहरा,

मिट चले ज्ञान का वृथा दम्भ;
मिट चले मिटाने का विलम्ब।
फोड़ो देवालय-हेम स्तम्भ ॥

छुट चले काम्य की मदिर इरा,
छुट चले अर्थ से शून्य गिरा
तोड़ दे बीन की शिरा-शिरा

छुट चले रूप का वृथा मोह
कर्म से शून्य शब्द में द्रोह।
तोड़ दे लय, सकल स्वरारोह ॥

श्री जयशंकर 'प्रसाद' : महापथ के पथिक

[श्री शान्तिप्रिय द्विवेदी]

मेरी आहों में जागो
स्मित में सोने वाले
अधरों से हँसते-हँसते
आँखों से रोने वाले !

—"आँसू"

१६-११-३७। आज के प्रभात की बीती हुई रात में शुक्ल पक्ष था, किन्तु हमारे जीवन में स्मशान का जो दुर्भेद्य नैश-अन्धकार एक पहेली बनकर हम हाड़-मांस के पुतलों को बड़ी निश्चिन्तता से समय की क्षणिक भूलभुलैयों में खिलाता रहता है, उस निदारुण क्रीड़ा की पीड़ा में बदहोश रहने के कारण मेरे जैसे को यह क्या मालूम कि कब शुक्ल पक्ष था, कब कृष्ण पक्ष ! विधाता ने जिसे टेजडियों का उपहार दे दिया हो, उसके लिए जीवन में केवल दो ही प्राकृतिक सत्य रह जाते हैं—स्मशान और अन्धकार। और जब अपने ही-जैसे कुछ जीव समय की विशेष कृपा से कभी भूले-भटके विश्व सिन्धु के किसी तट पर मिल पड़ते हैं तब अपने उसी स्मशान और अंधकार-मय जीवन में भैरव के ताण्डव नृत्य की कला-वान्ह में,अपनी सस्मृतियों की आहुति दे-देकर दो क्षण हँस-बोल कर कल के लिए विदा लेते हैं, यदि वह कल हमारे भाग्य में हो तो ! आज की बीती हुई रात के अन्धकार में भी इसी प्रकार भैरव का स्मरण-वन्दन कर हम दो मित्र अपने-अपने घरौंधों को लौटे थे। प्रतिदिन की भाँति स्मशान के सूनेपन की बेहोशी में सोए-सोए जब सुबह उठे तब हमारे सामने फिर प्रतिदिन का दैनिक संसार अश्रान्त खिलाड़ी की भाँति हमारे अस्थि-शेष जीवन के साथ खिलवाड़ करने को खिलखिला रहा था। कल दिन-रात के चौबीस घन्टों में विश्व-चक्र घूमते-घूमते कहाँ-से-कहाँ चला गया है, मनुष्य के इस औपन्यासिक कौतूहल को मिटाने के लिए या आज के चौबीस घटों के लिए हमें प्रस्तुत करने के लिए, हमारे जागने के पहले ही विश्व-चक्र के चित्रकार के मानों निर्देश-पत्र के रूप में सामने पड़ा मिला एक दैनिक अखबार। पन्ने पर पन्ने उलट कर एक जगह दृष्टि रुकती है तो देखते हैं— "प्रसाद जी का देहान्त ! " हाय, क्या कल रात का भैरव-कीर्त्तन इसी निदारुण सम्वाद के कठोर स्वागत के लिए था ! आज के प्रभात में जब हमारे लिए यह भीषण सम्वाद था, तब इसके एक-दिन पहिले ही १५ नवम्बर के प्रभात में, साढ़े चार बजे प्रसाद जी इस दैनिक जगत के सम्वाद-विवाद एवं हर्ष-विषाद से चिरविदा होचुके थे। आर्य संस्कृति का वह दार्शनिक पुजारी अग्रबला में ही अग्रलीन होगया ! हम दुनिया के आदमी जागते हैं सोने के लिए, प्रसाद जी सोगए चिर जाग्रत रहने के लिए —हमारी स्मृतियों में, हमारे साहित्य में, हमारी भावी पीढ़ियों में !

प्रसाद जी चले गए ! दुनिया के लोग आते जाते रहते हैं, किन्तु प्रसाद जी उन आने-जाने

वालों में नहीं थे। वे तो उन प्रिय आत्माओं में थे, जिनके लिए गोस्वामी जी ने कहा है—

"बिछुड़त एक प्राण हर लेहीं।"

जो उनको निकट से जानते हैं, जिन्होंने उनके साथ अपनी कुछ घड़ियाँ मनोहर बनाई हैं, उन्हीं का मसोसता हुआ हृदय जानता है कि उनके बीच से कैसी प्यारी विभूति चली गई है! साहित्य के नाते हिन्दी-समाज, आत्मीय के नाते मित्र समाज प्रसाद जी के चिर-विछोह से कैसी दारुण मर्म वेदना से विदग्ध है, यह अकथनीय है।

प्रसाद जी से मेरा परिचय सन् २४ या २५ में हुआ था। मुझे एक ग्रीष्म के प्रारम्भिक दिवसों का वह तृतीय प्रहर याद है, जब प्रसाद जी के दर्शनों के लिए उनके घर गया था। गोवर्धन सराय का वह पुराना मुहल्ला जहाँ प्रसाद जी का घर था, पुराने ढंग के हिन्दू गृहस्थों की, नगर के बीच एक पुराने ढांचे की बस्ती है। नवीन राजपथ पर आने के लिए वहाँ सड़कें और गलियाँ हैं, किन्तु स्वयं वह नवीनता का दर्शक मात्र है। उस मुहल्ले में "सुंघनी साहु" का महाजनी मकान अतीत के वैभव का एक वासन्ती इतिहास सुरक्षित रखते हुए पुरातत्वावशेष की भाँति एक आकर्षण रखता है, क्योंकि यह हिन्दी साहित्य के प्रकाण्ड कलाकार प्रसाद जी का आवास बन चुका है। पुराना मुहल्ला, पुराना मकान, और चारों ओर का प्राचीन वातावरण, सुर्ती और जर्दे का कारखाना, यह सब कुछ देखकर विश्वास नहीं होता था कि हमारे साहित्य नवीनतम युग का एक श्रेष्ठ स्रष्टा इन्हीं के भीतर जन्म लेकर रहा है। किन्तु प्रसाद जी कोरे साहित्यक नहीं, एक कवि होकर उत्पन्न हुए थे, और उनका वह कवि प्राचीनता की गोद में एक नवीन शिशु के समान था। उस नवीन शिशु ने नए फूल की भाँति पुराने बगीचे में रहकर भी अपने नव सौरभ से चारों ओर के वातावरण को नवीन और सजीव कर रक्खा था, मानों १८ वीं-१९ वीं शताब्दी के पुरातन कलेवर में २० वीं शताब्दी का हीरे-जैसा हृदय जगमग पड़ा हो। वह स्वयं अपने व्यक्तित्व में एक पूर्ण आलोकित संसार थे, उस संसार को देखकर उसके चारों ओर के लौकिक फ्रेमों की ओर ध्यान ही नहीं जाता था। सब कुछ गौण से भी गौण होगया था — अकेले प्रसाद जी ध्रुव-केन्द्र होकर सब के आकर्षण बन गए थे!

नवीन युग के विस्मय को ले कर जब मैं उस पुराने मुहल्ले में पहुंचा तो यह जानते हुए भी कि प्रसाद जी वहाँ करते हैं, यह विश्वास ही नहीं होता था कि वह वहां मिलेंगे ही। कहां प्रसाद जी और कहां गोवर्द्धन सराय! राह चलते प्रसाद की गली में मैं इस असमंजस को हल कर रहा था कि मैं गरीब किस तरह महाजन प्रसाद को किस से अपनी मुलाक़ात के लिए कहलाऊंगा। किन्तु द्वार पर पहुंचते न पहुंचते, किसी से कुछ कहते न कहते, प्रसाद जी ने अप्रत्याशित स्वागत के रूप में दुतल्ले की खिड़की से मुझे ऊपर आने का मौन संकेत दिया। और सच तो यह कि उन्होंने अपनी खिड़की से मुझे गली में आते ही देख लिया था। ऐसी थी उन की पैनी दृष्टि! वह दृष्टि उन के साहित्य में भी बड़ी दूर तक चली गई है।

उन दिनों हिन्दी की नई कविता-शैली की ताजी-ताजी धूम थी। निराला और पन्त पाठकों के लिए एक जादूभरी पहेली हो रहे थे, ठीक उसी प्रकार जिस प्रकार प्रसाद जी अपने 'प्रेम पथिक" "झरना" और "कानन कुसुम" की कविताओं द्वारा रीति काल के अवशिष्ट वयोवृद्ध साहित्यिक समाज में कुतूहल-जनक हो चुके थे। इस पथ के वे बुजुर्ग थे; वयोवृद्ध नहीं, बल्कि एक रसिक अनुभवी। लोकमत का जो तमाशा वे देख चुके थे, उसके कारण अपने ही आँखों के सामने अपनी पीढ़ी के इन नए साहित्यिकों के प्रति लोकमत की क्रीड़ा से अपरिचित नहीं थे। इसी लिए सब कुछ झेले और

खेले हुए मुसाफिर की तरह वे इस प्रकार मसकरी कर मिलते थे जैसे वे अपने अनुभवों के लिए तस्दीक़ पा रहे हैं।

उस पहली भेंट में मेरी और प्रसाद जी की वार्ता नए कवियों की काव्य-चर्चा से हुई। प्रसाद जी ने उन सभी साहित्यिक नवीनताओं के लिए जो पुरानी-रुचि के लोगों को विष-घूंट हो रही थीं, अपनी सहमत इस प्रकार दी कि मानों उन्होंने कहा—इसके लिए हम से क्या जानना चाहते हो, मैं तो इसके लिए पुराना बदनाम हूँ, मुझे अलग समझ कर तुम लोग अलग मत रहना।

इस प्रथम परिचय के बाद प्रसाद जी से धीरे-धीरे मिलने की धड़क खुली। काशी के सन् २५ से ३० के दिन, साहित्यिक मौज-बहार के दिन थे। साहित्यिकों का एक प्रेमपूर्ण परिवार-सा बन गया था। हम लोगों का कोई क्लब नहीं था, कोई सभा-सोसाइटी नहीं थी, किन्तु हम लोग मिल-जुलकर हंसी-मजाक और साहित्यिक वार्तालापों का वह लुत्फ़ उठाते थे, जो बड़े-बड़े क्लबों और सभा-समाजों के भाग्य में नहीं। हम लोगों के समाज में प्रसाद जी ही हम सबके शरमौर थे। यह शरमौरता उन्हें दो कारणों से स्वयं प्राप्त थी— एक तो यह कि वे हम लोगों से बड़े साहित्यकार थे। हम में से कितने जब पृथ्वी पर आंखें मुलमुला रहे थे, उस समय प्रसाद जी ने हमारे साहित्य में नवयुग का श्रीगणेश कर दिया था और जब हम लोग उन के परिचय में आये तब वे अकेले ही रूढ़ियों से लड़ते हुये हमारे साहित्य में एक निश्चित और गंभीर स्थान बना चुके थे। दूसरी बात जिसके कारण वे हमारे सिरताज थे, उनका प्यारा हंसमुख स्वभाव था, एक गंभीर कृतिकार और एक गंभीर कर्मठ होते हुये भी वे प्रसन्नता और सजीवता की मूर्ति थे, वे जीवित आनन्द थे। कला में वे जैसे हम लोगों में सबसे आगे थे, वैसे ही हँसने-हँसाने और मिलने-जुलने में भी हम सब से आगे थे। यदि नव युवकों में कभी आपस में वयोचित स्वभाव-वश तक़रीर होती थी, तो वे ही हमारे रूठे हुये हृदयों को बड़ी सुन्दर मुसकराहट से अपने स्नेह-तन्तुओं से जोड़ कर एक कर देते थे। कभी-कभी हम लोग उन की सहृदयता से लाभ उठाकर उनसे भी रूठने का मैत्री-सुख लेते थे; क्योंकि वे बड़े होकर भी हम लोगों में हमी लोगों जैसे अभिन्न हो गये थे। इस रूठा-रूठी में प्रसाद जी आत्मीयता की मानों मौन शपथ देते हुये स्नेह के दो-चार सीधे-सादे शब्दों में ही अपने जी की बात कह देते थे। वे रूठे हुओं को मनाने की कला में भी एक प्रियतम व्यक्ति थे।

उन्होंने 'आंसू' में लिखा है।

> हो उदासीन दोनों से
> दुख सुख से मेल कराये।
> ममता की हानि उठाकर
> दो रूठे हुए मनाये।

जीवन के प्रति यह प्रसाद जी का दार्शनिक दृष्टिकोण ही सुख-दुख के रोग-रहित रागी होकर, लोकरहित लौकिक होकर ही वे जीवन पथ में चल सके।

कभी सुबह, कभी दोपहर में, कभी शाम को उनके घर पर हम लोग उनसे मिलते रहते थे। और यदि दिन में किसी समय न भी मिल पाते तो शाम को चिराग़ जलते उनकी छोटी-सी दूकान पर हम-लोगों की मजलिस जरूर रोशन होती थी। हम सब चारों ओर से घूम फिर कर साँझ बीतते-बीतते प्रसाद जी की दूकान पर निश्चय एकत्र होजाते थे। वहीं हम लोगों का साहित्य-सम्मेलन होता था वहीं विविधि दिशाओं की त्रिवेणियों का संगम होता था। प्रसाद जी की दूकान की वह सात हाथ लम्बी और दो हाथ चौड़ी तख्ती, जिस पर बोरे की एक लम्बी परत और एक साधारण तख्तपोश पड़ा रहता था, लोगों के स्नेह-समागम से केवट की नाव की तरह सजीव होजाती थी। प्रसाद जी उस पर बड़ी

खुशादिली और निश्चिन्तता से बैठ जाते थे, समाज धीरे-धीरे जुड़ने लगता था। दो तीन घण्टों की उस बैठक में जीवन की सभी दिशाओं के पथिक क्या राजनीतिक, क्या साहित्यिक, क्या व्यापारिक, क्या सामाजिक, सभी अपना झाँकी देजाते थे, सभी अपनी अपनी बात कह जाते थे। काशी तथा बाहर से आने वाले प्रतिष्ठित से प्रतिष्ठित साहित्यकों का तो वह टाउन हाल ही था। बगल ही में एक पानवाला पान देता जाता था। प्रसाद जी खूब खाते, लोगों को खिलाते और राह चलते बन्दगी देने वालों को भी नजर करते जाते थे। इस प्रकार सभी क्षेत्रों के सम्मिलन से बिना पोथी-पत्रा, बिना अखबार-किताब के ही इतनी जानकारी की बात हम लोगों को मिलती कि वह किसी विद्यालय के ज्ञान से कम महत्वपूर्ण न होती। प्रसाद जी की वह दुकान काशी के अनेक नवयुवक साहित्यकों की विद्या-पीठ है, प्रसाद जी का मकान हम अनेक तरुणों का कला-मन्दिर है।

प्रौढ़ता को पार कर जाने पर भी वे आजीवन वही सत्रह-अठारह वर्ष के नटवर भावुक किशोर थे। उसी भावुक किशोर को लक्ष्य कर उनके बाल्यसखा श्री राय कृष्णदास जी ने एकबार प्रेम-परिहास पूर्वक लिखा था—"गई न शिशुता की झलक।" हाय, आज वही प्रसाद जी हम लोगों की दुनिया सूनी कर गए। मृत्यु ने मानों डकैती करके उन्हें हमारे बीच से छीन लिया।

× × ×

प्रसाद जी से जब मेरी प्रथम भेंट हुई थी तभी से उनके भीतर के एक भौतिक विषाद का आभास मुझे मिल गया था। उन्होंने बातों ही बातों में मेरी अगण्य आर्थिक स्थिति जान कर कहा था—सब के सब साहित्य में ही चले आ रहे हैं। अरे बाबा, दो रोटी कमाने खाने का उपाय करो। इसी उद्‌गार में प्रसाद जी की मर्म-वेदना छिपी हुई है। यह नहीं कि साहित्य-क्षेत्र में वे निर्धनों को देखना नहीं चाहते थे; बल्कि उनका विश्वास था कि इन निर्धनों को ही लेकर हिन्दी इस शताब्दी में शक्ति ग्रहण करेगी। उनके कवि-हृदय में दीन-दुखियों के लिये सम्वेदना थी, उसी सम्वेदना से विदग्ध होकर वे निर्धनों का साहित्यिक बलिदान नहीं देख सकते थे। वे एक कुलीन गृहस्थ थे, उनके अतीत की सम्पन्नता उन्हें अपनी पीड़ा कहने से बरजती थी, रूढ़ियों के नाम पर उनमें एक यही मर्यादा शेष रह गई थी। इसीलिये पीड़ितों की पीड़ा में ही वे अपने मन का क्षोभ प्रकट कर देते थे। वे सीधे अपने को व्यक्त नहीं करते थे, किसी माध्यम से ही अपने मर्मोद्‌घाटन करते थे। सम्पन्न कुल में उत्पन्न होकर साहित्य के लिए उन्होंने अपना जो लौकिक बलिदान दिया, वे उस बलि के भुक्तभोगी थे, और उसी बलिदान के क्षेत्र में वे किसी ग़रीब को अग्रसर होते देखते तो उसे हतोत्साह करने के लिये नहीं बल्कि ख़तरे का घंटा बजा देने के लिए कुछ कह देते थे, मानों साहस को सावधान कर देते थे —

> नाविक साहस है खेलोगे ?
> जर्जर तरी भरी पथिकों से
> झड़ में क्यों झेलोगे ?
>
> —"स्कन्दगुप्त"

उनका जीवन एक ऐसे व्यक्ति का पुरुषार्थी जीवन था, जो 'कवि' था। कवि था, इसलिये जीवन के संकटों में भी मनोरम था; पुरुषार्थी था, इसलिये जीवन के संकटों को झेल सका। शायद सन् १९३० में एक दिन, रात के समय घर लौटते हुए उन्होंने राह में मुझे एक बोझ फेंके हुए मजदूर की तरह सांस लेकर बताया था कि लगातार बीस वर्ष तक एक बहुत बड़ी रक़म का कर्ज चुकाने में वे रुद्ध साँस थे। एक 'ओह' कह कर उन्होंने प्रसन्नता प्रकट की कि अब जान में जान आई है।

जो लोग बाहर से प्रसाद जी को एक धनी साहित्यिक के रूप में जानते आये हैं वे प्रसाद जी के जीवन के पीड़ित इतिहास को नहीं जानते। प्रसाद जी धनी कुल में अवश्य उत्पन्न हुए, किन्तु धनी कुल उनके लिए समस्या हो गया। उनके हाथ में जब अपने कुल की बागडोर आई, उस समय वे १७ वर्ष के बालक मात्र थे। बागडोर हाथ में आने के पहले ही से उनके व्यापार में लूट-पाट हो चुकी थी, जो कुछ शेष था उसमें भी उनके नाबालिगपन का लाभ उठाकर बटमारों ने हाथ साफ किया। वयस्क होते-होते प्रसाद जी पूर्व वैभव का पतझड़ मात्र लेकर विश्वमंच पर खड़े हुए—

पतझड़ था, झाड़ खड़े थे
सूखी-सी फुलवारी में,
किसलय नव कुसुम बिछा कर
आये तुम इस क्यारी में।

—"आंसू"

उनके हार्दिक संस्कार कलाकार के संस्कार थे। किन्तु इस निर्दय जगत में केवल कला को ही सम्बल बनाकर पथ में नहीं चला जा सकता, यह उन्होंने अपने जीवन के प्रारम्भिक अनुभवों से जान लिया था। उनके 'आंसू' में स्वार्थों की मात्रा में संलग्न निर्म्मम संसार का यह रूप है—

सुख-दुख में उठता-गिरता
संसार तिरोहित होगा,
मुड़ कर न कभी देखेगा
किसका हित अनहित होगा।

अतएव जीवन-यापन के लिए लौकिक उद्योग के रूप में अपने पूर्वजों के व्यापार को ही उन्होंने अपनाया। प्रसाद जी के लिये वह व्यापार, कलाकार के लिए अर्थ शास्त्र का प्रश्न था। प्रसाद जी इस प्रश्न को हल कर ले जाते, किन्तु हाथों में शक्ति आने से पहले ही उपरोक्त परिस्थितियों द्वारा व्यावहारिक जीवों ने ऋण के बहाने उन पर सम्पन्न कुल में उत्पन्न होने का टैक्स लगा रक्खा था। जीवन की इस दुतरफा लड़ाई में उस कवि को जीवन-संग्राम के अनेक विचित्र अनुभव हुए। उन अनुभवों ने उन्हें एक दार्शनिक कलाकार बना दिया। अपने कवि-हृदय की स्वाभाविक सम्वेदना को बौद्ध-धर्म की करुणा का रूप देकर उन्होंने ऐतिहासिक नाटकों की रचना की। साथ ही, रूढ़ि-ग्रस्त, आत्मलिप्त, परपीड़क समाज के प्रति उनके मन में एक व्यंगपूर्ण विद्रोह भी उदय हो गया था। वही विद्रोह उनके उपन्यासों में मिलता है। प्रसाद जी आदर्श के नाम पर दुर्बलताओं का नग्न नृत्य करने वाले पशुओं के एक वीतराग विरोधी थे। किन्तु सम्पन्नों और झूठ आदर्शवादियों से सताये हुए दुर्बलों के लिये वे सहानुभूतिशील थे। आदर्श का चाबुक मारने के बजाय केवल एक मानवी सहानुभूति देने में उनका विश्वास था। कवि की हैसियत से सहृदय, अनुभवी की हैसियत से, दार्शनिक और विद्रोही की हैसियत से पुरुषार्थी होकर उन्होंने जीवन का खेल खेला। उनका जीवन कितना कोमल और कितना आक्रान्त था, इसका परिचय "स्कन्दगुप्त" नाटक के इस वार्त्तालाप से मिलता है—

सखी—तुम्हें इतना दुःख है, मैं यह कल्पना भी न कर सकी थी।

देवसेना — (सम्हल कर) यही तू भूलती है। मुझे तो इसी में सुख मिलता है। मेरा हृदय मुझ से अनुरोध करता है, मचलता है, रूठता है, मैं उसे मनाती हूँ। आँखें प्रणय-कलह उत्पन्न कराती हैं, चित्त उत्तेजित करता है, बुद्धि झिड़कती है, कान सुनते ही नहीं! मैं सबको समझाती हूँ, विवाद मिटाती हूँ, सखी! मैं फिर भी इसी झगड़ालू कुटुम्ब में गृहस्थी सम्हाल कर, स्वस्थ होकर बैठती हूँ।

इन पंक्तियों में प्रसाद जी ने मानो अपनी ही आत्मा को उपस्थित किया है—

ऐसी ही करुण सरिता में उनकी जीवन-नैय्या पार गई है।

वे जाते-जाते अपने पीछे वे ही गार्हस्थिक परिस्थितियां छोड़ गए हैं, जिन परिस्थितियों को लेकर उन्होंने संसार में प्रवेश किया था—सत्रह वर्ष का पुत्र चिरंजीव रत्नशंकर, उसकी विधवा माता और सामने एक लुटी हुई गृहस्थी!

ऐश्वर्य्य के पर्वत से नीचे उतरने में प्रसाद जी काफ़ी थक गए थे। वे ऊब चुके थे और नवीन जीवन धारण करना चाहते थे। पूर्व वैभव उनके लिए मनोविनोद की कहानी मात्र रह गया था, जिसे फ़ुरसत के समय बड़े रस के साथ मित्रों को सुनाया करते थे। ऐश्वर्य्य का जीवन और घोर दरिद्रता का जीवन, दोनों में से कोई भी उन्हें अभिप्रेत न था। वे मध्यम श्रेणी के एक सद्गृहस्थ बने रहना चाहते थे। "कंकाल" में एक स्थान पर उन्होंने लिखा भी है—

"हम उन्नति करते-करते ऐश्वर्य्य के टीले न बन जायँ, हां, हमारी उन्नति फल-फूल वाले वृक्षों की-सी हो, जिसमें शीतल छाया मिले, विश्राम मिले, शांति मिले।" उनके मुख से सम्पन्न अतीत की बसन्ती बातें सुनते समय एक बार मैंने कहा था—आपको कभी-कभी उस जीवन की बड़ी इच्छा होती होगी। उन्होंने ज़रा ढुल कर कहा:-नहीं यार, जब कोई (वैभवशाली) मुँह बिरावता (चिढ़ाता) है, तब मन कचोटता है। मानों यही कचोट उनके 'आंसू' को इन पंक्तियों में है—

खाली न सुनहली सन्ध्या
मानिक मदिरा से जिनकी
वे कब सुनने वाले हैं
दुख की घड़ियां भी दिन की!

उन्होंने अपने नाटकों (विशेषतः "कामना") और उपन्यासों में यत्र-तत्र वैभव की, विडम्बना दिखलाई है और पद-दलित दीन दुखियों को मानवी सहानुभूति दी है। "स्कन्दगुप्त" में उन्होंने मानों पूंजीवाद के तिरस्कार में कहलाया है:—"राजा का मुकुट श्रम जीवियों के टोकरों से भी तुच्छ है।"

प्रसाद के शब्दों में यह आने वाले युग की ध्वनि है। प्रसाद के साहित्य ने पीड़ा और दरिद्रता में ही मानवता और कला का दर्शन किया है। उनकी "लहर" नामक कविता-पुस्तक में "पेशोला की प्रति ध्वनि" शीर्षक कविता की ये पंक्तियां—"झोंपड़े खड़े हैं बने शिल्प-से विषाद के दग्ध अवसाद से।"

तथा "झरना" की "विषाद" शीर्षक कविता की ये पंक्तियां—

"उत्तेजित कर मत दौड़ाओ
करुणा का यह थका-चरण है।"

उनके निगूढ़तम करुणतम कवि हृदय की कोमल सम्वेदना की अभिव्यक्ति है।

ऋण-मुक्त होने के बाद से ही, शायद सन् १९२९-३० से, प्रसाद जी अस्वस्थ रहने लगे। इतने दिनों तक दुनिया के तकाज़ों से छुटकारा पाने के लिए ही वे स्वास्थ ग्रहण किए हुए थे; क्योंकि वे एक ईमानदार गृहस्थ थे। इसके बाद से उनका शरीर शिथिल होता गया, बीच-बीच में सँभल कर फिर-फिर शिथिल होता गया, और अन्तिम बार वे उस सांघातिक बीमारी में पड़ गए जब कि रुग्ण शैया से फिर उठ ही न सके, एक निरीह आँसू की तरह विश्व-महोदधि में वे सदा के लिए ढलक गए।

अभी जीवित रहने की उन्हें इच्छा थी, अपने बिखरे हुए साहित्यिक कार्यों को, अपने अधूरे स्वप्नों की पूर्णता की मनोवाञ्छित सीमा तक पहुँचा देने के लिए! इसीलिए अन्तिम क्षणों में अन्तिम बात कहने के लिए डाक्टर के संकेत करने पर उन्होंने कहा था— मुझे साँस लेने में तकलीफ़ होरही है, मुझे साँस लेने की दवा दीजिए।

× × ×

घोर कर्म-श्रान्त जीवन के भीतर से ही उन्होंने अपनी साहित्यिक रचनायें कीं। व्यापारिक

जगत की विकट समस्या उनके सामने थी, साथ ही कला की उपासना भी उनसे अपने लिये समय माँगती थी। लेकिन कभी भी उनके चेहरे पर उदासी नहीं दीख पड़ी, अगर वे ही उदास हो जाते तो हम हिन्दी के छुटभैयों की क्या दशा होती ? वे तो मानों इसका उदाहरण उपस्थित करना चाहते थे कि कर्म करते हुये किस प्रकार कला के कोमल स्नेह को बनाए रक्खा जा सकता है। एक दिन मुँह बनाकर हँसते-हँसते उन्होंने कहा था—रोजगार का काम करते-करते अपने साहित्यिक कार्यों का ध्यान आ जाता है और उससे छुटकारा पाते-न-पाते रोजगार का मसला सामने आ जाता है।

साहित्यिक कार्य और व्यापारिक झंझट तो थे ही, ऊपर से सुबह से रात तक मिलने वालों का ताँता लगा रहता। किसी से मिलने से उन्हें इनकार करते नहीं पाया, बल्कि मिले बिना वे जी नहीं सकते थे। बड़ी ललक से सबसे काफ़ी समय तक तथा ख़ूब ख़ुशदिली से हिलते-मिलते थे। और आश्चर्य तो यह कि वे कैसे लिखते थे, किस समय लिखते थे।

उन्होंने जिस समय जो लिखा, युग की प्रगति के हिसाब से परिपूर्ण लिखा। कवि, कहानीकार, नाटककार; उपन्यासकार, निबन्धकार—ऐसे पुञ्जीभूत प्रतिभाशाली साहित्य को बड़े बरदान से ही मिलते हैं। मुझे यह कहने की आज्ञा हो कि वे हमारे साहित्य के विक्टर ह्यूगो थे। इस विश्व मंच से जाते-जाते वे "कामायिनी" जैसा महाकाव्य अपने कीर्त्ति शिखर पर गुम्बज की भाँति शोभित कर गये हैं, जैसे प्रेमचन्द अपने 'गोदान' को। प्रेमचन्द और प्रसाद, दोनों इस युग के सफल-साहित्य यात्री हैं। प्रसाद जी ने अपने जिस किशोर जीवन में मिडिल क्लास की गृहस्थी पाई थी, उसी मिडिल क्लास की उन्होंने स्कूली पढ़ाई पाई थी। किन्तु जिस स्वावलम्बी पुरुषार्थ से उन्होंने अपनी गृहस्थी का संचालन किया, उसी पुरुषार्थ के स्वावलम्बन अध्ययन, मनन, चिन्तन, निरीक्षण और संग्रहण से उन्होंने अपनी मानसिक योग्यता को समृद्ध कर हमारे साहित्य को सुसम्पन्न किया। जीवन के अनुभवों में अदृष्ट की झलक ने उन्हें दार्शनिक बना दिया था, वेदना ने कवि और सुरुचि ने कलाकर, रसिकता ने हंस मुख, कठनाइयों ने मनोवैज्ञानिक, व्यावहारिकता ने राजनीतिज्ञ। अपने इस समष्टि व्यक्तित्व को उन्होंने अपने नाटकों में घनीभूत किया है उनकी सम्पूर्ण कृतियों में उनका 'आँसू' नामक काव्य उनकी प्रेम पूर्ण भावुकता और जीवन के प्रति उनकी जागरूक दार्शनिकता का सत्त है।

हमारे साहित्य में द्विवेदी युग के तीन प्रमुख साहित्यिक महारथी—प्रेमचन्द, मैथलीशरण और जयशंकर प्रसाद, उस युग के ब्रह्मा, विष्णु, महेश हैं। भारतेन्दु युग साहित्य के जिस चित्रपट पर रेखाएं खींच कर उसे अपूर्ण छोड़ गया था, उसे इसी चित्र मूर्ति ने अपने ही व्यक्तित्व के रूप-रंग से एक आकार दिया। ये तीनों हमारे साहित्य के चित्रपट पर अपने भारतीय रूप में ही अंकित हैं, तीनों के भीतर भारतीय संस्कृति है, किन्तु त्रिवेणी के रूप में प्रसाद और गुप्त जी में यह संस्कृति गंगा-यमुना की तरह स्पष्ट है, किन्तु प्रेमचन्द में सरस्वती की भाँति अदृश्य। गुप्त जी ने वैष्णव संस्कृति के अनरूप बीसवीं शताब्दी की साहित्य-कला को ग्रहण किया प्रसाद जी ने बौद्ध संस्कृति के अनरूप। इसीसे उनकी कला गुप्त जी से भिन्न होगई है; किन्तु काव्य-द्वारा जिस चिरन्तन भारतीय संस्कृति को जगाना गुप्त जी को अभिप्रेत है, वही नाटकों द्वारा प्रसाद जी को भी अभिप्रेत था। दोनों की कला धर्ममूलक है। प्रेमचन्द जी ने इन दोनों कलाकारों से भिन्न पथ ग्रहण किया। उन्होंने सामयिक राष्ट्रीयता को अपनाया। चूंकि

राष्ट्रीयता थी, इसलिए उसमें भारतीयता थी, किन्तु वह धर्म्म-मूलक न होकर अर्थ-मूलक है। वह बीसवीं शताब्दी के राष्ट्रीय आन्दोलन की भारतीयता है। उसमें जो सहृदयता और उदारता के संस्कार हैं; संस्कृति के नाम पर बस उतनी ही भारतीयता है, अन्यथा वह विदेशी परतन्त्रता के हाथों पीड़ित तात्कालिक भारतीयता है, जिसके धार्मिक, राजनीतिक, सामाजिक सभी प्रश्न भविष्याधीन हैं। एक ही मनुष्यता की प्रतिष्ठापना में यह सांस्कृतिक त्रिकोण, इन तीन महान कलाकारों की अपनी अपनी सामाजिक परिस्थितियों से उत्पन्न रुचि का द्योतक है।

प्रसाद जी भी गुप्त जी की भाँति ही हिन्दू-संस्कृति के नए विश्व के नए जीवन पर विजय चाहते थे। इस सम्बन्ध में उनका भी एक बौद्धिक स्वप्न था, जिसे हम "कंकाल" में यत्किञ्चित् देख सकते हैं।

विश्व के जीवन में आज क्या-क्या भौतिक विडम्बनाएँ आ गई हैं, प्रवृत्तियों ने जीवन को कितना विकृत कर दिया है, इसका एक रूप उनकी "कामना" में है; साथ ही वर्तमान परिस्थितियों से निष्कृति के लिए भारत का हिन्दू दार्शनिक दृष्टिकोण भी उसमें इंगित है। बौद्ध संस्कृति, वैष्णव संस्कृति का ही सार-रूप सार्व-भौम रूप थी। 'प्रसाद जी' उसी सार्व-भौम रूप से हिन्दू संस्कृति की विश्व-विजय पर विश्वास रखते थे।

प्रसाद जी ने दुनिया खूब देखी थी, अपने जीवन के पूर्वार्द्ध में उन्होंने खूब भ्रमण किया था, सब कुछ देख-सुन कर गृहस्थ रूप में वे काशी में स्थिर रहे। और जब उन्होंने अपनी यात्रा की, तब इस संसार को ही छोड़ कर चले गये! हाय! क्या अब प्रसाद जी नहीं मिलेंगे, प्यारे प्रसाद जी का हंसता मुखड़ा क्या अब न दीखेगा! उनके "आँसू" में हमारी इस विकल उत्कण्ठा का मौन उत्तर है, मानों प्रसाद जी अपने अनन्त अदृश्य पथ से कह रहे हैं:—

"चेतना लहर न उठेगी
जीवन समुद्र थिर होगा,
सन्ध्या हो सर्ग प्रलय की
विच्छेद मिलन फिर होगा।

* * *

चमकूंगा धूल-कणों में
सौरभ हो उड़ जाऊँगा,
पाऊंगा कहीं तुम्हें तो
ग्रह-पथ में टकराऊँगा।

—जब सो जाता है संसार !

[श्री 'अज्ञेय']

हाय, दिवस में नहीं जागती प्राणों में कोई झँकार;
किन्तु रुदन का ज्वार साथ ले आता है तम-पारावार !
जग की आंखों के आगे मुरझाए-से रहते हैं प्राण—
इसी लिए चुप-चुप रोता हूँ जब सो जाता है संसार !

दिन की अपरिवर्त मुद्रा को
पीड़ा की करुणा तन्द्रा को
मिश्रता कर करती विकृत—
(द्रवीभूत ताँबे पर मानों छायाएँ हों विलुलित —)
भेदक, तीक्ष्ण चेतना एक भयावह—
रो-रो बार-बार कहती है,
'चला गया वह, नहीं आयगा, चला गया वह !'
दिन में वह आघात न जाने कैसे आत्मा सहती है,
किन्तु रात्रि में रोम-रोम हो जाता है जीवित चीत्कार—
इसीलिये चुप-चुप रोता हूँ जब सो जाता है संसार !

तारों की अगणित संख्या कहती है,
'तुम हो चिर एकाकी ! चिर एकाकी !'
नीलव्यन्त में भी तो यही चुभन, बहती है—
'अगणित गण में भी एकाकी !
चला गया वह, तेरे अतुल स्नेह का भागी—
चला गया जो था तुझ में अनुरागी !'
सूने ही में अब बिखरेगा मेरा सब सौहार्द्र-दुलार !
इसीलिये चुप-चुप रोता हूँ जब सो जाता है संसार !
वह जो नभ में निर्भर,
अविश्रान्त बहता जाता है निर्झर,

जीवन-सुधा



श्री सच्चिदानन्द वात्स्यायन ('अज्ञेय')

झिलमिल तारा कम्पन......कम्पन......कम्पन......
यह है अगणित गत स्मृतियों का स्पन्दन,
मूक विचार प्रेरणाओं का क्रन्दन—
क्योंकि जगत् में एक प्राण का एक खो गया सहचर !
कहाँ-कहाँ तक भला न पहुँचेगी यह भेदक मूक पुकार !
इसीलिये चुप-चुप रोता हूँ जब सो जाता है संसार !

एक ओर यह विश्व दुःख का भाव सालता ही रहता है,
किन्तु दूसरी ओर साथ ही मन कहता है,
'मिथ्या ! मिथ्या ! आत्म प्रवंचन ! माया !
इतनी बड़ी सृष्टि क्या तेरी ही प्रतिबिम्बित छाया ?
तेरे आत्मा—तेरे भावों—तेरी पीड़ा का प्रति रूप ?
तुच्छ तू !' हा विद्रूप !
नियति प्रगति में व्यर्थ लिए फिरता हूँ मैं अपना यह प्यार !
इसीलिये चुप-चुप रोता हूँ जब सो जाता है संसार !

एक पहेली यह विकराली—
सुलझ कदापि न सकने वाली !
पाकर मुझे अकेला, यहाँ अचानक
उर में भेद-भेद जाती है एक विष-बुझा कण्टक—
चुभता भी है वह पर जलता भी है;
मूर्छित करता जाता है पर खलता भी है;
मर्म स्थल को बाँध मानो कसक रहा हो कोई तार !
इसीलिये चुप-चुप रोता हूँ जब सो जाता है संसार !

हा ये मेरे विफल प्रयास !
सोच-सोच कर रह जाता है केवल संशय मेरे पास !
जिससे न जीवन सुलझा पावे,
मृत्यु भला उसको कैसे सुलझावे ?
और रुदन यह—रोने से यदि मृत्यु दूर हो जाती,
तो जीवन की हँसी स्वयं ही अजर अमरता पाती !
मैं संशय निधि में उतराता, तुम खोगये पहुँचकर पार !
इसीलिये चुप-चुप रोता हूँ जब सो जाता है संसार !

लहर

[श्री सुशीला आगा]

वह गङ्गा के समीप ही पेड़ों के एक झुरमुट के नीचे नेत्र बन्द किये जड़वत् बैठा रहता। बस केवल कभी-कभी एक नीरस संगीत-ध्वनि उस शाँति को भंग करने के निमित्त तड़प उठती। वह पुकारने लगता—'हे गोविन्द राखो शरण ?' उसकी इस पुकार में वेदना और विह्वलता का सम्मिश्रण रहता।

काशी-निवासी ऐसे बहुत कम लोग होंगे जिन्होंने भीकू को न देखा हो, परन्तु उसे हाथ फैला कर माँगते आज तक किसी ने न देखा था। याचना करना उसे आता ही न था। खुदा के बन्दे बहुत से दयावान लोग उसे एक-दो पैसे दे कर उसके प्रति अपनी सहानुभूति प्रकट कर देते थे।

उसके मौन रहने का कारण जानने की बहुतों को उत्कंठा रहती। स्नानार्थ जाते हुए स्त्री-पुरुष मार्ग में रुक कर देर तक उसकी ओर ताकते, परन्तु उनका ऐसा व्यवहार भीकू पर अपना जादू न डाल पाता। बालक उसके निकट जा कर प्रश्न करते 'बूढ़े बाबा पैसा लोगे ?' पर वे भी उत्तर न मिलने पर निराश लौट जाते।

भीकू ने विवाह नहीं किया था। जो लोग उससे बहुत दिनों से परिचित थे, वे बहुधा आकर छेड़-छाड़ करते, कहते — दादा अब तो व्याह कर लो। बहू आयेगी तो दूध-भात खिला दिया करेगी। भीकू इसका उत्तर दिये बिना न मानता। उसके झुर्रियाँ पड़े सूखे मुख पर एक शान्त हँसी नृत्य करने लगती, वह कहता—"मैं तो आपै राम की बहुरिया हूँ।" उसके ये शब्द लोगों के मुहों पर मोहर का काम करते।

रात्रि का समय था। जाड़े के आगमन की सूचना देती हुई वायु अपने प्रबल वेग से बह रही थी। भीकू अपनी दिन भर की कमाई बटोर कर झोपड़ी में आया। बहुत ही सामान्य छोटी-सी झोपड़ी थी। उसने धीरे से आले में से अपनी पूँजी की थैली निकाली। यही उसका सर्वस्व थी। अब तक सूखे चबैने चबाकर उसने बहुत कुछ धन इकट्ठा किया था। केवल इस इच्छा से कि कभी हाथ-पैर ढीले पड़ गये तो रोटी का सहारा रहेगा। उसने अँधकार में टटोल कर ढिबरी जलाई, एक हल्का-सा अस्थिर प्रकाश हुआ। झोपड़ी की एक-एक चीज जो अंधकार का आवरण डाले छिपी बैठी थी अब अपनी दरिद्रता का उपहास करने लगी। भीकू ने पेड़ों के नीचे की कुछ टहनियाँ जमा कर रक्खी थीं उनसे चूल्हा जलाया। पास एक मिट्टी की हाँडी रखी थी उसमें थोड़ा-सा चावल डालकर चूल्हे पर चढ़ा दिया और आप पास ही गुदड़ियों के ढेर पर लेट गया। मानव लालसाओं का कितना संक्षिप्त स्वरूप था! झोपड़ी की सारी वस्तुयें मनुष्य के जीवन-प्रेम का उपहास कर रही थीं। धीरे-धीरे भीकू की आँख लग गई। हाँडी में के खद्‌बद् करते हुए चावल उसे मीठी लोरियाँ सुना कर थपकियाँ दे रहे थे।

आँखें बन्द किये कुछ ही क्षण बीते होंगे कि भीकू को लगा, कोई उसे पुकार रहा है। चौंक कर उसने आँखें खोल दीं, और साँस रोक कर इधर-उधर ताकने लगा। किसी शिशु के रोने का शब्द वायु के झोंकों के साथ भीतर आ रहा था। इतनी रात गये, ऐसे निर्जन स्थान में यह रुदन सुन कर भीकू को आश्चर्य हुआ। लपक कर उसने ढिबरी उठाई और आवाज़ का अनुसरण करता हुआ चल दिया। उसी पेड़ों के झुरमुट के नीचे जहाँ उसने अपने जीवन के कितने ही दिन व्यतीत किये थे — और कर रहा था — धुंधले प्रकाश में उसने देखा एक नवजात शिशु कुछ कपड़ों में लिपटा पड़ा रो रहा है। भीकू ने लपक कर शिशु को उठा लिया और अपनी झोपड़ी की ओर दौड़ा। भीतर जाकर उसने देखा कि वह चाँद-सी सुन्दर एक बालिका है। उसके मुख से निकल पड़ा, "हाय, किसका इतना कठोर हृदय है जो ऐसी प्यारी बिटिया को फेंक गया।" उसके नीरस हृदय में प्रथम बार सहानुभूति ने झाँका। उसे भासने लगा, मानों भगवान ने उसकी प्रार्थनाओं पर रीझ कर यह सुन्दर खिलौना उसे पुरस्कार-स्वरूप दिया है।

हृदय की भावनायें पलट गईं। जिस संसार में उसे कोई आकर्षण न था वह सुन्दर प्रतीत होने लगा। भीकू ने बालिका को हृदय से चिपटा लिया—उसे अपने में एक नवीनता की अनुभूति होने लगी, और वह थी कोमलता। गरमी पाकर बालिका तुरन्त सो गई। भीकू ने उसे अपनी गुदड़ियों में दुबका कर लिटा दिया और स्वयं कुछ पैसे लेकर दूध लेने चल दिया। जब तक उसकी दृष्टि पहुँच सकती थी वह मुड़-मुड़ कर देखता, कहीं बालिका जग न उठे। दूध लेकर भीकू साँस छोड़कर घर की ओर दौड़ पड़ा। उसकी सूखी टाँगों में विद्युत-की-सी शक्ति आ गई, लौटने पर देखा चूल्हे पर का भात जल चुका था; परन्तु उसने लापरवाही से उठा कर हाँडी एक कोने में फेंक दी और दूध का कुल्हड़ आग के समीप रख दिया। दूध गरम होते-होते बालिका कुलबुला उठी — भीकू ने उसे गोदी में उठा लिया और किसी प्रकार रुई की बत्ती से उसके मुख में दूध डालने लगा। बालिका भूखी थी, दूध पीकर सो गई। भीकू के नेत्रों में नींद नहीं थी, वह बालिका को गोद में लिये बैठा उत्सुक दृष्टि से रह-रह कर उसका मुख निहारने लगता — शेख़चिल्ली के मनसूबों की नांई वह भी कल्पना करने लगा—मेरी बिटिया का नाम रानी होगा; बड़ी होगी; पांव-पांव चलेगी; मुझे 'काका' कह कर पुकारेगी; घर की रोटी पकाया करेगी।

भीकू बालिका को देखकर कभी-कभी सिहर उठता, यदि किसी को पता चल गया तो बालिका उससे छिन जायगी—वह मन ही मन भगवान से प्रार्थना करता।

ज्यों ज्यों करके सबेरा हुआ। भीकू को अपनी बहुत दिन की गाढ़ी कमाई का सदुपयोग सूझने लगा। सबेरे उठ कर उसने बिटिया को दूध पिलाया। वह बहुत क्षीण थी। इस कारण दूध पीते ही सो गई। भीकू लपका हुआ बाजार गया और वहाँ से उसने कुछ बने-बनाये कपड़े ख़रीदे। लौटती बार उसे बहुत से लोगों ने देखा। उसकी चाल की गति देख कितनों ही को विस्मय हुआ। राह में जितने सामने पड़ते, बिना हिच-किचाये वह उनसे याचना करने लगता—'दे दो भैय्या, राम भला करेगा।' इस परिवर्तन का कारण लोगों की समझ में नहीं आया परन्तु उसे जल्दी में देख, बिना कुछ पूछने का साहस किए, उन्होंने उसके फैले हुए हाथों पर पैसे रख दिये।

छः दिन व्यतीत हो चुके थे, भीकू अब गृहस्थ आदमी था। जम कर बैठ कर भीख माँगने का समय उसे न मिलता; उसका बैठने का स्थान अधिकतर सूना पड़ा रहता। लोग कारण पूछते तो हँस कर कहता 'क्या करें भैय्या, अब पौरुख थक गये हैं,' पर अब थोड़े समय में ही उसे कहीं

अधिक भीख मिल जाती। भीकू अपनी रानी के भाग्य की सराहना करता।

बालिका दिनों-दिन क्षीण होती जा रही थी। अब तो वह अधिकतर नेत्र बन्द किए पड़ी रहती थी। अनभिज्ञ भीकू सोचता, मगन पड़ी है—प्यारी चिटिया है, अपने काका को तंग नहीं करती।

सातवें दिन भीकू को मालूम हुआ, रानी की तबियत ठीक नहीं है। वह सबेरे से शान्त पड़ी विचित्र प्रकार से श्वाँस ले रही है। भीकू ने बहुत दुलार से उसके मुख में दूध डालने का प्रयत्न किया, परन्तु सब निष्फल। रह-रह कर भीकू के नेत्र डब-डबा आते। सोचता वैद्य को दिखाये, परन्तु बालिका के छिन जाने का भय था। वह चुप-चाप हतबुद्धि-सा उसे हृदय से लगाए बैठा रहा, न भूख थी न प्यास।

भगवान् की माया। बालिका ने एक सप्ताह बाद रात्रि के उसी पहर में अपनी लीला समाप्त करदी।

भीकू अधीर होकर चिल्ला उठा। उसकी आवाजें शून्य अन्धकार से टकरा कर फिर उसके कानों में गूँजने लगीं। जिस भीकू ने अपने जीवन में कभी आँसू गिराना नहीं सीखा था, आज वही अपने संचित कोष का स्वतंत्रता-पूर्वक व्यवहार कर रहा था।

दो दिन के उपराँत लोगों ने देखा, भीकू उसी स्थान पर उसी प्रकार नेत्र बन्द किए बैठा है। केवल रह-रह कर एक नीरस संगीत ध्वनि उस शान्ति को भंग करने के निमित्त तड़प उठती है। वह पुकारने लगता है—'हे गोविन्द राखो शरण।' लोगों ने प्रश्न किया —

"भीकू वही पुराना ढँग क्यों ?"

उसके नेत्रों से बूँदें टपक पड़ीं और मुख से निकला, "वह एक 'लहर' थी।"

जीवन-सुधा



श्री प्रेमचन्द (मृत्यु-शय्या पर)

प्रेमचन्द्जी की कला

[श्री जैनेन्द्र कुमार]

श्री प्रेमचन्दजी का ताज़ा उपन्यास 'ग़बन' हाल ही निकला है। निकला तभी मैंने इसे पढ़ लिया। लेकिन, जो मुझे वक्तव्य हो सकता है, वह लिखता अब हूँ। चीज़ को समझने और पुस्तक के असर को ठंडा होने देने के लिए मैंने कुछ समय ले लिया है। ठंडा होकर बात कहना ठीक होता है, — जब व्यक्ति पुस्तक से अपने को अलहदा खड़ा करके मानों उसपर सर्वभली निगाह डाल सके।

प्रेमचन्दजी हिन्दी के सबसे बड़े लेखक हैं। हम हिन्दी भाषाभाषी उनके मूल्य को ठीक आँक नहीं सकते। हम चित्र के इतने निकट हैं कि उसकी विविधता, उसका रंग-वैषम्य हमें आच्छन्न कर देता है, उसमें निवास करती हुई और उस चित्र को सजीवता प्रदान करती हुई एकता हमारी पकड़ में नहीं आती। जो एकाध दशाब्दि अथवा एक दो भाषा का अन्तर बीच में डालकर प्रेमचन्द को देखेंगे, वे, मेरा अनुमान है, प्रेमचन्द को अधिक समझेंगे, अधिक सराहेंगे। वर्तमान की अपेक्षा भविष्य में और हिन्दी को छोड़ कर जहाँ अनुवादों द्वारा अन्य भाषाओं में पहुँचेगे, वहाँ उनको विशेष सराहना प्राप्त होगी।

लेकिन, यत्न द्वारा हम अपनी दृष्टि में कुछ कुछ वैसी क्षमता ला सकते हैं कि बहुत पास की चीज़ को मानों इतनी दूर से देख सकें कि वह हमें अपनी सम्पूर्णता में, अपनी एकता में, दीखे। अगर रचनाओं के भीतर पैठकर, मानों इस सीढ़ी से, हम रचनाकार के हृदय में पहुँच जाँय जहाँ से कि उसकी रचनाओं का उद्गम है और जहाँ से उसे एकता प्राप्त होती है, तो हम रस में डूब जाँय।

अपने भीतर के स्नेह, सहानुभूति और कौशल को विविध भाँति से कलम की राह उतार कर कलाकार ने तुम्हारे सामने ला रक्खा है। तुम उन शब्दों, भाषा, प्लाट, और प्लाट के पात्रों का मानों सहारा भर लेकर यदि हृदय में से फूटते हुए झरनों तक पहुँच जा सकते हो, तो वहाँ स्नान करके आनन्दित और धन्य हो जाओगे। नहीं तो, कालिजीय विद्वान् की तरह उसकी भाषा की खूबी और त्रुटि और उसके व्याकरण की निर्दोषता-सदोषता में फँसे रहकर उसकी छान-बीन का मजा ले सकते हो।

मुझे व्याकरण की चिन्ता पढ़ते समय बहुत नहीं रहती। भाषा की चुस्ती का या शिथिलता का ध्यान उसी के ध्यान की ग़रज़ से मैं नहीं रख पाता। भाषा की खूबी या कमी को, सम्पूर्ण वस्तु के मर्म के साथ उसका किसी न किसी प्रकार सामंजस्य बैठाकर, मैं देख लेना चाहता हूँ। अतः यह नहीं कि मैं उस ओर से नितांत उदासीन या क्षमाशील हो रहता हूँ, किन्तु वहाँ समाप्त कर के नहीं बैठ रहता।

प्रेमचन्दजी की कलम की धूम है। बेशक,

वह धूम के लायक है। उनकी चुस्त-दुरुस्त भाषा पर, उनके सुजड़ित वाक्यों पर, मैं किसी से कम मुग्ध नहीं हूँ। बात को ऐसा सुलझा कर कहने की आदत, मैं नहीं जानता, मैंने और कहीं देखी है। बड़ी से बड़ी बात को उलझन के अवसर पर ऐसे सुलझा कर, थोड़े से शब्दों में भरकर कुछ इस तरह से कह जाते हैं जैसे यह गूढ़, गहरी, अप्रत्यक्ष बात उनके लिए नित्य-प्रति घरेलू व्यवहार की जानी-पहचानी चीज हो। इस तरह, जगह जगह उनकी रचनाओं में ऐसे वाक्यांश बिखरे भरे पड़े हैं, जिन्हें जी चाहता है कि आदमी कंठस्थ कर ले। उनमें ऐसा कुछ अनुभव का मर्म भरा रहता है!

प्रेमचन्द्र जी तत्व की उलझन खोलने का काम करते हैं, और वह भी सफाई और सहजपन के साथ। उनकी भाषा का क्षेत्र व्यापक है, उनकी कलम सब जगह पहुँचती है; लेकिन, अंधेरे से अंधेरे में भी वह धोका नहीं देती। वह वहाँ भी सरलता से अपना मार्ग बनाती चली जाती है। सुदर्शन जी और कौशिक जी की भी कलम बड़े मजे-मजे में चलती है, लेकिन, जैसे वह सड़कों पर चलती है, उलझनों से भरे विश्लेषण के जङ्गल में भी उसी तरह सफाई से अपना रास्ता काटती हुई चली चलेगी, इसका मुझे परिचय नहीं है।

स्पष्टता के मैदान में प्रेमचन्द सहज अविजेय हैं। उनकी बात निर्णीत, खुली, निश्चित होती है। अपने पात्रों को भी सुस्पष्ट, चारों ओर से सम्पूर्ण बना कर वह सामने लाते हैं। उनकी पूर्ण मूर्ति सामने आ जाती है। अपने पात्रों की भावनाओं के उत्थान-पतन, घात-प्रतिघात का पूरा-पूरा नकशा वह पाठक के सामने रख देते हैं। तद्गत कारण, परिणाम, उसका औचित्य, उनकी अनिवार्यता आदि के सम्बन्ध में पाठक के हृदय में संशय की गुंजायश नहीं रह जाती। इसलिए, कोई वस्तु उनकी रचना में ऐसी नहीं आती जिसे अस्वाभाविक कहने को जी चाहे, जिस पर विस्मय हो, प्रीति हो, बलात् श्रद्धा हो। सब का परिपाक इस तरह क्रमिक होता है, ऐसा लगता है, कि मानों बिल्कुल अवश्यम्भावी है। अपने पाठक के साथ मानों वे अपने भेद को बाँटते चलते हैं। अंग्रेजी में यों कहेंगे कि वह पाठक को Confidence में, विश्वास में, ले लेते हैं। अमुक पात्र अब क्यों ऐसी अवस्था में हैं,—पाठक इस बारे में असमंजस में नहीं रहने दिया जाता। सब-कुछ उसे खोल-खोल कर बतला दिया जाता है। इस तरह, पाठक सहज रूप में पुस्तक की कहानी के साथ आगे बढ़ता जाता है, इसमें उसे अपनी ओर से बुद्धि प्रयोग की आवश्यकता नहीं होती,—पात्रों के साथ मानों उसकी सहज जान-पहचान रहती है। इसलिए, पुस्तक में ऐसा स्थल नहीं आता जहाँ पाठक अनुभव करे कि वह पात्र के साथ नहीं चल रहा है,—जरा रुक कर उसके साथ हो ले। वह पुस्तक पढ़ने को जरा थामकर अपने को सँभालने की जरूरत में नहीं पड़ता। ऐसा स्थल नहीं आता जहाँ आह खींच कर वह पुस्तक को बन्द करके पटक दे और कुछ देर आँसू ढालने और पोंछने में उसे लगाना पड़े; और फिर, तुरंत ही फिर पढ़ना शुरू करदे। पाठक बड़ी दिलचस्पी के साथ पुस्तक पढ़ता है, और उसके इतने साथ-साथ होकर चलता है कि कभी उसके जी को जोर का आघात नहीं लगता, जो बरबस उसे रुला दे।

'गबन' में मार्मिक स्थल कम नहीं है, पर, प्रेमचन्द जी ऐसे विश्वास मैत्री और परिचय के साथ सब-कुछ बतलाते हुए पाठक को वहाँ तक ले जाते हैं कि उसे धक्का-सा कुछ भी नहीं लगता। वह सारे रास्ते-भर प्रसन्न होता हुआ चलता है, और अपने साथी ग्रंथकार की जानकारी पर, कुशलता पर, और उसके अपने प्रति विश्वास पर, जगह-जगह मुग्ध हो जाता है। पग-पग पर उसे पता चलता रहता है कि कहानी के स्वर्ग में उसका

हाथ पकड़ कर ले जाता हुआ उसका पथदर्शक बड़ा सहृदय और विलक्षण पुरुष है। पाठक बिलकुल उसका होकर रहने को तैयार होता है। वह बहुत सतर्क और उद्‌बुद्ध होकर नहीं चलता, क्योंकि, उसे भरोसा रहता है कि ग्रन्थकार उसे छोड़कर इधर-उधर भागा नहीं जायगा, उसको साथ लिये चलेगा। इसलिये, ग्रंथकार को भागकर छूने का अभ्यास करके उसके साथ रहने और, इस प्रकार अपरिचित रास्ते पर झटकों-धक्कों को खाते कभी उन पर हँसते और कभी रोते हुए चलने का मजा पाठक को नहीं मिलता; पर पाठक इस स्वाद को भी चाहता है।

मैं 'ग़बन' पढ़ते हुए कहीं भी रो नहीं पड़ा। रवीन्द्र की एकाध किताब पढ़ने में, बंकिम पढ़ने में, शरद पढ़ने में, कई बार बरबस आँखों में आँसू फूट आये हैं। फिर भी, प्रेमचन्द की कृतियों से जान पड़ता है कि मैं उनके निकट आ जाता हूँ, उन पर विश्वास करने लगता हूँ। शरद पढ़ते हुए कई बार गुस्से में मैंने उसकी कृतियों को पटक दिया है, और रोते-रोते उसे कोसने को जी किया है। 'कम्बख्त न जाने हमें कितना और तंग करेगा!' इस भाव से फिर उसकी पुस्तक उठा कर पढ़ना शुरू कर दी है। ऐसा मेरे साथ हुआ है। इसके प्रतिकूल, प्रेमचन्द की कृतियों से उनके प्रति अनजाने सम्मान और परिचय का भाव उत्पन्न होता है।

शरद और कई अन्य की रचनाएँ पढ़ते वक्त जान पड़ता है जैसे इनके लेखक हम से परिचय बनाना नहीं चाहते; हमारी, —अर्थात पाठक की इन्हें बिलकुल पर्वाह नहीं है; हमारे भावों की रक्षा करने की इन्हें बिलकुल चिन्ता नहीं है; जैसे हमारा जी दुखता है या नहीं दुखता, हम नाराज़ होते हैं या खुश, हमें अच्छा लगता है या बुरा, — इसके ख्याल करने का जरा भी दायित्व उन पर नहीं है; हमारे लिए उनके पास जरा दया नहीं है। ये लेखक निरपेक्ष और निश्चिन्त होकर हमें जी चाहे जितना रुला सकते हैं, परन्तु, प्रेमचन्द हमारे प्रति निरपेक्ष नहीं हो सकते।

शायद इसी निरपेक्षता की आवश्यकता को विचार कर अंगरेजी की उक्ति बन गई थी, Art for Art's sake (=कला कलाके लिए)। किन्तु, यह वचन मेरी समझ में सत्य को बहुत अधूरे ढंग में प्रकट करता है; या, कहें, सत्य को खोलकर प्रकट नहीं करता, उसे मानों बाँधकर बन्द करने की चेष्टा करता है। मुझे कहना हो तो कहूँ,—Art for God's sake (=कला परमात्मा के लिए)

रवीन्द्र आदि की कृति में किसी एक स्थल पर उँगली रखकर कहना कठिन है कि,—'कैसा अच्छा है!' शरद की खूबी समझ में नहीं आती कि किस खास जगह है। एक-एक वाक्य करके देखो तो कहीं कोई खास बात नहीं दिखाई देती। इधर प्रेमचन्द का कहीं से कोई वाक्य उठा लें;— मानों, स्वयं सम्पूर्ण है,—चुस्त, कसा हुआ, अर्थ पूर्ण।

पहले ढंग की किताब को जी अकुलायगा तभी हम उठाकर देखने लग जायँगे। चाहे कितनी ही बार पढ़ी हो हमें वह नवीन-सी लगेगी। प्रेमचन्द की किताब को एक बार पढ़ लेने पर उसे फिर-फिर पढ़ने की तबीयत कम शेष रहती है।

मैंने कहा है,—Art for God's sake अर्थात, परमात्मा के प्रति,—सत्य के प्रति कलाकार का दायित्व है। इसको कलाकार जब समझेगा तो पायगा कि उसका अपने प्रति दायित्व है, इसलिए, वह पाठक-समाज की धारणाओं की ओर से निरपेक्ष और निश्चिन्त होकर अपने प्रति सच्चा रह कर अपने को प्रकट कर सकता है। एक व्यक्ति, समाज या पुस्तक के पात्र की भावनाओं की रक्षा के प्रति अत्यन्त आतुर हो उठने का कलाकार को अधिकार नहीं है।

इस सम्बन्ध में उसे अत्यन्त निरंकुश होकर चलना पड़ता है। जिस प्रकार परमात्मा अपने विश्व का संचालन (हमारी-तुम्हारी परिमित समझ के अनुसार) अत्यन्त निरंकुश होकर करते हैं; विश्व को जरा व्याधि, रोग-शोक और जन्म-मृत्यु से भरा बनाये रखते हैं; किसी खास व्यक्ति या समूह की कोई विशेष चिन्ता करते नहीं मालूम होते;—इतना होने पर भी वे परम दयालु हैं। उनकी दयालुता किसी विशेष वस्तु या प्राणी के अच्छा लगने न लगने पर निर्भर होकर नहीं रहती। वह इतनी कर्मगत, इतनी व्याप्त और इतनी वृहद् है कि उसका कार्य-परिणमन हम छोटी बुद्धि वालों को निरंकुश जँचता है। उसी सबके पिता सिरजनहार के अनुरूप सर्जन का अधिकार रखने वाले कलाकार को रहना पड़ता है। वह रचना में अत्यन्त निरंकुश होगा, किसी के प्रति उसमें विशेष ममता-भाव है, ऐसा वह नहीं दिखला सकेगा। विद्वान् पर मौत आयेगी तो उसे दिखला देगा, शठ समृद्धिवान् बनता होगा तो उसे बनने देगा। फिर भी, सहानुभूति और प्रेम से उसका हृदय भरा होना ही चाहिए। वह सहानुभूति या स्नेह इतना उथला न हो कि छलकता फिरे।

संसार में प्रकट में दीखने वाली निरंकुशता के मार्ग से एक वृहद् सत्य की लीला सम्पन्न हो रही है। हम नहीं जानते, इसलिए रोते-झींकते हैं। हम जिन छोटी-मोटी बातों को सिद्धान्त बनाकर काम चलाते हैं, उनकी ज्यों की त्यों रक्षा जब हमें होती नहीं दीखती तब हम दुखी होते और अस्थिर होते हैं। इस तरह, अपने अहं-ज्ञान को बीचमें डालकर, हम जिस परमात्मा का विश्वास हमारे लिए सहज होना चाहिए था, उसी को अपने लिए दुष्प्राप्य और दुर्बोध बना लेते हैं। सबमें निवास करती हुई उसकी दयालुता हम नहीं देख पाते, इसलिए कहते हैं, 'वह है नहीं; है तो दयालु नहीं हैं, मनमाना (=Capricious) है।' हमारा तर्क यह होता है—'हम भले मानस हैं, फिर भी गरीब हैं; इसलिए, ईश्वर नहीं है; है, तो ठीक नहीं है।' इसी तरह, कलाकार की वृत्ति में किसी अन्तरतर सत्यको पाने और सम्पन्न करनेकी चेष्टा होती है,—दुनिया की बनाई धारणाओं की रक्षा करने की चिन्ता उसे नहीं होती। सदाचार के और अन्य भाँति के अपने नियम कानून बनाकर जीती रहनेवाली दुनिया अपनी सब धारणाओं का समर्थन वहाँ पाये ही, ऐसा नहीं होने पाता। ऊपर के तर्क से चलनेवाली दुनियाकी तुष्टिके लिए और उसके अहं-समर्थनके लिए कलाकार नहीं लिखता। इसीसे कहा गया है कि Art for Art's sake,—कला कला के लिए, जिसका कि सम्पूर्ण शुद्ध रूप है Art for God's sake, और जिसका कि अर्थ है कि कला अहंवादी, बुद्धिवादी दुनियाको खुश रखनेकी खातिर नहीं होती; वह God अर्थात् सत्य की प्रतिष्ठा के लिए होती है।

प्रेमचन्दजी में उक्त प्रकार की निरपेक्षता पूरे तौर पर नहीं आई है। वे पाठक की बराबर परवाह करते हुए चलते हैं, और अपनी किसी बात से सहसा दुनिया को धक्का नहीं देना चाहते। उन्होंने कोशिश करके जिसे सुन्दर और शिवरूप समझा है, लोगों की वर्त्तमान स्थिति को किसी विशेष गड़बड़में न डालने की चिन्ता रखते हुए वह उसी को लिखते हैं। उनके पात्र अशरीरी नहीं होते, सूक्ष्म-शरीर भी नहीं होते; वे अतर्क्य नहीं हो पाते। वे जो कुछ भी होते हैं, Common-sense (=सामान्य साधारण-बुद्धि) के मार्ग से ही होते हैं। असाधारणता उनमें यदि प्रेमचन्द कहीं कुछ रखते भी हैं तो मानों साधारणता के मार्ग से ही उसे प्राप्त और प्राप्य बना लेते हैं। पाठक के दिल में प्रेमचन्दजी के पात्रों से एक प्रकार का संतोष होता है, कोई गहरी बेचैनी नहीं जाग उठती, कोई गहरा खिंचाव जो मित्रता से आगे हो, एक गम्भीर तृप्ति जो संतोष से गहरी हो, नहीं होती। प्रेमचन्दजी पाठक का मन

रख लेते हैं; अपना ही मन पाठक के सामने रखदें, यह नहीं करते।

मैं फिर भी प्रेमचन्दजी को, हिन्दी का नहीं, संसार का लेखक मानता हूँ। बहुत जल्दी संसार भी यह मान लेगा। — क्यों?

सामयिकता को लाँघकर, मानों सामयिकता का आधार पकड़ गहरी उतर कर, जो कृति जितनी ही सत्य के अनुरूप होकर चलती है, वह उतने ही अंश में सर्वकालीन और सर्वदेशीय होती है;— उतने ही अंश में वह काल को चुनौती देती हुई चिरजीवी और देश और भाषा परिधियों को फाँदती हुई विश्वव्यापी हो जाती है।

सत् है एक, अर्थात सत्य है ऐक्य। संपूर्ण सत्ता को सचेतन एकमय देखो, वही है परमात्मा। इस सनातन ऐक्य को पाने की चेष्टा का नाम है, 'प्रेम'। पर वह प्रेम सहज सम्पन्न नहीं होता। यह जो चारों ओर लुभाती हुई, भरमाती हुई, भिन्नता फैली है,—उस सब लोभ और भ्रम और माया के समुद्र में, आँख-कान मूँद कर गहरी डुबकी लगाकर पैठने से वह प्रेम कुछ कुछ दिखाई पड़ सकता है। इसके लिए गहरी साधना की आवश्यकता है। तो भी इस ऐक्य को पाने की भूख भी प्राणी में कम गहरी नहीं है। पर, बहुत-कुछ उसकी तृप्ति में आड़े आता है और वह भूख बहुत तरफ से परिमित, संकुचित भूखी रहती है। और तो क्या, यह शरीर ही रुकावट बनकर सामने आता है। यह हमको सबसे एकाकार तो होने दे सकता ही नहीं, फिर भी, इसकी सहायता से भी हम आगे बढ़ते हैं। स्त्री, माँ, भाई, बहिन, पिता आदि नातोंद्वारा, जो इस शरीर के कारण बन जाते हैं, हम अपने प्रेम का विस्तार फैलाते हैं। वह प्रेम नाना स्थानों पर नाना रूप में प्रकट होता है। वह प्रेम तत्काल को पार कर जितना चिर-स्थायी और शरीर के प्रतिबंध को लाँघ कर जितना अखिल-व्यापी और सूक्ष्मजीवी होता है,—और इस तरह, तात्क्षणिक स्थूल तृप्ति में न जीकर वह जितना उत्सर्गजीवी होता है, उतना ही वह सत्य के अनुरूप, अर्थात् शुद्ध, वास्तविक और आनंद-मय होता है। लेकिन, काल और प्रदेश की रेखाओं से घिर कर ही तो जीव की जीवन-यात्रा चलती है, इसलिए, उसका प्रेम पूर्ण निर्विकार सत्यानुरूपी नहीं हो पाता। इस तरह, व्यक्ति के जीवन में सदा ही द्वन्द्व चलता है।

इस दृष्टि से देखा जाय तो कलुषित कुत्सित प्रेम कुछ नहीं होता। विस्तृत ऐक्य के जिस तल तक मनुष्य उठ आया है उस तल से नीचे की चेष्टाएँ जब किसी में देखता है, तो उसे कुत्सित आदि कहने लगता है।

तो नाना रूपिणी माया जब व्यक्ति को अन्य सबके प्रति एक प्रकार के विरोध से उकसा कर उसे अहं-भाव में दृढ़ रखने का आयोजन करती है, तब उसके भीतर का गुप्त सच्चिदानंद इस आयोजन को तोड़-फोड़ कर स्वयं प्रतिष्ठित रहने को सतत उत्सुक रहता है। यह द्वंद्वावस्था ही जीवन की चेष्टा का और उपन्यास का मूल है। यही साहित्य-क्षेत्र है।

प्रेमचन्दजी इस द्वंद्वावस्था को अच्छी सूक्ष्म दृष्टि और सहानुभूति के साथ चित्रित करते हैं और इस द्वन्द्व में वह जिस निर्मल प्रेमभाव की प्रतिष्ठा करते हैं वह देहातीत होता है, —वह बीतते हुए क्षण के साथ मिटता नहीं। वह सेवामय प्रेम दुनियादारी की ग़लतफ़हमियों की, अज्ञानता की, विफलता की, हीनता की कितनी ही कठिनाइयों के साथ लड़ता-झगड़ता हुआ भी अक्षुण्ण और उत्सर्ग-तत्पर रहता और रह सकता है, — इसका चित्र प्रेमचन्दजी सजीव करके उठा लेते हैं। वही सजीव प्रेम, अर्थात् सत्य, जो स्वयं टिकाऊ है, उनकी कृति को भी चलते समय के साथ मरने नहीं देगा। मैं कहता हूँ कि

प्रेमचन्दजी ने अपनी कृति में जो चिरस्थायी और कर्मशील प्रेम का बीज रख दिया है, वह सामयिक नहीं है, उसमें स्थायित्व है।

सामयिकता से प्राण खींच कर कइयों ने रचनायें की हैं जो रंगीन होकर सामने आ गई हैं, पर अगर आज वह हाथों-हाथ बिकती हैं तो, हमने देखा है, कल वह मर भी जाती है। जो रचना शाश्वत सत्य के श्वास से जितनी अनुप्रणित होगी, वह उतनी ही शाश्वत और अमर होगी। माया में से रस खींचकर, देश और काल के प्रतिक्षण और प्रति-पग बदलते जाते हुए आदर्शों और भावों को आधार बनाकर, सामयिकता की लहर पर नाचती हुई जो कृति हमें लुभाने आती है, वह आज हमें लुभा ले सही, पर कल हमें ही उसकी याद भूल जायगी, इसका हम विश्वास रखें।

प्रेमचन्दजी की कृति सामयिकता को परिधि को लाँघ कर और हिन्दीभाषा की परिधि को लाँघ कर किसी न किसी हद तक विश्व और भविष्य की ओर बढ़ेगी। निस्संदेह, उसमें ऐसा बीज है।

"उठो भारत के बालक वीर"

[श्री विमला बाई अवस्थी]

भारत जननी दुखी तुम्हारी बहे नयन सों नीर,
राह तुम्हारी मात देखती होकर विकल अधीर ॥ उठो ॥
कर्म क्षेत्र में जुटो कमर कस, हरो सकल मिल पीर,
थके वृद्धगण सम्हलो सुत सब, पड़ी देश पर भीर ॥ २॥
दीन दशा तन क्षीण हुए सब रहा न तन में चीर,
ऐसी दशा देखकर भी सुत हा! हुए मौन गम्भीर ॥ ३ ॥
कर की घड़ी छड़ी अब छोड़ो, गहो धनुष औ' तीर,
"विमल" वीर माता कहलावे, जभी मिटे उर पीर ॥ ४ ॥

फूलका अंजाम

[श्री उपेन्द्रनाथ अश्क]

वह सिनेमा पर लट्टू थी।

हर दूसरे तीसरे सिनेमा देखने जाना उसके नित्य-क्रम का एक भाग हो चुका था। देशी चित्रपटों से उसे खास लगाव था और उनकी त्रुटियों के बावजूद वह उन्हें ही देखना पसन्द करती थी। कई फ़िल्में तो उसने कितनी ही बार देखी थीं।

कालेज से डिग्री लेकर एक अच्छी एक्ट्रेस बनने की आकांक्षा उसके दिल में मौजूद थी।

वह शिक्षित थी, सुन्दर थी, अंगूर की बेल की भांति कोमल, कमल के फूल की तरह विकसित।

(२)

आज उसे अपने सामने बैठा देखकर वह अपने आपको भूल गई।

वह पंजाब युनिवर्सिटी का ग्रेजुएट था और प्रसिद्ध फिल्म कम्पनी का प्रधान एक्टर। उसके मुख पर मुस्कराहट खेल रही थी, और वह चित्र-लिखित-सी उसे देख रही थी।

अभिनेता इतने रूपवान नहीं होते जितने वे रुपहली परदे पर दिखाई देते हैं—यह बात उसे असत्य प्रतीत हुई। वह कितना सुन्दर था, कितना बलिष्ठ, कितना प्रसन्न-मुख !

फिल्म में भी वही पार्ट कर रहा था। वह कभी परदे पर निगाह डालती कभी उसके सुन्दर चेहरे पर। आज तक वह कल्पना में ही उसे देखा करती थी—जब उसकी कोई फिल्म देख कर घर जाती तो कल्पना में उसके चित्र बनाया करती। आज वह प्रत्यक्ष उसके सामने बैठा था। उसी की फिल्म लगी हुई थी। वह उसमें अपना पार्ट, अपना अभिनय देखता था। और अपने मित्रों के किसी मज़ाक पर मुस्करा पड़ता था। और वह कितनी प्रसन्न थी, कितनी उल्लसित ?—परदे से हटकर उसकी दृष्टि उसपर जम चुकी थी।

फिल्म समाप्त हो गई—उसके दिल को धक्का लगा।

वह अनिच्छापूर्वक घर की ओर चली—परीक्षा में फेल होने वाले विद्यार्थी की तरह, घर से रुपये उठाकर भागे हुये लड़के की भांति !

(३)

दूसरे दिन वही फिल्म चल रहा था फिर भी उसे देखने चली गई। वह वहाँ मौजूद न था। वह उसकी प्रतीक्षा करती रही; पर वह कहीं दिखाई न दिया। परदे पर आया 'गुड नाइट'—और वह निराश, उद्विग्न उठ खड़ी हुई।

घर आकर उसने उसे पत्र लिखा और उसमें अपना हृदय खोलकर रख दिया—मैं तुम्हें दिल से प्यार करती हूँ......मैं तुम्हारे लिये संसार भर को तिलांजली दे सकती हूँ।

...सुन्दर हूँ, सुशिक्षित हूँ...और चन्द ऐसे ही तोल में कमज़ोर पर प्रेम भरे वाक्य!

उसने पत्र को बन्द किया और स्वयँ जाकर लेटरबक्स में डाल आई। सारे दिन उसके हृदय में उथल-पथल मची रही।

[४]

उसकी अभिलाषा पूरी हो चुकी थी। वे दोनों वाटिका की रविशों पर टहल रहे थे। उसने एक फूल तोड़ा और एक अच्छे एक्टर की भाँति उसकी ओर ले गया।

उसने उसे सूंघा और फिर उसकी सुगन्धि से अपनी प्यास बुझा कर बेखुदी में मसल डाला और धरती पर फेंक दिया।

नाज़ुक फूल उसके पाँवों तले आकर रौन्दा गया उसने इस ओर कोई ध्यान नहीं दिया और अपने प्रेमी के हाथ में हाथ दिए द्वार की ओर चल दी।

[५]

वह एक सफल अभिनेत्री थी।

लोग उसके नाम को सुन कर बेताब हो जाते थे। उसका अभिनय देखने के लिए टूटे पड़ते थे उसके चित्रों से अपने ड्रायंगरूम की शोभा बढ़ाते थे।

उसकी मेज़ पर पत्रों का—प्रेम से सने हुए पत्रों का—अंबर लगा रहता।

उसके चित्र देशभर की पत्र-पत्रिकाओं में निकलते। उसकी आकाँक्षाओं का यह हिस्सा भी पूरा हो चुका था; किन्तु बड़ी क़ीमत देने के बाद—उसके पहलू में वह दिल नहीं था—कामनाओं की दुनिया उजड़ चुकी थी, आशाओं का सोता सूख गया था।

अपना उल्लास खोकर वह अब दूसरों के लिए प्रसन्नता जुटाने का रोज़गार करती थी। उसके अन्तस्तल में किसी घटना की कसक मौजूद थी।

[६]

वह श्रृंगार के कमरे में बैठी अपने आप में खोई जा चुकी थी।

सामने अंगीठी पर, बड़े कद-आदम दर्पण के दोनों ओर दो फूलों के गुलदस्ते रक्खे हुए थे। बेखुदी में उसने एक फूल तोड़ा और अन्य-मनस्कता से उसे अपनी अगुलियों में मसलने लगी।

सहसा उसे वाटिका की याद हो आई और उसके दिल से एक लम्बी सांस निकल गई।

—क्या उस का भी फूल का सा अंजाम न हुआ था?

"मिस साहिबा तैयार हो गई?"

डायरेक्टर की कर्कश आवाज़ ने उसे चौंका दिया। उसके विचारों का सिलसिला टूट गया। कल्पना की फिल्म बीच में ही कट गई। ग़ुलाम वह, लाचार वह, पराजित वह !!!

उसने एक दीर्घ निश्वास छोड़ा और अपने बालों को सँवारने—अपने भाग्य को अधिकाधिक उलझाने और सुलझाने में लग गई।

माँझी

[श्री 'बच्चन']

धूलि-मय नभ, क्या इसीमे
बांध दूँ मैं नाव तट पर ?

(१)

देखते ही देखते अति
वेग से कर शब्द 'सन-सन'
टूट पृथ्वी पर पड़ेगा
पश्चिमी नभ से प्रभंजन,

भीत हो सारी दिशाएँ
घन तिमिर में जा छिपेंगी,
जायगा भर घोर हाहा—
कार से वन और उपवन,

हो विकल-विह्वल तरंगे
उठ गिरेंगी, गिर उठेंगी,
जल-थपेड़े खा उठेगी
कांप मेरी नाव थर-थर

धूलिमय नभ क्या इसीसे
बाध दूँ मैं नाव तटपर ?

(२)

प्रात की स्वर्णिम विभा में
और दिन की रोशनी में,
सांध्य नभ की लालिमा में
श्वेत शीतल चांदनी में

वायु के अनुकूल अपना
पाल फैलाता, गिराता
मैं चुका हूँ घूम गाता
स्वच्छ जल कल्लोलिनी में;

आज मैं तम-तोम आता
देख कर पीछे रहूं यदि,
काम किस दिन आ सकेगा
जो रही जग ज्वाल अन्दर ?

धूलि-मय नभ, क्या इसी से
बान्ध दूं मैं नाव तट पर ?

(३)

ठीक, लहरों से प्रताड़ित
हो करेगी नाव 'मर-मर'
फेन फैलाता तटों पर
कर उठेगा नीर "धर–धर"

व्योम के सुनसान घर में
शब्द 'सन-सन' भर उठेगा,
कर चलेगी तीर पर
फैली हुई बन-राजि 'हर-हर'

किन्तु इतने से भला वह
किस तरह हो मौन बैठे,
विश्व का चीत्कार गाने
जो चला है राग में भर!

धूलि-मय नभ क्या इसी से
बांध दूं मैं नाव तट पर?

(४)

जायगा उड़ पाल होकर
तार-तार विशद गगन में;
टूटकर मस्तूल सिर पर
आ गिरेगा एक क्षण में,

नाव से होकर अलग
पतवार धारा में बहेगी,
डांड छूटेगा करों से,
पर बचा यदि प्राण तन में,

तैर कर ही क्या न अपने
ध्येय को मैं जा सकूंगा,
मथ चुके हैं कर न जाने
बार कितनी विश्व–सागर

धूलि-मय नभ क्या इसी से
बांध दूं मैं नाव तट पर?

(५)

आज है अस्थिर गगन
अस्थिर सलिल-तल हो रहा है,
किन्तु अस्थिर हो न मांझी
धैर्य अपना खो रहा है,
झेलने को इस बड़े
तूफ़ान के झोंके–झकोरे
मानवी सम्पूर्ण साहस
वक्ष बीच संजो रहा है
अवनि अम्बर की तराजू
सामने रख दी गई है,
क्यों न तोलूं आज अपनी
शक्ति इस पर गर्व से भर?
धूलि-मय नभ क्या इसी से
बांध दूं मैं नाव तट पर?

तीजो

[श्री हरदयाल]

गनपति सुबह सवेरे उठा और पत्नी से बोला– फिर जाता हूँ, दो-एक जगह और उम्मेद है, शायद रुपये मिल जायं और पायल तुम्हारी छुट जायं।

'फिर पायल !...... कुछ काम नहीं ?' खिन्न होकर वह बोली।

'काम तो रोज ही रहता है, पर तीजो—'

'तीजो ! तीजो कहती है कि पागल बन जाओ ! आज दस दिन घूमते हो गये और फिर भी समझ नहीं आई। पूछती हूँ— चीज वापिस आती तो जाती ही क्यों ? एक दस रुपयों के लिए तब भी तो अठवारों टक्कर मारते फिरे थे और आखिर वह नहीं रुकी। वही वहम फिर अब सवार......। यही क्यों ? मैंने तो उसी वक्त कहा था—यह चीज मुझ पर नहीं रहेगी, फ़जूल तन-पेट काट कर जो ये रुपये बचे हैं, उन्हें खोते हो। लेकिन न मानी। और वही हुआ,— जहाँ से आई थी वहीं फिर पहुँच गई। सिर्फ इतना दंड भरना था—' वह कहती जा रही थी और गनपति गरदन नीची किए खड़ा था।

'खैर गई तो गई, पर उसके पीछे अपने को क्यों खाते हो। कल सुबह के गये आधी रात लौटे और अब फिर जाते हो। 'मुझे भय होता है कि तुम कहीं......मुँह देखो न ? पायल ही तो शायद चाहिए ? मैं कहती हूँ—मर-खप कर आज एक चीज पैरो पड़ ही गई, तो कौन शान बढ़ जायगी, या नहीं मिली, तो भी क्या—रहने दो, पाँव पड़ती हूँ' तीजो का यह चाव जहाँ अच्छा लगता है, लगता है, यहाँ नहीं!' उसका गला भर आया।

'लेकिन तीजो......मनानी तो है ही—सभी मनाते हैं।'

'तो मैं कब मना करती हूँ ? मनाओ। यह सब स्वांग बिन पायल भी हो सकता है ? पर हाँ, उनके बिना वह पूरा कैसे होगा ?' कहते कहते उसकी खिन्नता हँसी के एक टहके में फूट निकली और वह बोली—'जाओ न, जाओ तीजो की उमंग को रोकना अच्छा नहीं, वर्ना वह नाराज हो जायगी।'

वह हँस रही थी और गनपति पागल सा-खड़ा देख रहा था। पर इस दिन पत्नी को पायल-पहने देखने की जो उत्कण्ठा वह इतने दिनों से पोषित करता आया था, कैसे एक-दम ख़त्म कर दे। वह सोच ही रहा था कि दृढ़-प्रतिज्ञ हुआ, किन्तु कुछ डरता-सा, आख़िर बोला—अब तो और भी देखूं। तुम जानती नहीं—किसी आभूषण का न होना आज कितना अशुभ लगता है।...अच्छा आता हूँ। यह कह कर वह बाहर की ओर घूम गया और चला गया।

वहीं किवाड़ के सहारे ढुलक कर वह भी 'मरना तो शुभ है !' यह कहते हुए बैठ गई।

× × × ×

वह घूम रहा था—आशा लगाये। यहाँ नहीं, अच्छा वहाँ, तो वहाँ, वहाँ तो और भी—घूमना

ही रहा। इससे मिल, उससे मिल, फिर मिल–फिर भी आशा बनी ही थी।

घूमते-घूमते कितने ही ऐसे तारे, दूर-बहुत दूर से, उसके आशा–क्षितिज पर प्रकट हुए और अस्त हो गये। कुछ भी जानकारी जिनसे थी, वे भी कुछ क्षण के लिये मित्र बने और लुप्त हो गये।

आखिर सभी से वह मिल लिया और फिर कोई दिमाग़ में न चढ़ा। पैर तब जबाब देते जान पड़े और आँखों के आगे अंधेरा घिरने लगा। चुनाचे चलते-चलते अनायास ही उसके पैर एक पार्क की ओर घूम गये और वह धम से एक बेंच पर आ रक्खा जैसे गया।

बैठा हुआ था किंतु समूचा अपने ही भीतर समाया हुआ, बाह्य-जगत की पहुँच के मानों नितांत बाहर। भीतर ही भीतर वह किसी को समझा रहा था, और किसी को धिक्कार रहा था, किसी को सुला रहा था, और किसी को जगा रहा था,—बहुत व्यस्त मालूम होता था किंतु धीरे-धीरे उसके चेहरे का काठि और कसाव ढीला हुआ और वह किसी सांत्वना की गोदी में सोया-सा जाने लगा।

पर आकस्मात् उसका मुँह ऊपर की ओर उठ गया—देखा एक बदली है जिसकी फुहार उसके मुंह को गीला कर रही है। एक बार सारे ही आकाश पर उसकी दृष्टि फिर गई और वह अपने से निकल कर जैसे बाहर आ गया। काले, पीले, सफ़ेद बादल ही बादल सारे में घूमते दिखाई दिये। फिर तो धीरे-धीरे बहती हुई ठंडी पुर्वा भी कानों में सरसराती महसूस हुई और उसी क्षण सामने सड़क के उस पार, मस्ती से झूमते हुये पेड़-पौधे भी उसकी आँखों में आगये—और उसी ओर से उसके कानों में पड़ी एक रसीली तान—

बोलें हैं मोर री ! बरखा में।
कौन झुलावै झूलना बरखा में ॥

वह दत्त-चित्त हुआ उस ओर देखने लगा। हरी, पीली, नीली, लाल—झिलमिल-झिलमिल साड़ियों और चम-चम होते आभूषणों से विभूषित युवतियों का एक मनोहर पुष्पोद्यान-सा विकसित हो रहा था। तीजो ! वह बोला और फिर अपने ही में जैसे वापिस होगया लेकिन 'तीजो !' फिर उसके मन ने कहा और उस शर्राफ़ का घर उसकी आँखों के सामने आ गया।

'तीजो, तीजो'—तीजो से उसकी चेतना ही ओत-प्रोत हो गई और वह सिमट कर उस एक कोने में—जहाँ पायल रक्खी थी—फँसी-फँसी सी फण पटकने लगी। थक-थक कर उसे बीच-बीच में ध्यान हो उठता था घर का, किंतु घर जैसे व्यंग कर पूछता था—आ गये ? वह खिंचा-खिंचा, मिंचा-मिंचा-सा जा रहा था।

आखिर फिर उसकी सहायता मेघ की एक मल्हार ने की और किसी के पंजे से छुटकर मानों उसे फिर बाहर की ओर देखने का मौक़ा मिला। लेकिन देखते-देखते वहीं तो वह फिर पहुंच गया जहाँ से लौटा था—उस तीजो में।

अरसे तक उसके हृदय का यह उलट फेर होता रहा। किंतु एक क्षण जैसे ही उसे घर का ध्यान आया; कोई कहते सुन पड़ा—फिर पागल ! कुछ काम नहीं न ? तीजो ! तीजो कहती है कि पागल बन जाओ।

पागल हूँ, पागल, सचमुच पागल हूं—मन ही मन स्वीकार कर वह अपने को जैसे कोसने लगा।

पागलपन है, निरा पागलपन—इस प्रकार बेकार समय बरबाद करना—वह सोचने लगा और सोचते-सोचते 'आग लगे तीजो में' यह कह कर बेंच से उठ खड़ा हुआ।

उठा और सड़क पर आ गया—जो उसके घर को जाती थी।

वह जा रहा था—दुनियाँ से सर्वथा विरक्त सा हुआ। विरक्ति ही नहीं, उसके चित्त में ग्लानि

भरी थी— उन सबके प्रति जिन्हें देखकर अभी वह विकल हो उठा था। इधर उधर देखते भी उसका मन घृणा से सिहर-सिहर उठता था।

वह जा रहा था —अपने भीतर चारों ओर से तालें ठोंक कर और उन पर अपनी आत्मा का प्रहरी बिठला कर।

किन्तु जाते-जाते, उसे किसी ने मानो यकायक रोक दिया। 'मीठा !' एक दम उसके कान कह उठे। 'कौन ?' किसी ने उसके भीतर से पूछा और आंख एक दम कुछ देखने को प्रवृत्त हो गई। भीतर से ध्वनि आई 'सुन्दर !' और वह समूचे का समूचा उस ओर आकृष्ट हो गया।

वह सुन रहा था, देख रहा था। और सुनते देखते-देखते भीतर से मानो उसकी निराशा ने दबे-दबे कहा—'तीजो है ! उंह !' और फिर उसका मन घर में पत्नी और पत्नी की पायलों में पहुंच गया। वह फिर कह उठा—बेकार। चलो ! और चलने को उद्यत हुआ।

किंतु पैरों में गति होकर रह गई। कानों में किसी ने कहा—मैं, मैं अमृत हूँ, मुझे पी लो। आंखों से कोई बोला—मैं, मैं जीवन हूं, मुझे ले लो। उसका दामन पकड़ कर कोई पूछ रहा था— हम, हम से क्यों रूठते हो ? हमने तुम्हें क्या कष्ट दिया है ? वह हिल न सका।

वह खड़ा था, सुन रहा था, और सब कुछ देख रहा था। पर मन ही मन कह रहा था—क्या यह सब बेकार है ? घृणा योग्य है ? बिल्कुल झूठ ? किंतु फिर भी इस हृदय को ये मीठे क्यों लगते हैं ? तो क्या जो कुछ मीठा है, वह कड़ुवा है ? मीठा लगना ही कड़ुवापन है, तो क्या मीठा लगना नाम ही निरर्थक नहीं है ? ये तो मुझे कुछ देते ही हैं, माँगते तो नहीं ? फिर भी इन्हें देखकर न जाने क्यों मुझे घृणा हुई। इन्हीं को देखकर शायद मुझे कष्ट हुआ था, इसलिए ? पर इनमें तो कष्ट देने की क्षमता ही नहीं। मैं इन से कैसे मुँह मोड़ लूँ, कैसे नाक सिकोड़ लूं। तो फिर कुछ मेरा ही क़सूर होगा। होगा, मेरा ही होगा। और किसका हो सकता है ? लेकिन मेरा क्या क़सूर ? .... क्यों नहीं ? है तो। मैं इन्हें क्यों देखता हूं, जब कि इन्हें देखना मुझे वर्जित है ? मैं क्यों इनके संसर्ग का अभिलाषा करता हूँ, जब कि मुझे अधिकार नहीं है ? अच्छा, ओ मधुर ! तुम और मधुर बनो, खूब मधुर ! और सुन्दर ! तुम खूब सुन्दर ! तुम्हें मेरा आशीर्वाद है ! लेकिन मेरे साथ एक भलाई करो, करोगे ? मेरे सामने मत आओ !...... पर, यह, यह मैं क्या कह गया ? अरे, ये तो स्वयं ही वर्जित हैं। नहीं, नहीं, मैं ही तुम्हारे सामने क्यों आऊँ ? अच्छा ....अच्छा।'

वह फिर घर की ओर प्रवृत्त हुआ।

वह जा रहा था। उसका सब ध्यान बस अब एक ओर था — उस ओर जहाँ वह किसी को इन्तजार करने के लिये छोड़ आया था। उसके संतोष, धैर्य, और शाँत स्वभाव पर ज्यों-ज्यों वह विचार करता था, त्यों-त्यों उसकी गति तीव्र होती जा रही थी। कहीं-कहीं इधर-उधर से जब कोई भी किसी प्रकार उसे तीजो का स्मरण कराता था, बस एक आशीर्वाद की भावना से उस ओर देखकर, अपने हृदय पर हाथ रख लेता था और कहता था— रहो, रहो !

इसी मार्ग पर वह उस गली के सामने से गुजरा, जिसमें कुछ ही दूर पर शर्राफ का घर दीखता था। उसकी स्मृति जग उठी, वही तो वह दुकान है। कह आया था— तीजो से पहले ले जाऊँगा। रक्खी होंगी—यहीं इसी दुकान में तो। दूकान तो बन्द होगी। आज तीजो है। सेठ जी बच्चों को घुमाने ले गये होंगे। वे रक्खी होंगी दूकान में। तो ? ओह ! मैं क्या सोचने लगा। रक्खी हैं, रक्खी रहने दो। उनका क़सूर ? और न रखने वाले उन्हीं का क़सूर ? रखते नहीं तो क्या फेंक देते ? रखना तो नियम ही है। सभी अपनी-अपनी चीज रखते हैं। और जितना ही

जो कोई रक्खे, रक्खेगा ही, रख सकता है तभी तो रक्खेगा। लेकिन फिर भी वे किसी पर कुछ छोड़ दें, तो यह उनकी दया है, उनका परोपकार है। शेर जब तक किसी को नहीं खाता है, उसकी कृपा है, सभी को एक साथ नहीं चीर फाड़ता, यह उसका संतोष है, और निकाल सकने की शक्ति रखते हुए भी किसी को अपने जंगल में रहने देता है, यह उसकी उदारता है। ये ही सब गुण हैं। और इनके लिए निर्बल का होना जरूरी है। जरूरी है, नहीं तो गुणों का विकास कैसे होगा ? तब तो मेरा भी जीवन सार्थक ही है। ओह ! मैं दीन हूँ, तो क्या ? इसमें मेरी सार्थकता है। जितना भी मैं दीन हूं अपने को धन्य समझूँ। क्यों न समझूँ ?–मानो मैं सड़ ही रहा हूँ, पर क्या एक स्वस्थ हृदय में मुझे देखते ही, दया का स्रोत न उमड़ पड़ेगा ? यही क्यों ? उस दया की झलक मात्र ही से मैं गद्गद् हो उठूँगा। श्रद्धा और भक्ति पुकार उठेगी—तुम देवता हो ! क्या यह सार्थकता नहीं है ? मुझे दीखता है, साफ दीखता है—दैन्य ही से तो सब गुणों का विकास हुआ। नहीं तो कौन जानता दया, परोपकार, उदारता या अहिंसा को ? और कहां देखने को मिलते सज्जन। यही क्यों...... मुझे तो कुछ और भी दीखता है। सज्जन से साधु, साधु से संत, संत से महात्मा, महात्मा से देवता, और देवता से ?...... हां, ठीक तो है ...... ईश्वर, ईश्वर से परमेश्वर—यह सब उसी का तो विकास है। उसी का, उस दीन ही का तो। ओह ! उस की यह महिमा ! महिमा ? उस की ? तो क्या वह दीन नहीं ? यह मैं कैसे मान लूँ। वह रोता है, रोता ही है, दूसरा तो नहीं। मैं दुख जानता हूँ; पर उसे सुख कैसे मान लूँ। और यदि मान भी लूँ, तो फिर मैं दीन कैसा ? और वह सार्थकता–महिमा-कहां ? नहीं, नहीं वह दीन तो है ही और सार्थक भी है ही, महिमा उस की हो न हो, क्यों कि उसी ने सब का विकास कराया है। लेकिन ......इस गुण-विकास की सार्थकता ? वह दैन्य को हरने में है। हरने में नहीं, तो वे गुण गुण ही न रहेंगे। हां, हरते ही हैं। तो इस तरह तो दीन कभी चुक सकते हैं ? और दया, परोपकार, उदारता, श्रद्धा; भक्ति—ये सब फिर कहां रहेंगे ? संत, देवता, ईश्वर, परमेश्वर कहां किस मन में ठहरेंगे ? इन के बिना जीवन फीका न लगने लगेगा ? नहीं, कुछ न कुछ दीन रहने ही चाहिए, दया और भक्ति का स्रोत बहना चाहिए ही। फिर कुछ ही क्यों ? अधिक से अधिक दया और भक्ति के लिए अधिक से अधिक ही दीन न हों ? हों...... दीन हों ..... अधिक से अधिक और वे......सच मुच दीन हों ? ऐं ... यह मैं कैसे कह दूँ ? तो क्या हो ? क्या न हो ? ऐं ! मैं जानता हूँ—दीन कैसा होता है ? ओह ! वह ? न हो, न हो और सभी दीन यह चाहते हैं। लेकिन उन के चाहने से क्या होता है ? होता, तो ये दीन क्यों होते ? नहीं उन्हें रहना पड़ेगा और ईश्वर ? ..... ईश्वर ! तू ईश्वर रहेगा, परमेश्वर रहेगा ! देवता, महात्मा, संत और साधु—यह सब तेरा समाज रहेगा ! और दया,श्रद्धा... सब कुछ रहेगा ! और दीन भी रहेगा ? हे ईश्वर ! इस रहने से......क्या......क्या......अरे ! मैं यह क्यों पूछने लगा। मैं भी तो दीन ही हूँ। पूछने का मुझे अधिकार ? हो भी तो सुनेगा कौन ! और सुनता तो मैं दीन ही क्यों होता......मैं क्या क्या सोच गया ? सब बेकार !बेकार !

रास्ते भर इसी प्रकार उसके मस्तिष्क में बादल के बादल जैसे विचार उठते और लुप्त होते रहे। वह चला जा रहा था—सुलझाने की कोशिश में और अधिक उलझता हुआ। किंतु उसके पैर स्वयं ही उस चिरपरिचित स्थान की ओर अग्रसर रहे और उसे उस दरवाजे पर ला खड़ा किया जहाँ से यात्रा प्रारंभ की थी।

गनपति दरवाजे पर पहुंचते ही सहम सा गया और ठिठक कर एक ओर खड़ा हो गया। किंतु

उसका प्रयास व्यर्थ ही हुआ क्योंकि मकान मालिक की लड़की—सजी-बजी साक्षात् तीजो जैसी—उसे देखते ही उधर लपकी और बोली—भैया ! भाभी झूलने को नहीं चल रही हैं। चलिये, जरा उनसे कहिए तो। इतना ही नहीं, पकड़ कर उसने उसे वहीं ला खड़ा किया, जहाँ भाभी बैठी थीं। गनपति को मानो बिजली छू गई। वह निश्चेष्ट, नतदृष्टि और अचेतन सा खड़ा सोचने लगा—मैं कहां आ गया ?

लेकिन तुरंत ही पत्नी बोली—तुम तो मेरी बात सुनते ही नहीं ?.........खैर, अब तो बैठो। खड़े रहने से क्या होगा ?'

गनपति ने मानो अभय का घूंट पिया। किंतु फिर भी वह नुचा-नुचा ही जा रहा था—क्या इसी योग्य हूं, केवल दया योग्य ? न वह बैठा, न उसने कुछ उत्तर ही दिया।

पर हाँ इसी बीच में वह पास खड़ी हुई लड़की बोल उठी—भैया, तुम्हीं क्यों नहीं इनसे जल्दी तैयार होने को कहते हो ?

कैसी तैयारी ? गनपति समझ गया और इस शब्द से उसका रोम-रोम खड़ा हो गया। कुछ उत्तर न देकर उसने अपनी आँखें और अधिक दृढ़ता से जमीन पर गड़ा लीं।

किन्तु उसी वक्त—'मैं नहीं जाऊंगी, बिटिया ! मैंने कह दिया। ये भी लाख कहें, तो न जाऊंगी। तुम क्यों खड़ी हो ? पर हां, अपनी तीजो खोनी हो तो खड़ी रहो।'

इस दृढ़ विश्वास को सुनकर बिटिया से चलते ही बना और वह कमरे से बाहर हो गई।

अब वह फिर गनपति की ओर प्रवृत्त हुई और बोली—खड़े ही रहोगे ? अच्छा खड़े ही रहने की इच्छा है, तो आओ घूमने चलें। और उठकर गनपति का हाथ अपने हाथ में ले लिया।

गनपति आपत्ति ही क्या कर सकता था, मुँह खोलने को उसकी तबियत न होती थी।

दोनों घूमने निकल गये और चलते गये, शहर से बाहर, दूर, दूर जहां तीजो का एक चिन्ह न दिखाई देता था।

जाकर वहीं सड़क के किनारे एक घास के मैदान में बैठ गये। सामने हरियाली का विस्तार था—दूर क्षितिज के उस छोर तक। पीछे शहर के ऊंचे ऊंचे मकानों का एक पहाड़ सा था। वे बैठे थे।

दोनों खामोश थे। किन्तु निःस्तब्धता को भंग करते आखिर वह बोली ही—यह घास कितनी अच्छी लगती है।

'हां' गनपति ने कोशिश करके उत्तर दिया।
और हवा कितनी स्वच्छ मालूम होती है ?

'हां'

एक दम खामोशी है। शहर की धौं-धौं, पों-पों से क्या यह अच्छी नहीं लगती ? जी होता है यहीं बस जायं।

'हां'

'हां-हां—बस ! कुछ और भी ? अब भी तीजो ही चढ़ी है क्या ?'

'हां, चढ़ी है' गनपति विवश होकर बोला। 'लेकिन मैं सब कुछ सुन रहा हूँ। यह जगह भी अच्छी है, हवा भी साफ है और खामोशी भी उस धौं-धौं पों-पों से अच्छी ही है। इससे कौन इन्कार कर सकता है ? हां ही तो कहनी पड़ेगी। पर मैं सोचता हूँ—क्या हमें अभी ही शहर नहीं लौट जाना होगा ? या जहां तुम बसना चाहती हो, वहां दूसरे बसना न चाहेंगे। पगली ! जहां शहर बसा है, वहां भी कभी ऐसा ही मैदान था।' वह कह रहा था और उसकी संगिनी वास्तव में पागल सी देख रही थी।

'यहां सब कुछ अच्छा है, क्योंकि यहां मनुष्य नहीं है, मनुष्य होंगे तो शहर हो जायगा

और तीजो भी लगेगी ही। इससे तो हम छुटकारा पा ही नहीं सकते।'

आप ठीक कहते हैं, मैं गलत समझी थी। और अब आप में समझ आ तो गई। इनसे छुटकारा नहीं पा सकते।···लेकिन आप तो फिर भी सोच करते मालूम होते हैं। क्यों, सोच करना क्या वृथा नहीं है?'

वृथा मालूम होता है क्यों कि अभी हम इस शहर से प्राण बचाकर थोड़ी-बहुत देर सांस लेने के लिए यहां आ सकते हैं। समझी! लेकिन न मुझे दीखता है कि कुछ वक्त में यह भी वृथा होने लगेगा। और हमें सोचना ही पड़ेगा, सोचना ही पड़ेगा।

'क्या?'

यही कि एक जगह बिना रहे हम नहीं रह सकते, बिना शहर बसाये हम नहीं बस सकते, और बिना तीजो लगाये हम नहीं जी सकते। लेकिन सोचता हूँ क्या मिलकर रहने का यही एक तरीका है? बेहतर शहर नहीं बसा सकते? और अच्छी तीजो नहीं लगा सकते?—

पूछती हो—क्यों सोच करते हो? तो बताऊं? मैं जितनी ही दूर शहर से चला आया हूँ, उतनी ही अधिक बेचैनी मुझे हो रही है। जी होता है—वहीं चलूं, अभी चलूं, वहीं रहूँ और देखूं कि मैं उसमें क्या कर......उसकी वाणी रुक गई, आँखें तन गईं, चेहरा तमतमा उठा और प्रातःकाल के उठते हुए सूर्य की तरह काँपने लगा।

देखकर सामने बैठी मूर्ति भी अधीर हो उठी। बोली—अच्छा, देर होती है, चलें।

वे उठे और चल दिए। सामने शहर था, पीछे मैदान और शून्य। दोनों तेजी से बढ़े चले जा रहे थे।

'बच्चन' जी और हिन्दी-काव्य-धारा की नवीन प्रगति !

[श्री योगेन्द्र नाथ भार्गव]

श्रीयुत 'बच्चन जी' के साथ साथ हिन्दी-साहित्य में 'हालावाद' का भी शब्द बड़े जोरों से सुनाई पड़ता है। आज हिन्दी-साहित्य में 'बच्चन' जी को प्रत्येक साहित्यिक भली-प्रकार जानता है। हिन्दी-जगत में उनकी छः पुस्तकें, 'ख़य्याम की मधुशाला,' 'मधुशाला,' 'तेरा हार,' 'तेरी बाँसुरी,' 'मधुबाला' और 'मधु-कलश' आज विद्यमान हैं।

श्रीयुत 'बच्चन' जी ही इस हिन्दी-संसार में ऐसे पहले नवयुवक हैं, जिन्होंने इतनी थोड़ी-सी उम्र में ही एक अच्छे कवि का स्थान प्राप्त कर लिया है। 'बच्चन' जी की प्रथम रचना 'ख़य्याम की मधुशाला' है। 'बच्चन' जी ने मदिरा को कितना महत्व दिया है उसका पता इन स्फुट रुबाइयों द्वारा मिलता है:—

प्रिये मदिरा से देना सींच अधर मेरे होंगे मृत-म्लान,
मरूँ तब मदिरा से ही प्राण ! कराना मेरे शव को स्नान।
अँगूरी पत्तों से मृत देह, मूँद उनका हो शैया डाल,
लिटा देना मुझ को चुपचाप किसी मधुमय उपवन के पास।

'ख़य्याम की मधुशाला' से—

* * *

मेरे अधरों पर हो अन्तिम वस्तु न तुलसीदल, प्याला,
मेरी जिह्वा पर हो अन्तिम वस्तु न गंगाजल, हाला,
मेरे शव के पीछे चलने-वालो, याद इसे रखना,
'राम नाम है सत्य' न कहना, कहना 'सच्ची मधुशाला' !

'मधुशाला' से—

* * *

अँगूरी बलशाली महमूद, विजयकारी सम्राट महान,
नशे की जोशीली तलवार, हाथ में ले करती प्रस्थान।

'ख़य्याम की मधुशाला' से—

* * *

किया मदिरा ने मुझ से घात
मान की पगड़ी मेरी छीन,
मगर, कब उसको समझा हेय ?
मगर, कब उसको समझा हीन ?
मुझे प्रायः इस पर आश्चर्य
बेचता मद क्यों दीन कलाल,
कहाँ ताँबे के टुकड़े चार !
कहाँ माणिक्य-सा उसका माल !

'ख़य्याम की मधुशाला' से—

श्रीयुत 'बच्चन'जी ने रुबाइयाँ उमरख़य्याम का हिंदी रूपान्तर 'ख़य्याम की मधुशाला' किया है। 'ख़य्याम की मधुशाला' के सम्बोधन में लिखा है:—

"इन फूलों पर अपने अश्रु-बिन्दु छिड़क-छिड़क कर तथा इनको अपने उच्छ्वासों से फूँक-फूँककर

ताज़ा बनाने का प्रयत्न किया है। प्रयत्न से अधिक मेरे वश में और क्या है ?"

इस समस्या को हल करने में कवि पूर्ण-तया सफल हुआ है। प्रयत्न से अधिक कवि के वश की बात नहीं। कहीं कहीं पर कवि ने रूपान्तर करने में कविता का सौन्दर्य द्विगुणित कर दिया है। एक अँगरेजी की रुबाई है:—

The moving Finger writes; and, having writ,
Moves on: nor all thy piety nor wit.
Shall lure it back to cancel half a line,
Nor all thy tears wash out a word of it.

'बच्चन' जी ने इस रुबाई का हिन्दी-अनुवाद इस प्रकार किया है:—

किसी की लोह लेखनी भाग्य शिला पर लिख देगी कुछ लेख,
न फिर फिरनी पीछे की ओर लिखा क्या, इतना तो ले देख !
न कम कर देगी आधी पंक्ति देख सब तेरी भक्ति, विवेक;
न तेरे आंसू की ही धार सकेगी धो लघु अक्षर एक !

कितना कमाल किया है 'बच्चन' जी ने। जो बात-'लोह लेखनी' में है, Moving Finger में नहीं है।

'बच्चन' जी की द्वितीय लिखित पुस्तक 'मधुशाला' है। 'बच्चन' जी को 'मधुशाला' में उतनी सफलता प्राप्त नहीं हुई जितनी 'खय्याम की मधुशाला' में हुई है। अधिक भाव कवि ने 'खय्याम की मधुशाला' से 'मधुशाला' में लिये हैं। कवि ने 'मधुशाला' को एक रस बना दिया है। 'मधुशाला' में 'खय्याम की मधुशाला' की प्रति-च्छाया है।

'मधुशाला' का स्वयं कवि पाठकों को इस प्रकार परिचय देता है:—

भावुकता अँगूर लता से खींच कल्पना की हाला,
कवि बनकर है साक़ी आया, भरकर कविता का प्याला।
कभी न कण भर खाली होगा, लाख पियें दो लाख पियें,
पाठक-गण हैं पीने वाले पुस्तक मेरी मधुशाला।

जो समालोचक 'मधुशाला' की आलोचना करते हैं, उनके लिये कवि आगे चलकर लिखता है:—

बिना पिये जो मधुशाला को
बुरा कहे, वह मतवाला,
पी लेने पर तो आयेगा
पड़ उसके मुँह पर ताला।

ओ मन्दिर और मसजिद के क़द्रदानो ! कुछ इस मधुशाला से भी तो सीखो। यह वह न्यायालय नहीं है जहाँ चोरी का अपराध लगा कर जेल में भेज दिया जाता हो—या किसी की हत्या करने पर फाँसी का दण्ड दिया जाता हो। यहाँ साम्यवाद का अखण्ड राज्य है। यहाँ सद्भाव का भी बीजारोपण किया जाता है। मन्दिर, मसजिद या चर्च तुम्हें हिन्दू, मुसलमान और क्रिश्चियन कहकर लड़वाते हैं। और यह मधुशाला तो तुम्हें 'एकता' के मादक घूँट पिलाती है। तुमको घबराहट, डर तथा चिंता से कोसों दूर रखती है।

मदिरालय के बाहर भले ही तुम अपने को हिन्दू, मुसलमान, ईसाई अथवा अछूत कह लो, लेकिन भीतर जाते ही एक हो जाओगे और तुम्हें कहना पड़ेगा:—

नाम अगर पूछे कोई तो
कहना, बस पीने वाला,
काम, ढालना और ढलाना
सबको मदिरा का प्याला।
जाति, प्रिये, पूछे यदि कोई,
कह देना दीवानों की,
धर्म बताना, प्यालों की ले
माला जपना मधुशाला

मदिरालय में 'तू' और 'मैं' का अस्तित्व नहीं है, यहाँ तो साकार साम्यवाद है:—

रंक राव का भेद हुआ है कभी नहीं मदिरालय में,
साम्यवाद की प्रथम प्रचारक है यह मेरी मधुशाला।

'तेरा हार' 'बच्चन' जी की तृतीय पुस्तक है। इसमें कवि की स्फुट पद्यों का संग्रह है, जो समय-समय पर मासिक पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित होती रही हैं। इसमें कुछ पद्य ऐसे भी हैं जो किसी भी मासिक पत्रिका में नहीं प्रकाशित हुये हैं। कवि इसके सम्बोधन में लिखता है :—

"मुझे-तो अपना हार गूँथते समय सदा इस बात का डर लगा रहता है, कि तुझे कहीं इसका पता न चल जाय और यह अधगुँथा हार इस 'शुभ-अवसर' के होने के पहिले ही मेरे हाथों से छिन कर तेरे गले में पहुँच जाय। कुछ याद है, कितनी बार जब मैंने हार गूँथने के लिये कली उठाई, तू मेरे हाथों में से छीन कर चम्पत हो गई। खैर, अब यह पूरा बन गया है, और तू इसे ले ही लेगी। इसी से मैंने इस हार (कविताओं का संग्रह) का नाम 'तेरा हार' रखा है।"

अहा! कवि ने कितना सुन्दर नाम रखा है इस पुस्तक का। कविता से डरते हुये भी कवि कविता को अपनाता है। इस संग्रह को तैयार करने में सचमुच अधिक समय लगा है, इसका साक्षी उक्त गद्य का प्रथम वाक्य है, जो स्वयं कवि की लेखनी द्वारा लिखा गया है।

कवि आगे चल कर इसी सम्बोधन में लिखता है :—

"वह (संसार) मुझ पर खूब हँसे। मुझे इसका दुःख नहीं, क्योंकि मेरे सिर पर यह कोई नई बला नहीं। संसार हमेशा से ही मुझ पर हँसता आया है!" कवि के इन दो-तीन वाक्यों से ज्ञात होता है कि उसको इस संसार की कुछ भी परवा नहीं है। वह एक-एक क्षण को मूल्यवान् समझता है, और उसका यथोचित प्रयोग भी किया है। वह अपना कार्य करने में तल्लीन रहता है। वह संसार के हँसने की परवा नहीं करता।

इन महान विभूतियों के
सामने मैं तुच्छ मानव,
क्यों लगी होने किसी को
फिर भला परवाह मेरी।

'तेरा हार' में 'कीर' 'झंडा' 'बन्दी' आदि कविताओं की रचना हुई। कीर को पिंजड़े में बैठा देखकर कवि के उद्गार निकले हैं:—

"कीर! तू क्यों बैठा मन मार,
शोक बनकर साकार,
शिथिल-तन मग्न विचार?
आ कर तुझ पर टूट पड़ा है किस चिन्ता का भार?"

झँडे को फहराता हुआ देखकर कवि कल्पना करता है:—

अहे नहीं फहराता झँडा
वायु वेग से चँचल हो,
हमें बुलाती है माँ भारत
हिला-हिला कर अँचल को!

जब कवि बन्दी से कारागार में पड़े रहने का कारण पूछता है तो कवि को सुनाई देता है:—

शीश पर मातृ-भूमि-ऋण-भार
उसे हूँ रहा उतार,
देश हित कारागार—
कारागार नहीं, वह तो है स्वतन्त्रता का द्वार!

इस दीन-देश की दशा पर तरस खा कवि कोयल के राग से प्रश्न करता है:—

कोकिले! पर यह तेरा राग
हमारे नग्न-बुभुक्षित देश
के लिये लाया क्या सँदेश?
साथ प्रकृति के बदलेगा इस दीन देश का भाग!

दुःखों का स्वागत करता हुआ कवि गुनगुनाता है:—

प्यार पास आये प्यारों के
सुख सुखियों पर छाये,
आशिष आशिष-वालों पर, मुझ
दुखिया पर दुख आये!

प्रेम की आलोचना करता हुआ कवि लिखता है:—

लेलेना सुगन्ध सुमनों की,
तोड़ उन्हें मुरझाना क्या?
प्रेमहार पहनाना लेकिन—
प्रेम-पाश फैलाना क्या?

*　　*　　*

गुण का ग्राहक बनना, लेकिन—
गाकर उसे सुनाना क्या?
मन के कल्पित भावों से
औरों को भ्रम में लाना क्या?

*　　*　　*

प्यार किसी को करना लेकिन—
कह कर उसे बताना क्या?

*　　*　　*

देकर हृदय हृदय पाने की
आशा व्यर्थ लगाना क्या?

'मधुशाला' तथा 'तेरा हार' के पश्चात् कवि की 'मधुशाला' ही से सम्बन्ध रखने वाली 'मधुबाला' और 'मधुकलश' लिखी गई। इन पुस्तकों में भी स्फुट पद्यों का संग्रह है।

कवि अपने आलोचकों से कहता है:—

करे कोई निन्दा दिन-रात,
सुयश का पीटे कोई ढोल,
किये अपने कानों को बंद
रही बुलबुल डालों पर बोल!

जब कभी कवि के ऊपर सँसार हँसता है, तो कवि क्रोध न कर, सन्तोष से कहता है:—

वृद्ध जग को क्यों अखरती है क्षणिक मेरी जवानी?

कवि ने एक ऐतिहासिक उदाहरण देकर सँसार की क्षण भंगुरता बतलाई है, और जो वर्तमान में है, उसको सुखों का पूर्ण-उपभोग करने का उपदेश दिया है। क्योंकि मनुष्य अपने भविष्य के विषय में कुछ नहीं जानता। कवि लिखता है:—

कहाँ है अब नृप औरंगज़ेब
कहाँ उसकी नँगी तलवार!
कहाँ अब उसका क्रोध कराल,
कँपा जो देता था सँसार!
एक मिट्टी पत्थर की क़ब्र
ढक रही उसका आज शरीर,
बता करती उसका उपहास
बन्द है इसमें आलमगीर!

कवि के हिन्दी विचारों पर संसार असंतुष्ट है, और उसके विचारों में उसको (संसार को) कवि की वासना की आशंका होती है। कवि इस बात को समझता है, अतएव कवि सँसार की नासमझी पर तरस खाता हुआ गा उठता है:—

सृष्टि के प्रारम्भ में,
मैंने ऊषा के गाल चूमे,
बाल रवि के भाग्य वाले,
दीप्त भाल विशाल चूमे,
प्रथम संध्या के अरुण दृग
चूमकर मैंने सुलाये,
तारिका-कलि से सुसज्जित
नव-निशा के बाल चूमे,
वायु के रस-मय अधर
पहले सके छू होठ मेरे,
मृत्तिका की पुतलियों से
आज क्या अभिसार मेरा।
कह रहा जग वासना मय
हो रहा उद्गार मेरा

कितना सुन्दर लिखा है कवि ने। इतना होते हुये भी यदि कोई, कुछ का कुछ समझे तो किसका दोष है? समझने वालों का, न कि कवि का। चाहे छायावाद हो, चाहे हालावाद हो, चाहे और कोई अन्य वाद हो, 'बच्चन' जी की कविता में सर्वत्र भाव प्रधान माना गया है।

अँगरेज़ों के कवि वर्ड्सवर्थ की भाँति श्रीयुत 'बच्चन' जी ने भी प्राकृतिक वस्तुओं का वर्णन किया है :—

जल में, थल में, नभ-मंडल में
है जीवन की धारा बहती;
संसृति के कूल-किनारों को
प्रतिक्षण सिंचित करती रहती।

जब कभी 'बच्चन जी' कहते हैं:—

मदिरा पीने की अभिलाषा
ही बन जाए जब हाला
अधरों की आतुरता में ही
जब आभासित हो प्याला,
बने ध्यान ही करते-करते
जब साक़ी साकार सखे,
रहे न हाला, प्याला साक़ी
तुझे मिलेगी मधुशाला।

तो हम उन्हें 'साहित्य के बिगड़े बालक' कह कर धमका देते हैं, और जब भारतेन्दु बाबू

'पी प्रेम पियाला भर-भर कर,
कुछ इस मय का भी देख मज़ा'

कहते हैं तो हम उन्हें ईश्वर-भक्ति का उदाहरण मान उनका आदर करते हैं। इतना मैं कह सकता हूँ कि आज यदि इसी तरह की कविता कबीर, सूर, तुलसी या मीरा ने बनाई होती तो हम उन पद्यों को कंठस्थ कर मन्दिरों में गाते फिरते, और हम उन्हें ईश्वर-भक्ति का उदाहरण मानते। यह श्रीयुत 'बच्चन' जी का दुर्भाग्य है।

'बच्चन' जी में वे गुण विद्यमान हैं जो एक सफल कवि में होने आवश्यक हैं। उनकी कविता की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि भाषा अति सरल, कल्पनाएँ क्लिष्ट नहीं हैं, और अस्पष्टता ढूंढ़े भी कहीं न मिलेगी। कवितायें सुन्दर, सरल, और सरस हैं, और भाव भी उत्तम हैं। कवितायें ऐसी जान पड़ती हैं मानों निश्छल या निष्कपट हृदय के सीधे-सादे उद्गार हों। जब-जब कवि ने भाव-तरंगों को उठते पाया, उसने उन भावों को लिख डाला। भावों को समझने में कहीं पर भी हिंदी-प्रेमियों को कठिनाई नहीं होती। 'बच्चन' जी की कवितायें नवीन-शैली की हैं, और इसीलिये आधुनिक-काव्य में 'बच्चन' जी का समुचित आदर हो रहा है।

कवि को कविता में कितनी भक्ति है—वह कविता को कितना प्रेम करता है—यह इस निम्न-पद्य से मालूम हो जाता है। कवि कविता के 'जन्म दिवस' को याद करता हुआ गुन-गुनाता है :—

आ याद दिलाएँ 'जन्म-दिवस' की,
हर्ष अनेक अपार तुम्हें।
हो, और मुबारक जन्म-दिवस
प्यारी कविते! सौ बार तुम्हें।
हम दीन बड़े हम दूर पड़े,
क्या भेंट करें उपहार तुम्हें?
सन्तोष इसी से कर लेना
सौ बार हमारा प्यार तुम्हें।

'तेरा हार' के अन्त में, जब कवि पुस्तक को खतम करता है तो कविता से पुस्तक का अन्त करने के लिये, विदा माँगता हुआ लिखता है:—

अच्छा कविते! अब क्षमा-प्रार्थना-प्यार—
और विदा!...यात्री के आशीर्वाद
फूलो-फलो, आबाद रहो,
राज़ी रहो, खुश रहो;
फिर मिलेंगे
अच्छा!

कितनी सुन्दर विदा माँगी है कवि ने कविता से!

और नहीं

[श्री सोमेश्वर सिंह]

इन आशाओं से है सम्भव
अब जी बहलाना और नहीं।
इस पगली दुनिया में प्रिय है
पागल कहलाना और नहीं।
भर भर ठंढी-ठंढी आहें
भाना शरमाना और नहीं।
सम्भव अपने मन को अब है
प्रतिपल भरमाना और नहीं।
चुप चाप दृगों में है अविरल
आंसू बरसाना और नहीं।
प्यासे को है मँजूर अधिक
अब हिय तरसाना और नहीं।
है आज विकल विह्वल जीवन
चलता अपना वश और नहीं।
है रोम-रोम कह-कह उठता,
बस और नहीं, बस और नहीं॥

ऋण परिशोध

[श्री रूप किशोर जैन]

आपत्सु मित्रं जानियाद् रणे शूरं ऋणे शुचिम्।
भार्यां क्षीणेषु वित्तेषु व्यसनेषु च बान्धवान्॥

(१)

"सेठ जी ने क्या उत्तर दिया, विश्नू बाबू?"

"वही जवाब—जगह नहीं है। क्या करूँ, प्रारब्ध ही उल्टी है। सभी ओर से निराशा।"

"तब तुम कोई व्यापार क्यों नहीं करते?"

फूलचन्द गम्भीरता-पूर्वक कह कर उत्तर की प्रतीक्षा करने लगे।

"व्यापार कैसे हो, अपने पास धन है न लोगों में विश्वास!"

"उधार-सुधार से भी तो काम चल सकता है?"

"ऋण देगा कौन!"

तुम्हारे तो कई मित्र हैं उनसे ही ऋण लेकर काम चालू कर दो।"

"मित्र से ऋण लेना शत्रुता मोल लेना है। हमारे पिता बड़े अनुभवी थे। वह कहा करते थे—किसी मित्र को ऋण देने से यह अच्छा है कि जो कुछ दे सहायता दे, उसको लौटाने की आशा न रखे।"

"यदि सब लोग तुम्हारी तरह विवेकी बन जावें तो दुनिया का काम ही बदल जाय। समय पर मित्रों से सहायता ले ली जावे और काम निकाल कर सूद सहित लौटा दी जावे, तो कोई हर्ज नहीं हो सकता।"

"मित्रों से सहायता लेना मैं बुरा नहीं समझता। ऋण लेना निस्सन्देह बुरा है, मैत्री-भाव नहीं रह जाता। स्वयं ही मित्र को विपद्ग्रस्त देख यथाशक्ति तन-धन से सहायता करना धर्म कहा है। इसके मैं विरोध में कदापि नहीं हूँ।"

"अच्छा तुम यह बताओ कम से कम कितने रुपयों से क्या काम कर सकते हो?"

"तीन हजार में काम चल जायगा बनियान, स्वेटर, मोजा इत्यादि का काम खोल दूँगा। समुन्नत देश जापान की सोकियो कम्पनी को दो हजार जमानत-स्वरूप जमा कर देने से उनकी एजन्सी मिल जायगी। एक हजार से यहाँ काम चालू हो जायगा।"

(२)

क्यों जी, विश्नू को तीन हजार रुपया दे दें? बड़ा सत्यनिष्ठ, विश्वासी और सच्चरित्र है। बेचारे को कहीं कोई नौकरी नहीं मिली, व्यापार करने का विचार है।

फूलचन्द की स्त्री मनोरमा को अच्छा न लगा। वह विपन्न हो कहने लगी—"ठीक है जी,

घर में एक कौड़ी न रहने पावे। बाँटते फिरो क़र्जा। समय पर तुम्हें कोई एक छुव्वा न देगा।"

कुछ सोचकर फूलचन्द ने पूछा—"क्या तुम्हारे भाई होरी से रुपया मँगाकर विश्नू को लगा दें ?"

"एलोजी, भाई का ताना क्या देते हो। वह तो घर में रखे हैं। उनसे मांगना कैसा! वह तुम्हारा पानी तक तो पीते नहीं हैं। उनके पास आपकी कौड़ी भी न रह जायगी, विना माँगे दे जाँयगे।"

"तब क्या घर से ही काम हो जायगा ?"

"मुझ से क्या पूछते हो! आपका रुपया आपके पास है। जी में आवे उसको बख़शो। मेरा कहना लगता जरूर बुरा होगा। अच्छा है, किसी दिन बता दूँगी।"

तीन हजार है भी तो नहीं। विवश कल होरीलाल के पास जावेंगे यदि एक हजार भी उसने दे दिया तो काम चल जायगा। रक़म भी ज्यादा हो गई है।"

(३)

स्वामिभक्त कुन्दन को साथ लिए फूलचन्द अपनी सुसराल हैदर नगर पहुँचे। होरीलाल उनके चचेरे साले थे। स्वयं उनकी सुसराल में अन्धी सास को छोड़कर और कोई न था। मकान के बीचोंबीच दीवार लगाकर एक ओर उनकी सास और दूसरी ओर होरीलाल रहते थे।

अब तक होरीलाल फूलचन्द के प्रति बहुत पूज्यभाव रखते थे। बड़े आदर सन्मान से उन्हें रक्खा।

सन्ध्या समय जब फूलचन्द ने रुपया माँगा तो होरीलाल को बहुत असह्य हुआ, जैसे पैर के नीचे साँप पड़ गया। उछल पड़ा। समस्त शरीर काँप उठा। वह समझता था बहिन का रुपया है, देना थोड़े ही पड़ेगा; परन्तु मन के भाव को छिपाकर वह बाहर चला गया। कैसे फूलचन्द का मुँह सदैव को बन्द कर दिया जावे, वह अनेक उपाय सोचने लगा।

फूलचन्द निराला पा होरीलाल की बहू से जो अनेकों को शरीर अर्पण कर पति की आँखों में धूल झोंकती रहती थी, कुटिल भ्रूभंगी और हँसी-दिल्लगी से जी बहलाने लगे।

बाहर आकर होरीलाल अपने मित्र नरायन से बड़े धीरे-धीरे कुछ परामर्श करने लगा। यद्यपि कुन्दन भी निकट ही बैठा था; परन्तु उसने सोचा-खाने पीने का आयोजन हो रहा है।

नरायन ने बहुत समझाया; परन्तु होरीलाल सहमत न हुआ। वह बड़े रोष से कहने लगा—"मारूँगा; यदि अब तक़ाज़ा किया। बस तुम खड़े रहना, मैं सब देखलूँगा।"

होरीलाल लाल-लाल नेत्र किये घर में पहुँचा और कम्पित स्वर से कहने लगा—"जीजा जी, आज-कल रुपये का कोई प्रबन्ध नहीं है। कई जगह गया, एक पैसा नहीं मिला। सावन में बहिन को बुलावेंगे, तब उसी को सब दे देंगे। इस समय क्षमा कीजिये।"

"यदि एक हजार भी दे देते तो हमारा काम चल जाता.........।"

"आप बार-बार क्या कहते हैं। रुपया होता तो दे देते। बस अब अधिक कुछ न कहिए।"

अभी फूलचन्द शायद और कुछ कहते; परन्तु होरीलाल अपनी स्त्री को दपट कर कहने लगा—"कैसी घुल-घुल कर बातें बना रही थी। मैं सब देखते हुए अन्धा बन गया था! यदि और कोई तेरे शरीर से हाथ लगाता तो हाथ ही नहीं सिर अलग कर देता। क्या करूँ बहनोई है।"

अश्रु विसर्जन कर स्त्री कहने लगी—"क्षमा कीजिये। मैं क्या करती जब उन्होंने मुझे बलात् अपनी ओर खींच लिया और मेरी चोली फाड़ डाली।"

स्त्री की बातें सुनकर फूलचन्द अवाक् रह गये। उन्होंने उसका शरीर छुआ तक न था। बहुत

सम्भव है होरीलाल मार बैठे या विष देकर मार डाले।

यद्यपि सन्ध्या हो गई थी; परन्तु वायु सेवन मिस से असबाब वहीं छोड़, फूलचन्द सीधे स्टेशन पहुँचे और १५) रु० की अँगूठी ४) रु० में बेचकर ११ बजे रात को अपने घर आगए।

घर आकर फूलचन्द ने अपनी स्त्री को कुछ नहीं बताया; परन्तु उनकी दशा देखकर उसे सब घटना का आभास मिल गया। वह पति की शैया पर बैठी दिन निकलने तक अनाप-शनाप होरीलाल को कोसती रही।

(४)

फूलचन्द ने विश्नू बाबू को तीन हजार रुपया दे दिये। हुंडी-पर्चा कुछ लिखाया नहीं। मूलधन सुभीता होने पर और ब्याज प्रति मास देने को वचन ले लिया।

होरीलाल का रुक्का था। जब उसकी मियाद आ गई और दूसरा रुक्का बदला नहीं, तब विवश हो फूलचन्द ने नोटिस देकर नालिश करदी। यद्यपि कई बहाने बनाये, चतुर वकीलों द्वारा उज्रदारी की; परन्तु अदालत ने माना नहीं। ४४८०)रु० की डिग्री देदी। अपील हुआ अन्ततः तीन हजार जायदाद पर और १४८०) रु० जात पर डिग्री हो गई।

जात की डिग्री में क्या रखा था। होरीलाल को गिरफ्तार कराओ, तो खर्च खुराक की एक डिग्री अपने ऊपर और करो।

हैदरनगर के लाला लोकमनदास की ४००रु० की डिग्री होरीलाल के नाम और थी। इजराय में मकान नीलाम पर रखाया था। इस प्रकार सहज ही मकान नीलाम होगया। फूलचन्द को १६०० रु० मिल गए, वरना सब पर पानी पड़ जाता, डिग्री अलमारी की शोभा रह जाती। चलो जी, साले थे रुपया में चार आने मिल गए यही बहुत है।

डिग्री वसूल करके फूलचन्द घर लौटे तो विश्नू बाबू की दुकान बन्द पाई। न जाने वह कहाँ चले गए थे!

फूलचन्द के पास अधिक धन न था, केवल दस हजार रुपया उनके पिता ने छोड़ा था। बेचारे उसी के सूद से सौ डेढ़ सौ रुपया मासिक उपार्जन कर लेते थे। वह तो उनकी स्त्री घर-गृहस्थी के काम में बड़ी कुशल थी। ६०-७० रु० मासिक से कभी अधिक व्यय न करती, परन्तु 'नंगी न्हा कर क्या निचोड़े' बेचारी करे ही क्या? पाँच हजार रु० निकल जाने से बड़ी कठिन समस्या उपस्थित होगई थी। बड़ी लड़की को १४ वाँ वर्ष लग गया था। उसके विवाह की चिन्ता दिन रात सोच निमग्न रखती थी।

फूलचन्द की स्त्री अपने भाई होरीलाल और विश्नू बाबू को दिन-रात कोसा करती। दुख है विश्नू का कोई पता नहीं था। तकाजा भेजते, कुछ न कुछ देता ही। विवाह में बहुत सहायता मिल जाती।

(५)

विष्णु बाबू काम न चलने से अलीगढ़ छोड़ सी०पी० खंडवा चला गया था। शुभोदय से काम अच्छा चला। उसने एक वर्ष में ही फूलचन्द का रुपया बचाकर कुछ पूँजी अपने पास भी करली। विश्नू की पत्नी सुशीला प्रति दिन आग्रह करती—जब आप इस योग्य होगए हैं तब सूद सहित फूलचन्द का रुपया दे आओ।

चार हजार रुपया लेकर विश्नू बाबू जैसे ही जाने को उद्यत हुए कि बैनीराम की फर्म का देवाला निकल गया था। उसका माल बहुत थोड़े दामों में नीलाम होरहा था। सस्ता सौदा देख विश्नू ने आठ हजार की बोली लगादी; निदान उन्हीं के नाम नीलाम खतम होगया।

सुशीला को बहुत बुरा लगा। दूसरे का रुपया जोखम में डाल दिया; परन्तु नीलाम खतम हो

चुका था। करते ही क्या— "बहुत लाभ का सौदा है, जो कुछ लाभ होगा आधा मेरा और आधा फूलचन्द को देंगे।"

दो महीने में सब माल बिक गया। दुगुने होगए। अब सुशीला ने आठ हजार रुपया फूलचन्द को दे आने का विशेष-आग्रह किया।

चार महीना बीते, जब विश्नू बाबू ने बिजली का काम लेने की प्रार्थना की थी। आज सहसा अध्यक्ष ने पूर्ण अधिकार देने की सूचना दी। इस काम में उसे तीन महीने लगे। लाभ आशातीत ३२ हज़ार रुपया होगया।

विश्नू १६ हजार रुपया लेकर फूलचन्द के नाम बेंक में जमा करने चला। बेंक में कोई अमेरिकन व्यापारी अपने कपड़े के जहाज का सौदा कर रहा था। वह किसी एक के नाम जहाज देना चाहता था। इच्छा न रहते भी बेंक के एजेन्ट के कहने से विश्नू बाबू ने जहाज का सौदा कर लिया। ३० हजार रुपया जमानत स्वरूप बेंक में जमा कर दिया, शेष रुपया चार किस्तों में अदा कर दिया।

अब विश्नू बाबू के पास एक लाख रुपया नक्द होगया। जैसे ही उन्होंने घर में प्रवेश किया, उनकी स्त्री सुशीला ने दैनिक अर्जुन का एक विज्ञापन दिखाया "विश्नू बाबू का पता देने वाले को ४० रुपया पारितोषिक ! यदि सौभाग्य से स्वयं विश्नू बाबू तक यह अँक पहुँच जावे तो उन्हें तुरंत हमारा रुपया भेज देना चाहिए। आगामी १० जून को विमला का विवाह है।"

सुशीला ने दुख प्रकाशित करते हुए कहा—आज पहली जून है। विवाह में केवल नौ दिन रहे हैं। न जाने फूलचन्द को कितनी कठिनाइयों का सामना करना पड़ा होगा। यदि रुपया की कमी न होती तो विज्ञापन न निकालते, और यहाँ तुम मौज कर रहे हो। यद्यपि आपने उनका रुपया १७ गुना बढ़ा दिया है; परन्तु किस काम का जब कि समय पर काम न आया।

विश्नू बाबू सपत्नीक ५० हजार रुपया लेकर अलीगढ़ को चल दिए।

दूसरे दिन ५० थैली रुपयों से भरी फूलचन्द के घर पहुँची। दम्पति के हर्ष का क्या कहना। मर्यादा तोड़कर बहुत दीनता से पुत्री विमला का विवाह कर रहे थे। सहसा रुपया पाकर उनके आनन्द की सीमा न रही।

मनोरमा, सुशीला का आभार मान शत मुख से यशोगान कर कहने लगी—नाते सम्बन्धी और विशेषकर मायके वालों को ऋण देना भ्रम और मूर्खता है। नातेदारीसे हाथ धो शत्रुता मोल लेनी पड़ती है; परन्तु विपद समय में धन के व्यवहार से सच्चे मित्र को ऋण देना समय पर काम दे ही जाता है।

पुत्र-जन्म सम्बन्धी ग्राम्य-गीत

[श्री दमयन्ती प्रभाकर]

शिशु वसुधा का उज्ज्वल रत्न, माँ की गोदी का शृंगार, निर्धन का धन, एवं प्रकृति का सौंदर्य है। माता पिता का अमित प्रेम शिशु के रूप में साकार होता है। वह दम्पति के प्रेम की प्रतिमा है। गार्हस्थ्य-जीवन में नवजीवन और नव रस का सञ्चार करने वाला है। संसार-संग्राम की उलझनों में फँसकर जब दम्पति उकता उठते हैं और उनके हृदय में एक कसक उठती है—

कभी था मेरा शैशव-काल ।
न व्यापा था जग का जंजाल ॥

तब सन्तान के रूप में उनका शैशव मानों फिर लौट आता है और कुछ समय के लिये हृदय को बाल्यचपलता से भर देता है। वह बच्चे के साथ हँसते-खेलते हैं, तुतलाते हैं, आँखमिचौनी करते हैं। श्रीमती सुभद्रा कुमारी जी ने इन भावों का अपनी कविता में बड़ा सुन्दर चित्रण किया है। वह कहती है—

आजा बचपन एक बार फिर,
दे दे अपनी निर्मल शान्ति ।
व्याकुल व्यथा मिटाने वाली,
वह अपनी आक्रांत विश्रांत ।
वह भोली सी मधुर सरलता,
वह प्यारा जीवन निष्पाप ।
क्या फिर आकर मिटा सकेगा,
तू मेरे मन का सन्ताप ।
मैं बचपन को बुला रही थी,
बोल उठी बिटिया मेरी ।
नन्दन-बन सी कुहुक उठी,
यह छोटी सी कुटिया मेरी ।
पाया मैंने बचपन फिरसे,
बचपन बेटी बन आया ।
उसकी मंजुल मूर्ति देखकर,
मुझमें नव जीवन आया ।

शिशु को जन्म देने के कारण 'माता' का स्थान संसार में अत्यन्त उच्च माना गया है। भगवान मनु ने कहा है—

'शिशु को जन्म देने के कारण स्त्री पूजनीया और महाभागा है।'

श्री मैथिली शरण जी ने कहा है—

नारी निन्दा मत करो, नारी नर की खान ।
नारी ही से उपजें ध्रुव प्रहलाद समान ॥

हिंदू-परिवार में माता बनते ही स्त्री का सम्मान बहुत बढ़ जाता है। गीतों में जहाँ-तहाँ इसका सुन्दर चित्रण है।

मैं तो थारा हाजिर बन्दा जी,
कै म्हारी धण रूस क्यूं गई ।
कहो तो अम्मा बुलावैं जी,
कहो तो चरुवा हमीं चढ़ावैं जी। कै म्हारी० ।
कहो तो भाभी बुलावैं जी,
कहो तो मंजा हमीं बिछावैं जी। कै म्हारी० ।
कहो दौरानी बुलावैं जी,

कहो तो दीया हमीं जलावैं जी। क म्हारी धण०॥
कहो तो बाबी बुलावैं जी,
कहो तो सतिये हमीं धरावैं जी। क म्हारी०॥
कहो तो दाई बुलावैं जी,
कहो तो बच्चा हमीं जनावें जी। क म्हारी धण०॥
कहो तो बांदी बुलावैं जी,
कहो तो पोतड़े हमीं धोवैं जी। क म्हारी धण०॥
मैं तो थारा बन्दा हाजिर जी। क म्हारी धण०॥

सास-ससुर तो पौत्र को पाकर खुशी से फूल ही उठते हैं, किन्तु पति भी पत्नी का अधिक सम्मान करने लगता है। और उसका प्रेम पत्नी के प्रति अधिक चिर स्थायी होता है। गीत की नायिका पति से किसी बात से नाराज होगई है। पति उसे मना रहा है। वह उसकी सब सेवायें करने के लिये तय्यार है, और विनय भरे शब्दों में कह रहा है–

'हे' स्त्री मैं तो तुम्हारा सेवक हर समय उपस्थित ही हूं। जो कहो वही काम करदूं।'

धन्य है मातृत्व ! इसीलिये तो स्त्रियां माता बनने के लिये लालायित रहती हैं। एक कवि ने पुत्र की प्रशंसा में कहा है—

नृपति, योद्धा, कवि, पण्डित साधु,
हुये शिशु से हैं विकसित सभी।
इससे शिशु के प्रति सद्भाव
कभी निष्फल जा सकते नहीं।

ऐसे सुन्दर शिशु को जन्म देने वाली स्त्री क्यों न पूजनीया होगी ?

लीपिन पोति ओबरिया रे,
जगर मगर करत रे।
मोरी ए बहुआ, अंगन में रतुलि पलंगिया,
ओबरि लइकै डासहु
मचियहिं बइठी हैं रनियां,
न राजा से अरज करैं हो।
सुनवां के हमाराइ नइहर,
रुपवा केवड़िया लागे हो।
मोरे ए साहेब, सातों भइया की बहिनियां,
पलंगिया कइसे डासहु हो।
अरे बंगला से उठे सीरा साहेब,
तो बन के सिधारेन हो।
छोड़े पीठ भये हौं असवार,
तो केदरिया बन गयेन हो।
मोरे पछवड़वा बढ़इया,
बढ़इया भइया मितवा।
भइया चंदना क डोलिया फनाओ,
साहेब के संग जइबे।
अरे एक बन गई हैं, दूसरी बन गई हैं,
तीसरे में मधुबन हो।
सीरे साहेब, पांयन घुंघरू लदाओ,
तुम्हारे संग चलिबै।
पिछवइर लौटेइ पिया तो चितवइ हो,
तो रनियाँ गोहन लागी हो।
सुनवा के तुम्हाराइ हैनइहर,
रूपे के केवड़िया लागे हो।
मोरी ए रनियां, सातों बीरन की बहिनियां,
गोहनवां कइसे चलिबौ।
छोड़बौ सुनवा कै नइहर,
रूपे के केवड़िया लागे हो।
मोरे ए राजा, छोड़बउ सातों बिरनवा,
गोहनवां तोहे चलिबो।

पति ने स्त्री से कहा—'हे स्त्री, लीपी पोती हुई कोठरी आज जगमगा रही है। मेरा सुन्दर पलंग उस में बिछा दो।' स्त्री का मन इस समय कुछ काम करने को नहीं चाहता, किन्तु वह बड़ी ही नासमझ है। विनीत उत्तर देने के स्थान पर वह कहती है।

'मेरे पिता का घर सोने का बना हुआ है। उस में चाँदी के किवाड़ लगे हुए हैं। हे प्रिय, मैं सात भाइयों की बहिन हूं। तुम्हीं बताओ, मैं कैसे पलंग बिछाऊं ?'

पत्नी की इस गर्वोक्ति से अपमानित होकर पति घर छोड़ कर चल दिया। पुरुषों का स्वभाव



श्री दमयंती प्रभाकर

है, कि वह स्त्री द्वारा उसके पिता के घर की प्रशंसा नहीं सुन सकते। यह एक ऐसा अपराध है, जिसे वह कभी क्षमा नहीं कर सकते, फिर स्त्री की ऐसी अभिमान पूर्ण बातों को सहन करना तो पुरुषों के लिये असम्भव ही है। पति के चले जाने पर पत्नी को अपनी भूल मालूम हुई और वह पति को मनाने चली। पति को दिया गया पत्नी का उत्तर तो बड़ा ही, भावपूर्ण है। वह कहती है—

'मेरे सर्वस्व' मैं अपने चांदी के किवाड़ वाले स्वर्ण-मण्डित पितृगृह को छोड़ दूंगी। यही नहीं, मैं अपने नैन सितारे प्यारे भाइयों को भी छोड़ दूंगी किन्तु हे प्रिय, मैं तुम्हारे साथ चलूंगी।'

प्रेमी के जीवन का अथ और इति आत्म बलिदान है। महात्मा कबीरदास जी ने कहा है।

"जो 'मैं' है तो तू नहीं,
जो 'तू' है मैं नाहिं।
प्रेम-गली अति साँकरी,
जा में दो न समाहिं॥

प्रेमयोग में भी लिखा है—

इक रङ्गी बिनु कारनहिं,
इक रस सदा न समान।
गनहिं प्रिय सर्वस्व जो,
सोई प्रेम समान॥

प्रियतम की प्राप्ति के लिये अपने पिता, भाई मां आदि सब परिजनों को क्या छोड़ देती है। जिस प्रकार विद्युत-गृह से ही बिजली सब ओर जाती है, उसी प्रकार वह अपने जीवन की सम्पूर्ण अभिलाषाओं को 'एक' में केन्द्रित करती है, और उसी को आत्मसमर्पण करती है। इसी से तो विवाह का इतना महत्व है। स्त्री के इस आत्मोत्सर्ग के कारण ही यह सम्बन्ध चिरस्थायी रहता है, इस लिये समाज में स्त्री विशेष आदर की दृष्टि से देखी जाती है।

बिन्दराबन से चलिय गवन्गी,
कजरी वन मंह आई, मेरे राम जी।
कजरी वन में सिंह धड़कैं,
सिंह नै घेरी है आई, मेरे राम जी॥
सुन रे सिंहनी जाये मुझे मत भछियो.
घर पै बछड़ रांभैं, मेरे राम जी।
चाँद सुरुज मेरे साखी हुइयो,
बछड़ चुंघातेई आई, मेरे राम जी।
गंगा जमना मेरे साखो हुइयो,
बछड़ चुंघातेई आई, मेरे राम जी।
कजरी बन ते चलिय गवन्गी,
बिन्दराबन मंह आई। मेरे राम जी।
ले रे बछड़ दुधवा चूंघ ले,
बचनों की बांधी माय, मेरे राम जी!
बच्चों का दूध अम्माहरबी ना पीयूं,
चलूंगा तुम्हारे साथ, मेरे राम जी।
आगे बछड़ पीछे गवन्गी,
कजरी बन मंह आई, मेरे राम जी।
ले रे मामा मुझे भछ करले,
पीछे गवन्गी माय, मेरे राम जी।
काहे का मामा, काहे का भानजा,
काहे की गवन्त्री भैन, मेरे राम जी।
सत का मामा, धरम का भानजा,
नेम की गवन्त्री भैन, मेरे राम जी।
अपने भानजे को मैं लाख टके दूंगा,
अतलस-मसरू भैन, मेरे राम जी।
लेइ लाइ कै चलिय गवन्गी,
बिन्दराबन महं आई, मेरे राम जी।
किस नैं रे मेरे बेटा सिख बुध दीन्ही,
किस नै पढ़ाये चटसाल, मेरे राम जी।
अम्माँ नैं मेरी अम्मा सिख बुधि दीन्हीं,
पिता ने पढ़ाये चटसाल मेरे राम जी।
सोने से मेरे बेटा खुर मढ़वा दूँ,
रूपे से दोनों सींग, मेरे राम जी।
अपने बेटा पै मैं सब कुछ वारूँ,
ऐसा मीठा बोल, मेरे राम जी।

कैसी प्रभावोत्पादक सोहर है। गाय के रूप में किसी स्त्री ने अपना हृदय चित्रित किया है। स्त्री

दुष्टों के फन्दे में फँस गई। उसे अपने प्यारे पुत्र की याद हो आई। माँ का प्यार अतुलनीय है। वह अपने बच्चे को एक क्षण के भी लिए विस्मृत नहीं कर सकती। अन्त में पुत्र ने अपनी बोली से उसकी रक्षा करली। मधुर भाषण की शक्ति अपरिमित है। एक कवि ने कहा है—

कागा का को धन हरे, कोयल का को देत।
मीठे सबद सुनाय कै, मन सबको हरि लेत॥

मीठे शब्द मुख में मिश्री-सी घोलते हैं। भाई-बहन और मामा-भानजा के सम्बन्ध अपूर्व प्रेम से परिपूर्ण हैं, और इन सम्बोधनों में एक प्रकार का ऐसा आकर्षण है, जो श्रोताओं पर मोहिनी डाल देता है। माँ पूछती है, 'बेटा' तुम्हें इतनी अच्छी शिक्षा किसने दी है ?' पुत्र का उत्तर कैसा सुन्दर है !

'हे माँ, तुम्हींने तो मुझे मधुर भाषण की यह उत्तम शिक्षा दी है और अपने माननीय पिता की प्रेम पाठशाला में पढ़कर ही मैंने ज्ञानार्जन किया है।'

सच है, माता-पिता से बढ़ कर कोई गुरु संसार में नहीं है। माता के विचारों का शिशु पर गर्भावस्था से ही प्रभाव पड़ता है, और जन्म के पश्चात भी माँ-बाप के आचरणों को अप्रकाश्य रूप से बच्चे सीखते हैं। नवयुग के सभी शिक्षा-विशेषज्ञों ने इसे स्वीकार किया है। पाँच वर्ष की अवस्था तक बच्चे के जैसे संस्कार बन जाते हैं, वह जीवन भर अमिट रहते हैं। इस प्रकार यह गीत हमें बतलाता है, बल्कि ग्रामीण-युवतियों ने भी इस की उपयोगिता को स्वीकार किया है।

सासू कहेगी बहुड़िया, ननद मेरी भरजिया।
राजा मेरा कहेगा यंभोटिया, जीवन कैसे होयगा।
मेरे री अंगना आमला, अरे लहर लहर करै।
राजा अमला की डालों कटवाय, महक हमें आई।
जूते मारूँगा पचास, पलइयाँ मारूं डेढ़ सै।
गोरी महलों से करूंगा जवाब, चली जाओ बाप कै।
इक वन उलूखा, दूजा वन उलूखा,
तीजे में गङ्गा हिलोरें।
मेरे बीरा मल्हा के डरै क्यूं ना आओ।
जल्दी से नाव डलाओ, जाऊँगी अपने बाप कै।
आज बसो मेरी सेज, सबेरे डालूं नाव,
सबेरे जाना बाप कै।
मल्हा मूँछों पै धरूँगी अँगार,
डाढ़ी तो मूँडूं तेरे बाप की।
चन्द्र बदन हीरे लाल, सेजों पै छोड़े एकले।
मार कछाला तिरिया उतर गई,
मल्हा का मींजे दोनों हाथ,
गजब तिरिया कर गई।
एक पग दीया है देहल पै, दूजा पलंग पै,
ए जी होय पड़े नंदलाल, अखियाँ खुल पड़ीं।
जो लाला होते अपनी दादी के, अपनी ताई के।
लाला साबसोने की अजुध्या,
मैं दोनों हाथों से लुटावती।
अब लाला हुए हो अपने नाना के अपने मामा के।
बेटा अब मेरी कछु ना बसाय,
विपति में सम्पत भई।
जो लाला होते दादा के घर, ताऊ के घर,
लाला बजते तबल निसान, गवन लगते सोहिले।

स्त्री के सन्तान नहीं है। वह सोचती है कि यदि जीवन भर मेरे बच्चा न हुआ तो सास ननद और पति के प्रेम से मैं वञ्चित होजाऊंगी। ऐसी दारुण कल्पना करके कौन ऐसी स्त्री होगी, जो न सिहर उठे। प्रेम-हीन जीवन उस श्मशान के समान है, जहाँ निरन्तर ही चितायें धधका करती हैं। नारी के मुख पर प्रेम ही की आभा है। प्रेम-शून्य नारी का जीवन मृत्यु से भी अधिक यन्त्रणामय है। स्त्री की ऐसी करुण पुकार को सुनकर भगवान् द्रवित होते हैं, और वह गर्भवती होती है। उसने अपने पति से आँगन में लगे हुए आवँले के वृक्ष को कटवा डालने के लिए कहा। पति ने उसका तिरस्कार किया। जिसके लिए वह अपना जीवन बलिदान कर देती है, उसी पुरुष के

द्वारा अपनी छोटी छोटी इच्छाओं को इस प्रकार ठुकराये जाते देखकर कौन ऐसी स्त्री होगी जिसका हृदय टूक-टूक न होजाये। उसका हृदय अपमान की तीव्र ज्वाला में झुलस उठा और उसका सारा ज्ञान लुप्त होगया। वह बिना सोचे विचारे ही पिता के घर जाने को तय्यार होगई। यद्यपि पिता के यहाँ बिना बुलाए जाने में कोई हानि नहीं है, तथापि पति से रूठकर जाने में तो कहीं भी सम्मान नहीं होता। तुलसीदासजी ने ठीक ही लिखा है—

जदपि मित्र, प्रभु, पितु, गुरु गेहा,
जइय बिनु बोले न संदेहा।
तदपि विरोधमान जहँ कोई,
तहाँ गए कल्यान न होई।
'एकहिं से सब होत हैं, सब तें एक न होत।'

पति-पत्नी का कर्तव्य है, कि छोटे छोटे झगड़ों को स्वयं ही सुलझालें और कानोंकान किसी को खबर भी न होने दें। गार्हस्थ्य जीवन में स्त्री को अत्यन्त सहनशीला बनना पड़ता है। जो स्त्रियाँ ऐसा नहीं करतीं वह दुख भोगती हैं, और गृहलक्ष्मी के गौरवमय आसन से पतित होजाती हैं।

स्त्री यद्यपि पति से रूठकर आई थी, तथापि उसमें पातिव्रत और आत्मगौरव की मात्रा भी कम न थी। उसने नाविक को कैसा करारा उत्तर दिया है—

'हे मल्लाह' तेरी दाढ़ी और मूंछ जला देने के योग्य है। तू पुरुषत्व का अधिकारी नहीं है। जिस स्त्री ने 'भाई' कहकर सम्बोधन किया, उसका भी तू अपमान करने को तत्पर है। 'भय्या' जैसा मधुर शब्द भी जिस पर कोई प्रभाव न डाल सके, वह 'मनुष्य' की पदवी का अधिकारी नहीं है। ऐसे पामर को जन्म देने वाला पिता भी दाढ़ी मुड़ाने के योग्य है।" फिर वह गौरव से कहती है—

"हे नीच, मेरे पति का मुख चन्द्रमा के समान उज्ज्वल है। हीरे और लालों की-सी उनकी शोभा है। उन्हें क्या शय्या पर अकेला ही मैं इसलिए छोड़ आई हूँ ?"

भारतीय नारी की नस नस में जौहर-व्रत-धारिणी पद्मिनी का रक्त प्रवाहित है। जैसे हाथ लगाने से सर्प काट लेता है, उसी प्रकार कोमल-हृदया भारतीय नारी अपने सतीत्व पर आक्रमण होता देख मानों गहन निद्रा से जाग उठती है। और उसके मुख पर वही प्राचीन गौरव आलोकित हो उठता है।

अन्तिम पंक्तियों में स्त्री के हृदय की वेदना झलक रही है। उसका हृदय पश्चात्ताप की वह्नि में धधक रहा है। वह अपने नवजात शिशु को सम्बोधन करके कहती है—

'हे पुत्र, यदि आज तुम अपने पिता के यहाँ होते, तो तुम्हारे बाबा, ताऊ और पिता कितने प्रसन्न होते और कितना उत्सव मनाया जाता! मैं दोनों हाथों से धन दान करती। किन्तु मेरे लाल, तुम अपने नाना, मामा के यहाँ उत्पन्न हुए हो। तभी तो मनोहारिणी सौहर की ध्वनि सुनने से वञ्चित हो।

अजी रामहिं लछिमन दोनों भइया,
वे वन खण्ड कूँ जायं।
यू बिपति पड़ी सीता पै, मैं सासू के घर होती।
हरे।
अनहोते दरब लुटाती, मैं सासू के घर होती।
हरे।
अरे दाई री माई सबै बुलाती,
अन्त बधाई घर करती।
चार सखी मिल मंगल गातीं,
घर घर भाजी बाँटती। मैं सासू॥
अरे दस री महीना सीता बोझ मरी है,
बहकी फिरै है बन में।
अरे भर भर आँसू रोती, मैं सासू के घर होती।
हरे।

अरी माल दरब मेरे भौत भुतेरे,
चुन्नी की मेरे लगी री चिनाई।
बैठी दरब लुटायों जा,
तू सासू के मत जइयो री बेटी। हरे।
अरे आग लगे तेरे माल दरब में,
जल जइयो सब गहना रे वामें।
ऐसे में भगवान मिलें कोइ अपने पुरुख संग जाती।
॥ मैं सासू ॥

महारानी सीता की विपत्ति ने स्त्रियों को बहुत ही प्रभावित किया है। स्त्री होने के नाते उन्हें नारी-हृदय का अधिक ज्ञान होना स्वाभाविक ही है। इसलिये प्रातः स्मरणीया देवी सीता के चरित्र को उन्होंने अपने अपने भावों के अनुसार नाना भाँति से गाया है। हिंदू समाज में आये दिन ऐसी घटनायें घटित होती रहती हैं, जब कि सती-साध्वी स्त्रियों को मिथ्या कलङ्क के भय से निकाल दिया जाता है, और हिंसक पशुओं से भरे हुये संसार में निराधार छोड़ दिया जाता है। सीताजी का दुख भारतीय नारी का दुख है। इसलिये उसे उन्होंने ऐसी करुणा-जनक भाषा में व्यक्त किया है, कि रोना आता है।

गीत कितना भावपूर्ण है। सीता जी वन में अपने पुत्रों के जन्म पर विलाप कर रही हैं। 'हाय' यदि आज मैं अपनी सास के घर होती तो कितना दान करती और कितने उत्सव मनाती।'

हिंदू परिवार में संयुक्त-परिवार की प्रथा संसार से निराली है। आजकल यह प्रथा दूषित हो गई है, किन्तु प्राचीन काल में यह प्रथा कितनी हितकर थी। कन्या अपने मात-पिता के स्नेहाञ्चल से विलग हो जब ससुराल में आती थी, तब सास-ससुर की प्रेममयी गोदी में उनका वियोग-विह्वल-हृदय शान्ति पाता था। देवर-जेठ, ननद, देवरानी-जेठानी आदि भाई-बहिनों के समान व्यहार करते थे। आजकल भी यह प्रथा कहीं-कहीं बहुत ही मधुर रूप में विद्यमान है, यद्यपि अधिकांश स्थानों पर इसके खंडहर ही अवशिष्ट हैं, और इसके प्राचीन सुखमय रूप की स्मृति दिलाते रहते हैं। गीतों में सर्वत्र इसका वर्णन है।

सीता को दुखी देखकर जनक जी कहते हैं—"प्यारी बेटी, मेरे पास बहुतेरा धन है। रत्नों की मेरे पास कमी नहीं है। तू जितना चाहे दान कर। अब भी तुझे ससुराल याद आता है, जहाँ इतना अपमान हुआ था? अब वहां न जाना।" सीता कहती हैं—

"हे पिता, तुम्हारा धन मेरे किस काम का। यदि अब भी मेरे पति मुझे ग्रहण कर लें, तो मैं उनके साथ चली जाऊं।" भारतीय-नारी की नस-नस में पातिव्रत कूट कर भरा है। भारतीय नारी का आदर्श तुलसीदास जी ने इस प्रकार वर्णन किया है—

वृद्ध रोग बस जड़ धन-हीना,
अन्ध, बधिर, क्रोधी अति दीना।
ऐसेहु पति कर किय अपमाना,
नारि पाव यमपुर दुख नाना।

हिन्दू-ला में स्त्री विवाह के पश्चात् पिता की किसी भी वस्तु की अधिकारिणी नहीं है। भारतीय-नारी शैशव से ही उसे जानती है। अतः पति से अपमानित होकर पिता के पास रहना उसे आश्रित जीवन के समान प्रतीत होना स्वाभाविक ही है। इसमें उसके पति की निन्दा है। 'विवाह' के द्वारा दो आत्मायें एक होती हैं, और हृदय से उन में कोई भेद नहीं रह जाता। ऐसी अवस्था में पति की निन्दा पत्नी की निन्दा है, और पत्नी की निन्दा पति की निन्दा है। तुलसी जी ने कहा है—

यद्यपि जग दारुन दुःख नाना,
सब से अधिक जाति अपमाना।

हिन्दूनारी पति से अपमानित होकर संसार में मुंह दिखाना भी पाप समझती है, और पति की छत्र छाया में वह कुटियों में भी महलों का सुख पाती है। पति के हृदय की रानी बन कर वह

जिस आल्हाद का अनुभव करती है, वह पति के प्रेम से वञ्चित हो कर दुनिया का शासन पा कर भी नहीं कर सकती। उस प्रवृत्ति के कारण महिलाओं ने 'सीता' को आदर्श बताया है, और विपत्ति के समय में उसी स्मरणीया देवी की मूर्ति उनके जलते हृदय को शान्ति और उत्साह प्रदान करती है। इस युग में जब कि हमारे भाई विदेशी-सभ्यता के जाल में फंसने के लिये शीघ्रता से दौड़े जा रहे हैं, और उस आग के गोले ने उन की दृष्टि को चकाचौंध कर दिया है, हमारी बहिनें ही गार्हस्थ्य-जीवन की रक्षा किये हुए हैं, और भारत को रसातल में जाने से रोकने में सतत प्रयत्नशील हैं। वह अशिक्षिता हैं, इतिहास से अपरचित हैं, इस लिये उन के गीतों में ऐतिहासिक त्रुटियां बहुत पाई जाती हैं। जनक जी का सीता जी से वन में वार्त्तालाप कहीं नहीं पाया जाता, परन्तु अक्सर पुत्री को दुखी देख कर पिता ही सान्त्वना देते हैं, संसार से तिरस्कृत हो कर यदि उसका हृदय कुछ शान्ति पा सकता है, तो वह उन्हीं की छाया में। इसलिये सीता जी के लिये भी गीत-रचयित्री ने यही कल्पना की है। वह तो केवल राम और सीता के नाम से परिचित हैं। अपनी दशा के अनुसार ही वह उनकी भी कल्पना करती है, और अपनी विपत्ति के समान ही उनकी विपत्ति को समझ कर वह रो उठती है।

किस घर मौला है अमवा,
किस घर नारियल बेया जी।
किस घर चुवै है मजीठ।
बाप घर मौला, सुसर घर नारियल,
मंइयाँ घर चुवै है मजीठ।
बोलो घर के पुरोहित,
पुस्तक लाओ और बाँच सुनाओ जी।
माँ उनकी कहिये रानी,
बाबल कहिये राजा जी।
भइया अर्जुन वीर, बहन राधा रुकमन।

बोलो वर के पुरोहित,
पुस्तक लाओ और बाँच सुनाओ जी।
माँ इसकी कहिये नटनी,
बाबल इसका नटवा जी।
पाँचों भइया चोर उचक्के,
भैन दारी उरखनी।
इतना बचन सुन जच्चारानी रूस गई।
दे लई चन्दन किवार,
होलर लइ कै पड़ि रहीं।
बाहर से आये कवन रामा,
ये मन रहंसत, ये मन बिलखत।
गोरी खोल डारो चँदन किवार,
होलर दिखलाओ।
मैं नटनी की हूँ जाई, तुम्हें ना दिखाइये।
गोरी खोलो न चँदन किवार,
होलर दिखलाइये।
माँ थारी गङ्गा-जमना, बाबल राजा सूरज
पाँचों भइया अर्जुन वीर,
बहन निरमल चाँदनी।

इस गीत में भी मातृत्व का महत्व दर्शाया गया है। विवाह के समय कन्या का पुरोहित कहता है—"कन्या के पिता राजा हैं, और माता रानी है। पांचों भाई वीर अर्जुन के समान हैं और बहिन रुक्मणि तुल्य है।" वर-पक्ष का पुरोहित कहता है—

'नहीं, कन्या की माता नटनी और पिता नट हैं। पांचो भाई चोर उचक्के हैं। इसकी बहिन वेश्या है।"

गाँवों में इस तरह के हास्य की प्रथा है किन्तु यह हास्य सभ्यता का अतिक्रमण कर गया है। कन्या भला अपने माता-पिता और भाई बहिनों का इतना अधिक अपमान कैसे सहन करे! किन्तु अवसर न जान कर उसे उस समय चुप रहना पड़ा।

[शेष पृष्ठ १२८ पर]

शाहजहां

[श्री जगदीश प्रसाद चतुर्वेदी]

श्यामा संध्या आई नूतन साज सजाकर।
शाहजहाँ चल पड़ा प्रेयसी की समाधि पर॥
सरल शाँति नीरवता छाई सभी ओर थी।
केवल यमुना कल-कल का कर रही शोर थी॥
जिसमें करुणा मानों बिखरे हुए अश्रुदल।
बहा रही थी बना-बना निर्मल उज्ज्वल जल॥
दिग्दिगन्त जब शाहजहाँ के लोचन गड़ते।
शब्द उसे कुछ अन्तरिक्ष में यूँ सुन पड़ते॥
मानों उसको बुला-बुला कहता था कोई—
"आओ हे सम्राट! अकेली मैं हूँ सोई।
क्या जीवन पर्य्यन्त कभी यह हो सकता है?
क्या फणि अपने प्रिय मणि को भी खो सकता है?
मृत्यु भिन्न क्या कभी मुझे तुमसे कर लेगी?
नहीं कभी ऐसा होगा पृथ्वी पलटेगी,
अग्नि प्रचंड सूर्य्य की ठंडी हो जावेगी।
शीतल चन्द्र रश्मि ऊष्णता बरसाएगी॥"
शाहजहाँ सुन-सुन कर अति व्याकुल होता था।
अपनी प्रेयसि की ही प्रिय स्मृति में रोता था॥
याद उसे बातें अतीत की जब आती थीं।
शूल सदृश मानस में उसके चुभ जाती थीं॥
सरस ज्योत्स्ना शशि की नृत्य किया करती थीं।
प्रभा चन्द्रिका की मन मोह लिया करती थीं॥

न्ध वृष्टि जब पृथ्वी का आनन धोती थीं।
नाव डाल यमुना में जल-क्रीड़ा होती थी ॥
प्रेम-सुधा का पान युगल प्रेमी करते थे।
अहा ! मधुर प्रेमासव के झरने झरते थे ॥
धीरे धीरे रात्रि बीतती प्रेमी सोता,
वक्षस्थल पर शीश प्रेमिका का ही होता।
नहीं उन दिनों ध्यान कभी ऐसा आता था,
हाय विदित था नहीं चार दिन का नाता था।
पर उसका सुख अब तो विधि ने नष्ट किया था।
रोते रोते दिन कटते थे, वह दुखिया था ॥
यद्यपि अब भी थी बसंत मुस्काती आती।
कोयल भी थी मृदु स्वर से वैसा ही गाती ॥
किंतु रम्य उद्यान प्रेम का उजड़ चुका था।
जीवन का आनंद कहाँ उसको मिलता था ॥
कुसुमों की सुवास उसे अब नहीं सुहाती।
उसी प्रेममय जीवन की बस याद सताती ॥
पुष्प-वाटिका में जब यदा-कदा वह आता।
सुख कैसा, वह तनिक सांत्वना भी नहिं पाता ॥
प्रिय के साथ विचरना कैसे विस्मृति होता।
कैसा सुख आनंद अहिर्निश वह था रोता।

*   *   *

बैठ गया सम्राट प्रेयसी की समाधि पर।
रात्रि बिताई उसी क़ब्र पर उसने रोकर ॥
नयनों ने हो अरुण, सलिल का श्रोत बहाया।
बीती सारी रात्रि भोर होने को आया ॥
उसी समय मुर्गे ने भी आवाज़ लगाई।
कानों में आवाज़ अज़ाँ की पड़ी सुनाई ॥
नीरवता होगई भंग ऊषा मुसकाई।
चारों ओर ज्योति झलकी दिनकर की छाई ॥
शीश उठाया शाहजहाँ ने कहा—"सवेरा
हुआ, चलूँ आऊँगा फिर संध्या की बेरा ॥"

जीवन-आहुति

[श्री आदर्श कुमारी]

रात-भर वर्षा हुई। ऐसा जान पड़ता था मानों सम्पूर्ण संसार का पानी बादल बनकर ऊपर चला गया है, और अब मेंह का कभी अन्त ही न होगा। मेरा जी घबरा उठा। जिधर देखो उधर पानी ही पानी। चारपाई पर जाकर लेटी। संभव है थोड़ा समय नींद आने पर ही कट जाय। अभी नींद न आई थी, हाँ, पलक कुछ-कुछ भारी हो गये थे कि कुसुम और शशी में द्वन्द्व-युद्ध छिड़ गया। रबर के खिलौने पर दोनों ही अपना-अपना समानाधिकार दिखा रही थीं। मैं झल्ला उठी, खिलौना उनसे छीन लिया। पर मेरे क्रोध ने उनके रोदन को और बढ़ा दिया। विवश मुझे अपना वह व्यवहार छोड़ना पड़ा।

भागते बादलों की ओर संकेत कर मैंने कहा "शशी देख, यह तेरा हाथी है, देख एक पैर उधर है, एक यह है, और दो वह। चारों हो गये न? और देख वह लम्बी सूँड़।"

"तो जीजी! जब हाथी सूँड़ में से पानी फेंकता है तभी तो मेंह बरसता है न?" शशी ने चुप होकर कहा। पहिले निकले आँसू अब भी बह रहे थे।

मैंने रूमाल से उन्हें पोंछकर कहा, "हाँ बीबी, हाथी पेट में पानी भर लेता है, और जब सूँड़ में होकर निकालता है;' तब पानी बरसता है।"

"जीजी यह ऊँट! देखो, वह भागा जा रहा है। इसे तो मैं लूँगी।" सिसकती कुसू ने कहा।

मैंने कहा, "अच्छा।"

फिर दोनों चुप हो गये।

मैं भी उन्हें छोड़ दूसरी ओर चली गई।

कुर्सी पर बैठ मैंने फिर नैपोलियन की जीवनी उठाई। थोड़ा सा पढ़ा। पर जी घबरा उठा। वह नैपोलियन जिसने अपने बाहु-बल से फ्रांस को ही नहीं सम्पूर्ण संसार को हिला दिया था—वह वीर जिसका नाम बच्चे-बच्चे की जिहवा पर था, वह साहसी नैपोलियन जिसका उद्देश्य फ्रांस के आधिपत्य में संसार को जीत स्वयं मुकुट-धारी राजाधिराज बनने का था, वह हिम्मत न हारने वाला व्यक्ति जिसकी कीर्ति ध्वजा संसार में फहरा रही थी—अब साधारण व्यक्ति की भाँति ऐल्बा में बन्दी था।

पर भला उस साहसी पुरुष का उत्साह, उसके बड़े-बड़े उद्देश्य, उस छोटे से द्वीप में समाने वाले कहाँ थे। लम्बे-चौड़े विस्तृत-राज्य के स्वप्न ने उसके हृदय को हिला दिया। वह निकल भागा। किन्तु फ्रांस अब पुराना फ्रांस न था। फिर भी उसका साहस कम न हुआ। पुराने सिपाहियों को अपने विरुद्ध खड़े देख, उसने कोट के बटन हटाकर हृदय खोल दिया और बोला—

"सिपाहियो! तुम गोली चला सकते हो! क्या अब तुम मुझे अपने राजाधिराज के स्वरूप में नहीं मानते? क्या अब मैं तुम्हारा जनरल नहीं हूँ?"

और इन शब्दों ने अपना पूरा असर दिखाया।

रक्त की एक बूँद न गिरी और वह थोड़े से समय (सौ दिन) तक राज्य करने को फिर फ्रांस का 'सब कुछ' बन गया । पर उसकी शक्ति का ह्रास करने के लिये कीड़ा पहिले ही से लग गया था । समय ने पलटा खाया ।

अबका पतन सर्वदा के लिये था !

वाटरलू के युद्ध ने उसकी सभी आशाएँ मिट्टी में मिला दीं । वह अब एक साधारण व्यक्ति की भाँति सेंट हैलीना में बंदी था । अब उसका कोई न था । उसकी स्त्री "आस्ट्रिया की राजकुमारी" ने भी उसे छोड़ दिया, और वह दूसरे की हो रही ।

वह वीर पुरुष जो कहता था—"कार्य ही मेरी मूल-वस्तु है । मैं कार्य करने ही के लिये पैदा हुआ हूँ और बनाया गया हूँ ।" और जिसने वाटरलू के चार दिन के घमसान युद्ध में कठिनाई से २० घंटे का विश्राम लिया था और ३७ घंटे से अधिक घोड़े की पीठ पर बिताये थे, एक छोटे से द्वीप में पड़ा जीवन के दिन गिन रहा था ।

ओफ़, कैसा उत्थान था और कैसा पतन !

मेरा जी एकदम घबरा उठा । ऐसा मालूम हुआ, मानों अपने ही किसी आत्मीय का ऐसा हाल हुआ । हृदय बहुत भारी हो गया ।

जी बहलाने को बाहर बरांडे में मैं कुर्सी पर जा बैठी, वर्षा अभी हो रही थी, पर मेरा ध्यान उधर न था । नैपोलियन के जीवन-चरित्र ने विचार-धारा बाँध-सी दी थी । वही विचार बार-बार आते थे ।

न जाने कब तक आते कि सहसा मेरी कुर्सी के पास किसी के गिरने का शब्द हुआ । मैंने मुड़कर देखा, एक कबूतर का छोटा-सा बच्चा था, मेरा ध्यान उसकी ओर हुआ । मैंने ऊपर देखा । नीम के पेड़ की घनी डालियों के बीच बने घोंसले से वह नीचे आ पड़ा था । उसे उठाकर मैंने हाथ पर रख लिया । नन्हा सा था, पंख छोटे-छोटे से निकले थे, और वह अभी तो एक माँस का लोथड़ा ही था । मैंने उसके ऊपर हाथ फिराया, बड़ा मुलायम था । उसकी चोंच पकड़कर मैंने अपनी ओर की । इस सहानुभूति के लिये उसने मेरी ओर एक बार देखा । मुझे उससे विशेष मोह हो गया ।

थोड़ी देर हुई होगी कि उसकी माँ आ गई, सीधी घोंसले में गई, पर बच्चे को न पाकर चारों ओर बेकल हो देखने लगी । मैंने उसे एक ओर पृथ्वी पर रख दिया । माँ चोंच में भरे हुए दाने के कारण कुछ बोल न सकी । हाँ, अपने बच्चे की इस दशा पर वह सुन्न-सी हो गई । जिस साहस से वह उड़ कर आई थी, वह अब न रहा । वह कुछ बेचैन थी । फिर बच्चे के पास आई । बच्चा माँ को देख कर उछल पड़ा । नन्हें-नन्हें पैरों से उसकी ओर खिसकने का प्रयास करने लगा । माँ ने चोंच खोलकर दाना उसकी चोंच में रख दिया, फिर बोली—

"बेटा ! तू यहाँ कैसे आया ?"

"क्या पूछती है अम्माँ, मैं घर में बैठा था । भूख से प्राण छटपटा रहे थे, तुम्हें देखने को ज्यों ही मैंने मुँह निकाला कि हवा के झोंके ने मुझे नीचे गिरा दिया ।"

माँ बेकल हो गई, जल्दी से बोली,

"हाय बेटा ! कहीं लगी तो नहीं—इतने ऊँचे से गिरा था ! हाय ! नहीं जिन्दगानी हुई ।"

फिर माँ ने बेटे को चोंच से चोंच मिला कर प्यार किया ।

मैंने यह सब देखा । माँ के प्रेम और सहानुभूति का अनुभव किया ।

नीचे लटकी डाल में मैंने थोड़ी-सी घास रख दी, बच्चे को भी उसी में रख दिया । माँ-बेटे अब दोनों उसी में रहने लगे । पुराने घर को तो मानों अब भूल-सा गये ।

* * *

इस घटना को कई दिन बीत गये । मेरा अधिकतर समय उसी बच्चे के साथ कटता था । उसके पंख बड़े-बड़े हो गये थे और वह उनके सहारे धीरे-धीरे चल लेता था ।

मैं चने के दाने और रोटी के टुकड़े उस के लिये डाल देती और वह अपने घोंसले से गिर कर पंखों के सहारे नीचे आ जाता और उन्हें खा लेता, फिर कृतज्ञता की दृष्टि से मेरी ओर देखता और मैं उसे उठाकर उस के घर में रख देती। वह घोंसले में बैठा-बैठा मेरी ओर देखता रहता। मैंने उसका नाम 'मोती' रख दिया था और मानों वह भी समझने लगा था कि 'मोती' उसी का नाम है।

मैं पुकार कर कहती, "मोती आओ!" तो वह कूद कर तुरन्त मेरे पास आ जाता। मैं प्रेम से हाथ में उठा लेती। यों ही दिन चलते गये।

कुसू और शशी भी बड़ी हो गई थीं। वह दोनों भी मोती से खेलती रहतीं, वह भी उन से विशेष प्रेम मानता था।

मेरा मोह मोती की ओर बढ़ता ही गया। उसके सुख-दुख मेरे सुख-दुख हो गये। एक दिन कुसू ने उसे बुलाया। वह अपनी माँ के पास बैठा था, वह न आया। कुसू को बुरा लगा। उस ने एक बाज़ार से रबर का कबूतर मँगाया, और उसे दिखा कर बोली "ले देख मोती! अब मैं तेरे साथ कभी न खेलूँगी। मेरे बुलाने पर तू नहीं आया। मैं अब इस को, देख इसको खाना खिलाया करूँगी।"

मोती ने ये शब्द सुने और मानों उसके शरीर में लग-से गये। वह सुस्त हो गया। दोपहर बीत चला। उसने कुछ भी न खाया। सबेरे के दाने ज्यों के त्यों पड़े थे। मैं आई। देखा, मोती बैठा आँसू गिरा रहा है।

मैंने आवाज़ दी—

"मोती, मोती, आओ।"

पर वह हिला भी नहीं, वहीं बैठा रहा। जभी कुसू आई। रबर का कबूतर हाथ में था। बोली—

"जीजी, मैं अब इसके साथ न खेलूँगी। मैंने सबेरे इसे बुलाया, और यह न आया। जीजी! मैं तो अब इस रबर के कबूतर के साथ खेलूँगी। मैंने मोती से भी यही कह दिया है।"

मेरी समझ में आ गया। मोती को दुख हुआ है। मैंने उसे घोंसले से पकड़ लिया। और दो दाने उसकी चोंच खोल कर डाल दिये। उसने उन्हें खा लिया और मानों पुरानी बात को वह भूल-सा गया।

मैं उसे लिये माँ के पास पहुँची और बोली "अम्मा देख, यह कुसू मेरे मोती से लड़ती है। आज बिचारे ने सबेरे से कुछ भी नहीं खाया, इसने उसे इतना गुस्सा कर दिया।"

मोती ने भी सुना। उसने अपना शरीर फुलाया। मानों कुसू की बुराई वह स्वयं माँ से करना चाहता था। उसके जी में बहुत-सी बातें भरी थीं और मानों उसके शरीर में समाती ही न थीं।

वह मेरे हाथ से माँ की ओर कूद पड़ा, माँ के सामने खड़ा हो अपने हृदय की व्यथा सुनाने ही वाला था कि पास ही के कमरे से बिल्ली झपटी। उसने मोती की गर्दन पकड़ ली। हमारी मानों जान-सी निकल गई। हाथ-पैर बहुत पीटने पर बिल्ली ने उसे छोड़ तो दिया, पर मोती अब इस संसार में नहीं था।

उसकी गर्दन पर दो दाँत गड़े थे, जिन से रक्त की बूँदें गिर रही थीं। मैंने झटपट पानी लाकर धोया। बूरा भरकर पट्टी बाँधी। पर मोती के शरीर में जान न थी। मेरे हृदय में ऐसा जान पड़ रहा था, मानों कोई मेरा आत्मीय-जन चला गया। उसके नेत्र बन्द थे और वह चैन की नींद सो रहा था। मुझे जीवन की क्षण-भंगुरता पर बड़ा दुख हुआ।

मोती की माँ आई। पहिले सीधी घोंसले में गई, पर मोती वहाँ न था। उसने ढूँढ़ा, मोती आँगन में पड़ा था।



श्री विमला बाई अवस्थी



श्री आदर्श कुमारी



श्री शन्नो देवी

POPULAR PRESS, DELHI.

वह उसके पास आ गई, उसकी चोंच में थोड़ा-सा खाना था। मोती को खिलाने को हुई पर उसने न खाया। माँ घबरा-सी गई। खाना एक ओर फेंक दिया, उसने घबराकर पूछा—

"बेटा ! क्या हुआ ?" पर बेटा वहाँ न था। माँ को मालूम हो गया कि मोती चला गया। वह रो न सकी। रोने का प्रयत्न किया, पर आँसू न निकले। मानों उसका जी बहुत भरा था। वह कुछ बोल भी न सकी। शरीर को बार-बार फुलाती थी। मानों कहने भर को उसके पास बहुत-कुछ था किन्तु उसका मुँह किसी ने पकड़ लिया था। थोड़ी देर ऐसा ही होता रहा, पर उसका दुख हलका न हुआ। उसने फिर एक बार प्रयास किया कि थोड़ा रो ले, और हृदय की व्यथा को आँसुओं में बहा दे। लेकिन रो न सकी। आँखों के पलक भी भारी थे, और उसका जी भी भारी था। वह न जानती थी कि उसका एकमात्र सहारा मोती भी चला जायगा, किन्तु वह चला गया। माँ का शरीर सन्न हो गया, मानों अपने पुत्र के चले जाने के दुख को अनुभव करने के लिए उसके शरीर ही नहीं था, और न मानों पुत्र के अन्तिम समय पर आँसू बहाने के लिए उसकी आँखों में पानी था।

एक बार रोने की उसने चेष्टा फिर की। आँखें बन्द करके उसने जी पर जोर लगाया कि दो आँसू टपटप गिर पड़ें और फिर वह भी भरकर रो ले... कि घातक बिल्ली ने झपट कर उसकी भी गर्दन पकड़ ली। वह तो अपने को भूली बैठी थी, उसके पंजे से न बच सकी।

मैं भी झपटी, और उसे छुड़ा लिया; पर उसकी भी जीवन-लीला समाप्त होगई। फिर भी उसे बचाने का प्रयत्न मैंने किया। उसके मुँह में पानी डाला, पर वह तो अपने बेटे के पास ही चली गई।

मुझे बड़ा दुख हुआ। माँ रोई। शशी और कुसू ने भी अश्रु गिराए।

*　　*　　*

माँ बेटा दोनों पास-पास पड़े थे। दोनों के जीवन का कैसा अन्त हुआ !

घर में बड़ा कोलाहल मचा। सभी का हृदय भारी था। पर वे दोनों चैन से सो रहे थे।

मैंने कहा "क्या जीवन का सार इसी में है ! ये दोनों संसार की व्यथाओं, सुख-दुख से दूर चले गए। माँ का प्रेम ! बेटे के लिए स्वयं भी चली गई। चाहती तो बच जाती, पर वह तो उसके पेट का निकाला था, उसके शरीर का एक अंश था— प्रेम था और माँ की ममता !"

मुझे अचम्भा हुआ—ओह ! ज्ञान-शक्ति-रहित होते हुए भी मातृ-प्रेम का इतना उच्च आदर्श ! बिचारी स्वयं भी चली गई। हाँ, बेटे के लिए ही गई। वह समझ गई थी कि उसका बेटा चला गया। बस इसी लिए उसने भी जान का लोभ न किया, और वह भी चली गई। चाहती तो रह जाती, अकेले क्या दुनिया में रहते नहीं हैं। पर वह क्यों रहती, उसके लिए दुनिया में क्या था। अब तक तो दो थे और अब वह अकेली ही रह गई थी। इसी लिए चली गई।

मैं कैमरा लाई। माँ-बेटा दोनों पड़े थे। मैंने 'फोकस' लिया, और उन दोनों की स्मृति रखने के लिए उनका चित्र ले लिया।

फिर दोनों को सफेद-वस्त्र में लपेटा। जभी सामने लटके कलेंडर पर मेरी दृष्टि गई। ५ मई थी। मुझे ध्यान आया "नैपोलियन भी आज ही के दिन गया था — तो क्या मेरा मोती यदि मनुष्य होता तो नैपोलियन ही बनकर रहता !"

फिर मैंने दोनों को सर्वदा के लिए घर से बाहर एक गड्ढे में सुला दिया। वे दोनों चले गए। मैं घर चली आई। 'प्लेट' धोया— 'प्रिंट' लिया। दोनों मोती और उसकी माँ, पड़े थे। मोती के गले में पट्टी बँधी थी। मैंने एक सुन्दर 'प्रिंट' शीशे में जड़वाया और नैपोलियन के चित्र के बराबर ही लटका दिया।

उसे रोज देखकर दो आँसू गिरा देती हूँ।

माँ के जीवन की आहुति की याद आते ही न जाने कितने आँसू गिर पड़ते हैं। हृदय रो उठता है, और तुरन्त ही नैपोलियन की घटना के साथ-साथ मोती की घटना याद आ जाती है—नैपोलियन के साथ वह आया था और उसी के साथ ही चला गया।

[१२१ पृष्ठ का शेष]

कुछ समय पश्चात् वह पुत्र की माता बनी। तब उसने मानलीला आरम्भ की। उस के पति ने उस से पुत्र दिखाने की प्रार्थना की। उसने उत्तर दिया—

"मैं नटनी की कन्या और चोर–उचक्कों की बहिन हूँ। मेरा पुत्र देखकर क्या करोगे?" तब पति ने उसके सम्बन्धियों की कैसी प्रशंसा की है—

"तुम्हारी माँ गंगा-जमना के समान पवित्र हैं। तुम्हारे पिता सूर्य्य के समान तेजस्वी हैं। प्रियम्वदे, तुम्हारे भाई अर्जुन के समान वीर हैं और तुम्हारी प्यारी बहिन चन्द्रमा की धवल ज्योत्स्ना के समान ब्रह्मचर्य्य की आभा से पूर्ण हैं।"

अब ऐसा क्यों न कहा जायेगा। पत्नी के पिता का घर पति का ससुराल है। ससुराल की निन्दा में उसकी निन्दा है। और अब तो उसकी पत्नी पुत्र-रत्न से सुशोभित है। मनुस्मृति में लिखा है—

"आचार्य्य दस उपाध्यायों से अधिक पूजनीय है। परन्तु माता पिता से भी अधिक पूजनीय है, और शिक्षा देने वाली है।"

वन्देमातरम् और मुस्लिम जगत

[श्री गजेन्द्रनाथ पटैरया]

आये दिन कुछ साम्प्रादायवादी मुसलमान नेताओं ने एक अजीब सवाल को लेकर मुसलमानों के दिलों को कांग्रेस की ओर से फेरने की कुत्सित चेष्टा की है। अतएव यह आवश्यक है कि भारतीय मुसलमानों को खुले शब्दों में यह बता दिया जाये कि इन स्वयं निर्मित नेताओं की निन्दनीय हरकतों के पीछे इस्लाम की सच्ची सेवा की भावना नहीं है, वरन अपने स्वार्थ सिद्धि की इच्छा छिपी हुई है।

प्रथम तो 'वन्दे' शब्द का स्पष्ट अर्थ है "मैं प्रणाम करता हूँ" और "मातरम्" का अर्थ है 'माता को' अतएव इसका अर्थ हुआ "मैं माता को प्रणाम करता हूँ।" इन शुद्ध और सरल शब्दों से किसी भी वर्ण, धर्म और जातिवाले मनुष्य को एतराज नहीं हो सकता। माता सबको प्यारी होती है। और यहाँ भारत भूमि को माता का रूप सिर्फ हृदय में नैसर्गिक प्रेम उत्पन्न करने के लिये दिया गया है।

कुछ मुस्लिम नेताओं ने गायन पर आपत्ति की है उनका कहना है प्रथम तो यह इस्लाम के विरुद्ध युद्ध की घोषणा है। दोयम यह मूर्तिपूजा का प्रतीक है और तीसरे मुसलमानों के विरुद्ध है।

'वन्देमातरम् गान' स्व० वंकिम चन्द्र चटर्जी के प्रसिद्ध उपन्यास 'आनन्द मठ, से लिया गया है। उपन्यास का कथानक ऐतिहासिक-सत्य के आधार पर है। संक्षेप में घटना इस प्रकार है। देश-द्रोही मीरजाफर —क्लाइव की सहायता से— बंगाल के नवाब सिराजुद्दौला को कपट और विश्वासघात से प्लासी के युद्ध-क्षेत्र में हराकर स्वयं बंगाल का नवाब बन बैठा। उस हत्यारे ने सिराजुद्दौला को गद्दी से ही नहीं उतारा वरन् उनकी हत्या तक कर डाली। इस देश-द्रोहता और पातक-कर्म का मूल्य उसे बंगाल की आलमदारी के रूप में मिला। वह नाम का ही नवाब था। पर वास्तव में वह क्लाइव के हाथों की कठपुतली था। फलत: बंगाल का शासन एक नवीन प्रणाली के आधार पर किया जाने लगा। शासन का भार मीरजाफर पर था और आमदनी की वसूली ईस्ट-इण्डिया-कम्पनी के हाथों में। इतिहास से परिचित प्रत्येक व्यक्ति जानता है कि इस नवीन शासन प्रणाली ने किस प्रकार बंगाल की जनता—हिन्दू और मुसलमान दोनों—पर घोर अत्याचार किया। जनता त्राह-त्राह कर उठी। १८७६ के ऐतिहासिक अकाल के समय कम्पनी ने लगान-वसूली में किंचित मात्र भी दया न दिखलाई और उसके मूल स्वरूप जनता में अराजकता फैलने लगी। इन अत्याचारों के विरुद्ध सन्यासियों ने बगावत का झंडा उठाया। इस घटना के आधार पर सन्यासी विद्रोह और तात्कालिक अत्याचारों का कलात्मक वर्णन

स्व० बंकिम बाबू के "आनन्द मठ" उपन्यास का कथानक है।

साम्प्रदायवादी मुसलमानों का यह आक्षेप कि "वन्देमातरम् गान" इस्लाम के विरुद्ध युद्ध की घोषणा है, बिल्कुल निस्सार और असत्य है; क्योंकि 'आनन्द-मठ' में जातीय द्वेष का लेश मात्र भी पता नहीं मिलता। वह तो अत्याचारों की कहानी है। 'अमृत बाजार पत्रिका' में एक विद्वान लेखक ने यह ऐतिहासिक खोज से सिद्ध कर दिया है कि "वन्देमातरम् गान" बंकिम बाबू के "आनन्द मठ" लिखने के बहुत पूर्व लिखा था। अतएव यदि यह भी मान लिया जाये कि 'आनन्द मठ' मुसलमानों के विरुद्ध पुस्तक है तो भी 'वन्देमातरम् गान' पर कोई आक्षेप नहीं किया जा सकता।

साम्प्रदायवादियों का यह कहना कि 'वन्देमातरम् गान' मूर्तिपूजा का प्रतीक है—इस बात का प्रत्यक्ष प्रमाण है कि वे या तो इस गायन के वास्तविक अर्थ से पूर्ण अनभिज्ञ हैं अथवा वे जान-बूझ कर अर्थ का अनर्थ कर रहे हैं। मैं उनका ध्यान "ओरियन्ट इलस्ट्रेटेड वीकली" के ता० २४ अक्टूबर के अंक की ओर आकर्षित करता हूँ। उसमें विश्ववन्द्य महात्मा अरविन्दघोष और मि० ली० आई० सी० एस द्वारा प्रथक-प्रथक 'वन्देमातरम् गान' का इङ्गलिश में अनुवाद प्रकाशित हुआ है। वे देखें कि इस आदर्श गान में कवि ने अपने कलात्मक भावों का किस सुन्दरता से सामंजस्य स्थापित किया है। उसमें "दुर्गा" की वन्दना हिन्दुओं की दुर्गादेवी की वन्दना नहीं है; बल्कि भारतभूमि को दुर्गा का रूप देकर कवि अपनी सात्विक भावनायें प्रगट करता है। वह कहता है "भारत-भूमि रूपी दुर्गा शक्तिवान, सर्वगुण सम्पन्न होकर देश में आनन्द का साम्राज्य स्थापित करें। फिर इसके अलावा समस्त गान तो कहीं भी नहीं गाया जाता है। सिर्फ उन्हीं अंशो का गायन किया जाता है जो कि भारत-भूमि की सुन्दरता, महान शोभा और प्राकृतिक रमणीयता का वर्णन करते हैं। विश्व के प्रत्येक देश में इस प्रकार की स्तुति महिमा की प्रणाली प्रचिलित है। कोई भी देशभक्त चाहे हिन्दू, मुसलमान या ईसाई क्यों न हो अपने देश के ऐसे सुन्दर और विस्तृत वर्णन पर कदापि आक्षेप नहीं कर सकता। क्या यह कहना कि भारत-भूमि में सुन्दर नदियाँ बहती हैं—उत्तम-उत्तम फल फलते हैं, ठण्डी-ठण्डी वायु बहती है। वह सुन्दर है, प्रकृति की अनूठी रचना है, किसी धर्मविशेष वाले को आपत्ति का कारण हो सकता है?

तीसरा आक्षेप यह कि "वन्देमातरम् गान" मुसलमानों के विरुद्ध है बिल्कुल हास्यास्पद है। सम्पूर्ण गायन में कहीं भी इस बात का आभास नहीं मिलता कि यह किसी भी धर्म पर आघात कर रहा है। वह तो जुल्म और अत्याचार के विरुद्ध कवि की आवाज है। अत्याचारी चाहे जिस वर्ग या धर्म का हो इससे लेखक को कोई प्रयोजन नहीं रहता है। उसमें कवि कहता है कि सात करोड़ मानव कण्ठ माता (बंगाल भूमि) की महिमा का गान कर रहे हैं और चौदह करोड़ प्रबल बाहु दुश्मनों से उसकी रक्षा करने को प्रस्तुत हैं। यह वर्णन 'आनन्द मठ' के 'वन्देमातरम्' में दिया गया है। परन्तु प्रचलित गान में सात करोड़ कण्ठों के स्थान में तीस करोड़ कर दिया गया है। ताकि वह आवाज सारे भारतवासियों की प्रतिनिधि कहलाई जाये। सात करोड़ कण्ठों से निकली आवाज साधारण से साधारण बुद्धि वाला व्यक्ति समझ सकता है कि यह आवाज़-बंगाल की समस्त जनता की आवाज़ है, न कि सिर्फ हिन्दुओं की। क्योंकि ६० वर्ष पूर्व जब यह गान लिखा गया था उस समय बंगाल की जन संख्या सात करोड़ थी। अतएव सात करोड़ कण्ठ हिन्दू-मुसलमान और बंगाल की समस्त जातियों के कण्ठ हैं। फिर यह कैसे कहा जा

सकता है कि यह आवाज़ सिर्फ हिन्दुओं की है और मुसलमानों के विरुद्ध है।

मुसलमानों द्वारा मीरजाफर उतनी घृणा से देखा जाता है जितनी घृणा से हिन्दुओं द्वारा। भला कोई धर्म क्या अत्याचार का समर्थन कर सकता है? मीरजाफर के शासन का चित्र अङ्कित करने वाला सच्चा लेखक — चाहे वह मुसलमान क्यों न हो — वही चित्र अङ्कित करेगा जो बंकिम बाबू ने "आनन्द मठ" में किया है। यदि मीरजाफर के स्थान में कोई हिन्दू राजा होता तो 'आनन्द मठ' के कथानक अथवा भाषा में जरा भी फरक न आता। वह तो अत्याचार के विरुद्ध आवाज है न कि धर्म या जाति विशेष के।

आज तीस वर्षों से 'वन्देमातरम गान' का प्रचार हो रहा है पर अभी तक किसी ने इसका विरोध नहीं किया जो इस बात का प्रबल प्रमाण है कि 'वन्देमातरम गान' मुसलमानों की धार्मिक भावनाओं के विरुद्ध कदापि नहीं है। लाखों की संख्या में मुसलमानों ने इसे उसी इज्ज़त और प्रेम के साथ अपनाया है जिस प्रकार हिन्दुओं ने। मिस्टर जिन्ना ने जो चाल खेली है उसे युक्त प्रान्त के रेवन्यू मिनिस्टर माननीय रफ़ीक़-अहमद किदवाई ने खुले शब्दों में स्पष्ट कर दिया है। आप कहते हैं—श्री जिन्ना "वन्देमातरम गान" को इस्लाम के विरुद्ध बतलाते हैं। श्री जिन्ना वर्षों तक काँग्रेस और उसकी मुख्य कार्य कारिणी — आल इन्डिया काँग्रेस कमेटी के अनुपम और उत्साही सदस्य रहे हैं। हर साल कांग्रेस का अधिवेशन 'वन्देमातरम्' गान के साथ आरम्भ होता रहा है और हर साल श्री जिन्ना प्लेटफ़ार्म पर खड़े हुए एक भक्त की तरह उसे सुनते हुए देखे गये हैं। उस समय क्या कभी उन्होंने विरोध किया था। श्री जिन्ना ने कॉंग्रेस इसलिए नहीं छोड़ी कि वे उसे इस्लाम विरोधी गान समझते थे बल्कि इसलिए छोड़ी कि नागपुर में उसने अपना ध्येय "औपनिवेशक" पद से बदल कर "स्वराज्य" प्राप्त करना कर दिया था।

यहां एक सवाल यह उठता है कि काँग्रेस साम्प्रदायवादियों को उन्हीं की चाल से अर्थात् 'वन्देमातरम्' को पृथक कर के उन्हें क्यों नहीं मात देदेती है? इसका जवाब यही है कि जब काँग्रेस साम्राज्यवादी शक्तियों से साहसपूर्ण और सफल लोहा लेगई तो फिर इन चन्द साम्प्रदाय-वादियों से किस प्रकार डर सकती है। साम्प्रदाय-वादियों ने शुरू से आज़ादी की जंग में रोड़े अटकाये हैं और अटकाते जारहे हैं —यद्यपि एक दिन ऐसा आयेगा जब इनका नामो निशान ही मिट जायेगा — फिर भी अगर इस वक्त इनकी यह चाल मानली जायेगी तो निस्सन्देह इनके हौसले बढ़ेंगे और यह कांग्रेस की शक्ति को आघात पहुँचाने की कोशिश करेंगे। अतः उनकी माँगों को ठुकराना ही कांग्रेस के लिये उत्तम मार्ग है। इसके अलावा एक महान कारण पं० जवाहरलाल नेहरू के शब्दों में, यह भी है कि "वन्देमातरम्" पर हज़ारों भारतवासियों ने प्राणों की आहुतियां दी हैं। इसने करोड़ों के हृदयों में देश प्रेम की अग्नि प्रज्वलित की है। सारा बंगाल इस नाम पर दीवाना है। अतएव स्वतन्त्रता-संग्राम के इस पुनीत महामंत्र को काँग्रेस कदापि भी इन साम्प्रदायवादियों की चालों में आकर प्रथक नहीं कर सकती। अगर काँग्रेस प्रथक करने की कोशिश भी करेगी तो प्रत्येक देश-भक्त का यह कर्तव्य होगा कि वह इसके विरोध में अपनी आवाज उठावे।

गीत

[श्री नेमिचन्द जैन]

आज मन में ज्वार आयी ।

बसो दो पल को बटोही
छीन कुछ लेगा न कोई
अलस दोपहरी न जाओ दो घड़ी विश्राम पाये ।

हाँ, तुम्हारी राह पलपल
देख होते हों न व्याकुल?
पर बटोही, हृदय बेबस सजल से कुछ कण छिपाये ।

बहुत बीते दिवस पहले
कमल सा अम्लान मुख ले
एक परदेसी अकेला चल दिया था दिल चुराये ।

फिर न वह बेदर्द आया
हो गया अपना पराया
पथिक ऐसा लगा तुममें उसी के से प्राण आये ।

और बेबस हो पड़ी मैं
इस झलकती सी घड़ी में
बुरा कुछ मत मानना बस भूल बन जाना, पराये !

निमन्त्रण

[श्री शकुन्तला प्रभाकर]

प्रभावती को आज निमन्त्रण में जाना है। उसी की तैयारी में लगी हुई है। प्रेमा तैयार हो चुकी है, बार-बार उत्सुकता से माँ के पास जा-जा कर देख रही है कि माँ तैयार हो पाई हैं या नहीं।

प्रेमा की उम्र सात वर्ष की होगी। आज उसे बड़ी ख़ुशी हो रही है, अपनी भाभी के साथ निमन्त्रण में जाने की। माँ को वह भाभी ही कहा करती थी; क्योंकि पैदा होते ही घर में बच्चों को भाभी ही करते सुना, इसी वजह से उसका भाभी कहना स्वाभाविक है। वह घर में सब की प्रिय थी। देखने में प्रेमा घर में सबसे सुन्दर दीख पड़ती थी। बाल कटे हुये थे। फ्राक-जाँगिया उसकी पोशाक थी। शायद इसी सुन्दर वेश के कारण वह सबकी प्रिय थी। माँ का वह सदैव कहना माना करती थी। देह से भी काफ़ी स्वस्थ थी। आज उसने जब अपनी भाभी से दूसरे के घर निमन्त्रित होना सुना था तभी से उस ख़ुशी में अपना सब काम भुलाये बैठी थी। जाने की उत्सुकता में चार बजने के इंतजार में आज उसने कितनी बार घड़ी देखी थी, इसको तो वही जानती है।

प्रेमा के बाबू जी तो प्रतिदिन के अनुसार अपने काम पर सुबह ही से चले गये थे। घर पर अब केवल उसकी भाभी प्रभावती और उसके बाबा रामलाल थे। प्रेमा अपने बाबा से घर पर कुछ न कुछ पढ़ा करती थी। स्कूल तो वह केवल भाषा सीखने के अभिप्राय से जाया करती थी। बाबा को बड़ी चाह थी कि रानी प्रेमा सब भाषाओं का काफ़ी ज्ञान प्राप्त करले, ताकि फिर किसी भी मंडली में बैठकर सुगमतापूर्वक अपना काम चला सके। इसी वजह से उन्होंने बंगला भाषा सीखनेके लिए प्रेमा को स्कूल भेजना आरंभ कर दिया था। बाक़ी उसकी पढ़ाई की पूर्ति ख़ुद ही घर पर दिया करते थे। आज प्रेमा को जाने की ख़ुशी थी। इसी ख़ुशी में उसने आज दिन भर की पढ़ाई को बेमन पढ़ा था।

प्रभावती ने तैयार होकर प्रेमा से कहा—प्रेमा जा तू यशोदा को साथ लेकर एक ताँगा ले आ।

घर पर केवल यशोदा नाम की एक ही दासी थी, जो प्रेमा से केवल पाँच वर्ष बड़ी थी। प्रेमा और यशोदा में सख्य-भाव था। दोनों आपस में बहन के नाते अपने काम धन्धे से समय बचाकर खेला करती थीं। प्रेमा ने यशोदा को कुछ अक्षर-ज्ञान भी करा दिया था। इस कारण यशोदा बड़ी होने पर भी प्रेमा से दबी-दबी सी रहा करती थी। यशोदा अपने को उस वक़्त भुला बैठती थी, जब कि वह प्रेमा के साथ तल्लीन हो खेला करती थी। पर वह कुछ क्षण ही तक अपने को भुला सकती थी। मालिक की कठोरता भरी लाल पीली आँखें उसको इस बात के लिए विवश कर देती थीं कि वह समझे कि वह एक दासी है, प्रेमा

की सहपाठिनी नहीं। उस वक्त यशोदा अपने मन को मसोस कर रह जाती। तब एक बार उसको अपनी भूली माँ की धुँधली स्मृति याद हो आती। वह कुछ क्षण के लिए ज्ञान-शून्य अवस्था में अपने को अनाथ समझ बे-मन से काम करने लगती। पिता से आँख बचा अपने सहज स्वभाव के कारण प्रेमा जब उसको उस निस्सहायअवस्था में धीरज बँधाया करती तब वह अपनेको प्रेमा की उस कृपा के लिए ऋणी अनुभव करती थी।

प्रेमा यशोदा को साथ ले ताँगे के लिए चल दी।

प्रेमा के घर से ताँगे का अड्डा करीब आध मील दूर था। जहाँअड्डा था वहीं पर प्रेमा के बाबू जी के परिचित मित्र की दुकान थी। इसी दुकान पर प्रभावती ने चिट्ठी देकर दोनों को भेजा था और कहा था—कि वही तुम्हें सस्ते में ताँगा करा देंगे। जहाँ प्रेमा रहा करती थी वह छोटा सा शहर (या कस्बा कहना कहना चाहिए) था। वहाँ बड़े शहरों की भाँति ताँगे इधर से उधर चक्कर नहीं काटा करते थे। वह तो अपने निर्मित किये हुए स्थान पर ही बिना किसी प्रकार की मेह-नत किए सवारी पा जाते थे। वह सवारी के पास नहीं जाते थे; बल्कि सवारी ही उन के पास आती थी। ऐसा जान पड़ता थामानों उन्हें सवारीसे कोई गरज ही नहीं है। जो प्यासा है वह खुद ही कुएं पर आयगा और अपने को तृप्त करेगा। कहीं कुआँ बटोही के पास जाता है! शायद यही सोच-कर वह अपनी इस हैरानी से बचते थे।

प्रेमा और यशोदा दोनों बातचीत करती हुई चली जा रही थीं। प्रेमा ने दूर से एक ताँगा खाली आते देखा और शरारत करने की इच्छा से कहा—यशोदा मैं इस ताँगे के पीछे जाती हूँ, और तुम तेजी से मेरे पीछे भागती आना। जब मेरी बारी खतम हो जायगी तब तुम चढ़ना और मैं पीछे-पीछे आऊंगी।

यशोदा को प्रेमा की यह सलाह अच्छी लगी वह बोली—इस प्रकार से रास्ता मालूम नहीं पड़ेगा और हम शीघ्र ही अपने उस स्थान पर पहुँच जाँयगे। इतने में ताँगा पास आगया और यशोदा "पहले मेरी बारी"—कह उस चलते हुए ताँगे पर चढ़ गई। प्रेमा "नहीं पहले मेरी—रहने मेरी—"ही करती रह गई। और "अब मेरी बारी है, उतरो जी, अब मेरी बारी है।" कहती हुई खूब तेजी से दौड़ने लगी।

यशोदा अपनी चढ्डी का मजा ले रही थी और प्रेमा के दौड़ने और हाँपने की अवहेलना कर रही थी। ताँगे का अड्डा अभी कुछ दूर था। "ले अब तेरी बारी है, मैं तो अड्डी का मजा ले चुकी" कहकर यशोदा उतर पड़ी!

प्रेमा भी अपनी बहादुरी का परिचय देती हुई चलते ताँगे पर चढ़ गई। ताँगे की चाल पहले की अपेक्षा तेज हो गई। अड्डा क़रीब आगया। दुकान भी एक फर्लाङ्ग दूर रहगई। ताँगा उसी तेज़ी से आगे बढ़ा चला जा रहा था। ताँगे वाला उन दोनों भोली भाली नासमझ बच्चियों की शरारत से बिना किसी आशंका के आनन्दित हो रहा था। प्रेमा को उस तेजी में उतरने की हिम्मत न होती थी। दुकान पास आई देख प्रेमा हिम्मत करके उतरी। परन्तु उतरते वक्त वह हाथ छोड़ना भूल गई और इस भारी भूल के कारण वह ताँगे के साथ सात-आठ गज़ तक घिसटी हुई चली गई।

पीछे दौड़ती हुई यशोदा चिल्ला-चिल्ला कर कह रही थी "प्रेमा हाथ छोड़दो, हाथ छोड़दो।"

किन्तु प्रेमा उस समय हतबुद्धि हो रही थी। जब वह काफी घायल हो गई, तब स्वयं ही हाथ छूट गए।

यशोदा ने पास आकर उसे उठाया। आस-पास के दुकानदार भी उसे उठाने के लिए अपना-अपना काम छोड़ भाग आए। प्रेमा थोड़ी देर में कुछ स्वस्थ हुई और अपने चारों ओर

भीड़ जमती देख झटपट उठी और अपनी फ्राक उन लहू-लुहान घुटनों से खींच-खींच कर नीची करने लगी, ताकि कहीं वह इसी मरहम-पट्टी में फँस कर निमंत्रण में जाने से न रुक जाय।

दुकान जमीन से खासी ऊंचाई पर थी। वहीं जाकर प्रेमा को भाभी का दिया हुआ पत्र देना था। प्रेमा ने अपनी तकलीफ़ को छिपा कर और अपने को सीढ़ी की आड़ में खड़ा कर, पत्र दे दिया और उत्तर की प्रतीक्षा करने लगी! प्रेमा को दुकान पर ऊपर आने को कहा गया पर वह यह कह कर वहीं खड़ी रही कि जल्दी जाना है।

नौकर ने मालिक के कहने के अनुसार ताँगा कर दिया और वह उसमें बैठकर उसी रास्ते से गुजरी जिसमें वह घटना घटी थी। आसपास के दुकानदार प्रेमा के बेरोक-टोक बहते हुए खून को देख रहे थे और ताँगा अपनी चाल से चलता जा रहा था।

प्रेमा ने कहा, "यशोदा देख भाभी तो घर पर पर तैयार बैठी होंगी। मैं ताँगे में ही बैठी रहूँगी और तू जाकर भाभी को भेज देना। मेरी चोट की बात मत कहना, नहीं तो भाभी मुझे अपने साथ न ले जावेगी।"

यशोदा ने हाँ, हूँ, करके कहा—"क्या भाभी को यहाँ आकर पता नहीं चलेगा?"

"मैं आगे बैठ जाऊँगी। भाभी पीछे बैठेंगी। तब मैं भाभी को कैसे दीखूँगी? वहाँ जाने की खुशी में आज मैंने कुछ भी तो नहीं पढ़ा। स्कूल में भी मन नहीं लगा! इतने पर भी मैं वहाँ न जाऊँ!"

यशोदा ने खिजाते हुए कहा "मैं तो जरूर कहूँगी जी।"

"यशोदा, मैं तेरे हाथ जोड़ती हूँ।"

विनीत स्वर से प्रेमा कह रही थी। "सच कहती हूँ, मैं तुझे वह बहुत अच्छी तसवीर वाली किताब दूँगी, जो बाबू जी कानपुर से लाए हैं। तुझे खूब पढ़ाऊँगी। क्या फिर भी तू कह देगी? बस और चाहे जो कह लीजो, चोट वाली बात नहीं।"

यशोदा का प्रेमा की उस भोली-भाली सूरत और उसकी विनीत प्रार्थना पर साम्य-भाव से भरा हृदय "अच्छा" कह ही कर रहा।

यशोदा यह खूब जानती थी कि यदि मैं न कहूँगी तो मालिक और मालिकन मुझी को दोषी साबित करेंगे और अपनी क्रोधित वाणी की बौछार से मुझे बेध देंगे, तब मैं क्या करूँगी! मैं मालिक की बुरी बनकर कहाँ रह सकती हूँ। प्रेमा की तो कोई बात नहीं, कुछ देर न बोलेगी। फिर कुछ ही क्षण के बाद एकसे हैं। उधर वह प्रेमा को भी तो वचन दे चुकी है, भाभी से चोट वाली बात न कहने का। वह प्रेमा के साथ विश्वासघात कैसे करे! इस दुविधा में पड़ कर वह अपनेको सुलझा ही नहीं पाती है। इधर खाई उधर कुँआ। सहसा ताँगा रुका! घर आया जान यशोदा उतर पड़ी और प्रेमा आगे जा बैठी।

प्रेमा ने चिल्ला कर कहा "यशोदा, बस वही बातयाद है न।"

यशोदा उसको सुनी-अनसुनी करके ऊपर जा पहुंची और अपने निर्णीत किए हुए विचारों को मालिक के सामने पेश कर दिया और प्रेमा की चोट वाली घटना संक्षिप्त शब्दों में सुना कर वह भाग गई।

प्रेमा भाभी के आने की राह देख रही थी। जब उनके आने में देर हुई तब उसको घबराहट पैदा होने लगी और वह बार-बार यशोदा अभागिन को कोसने लगी। उसे कभी स्वप्न में भी खयाल न था कि कभी यशोदा उसके साथ ऐसा दुर्व्यवहार कर सकेगी। इतने में आवाज आई "प्रेमा! ओ प्रेमा! अन्दर आ क्या हो गया!"

प्रेमा सहमी-सी ताँगे से उतर कर अन्दर गई और अपराधिन की भाँति खड़ी होकर अपनी चोट को छिपाने का प्रयत्न करने लगी।

बाबा ने कहा,

"बहू तुम जाओ, तुम्हें देर होती है। प्रेमा को ऐसी हालत में ले जा कर क्या करोगी। चोट काफ़ी लगी है। खून भी बहुत निकल चुका है। मैं सब ठीक-ठाक कर लूँगा। तुम जाओ।"

प्रभावती प्रेमा को प्रेम-भरी दृष्टि से देख कर अपनी अनिच्छा प्रगट करती ताँगे पर जाकर सवार होगई। ताँगा चल दिया। प्रेमा की सारी आशाओं पर पानी फिर गया, उसका रचा-रचाया प्रपंच सब क्षणभर में ही धूल में मिल गया। निराश हो वह बाबा जी के पास बैठ गई। आह! उसकी भाभी ऐसे कठोर दिल की निकली जो अपनी इकलौती लाड़ली पुत्री प्रेमा की उस करुणामयी मूर्ति से भी न पिघली और स्वयं चली ही गई। उसने अपने को किस दीन रूप में भाभी और बाबा के सामने पेश किया था; पर उसका किसी ने भी मूल्य न आँका। अब उसे अपनी चोट की तकलीफ़ मालूम हुई, वह चीखने लगी—

"यशोदा पानी ला, पानी।"

यशोदा बार-बार अपने को धिक्कार रही कि मैंने क्यों कहा? क्या यह छिपाने की चीज़ थी? पता तो लग ही जाता; पर मैंने क्यों कहा? बहू जी खुद ही देख लेतीं। क्या होता, एक दो शब्द कह लेतीं! पर प्रेमा मुझे क्या समझ रही होगी! सोचती होगी कि यशोदा कितनी नीच प्रकृति की है, अपनी बात की पक्की नहीं है, विश्वासघात करती है। हाँ, मैंने न कहने के लिए 'हाँ' भी तो कर ली थी। फिर मैंने क्यों कहा! उसे अपने ऊपर बार-बार गुस्सा आ रहा था। बिचारी सुबह से तो जाने-जाने का शोर कर रही थी; फिर भी नहीं जा पाई। चोट लगी थी तब कैसे जाती! उसी ने तो जान-बूझ कर चोट लगाई। क्यों नहीं छोड़े अपने हाथ ताँगे से उतरते समय! अपने आप ही तो सब कुछ किया है फिर मेरा क्या है इसमें दोष! इसी विचार-धारा में कभी यशोदा अपने को निर्दोष साबित करती, कभी दोषी। पर वह अपने को इस दुविधा से निकाल कर किसी निश्चित निर्णय पर नहीं पहुँचा पाती थी। वह बार-बार सोचती—जब मैं प्रेमा के सामने जाऊँगी तब वह मुझे कितनी नीच समझेगी और मेरी तरफ़ क्रूर दृष्टि से देखेगी। तब मैं क्या जवाब दूँगी उसे? यही कहूँगी न कि मैंने अपना कर्तव्य पूरा किया! न, छिः छिः ऐसा न हो सकेगा, कभी भी नहीं। उसके ऋण से ऋणी होकर प्रति दिन उसके भार से दबी जा रही हूँ। उसके सामने कुछ भी न कह सकूँगी। मौन ही एक मेरा साधन है।

यशोदा अपने को सँभाल कर चिकित्सा के लिये जल लेकर जा उपस्थित हुई।

रामलाल प्रेमा की चिकित्सा में लग गए।

प्रभावती निमंत्रण में पहुँच तो गई; पर मन उसका प्रेमा ही के पास था। निमंत्रण में और भी आमंत्रित स्त्री-पुरुष थे। बच्चे का नामकरण संस्कार था। वहाँ खासी रौनक़ होरही थी। बच्चे खुशी मना रहे थे, बार-बार इधर से उधर चक्कर काट रहे थे। बच्चों को देखकर प्रभावती प्रेमा को रह-रह कर याद कर उठती और वह घर वापस आने के लिए उत्सुक हो उठती। घर की एक स्त्री ने पूछा कि आप प्रेमा को साथ क्यों नहीं लाई। उन्होंने प्रेमा के न आने का कारण बता दिया। सब सुनकर अवाक् रह गए।

किसी प्रकार से प्रभावती आमन्त्रित स्थान से लौटकर घर आई और आकर अपनी लाड़ली प्रेमा को खूब खुल कर प्यार किया। मौनावस्था में जिन बिन्दुओं को बड़ी कठिनता से रोक पाई थी वे यहाँ आकर फूट पड़े। कौन जान सकता है कि उन पानी के छोटे-छोटे बिन्दुओं में अपार दुख भरा है, या खुशी का साम्राज्य बसा हुआ है। इसको तो वही जान सकेगी। माँ के भेद-भरे रहस्य का का पता क्या उन मोतियों से और कोई समझ सकेगा!

जीवन-सुधा



श्री शकुंतला कुमारी प्रभाकर

समाज और स्त्रियां

[श्री रामनारायण श्रीवास्तव 'गरीब']

आधुनिक युग में न केवल भारतवर्ष, अपितु समस्त संसार, 'समाज और स्त्रियाँ' इस विषय पर तर्क-वितर्कादि द्वारा, स्त्रियों को समाज में उनके अधिकार पुनः प्राप्त करा देने की चेष्टा कर रहा है और कई राष्ट्रों को इस आन्दोलन में सफलता भी प्राप्त हो चुकी है, किन्तु इस विषय की प्रगतिशीलता जितनी अन्य राष्ट्रों द्वारा हुई है, उतनी भारतवर्ष द्वारा नहीं।

सबसे प्रथम, हिन्दू-नारियों पर पाशविक अत्याचार एवं समाज के कलंकपूर्ण घृणित अस्तित्व पर विचार करना चाहिये। हिन्दू-समाज धार्मिक भावनाओं के संसार में, इतनी भीरुता, दाम्भिकता एवं पुंसत्वविहीनता का परिचय दे रहा है, जिसके भविष्य पर प्रत्येक विचारशील पुरुष का हृदय काँप उठता है। यह हिन्दू-जाति का वह सुन्दर हास नहीं है जिस पर स्वार्थी विदेशी आनन्दोन्माद में नाच उठें; किन्तु, यह वह भयंकर हास है जिस पर नीच से नीच समाज के नेत्रों से भी अविरल अश्रु-प्रवाह की धारा बह निकलती है, और हिन्दुओं की कापुरुषता एवं असमर्थता की प्रशंसा, कायर से कायर मनुष्य भी व्यंग शब्दों में करते हैं। गुण्डों और बदमाशों द्वारा अपहृत नारियों का त्याग कर हिन्दू-समाज नित्य प्रति, हिन्दू-जाति के उस रत्न को खो रहा है, जिसके द्वारा प्राचीन भारत समृद्धि-शाली, शक्ति-शाली एवं बुद्धिशाली बनकर, समस्त वसुधा को रौंदते हुए विजय-पताका फहराता था, तथा जिस अमूल्य रत्न की कमी के कारण ही भारत का भविष्य अन्धारमय होता जा रहा है। क्या समाज नारियों पर पाशविक अत्याचार करते हुए भी अपने अस्तित्व का डंका पीट सकता है? इसका उत्तर निश्चय ही 'नहीं' है। समाज का ऐसा अस्तित्व-हीन-अस्तित्व अधिक समय तक टिकने वाला नहीं है। समाज की दयनीय अवस्था पर दृष्टि-पात करते हुए, भारत के प्रत्येक नवयुवक का यह कर्तव्य है कि समाज के अन्ध-विश्वास को जड़ से उखाड़ कर, पुनः नवजीवन के अंकुर को सुधार के जल से सींचकर उसे विशाल वृक्ष का स्वरूप दे, जिसकी छत्र-छाया में हिन्दू जाति आनन्दोल्लास से करतल-ध्वनि करती हुई सुख-पूर्वक अपना जीवन बितावे।

समाज में स्त्रियों का पतन, अशिक्षा के कारण भी है; क्योंकि अशिक्षित होने के फल-स्वरूप ही उन्हें अपने अधिकारों का पूर्ण ज्ञान नहीं रह सकता। शिक्षा का अर्थ उस शिक्षा से है जो हृदय में धार्मिक-प्रवृत्तियों को प्रोत्साहन दे, न कि मानव-जीवन में प्रेमलीलाओं की गाथा सुनावे अथवा अन्धे-पशु के सादृश्य वक्र-गामी एवँ कंटक-पूर्ण पथ पर दौड़ना सिखावे। यद्यपि कुछ आर्य-विदुषियों ने समाज का

अवहेलना करके अथवा पुरुषों की आर्थिक-दासता से मुक्त होने की इच्छा से, भारत के विशाल ललाट पर शिक्षा के गौरव-पूर्ण तिलक को लगाने की चेष्टा की है, किन्तु ऐसी आदर्श-युवतियाँ उँगली पर गिने जाने योग्य हैं। चाहे बड़े-बड़े शहरों में, कुछ धनी-सज्जनों की बालिकाएँ भले ही थोड़ी बहुत शिक्षा (जिसे मैं लाभ-कारक शिक्षा समझता ही नहीं) प्राप्त करलें, किन्तु भारत की ९० प्रतिशत जन-संख्या वाले देहातों एवं गाँवों में उसका पूर्ण रूप से अभाव है। बेचारे भोले-भाले देहाती, समाज के भय एवं लोक-लाज के विचार से पीड़ित होकर अपनी बालिकाओं को गुड्डा-गुड्डी आदि खेलने की आज्ञा सहर्ष दे देते हैं किन्तु शिक्षा प्राप्त करने की नहीं। उनके समक्ष समाज से बहिष्कृत होजाने का प्रश्न सतत उपस्थित रहता है। भारतीय समाज उस समय भी नहीं चेतता है जब देहातों में ईसाई लोग मिशन-पाठशालाओं द्वारा जनता में, शिक्षा का नहीं, किन्तु ईसाई-धर्म का प्रचार करते हैं, और नित्यप्रति भोले कुटुम्ब तथा निर्मल-हृदया बालिकाओं को अपने धर्म में दीक्षित करके हिन्दुओं का ह्रास करते हैं। इतना सब होते हुए भी, भारत में हिन्दू-समाज द्वारा स्थापित पाठ-शालाएँ बहुत नहीं हैं। इसका कारण यह हो सकता है, कि समाज के विचार से, यदि स्त्रियाँ शिक्षित होजावेंगी तो अपने अधिकारों को पुनः प्राप्त करने की चेष्टा में लग जावेंगी। भारतीय नारी की असाधारण पवित्रता, हृदय की सरलता, निःस्वार्थ उत्सर्ग और सराहनीय भोलेपन का बदला, समाज इस प्रकार दे रहा है। जिस समाज में नारियों की इतनी दयनीय दशा हो उस समाज का उत्कर्ष तथा भविष्य, केवल ईश्वर पर ही निर्भर है।

समाज ने स्त्रियों के कोमल हृदय में यह बात कूट कूट कर भरदी है कि सतीत्व की रक्षा केवल परदे पर ही निर्भर है। इस विषय में नारी-हृदय की परिस्थिति, स्वभाव एवँ परतन्त्रता पर विचार करने की कोई आवश्यकता ही नहीं समझी गई है।

नारियों के समक्ष; पुरुष-जाति की अबलाओं के प्रति सहानुभूति का जीता-जागता नङ्गा नृत इन्हीं प्रथाओं की आड़ में हो रहा है। विभीषिका-पूर्ण कृत्यों के मन्थन से उनको हलाहल विष पिलाकर काल कवलित किया जा रहा है और फिर सच्चे समाज-भक्त होने का दावा बना ही हुआ है।

पर्दे जैसी भयङ्कर प्रथा के बहाने वह उन्हें वक्र-दृष्टि से देख रहा है तथा उनके सिर उठाते ही उन्हें कुचल देने का नित्य-प्रति प्रयत्न कर रहा है। यह बात अवश्य ही माननीय है कि अत्यन्त-प्राचीन प्रथाओं के बहिष्कार का आन्दोलन अत्यन्त निष्कृष्ट है; किन्तु पर्दे की प्रथा अभी अभी ही प्रचलित हुई है। मुगलों की पाप-पूर्ण दृष्टि की ज्वाला से हिन्दू-समाज इतना पीड़ित हुआ है कि कुछ हिन्दू-बुद्धिमानों ने पर्दे की प्रथा का प्रचार कर डाला; किन्तु, यदि वे इस बात को जानते कि इसी प्रथा के कारण भारत का भविष्य पूर्णतः अन्धकार-मय होजावेगा तो सम्भवतः इस प्रथा का प्रचार कदापि न होता। नारियों की अन्तरात्मा में उस दैवी-शक्ति का समावेश रहता है जिसके द्वारा वे समस्त संसार की बाग-डोर अपने हाथ में कर सकती हैं; किन्तु पुरुष-समाज उन्हें इस प्रकार दबोच बैठा है कि वे उस शक्ति का समयानुकूल उपयोग, इच्छा रहते हुए भी, नहीं कर सकती हैं। अतएव, ऐसी दशा में प्रत्येक नारी का यह कर्तव्य है कि पर्दे जैसी नाशकारी प्रथा को जड़-मूल से नष्ट कर देने के आन्दोलन में, वे सशक्ति भाग लें और समाज को स्त्री-शक्ति का अच्छा परिचय दें।

ऊपर कहा जा चुका है कि अत्यन्त प्राचीन प्रथाओं के बहिष्कार का आन्दोलन निकृष्ट है। विधवा-विवाह का निषेध भी अत्यन्त प्राचीन

नहीं तो प्राचीन अवश्य है। ऐसी परिस्थिति में इसके पुन: प्रचार का आन्दोलन करना, पूज्य-पूर्वजों के मुख-कमल को, कलंक-कालिमा द्वारा कुरूप करना है; किन्तु, स्त्रियों पर अस्तित्व जमाने का जन्म-सिद्ध अधिकार वाले समाज के स्वार्थ और गूढ़-सत्ता की ओर भी दृष्टि-पात कीजिए। एक ओर तो निर्बुद्धि विदेशियों को, पूज्य-पूर्वजों की अपेक्षा अधिक बुद्धिमान् एवं शक्ति-शाली मान कर, उनके स्वार्थ-पूर्ण प्रयत्न को सफलीभूत करने तथा चमकते हुए कलदारों द्वारा गृहों को सुशोभित करने के उद्देश्य से सती-प्रथा उठा दी गई और दूसरी ओर विधवा-विवाह का निषेध अपनी शक्ति का परिचय दे ही रहा है। इस स्थान पर यदि प्राचीन-रिवाजों का चित्र सामने लाया जावे तो अत्युत्तम होगा। प्राचीन-काल में जो स्त्री कामाग्नि के प्रचण्ड उत्ताप की वेदना सहन नहीं कर सकती थी, अथवा पति-देव के अनन्य-प्रेम द्वारा, प्रेमोन्मादक का ग्रास बनकर वैधव्य के कठिन क्लेशों के आक्रमण द्वारा अपने को नहीं बचा सकती थी, वह सहर्ष पति के साथ धधकती हुई चिता में जलकर भस्म होजाती थी और किसी भी विचार-शील तथा दूरदर्शी विद्वान को उसके इस कर्म पर कोई आपत्ति नहीं होती थी। किन्तु अब विधवाओं के हितचिन्तक प्राचीन विद्वान कहाँ रहे? अब तो प्राचीन विद्वानों को 'मूर्ख' विशेषण द्वारा विभूषित करने वाले परम-बुद्धिशाली आधुनिक विद्वान पैदा हो चुके हैं, जो सच्चे समाज-सेवी होने के नाते अर्द्ध-वयस्क कुमारियों को वैधव्य का दारुण दुख सहा रहे हैं। हृदय में परिवर्तन होने अथवा नहीं, मन की नीच-वासनाएं, तृप्ति के अभाव से और भी धधक उठें; कलुषित विचार और भी प्रकट हो उठें, किन्तु विधवा को मन मारकर ही रहना पड़ता है। समाज का यही कथन है। हिन्दू धर्म और देश की यही मर्यादा है। समाज के उत्कर्ष का यही प्रधान साधन है। और पुरुष-जाति की ओर? एक स्त्री के काल-कवलित होते ही दूसरा विवाह अत्यन्त आवश्यक है। विधवाओं के विषय का उपरोक्त नियम पुरुष जाति पर लागू नहीं होता। समाज के कथन, धर्म की मर्यादा, देश के उत्कर्षार्थ, पुरुषों को इस प्रकार की किसी भी तपस्या की आवश्यकता नहीं है। जो कुछ करें, केवल स्त्रियाँ। पुरुष-जाति सामाजिक कुल्हाड़ी लेकर सर पर डटी हुई हैं; किन्तु कुछ ही दूरी पर समाज का वह खोखलापन दृष्टि गोचर होता है, जिसकी कल्पना-मात्र से अत्यन्त कामी-पुरुष का हृदय भी भय, क्रोध और घृणा से दहल जाता है। उन अर्द्ध प्रस्फुटित बालिकाओं पर, जो 'विधवा' शब्द का अर्थ न जानते हुए भी, उसके कठोर,पाशों द्वारा जकड़ी हुई हैं, देश-भक्ति की रट लगाने वाले, धर्म की मर्यादा रखने वाले, समाज की उन्नति का डंका पीटने वाले, बूढ़े-खूसट-नरपिशाचों द्वारा गृहों में, विधवा-आश्रमों में, अनाथालयों में, तात्पर्य्य यह कि ऐसे प्रत्येक स्थानों में, जहाँ कि विधवाएँ आश्रयार्थ याचक के रूप में जाती हैं, केवल काम-वासना की तृप्ति के हेतु भाँति भाँति के पाशविक अत्याचार उन पर किये जाते हैं, जिसका भण्डा फोड़, बेचारी कोमल-हृदया विधवाएँ, केवल समाज के भय से ह[illegible] नहीं करती हैं। अन्त में पाप का घड़ा, नव-जात शिशु के रूप में फूटकर, पतिता-विधवाओं पर किये गये निन्द्य कर्मों का भण्डाफोड़ उन्हीं ढोंगी, नीच, स्वार्थी समाजियों के समक्ष करता है जिसके श्रवण-मात्र से, समाज की उन्नति के शिखर पर चढ़ाने वाले पाखण्डी, विविध-भाँति के लाञ्छन द्वारा उस नारी का, समाज से बहिष्कार कर देते हैं।

अब वह विधवा जावे कहाँ? गुण्डों को अदृश्य सूत्र द्वारा यह समाचार प्राप्त होते ही वे लोग उस अबला के अपहरणार्थ, जी जान से लग जाते हैं, जिसके परिणाम-स्वरूप अनार्यों की संख्या

तथा सभ्यता का प्रतिदिन शक्ति-शाली होना तथा हिंदू-समाज का जर्जर, क्षीण एवं कापुरुष होना निश्चित ही है। हिंदू-समाज, कुमारी-विधवाओं को न सती होने की आज्ञा देता है, न पुनर्विवाह करने देता है और न उनकी रक्षा ही कर सकता है। ऐसी अवस्था में, यदि करोड़ों भारत-ललनाएँ पतित हो जावें, लाखों बाल-विधवाएँ समाज की उपेक्षा करके पुनर्विवाह कर लेवें अथवा सैकड़ों कुमारी-बालिकाएं आत्महत्या कर लेवें तो इसका दोष किसके सिर पर है? क्या वे विदेशी लोग, जो भारत में सती-प्रथा, अपनी शक्ति की सहायता से उठाकर, अपनी राजनीति और बुद्धि का परिचय देते हुए मूर्खता प्रकट कर रहे हैं, जो भारत में, सुदूरवर्त्ती देशों के सादृश्य पतिताओं की उन्नति में प्राणपण से चेष्टा कर रहे हैं तथा जो भारत का वह मस्तक, जो प्राचीन-काल से ही बीर-ललनाओं के शील, सतीत्व के कारण, वर्ग में उठा हुआ है, नत-मस्तक करके कुचल देना चाहते हैं, वे ही भारतीय हिन्दू-समाज के हितैषी (?) विदेशी, इस दोष के पात्र नहीं बन सकते? और साथ ही साथ क्या वे समाजी भी दोषी नहीं हैं जो काम-लोलुपता-पूर्ण दृष्टि द्वारा विधवाओं तथा अन्य सतियों पर दृष्टिपात करके, उन में से अधिकाँश के जीवन को नष्ट-भ्रष्ट कर विदेशियों की नीति का अनुसरण कर रहे हैं। यदि हिन्दू-समाज अपने पूर्व-पथ पर सुचारुरूप से अग्रसर होता जाता तथा सुदूरवर्त्ती देश, भाषा, धर्म और सभ्यता को अपने अधिकारों से उच्च न मानता, तो विदेशियों की शक्ति में ऐसा कोई प्रभाव नहीं था, जो हमारे धार्मिक-कृत्यों पर हस्तक्षेप करके हमें अवनति के कुएं की ओर बलात् द्रुतगामी करता। जीवन के कठोर-तम, उत्तरदायित्वपूर्ण कार्यों की बागडोर विदेशियों के हाथ में देकर हिन्दू-समाज कदापि उन्नति नहीं कर सकता।

हृदय की उच्च तथा निर्मल सरिता को, दुराग्रह व कुत्सित स्वार्थों की नौका द्वारा पार करना, निष्फल प्रयत्न पर सहानुभूति प्रकट करना है। संसार में कौन-सा ऐसा उच्च आदर्श समाज है, जो सती-प्रथा, विधवा-विवाह, गुण्डों द्वारा अपहृता नारियों को पुनः धर्म में दीक्षित करने का निषेध करते हुए तथा नारियों की सम्मान-रक्षा का प्रयत्न न करते हुए भी, सोलह-सोलह वर्ष की कुमारी-विधवाओं द्वारा बलात् वैधव्य-धर्म पालन कराने में ही, धर्म और देश की उन्नति समझता है? इन सिद्धान्तों के जीवन-दाता, समाज के वे ही ढोंगी लोग हैं जो निर्बुद्धि विदेशी आचार्यों की शिक्षा के प्रभाव में तथा स्वार्थ और लोभ में ही भारत की उन्नति पर आशा लगाये, भारत को आशिखा-पदान्त, पर-तन्त्रता के भंवर में फंसाये बैठे हैं और भारत की वीराँगनाओं को समाज का भय दिखला कर उन्हें अनधिकारता और अशक्ति का प्रमाण-पत्र दे चुके हैं।

स्त्रियों के प्रति समाज इतनी निर्दयता का परिचय दे रहा है कि जिसके श्रवण-मात्र से अविरल-अश्रु-प्रवाह, हिलोरें लेने लगता है। यद्यपि बाल-विवाह और वृद्ध-विवाह के विरुद्ध, लोकमत प्रायः पूर्ण-रूप से गठित हो चुका है किन्तु लोक-मत, लोक-मत की सीमा तक ही जाकर रुक गया; समाज-मत नहीं होने पाया। बेचारे सुधारक गला फाड़-फाड़ कर, सुधार की वेदी पर बलिदान होने तथा जाति का उद्धार करने के प्रस्ताव समाज के समक्ष लाते हैं किन्तु समाजियों को लोभ, दाम्भिकता, पाशविक-अत्याचार और कापुरुषता की उन्नति से जब अवकाश मिले, तब तो वे किसी और की सुनें।

जिन दुध-मुंहे बालकों के रदनों का हिलना अभी-अभी ही आरम्भ हुआ है, जो जनक-जननी के अर्थ को भी भलीभाँति नहीं समझ पाये हैं, जिनके समक्ष भगिनी तथा पत्नी दोनों में कोई अन्तर नहीं है, जो अपने वस्त्रों को धारण करना

भी नहीं सीख पाये हैं, उन्हीं अबोध कोमल बालकों और बालिकाओं को, जो भारत के भावी कार्य-कर्त्ता हैं, वैवाहिक जैसे उत्तर-दायित्व-पूर्ण कार्य की शक्तिशाली जंजीरों में कस देना कहाँ का न्याय है ? जन-संख्या की ओर दृष्टि-पात करने से ज्ञात होता है कि इस मृत्यु-संख्या में पुरुष ही अधिक होते हैं, इसलिये अधिकाँशतः स्त्रियाँ विधवा हो जाती हैं और समाज की कृपाकाँक्षिणी बनी रहकर, वैधव्य का दुःख, इच्छा न रहते हुए भी, चुपचाप सहती हैं। ठिकाना है कहीं समाज के इस निन्दनीय अस्तित्व का ?

अब वृद्ध-विवाह को लीजिये ! यह बात निर्विवाद सत्य है कि 'विवाह' विषय की सबसे नीच और निन्द्य प्रथाओं में, सर्व प्रथम वृद्ध-विवाह ही है। धन, वैभव, मान, कुल स्वार्थादि के लोभ में पड़कर अपनी नव-यौवना कन्या का पाणि-ग्रहण, ऐसे वृद्ध पुरुष के साथ करा देना, जिसमें आँख से बहे हुए कीच को पोंछने तक की शक्ति नहीं है, अत्यन्त कुत्सित कर्म है। ऐसे कर्म करने के पूर्व, बालिकाओं की उन माताओं से परामर्श लेना बहुत ही आवश्यक है, जो नारी-हृदय का अनुभव रखती हैं, जो दाम्पत्यजीवन को सुख-मय बनाने का यत्न जानती हैं और जो यह भी जानती हैं कि किस और कैसे पुरुष द्वारा, नारियों की, समाजरूपी सरिता पर डगमगाती नैय्या, पार जा सकती है। किन्तु 'माताएँ' भी तो नारियों में ही सम्मिलित हैं ! उनसे परामर्श लेकर तथा उनकी राय के अनुसार कार्य करके, समाज द्वारा 'स्त्री के गुलाम' की पदवी कौन ग्रहण करे ? कन्याओं के पिता समझते हैं कि अमुक व्यक्ति के साथ कन्या का सम्बन्ध हो जाने से, उन्हें धन, मान, वैभवादि की चिन्ताओं से मुक्ति मिल जावेगी; किन्तु, स्मरण रहे कि ये समस्त वस्तुएँ उस सम्पति तथा गौरव के समक्ष तुच्छाति-तुच्छ हैं, जिसके द्वारा नारी-जाति के यौवन-कानन में नित्य-प्रति नवीन उमंगों का सञ्चार होता है, जिस पर स्त्री-जाति का महान् उत्कर्ष अवलम्बित है तथा जिसके अभाव-मात्र से अबलायें, 'माता' कहलाने के गौरव से सदैव अछूती बनी रहती हैं। इसके परिणाम का ताण्डव-नृत्य भी देख लीजिये। वे बालिकायें, जो पूर्ण-प्रस्फुटित होने के पश्चात् अपने हृदय की ज्वाला को शान्ति प्रदान नहीं कर सकतीं, जो दुर्लभ मानव-जीवन को सार्थक बनाना चाहती हैं तथा जो समाज के अभेद्य कारागार को भेदकर, उसकी संकुचित और दुर्गन्ध-युक्त वायु से त्रिविधसमीर के आवरण में प्रवेश करना चाहती हैं, कामलोलुप-घातकों की कुदृष्टि पड़ते ही, अपने उस अलंकार को खो देती हैं, जिनकी रक्षा में करोड़ों भारतीय वीरांगनाओं ने अपने प्राण तक को तुच्छ समझा है। समाज के कट्टरपन्थियों को तनिक से सूत्र का पता लगाते ही, वे उस नारी को बहिष्कृत कर देते हैं। उसके दयनीय कष्ट को निवारण करना तो दूर रहा, कोई उस विदग्ध-हृदय को सान्त्वना तक नहीं देता, जिससे उसका कलेजा झुलस जाता है और वह आत्मघात तक करने में उतारू हो जाती है। यदि आत्मघात द्वारा बच गई तो भी समाज को कोई लाभ नहीं होता। वह नारी या तो विधर्मियों की संख्या अधिकाधिक करती है अथवा 'पतिता' कहलाकर, वेश्या बन जाती है। समाज में स्त्रियों का ह्रास इससे अधिक और क्या हो सकता है ?

स्त्रियों द्वारा अपने पति का नामोच्चारण धर्म-शास्त्र के विरुद्ध माना जाता है। ठीक है। किन्तु, मैं पाठकों का ध्यान उन पूज्या, प्रातःस्मरणीया, प्राचीन ललनाओं की ओर आकर्षित करना चाहता हूं, जिनके कर्तव्य-कर्मों का निर्मल यश, भारत के ही नहीं अपितु समस्त संसार के बच्चे-बच्चे गाते हैं, सती-शिरोमणि सीता जी को ही देखिये। उन्होंने अनेक प्रकरणों में मर्यादा

पुरुषोत्तम भगवान् रामचन्द्र जी को 'राम' 'रघुवर' 'रघुनाथ' आदि कहा है जिसका स्पष्ट प्रमाण गोस्वामी तुलसीदास जी कृत राम-चरित्र-मानस से प्राप्त होता है। गोपिकाओं ने भी, जिनके प्रेम-प्रवाह में ऊधो जैसे ज्ञान के भण्डार भी गोते लगा चुके हैं, पोड़प-कला अवतारी पूर्ण-ब्रह्म भगवान् श्रीकृष्ण को 'नाथ' 'प्राणेश्वर' आदि द्वारा सम्बोधित करते हुए भी, 'मुरारी' 'कृष्ण' 'गोपाल' आदि कहा है। महा-सती द्रौपदी ने भी अनेक स्थानों पर, पञ्च-पाण्डवों को, उनके नाम द्वारा ही सम्बोधित किया है। इस प्रकार हम देखते हैं कि किसी भी युग में इस प्रथा का सामाजिक रूप से प्रचार नहीं हुआ। हाँ, इतना अवश्य है कि प्राचीनकाल में नामों द्वारा सम्बोधित किये जाने के साथ ही साथ 'प्रियतम' 'प्राणनाथ' आदि भी कहा जाता था; किन्तु, उस समय इस सम्बोधन ने किसी प्रकार की प्रथा का रूप धारण नहीं किया था जैसा कि आधुनिक काल में स्पष्ट दृष्टिगोचर हो रहा है। अतः यह कुछ आवश्यक नहीं है कि स्त्रियाँ, पति-देव को, 'प्राण-नाथ' 'प्राणबल्लभ' 'आर्य-पुत्र' 'डीयर—डार्लिंग' आदि शब्दों द्वारा सम्बोधित करें। इस बात को मानने में किसी भी विचार-शील पुरुष को आपत्ति न होगी कि आदरनीय जेष्ठ सम्बन्धियों का नामोच्चारण शिष्टाचार को समाज की ओर से प्रथा का स्वरूप दे देना अत्यन्त निन्द्य है। यदि अभाग्यवश किसी स्त्री के मुख से पति देव का नाम निकल गया तो बस! प्रायश्चित् का भूत सिर पर सवार होकर चीखने लगता है। क्या शिष्टाचार की प्रथा में परिणित कर देना अन्याय नहीं है?

इस प्रकार हम देखते हैं कि समाज में स्त्रियों की इतनी दुर्दशा है कि जिसे देख कर शरीर के रोएँ खड़े हो जाते हैं। इस का यह अर्थ नहीं है कि समाज में ऐसे मनुष्यों का अभाव है जो निःस्वार्थ-भाव से स्त्रियों को, उनके अधिकार पुनः प्राप्त करा देने की चेष्टा में लगे रहते हैं; किन्तु कहना न होगा कि ऐसे सच्चे समाज-उद्धारकों की संख्या, ढोंगी समाजियों के समक्ष बहुत ही अल्प है इसलिये सच्चे-समाजियों को प्रोत्साहन देने के लिये बलिदान की आवश्यकता है। केवल मुंह से चिल्लाना कि 'समाज में स्त्रियों को न्यायानुकूल अधिकार प्राप्त हों।' पर्याप्त नहीं है। यदि हमारा हृदय सत्य की ओर झुक कर सच्चा न बनेगा तो यह आशा करना ही व्यर्थ है कि किसी कार्य-क्षेत्र में सफलता प्राप्त कर सकेंगे। भारत का उत्कर्ष, सदैव सत्य के आधार पर अवलम्बित रहा है और भविष्य में भी रहेगा। इसी सत्य ने भारत को भाग्य पर विश्वास दिला कर, पुरुषार्थी होने की शिक्षा दी है। भाग्यवाद तथा पुरुषार्थवाद की सम्मिश्रणता, इसी शक्ति की स्वच्छ धारा है। अन्धी साम्प्रदायिकता का नाश करके, तर्क-प्रधान-धर्म की स्थापना इसी ने की है तथा अपने निर्मल और पवित्र मुखारविन्द से संसार को शाँति तथा कर्मोद्यम का पाठ पढ़ा कर भारत की कीर्ति में और भी चार चाँद इसी ने लगाए हैं। अतएव, यदि समाज-सुधार की विशाल अट्टालिका, स्वार्थ, कापुरुषता, दाम्भिकता आदि को त्याग कर 'सत्यता' की नींव पर खड़ी की जावे तो अत्युत्तम और लाभकारी होगा। देश तथा समाज के हितचिन्तकों को चाहिये कि वे स्त्रियों का सुधार, केवल अपना कर्त्तव्य समझ कर, सत्यता पूर्वक करें न कि किसी स्वार्थ की भावना को हृदय में स्थान देते हुए समाज की अवनति की ओर अग्रसर करें। उन्हें इस बात पर अवश्य ध्यान रखना चाहिये कि स्त्री ही भावी सन्तानों की शिक्षिका है। ऐसी अवस्था में तन, मन, धन से स्त्री-उद्धार का आन्दोलन उठा देना, चाहिये, क्यों कि यदि ऐसा न किया जावेगा तो स्त्रियां शिक्षा, वैवाहिक-स्वतंत्रादि से पूर्ववत् निर्बुद्धि और निस्तेज होकर, उत्थान के स्थान पर भारत का

पतन करती जावेंगी। यदि समाज में स्त्रियों की इतनी शोचनीय अवस्था नहीं होती तो यह बात निर्विबाद सिद्ध है कि भारत का पतन कदापि न होता। अतएव, भारत के उन पुरुषों से जो 'हिन्दू' कहलाने में अपना गौरव समझते हैं, मेरी प्रार्थना है, कि उक्त लेख की त्रुटियों पर क्षमा कर के, उस पर गम्भीरता-पूर्वक मनन करें और विदेशियों, विधर्मियों तथा स्वार्थियों के कठोर-पाशो से जकड़े हुए समाज के उत्थान का बीड़ा उठा कर जीवन को सफल बनायें। साथ ही साथ यह स्मरण रखें कि विदेशी और विधर्मी सदैव अपने स्वार्थ पर ही ढुलकेंगे, चाहें इसके लिये उन्हें सैकड़ों का बलिदान क्यों न करना पड़े। अतः भावी-संतानों को सावधान रखने की शिक्षा का प्रचार करके और समाज में स्त्रियों को पूर्ण-रूप से स्वतंत्र करके, भारत के ऋण से मुक्त होजावें!

"स्मृति"

[श्री सुरेन्द्रकुमार अष्ठाना]

इस शान्त हृदय के अंतरगत
बतलादो फिर क्यों कर आई? ॥१॥

प्रिय हृदय-वाटिका में तेरे
मधुमास मनाने को आई।
बनकर कोयल नित कूक-कूक
मृदु राग सुनाने को आई ॥२॥

क्यों मेरे सुखमय जीवन की
फिर याद दिलाने को आई?
घोर विरह की ज्वाला को
फिर से भड़काने को आई? ॥३॥

हो शान्त हृदय मत हो चिन्तित
मैं उसे जगाने को आई
दुख दर्द मिटा करके मनका
कुछ शान्ति बँधाने को आई ॥४॥

निश्चेष्ट निरख अपनी स्मृति
क्या उसे जगाने को आई ?
या मेरे मन की पीड़ा को
कुछ और बढ़ाने को आई ? ॥५॥
लख अपनी सी एक मूर्ति वहाँ
मैं उसे हटाने को आई
बनकर धनवन्तरि उनके प्रति
मैं उन्हें मिटाने को आई ॥६॥

जलता लख मेरा हृदय-दीप
क्या उसे बुझाने को आई ?
या बुझते दीपक को मेरे
प्रज्वलित बनाने को आई ? ॥७॥
प्रिय प्रेम स्नेह से भर उसको
कुछ आप बढ़ाने को आई
बन कर कोयल नित कूक-कूक
मृदु राग सुनाने को आई ॥८॥



श्री रामकुमार वर्मा



श्री सागर



लेखक की समस्या

[यशपाल जैन]

प्रभात का समय था।

किशोरी ने दुखी-भाव से कहा, "देखो जी, यों घर का काम-काज कभी भी नहीं चल सकता। इस लेखकी को छोड़ कर और कोई धंधा देखो, तुम्हारे पीछे गिरिस्ती है। उसका पेट तो भरना ही पड़ेगा।"

गिरीश ने किताब पर से निगाह उठा कर कहा, "किशोरी, सोच तो मैं भी रहा हूँ कि कोई धंधा देखूँ। इस तरह काम नहीं चल सकेगा। मुझे बच्चों का पेट भरना है। अकेला होता तो कोई बात नहीं थी। रोटी न मिलती तो चने चबा कर ही अपना गुजर कर लेता; किन्तु अब तो वैसा नहीं हो सकता।"

किशोरी ने कहा, "हाँ, यही तो मैं चाहती हूँ। नौकरी होगी तो बंधी आमदनी होगी। उससे घर का खर्च भी संभल जायगा। ज़रा-ज़रासी बात की तंगी भी नहीं रहेगी और यह रात-दिन की जो चिन्ता है वह भी मिट जायगी।"

गिरीश बोला, "यह तो ठीक है, किशोरी, पर नौकरी मिले कैसे? देखती नहीं हो चारों ओर आदमी मारे-मारे फिर रहे हैं। जिनको नौकरी मिलती हैं, वे बड़े भाग्यवाले होते हैं, किशोरी। उनकी बड़ी बड़ी सिफारिशें होती हैं। उनके रिश्तेदार बड़े-बड़े ओहदों पर होते हैं। मेरा तो कोई भी नहीं है। आज को तुम्हारे पिता जी...!

गिरीश का गला भर आया, आँखें डबडबा आईं। किशोरी के भी कई आँसू टपक पड़े। कुछ देर बाद गिरीश ने संभल कर कहा "अरे, जाने भी दो, इन बातों को, किशोरी। वे दिन गये सो गये। अब तो आगे की सोचनी ही पड़ेगी। बिना सोचे काम भी कैसे चल सकेगा। किशोरी, सच्ची लगन से अब तो किसी नौकरी के पीछे पड़ना ही होगा, नहीं तो...नहीं तो, किशोरी...।"

किशोरी ने ढाँडस बँधाया "इतने दुःखी क्यों होते हो? कोशिश करो। फिर भी अगर नौकरी नहीं मिलती है तो देखा जायगा। अपनी सी करलो फल तो ईश्वर के हाथ है।"

गिरीश ने कहा,—"अच्छा, किशोरी जी-जान से कोशिश करूँगा। जैसी मिलेगी वैसी हो कर लूँगा। मेरी रुचि नौकरी की ओर नहीं है तो न सही। सब चीजें अपनी रुचि की ही थोड़ी मिलती है! किशोरी, तुम तो जानती हो बचपन से ही मेरी इच्छा थी कि नौकरी किसी की भी नहीं करूँगा। पराधीनता में सुख कहाँ मिलता है। वहाँ तो मशीन बने मालिक के इशारे पर चलो। चल सको तो चलो, न चल सको तो चलो। और वैसे नौकरी मालिक के हुक्म की अवहेलना करने की हो भी कैसे सकती है! न सही, इस समय तो विचारों की हत्या करने में ही हमारा कल्याण है।"

किशोरी रोती-सी बोली, "मैं सच कहती हूँ, मैं नहीं चाहती कि तुम्हारे विचारों की हत्या हो, किन्तु साथ

में यह भी नहीं देख सकती कि बच्चे भूखों मरें। ये बच्चे मेरे ही तो हैं, फिर इन्हें कैसे भूखा देखूँ। उनका पेट तो कैसे न कैसे भरना ही है।"

तभी दस बरस के सबसे बड़े लड़के नन्दन ने आकर मुँह बनाते हुये कहा,"अरे अम्मा, तुम यहाँ बैठी हो और चूल्हे में आग भी नहीं सुलगी। मुझे तो बड़ी भूख लग रही है। सबेरे से मैंने कुछ भी तो नहीं खाया और अब देखो बारह बजे हैं। क्या मुझे भूख नहीं लगती, अम्मा ?"

किशोरी ने कहा,"बेटा......"

और आँसू-भरी आँखों से उसने गिरीश की ओर देखा, आँखें मानों कह रही थीं—अब तुम्हीं बताओ मैं क्या करूँ। नन्दन का मुँह देखो, भूख के मारे कैसा उतर रहा है।

नन्दन ने फिर कहा, "अम्मा, मुझसे तो भूख अब सही नहीं जा रही है। कुछ नहीं है तो एक पैसा दो। चना ले आऊँ फिर धीरे-धीरे रोटी बनाती रहना।"

किशोरी ने काँपते होठों से कहा, "बेटा, पैसा नहीं है !"

इन शब्दों के कहते ही मानों आँसुओं का बाँध जो अब तक रुका हुआ था टूट गया। किशोरी ने फटी-फटाई धोती में अपना मुँह छिपा लिया और सिसकियाँ भर-भर कर रोने लगी। किशोरी को यों रोते देखा तो नन्दन का जी भर आया। वह मन ही मन अपने को कोस कर कह रहा था—हाय मैंने पैसा क्यों माँगा ? उनके पास जब होता था तो वह बिना माँगे ही दे दिया करती थी।

उसने किशोरी की पीठ पर हाथ रख कर कहा, "अम्मा रोती क्यों हो ? रहने दो मैं पैसा नहीं लूँगा, और न रोटी की ही कहूँगा। अम्मा सच समझो मुझे भूखा रहना इत्ता बुरा नहीं लगता जित्ता कि तुम्हारा यों रोना बुरा लगता है।"

और किशोरी रो ही रही थी। नन्दन ने फिर कहा,"अम्मा चुप हो जाओ, नहीं तो लो मैं जाता हूँ। तुम रोती रहोगी तो मैं घर नहीं आऊँगा, भूखा बाहर ही घूमता रहूँगा।"

किशोरी ने फिर भी मुँह ऊपर को नहीं उठाया, और न जाते हुए नन्दन को रोकने को एक शब्द ही कहा।

गिरीश ने कहा, "किशोरी......"

किशोरी चुप !

गिरीश ने फिर कहा, "अरे देखती हो न, नन्दन बिना कुछ खाये ही स्कूल जा रहा है। उठो, उसके लिये थोड़े-बहुत खाने का इन्तजाम कर दो। मेरी कहानी के रुपये आने ही वाले हैं। आते ही दे दूँगा।"

किशोरी चुपके से उठी। घड़े में से पानी लेकर उसने मुँह के आँसू तो धो डाले; किन्तु हृदय और मन पर जो व्यथा के बादल छाये हुए थे उन्हें किसी भी उपाय से न धो सकी। और नन्दन को साथ ले पड़ोसिन के घर की ओर चल दी।

[२]

गिरीश कमरे में अकेला बैठा-बैठा सम्पादक (?) के पत्र को बार-बार पढ़ रहा था :

महोदय,

कृपा पत्र के लिये धन्यवाद। इस महिने के बजट में से कुछ भी नहीं बचा है। अगले महिने में अवश्य ही आपकी कहानी का पारिश्रमिक भेज दिया जायगा। आशा है देरी के लिये क्षमा करेंगे।

भवदीय

......

सम्पादक

गिरीश ने पत्र समाप्त कर एक गहरी असंतोष की साँस ली और दोनों हाथों से मुँह को ऐसे पोंछा मानों सोते से जगा है। उसे लग रहा था मानों स्त्री और बच्चे भूख से पीड़ित खड़े कह रहे हैं

अब कैसे होगी। दो दिन तो व्रत करते हो गये। तुम्हारा आसरा तो बस कहानियों के रुपयों पर ही तो था। अब क्या है, वहाँ से भी कोरा जवाब मिल गया।

नन्दन कह रहा था—अम्मा रोटी में देर है तो एक पैसा ही दे दो, चने ले आऊँ। भूख तो अब मुझ से सही नहीं जा रही है।

किशन और विपुल कह रहे थे—माँ, दूध दो पीने को। और रोटी भी दो।

किशोरी कह रही थी—कैसे जाड़े पड़ रहे हैं और बच्चों के पास कोई भी कपड़ा नहीं है। ऐसे जाड़े तो बहुत दिनों से नहीं पड़े। देखते हो न, नन्दन एक कमीज़ पहिन कर ही थर-थर काँपता स्कूल जाता है।

गिरीश का सर चक्कर खा उठा। वह किस से माँगने का साहस करे। सभी जानते हैं वह नामी लेखक है। उसकी क़लम से निकला एक-एक शब्द पुजता है। जहाँ कहीं वह जाता है, उसका आदर होता है। पर कोई नहीं जानता कि ऐसे नामी लेखक की घरेलू स्थिति ऐसी भी हो सकती है। लोगों में जब उसका ऐसा सम्मान है तो वह कैसे मुँह खोलकर कहे कि मेरे बाल-बच्चे भूखे हैं, कुछ रुपया दे दो। क्या इस बात पर कोई विश्वास कर सकेगा!

अब गिरीश कुछ सँभला। कुछ न कुछ तो करना ही होगा— उसने दृढ़ता के साथ कहा। यों सोचते-सोचते यह पेट की समस्या नहीं हल हो सकेगी। पुस्तक गई है; पर पारितोषिक! ऊँह, कौन आशा है! और-और नामी लेखकों की कृतियों के सामने क्या वह पुस्तक टिक सकेगी! बारह सौ! बहुत होते हैं। सभी कठिनाइयाँ दूर हो जाँयगी। चालीस की नौकरी पर तो इतने दो वर्ष में भी नहीं मिलेंगे। पर कौन जाने, वह मुझे मिल ही जायगा। ऐसे ही भाग्य होते तो यह दशा ही क्यों होती!

गिरीश ने एक अँगड़ाई ली और उठ कर खड़ा हो गया।

शाम होने को थी। गिरीश ने एक बार चारों ओर कमरे में निगाह डाली; फिर बाहर चला गया।

बाहर खड़े होकर सोचा—कमलेश भी तो मित्र है। उसी से आज कुछ रुपये ले आऊँ।

गिरीश कमलेश के घर की ओर चल दिया। रास्ते भर वह सोचता गया कि किस तरह रुपया माँगा जाय। न जाने कितनी तरकीबें निकाली गई; किन्तु सीधे-सच्चे गिरीश को एक भी उपयुक्त न जान पड़ी। वह चाहता था कि न तो झूठ ही बोलना पड़े और न अपनी दयनीय दशा को ही प्रगट करना पड़े, और रुपया भी मिल जाय।

इन्हीं विचारों में उलझा वह धीरे-धीरे नीचे को देखता हुआ चला जा रहा था, कि किसी ने पीछे से उसके कंधों पर हाथ रक्खा गिरीश ने मुड़कर देखा तो कमलेश ही था। कमलेश हँसता हुआ बोला—

"कहिए, गिरीश बाबू, आज इधर कैसे निकल पड़े?"

गिरीश ने हृदय के भावों को छिपाते हुए कहा, "यों ही, तुमसे मिला बहुत दिन हो गये थे। सोचा आज तुमसे मिल ही आऊँ।"

"ओहो, सचमुच आपने मेरे ऊपर बड़ी कृपा की। आइये, आइये।"

कमलेश का घर आ गया और दोनों मित्र एक सजे-सजाये कमरे में बैठ कर बातें करने लगे।

कमलेश ने कहा, "गिरीश बाबू, तुम्हारी लेखनी में बड़ा जोर है। तुम्हारा प्रत्येक शब्द प्रतिभा से भरा हुआ होता है। इन दिनों क्या लिखा है?"

"अरे भाई कमलेश क्या बताऊँ। इन दिनों तो कुछ भी नहीं लिख पाया।"

कमलेश ने कहा, "भाई, मुझे क्यों बनाते हो ! पारतोपिक के लिये जो पुस्तक भेजी है, उसकी क्या मुझे मालूम नहीं है ?"

गिरीश बोला, "अरे, योंही भेज दी है।"

कमलेश ने हँसकर कहा, "गिरीश बाबू, बारह सौ मिलेंगे। मिठाई खिलाओगे न ?"

"बारह सौ !" (अम्मा एक पैसा ही दे दो। चने ले आऊँ।......देखते नहीं नन्दन जाड़े में थर-थर काँपता अकेली कमीज पहन कर स्कूल जाता है ......)

गिरीश खोया-सा बैठा था।

कमलेश ने उस के मुँह की ओर ध्यान से देखा, कैसा अप्रतिम हो उठा था !

कमलेश ने बात बदलने को कहा, "कहो, गिरीश बाबू, भाभी किशोरी और बच्चे अच्छे हैं न ?"

गिरीश ने कहा "ठीक हैं। किन्तु...... किन्तु......।" मुँह पर आई बात रुक गई।

कमलेश ने गिरीश को रुकते देख व्यग्रता से कहा, "हाँ, हाँ कहो, रुक कैसे गये ?"

गिरीश के जी में आई कहदूँ—तुम्हारी भाभी और बच्चे बड़ी मुसीबत में हैं, किन्तु उसकी वास्तविक दशा जान कर कमलेश क्या सोचेगा। गिरीश ने साहस किया; फिर भी वह कुछ न कह सका।

कमलेश ने फिर कहा, "यार कहते क्यों नहीं, क्या कह रहे थे ?"

गिरीश ने कहा, "यही तो कह रहा था कि सब अच्छी तरह से हैं। और कुछ नहीं, सच मानो।"

बहुत देर तक बातें होती रहीं; फिर भी गिरीश कुछ न कह सका और ज्यादा रात होती देख वह घर चला आया।

[३]

पड़ौस की घड़ी ने एक बजाया। जाड़े के मारे गिरीश को नींद नहीं आ रही थी और न किशोरी को ही; पर दोनों चुपचाप पड़े थे।

सहसा नन्दन ने धीरे से कहा, "अम्मा, अम्मा मुझे जाड़ा लग रहा है।"

किशोरी मानों सन्न होगई। जैसे देह में जान ही नहीं है।

नन्दन ने फिर चिल्ला कर कहा, "अम्मा, अम्मा, सुनती नहीं हो, मुझे कुछ उढ़ा दो। बड़ा जाड़ा लग रहा है। हाथ-पैर बरफ से ठंडे हो रहे हैं।"

गिरीश ने रुँधे गले से कहा, "बेटा !"

किशोरी चुपचाप उठी और नन्दन की चारपाई पर जा लेटी। जाड़े में काँपते नन्दन को उसने छाती से कस कर चिपटा लिया और उसके पैर अपने पेट में लगा लिये।

नन्दन ने कहा, "हाँ, अम्मा अब ठीक है। जाड़े के मारे काँप रहा था।"

किशोरी कुछ कह न सकी। वह नन्दन को छाती से चुपटाये ज्यों की त्यों पड़ी रही। कुछ ही देर में नन्दन गहरी नींद में सो गया; किन्तु किशोरी...... !

दिन निकलने में अभी काफी देर बाकी थी। गिरीश रात भर एक क्षण को भी नहीं सोया था। उसने कहा, "किशोरी, सो रही हो क्या ?"

किशोरी भी रात भर जगी पड़ी रही थी। बोली, "नहीं तो, कहिए।"

गिरीश ने करुण-भाव से कहा, "किशोरी, कुछ भी समझ में नहीं आता है ! चारों ओर से मुसीबतें आ रही हैं। पेट भर खाना भी समय पर नहीं मिलता, इससे ज्यादा और क्या होगा ! क्या इस ईश्वरीय प्रकोप के लिये हमीं रहे हैं ?"

किशोरी बोली, "तुम तो यों ही घबराते हो। संघर्ष किसके जीवन में नहीं रहता है। अरे, उसी में तो जिन्दगी है। चिन्ता-रहित व्यक्ति तो अकर्मण्य होता है। तुम्हीं बताओ पेट भरने की चिन्ता होती है तभी तो आदमी कमाता है, और उस कमाने की विविध रीतियों से ही तो उसमें

स्फूर्ति रहती है। परिश्रम जीवन देता है। दार्शनिक बनने का अब समय नहीं है।"

गिरीश ने कहा, "किशोरी, मैं कब दार्शनिक बनता हूँ। तुम देखती हो कितना लिखता हूँ; फिर भी पैसा नहीं मिलता है। इसमें मेरा क्या अपराध है।"

किशोरी ने मलिन भाव से कहा, "अपराध तो किसी का भी नहीं है। सब भाग्य के फेर हैं। पर यह भी तो है कि मनुष्य को समय और परिस्थितियों के अनुसार बदल जाना चाहिए। यह लिखने का काम ऐसा है कि और धंधा करते हुए भी किया जा सकता है। पेट भरने के लिये इस पर निर्भर नहीं.........।"

तभी बात काटते हुए नन्दन ने कहा, "बाबू जी, कल मास्टर जी कह रहे थे—कल फ़ीस न लाया तो नाम काट दूँगा। कै महीने की फ़ीस नहीं दी गई है—नवम्बर, दिसम्बर, जनवरी हो, तीसरा महिना चल रहा है।"

गिरीश चुप रहा।

किशोरी ने डपट कर कहा, "चुप, पाजी कहीं के, रोज-रोज फ़ीस की ही चर्चा होती रहती है। कट जाने दे नाम, हम अब तुझे नहीं पढ़ावेंगे।"

नन्दन ने कहा, "अम्मा, यह छः महिने की पढ़ाई जो हो चुकी है सो ? नहीं पढ़ाना था तो जौलाई से न पढ़ाया होता !"

किशोरी इस पर और भी क्रोधित हो उठी। बोली, "भाड़ में जाने दे अब तक की पढ़ाई। खबरदार, जो फ़ीस के बारे में कभी एक शब्द भी कहा। समझा, रे ?"

गिरीश ने शांत-भाव से कहा, "इतना क्यों बिगड़ती हो, किशोरी ! क्या एकसी हालत सदा किसी की भी रही है जो हमारी रहेगी।"

फिर उन्होंने नन्दन से कहा, "बेटा, घबराओ मत, ईश्वर ने चाहा तो दो-एक दिन में कुछ न कुछ प्रबन्ध अवश्य कर दूँगा।"

नन्दन बोला, "बाबूजी, बिना फ़ीस लिए तो अब मैं कभी स्कूल नहीं जाऊँगा। मास्टरजी इस बात पर मारते हैं।"

किशोरी इस पर बेहद चिल्ला उठी, "मत जाना अब कभी मत जाना। देखो न, ऐसा अहसान कर रहा है मानों इसके न पढ़ने से धरती-आसमान ही फट जायंगे।"

गिरीश-नन्दन दोनों ही चुप रहे।

थोड़ी-सी रात बची थी। सबके सब चुपचाप पड़े थे। पर सन्नाटे को भेदता हुआ मानों कोई कह रहा था—ओ जीवन-पथ के यात्रियो ! क्या थक गए ! साहस बटोरो, अभी तुम्हें बहुत चलना है। यों थके हुए-से बैठे रहने से यात्रा समाप्त न होगी और जब अमूल्य समय निकल जायगा, तब पछताने के अतिरिक्त और कुछ भी हाथ न आवेगा।

[४]

उषा आई। उसमें नूतन स्फूर्ति थी, जीवन था, हर्ष था; किन्तु गिरीश अभागे की उस छोटी-सी चिन्ताओं में ग्रस्त गृहस्थी के लिये कुछ भी तो सुख-दायक उसमें नहीं था।

सूरज की किरणें फैलीं; पर घर का बाना-बरण ज्यों का त्यों बना रहा। उसमें कोई भी परिवर्तन नहीं हुआ।

गिरीश बाहर के कमरे में बैठा था। चारों ओर की परिस्थितियों ने उसकी आँखों में आँसू बुला दिए थे। आज बरसों बाद उसकी आँखों में आँसू आए थे।

वह सोच रहा था—जीवन में वैभव यथेष्ट नहीं है, उसमें पैसे का भी महत्त्व-पूर्ण स्थान है। आज उसके पास वैभव है; किन्तु पैसा के न होने के कारण उसकी दशा कैसी दयनीय है, दुखमय है !

यह सोचते-सोचते उसकी आँखों से एक-एक बूंद गिरी; दो-दो गिरीं, फिर तांता बँध गया।

सिसकियाँ आने लगीं, और गिरीश ....!

तभी किशोरी कमरे में आई। उसने गिरीश को उस दशा में देखा तो आन्तरिक वेदना से उसका हृदय फटने लगा। फिर भी उसे छिपाते हुए बोली, "छिः, छिः, मर्द होकर यों बच्चों की तरह रोते हो! उठो, हाथ-मुँह धो ओ। सब भगवान् भली ....।"

आवाज़ आई — बाबू जी, तार लीजिये।

गिरीश उठा, और तारवाले से तार ले लिया। काँपते हाथों से खोलकर पढ़ा। लिखा था—

"आपकी पुस्तक (?) पर जो कि सर्वोत्कृष्ट ठहराई गई है, बारह सौ रुपये का पारतोषिक दिया गया है।"

व्यग्र और उत्सुक किशोरी ने भी तार सुना। फिर बड़ी देर तक दोनों हँसते रहे।

पतंग

[श्री इन्दिरादेवी वैद्यशास्त्रिणी]

पतंग ! तू मत कर मुझसे प्यार;
मेरी रूप-राशि पर प्यारे, तन, मन कर न निसार !
तू है प्रेम-सुधा का प्यासा, यहाँ कहाँ वह सार;
जलती दीप-शिखा में तेरा, होगा तन, मन क्षार !
भोले-भाले प्रेमी मेरे, मैं तुझ पर बलिहार;
यौवन की मदिरा को पीकर, जीवन-धन न निसार !
मेरी रूप-ज्योति में कितने, जले हृदय सुकुमार;
मोहमयी वह दीप-शिखा हूँ, मन में तनिक विचार !



श्री इन्दिरादेवी शास्त्रिणी

आप कविराज पं० गयाप्रसाद जी साहित्याचार्य 'श्रीहरि' की धर्मपत्नी है। आपके लेख ओजस्वी तथा कविताएं मधुर और भावपूर्ण होती हैं। आप बड़ी सौम्य, सुशील एवं मधुर भाषिणी हैं। जीवन-सुधा में आपके लेख और कविताएं बहुधा छपती रहती है। नारी आरोग्य मन्दिर, गणेशगंज, लखनऊ की आप सञ्चालिका हैं।

कला के संबंध में

[श्री रामरतन भटनागर हसरत एम. ए.]

चित्रकार और कवि दोनों विश्वात्मा तक कल्पनानुभूति के द्वारा पहुँचते हैं। अपनी आधार वस्तुएँ वे इस सृष्टि से ही लेते हैं, प्रकृति और मनुष्य को वे अपना विषय बनाते हैं; परन्तु प्रत्येक सच्चे कलाकार की कृति की तरह काव्य और चित्र में भी आत्मा आधार-वस्तु पर विजय पा जाती है।

कल्पना को यदि कला की सूची में आना हो तो उसे स्थूल रूप लेना पड़ेगा, कारण यह है कि कला और अभिनय ही का सीधा-साधा संबंध है। किसी भी वस्तु के कला होने के लिये उसे जाने-बूझे प्रतीक (Symbols) में लिखा जाना आवश्यक है। जिस अनुभव को व्यक्त करना हो उसकी विशेषता (Nature) अथवा प्रकृति आधार (Form) निश्चित कर देगी और जब एक बार आधार निश्चित हो जायगा तो वह आधार वस्तु ही जो कलाकार सौन्दर्यानुभूति के विकास के लिये चुनेगा, उसकी स्वतन्त्रता की सीमा निर्धारित कर देगी। इसी का फल होता है 'टेकनीक' (Technique) और यहाँ से भिन्न-भिन्न कलाओं में टेकनीक की भिन्नता भी आती है।

पृथ्वी की पंक से कोई भी कलाकार सम्पूर्णतः बच नहीं सकता। यही नहीं कि उसे अपने आधार—पत्थर, रँग या स्याही — ही दुनिया से लेने होते हैं, परन्तु यह भी है कि जो आकार वह रचने की चेष्टा करता है वह उसे दुनिया के उसके अनुभवों में ही मिलेंगे। वह जब कल्पना के संसार में होता है तो वह संसार के ही रँग और आकार मिला रहा होता है और इस प्रकार वह भिन्न-भिन्न प्रकार के रंग और आकार पैदा कर देता है। इसी दुनिया का संघर्ष उसे अपने आदर्शों को प्रकाश में लाने के लिये उकसाता है। इसके न होने पर तो वह शायद चुप ही रह गया होता। परन्तु रंग और पत्थर से बाहर की किसी चीज की ओर उसका लक्ष्य होता है। इस दिशा में उसकी सफलता प्रकृति के ऊपर आत्मा की और मृत्य के ऊपर अमृत्य की विजय है।

कला और प्रकृति में तात्विक भेद कोई नहीं है। जो खास भेद है उसे यों कह सकते हैं कि कला का 'घनत्व' (Intensity of Art) अधिक होता है। चाहे कलाकार वस्तु के भीतर की ओर से मानसिक चित्रण करे अथवा बाहर की ओर से बाह्य-चित्रण, वह कद्दे-आदम-चित्र में से किसी एक विशेष नुक़्ते अथवा स्थान पर जोर दे रहा होता है। वह अपनी रुचि के अनुसार किसी खास चित्र को देना चाहता है और अपना दूरदर्शक यंत्र उसकी ओर 'फोकस' (Focus) करता है। और सब वह भुला देता है। और सब एकान्त प्रयोगशाला में प्रवेश नहीं कर पाता और यों उसका अस्तित्व ही नहीं रह पाता। इस 'घनत्व' के साथ कलाकार के व्यक्तित्व और चुनाव का

प्रश्न आजाता है। बहुत से दृश्यों, वस्तुओं, मुद्राओं अथवा घटनाओं में से कलाकार कुछ चुन लेता है और दूसरे उसी समय शून्य पड़ जाते हैं। उसका चुनाव उसके सामने आई हुई वस्तुओं के प्रति उसकी व्यक्तिगत रुचि और उसकी सहानुभूति अथवा विद्वेष से रंगा होता है। मनोविज्ञान कलाकार के इसी पहलू पर विचार करता है।

यह भी जानना आवश्यक है कि सभी कलाएँ एक सी उपयोगी नहीं हैं। उपयोगिता से मेरा अर्थ सौन्दर्यानुभूति देना है। काव्यकला सर्वोच्च कला है, इसलिये कि वह कल्पना को उत्तेजना देकर महाशून्य को चित्र और आकार की स्थूलता प्रदान करती है। इस दृष्टिकोण से वह केवल संगीतकला के नीचे आती है जो स्वयं शून्य में निर्माण करती है और अन्यतम सूक्ष्म आधार द्वारा। संगीत के स्वर शून्य में एक बड़े मन्दिर का निर्माण करते हैं। उसका साधन शुद्ध और अमिश्रित नाद है। काव्य का आधार ज्यादा कड़ा है, क्योंकि सुन्दर और कला एवं रसपूर्ण ध्वनियों के साथ ही वह शब्दों का प्रयोग करता है जो अर्थ भी रखते हैं। अधिकतः तो अर्थों का सम्बन्ध ठोस वस्तुओं से होता है और यह सम्बन्ध ही श्रोता के मन में चित्र बुला देता है। ऊँचे संगीत में कोई अर्थ नहीं होता, सम्पर्कार्थ (association value) बहुत ही कम, फिर भी संगीतज्ञ का काम इतना ही बड़ा है जितना कवि का। नतीजा यह होता है कि संगीतज्ञ कुछ सीमित फल पैदा कर सकता है। और उसके लिये उसे कवि से अधिक प्रयास करना होता है। जो चित्र वह देता है वह धुंधला रेखा चित्र रह जाता है और वह इस अस्पष्ट अनिश्चित और संकेत प्रधान प्रकार के भाव को जन्म देता है। संगीतज्ञ इस बात को जानता है और इस अनिश्चय को दूर करने के लिए वह कवि के गढ़े शब्दों का प्रयोग करता है और साथ ही अपनी अभिव्यक्ति का क्षेत्र भी बढ़ा लेता है।

कला के स्वास्थ्य के लिए यह आवश्यक है कि सभी अनावश्यक बातें दबा दी जायें जिससे सौंदर्यानुभव स्थाई हो। यह असम्भव नहीं है कि इसी विचार को लेकर मनुष्य ने कला की सृष्टि की हो। इस विचार की प्रतिक्रिया और रस सृष्टि के विचार ने शताब्दियों बाद मनुष्य समाज में अलंकार शास्त्र की सृष्टि की। अपनी जगह पर सभी अलंकार अच्छे हैं, परन्तु उनका बाहुल्य बुरा है। कविता में ही नहीं, आलेख्य जैसी कला में भी अलंकारों का प्रवेश है। कामसूत्र में वात्स्यायन ने रूप भेद, प्रमाणम्, भाव, लावण्य-योजन, सादृश्य और वर्णिकाभंग नाम के आलेख्य-विद्या के षडांग का कथन किया है। अगर हम साहित्य, संगीत और आलेख्य शास्त्रों का अध्ययन करके उन पर से विभिन्न भाषाओं का आवरण उठा सकें तो हमें मालूम हो जायगा कि अलंकार स्वतः बड़े काम की चीज़ है। संगीत में अलंकार आवृति अनावृति द्वारा इनके क्रमिक विकास में सहायता देते हैं। सभी कलाओं के अलंकारों के नीचे सादृश्य है। संगीत में अलंकारों की कला पूर्णता तक पहुँच जाती है और उनकी सहायता से हमें काल और स्थान की अनन्त सत्ता का और उनके महान विस्तार का पता चलता है। अनन्त काल और अनन्त स्थान का अपनी आत्मा में अनुभव करना ही मनुष्य का चिर ध्येय रहा है। इसी से तो वह अनन्त सत्ता तक पहुँचता है और फिर कला की सर्वोच्च उड़ान उसे अनन्त काल और स्थान का स्पर्श कराकर इस ध्येय तक पहुंचाने में क्या सहायता नहीं करती।

परन्तु प्रत्येक कला में रस की अभिव्यक्ति एक सी नहीं होती — एक हद तक नहीं होती। कोई विशेष रस किसी एक विशेष कला में अच्छी तरह दिया नहीं जा सकता हो अथवा किसी

अंश में ही अभिव्यक्त किया जा सकता हो, यह बात सम्भव है। कला की अभिव्यक्ति की सफलता साधन पर बहुत हद तक निर्भर है। एक मूर्तिकार ने प्रकृतिदर्शन के समय ऐसा दृश्य देखा कि उसके स्नायु तन्तुओं पर तंद्रा का भाव पैदा हो गया। वह इस अद्भुत अनुभूति का अपने पत्थर के आधार में सीधी तरह चित्र नहीं दे सकता था। उसने यह किया कि सोते हुए बालक की एक मूर्ति बनाई और उसकी कला इतनी पूर्ण थी कि मूर्ति को देखने से देखने वाले में सुबुद्धि और तंद्रा के भाव उत्पन्न हो जाते थे। प्रत्येक कलाकार इस हद तक पूर्णता को नहीं पहुँच सकता। उसके लिए यह आवश्यक है कि समझ ले कि कला की उसकी विशेष शाखा का क्षेत्र कहाँ समाप्त हो जाता है।

परन्तु सभी अनुपयोगी अथवा अव्यवहारिक कलाओं को लेते हुए, मेरे विचार में कला की सबसे बड़ी विशेषता उसका संकेत तत्व (Suggestiveness) है। कलाकार व्यक्तिगत (Indiscriminate) चुनाव के क्षेत्र में काम करता है और एक ही अच्छे प्रहार से या पेन्सिल या लेखनी के एक ही स्पर्श से वह अपने चित्रों और आकारों की बाह्य-रेखाओं (Outlines) से आगे बढ़ जाता है और बाहरी रेखाओं की पहुँच के बाहर जो है उसकी ओर संकेत करता है। दृष्टान्त के लिये, चित्रकार दो स्तरों में काम करता है परन्तु यदि आप Cubic School (षट्-कोण-स्कूल) के चित्र देखें तो आपको ज्ञात पड़ेगा कि कलाकार अपने आकारोंमें उन आकारों की झलक देना चाहता है जो चार स्तरों (Four Dimensions) में रहते हैं। स्पष्ट है कि वह दूसरी कला के क्षेत्र में बढ़ रहा है—मूर्तिकला के क्षेत्र में। परन्तु उसका आधार दो वस्तुओं में रहने वाला है और इस लिए चार स्तरों की अभिव्यक्ति वह केवल संकेत द्वारा कर सकता है। ऐसा वह प्रति द्वन्दी रेखाओं (Counter-lines) और छाया (Shades) के द्वारा करता है।

इस संकेत करने की प्रक्रिया को परिभाषा में संकेतवाद (Symbolisation) कहते हैं। असल में परिभाषा में जिसे संकेतवाद कहते हैं वह संकेत करने का केवल एक ढंग है, प्रतीक (Symbol) कुछ हद तक उस वस्तु का जिस लिए वह प्रयुक्त होता है। किसी विशेष प्रतीक के प्रयोग से कलाकार उस आत्मा को जागृत करता है जो प्रतीक द्वारा केवल एक ही अंश में अभिव्यक्त हो सकती है और उसके प्रतीक की सफाई और तैयारी प्रतीक शब्द और सम्पर्कार्थ पर निश्चित होती है। दर्शन का एक स्कूल है जिसके अनुसार असीम की अभिव्यक्ति ससीम सम्भव है। प्रतीक का विचार यहीं से उत्पन्न होता है। हर्ष और विषाद के क्षण समीप वस्तुतत्व के जाल में प्रतीक के प्रयोग द्वारा पकड़े जा सकते हैं।

ऊँचे दरजे की कला अधिकतः संकेत प्रधान (अतएव प्रतीक प्रधान) रहती है। सीमा से वह असीम की ओर ले जाती है। संकेत करने का सार्वभौमिक साधन प्रतीक है और ऊँची कला में प्रतीकवाद की प्रधानता रहती है। प्रत्येक काल और प्रत्येक समय के कलाकारों ने प्रतीकों का प्रयोग किया है, कुछ ने जान-बूझकर, कुछ ने अनजान में। पिछले कुछ वर्षों में रिसर्चस्कालरों की प्रवृत्ति महान कलाकारों के प्रतीकों को ढूंढ़ निकालने और मनोविज्ञानिक तत्त्वों के आधार पर उनकी व्याख्या करने की रही है। उन्होंने प्रतीक-विज्ञान ही खड़ा कर दिया है।

अँग्रेजी साहित्य में कला का एक विशेष स्कूल प्रतीकवाद को ही लेकर चला है। मैं प्री-रेफिलाइट (Pre-Raphelite) स्कूल के चित्रकारों और कवियों की बात कह रहा हूँ। इस स्कूल का सबसे

प्रसिद्ध चित्रकार-कवि रोजेटी, डी. जी. (Rossetti, D. G.) है। मुझे याद है कि मैंने रोजेटी के एक चित्र में मृत्यु को पक्षी (गृद्ध) बनकर एक सुन्दर तरुणी का खून चूसते देखा पृष्ठ भूमि में वाद्य हैं। रोजेटी जानता था कि संगीत से प्रतीकानुभव की अभिव्यक्ति बहुत अच्छी तरह हो सकती है और उसने जो वाद्यालंकार चित्र में दिये हैं वह अस्तित्व के संगीत की ओर संकेत करते हैं। बाद को इन प्रतीकों का अर्थ और उनका वैज्ञानिक प्रयोग भुला दिया गया और बाद की कविता (Decadence Poetry) में हम देखते हैं कि उनका प्रयोग असुन्दर और अलंकारिक तत्वों के लिये हुआ है।

इस प्रकार हमें पता चलता है कि साधारण तत्त्वों से बाहर की बात की ओर प्रतीकद्वारा संकेत करना कला की सबसे ऊंची उड़ान है।

हिमगर्भित हिमालय की गंभीर तलैटियों में खड़े होकर वेद की उस ऋचा के ऋषि ने जब पुकारा था— कस्मै देवाय हविषा विधेम:— तो उसने ससीम में असीम के ग्रहण करने का अनुभव किया था। जब हम किसी बड़े हाल में प्रवेश करते हैं या क्षितिज से घिरी हुई प्रकृति के अवकाश में खड़े होते हैं, तब हमें मन की इस उड़ान का अनुभव होता है। आत्मा महानता को ग्रहण कर लेती है और उसे जान पड़ता है जैसे जीवन का सत्य कहीं है और वह उससे संपर्क स्थापित कर रही है। विदिशा, इलोरा और अजंता के महान मन्दिर-भवन इस महानता का स्पर्श हमें देते हैं और उनके निर्माण के समय हमारे कलाकार जानते थे कि वह अपनी आधार-वस्तु के सहारे क्या भाव पैदा कर रहे हैं।

कलाकार की महानता और सफलता इसी में है कि वह मनुष्य के मन को अच्छी चीजों और घेरे हुए वातावरण के ऊपर उठा दे और अनन्त अदृश्य सत्ता के सामने खड़ा कर दे। तब मनुष्य की आत्मा में पूजा-भाव भर जाता है। सच्ची कला पूजा ही तो है।

अशोक की लाट

[श्री रामचन्द्र तिवारी]

१

अनगढ़ पाषाण खण्ड विरचित
यह दाँत निकाले महल खड़ा,
जिस पर काली काई छाई
सिर मुकुट धरे अतिकाय, बड़ा।

२

यह राज्य-विहीन महीपति सा,
शिशु सा, बिनु वाणी पण्डित-सा
आकाश पतित ग्रह खण्ड यथा,
तन खण्डित गुण गण मण्डित-सा।

३

तुग़लक-कुल के कुछ तरल भाव
ढल कर साँचे में खड़े हुये।
उस पर अशोक के मूर्तिमान हो
शान्त भाव से जड़े हुये।

४

यह बुद्ध पताका सी अविचल
वर दीप शिखा-सी दसों दिशा
उज्ज्वल करती दे रश्मि-राशि
कर क्षीण अन्ध-अज्ञान-निशा।

५

पथ दर्शक-सी, अभिलाषा-सी
जो नित्य चूमने गगन बढ़े।
दुख में चिर स्थित आशा-सी
जो स्वप्न दिखाती स्वर्ण-मढ़े।

६

निदर्यता-हीन सुदृढ़ता-सी
वाणी सी युग-युग व्याप्त रहे।
यह नपी-तुली दृढ़ भाषा-सी
नद सी, प्रवाह ना रुके, बहे।

७

यह पूर्वकाल का दूत खड़ा
सन्देश सुनाने आज हमें।
चाणक्य, मौर्य, यूनान वीर की
याद दिलाने आज हमें!

८

वृक्षा के खेतों से चलकर
नद नील की छाती पर तरणी।
पर चढ़े हुए मल्लाह सभी
सुनते थे कथा बुद्ध-बरणी।

९

बल-वैभव-पूरित भारत था
संसार-मुकुट का रत्न बना
ताला जिसने नहिं नाम सुना
वह देश है, हा! यह शोक घना।

* * *

विनसे पाखण्ड, कपट, मद, भय
उघडें भारत के हृदय कपाट
खड़ी-खड़ी नित बाट देखती
कब से यह अशोक की लाट!

नियति

[श्री 'अनजान']

राकेश अपने जीवन में एक अलसाई हुई ताज़गी लेकर आया है। उसका जी कुछ भारी-भारी-सा रहता है। उसे अभी तक कोई ऐसा नहीं मिल पाया है कि जिसके सामने बैठ कर वह अपने जी को हल्का कर पाए। वह मन ही मन घुटता सा रहता है। उसका जी जैसे उसे काटने को दौड़ता है। उसकी कुछ समझ में नहीं आता कि वह क्या करे।

वह सोचता है कि मुझे बी० ए० करने के बाद क्या करना होगा! वह कभी-कभी जीवन की सार्थकता और असार्थकता की उलझन में बुरी तरह फँस जाता है। और आखिर को इन विचारों से छुटकारा पाने के लिए वह एक कागज़ और पेंसिल लेकर चित्र बनाने में लग जाता है। इसी प्रकार उसके जीवन के कई वर्ष बीत चुके हैं। पर वह अभी भी नहीं जान पाया है कि वह आज कैसे अपने और अपने विचारों के संघर्ष में से होकर बी० ए० तक पहुँच सका है।

बी० ए० क्लास में लड़कियाँ भी कई पढ़ती हैं। प्रबोधा, सुनीला, सुकान्ता आदि आदि, इस क्लास में सुकान्ता की अँग्रेज़ी सब से अच्छी है। उसके प्रोफेसर उससे बहुत ही प्रभावित हैं। और उनसे भी अधिक राकेश, न जाने क्यों!

अपनी क्लास में सुकान्ता की ऐसी प्रखर बुद्धि देख कर राकेश का जी कुछ बैठ जाता है और ईर्षा भी झलक आती है। पर इन सब बातों के ऊपरी सतह पर एक और चीज़ तैरती है जो इन सब को एक दम शान्त कर देती है। वह है नारी जाति के प्रति प्रेम।

राकेश सुकान्ता को देख बहुत कुछ धीरज पाता है। उसके जी को बड़ी सांत्वना मिलती है। उसका मस्तिष्क उस क्षण एक दम स्तब्ध—शान्त हो जाता है।

सुकान्ता के पिता राजनगर की पुलिस के इन्सपेक्टर हैं। ५०) के क़रीब मिलते हैं। वह बहुत सावधानी से खर्च करने पर भी बहुत कम बचा पाते हैं। इन्हें सुकान्ता के ब्याह की बहुत फ़िक्र लगी है। उसकी माँ भी इस ओर से निश्चिन्त नहीं है।

सुकान्ता साँवले रंग की है। नाक गोल और थोड़ी लम्बी है। आँखें बड़ी-बड़ी हैं, माथा भी चौड़ा है।

सुकान्ता अपनी क्लास में राकेश को बहुत कम बोलते पाती है। जब देखती है तब गम्भीर; हमेशा उसे दार्शनिकों की तरह कुछ सोचते पाती है। यह सब उसे असह्य हो उठता है। वह समझ जाना चाहती है कि राकेश बाबू किस गूढ़ पहेली को सुलझाने में लगे हैं। जब देखो तब मौन, गम्भीर और बहुत ही अतृप्त। यह सब कुछ बहुत सोचने पर भी उसकी समझ में नहीं आता है। वह चाहती है कि राकेश ही से पूछे कि वह इतने उदासीन क्यों रहते हैं? पर न जाने किस संकोच-

वश वह पूछ नहीं पाती है। अपने को वह न जाने क्यों कुछ भीरु सा अनुभव करती है।

वह रोज सोचती है कि आज जरूर पूछूंगी उनकी उदासी का कारण। पर कालेज पहुँचते ही सब विचार बह जाते। इसी झँझट में काफी दिन बीत गए। पर वह पूँछ ही नहीं सकी।

एक रोज सुकान्ता ने पाया कि राकेश बाबू कालिज नहीं आए हैं। उस रोज उसका जी उसके नियंत्रण से बाहर हो चला। पढ़ने में भी उसका मन नहीं लगा। उसने राकेश के बारे में मालूम किया तो पता लगा कि उनको बुखार आगया है। इस कारण वह कालिज नहीं आ सके हैं।

कालिज से छुट्टी पाकर सुकान्ता राकेश के घर गई, जाकर देखा कि राकेश एक पलंग पर चादर ओढ़े लेटे हुए हैं। सुकान्ता ने पूछा, "कहो राकेश बाबू कैसी तबियत है? बुखार ने पीछा छोड़ा या नहीं?"

राकेश ने उठने की चेष्टा करते हुए सुकान्ता को बैठने को कहा। सुकान्ता उसे उठते देख कर कहने लगी, 'नहीं-नहीं, तुम लेटे रहो। मैं बैठी जाती हूँ।"

राकेश—"दिन भर तो लेटे लेटे बीत गया। अब थोड़ी देर बैठना भी तो चाहिये।"

सुकान्ता—"नहीं नहीं, अभी तुमको बुखार है। तुम लेट जाओ।" सुकान्ता ने उसे हाथ पकड़ कर लिटा दिया, और कुर्सी को उसके समीप खींच कर बैठ गई।

राकेश सुकान्ता के हाथ के स्पर्श-मात्र से अपने को बिलकुल भूल गया उसे कुछ भी सुध नहीं रही कि वह कहाँ पड़ा है। उसने इस स्पर्श से कितना सुख पाया, कितनी तृप्ति पाई? कौन जान सकता है।

सुकान्ता इस बीच कमरे में लगे चित्रों को देखने में व्यस्त रही। एक से एक सुन्दर है। सब में कैसी नूतनता है? कैसे-कैसे भाव चित्रित किए हैं इनमें? सब हाथ के ही बने हुए हैं।

राकेश से बोली, "क्या यह सब तुम्हारे ही बनाये हुये हैं?"

राकेश करवट बदलते हुये बोला, "हाँ... ...आँ। कहो कैसे लगते हैं?"

सुकान्ता, "तुम तो बहुत ही अच्छे चित्रकार हो। कैसी कूट-कूट कर मादकता भरी है इन चित्रों में। महात्मा बुद्ध की इतनी भोली-भाली तस्वीर है कि देखते ही बनता है...।"

सुकान्ता कहती ही चली जाती। और राकेश मौन साधे पड़ा रहता। फिर सुकान्ता भी चुप हो जाती। थोड़ी देर दोनों चुप रहते। पर सुकान्ता फिर बोल उठती और राकेश से पूछती, "राकेश तुम क्या बनोगे? क्या जीवन-उद्देश्य चुना है तुमने?" राकेश कहता, "जो तुम बनाओगी सो बनूँगा।" और दोनों हँस पड़ते।...

सुकान्ता मुस्कराते हुये कहती, "मैं क्या बना सकती हूँ?"

राकेश, "तुम? तुम जो चाहो सो बना सकती हो...।"

सुकान्ता लौटने की देर होते देख कर आज्ञा माँग चली गई। उसके जाने के बाद राकेश ने अपने को उन टँगे हुये चित्रों में उलझा लिया। इसी प्रकार जब तक राकेश बीमार रहा सुकान्ता का आना जाना बराबर रहा। दोनों में रोज बात-चीत होती, और इस प्रकार दोनों एक दूसरे के समीप आते चले गए।

* * *

राकेश का स्वास्थ्य जल्दी ही सुधर गया और वह कालिज आने लगा। वह अब अपने को ऐसे पाता है कि मानों वह बीमार पड़ कर कुछ अधिक स्फूर्ति पा गया है। न जाने किस ज्योति का विकास अब उसमें होगया है। उसमें ताज़गी आ गई है। उसकी कल्पना शक्ति भी बढ़ गई है। वह अब पहिले से अधिक सुन्दर चित्र बनाने लगा है। वह जब चित्र बनाता है तो सब कुछ

भूल जाता है। सुबह से दोहर हो जाता और दो पहर से शाम हो जाती पर राकेश बाबू चित्र में ही रहते।

सुकान्ता के भी जी का बोझ, राकेश को खुश पाकर कुछ हलका हो जाता है। उसको इसमें सुख मिलता है कि राकेश बाबू को हमेशा प्रसन्न पाए।

[२]

आज सुकान्ता के छोटे भाई की वर्ष गांठ मनाई जायगी। उसके उपलक्ष में उसने अपने सह पाठियों को निमन्त्रण भेज दिये हैं। राकेश के पास भी निमन्त्रण भेजा गया है।

सुकान्ता आज घर के काम-काज में बहुत ही व्यस्त है। जरा भी फुरसत नहीं मिल रही है। काम करने में बुरी तरह जुटी हुई है। उसे अचानक किसी कार्यवश पढ़ने के कमरे में होकर गुजरना पड़ा। वहाँ एक पत्र रक्खा था, जिसे उसके पिता वहाँ रख कर भूल गये थे। वह लाल रोशनाई से लिखा हुआ था। उसने लाल शब्दों में लिखा पत्र कभी नहीं देखा था। उसे उसको देखने की इच्छा हुई।

सुकान्ता ने पत्र पढ़ा उसमें लिखा था--

श्री जीवनलाल जी, आप का कृपा पत्र मिला। लड़का आपने देख ही लिया है। मुझे कोई इन्कार नहीं है। आपका सम्बन्ध सहर्ष स्वीकार है।

आपका—......

सुकान्ता के सामने अन्धेरा हो आया। पत्र उसके हाथ से छूट गया। वह क्षण भर अपने को भूली सी वहीं खड़ी रही। उसे बिलकुल सुध नहीं रही की वह कहाँ है।

कौन जानता है कि इस समय उसके जी को कितना ठेस पहुंचा है। उसके जी में आता है कि वह इस सम्बन्ध को इन्कार कर दे। क्या अभी कोई नहीं जानता कि वह पहिले ही अपने आप को किसी दूसरे को सौंप चुकी है?

उसके दिल में तरह तरह के विचारों का संघर्ष मचा हुआ था कि एक दम घड़ी ने टन से चार बजाये। उसकी विचार धारा टूटी। घड़ी की ओर आँख उठा कर देखा कि चार बज चुके हैं। उसने सब को पाँच बजे आने का निमन्त्रण दिया है। उन सब के आने में बस घंटे भर की देर है। फिर क्यों वह इस तरह बुत की नांई खड़ी है? जैसे अजान हो; निर्जीव हो। क्यों नहीं अपने काम में लग जाती? वह चार बजे देख फिर से अपने काम में जुट गई। अब की बार उसके काम करने में वह बात नहीं थी। हाथ काम में थे और शरीर भी वहीं था, पर मन किसी और ही जगह था। वह इस समय बड़ी बेचैन है। उसका जी जैसे ऊपर को उबला आता है। वह जल्दी ही राकेश को देख लेना चाहती है।

धीरे धीरे पांच बज गये और ड्रेस-रूम भी आमंत्रित व्यक्तियों से भर गया।

जीवनलाल शर्मा ने सब को खूब जी खोल कर खिलाया। सुकान्ता ने भी परोसने में कोई कमी नहीं रक्खी। सब को खूब ही परोसा। राकेश के सामने तो मना करते करते भी कई रसगुल्ले परोस दिये।

राकेश ने पूछा, "क्यों सुकान्ता सब हमें ही खिला दोगी, अपने लिये भी कुछ रखना है ?"

सुकान्ता इस पर तनिक मुस्कराई और परोसने में लग गई। जैसे वह अपनी कथा को अपने में समाप्त ही रखना चाहती है।

राकेश ने पाया कि सुकान्ता के मुस्कराने में वह बात नहीं है। उसके मुस्कराने में जरूर कोई व्यथा भरी हुई है। जिसे वह छिपाना चाहती है। पर राकेश उसकी ओर देखते हुए चुनौती देता है कि क्यों सुकान्ता तुम अपनी व्यथा मुझसे छिपाना चाहती हो ?

जीवनलाल ने सब को सम्बोधित करते हुए कहा कि मैं अपने को धन्य समझता हूँ जो आपने मेरा निमन्त्रण स्वीकार यहाँ पधारने की कृपा की। और शोभा बढ़ाई। मैं आप लोगों का कृतज्ञ हूँ। इसके बाद सब विदा हुये। सबने खूब पेट भर कर खाया

था। सब के ओठों पर इसी प्रकार की चर्चा थी; पर राकेश खाने के साथ-साथ अपने जी में कुछ गांठे बाँध ले चला था। वह सोचता है कि आज सुकान्ता को हुआ क्या है जो उसकी मुस्कान में ऐसा रूखापन था। सुकान्ता के लिये वह बहुत ही चिन्तित है।

[३]

अगले दिन राकेश अपनी मोटर में कालिज जा रहा था। बरसात बीत चुकी थी, पर आसमान में बादल थे। और नन्हीं नन्हीं बूँदें भी गिर रहीं थीं। हवा ठंडी बह रही थी। उसकी मोटर सड़क पर से सरपट दौड़ रही थी कि उसे दीखा, सुकान्ता लम्बे पैरों कालिज जा रही है। उसने मोटर रोकी और सुकान्ता से बैठने का आग्रह किया। सुकान्ता भी इन्कार नहीं कर सकी, और मोटर में बैठ गई। मोटर चल दी।

राकेश के जी में कल वाली बात अभी भी जगह किये बैठी थी। वह चाह रहा था कि उससे पूछे, "तुम क्यों चिन्तित हो सुकान्ता ?" पर वह चाह कर भी नहीं पूछ पा रहा था।

उसने अपना सारा जोर इकट्ठा कर कहना शुरू किया, "कल खूब शग़ल रहा, क्यों सुकान्ता, था न ?"

सुकान्ता ने धीरे और दृढ़ता के साथ कहा, "हाँ...आँ, खूब रहा।" और सुकान्ता यह कह चुक कर खिड़की के बाहर सिर निकाल कर उस सुहावने समय का सौन्दर्य अनुभव करने में लग गई।

इस 'हाँ...आँ' में ऐसी ध्वनि गुंजरित हुई जैसे वह कह रही हो कि 'अरे वह बहुत दुखी है। उससे मत बोलो। 'वह अब तुम्हारी नहीं रहेगी। फिर तुम व्यर्थ ही उसके लिए इतने चिन्तित क्यों होते हो ? क्यों दुखी होते हो ? अपने मन से अब तुम उसे निकाल दो।'

राकेश उसकी कापी उठा कर बोला, 'यह तो बहुत ही सुन्दर है। कापी मालूम होती है। क्या लिखोगी इसमें ? राकेश ने उसे खोलकर देखा तो उसमें एक पत्र रक्खा था वही पत्र जिसको पढ़कर सुकान्ता इतनी दुखी है। 'उसने देखने देखने में ही उसे पढ़ भी डाला। पढ़ते ही जैसे उसके शरीर को बिजली छू गई हो। एक दम सुन्न। जरासी देर में उसकी अजब हालत होगई। चेहरा अप्रतिभ होगया। माथे पर सिकुड़न पड़ गई, और साथ साथ उस पर छोटी छोटी बूँदें भी झलक आईं।

आज राकेश का क्लास में रत्ती भर जी नहीं लगा। आँखें किताब पर रहतीं, और मन भटका भटका फिरता। उसके जीवन में ऐसा दिन कभी भी नहीं आया है, जैसा कि वह आज अनुभव कर रहा है। उसका जी आज बहुत ही कड़वा है। वह आज अपने जीवन से एक दम हिरास हो चला है। उसे सब जगह अँधेरा ही लगता है। उसकी कुछ समझ में नहीं आता, कि कब क्या होना है।

कालेज खत्म होगया, और राकेश अपनी कार में बैठ चलने को हुआ। इतने में सुकान्ता भी करीब से गुज़री। उसके मुँह से अनायास निकल गया, "आओ सुकान्ता, तुम्हें घर पहुँचाते हुये मैं चला जाऊँगा। उधर होकर मोटर जाती तो है ही।"

सुकान्ता 'अच्छी बात है' कह कर कार में बैठ गई और कार हवा में उड़ चली।

सुकान्ता आज सुबह से ही राकेश को सुस्त और बहुत ही चिन्तित देख रही थी। उसे बिल्कुल नहीं मालूम था कि वह पत्र राकेश ने भी पढ़ लिया है। उसने जानना चाहा कि वह आज इतना बेचैन क्यों है ? उसे किस बात की फिक्र है ?

सुकान्ता ने धीमे से पूछा, "क्यों राकेश बाबू, आज इतने सुस्त क्यों हो ? तुम्हारी आज की सी हालत तो मैंने कभी भी नहीं देखी। कुछ रूठे-रूठे से लगते हो, क्या बात है ? कुछ बताओ तो।"

राकेश जैसे सोते से जागा, और उसकी ओर कुछ म्लानता से देखते हुए बोला, "सुकान्ता, मैं

रूठा रूठा लगता हूँ ? यह तुम क्या कहती हो सुकान्ता ? स्वप्न में भी ऐसी कल्पना मत करना। तुम अभी नहीं जान पाई हो कि मैं तुम्हें कितना चाहता हूँ ......।" राकेश आगे कुछ न कह सका, मानों किसी ने उसके होंठ दबा लिए हों।

सुकान्ता लज्जा के मारे पानी पानी होगई। उसकी आँखें ज़मीन में जा लगीं। वह चाहने लगी कि वह उसके पैरों में लोट कर कहे, "देखो मैं यह हूँ। मैं तुम्हारी ही हूँ। मैं तो तुमको अपना सर्वस्व सौंप चुकी हूँ। फिर भी तुम कहते हो कि मैं तुम्हें अभी नहीं जान पाई ......।"

सहसा मोटर रुकी और सुकान्ता की विचार-श्रृंखला बिखर पड़ी। उसने जाना कि उसे अब उतरना है। उसका घर आगया है। वह उतर गई। और मोटर चल दी।

सुकान्ता अन्दर पहुँची तो देखा कि उसकी माँ घर को सिंगवाने में लगी हैं। वह चाहतीं हैं—'सुकान्ता का ब्याह इसी अगले ही महीने में कर दिया जाय। लड़की सयानी होगई है।' इन्हीं विचारों में लीन हुई वह दफ्तर में पहुंची तो उसे दीखा कि मेज पर बहुत धूल जमी हुई है उस पर सुकान्ता की किताबें भी रक्खी हैं। वह मेज को साफ़ करने लगीं। सफ़ाई करने में सुकान्ता की एक किताब नीचे गिर गई और उसमें से एक चित्र जो उसमें रक्खा हुआ था बाहर निकल पड़ा। माँ ने उसे देखा तो राकेश का था। उसे यह बात समझते देर न लगी। उसने फौरन सुकान्ता को बुलाया और कहा कि यह किसका चित्र है ? तुझे नहीं मालूम कि वह कायस्थ है। तू ब्राह्मण कुल में जन्म लेकर कलंक लगाना चाहती है। समाज क्या कहेगी ? इसका तुम्हें ज़रा भी भय नहीं है। कोई दो कौड़ी को भी नहीं पूछेगा। मैं अब जान पाई कि तेरा ऐसा हाल क्यों होता जा रहा है। अब कल से कालिज जाना बन्द। मैं बाज़ आई ऐसे पढ़ाने से......।"

सुकान्ता नीची गर्दन किये स्तब्ध खड़ी रही। एक भी शब्द मुँह से नहीं निकला। कौन जान सकता है कि इस समय उस पर कैसी बीती। जब उसने देखा कि माँ काम में लग गई तब वह वहाँ से दबे पाँव चली आई।

सुकान्ता को आज कालेज से उठे दो माह बीत चुके हैं। इन बीते दिनों में वह राकेश से एक भी बार नहीं मिल सकी है। और आज उसके व्याह का भी दिन आ पहुँचा है। चाहती है कि विदा होने से पहले राकेश से एक बार अवश्य मिलले, और उससे कहे कि "देखो मैं यह हूँ। मैं अब तुम्हारी नहीं रही हूं। अब मैं तुमसे बहुत दूर हो रही हूँ। पर हमारा प्रेम अमिट रहेगा। उसमें कौन बाधा डाल सकता है ? तुम अब मेरे लिए दुखी मत हो। मुझ को अब भुलादो।"

सुकान्ता आज विदा होगई पर राकेश से नहीं मिल पाई और उसके जी की अभिलाषा जी ही में रह गई।

× × ×

कुछ समय बाद—

आज राकेश एक सफल चित्रकार है। उसके चित्रों की सब जगह चाहना है। पर अब उसने चित्र बनाना छोड़ दिया है। उसने सुकान्ता की एक मुन्दर मूर्ति बनाली है और उसकी आराधना किया करता है। आराधना के समय ऐसा लगता है कि मानों मूर्ति पूछ रही है, "राकेश तुम क्या बनोगे ?" और राकेश की आराधना से मानों ध्वनित होता कि "जो तुम बना ओगी।"



श्री उपेन्द्रनाथ अश्क



श्री अक्षयकुमार



श्री कृष्णचन्द्र मुद्गल



श्री 'अनजान'



श्री जगदीशप्रसाद

स्त्री-जाति की स्थिति

[श्री कमला देवी प्रधान बी. ए.]

समय-परिवर्तन के साथ साथ स्त्रियों का स्थिति-परिवर्तन का इतिहास भी बड़ा रोचक रहा है। प्रारम्भिक इतिहास के पृष्ठ उलटने से प्रकट होता है कि भारत वर्ष की स्त्रियाँ सर्व प्रकार से योग्य होती थीं और उनका आदर भी समुचित होता था। उसी समय हमारे किसी पूर्वज नीतिकार ने लिखा है —

यत्र नार्य्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवता।
यत्रैतास्तु न पूज्यन्ते सर्वास्तत्राफलाः क्रियाः॥

अर्थात जहाँ स्त्रियों का आदर होता है वहाँ देवताओं का वास होता है, और जहाँ स्त्रियों का आदर नहीं होता वहाँ के सब कार्य निष्फल होते हैं। स्त्री पुरुष के अधिकार समान समझे जाते थे। इसी से स्त्री को अर्द्धांगिनी की उपाधि दी गई।

धीरे धीरे धन धान्य सम्पन्न भारत-भूमि की श्री का ह्रास होने लगा। विदेशी शासक यहाँ पर पाँव जमाने लगे जिससे स्त्री-जाति को बड़ा भारी धक्का लगा। घर से बाहर निकलना उसके लिए विपत्ति का कारण होने लगा। अपने सतीत्व की रक्षा के लिये स्त्रियों के अपने कला-कौशल व विद्या को बलि करना पड़ा। पर्दे के भीतर उनको गुप्त रक्खा गया। फल यह हुआ कि स्त्रियों की दशा धीरे धीरे अत्यंत शोचनीय होगई। जो नारी एक समय में देवी-तुल्य समझी जाती थी, गुण कौशल से हीन वही नारी एक पशु के तुल्य समझी जाने लगी। तुलसीदासजी के काल में तो स्त्रियों की दुर्दशा अपनी चरम सीमा पर पहुँच चुकी थी, उन्होंने स्पष्ट लिख भी दिया कि —

ढोर, गवाँर, शूद्र, पशु, नारी,
ये सब ताड़न के अधिकारी।

मनुष्य इससे और अधिक क्या हीन हो सकता था जब उसने अपने आधे अंग की यह दशा कर डाली।

किन्तु समय ने फिर पलटा खाया। राजा राममोहन राय व दयानन्द जैसे सुधारकों ने आकर स्त्री-सुधार व स्त्री-उन्नति की ओर भारत-वासियों का ध्यान आकर्षित किया। पाश्चात्य साम्राज्य के साथ साथ पाश्चात्य सभ्यता का प्रभाव भी विशेष रूप से पड़ने लगा। कन्याओं की शिक्षा का प्रबन्ध होने लगा, उन्हें बाहर निकलने का अवसर मिला। अधिक उन्नति की आकाँक्षा ने स्त्री जाति को और आगे बढ़ा दिया, पुरुषों ने उन्हें सहायक का काम दिया। स्त्रियों का आदर होने लगा। पाश्चात्य सभ्यता के अनुसार यहाँ भी स्त्री को Fair sex व better half कहने लगे। स्त्रियों को योग्य बनाने के लिए सब ओर से प्रयत्न होने लगे। पाठशालायें व कालेजों की संख्या बढ़ने लगी, पर्दे की प्रथा का लोप हो चला Women's Conferences व महिला समितियाँ स्थापित की गईं। विवाह के समय भी पुरुषों ने जब पढ़ी लिखी कन्याओं को ही अपनाना पसन्द किया तो पुरानी

लीक पीटने वाले माता-पिताओं ने हार कर कन्याओं को अधिक नहीं तो विवाह के लिए ही पढ़ाना व कला सिखाना स्वीकार किया। इसी में कितनी ही नारियों ने प्रमाणित कर दिखाया कि वे पुरुष जाति से किसी प्रकार भी हीन नहीं हैं। वे यूनिवर्सिटी की बड़ी बड़ी डिग्रियाँ प्राप्त करने लगीं, साहित्य, दर्शन व विज्ञान-शास्त्र डाक्टरी, राजनीति, सिनेमा, व संगीत आदि के सभी क्षेत्रों में स्त्रियों का समावेश होगया और कोई भी विषय उनसे अछूता न बचा।

नारी-जाति जब सब प्रकार से योग्य होने लगी तो उसे पुरुष जाति से न तो मध्य काल की भाँति भय रह गया और न वह अपने को तुच्छ समझने लगी। उसमें आत्म-गौरव बढ़ने लगा, अबला कहलाने में संकोच होने लगा, स्वतन्त्र होने की प्रबल इच्छा ने कुछ स्त्रियों को यहाँ तक बढ़ा डाला कि वे स्वावलम्बी होने के मार्ग निकालने लगीं और इसिलिये विवाह की आवश्यकता कम प्रतीत होने लगी। स्वतन्त्र बनने के लिये स्त्रियों को अब धन कमाने की आवश्यकता पड़ी। अत: अपनी अपनी रुचि के अनुसार वे अपने विषय-विशेष की योग्यता को साधन बना धन संचय करने लगीं।

वर्त्तमान समय में स्त्री-संसार की विचित्र स्थिति हो रही है, जहाँ नारी जाति का एक भाग सर्व प्रकार योग्य, अग्रगण्य व माननीय समझा जाता है वहाँ दूसरी ओर स्त्री जाति का बहुत बड़ा भाग अभी निरक्षर ही पड़ा है। उसे नहीं मालूम कि संसार उन्नति-शिखर की कौन सी सीढ़ी तक पहुंच चुका है अथवा उसका इस संसार में कुछ अस्त्वित्व है भी या नहीं या उसके द्वारा स्त्री-जाति का कुछ भी उद्धार सम्भव है। स्त्री-जाति की एक और टुकड़ी है जिसने योग्यता प्राप्त करके विवाह बन्धन को स्वीकार किया है। किन्तु इनमें से कुछ ने तो स्वच्छन्दता पूर्वक आनन्दमय जीवन व्यतीत करना ही ध्येय बना लिया है और कुछ ने अपना अस्तित्व अपनी अन्य बहिनों के अस्तित्व में ही मिला दिया है, और ऐसी तो कुछ इनी-गिनी ही महिलायें हैं जिन्होंने अपने गार्हस्थ्य जीवन के साथ साथ नारी-जाति के उन्नति-कार्यों में हाथ बटाना कर्त्तव्य समझा हो।

नारी जाति का भविष्य सुधारने के लिये यह अत्यावश्यक है कि प्रत्येक महिला को अपनी जाति के प्रति कुछ कर्त्तव्य समझ लेना चाहिये—

विदुषी स्त्रियों का रहन सहन ऐसा हो कि उनका अनुकरण अन्य बहिनें सरलता पूर्वक कर सकें। विवाहित स्त्रियां उस मध्यम श्रेणी में हैं जो पूर्व वर्णित दोनों प्रकार की स्त्रियों को शृंखलाबद्ध करके समस्त नारी-जाति में समानता ला सकती हैं।

पाश्चात्य सभ्यता से जहाँ नारी जाति की इतनी उन्नति हुई है वहाँ भारत का पुरातन सतीत्वादर्श छूट जाता है। मालूम नहीं यहाँ के वायु-मण्डल के अनुकूल यह कभी हो सकता है अथवा नहीं किन्तु इतना तो स्पष्ट है कि अभी तो इस प्रकार की घटनाओं से भारत-जगत में ऐसी क्रान्ति फैली हुई है कि जनता कन्याओं को अधिक पढ़ाने लिखाने से विमुख होती जा रही है। इसलिये यदि महिलाएं चाहती हैं कि उन्हें फिर कहीं ठेस न लगे तो अपनी उन्नति के साथ साथ प्राचीन आदर्श को भी स्थिर रक्खें और वास्तव में अनुकरणीय बन जावें।

भारत की आर्थिक कठिनाइयों का ध्यान रखते हुए अपनी वेश-भूषा व शृंगार बनाव ऐसा रक्खें कि अपव्ययी होने का अपवाद उन पर लागू न हो सके।

स्थान स्थान पर ऐसी संस्थाएं नियत करें जिनसे सब प्रकार की स्त्रियाँ लाभ उठा सकें और परस्पर विचार-विनिमय उन्नति के साधनों को ढूँढ कर उनका प्रयोग कर सकें।

—ये कविताएँ ?

[श्री नरेन्द्र एम.ए]

(१)

अन्तर अब ज्वालामुखी बना—
बह निकला लावा नस-नस में !
मैं विवश, आह, बह चला कहाँ ?
क्यों तन-मन आज नहीं वश में ?

(२)

जाने यह कैसी अभिलाषा
बस गई आज मेरे मन में,
जलती रहती ज्वाला बन कर
मेरे शोणित के कण-कण में !

(३)

नव-यौवन के गुलदस्ते में
रख दी यह चिनगारी किसने ?
मन मेरा तो छोटा-सा है
बन के बन फूँक दिए इसने !

(४)

मेरी अशान्ति का अन्त कहाँ—
मानस अथाह अस्थिर सागर !
मरुदेश-सहारा की तृष्णा
जो सोख चुकी शतह: जलधर !

(५)

उर में अभाव का भार लिए
आँखों में कुछ अस्थिर सपने !
अवरुद्ध कंठगत प्राण लिए
गाता हूँ करुण गीत अपने !

(६)

होगा हलका न भार हिय का
चाहे निशि दिन रोऊँ-गाऊँ,
होगा न भार हलका चाहे
पिस कर कन-कन में मिल जाऊँ !

(७)

हिम-भार हिमालय का अब तक
हलका न कर सकीं सरिताएँ,
मेरा उर भी हलका कैसे
कर देंगी फिर ये कविताएँ ?

नीलाम

[श्री अजय कुमार जैन]

"भाभी"—

"हाँ, कुँवर जी क्या है ?"

"ऐसे कब तक चल सकता है ? आखिर हमारे भी तो बाल-बच्चे हैं।"

"हैं तो, फिर ?"

"फिर जब आपके रघुवीर को वह अच्छा ओढ़े पहने, खाते पीते देखते हैं तो क्या उनका मन नहीं चलता ? वह कुछ हमारी तरह समझदार तो हैं नहीं—" यह कहते-कहते वह रुक गया।

"अच्छा कुँवर जी, तुम्हें हमारे रघुवीर का खाना-पीना अच्छा नहीं लगता। जिसके पास जैसा हो करे"— और क्रोध से भाभी ने मुँह फेर लिया।

"पर भाभी करें कहाँ से, जिमींदारी, सीर, मौरूसी तो मुखिया जी (बड़े भाई) के हाथ में है फिर हम कहाँ से पैदा करें। सारी सम्पत्ति कुछ मुखिया जी की स्वयं की पैदा की हुई नहीं है। ठाकुर (स्वर्गीय पिता) की है और उसके हम और आप दोनों बराबर के अधिकारी हैं।"

यहाँ पर इनका कुछ इतिहास देना अनिवार्य है। ठाकुर विक्रमसिंह बड़े अच्छे आदमी थे, उन्होंने खेती में से मेहनत मजदूरी करके कुछ जिमींदारी ले ली और मौरूसी तो पुश्तैनी थी ही। अच्छी परिस्थिति होने से वे गाँव के मुखिया हो गये और उनके मरने के बाद भी उनके बड़े पुत्र वीरसिंह को लोग मुखिया जी कहने लगे, यद्यपि वह हैं नहीं। छोटा मुहरसिंह कुँवर जी कहलाता है। विक्रमसिंह को मरे चार वर्ष हो गए, तब से सारी जायदाद पर मुखिया जी का ही कब्जा है। घर में जो भोजन बनता है उसमें कुँवर जी, उसकी स्त्री और उसके बच्चे खा भर सकते हैं इससे परे वस्त्रादि के लिए उन्हें कुछ नहीं मिलता। और मिले भी कहाँ से, बड़ा घर होने से पटवारी, पतरौल, तहसील का चपरासी सभी वहाँ ठहरते हैं, भोजन करते हैं। फिर ठाकुर होकर मदिरा न पी तो क्या हुआ इसलिए मुखिया जी थोड़ी मदिरा पीने की लत्त भी रखते हैं, उसके बाद उनके चालीस वर्ष की अवस्था में केवल एक ही पुत्र रघुवीर तो है। उसका भरण-पोषण भी बड़े अच्छे ढंग पर होता रहा है। इससे कुछ बचता नहीं।

चार साल से कुँवर जी बिलकुल चुप रहा; पर गाँव के कुछ न्यायकारी व्यक्तियों (?) ने उसे सुझाया कि क्यों नहीं वह बटवारा करवा डालता क्या कारण है कि वह ग़रीबी में रहे और मुखिया जी गुलछर्रे उड़ाएं। आख़िर उसकी भी तो गृहस्थी है !! उसका भी खाने पीने के अतिरिक्त कुछ खर्च है। इधर उसकी स्त्री ने चाहा होता तो चार वर्ष काटना भी कठिन था ;

पर वह तो सदैव यही कहती रही कि मुखिया जी स्वयं न्याय करेंगे, तुम आगे से क्यों बिगाड़ते हो। पर चार वर्ष का समय काफ़ी होता है कम नहीं। किसी प्रकार कुँवर जी ने यह चार साल काट दिये हैं; पर अब गाड़ी नहीं चलती और दो टूक करने को ही वह आज भाभी के पास पहुँचा है।

भाभी ने जब सुना कि कुँवर जी की इतनी हिम्मत कि अपने को बराबर का अधिकारी कहे आने दो मुखिया जी को कल ही, कल क्यों ? आज ही बटवारा हो जायगा। और निश्चयात्मक रूप से उसने उत्तर दिया—"अच्छा, अगर मुखिया जी को तुम समझते हो कि बिगाड़ते हैं आज ही बटवारा हो जायगा।" कुँवरजी को यह बात लगी। वह मुखिया जी के प्रति सदैव ही उच्चभाव रखे रहा है फिर इस समस्या को कैसे सुलझावे, बड़ा नरम और लज्जित सा होकर वह बोला–"भावज, मैं यह कब कहता हूँ" पर सामने अपने पुत्र जुगला को रोता हुआ देखकर वह बोला–"सामने जुगला को तो देखो कैसा रो रहा है।" और जैसे जुगला ने भूला कर्त्तव्य फिर याद दिला दिया हो–"भाभी, अब हम बिना बटवारा किये नहीं रह सकते हमारे बच्चे क्या बाज़ार की मिठाई नहीं खा सकते, क्या वह गजी की मिर्जई भी नहीं पहर सकते जबकि रघुवीर कश्मीरा पहरता है।"

इस बार भाभी ने कुँवरजी के हृदय में छिपे मर्मस्थल को भेदा—"कुँवरजी, वही तुम हो जिसने ठाकुर के श्राद्ध पर कहा था कि ठाकुर न रहे तो क्या मुखियाजी तो हैं और अब मुखिया जी पर अविश्वास रखते हो। अरे कलजुग में जो न हो थोड़ा है।"

अन्तिम वाक्य ने कुवरजी पर पड़े सारे प्रभाव को धो डाला और वह बोला—"भाभी, मुखियाजी आएँ तो कह देना कि कुँवरजी बटवारे की कहता था। तुम जानती ही हो कि उनके सामने पड़ने की मेरी हिम्मत नहीं"—कि मुखियाजी आ पहुँचे और बिना देखे कौन क्या कह रहा है बोलने लगे—"रघुवीर की माँ—अरे सुना तुमने मिश्रीलाल, वही पंच की बातें, कहने लगे कुँवरजी बटवारा कराना चाहता है। देखा कैसे घर में फूट डलवाना चाहता है। अरे आजकल मेल किसी को अच्छा थोड़े ही लगता है। भला कहीं यह भी सम्भव—"कहते कहते उनकी दृष्टि कुँवरजी पर पड़ी जो उन्हें देखकर जाने का प्रयास कर रहा था। रघुवीर की माँ बोली—"इसमें बुराई ही क्या है। दूसरों का बुरा क्यों मानते हो। खुद कुंवरजी इसीलिए आये हैं। पूछ लो ना। सब क्या रह गये।"

कुँवरजी को काटो तो खून नहीं। अब क्या कहें। मुखिया जी को इस बात का गुमान भी न था कि कुंवरजी बटवारे के बारे में सोच भी सकता है। उसके कोमल हृदय पर आघात पहुंचा। बड़े सम्भल कर और वाद विवाद को मस्तिष्क में ठण्डा करने के लिये उन्होंने सोचा-आख़िर वह भी तो गृहस्थी है। भले ही मुखिया जी अकर्मण्य थे पर थे न्याय प्रिय। दूसरे ही दिन गिरवर सिंह, मिश्रीलाल, शेरसिंह, भजनलाल और रामप्रसाद तिवारी के सम्मुख बटवारा सम्पन्न होगया।

बटवारे के एक वर्ष बाद ही मुखियाजी की आर्थिक अवस्था दिनों दिन हीन होने लगी। ख़र्च कम हो न सका पर आय बिल्कुल आधी थी। फलतः बौहरों के रुक्के बढ़ने लगे। ठीक वही दशा होगई कि सरोवर में जल आना बन्द होजाय और ख़र्च बराबर बना रहे तो कभी न कभी सूखेगा ही। वह ऋण की फिक्र से दिन-रात घुलने लगे। घर की इज़्ज़त रखने के लिये अब भी पटवारी, पतरौल आदि उन्हीं की चौपाल पर ठहरते थे और उनका खर्चा बना रहा। हाँ, कमी हुई तो खाने पहिनने में ! सदा से अच्छा खाया, पहना पर बुढ़ापे में यह सब बन्द

करना पड़ा—रघुवीर की माँ सदैव अपने देवर और देवरानी को कोसती रही जिसकी खबर इधर उधर से कुँवरजी को भी लगती रही। और अपने को अक्षम्य अपराधी समझ उन्होंने बड़े भाई के पास भी जाना छोड़ दिया। इधर मुखिया जी भी प्रेम या सहृदयता इसलिये न दिखा सके कि कहीं यह अर्थ न लगाया जाये कि खुशामद करने की सूझी है, सम्भवतः कुछ सहायता चाहते हैं। स्वाभिमानी मुखिया ऐसा कभी सहन नहीं कर सकते थे और इसी सोचा सोची में एक दूसरे से बहुत दूर होगए कि एक घटना हो गई —

बौहरे फूलचन्द ने अपने तीन रुक्कों की नालिश दायर करदी। यदि मुखिया ने चाहा होता तो रुपये की बन्दी हो जाती अथवा कुछ मियाद मिल जाती; पर कुछ लज्जावश, कुछ स्वाभिमानी होने के कारण डिक्री हो गई। रघुवीर की माँ ने जब सुना कि कुँवर जी कल शाम बौहरे के यहाँ गए थे सो उसे संदेह न रहा कि यह सब कुँवर जी ने कराया है। पहले बटवारा करा लिया अब इज्जत लेने की ठानी है।

वह दिन भी आया जब कुर्कअमीन जायदाद तथा मकान नीलाम कराने आया। मुखिया जी लज्जावश घर से बाहर न निकल सके। बंसी नाई ने सूचना दी कि नीलाम कुँवर जी की बोली पर खत्म होगया। मुखिया जी को विश्वास नहीं हो रहा था कि घर की जायदाद पर कैसे कुँवर जी बोली बोल सका। पर रघुवीर की माँ को कोई सन्देह न था। वह बराबर कुँवरजी को गालियाँ दे रही थीं।

कुँवरजी नीचा सिर किए मुखिया जी के घर पहुँचे। ऐसा वातावरण देख उसकी हिम्मत न हुई कि कुछ बोलता। उधर मुखियाजी निर्धन थे पर कायर न थे चुप न रह सके बोले—"कुँवरजी मुझे तुमसे ऐसी आशा कभी न थी। खैर यह तो दिनों का फेर है। क्यों कुंवर जी—क्या हम लोगों को अभी मकान भी खाली कर देना पड़ेगा ?"

कुंवरजी अन्तिम वाक्य को न सह सका और लौट पड़ा—दुवारी में रघुवीर पेड़े खा रहा था। उसी से बोला—"रघुवीर, यह कागज मुखियाजी को दे देना। उनके सामने बोलने की मुझ में हिम्मत नहीं। बटवारे की बात भी मैं न कह सका और अब नीलाम की बात भी न कह सकूंगा।" रघुवीर ने कागज ले लिया और भीतर जाकर कहा कि कुंवर जी चाचा रोते-रोते कुछ कह के यह कागज तुम्हें देने को कह गए हैं। आशातीत समाचार था नीलाम की बोली रघुवीर के नाम खत्म हुई थी कुंवरजी के नहीं। मुखिया जी के नेत्रों से आँसू निकल पड़े—उधर रघुवीर की माँ बराबर कुंवरजी के पितृपक्ष को कोस रही थी।

आकांक्षा

[श्री कालीप्रसाद 'विरही']

एक मिट्टी का दीपक—
जिसने जगती के घने अन्धकार में, अपने जीवन की
क्षीण–ज्योति जला कर—
भटकों को मार्ग लगाया,—
अंधकार को 'प्रकाश' बनाया ,—
शलभ को प्यार किया,—
और—
अन्त तक जलता हुआ, 'प्रकाश' में विलीन हुआ।
हे प्रभु ! मुझे भी ऐसा 'जीवन' दो !!
वह मिट्टी का छोटा–सा दीपक—
जो जीवन भर 'स्नेह' पाकर भी 'जलता' रहा—
अन्धकार खाकर, 'प्रकाश' देता रहा,—
प्रेमियों को गले लगाता रहा,—
और— ?
निश्चलता पूर्वक, जीवन की सारी जलन,—
सारी कसक,—
सारी वेदना,—
बिना 'उफ़' किये, चट्टान की भांति सहता रहा !
हे प्रभु ! मुझे भी ऐसा जीवन दो !!

स्वप्न

[पं० गोकुलचन्द शर्मा एम. ए.]

स्वप्नों से संसार बना है, स्वप्नों की सब माया,
सारा खेल खिलाड़ी का है स्वप्नों ने दिखलाया।
कौन यहाँ है जिसने कोई देखा कभी न सपना ?
किसने नहीं स्वप्न में पहले ढाला साँचा अपना ?
किसकी दुनिया सपने में ही पहले नहीं बनी है ?
कह दो कौन बड़ा भागी जो सपने का न धनी है ?
मेरा जीवन-स्वर्ग स्वप्न से उतर भूमि पर आया,
स्वप्नों से संसार बना है स्वप्नों की सब माया।

मनोभूमि में स्वप्नों के ही अँकुर हैं उग आते,
हरे-हरे फिर प्यारे-प्यारे दो दल हैं दिखलाते।
उनके ऊपर लहराती-सी उठतीं शाखावलियाँ,
जिनमें कलित कुसुम को लेकर खिलतीं कोमल कलियाँ।
उन कलियों में मीठा-मीठा फल भी मैंने पाया,
स्वप्नों से संसार बना है स्वप्नों की सब माया।

कहता है जब कोई मुझसे जग झूठा ज्यों सपना,
तभी देखने लग जाता हूँ स्वप्नलोक मैं अपना।
पड़ता वहाँ दिखाई मुझको उन कवियों का लेखा,
अब तक दमक रही है जिनकी स्वप्न-सृष्टि की रेखा।
बाल्मीकि के राम नहीं हैं क्या स्वप्नों की छाया ?
स्वप्नों से संसार बना है स्वप्नों की सब माया।

कितना बल-बन्धन रखते हैं सोचो धागे कच्चे ?
कितनी शक्ति छिपाये रखते छोटे-छोटे बच्चे ?
मन के महलों से ही बनते राज-भवन भी पक्के,
लघु-लघु लहरों से लगते हैं कितने गहरे धक्के ।
सपने की डोरी ने ही यह सारा नाच नचाया,
स्वप्नों से संसार बना है स्वप्नों की सब माया ।

स्वप्निल लहरों में जो डूबा पाया उसने मोती,
स्वप्नों को खोकर ही दुनिया अपना सब कुछ खोती ।
'भूली' देख-देख स्वप्नों को रही सदा ही रोती,
'जागी' के सम्मुख जगती में स्वप्न-जगत की ज्योति ।
मेरे स्वप्नों ने है कैसा सुधा-बिंदु टपकाया;
स्वप्नों से संसार बना है, स्वप्नों की सब माया ।

स्वप्न जगाते, स्वप्न उठाते, स्वप्न मुझे दौड़ाते,
स्वप्न रुलाते, स्वप्न हँसाते, स्वप्न अहो ! बौराते ।
बन बैठा हूँ स्वप्नों का ही मैं तो एक खिलौना,
मेरी कुटिया में मचला है स्वप्नों का ब्रज-छौना ।
उसकी लीलाओं के आगे मुझ को और न भाया,
स्वप्नों से संसार बना है स्वप्नों की सब माया ।

बड़े मियां

[श्री जयन्त]

एक पतली सी गली थी और उसमें एक छोटा सा मकान था, उसमें रमिया अपने माता पिता के साथ रहती थी।

पिता एक सेठ के यहाँ साईस था। तीन संतुष्ट प्रकृति के जीवों की तृप्ति के लिये काफी कमाई हो जाती थी। वह छोटासा परिवार सुखी था।

उनका रहने का स्थान एक कोठरी थी। एक ओर एक लकड़ी का बक्स, एक कपड़ों की गठरी, दूसरे कोने में कुछ बरतन और घड़ा और खिड़की के पास एक अंगीठी। इसी प्रकार उन लोगों ने अपना सारा रहन-सहन सुव्यवस्थित कर रक्खा था।

रमिया के पिता का एक दोस्त था जिसे बड़े मियाँ के नाम से लोग पुकारते थे। वह उस गली के फाटक पर बैठे रहते। बड़े मियाँ के बेटे थे, पोते थे पर वह घर पर न रह कर वहीं गली के दरवाज़े पर आ बैठते।

लोगों ने बहुत समझाया, "बड़े मियाँ, अपना घर-बार छोड़ यहाँ लावारासियों की तरह फाटक पर क्यों पड़े रहते हो?"

बड़े मियाँ कहते, "भाई अपना पराया क्या! कोई ख़ुदा के घर से किसी मकान या जगह के लिये सनद लिखा कर तो लाया नहीं। जहाँ लोगों ने बताया कि उनका क़ब्जा है वहाँ से उठे अपने अकेले में जा बैठे।

कोई उसे सनकी और कोई पागल समझता। लोग आते जाते उससे चुटकले छेड़ जाते। बड़े मियाँ चुपचाप सब सह लेते और लोगों का लड़कपन कह कर हँस देते।

कभी कभी वह रमिया के मकान की तरफ़ निकल जाते तो उसके लिये कुछ न कुछ ज़रूर ले जाते।

रमिया कहती, 'बड़े मियां की चिट्टी दाढ़ी,
परी ने जैसे रुई हो काढ़ी।"

और खिल खिलाकर हँस देती। बड़े मियाँ जवाब देते, "इसका, मेरी बेटी, अपने लिये स्वेटर बुनेगी न? ले जा इसे।"

रमिया कई बार यह कहकर जाती कि, "कैंची लाई।" पर कुछ देर बाद कैंची न मिलने का बहाना बना कर लौटती और उसके स्थान पर कंघा और तेल लेती आती।

"अभी ऊन कुछ कम है, बाबा। थोड़ा पाल-पोस कर इसे बढ़ालूं फिर मेरे स्वेटर लायक ऊन निकल आयेगी। ऊन तो बढ़ी नहीं, और क्यों बाबा मैं तो बढ़ रही हूं न?"

बड़े मियाँ उसके गाल पर हल्की सी चपत लगा कर कहते, "मेरी बिटिया सब से बड़ी है। बड़ी अच्छी है।"

रमिया कहती, "नहीं बाबा, हम तो छोटे ही रहना चाहते हैं। बड़ों को तो, आज यह काम, कल वह काम, कभी भी अपने बर्तन सजाने को,

गुड़िया खेलने को, अपनी चूड़ियों को सजा कर रखने को और-और बाबा बुरा तो न मानोगे तुम्हारी दाढ़ी का स्वेटर बुनने को वक्त ही नहीं मिलता। ऐसा भी क्या बड़ा होना !" रमिया बड़े मियाँ की दाढ़ी के साथ खेलती हुई कहती।

बड़े मियाँ ने एक दिन कहा, "रमिया बेटी, देखे, तुम्हारी चूड़ियां तो देखें, कैसी कैसी हैं। तुम उनकी बहुत तारीफ़ किया करती हो। देखो सब देखूंगा।"

रमिया अपनी चूड़ियों का डब्बा ले आई। बड़े मियाँ ने उसे लेने को हाथ बढ़ाया।

"ना बाबा ऐसे नहीं। हम अपने आप दिखायेंगे। देखो ये हैं जो बाबूजी बनारस से लाये थे और ये लखनऊ के बिलायती रबड़ के लच्छे और य 'रेशमी काँच की चूड़ियाँ लो' वाली चूड़ियाँ और......।"

बड़े मियाँ ने कहा —"बस, बस और बस। ये लड़की इतना सारा बोल गई कि मैं एक लफ़्ज भी न समझा। अच्छा अब तो तेरे को ऐसी ऐसी चूड़ियाँ ला कर दूँगा कि तूने आज तक देखी भी न होंगी।"

इसी समय माँ आगई और उसने कहा — "तेरे पास इतनी तो चूड़ियाँ हैं। अब और क्या करेगी ?"

"चुप रहो जी तुम। यह हमारा और हमारी बिटिया का मामला है इस में मत बोलो।" गुस्से का सा अभिनय करते हुए और आँख जल्दी जल्दी झपकते हुए बड़े मियाँ ने कहा। रमिया की माँ चलने लगीं तो बड़े मियाँ ने कहा, "रमिया की माँ, नाराज़ हो गई। अच्छा, मुझे माफ़ करना बेटी। तू तो मेरी धरम की बेटी है और हमीदा और रशीदा को तो पार की बेटियाँ समझता हूँ। नाराज तो न हुई न बेटी," बाबा ने भावुकता स कहा।

"तुम भी तो बड़ी जल्दी दुखी हो जाते हो। भला मैं तुमसे क्यों नाराज़ होने लगी। तुम तो मेरे बाप के बराबर हो न ?"

बड़े मियाँ का गला भर आता और वह सारे परिवार को आसीसें देते। आँखों में आँसू भर कर वह कहते, "जब इस दुनिया को छोड़ूँगा तो मुझे और किसी चीज का दुख न होगा, सिर्फ तुम लोगों को छोड़ने का ज़रूर होगा। इसी प्रकार धीरे धीरे बड़े मियाँ उस परिवार से इतना सम्बन्धित हो गये कि दिन का अधिक भाग वह रमिया के पास बैठ कर बिताते।

अब रमिया तेरह चौदह साल की होगई थी। उसके माँ बाप ने सोचा कि रमिया की शादी करदी जाये। बड़े मियाँ के सामने यह सवाल आते ही उन्होंने कहा, "रमिया अभी छोटी है, कुछ समझती नहीं। एक नये घर का सारा काम वह कैसे सम्हाल सकेगी ? अभी थोड़ा बड़ा हो लेने दो।"

रमिया की माँ ने कहा, "बाबा, मोह से ही तो सारे काम नहीं होते, आख़िर कभी तो इसे अलग होना ही है।"

"तो इसका मतलब, उसे कल जाना हो तो उसे आज ही निकाल दो। बेटी, लोग मेरे लिये भी ऐसा ही सोचते हैं। मेरे बेटे कहते हैं 'इस बुड्ढे को कल तो मरना ही है अभी क्यों नहीं मर जाता, पाप कटे।' दुनिया ही ऐसी है। तेरा क्या क़सूर।"

रमिया की माँ ने बड़े मियाँ को दुखी होते देख कर कहा, "अच्छा बाबा, अगले साल ?"

"लेकिन, बेटा, पहले तुम लोगों की खुशी और फिर मेरी। तुम जो कह रही थीं ठीक है और मुझे हक भी क्या है जो......।"

"नहीं बाबा ऐसा न कहो। कभी आज तक मैंने तुम्हारी बात टाली है ? तुम ही तो हमारे बड़े हो, बड़े मियाँ।"

बाबा खुश हो जाते और रमिया को अपने पास बिठा कर कहानियाँ सुनाते।

साल भर भी पूरा हो गया। रमिया की शादी हो गई। लड़के के माँ बाप कोई नहीं था। वह भी रमिया के पिता के ही घर आकर रहने लगा। परिवार तीन से चार का होगया।

"रमिया बेटी, मैं अन्दर आ सकता हूँ?" बड़े मियाँ ने बाहर से पुकारा।

रमिया के पति ने पूछा, "कौन है?"

"बड़े मियाँ हैं। हमारे यहाँ हमेशा से आते हैं। बड़े अच्छे आदमी हैं।" रमिया की माँ ने जवाब दिया।

बड़े मियाँ अन्दर आए। उन्होंने इधर उधर देखा, सब कुछ बदला हुआ सा दिखाई दिया। उन्होंने अपने जीवन में प्रथम बार यह समझा कि रमिया आज़ाद कोयल की तरह कूकने और फुदकने वाली चिड़िया से एक पिंजरे में बन्द पक्षी की तरह संकुचित और सहमी हुई सी भी बन सकती है। उन्हें बड़ा दुख हुआ। मन की बात छिपाते हुए उन्होंने कहा, "रमिया की माँ, इतने दिन की पाली पोसी इस ऊन का स्वेटर अब कौन बनायेगा?" कोई उत्तर न पाकर, कुछ पल तक सोचने के बाद वापिस चलने लगे।

रमिया की माँ ने कहा, "बाबा अभी मत जाओ। आज पहली बार तुम लड़के को देख रहे हो। अपने बच्चों को आसीस भी न दोगे?"

"हाँ, अभी आया एक मिनट में, बेटी।" कह कर बड़े मियाँ जल्दी जल्दी चले गये।

रमिया के पति ने कहा, "यह मियाँ तो यहाँ हमेशा से आता दीखता है।"

"हाँ, यह हमेशा से आते हैं। मैं भी तो उन्हें बचपन से जानती हूँ।" रमिया की माँ ने कहा। उसने देखा कि लड़के की भावभंगी साफ़ बता रही थी कि वह बड़े मियाँ को पसन्द नहीं करता। वह समझता है कि मुसलमान तो कभी भरोसा करने लायक़ होते ही नहीं।

जब बड़े मियाँ दो तीन मिनट बाद लौटे तो उन्होंने रमिया के पति को बाहर जाते देखा।

"हैं, मैं तो दोनों के लिये कुछ लाया था और वह चल ही दिया।"

"हाँ बाबा, उन्हें बहुत कहा कि 'बाबा अपने आदमी हैं अगर तुमने इनसे असीस न ली तो वह बुरा मानेंगे' लेकिन वह बोले जिसे जरूरत हो वह ले लें।" शिकायत के तौर पर रमिया ने कहा।

बड़े मियाँ ने कहा, "बेटी, तू दुखी मत हो अभी लड़का है। आगे समझने भी लगेगा।" लेकिन वह अपने मन में ही जानते थे कि उन्हें कितना दुख हुआ। रमिया रो रही थी। उसकी माँ चुप बैठी थी।

बड़े मियाँ ने अँगोछा खोला और उसमें से कुछ मिठाई और फल निकाले।

"परवाह न कर बेटी, इन छोटी छोटी बातों का बुरा नहीं मानते।"

रमिया उठी और उसी ओर धोती का पल्ला फैलाकर उसने कहा, "बाबा और किसी को नहीं तो मुझे तो अपने बाबा का प्यार और असीस चाहिये।"

बड़े मियाँ की भूरी आँखें सजल हो आईं और उन्होंने उपरने समेत सब चीजों को रमिया की झोली में डाल दिया। "मेरी रमिया बहुत बहुत जीये। रमिया-सी बेटी खुदा सब घरों में दे।" बड़े मियाँ से और न बोला गया।

रमिया ने अपने आँसू पोंछते हुये कहा, "बाबा यह उपरना भी अब न लौटाऊँगी। मुझे दे दिया न?"

"हाँ बेटी।" बड़े मियाँ ने कहा। रमिया ने सब चीजों को बाँध कर रख दिया। बड़े मियाँ ने कुछ सोचते हुये कहा, "अरे मैं एक चीज़ तो भूल ही गया। अच्छा रमिया, बता तो, क्या लाया हूँ तेरे लिये?"

"मैं नहीं बताती तुम बताओ?"

"नहीं बताएगी?" बड़े मियाँ ने गुस्सा दिखाने का प्रयत्न करते हुये कहा।



श्री 'उमेश' चतुर्वेदी



श्री जयंत

POPULAR PRESS, DELHI.

"अच्छा, नहीं देना तो न दो। तुमसे माँगता कौन है?"

परन्तु रमिया को भी गुस्सा दिखाते देखकर बड़े मियाँ ने धीरे से कहा,"अच्छा ले ।" और उन्होंने अपनी वास्कट की जेब में से चार चूड़ियाँ निकालीं।

रमिया ने हाथ बढ़ा दिये। "बाबा तुम ही पहना दो।"

उसकी माँ ने कहा, "बाबा इनकी क्या जरूरत है? तुम्हारी ही तो दुआओं से यह खाती पहनती है।"

रमिया ने कहा, "तुम्हें नहीं लाकर देते इसीलिये चिढ़ती हो?" यह कह ही रही थी कि दरवाजे से उसने अपने पति को आते देखा। उसका चेहरा गुस्से से लाल हो रहा था। दरवाजे ही पर से वह लौट गया। बड़े मियाँ ने भी देखा।

जल्दी जल्दी चूड़ियाँ पहना कर बड़े मियाँ ने कहा,"बेटी अब मैं जाता हूँ।" वह अपने मन में कुछ अपमानित सा अनुभव कर रहे थे।

रमिया ने बड़ी हिम्मत करके पूछा, "फिर कब आओगे?"

"जब खुदा चाहेगा। बड़े मियाँ ने रमियाँ के सिर पर हाथ फेरते हुये कहा।

"सामवार को आना बाबा, माँ का उस दिन जनम हुआ था। माँ के लिये भी चूड़ियाँ लाओगे न?"

"मेरी बेटी तो समझदार हो गई है।" बड़े मियाँ कहते हुये चले गये।

* * *

"कितने दिन हो गये बड़े मियाँ नहीं आए।" रमिया ने अपनी माँ से कहा।

"बाबा मुझसे नाराज हो गये हैं क्या, माँ?" कोई उत्तर न पाकर रमिया ने कहा,"मैंने तो उन्हें कुछ कहा नहीं। माँ, मैं जानती हूँ मेरी शादी कर के तुमने अच्छा नहीं किया। सारे घर को और बाबा को भी दुखी कर दिया। मुझे तो तुम कोई भी खुश नहीं दीखते।"

माँ ने बात को घुमाते हुये कहा, "मैं भी बाबा के बारे में सोच रही थी। वह नहीं आये इतने दिन से। आज जब वह काम पर चले जायें तो हम दोनों गली के फाटक पर चलेंगे। आज बाबा का पता लगावेंगे।"

"माँ, मैं बाबा को मनालूँगी। वह मेरा बड़ा कहना मानते हैं।"

खाना खाकर रमिया का पति तो अपने काम पर चला गया और रमिया और उसकी माँ दरवाजे पर बाबा को देखने गये। वहाँ पर कोई न था। पास ही हलवाई की दुकान थी। उससे पूछने पर पता लगा—तीन दिन हुये एक दिन बड़े मियाँ उसके पास आये थे और कुनीन की गोलियाँ माँग रहे थे! शायद जाड़ा चढ़ रहा था।

दोनों की और कुछ पूछने की हिम्मत न पड़ी और चुपचाप वापिस घर आ गई।

घर पहुँचते ही देखा कि रमिया के पिता खड़े उन दोनों की राह देख रहे थे। "आज जल्दी आ गये बाबू जी? रमिया ने पूछा।

"हाँ बेटा, आज मालिक बम्बई चले गये हैं। दो हफ्ते गाड़ी काम नहीं आवेगी। कहाँ से आ रही हो तुम लोग?"

'बाबा को देखने गये थे।"

"कुछ पता लगा? मैं भी कल मिलने गया तो वह मिले ही नहीं। सुना है वह कहीं चले गये हैं।"

उस दिन शाम को रमिया का पति आया तो सब लोग भौंचक्के से रह गये। चार आदमी उसे उठा कर लाये थे। वह बेहोश था। पता लगा, मिल मैनेजर के साथ उसने अभद्रता का व्यवहार किया इस लिये उसकी यह दशा हुई। वह दबंग और अक्खड़ प्रकृति का आदमी था। जहाँ अपने को ठीक समझता बड़े से बड़े अफसर से लड़ पड़ता।

उसे चारपाई पर लिटाया। उसके बदन पर

कहीं ज़ख्म न था पर घूँसों और लातों की चोट से सारा बदन दुख रहा था।

चार दिन बीते। रमिया और उसकी माँ दिन रात बीमार के पास बैठे रहे और उसकी पूरी तरह सेवा की। दवाइयों पर भी पूरा खर्च किया। बदन की सूजन के साथ बुखार भी बढ़ गया। रमिया को बड़ी फिकर हो रही है।

रमिया अपने पति को पसन्द नहीं करती थी, फिर भी वह उसका पति ही था। पहले, बड़े मियाँ का इतने दिन गायब रहना और फिर पति का इस हालत में पड़ा होना देख कर रमिया, शायद ही कोई ऐसा समय बीता होगा जब वह बेचैन न रहती हो।

गली में ही एक डाक्टर रहते थे उन्हें बुलाया तो वह बोले," लड़के की हालत चिंताजनक है। चोट अन्दरूनी है। मेरे अस्पताल में दाखिल कराओ। रोज़ का पाँच रुपया खर्च पड़ेगा और पन्द्रह दिन लगेंगे।"

उस परिवार को इतनी छोटी कमाई में से कुछ बचा लेना तो असम्भव ही था यही काफी था कि बिना कठिनाई के वे कर्ज़ आदि के झगड़ों से बचे सब काम अच्छी तरह चला लेते थे। पाँच रुपया रोज तो वैसे ही बहुत होता है और फिर पन्द्रह दिन तक! मालिक भी नहीं थे कि रमिया का पिता उससे जाकर कुछ माँगता चुप साध कर बैठ जाना पड़ा।

इतनी सेवा करने पर भी रमिया का पति फिर मैनेजर की झिड़कियों और मार न सहने के लिये रमिया, उसकी माँ और उसके पिता को रोता छोड़ कर चल दिया।

आज उस बात को हुए एक हफ्ताह बीत चुका था। शाम का समय था। माँ-बेटी बैठी थीं। बाहर से आवाज़ आई, "रमिया मैं आ सकता हूँ।" आवाज़ पहिचानी हुई थी। वह बड़े मियाँ की थी।

रमिया में बल न था कि दरवाज़ा खोलती—और अपने बाबा को घर में बुला लेती। दूसरी आवाज़ पर रमिया की माँ उठी, दरवाज़ा खोला तो उसने देखा बड़े मियाँ बगल में तीन-चार बंडल उठाए खड़े हैं।

बड़े "मियाँ ने उत्सुकता से पूछा "रमिया है या अपनी सुसराल चली गई।"

"गई।" रमिया की माँ ने उस दुखी समाचार को जितनी देर टल सके टालने के विचार से कहा। "आज अगर वह यहाँ होती तो कितनी खुश होती। क्या क्या चीज़ें मैं अपनी बिटिया के लिये लाया हूँ। एक जोड़ा जूता तेरे लिये लाया हूँ। लखनऊ गया था न। लेकिन तुम उदास क्यों हो? कुछ बोलती ही नहीं।"

"क्या बोलूँ, बाबा।" उसने हृदय की व्यथा छिपाते हुए कहा।

"अच्छा रहने दो। यह लो इस लिफाफे में चूड़ियाँ हैं। बिटिया को यह लिफाफा आज ही डाक से भिजवा देना, समझीं?"

"लेकिन बाबा अब चूड़ियों की जरूरत ही क्या है?"

"उससे तुम्हें क्या?"

बड़े मियाँ लिफाफा रमिया की माँ को देकर चलने लगे। रमिया की माँ को होश न था। हाथ से लिफाफा गिर गया और सब चूड़ियाँ चूर चूर हो गईं।

बड़े मियाँ की छाती में जैसे किसी ने कुछ मार दिया हो। वहीं सिर पर हाथ रखकर बैठ गये।

"बाबा परवाह न करो। अच्छा ही हुआ यह चूड़ियाँ टूट गईं। इनकी अब सचमुच जरूरत नहीं है बाबा, अब तुम्हें यहाँ आने से कोई

नहीं रोकेगा। रोकने वाले तो चले ही गए। कह रहे थे, 'बाबा ने मुझे आसीस नहीं दी। उसके बिना मैं कैसे रहूँ।' मैंने कहा 'थोड़ा और ठहरो' पर वह न माने और कहने लगे 'अब तो जाऊँगा ही।' बाबा, उन्हें मिल वालों ने मारा भी कितना था। सारा बदन सूज आया था।" बड़े मियाँ को बात समझते देर न लगी।

अपने को कोसते हुए बोले, "हे खुदा! अगर यह सारा दुख इन लोगों को मेरी वजह से हुआ है तो मुझे सजा देना। लेकिन रमिया मैं कितना बदनसीब हूँ तेरे सुख के लिये कुछ भी न कर सका।"

रमिया ने बाहर आकर कहा, "बाबा, छोड़ो भी इन बातों को जो कुछ होना था सो हो ही गया।"

बड़े मियाँ मुँह बाये सुनते रहे। कुछ समझ में न आया। रमिया आगे बढ़ी और बड़े मियाँ को सहारा देकर अन्दर लाई। बड़े मिया आँखें फाड़ कर देख रहे थे।

रात हो गई थी। रमिया ने भारी मन से कहा, "बाबा तुम रात को मुझे कहानियां सुनाया करते थे। आज भी सुनाओ।" बड़े मियाँ का भावुक हृदय भर आया। इतने दुख में रमिया अपने को कितने संयम से रोके बैठी थी। जैसे कुछ हुआ ही नहीं। रो लेती तो दुख हलका हो जाता। दुख के घूंटों को पी जाना कितना भयानक होता है। बड़े मियाँ समझ रहे थे पर करते क्या?

कहानी सुनानी शुरू की उसी प्रकार रमिया के सिर पर हाथ फेरते हुए। रमिया सुन रही थी उसी प्रकार बाबा की दाढ़ी से खेलने का विफल प्रयास करती हुई।

कालाय तस्मै नमः

[साहित्याचार्य पं० गयाप्रसाद शास्त्री]

विश्व विनश्वर है और अनित्य है। मृत्यु अनिवार्य है। इच्छा या अनिच्छा-पूर्वक एक दिन सभी को मरना है। राजा-रङ्क, ज्ञानी-ध्यानी पंडित-मूर्ख पुण्यात्मा एवं पापी सभी को एक न एक दिन, आगे या पीछे क्रूर कर्मा, कराल काल का ग्रास बनना पड़ेगा। कोई भी महा शक्ति किसी को काल के मुख से नहीं बचा सकती है। किन्तु समय पर मरना और स्वाभाविक मृत्यु से मरना एक बात है और अकाल मौत से मरना दूसरी बात है। भारत के लोग अकाल मौत को पाप का फल मानते हैं। किसी जमाने में बिजली, भूचाल, महामारी आदि के द्वारा जनपद (देश) का विध्वंस जब हुआ करता था तो उसे घोर पाप का कारण मान कर बड़े बड़े यज्ञ, शान्ति तथा महादान आदि हुआ करते थे। किन्तु आज तो समस्त विश्व में मृत्यु का नहीं किन्तु महा प्रलय का अकाण्ड ताण्डव मचा हुआ है, फिर इसे क्या कहा जाय ? इसे तो राष्ट्रों का घोर पाप ही कहना चाहिए। पर इस पाप का प्रायश्चित्त और किसी उपाय से न होकर विश्व का सर्वनाश या उसे श्मशान बना कर ही हो सकेगा !

पुराणों की कथाओं को पढ़कर यदि उन्हें कोरी गप्पबाजी न मान कर कुछ उनसे जीवन की दिशा में प्रकाश लिया जाय तो देश तथा समाज का बहुत बड़ा कल्याण हो सकता है। पर, मृत्यु का आमन्त्रण करने वाले लोगों को इन सब बातों को सोचने का मौका कहाँ ? कहते हैं, किसी जमाने में (त्रेतायुग में) भारत के दक्षिण समुद्र में एक द्वीप था, उसे लङ्का के नाम से पुकारा जाता था। सारी लङ्का सोने की थी। उसके राजा का नाम था रावण। रावण बहुत बड़ा वैज्ञानिक, पंडित और वीर था। उसने पंच महाभूतों (पृथ्वी, जल, तेज, वायु और आकाश) तक पर अपना अधिकार कर रखा था। उसने इतनी बड़ी अजेय शक्ति प्राप्त करली थी कि मौत तक को भी अपने पलंग के एक पाए में बाँध रखा था। उसका एक एक अनुयायी क्षण भर में सारे विश्व को नष्ट कर देने की शक्ति रखता था। उसने अपनी शक्ति से सारा संसार, स्वर्ग लोक और पाताल लोक आदि चौदहों लोकों को जीत कर अपने वश में कर रखा था। सभी लोग उसके नाम से काँपते थे और उसे राज-कर देते थे। उसने सात्विक-गुण-सम्पन्न सभी व्यक्तियों को (इन्द्र, चन्द्र आदि देवताओं को) जेलखानों में डाल रखा था। उसके राज्य में कोई भी व्यक्ति भला काम नहीं कर सकता था। वह सारे संसार के खून का प्यासा था और उसे रुलाता था, इसी लिए उस का "रावण" यह नाम पड़ा था। यद्यपि वह इतना बड़ा सम्राट था, फिर भी वह राक्षसराज के नाम से पुकारा जाता था। उसका एक नाम दशमुख भी था। कहते हैं वह छः शास्त्र और चारों वेदों का जानने वाला तथा

अपूर्व प्रतिभाशाली था। इसीलिए उसे "दशमुख" उक्त उपाधि प्रदान की गई थी। इन सब विशेषताओं के होते हुए भी उसने विश्व-विनाशिनी आसुरी शक्तियों का अवलम्बन किया था। राम-रावण के युद्ध में जिन आसुरी शक्तियों का प्रदर्शन हुआ था, उसे स्मरण करके आज भी हृदय काँप जाता है। किन्तु आसुरी शक्तियों के चरम विकास या उन्नति का नाम ही प्रलय या विनाश है। जिस समय रावण अपने प्रखर प्रताप के कारण मध्याह्न के सूर्य के समान तप रहा था और उसके अत्याचारों से लोक में त्राहि-त्राहि मची हुई थी, उसी समय भगवती सीता का अपहरण करके उसने अपनी मृत्यु को आमन्त्रित किया। देखते देखते स्वप्न लोक के समान सोने की लङ्का राख हो गई और रावण स्वयं अपने विश्व-विजेता सामन्त, सैनिक और समस्त परिवार के साथ इस लोक से बिदा होगया। इस ऐतिहासिक रावण को मरे हुए आज कितने ही युग बीत गए, फिर भी उसके राक्षसी अत्याचारों के प्रति घृणा प्रकट करने के लिए उसे अब भी राक्षस राज के नाम से पुकारा जाता है और उसके विज्ञता-द्योतक दश शिरों के ऊपर गधे के चिन्ह प्रदर्शित किए जाते हैं।

इन सब बातों से पता लगता है कि आसुरी शक्तियाँ कैसी भी अजेय क्यों न हों उनका नाश अवश्यम्भावी है। साथ ही एक बात का पता और चलता है कि कोई व्यक्ति कैसा ही महा पण्डित और वैज्ञानिक क्यों न हो, यदि उसकी विद्या-बुद्धि का उपयोग विश्व-विनाश कारी कामों के लिए होता है तो इसमें कोई भी सन्देह नहीं है कि आने वाले युग में उसे राक्षस की उपाधि दी जायगी और उसका सम्मान रावण के समान ही शिर पर गधा बिठलाकर किया जायगा।

रावण की आसुरी शक्तियों की तुलना जब हम योरोप तथा जापान जैसे एशियाई राष्ट्रों की शक्तियों के साथ करते हैं तो हृदय काँप जाता है और विश्व-विनाश के सम्पूर्ण दृश्य एक एक करके आँखों के सामने आ जाते हैं। आसुरी शक्तियों के विकास और उनके द्वारा होने वाले अत्याचार चरम सीमा तक पहुँच गए हैं। विश्व माता का वक्षःस्थल बेकसों और बेबसों के खून स रँग गया है एवँ रँगा जा रहा है फिर भी आसुरी शक्ति के मद से मतवाले, साम्राज्य लोलुप, शक्तिशाली राष्ट्रों या राक्षसों की रक्त-पिपासा अब तक शान्त होती हुई न दिखलाई पड़ती है। प्रत्युत उत्तरोत्तर बढ़ती ही जा रही है। नरसंहार के वीभत्स दृश्य एक एक करके इस क्रम से आँखों के सामने आ रहे हैं, मानों वे इस बात की सूचना दे रहे हैं कि वह दिन अब अधिक दूर नहीं है, जब योरोप में और एशिया के एक भाग चीन में लगा हुआ युद्ध का दावानल विश्व के कोने कोने में फैल कर इन मायावी राक्षसों को उनकी आसुरी शक्ति तथा सभ्यता के साथ खाक कर डालेगा। साम्राज्यवादलिप्सा रूप उनकी सोने की लंका का कहीं नामो-निशान भी न रह जायगा। इन क्रूर-कर्मा नृशंस राक्षसों ने अगणित अबोध, निरपराध, निर्दोष एवं निरीह बच्चों और स्त्रियों की हत्या कराके न केवल मानवता को ही लज्जित किया है; बल्कि इस बात को सिद्ध कर दिखाया है कि स्वार्थी और शक्तिशाली मनुष्य स्वार्थ की मदिरा को पीकर शैतान से भी बढ़कर क्रूर और निर्दय हो जाता है। मनुष्यों के हृदय-मन्दिर में प्रेम और दया का दीपक जलाने वाले महात्मा ईसा और भगवान बुद्धदेव कभी इस बात की कल्पना भी न कर सके होंगे कि उनके अनुयायी शक्तिमद से मतवाले होकर इस प्रकार मनुष्यता का तिरस्कार करेंगे। आज मृत्युमुख में पड़े हुए असंख्य नर-नारियों और शिशुओं के करुण-क्रन्दन के साथ-साथ उन महात्माओं की आत्माएं भी स्वर्ग में रो रही होंगी।

सृष्टि के सामूहिक विनाश का नाम ही प्रलय

या महाप्रलय है। प्रलय और महाप्रलय इन दोनों में बहुत बड़ा अन्तर है। प्रलय एक देशीय भी हुआ करता है। महायुद्ध, महामारी, जलप्लावन तथा भूचाल आदि के द्वारा जो सामूहिक विनाश होता है, उसे "प्रलय" कहते हैं एवं चराचर जगत का सम्पूर्ण रूपेण जो सर्वनाश है, उसे "महाप्रलय" कहते हैं। प्रलय और महाप्रलय दोनों ही प्रकृति के विक्षोभ से होते हैं। प्रकृति के साधारण विक्षोभ से "प्रलय" और असाधारण विक्षोभ से "महाप्रलय" हुआ करता है। जिस प्रकार वात, पित्त और कफ का सामञ्जस्य नष्ट हो जाने से शरीर नष्ट हो जाता है, उसी प्रकार सत्व, रज और तम इन तीनों गुणों का सामञ्जस्य नष्ट हो जाने से त्रिगुणात्मक सृष्टि का नाश होता है। शरीर नाश में मिथ्या आहार-विहार के द्वारा प्रकृति का विक्षोभ होता है और सृष्टिनाश में आसुरी भावनाओं की वृद्धि के द्वारा प्रकृति का विक्षोभ होता है। इस समय प्रकृति बेहद विक्षुब्ध हो रही है। आधुनिक विज्ञान में पंच महाभूतों पर अधिकार करके प्रकृति को पददलित करने में कोई कोर-कसर नहीं की है। वैज्ञानिकों की सारी शक्ति विश्व के कल्याणकारी कार्यों की ओर से हटकर विश्व के विध्वंस के लिए विषैली, घातक गैसों एवं युद्ध के अन्यान्य अस्त्र-शस्त्रों के बनाने में लगी हुई है। सत्वगुण की कमी एवं रजोगुण तथा तमोगुण की असाधारण वृद्धि के कारण आसुरी भावनाओं ने समस्त संसार के ऊपर अपना आधिपत्य जमा लिया है। यही आसुरी भावनाएं (सीमातिपाती काम, क्रोध, लोभ, मोह, ईर्ष्या तथा द्वेष आदि) आसुरी शक्तियों के साथ मिल कर विश्व के विनाश का कारण बन जाती हैं। यदि विचार की दृष्टि से देखा जाय तो अनन्त प्रलोभनों के रूप में आज समष्टि जगत् में अशान्ति का दावानल लगा हुआ है। जिस प्रकार पतंगों का समूह अपनी भावी मृत्यु की तनिक भी चिन्ता न करके बड़ी तेजी के साथ दीपक की ओर दौड़ता चला जाता है और मृत्यु के बाद ही या साथ ही उसे अपनी भूल का ज्ञान होता है, उसके पहले नहीं, उसी प्रकार इस बीसवीं सदी में सर्वसाधारण प्राणियों के साथ-साथ बड़े-बड़े राष्ट्र भी प्रलोभनों एवं साम्राज्य-लिप्सा की आग की ओर (युद्ध की ओर) दौड़े जा रहे हैं, जिसका परिणाम सृष्टि-विनाश के सिवाय और कुछ भी नहीं हो सकता है।

जिस प्रकार पतझड़ के बाद ही कोमल-किसलयों या नवपल्लवों की सम्भावना की जा सकती है, उसी प्रकार एक बार सामूहिक प्रलय अथवा नरसंहारलीला को देख लेने के बाद ही बचे-खुचे लोगों में सात्विक भावनाओं के उदय के साथ-साथ विवेक या प्राणिप्रेम का प्रकाश हो सकता है। इसके पूर्व जो व्यक्ति या राष्ट्र शान्ति सम्मेलनों के द्वारा शान्ति-शान्ति का बेसुरा राग अलाप रहे हैं, उनमें से कुछ लोग तो भारी भ्रम में हैं और कुछ एक शान्ति के ठेकेदार दुर्बलों एवं असहाय राष्ट्रों का सर्वस्व अपहरण करके उसे पचा डालने की इच्छा से ही लोगों की आँखों में धूल झोंक रहे हैं। वास्तव में इन सर्वभक्षी धूर्तराष्ट्रों के शान्ति-सम्मेलनों के सुनहले आवरण के नीचे ही सर्वसंहारकारी विश्वव्यापी युद्ध का ज्वालामुखी छिपा हुआ है, जिसके भड़क उठने में अब घड़ी-पल की ही देर है। विक्षुब्ध प्रकृति अपने अत्याचारियों को दण्ड देने में बड़ी निष्ठुर है। जो लोग शक्तिमद से मतवाले होकर प्रकृति माता की इस सुन्दर रंगस्थली को उजाड़ने में लगे हुए हैं, उनके पापों और अत्याचारों का फल आज नहीं तो कल मिल कर ही रहेगा। एक बार विश्वव्यापी युद्ध के द्वारा प्रलय या सर्वनाश के बाद जिस संसार का पुनर्निर्माण होगा, वह सात्विक होगा। अन्धकार के बाद प्रकाश का होना जिस प्रकार स्वाभाविक है, उसी प्रकार

रज और तम के दब जाने के बाद सत्वगुण का विकास तथा उसके द्वारा एक बार फिर संसार में सत्य का प्रभात अथवा सुख-शान्ति का प्रकाश होना अत्यन्त स्वाभाविक है।

संसार की इन सभी हलचलों तथा परिवर्तनों का एक मात्र कारण काल है, अतः विवश होकर "कालाय तस्मै नमः" कह कर ही मौन होना पड़ता है।

गीत

[श्री मातादीन भगेरिया]

उषे ! अरुणिमा आगरी
क्यों गाती हो कौन सुनेगा
अमरपुरी का राग री !
आँचल में अनुराग भरे
या संजीवन फाग धरे,
सखि तुम जग में टिक न सकोगी
भव का विभव विभाव री।
तुम्हें सुमन खिलते प्रिय हैं
यहाँ वज्र निर्मित हिय हैं
उन्हें कुचलते पिसते क्या तुम
देख सकोगी नागरी ?
माली आकर कुसुम चुने
और अहेरी विहग हने,
पशु बल का है राज्य विश्व में
शीघ्र यहाँ से भाग री।
तुम्हें देखने सर-सिज खिलते
खग-कुल हिल-मिल कर सुर भरते,
खग-प्रसून सब तेरी निधि का
पाते हैं सम्भाग री।
उषे, अरुणिमा आगरी !

प्रेम या पाप

[श्री इन्द्र देव]

अपनी छत पर अकेला लेटा सोच रहा हूँ—प्रेम करना क्या पाप है ?

समझ नहीं पड़ता—कभी सोचता हूँ पाप है—कभी संसार के सामने चिल्ला चिल्ला कर कहने को जी चाहता है—"नहीं। पाप नहीं है, पाप नहीं है।"

पर समाज है, कानून है, नियम है, सरकार है और सब से ऊपर "नैतिकता" है। सभी तो कहते हैं प्रेम पाप है। कुछ स्थानों पर उन्होंने इसे सहन करने की भी उदारता दिखाई है, पर मात्र उदारता।

अभी अभी मेरे पास मेरा अनन्य मित्र बैठा था। अभी अभी वह पच्छिम को जाने वाली गाड़ी पकड़ने के लिये स्टेशन गया है। उसकी पीड़ा देख विद्रोह जाग उठता है। न जाने कितनी बार ऐसा मन आया था कि समाज या अपने मित्र दोनों में से एक का अन्त कर दूँ। न रहेगा बाँस, न बजेगी बाँसुरी। पर मित्र का अन्त कैसे करूँ, और समाज ! यह बहुत शक्तिशाली मालूम होता है।

तारों से भरा आकाश मुझे बहुत प्रिय लगता है। कम ज्यादा चमकते मूक तारों को देख कर मुझे जीवन में बड़ा संतोष मिला है। मुझे ऐसा लगता है मानों असह्य पीड़ा सहन करके भी ये तारे रोते चिल्लाते नहीं, चमकते ही जाते हैं—चमकते ही जाते हैं। फिर मानव क्यों अपनी पीड़ा सहन करके अपना कर्तव्य न किए जाय। फिर भी अन्याय के प्रति चुप होकर तो बैठा नहीं जा सकता, विद्रोह करने को जी चाहता है। सोचता हूँ यदि "कर्तव्य" की परिभाषा स्पष्ट हो जाय तो परिस्थिति की तनावट कम हो जाय। क्या काम "कर्तव्य" की सीमा में आता है और क्या नहीं यह बात जानना भी जरूरी है। पर इतना समय तो मेरे पास नहीं। मेरे सामने तो मेरा मित्र है और उसकी पीड़ा। इसकी मेरे पर जो प्रतिक्रिया हो रही है वह इतनी ज्यादा है कि मैं कुछ और सोचने की अपने में शक्ति नहीं पाता।

अभी छै माह पूर्व की बात है। मित्र की शादी बड़ी धूम-धाम से हुई थी। सारा दुर्भाग्य लेकर मैं पैदा हुआ हूँ न, इसीलिए मैं अपने अनन्य से अनन्य मित्रों की भी शादी में आज तक कभी शामिल न हो सका—पर फिर भी मेरे मित्र की शादी धूम-धाम से की गई, यह सत्य है।

हाँ तो मैं कह रहा था, अभी छै माह हुए, मित्र की शादी हुई थी। मित्र अच्छे खाते पीते आदमी हैं। कुटुम्ब बड़ा नहीं—नौकरी से २५० रु० मासिक वेतन पा लेते हैं—इसी से कुछ दिन अपने गाँव में रह कर सुहाग मनाने की ठानी। गाँव ज्यादा

सुन्दर है यह तो मैं नहीं कह सकता पर आस-पास थोड़ी बहुत दूर तक वह स्वास्थ्य के लिये प्रसिद्ध है। गंगा के किनारे बसा है—पास ही में हिमालय पर्वत की शाखाएँ शुरू हो जाती हैं। अक्टूबर माह में यहाँ आस-पास के धनी-मानी पुरुष आ जाया करते हैं। मैं और मेरे मित्र का यही गाँव है। नौकरी तो दोनों अलग-अगल शहरों में करते हैं पर इस गाँव के प्रति मोह दोनों में से शायद एक का भी कम नहीं हुआ है।

सो इसी गाँव में मित्र अपनी पत्नी को लेकर सुहागरात के बहाने आठ-दस रोज बिताने गए। अपनी शादी पर मित्र स्वयं ही विशेष उत्साहित प्रतीत नहीं होते थे। पर शादी करनी थी इसी से कर ली। मित्र को अधिक भावुक कहना भी ठीक न होगा पर प्रत्येक व्यक्ति के जीवन में एक ऐसा समय आता है जब उसे अपने को असहाय पाना पड़ता है। इस बार, वही अवसर मित्र के जीवन में आया।

गाँव बड़ा नहीं है पर विदेशियों के ठहरने के लिए कुछ ठेकेदारों ने चन्द मकानात बनवा दिए हैं। साल में तीन माह वे किराए पर चढ़े रहते हैं पर उसी समय में उनके मालिक साल भर का किराया निकाल लेते हैं। मित्र के मकान के सामने भी एक ऐसा ही मकान बना था। इस बार दुर्भाग्य वश उसमें एक पंजाबी सज्जन अपनी पुत्री के साथ आकर ठहरे थे। एक सप्ताह तक घूमने जाते समय मित्र का पड़ौस के पंजाबी सज्जन तथा उनकी पुत्री से साक्षातकार होता रहा। विदेश में जाकर प्रत्येक व्यक्ति से जानकारी प्राप्त करने की जो लालसा मनुष्य मात्र में स्वाभाविक है उसी के वशीभूत होकर पंजाबी सज्जन ने भी मित्र से जान पहचान कर ली। काफी पढ़े लिखे तथा समझदार व्यक्ति थे। पंजाब में सरकारी इंजीनियर थे। पुत्री उस समय एफ. ए. की तैयारी कर रही थी।

और फिर मित्र को अपनी एक सप्ताह की छुट्टियाँ बढ़ानी पड़ी।—एक और, एक ओर और दो माह बाद मित्र गाँव से वापिस नौकरी पर लौटे। दफ्तर से ही उन्होंने मुझे चिट्ठी लिखी थी कि वे बड़े व्यग्र हैं, पीड़ित हैं, मिलना चाहते हैं। मैं तुरन्त उनके पास गया। देखा मित्र पीले पड़े थे आँखें अन्दर धँस गई थीं। जीवन का कोई आसार दिखाई नहीं देता था। मैं बड़ा चिन्तित हुआ। पूछा—"ये सब क्या है? क्या हुआ तुम्हें?"

मित्र जवाब में हँस भर दिया। नई बीबी उन दिनों माँ के घर गई हुई थी। घर पर वह अकेले तथा एक नौकर मात्र था। मुझे नहाने धोने का समय देने के लिए वे जरा अखबार खोल कर पढ़ने लगे, और फिर खाना खाया और दफ्तर जाने की जल्दी में कोई बात नहीं हो सकी। शाम को आने में भी उन्हें देर हुई। मैं छत पर लेटा था। उस दिन भी आकाश में तारे छिटके हुए थे। मैं मित्र की प्रतीक्षा में था।

आखिर वह आए और सीधे छत पर चले आए। आज वे खासतौर पर व्यग्र प्रतीत होते थे। मेरे पास ही नीचे चारपाई पर बैठ गए। खाना आया और मशीन की भाँति दो चार कौर निगल कर मित्र ने थाली दूर सरकादी।

मैं सब कुछ देख रहा था। मित्र की हालत देख कर मुझे किसी भारी भय की आशंका थी। मैंने मित्र का हाथ पकड़ कर कहा—"क्या है ये सब। अपने को क्या मार डालने की प्रतिज्ञा कर बैठे हो। यह हाल एक दिन में तो हो नहीं सकता। फिर पहले से सूचना क्यों नहीं दी?"

मित्र फिर हँस दिए। मैंने गम्भीर होकर पूछा—"किसी डाक्टर को दिखाया है?"

सूखी हँसी हँसते हुए, मित्र ने कहा—"नहीं, जरूरत भी तो नहीं है।"

आखिर बहुत पूछताछ करने पर मालूम हुआ कि मित्र अपनी सुहाग रात मनाते समय पड़ौस

में आकर टिके हुए पंजाबी की पुत्री से प्रेम करने लगे हैं और इस बीच में लड़की के कई पत्र भी उन्हें मिल चुके हैं।

मैं सन्न रह गया। ऐसा कभी भी समय हो सकता है यह मैंने सोचा ही नहीं था। न जाने क्यों मेरा दिल मसोस उठता था। तीन प्राणी हैं, मित्र, भाभी और मित्र की प्रेमिका। मिनिट-मिनिट में मेरा ख़याल तीनों पर दौड़ जाता था। कभी पंजाबी सज्जन की लड़की, कभी मित्र और कभी भाभी। एक पर भी टिक कर गंभीर विचार करने की क्षमता मानों उस दिन मैंने खो दी थी, और उस दिन हम दोनों एक ही खाट पर पड़े-पड़े बातें करते रहे थे, न जाने क्या क्या बातें।

सुबह देर से जगे। पहले सुना करता था कि असह्य पीड़ा होने पर मरीज़ को पीड़ा का अनुभव ही नहीं होता, पर उस दिन अनुभव किया। न जाने कैसा खोया सा घूमता रहा। मित्र उस दिन भी दफ्तर चले गए। इसी प्रकार तीन चार दिन वहाँ रहा, खूब बातें हुईं, पर समाधान कोई न मिला।

घर आने पर न जाने कितनी रातें मैंने जाग कर बिता दी हैं। ख्याल आता है, मित्र पढ़े लिखे समझदार व्यक्ति हैं। उन्हें सोच समझ कर शादी करनी चाहिए थी और जब शादी करली ही है तो क्या अच्छी क्या बुरी। उनका कर्तव्य अपनी पत्नी के प्रति सच्चा रहना हो जाता है। आखिर उस बेचारी का क्या क़सूर। कहाँ हिन्दू घराने में वह पली थी और माता पिता के इच्छानुसार जिन को अपना स्वामी मान कर वह उन्हें छोड़ आई। अब उसका तो "स्वामी" ही है। ऐसी निरपराध को क्या इस प्रकार धोखा देना ठीक होगा? पर मित्र को भी तो अपराधी नहीं बता सकता। चारों ओर से फटकार पड़ने पर ही मित्र ने शादी की थी। शादी के प्रति उनका विशेष उत्साह नहीं है, यह किसी से नहीं छिपा था, पर समाज के वे प्राणी थे और समाज में शादी करके ही रहना होता है। शादी करली है इसी से वे प्रेम न करें यह कहना तो अन्याय होगा। और अब जब उन्होंने प्रेम कर लिया है तो मार्ग क्या हो? किस रास्ते का अवलम्बन करना होगा ताकि सब कुछ ठीक होजाय। पर कुछ सूझी ही नहीं।

कल अचानक मित्र मेरे यहाँ आए थे। अपनी प्रेयसी के कई पत्र मिलने पर भी उन्होंने कोई जवाब नहीं दिया था। अब प्रेयसी के पिता ने उन्हें अपने यहाँ निमंत्रित किया है। उनसे क्या कहें। मना करने को जी होता है पर मना कर तो नहीं सकते। हाँ भी कैसे कहें। भाभी की याद आते ही काँप उठता हूँ। आखिर अभी अभी वह हजार हजार माफी माँग कर चले गए हैं। प्रेयसी के घर उसके पिता के महमान बन कर जायंगे, और मैं पड़ा-पड़ा सोच रहा हूँ— "कैसे होगा।"

शादी की वर्तमान प्रथा को मैं घृणा की नज़र से देखता हूँ और इसीसे उसमें बँधना नहीं चाहता, बँधा भी नहीं हूँ। पर जो बँध गया है तथा जिसने अपने साथ एक और प्राणी को बाँध लिया है वह क्या करे? अकेले उस बन्धन को काट कर भाग जाना किसी तरह भी ठीक नहीं। वह दूसरे साथी के प्रति अन्याय होगा। दोनों की सहमति हो — दोनों के सामने प्रशस्त मार्ग हो तो दोनों ही उस बन्धन को काटकर अपने अपने उद्देश्य की ओर जा सकते हैं। यह दोनों ही के लिए स्वास्थ्यकर होगा। पर जहाँ दूसरा प्राणी स्वतन्त्र नहीं, जहाँ वह अपनी तमाम इच्छाओं, भावनाओं और अस्तित्व तक को अपने दूसरे साथी — "स्वामी" के अर्पण कर चुका हो वहाँ क्या किया जाय? वहाँ तो उससे कोई बात कही भी नहीं जा सकती। हाँ आज्ञा दी जा सकती है पर वह बर्बरता होगी।

[शेष पृष्ठ १८४ पर]

अशान्त

[श्री 'उमेश' चतुर्वेदी साहित्यभूषण कविरत्न]



वह अशान्त था। संसार उसको अभागा कहता। कारण? स्वार्थी क्रूर जगत उस को ठुकरा चुका था।

वह युवा था। उसके अङ्ग प्रत्यंग में यौवन की उत्ताल तरंगें हिलोरें मार रही थीं। पलकें पल पल में प्रणय पियूष लुटा रही थीं। सौंदर्य उसका दास था।

मधुर ऋतु ने अठखेलियाँ करते हुये मन्थर मादक गति से जगतोद्यान में पदार्पण किया। आम्र-मंजरी मधुपों को मनमाने सुधा के प्याले पान कराने लगी। तमाल तरुपर भ्रमर-संघ प्रस्फुटित प्रसूनों के झूलों में झूलने लगे। कलियों ने अलिवृन्द को आत्म-समर्पण कर दिया। अशान्त के अधरों पर भी मधुर मन्द मुस्कान का नृत्य होने लगा। मुँह खुला, कदाचित कुछ गाने के लिये। परन्तु फिर बन्द हो गया। न जाने क्यों? उसी क्षण हृदयार्णव से निकले हुए कुछ अमूल्य अश्रुमुक्ता दृग-कमलों की राह से आकर रज-कणों से मिल गये।

कल्पना सहचारी एवं हृत्तन्त्री की मधुर झंकारों द्वारा प्रेरित होकर वह विवश हो गया। प्रबल इच्छा भी जागृत हो उठी। मधुर लहरी वातावरण में गूँज उठी—

"जगत में जीवन दो दिन का।

यौवन मद भरि रहे सदा, क्यों गर्व करे इतना ?"

"अशान्त" सघन लता निकुंज में दिनमणि की सुनहली रश्मियों की सुन्दर कारीगरी से विभूषित हरित छाया के तले बैठा हुआ प्रकृति की रूप-राशि पर मंत्र विमुग्ध सा अपलक नैनों से निहारता हुआ तन मन नौछावर कर रहा था।

× × ×

प्रकृति ने सौंदर्य को छिपाने के लिये अपने मुख-मंडल पर काली नक़ाब डाल ली। गगन में उडुगण टिमटिमाने लगे। रजनी-देवी का प्रादुर्भाव हुआ। इधर रजनी-पति प्रकृति सुन्दरी की मुखच्छवि अवलोकन करने को लालायित हो उठे। चन्द्रिका को आज्ञा हुई। तिमिराच्छन्न नभ-मण्डल में उसी क्षण चन्द्रिका की प्रभा फैल गई।

नीलाम्बर के सरस विस्तृत प्राँगण में जगमगाते नखत समूह नीरव हो "अशान्त" की मधुर लहरी की प्रतीक्षा कर रहे थे। राकेश देव की सरस ज्योत्स्ना उत्सुक होकर पाटल प्रसून की कोमल पंखुड़ियों से अनुरोध-पूर्वक प्रश्न कर रही थी कि संगीत-सरिता कब कल्लोल करेगी? किन्तु वह बेचारी क्या बताती? वह तो स्वयं संगीत लहरी के उन्माद पर थिरकने का भावी सुख-स्वप्न देखने में तल्लीन थी। वह मदमत्त मस्ती के साथ अभिसार करने में विभोर थी। किन्तु अशान्त.........? वह शान्त था।

कल-कल करती हुई तरल तरंगिणी ने उसको अपने हृदय से लगा लिया। संसार द्वारा ठुकराये हुये "अशान्त" को उस यौवनोन्मादिनी के हृदय से लग कर प्रियतम की भाँति उसके आलिंगन-पाश में बद्ध होकर कुछ शान्ति प्राप्त हुई। उसकी संगीत लहरी उसकी प्रियतमा की कोमल ध्वनि से मिल मिलकर अधिक मनमोहक होगई। कभी कभी उस निर्जन शून्य तट पर भी वही संगीत लहरी वातावरण में गूँज उठती थी। वही प्रतिध्वनि केवल उस अशान्त की पूर्व पुण्य स्मृति को जागृत कर देती थी; क्योंकि वह भी तो "अशान्त" थी।

[१८२ पृष्ठ का शेष]

और मैं उलझा हुआ हूँ। सोच रहा हूँ— आठ बज कर दस मिनट पर मित्र की गाड़ी रवाना हुई होगी, सुबह तक "वह" पहुँच जाएँगे, इस समय उनकी गाड़ी "कलाने" स्टेशन पर पहुँची होगी, वह क्या सोचते होंगे? कितना उल्लास होगा उनके हृदय में आज और अभी...ओह कितनी पीड़ा हो रही है। मैं सोना चाहता हूँ। नींद क्यों नहीं आती? और भाभी बेचारी कुछ भी नहीं जानती!

सुबह हो गई। अब मैं तनिक स्वस्थ हूँ।



श्री सुमित्रानन्दन पंत



श्री नगेन्द्र

पंतजी की कला : 'युगान्त' के सम्बन्ध में-

[श्री नगेन्द्र एम. ए.]

युगान्त पन्तजी की अब तक की अंतिम कृति है। इससे पूर्व वे 'ज्योत्स्ना' और 'पांच कहानी' लिख चुके थे। इस संग्रह की अधिकांश रचनायें १६३४-३५ की ही हैं—यद्यपि इनमें एक-आध कृति जैसे 'सन्ध्या' सन् १६३० की भी है। युगान्त की कविताएं चिन्तन प्रधान हैं। ३४-३५ में लिखी हुई प्राय: सभी कविताओं में दार्शनिक गांभीर्य्य मिलेगा। साथ ही इन समस्त कविताओं में एक सूत्र गुम्फित मिलेगा—एक अंतर्धारा मिलेगी जो कवि के तात्कालिक विचारों और भावनाओं से सम्बन्ध रखती है। इन सभी में मानव जगत की मंगलाशा ओत प्रोत भरी हुई है। पल्लव का करुणाक्लिष्ट भाव जो गुंजन में आकर समझौते का रूप धारण कर चुका था युगान्त में आकर पूर्णतया मांगलिक कामनाओं का वाहक होगया है। इन कृतियों में कवि जगत के जीर्ण उद्यान में मधु प्रभात लाने की शुभाकांक्षा बार-बार करता हुआ देखा जाता है। उसका करुणातप्त-हृदय मानव हित से पूर्ण हो गया है। वह मानवता के विकास द्वारा जीवन की पूर्णता स्थापित करने की शुभेच्छाओं से आकुल है—

मैं झरता जीवन डाली से
साह्लाद शिशिर का शीर्ण-पात
फिर से जगती के कानन में
आ जाता नव मधु का प्रभात !

वह बार बार अपने गीत-खग से कहता है—

जगती के जन पथ कानन म
तुम गाओ विहग अनादि गान
चिर शून्य शिशिर-पीड़ित जग में
निज अमर स्वरों से भरो प्राण।

*　　*　　*

जो सोये स्वप्नों के तम में
वे जागेंगे यह सत्य बात
जो देख चुके जीवन निशीथ
वे देखेंगे जीवन प्रभात।

यही विचार धारा युगांत की प्राण-धारा है। कवि ने अधिकांश गीतों में इसी की नवीन नवीन ढंग से अभिव्यंजना की है। युगांत की कविताएँ इसी संदेश से मुखरित हैं। प्रकृति की रंगस्थली को शतदल की भाँति सस्मित देख, कवि का हृदय मानवता की दीन दशा का स्मरण करके एक साथ कह उठता है।—

है पूर्ण प्राकृतिक सत्य ! किन्तु मानव जग !
क्यों म्लान तुम्हारे कुंज, कुसुम, आतप, खग ?

इसका कारण भी स्पष्ट है—वह कहता है कि—

"जो एक असीम अखण्ड मधुर व्यापकता
खो गई तुम्हारी वह जीवन सार्थकता ।"

इसी अखण्ड और मधुर व्यापकता को फिर से मानव जग में देखने के लिये मंगलाशी कवि का हृदय व्याकुल है। देखिये वह किस प्रकार कोकिल से मनुहारें करता है।—

'गा कोकिल, बरसा पावक कण !'
नष्ट भ्रष्ट हो जीर्ण पुरातन
ध्वंस-भ्रंश जग के, जड़-बंधन
पावक-पग धर आवें नूतन
हो पल्लवित नवल मानवपन ।

युगांत में पन्त जी की रचनायें पूर्णरूप से आध्यात्मिक (Ethical) हो गई हैं। वे प्रभु से प्रार्थना करते हैं—

'जग जीवन में जो चिर महान,
सौंदर्य्य पूर्ण और सत्य प्राण
मैं उसका प्रेमी बनूं नाथ !
जिसमें मानव-हित हो समान।

परन्तु फिर भी उक्त भावनाएं केवल शुष्क दार्शनिक विचार नहीं हैं। कवि का हृदय उनमें विभोर हो रहा है। इन कविताओं में आवेश और आवेग की कमी नहीं है, उनमें उन्मुक्तता पूरी है। एक दिन प्रातःकाल कवि देखता है कि—

वे डूब गये, वे डूब गये
दुर्गम, उदय—शिर अद्रि शिखर
स्वप्नस्थ हुये स्वर्णातप में,
लो स्वर्ण स्वर्ण अब सब भू-धर !

* * *

तुरन्त ही उसके हृदय में आशा का संचार हो उठता है और वह एक साथ फूट पड़ता है।

मानव जग में गिरि कारा सी
गत युग की संस्कृतियाँ दुर्धर;
बंदी की हैं मानवता का
स्वदेश जाति की भित्ति अमर।

वे डूबेंगी, सब डूबेंगी
पा तेरा मानवता का विकास,
हँस देगा स्वर्णिम वज्र लोह
छू मानव आत्मा का प्रकाश।

पहिले पद में 'डूबगये' और दूसरे में 'डूबेंगी' की पुनरावृत्ति हृदय के उमड़े हुए आह्लाद और आवेग की कितनी स्पष्ट व्यंजना कर रही है। यही बात इससे अगली कविता 'तारों का तम, तारों का नभ' में है। हाँ, एकाध स्थान पर जब वे शुद्ध अद्वैतवाद का बखान-सा कर निकलते हैं तो कुछ शुष्कता आजाती है—उदाहरणार्थ "शत-बाहुपाद, शतनामरूप कविता में। इससे आगे की भी दो कवितायें दार्शनिक सत्य का व्याख्यान करती हैं परन्तु कवि की कल्पना ने जो प्रभूत अलंकरण-सामग्री (Imagery) उन पर व्यय की है, उसने उनके शुष्क तापसी रूप को शकुन्तला बना दिया है। देखिये विश्व-सृजन के दृश्य का चित्रण कितना सुन्दर है—

गुथ गये अजान तिमिर-प्रकाश
दे दे जग जीवन को विकास,
बहु रूप-रँग रेखाओं में
भर विरह मिलन का अश्रु-हास।

इस संग्रह में दो एक आशीः वचन जैसी कृतियाँ भी हैं जो अपने ढंग पर काफी सुन्दर हैं—

'छवि के नव-बन्धन बांधो
भाव रूप में, गीत स्वरों में,
गँध कुसुम में, स्मिति अधरों में
जीवन की तमिस्र वेणी में,
निज प्रकाश-कण बांधो !'

'मानव' कविता से पंत जी की मानव पूजा मुखरित हो उठी है।

इस आध्यात्मिक गीत-माला का सुमेरु है

'बापू के प्रति' कविता । वास्तव में कवि ने बापू में अपने आदर्शों का मूर्तिमान स्वरूप पा लिया है । बापू मानवता को मुक्त करने के लिये अवतरित हुए हैं अतः मानवत्व का पूर्ण विकास उनमें उसे मिल गया है इसी कारण इस कविता में उसका चिंतन अनुभूति से प्रेरित होने के कारण बोल उठा है और अपनी अपूर्व मूर्ति विधायिनी कल्पना की सहायता से जो इस कविता को विषयानुरूप (Worthy of the subject) कह देना इसका सबसे बड़ा गौरव है । अँगरेजी ओड (Ode) की शैली पर होने के कारण इस में सम्बोधन (address) की प्रधानता है—और हमारे मनीषी कलाकार ने उनके चयन एवँ निर्माण में अपूर्व कौशल और भावुकता का परिचय दिया है । पहिले ही पद में कई विशेषण हीरे के सदृश जड़े हुए हैं—

१— तुम शुद्ध बुद्ध आत्मा केवल—

* * *

२— तुम पूर्ण इकाई जीवन की,
जिस में आसार भव शून्य लीन ।

आगे कवि कहता है—

सुख भोग खोजने आते सब
आए तुम करने सत्य खोज !
जग के मिट्टी के पुतले जन
तुम आत्मा के मन के मनोज ।

इस कृति में कवि ने बापू के सिद्धान्तों और कृत्यों का भी काव्यमय सुन्दर वर्णन किया है—देखिये महात्मा जी की चर्खा-योजना का कितना विशाद वर्णन है—

उर के चरखे में कात सूक्ष्म
युग-युग का विषय जनित विषाद,
गुँजित कर दिया गगन जग का
भर तुमने आत्मा का निनाद ।

* * *

इसी प्रकार उसमें एक-एक पद में उनके असहयोग आन्दोलन, अहिंसा, दार्शनिक विज्ञान, आदि का बड़ा कवित्वपूर्ण चित्रण किया है । सुनिये कितने थोड़े शब्दों में कवि गाँधी-दर्शन की व्याख्या करता है—

ये राज्य, प्रजा, जन, साम्य-तन्त्र,
शासन-चालन के कृतक यान,
मानस, मानुषी विकास-शास्त्र,
हैं तुलनात्मक सापेक्ष-ज्ञान;
भौतिक विज्ञानों की प्रसूति
जीवन उपकरण-चयन-प्रधान;
मथ सूक्ष्म स्थूल जग बोले तुम
मानव मानवता का विधान ।

अन्त में आइये हम भी कवि के साथ बापू को श्रद्धापूर्वक नमस्कार कर लें ।

आप तुम मुक्त पुरुष, कहने—
मिथ्या, जड़ बंधन सत्य राम,
नानृतं जयति सत्यं मा भैः
जय ज्ञान-ज्योति तुमको प्रणाम ।

इन कविताओं के अतिरिक्त युगाँत में कुछ कृतियाँ कवि के जन्म-सिद्ध प्रकृति-प्रेम की व्याख्या करती हैं । वे हैं वसन्त, तितली, सन्ध्या, शुक्र, छाया, 'बाँसों का झुरमुट' आदि । युगाँत में कवि का प्रकृति के प्रति भी दृष्टिकोण कुछ बदल गया है । इन कृतियों में प्राकृतिक दृश्यों के ऐन्द्रिय चित्रण न मिलेंगे । कवि तो अब वाह्य प्रकृति की अन्तरात्मा को पहिचानने लगा है इसीलिये इन प्रकृति-विषयक कविताओं में आँतरिकता अधिक है । साथ ही इनके सभी दृश्य हर्षोत्फुल्ल और आह्लादपूर्ण हैं और इसी लिये उनके रँग चटकीले और गहरे हैं । वसंत चित्रों के कुछ रँग देखिये—

पल्लव पल्लव में नवल रुधिर—
पत्रों में मांसल रंग खिला

आया नीली पीली लौ से
पुष्पों के चित्रित दीप जला—

* * *

कलि के पलकों में मिलन स्वप्न,
अलि के अन्तर में प्रणय गान,
लेकर आया प्रेमी बसन्त,
आकुल जड़ चेतन स्नेह-प्राण !

—में बसंत का चित्र अत्यन्त भावमय हो गया है। आगे अल्मोड़े का बसंत तो देखिये कितना सजीव है—

लो चित्र शलभ सी पंख खोल,
उड़ने को है सस्मित घाटी,
यह है अल्मोड़े का बसंत,
खिल पड़ी निखिल पर्वत - पाटी।

दूसरी पंक्ति में अनुभूति बोल रही है। 'छाया' पर लिखी दोनों कविताएँ अनमोल है—उनमें पहिली शुद्ध, भावमय गीति का उदाहरण है—दूसरी में दार्शनिकता और चिंतन का प्राधान्य है। छाया की गहनता का वर्णन देखिये व्यञ्जना से छलक रहा है।

पट पर पट केवल तम अपार
पट पर पट खुले न मिला पार।

इसके उपरांत ही 'शुक्र' कविता पाठक की बढ़ती हुई दृष्टि से एक साथ चमक कर 'कौन' उठती है—

द्याभा के एकाकी प्रेमी,
नीरव दिगंत के शब्द मौन।
रवि के जाते स्थल पर आते,
कहते तुम तम से चमक कौन ?

अन्तिम पंक्ति में पन्त जी की सूक्ष्म ग्राहिणी दृष्टि और मूर्तिमती कल्पना एक साथ सजग हो उठी हैं। 'तितली' में तितली का-सा ही चटकीलापन और चाँचल्य है। उसके दो एक विशेषणों की सांकेतिकता पर विचार कीजिये—

१— तुमने यह सुमन-विहग ! लिबास
क्या अपने सुख से स्वयं बुना ?
२— क्या बाहर से आया रंगिणि !
उर का यह आतप वह हुलास,
या फूलों से ली अनिल-कुसुम !
तुमने मन के मधु की मिठास,

'सुमन-विहग' और 'अनिल-कुसुम' से अच्छा तितली का और क्या वर्णन हो सकेगा।

युगांत में कवि की कला और शैली में भी एक साथ परिवर्तन दृष्टिगोचर होता है। गुँजन में जो कला तितली के पँख लेकर उड़ी थी वह युगाँत में आकर माँसल हो गई है। उसके लघु-लघु गात अब पृथु और बलिष्ठ हो गये हैं। जैसा कवि ने स्वयं लिखा है युगाँत में पल्लव की कोमल कान्त कला का अभाव मिलेगा। उसकी भाषा में ज्योत्स्ना के गीतों की रुनझुन नहीं है—उसमें है एक सबल ओज। कवि को यहाँ अनावश्यक काट-छाँट (Chiselling) करने की आवश्यकता नहीं पड़ी, इसीलिये युगाँत की भाषा में वांछित महाप्राणता है। उसकी व्यञ्जनाशक्ति अत्यन्त विकसित और सशक्त है। गुंजन और ज्योत्स्ना के गीतों के उपरान्त पन्त जी की सुकुमारी भाषा में यौवन की नहीं—प्रौढ़ता की 'मांसल स्वस्थ गंध' आ गई है—उसके स्नायुओं में अब यथेष्ठ काठिन्य आगया है। ज्योत्स्ना के गद्य और युगांत के गीतों में भाषा की दृष्टि से एक विशेष साम्य है। साराँश यह है कि कवि की नारी-कला पौरुषमय हो गई है।

अन्त में युगांत में कवि ने जिस 'नवीन क्षेत्र को अपनाने की चेष्टा की है, हमें विश्वास है कि भविष्य में वे उसे अधिक परिपूर्णरूप में ग्रहण एवँ प्रदान कर सकेंगे।'



श्री रत्नकुमारी माथुर

हृदय की गूंज

[श्री रत्न कुमारी माथुर]

नहीं जानती अन्तःस्थल में, कौन आग सुलगाता।
रह-रह कर के, क्षण-क्षण भर में मीठी टीस उठाता॥
कर देता हतज्ञान मुझे जब अपनी तान सुनाता।
ज्ञात यही होता है 'कोई' इसमें अलख जगाता॥
कभी-कभी अनुभव करती हूँ, झरने की सी झर-झर।
बहता जो अज्ञात देश में, मुझको बेकल कर-कर॥
यदि कोई बतला सकता हो, तो आकर बतलावे।
जैसे भी हो करे अनुग्रह, पीड़ा दूर हटावे॥
अहो! सुनो, 'वह' कहता है—"यह विकल प्रेम का झरना।
सिखलाता निज-जन्म-भूमि पर प्राण निछावर करना॥
जोगी अलख जगाता है, वह तुम्हें यही समझाता।
काम करो! कुछ काम करो!! यह जीवन बीता जाता॥
नारी-मण्डल सुपथ-पथिक हो, निज-स्वरूप पहचाने।
उठें जगत के कोण-कोण से ऐसे सुन्दर गाने—
धन्य! धन्य! हे वनिता-मण्डल, धन्य तुम्हारा प्रेम!
धन्य तुम्हारी क्षमा-शीलता! धन्य तुम्हारा नेम!!"

रूप-गर्विता

[श्री हज़ारीलाल जैन]

उषा की लाली में उसका सौन्दर्य और भी चमक उठा। वह अपनी पास की सहेली कली से बोली, "बहिन, देखो तो मैं कैसी सुन्दर हूँ।"

सहेली कली चुप रही।

इस मौन पर तनिक खिन्नता दिखाते हुए रूप-गर्विता कली बोली, "बहिन ऐसी भी क्या।। मुँह खोलकर दो-एक शब्द कह दोगी तो तुम्हारा क्या बिगड़ जायगा। देखो न मेरी देह कैसी कोमल है, कितनी मुलायम !"

सहेली कली फिर भी चुप ही रही।

अब की बार कुछ और अधिक रोष दिखाते हुए उसने कहा, "ठीक भी है बहिन, दूसरों के रूप-रंग से सभी को ही ईर्ष्या होती है। यही दुनिया भर का ढंग है, तुम भी तो दुनिया का ही एक अंग हो। फिर भला तुम मेरे इस सौन्दर्य को कैसे सह सकती हो !"

सहेली कली ने मुँह खोला—

"अरे, मेरी भूली बहिन, इस दो दिन के अस्थाई रूप-रंग पर क्यों भूल रही है ! दो दिन बाद तो तेरा कुछ भी शेष नहीं...।"

बीच में ही वह अवहेलना करती हुई बोली, "रहने दो अपनी इन बातों को। सौन्दर्य मिला है तो क्यों न उस पर गर्व करें ! तुमको मिला ही नहीं है तो तुम गर्व क्या करोगी !" सहेली कली उसकी ना समझी पर ज़ोर से हँस पड़ी।

घृणा से पहिली कली ने मुँह फेर लिया।

*　　*　　*

गोधूलि का धुंधलापन धीरे-धीरे फैलता जा रहा था। चारों ओर निस्तब्धता थी।

बिचारी रूप-गर्वित कली वहीं झुरमुट के पास मिट्टी में पड़ी थी। एक आह खींचकर उसने अपनी सहेली कली से कहा,

"ठीक है बहिन, मिट्टी से पैदा होकर मिट्टी में मिल जाना ही प्रकृति का नियम है, सुन्दरता-असुन्दरता का उसमें मूल्य नहीं। सचमुच मैं भूली थी।"

सहेली कली के हृदय में वेदना उमड़ आई और कई-एक आँसू नीचे टपक पड़े।

राजू

[श्री सागर]

उसके पिता रोशन पुर में खेती किया करते थे। वह केवल दो ही भाई थे। उस छोटी सी झोंपड़ी में वह आराम का जीवन व्यतीत करते थे। राजू अभी बच्चा ही था—कि माँ क्षय रोग से मर गई। समय खूब बीतता था। बचपन से ही मक्खन खाने और खेलने कूदने के सिवा उसे कोई काम न था। उसके पिता अक्सर अपने मित्र धर्मसिंह का किस्सा सुनाया करते। वह कहते कि वह भी इसी ग्राम में खेती किया करते थे। भाग्य ने उन्हें सहारा दिया था। वह एक दिन एक ऐसे मनुष्य से मिले कि जिसने कहा 'मैं तुम्हें लखपती बना सकता हूँ।' बस फिर क्या था। उन्होंने शहर में जाकर कुछ शेयर खरीद लिये, झोंपड़ी से मकान और मकान से कोठियाँ बना लीं। इसी तरह एक दिन गाँव में आकर उन्होंने अपनी सारी जमीन बेच दी और उसके बाद वह फिर गाँव न लौटे।

उस समय राजू पूछता, "पिताजी, आपने शेयर क्यों न खरीदे? आप भी धनी बन जाते।"

उसके पिता हँसकर जवाब देते, "राजू, यह जूआ होता है। जरूरी नहीं कि हरएक का पासा ठीक पड़े, और, हमें धनी बन कर करना ही क्या है? हमें किसी चीज की कमी तो है नहीं, बेटा।"

उस समय राजू सोचा करता, "हाय, शहर में कितना अच्छा रहता होगा। बड़ा होकर एक बार मैं भी अवश्य ही वहाँ जाऊँगा।"

तब वह उन्नीस वर्ष का था। ग्राम में अपने पासंग का एक ही युवक था। कुश्ती वगैरा में तो बहुतों का स्वाभिमान तोड़ चुका था। सांवला रंग, बड़ा मुँह, हँसती हुई आँखें, चौड़ी छाती, कद भी छः फुट से कुछ ऊपर ही था।

एक दिन वह हल चला रहा था कि देखा, एक मोटर गाँव में धूल उड़ाती हुई चली आ रही है। वह हल वहीं का वहीं छोड़कर उस ओर भाग खड़ा हुआ। गाँव के सब बच्चे-बूढ़े भी उसी ओर भाग रहे थे।

मोटर में से एक साहब उतरा और उसने पूछा "कल्याण सिंह कहाँ है?"

"झोंपड़े में होंगे।" राजू ने आगे बढ़ते हुए कहा, "कहिये क्या काम है?"

इतने में उसके पिता आगये। पहिले तो उन्होंने एक टक उसकी ओर देखा और फिर चिल्ला उठे "धरमू!" उन्होंने उसे गले से लगा लिया और फिर झोंपड़े में ले आए।

धर्मसिंह इतने धनी बन जाने पर भी स्वभाव में तनिक भी न बदले थे। रात भर राजू के पिता और वह खूब बातें करते रहे।

बातों ही बातों में धर्मसिंह कह उठे "तुम्हें कुछ दिन के लिये मेरे साथ चलना ही होगा। बच्चों को भी शहर दिखा लाना।"

"वह तो बहुत मुश्किल है। खेती पीछे से कौन सम्हालेगा? मेरा जाना तो हो ही नहीं सकता।"

'देखो मैं तुम्हें लेने ही आया हूँ।"

"परन्तु...... ।"

"अच्छा बच्चों को तो भेज ही दो ।"

"हाँ राजू को बेशक ले जाओ । जल्दी वापिस भेज देना ।"

राजू सुनते ही उछल पड़ा । 'आह नगर देखने को मिलेगा । जीवन की आशा पूरी होगी ।' हृदय में एक उमँग सी उठी । इतने में ही उसके पिता बोल उठे, "राजू थोड़ीसी हिन्दी के सिवा तो कुछ भी नहीं पढ़ा है । उसे फैशन-वैशन तो आते नहीं ।"

"ओ ! उसकी फिक्र न करो । खुद सब कुछ वहाँ पर सीख जायेगा ।"

* * *

सारी रात राजू को नींद न आई । वह शहर के ही स्वप्न देखता रहा ।

दूसरे दिन वह लोग मोटर में चढ़कर शहर की ओर चल दिये । गाँव उसे काफ़ी प्यारा था; परन्तु शहर देखने की लालसा उससे कहीं बढ़कर थी । मित्रों ने आग्रह किया, "न जाओ " परन्तु जाना तो था ही । रास्ते में कभी सोचता, 'अरे तेरा वहाँ पर क्या दिल लगेगा ।' और दूसरे ही क्षण कह उठता, 'शहर देखने को तो मिलेगा ही । मोटरें होंगी । बड़े बड़े मकान होंगे ।' यही सोच रहा था कि धर्मसिंह बोल उठे, "राजू ! वहाँ उदास न होना ।"

"अच्छा जी" अधिक बोलने से वह घबराता था, इसीलिये कि कहीं कोई मूर्खता की बात न कह बैठे ।

"राजू, तुझे देखकर तेरी चाची और बच्चे बहुत खुश होंगे । राधा ने तो खासतौर पर कह दिया था कि राजू को जरूर लाना ।"

"हाँ ? और वह सोचने लगा "तो क्या चाची जी खुश होंगी, बच्चे खुश होंगे और राधा ?"

उसके पिताजी कहा करते थे कि राधा उससे केवल दो ही महीने छोटी है और यह भी कहते थे कि वह बहुत हँसमुख है । तो उसका दिल बहल जायेगा ।' उसने अनुमान लगाया । फिर सोचता, 'लेकिन राधा को तो मैंने कभी देखा ही नहीं । वह पढ़ी लिखी होगी । वह मुझ जैसे गँवार से क्यों बातें करने लगी ?' वह निराश होजाता और इसी, निर्णय पर पहुँचता कि उसका जी वहाँ न लगेगा ।

फिर सहसा ही कह उठता 'परन्तु राधा ने ख़ासतौर पर यह क्यों कह दिया कि राजू को लेते आना । शायद वह बहुत अच्छी थी ।' उसका मन डाँवाडोल हो रहा था । वह कुछ भी फैसला न कर सकता था । सर घूमने लगा, वह निराश होगया । उसके हृदय में आवाज उठी, "मैं गाँव से क्यों चला आया । परन्तु—"

उसी समय उसने देखा कि चहल-पहल शुरू होगई थी । इतनी रोशनियाँ ! तो क्या नगर आ गया ? हृदय से यही प्रश्न उठा । वह काँप सा गया, थिरकनी सी आई, न जाने डर से या प्रसन्नता से ।

अभी चाचीजी मिलेंगी, राधा मिलेगी और .. फिर क्या होगा ?" वह सोच ही रहा था कि मोटर एक फाटक में से होकर एक बहुत बड़े मकान के बाहर जाकर रुक गई । नौकर आया और उसने मोटर की खिड़की खोली । उसने सामने देखा कि चाची जी खड़ी थीं । वह उतरा और उसने उन के पैरों की धूल ली । चाची जी ने हृदय से आशीर्वाद दिया और कहा—"राधा राजू को अन्दर ले चलो ।'

राधा ने कहा, "आओ" और राजू लड़खड़ाता हुआ पीछे पीछे चल दिया । "ओह, कितना ठाट बाट है ।" वह सोच रहा था । कई कमरों को लाँघ कर राधा एक कमरे में ठहर गई और बोली, "यह है आपका कमरा ।"

"इतना बड़ा कमरा ! मुझे तो कोई छोटी सी कोठरी... ।"

"कैसी बातें कर रहे हो ? कपड़े बदल लो । खाना तैयार है फिर खाना खायेंगे ।" यह कहकर वह चली गई ।

कुछ समय बाद वह फिर आई और बोली,

"राजू तुम यहाँ बैठे हो और मेज पर सब तुम्हारा इन्तजार कर रहे हैं, चलो नाँ।"

वह उठा और साथ चल दिया।

उसने थाली को देखा। कैसा खाना था। तरह तरह की तरकारियाँ न जाने क्या क्या। मेज पर खाना तो राजू ने कभी खाते देखा भी न था। वह बहुत घबराया।

कुछ दिन बाद।

अब राजू बहुत कुछ सीख गया था। वह भी अपने को घर का एक प्राणी समझने लग गया था। वह चाची जी को माता कहता था। वह कई दफ़ा कहती, "राजू तू मेरा ही पुत्र बन जा।" और पिताजी (धर्मसिंह को वह पुकारता था) कहते, "राजू को हम अब कभी न जाने देंगे।" वह हँस दिया करता और राधा? वह बहुत अच्छी थी। वही तो उसकी संगिनी थी। उसी का तो वह चित्र खींचता हुआ नगर आया था।

उस समय राजू कमरे में बैठा हुआ था कि राधा भागती हुई आई और बोली, "वाह, तुम अभी तक तय्यार नहीं हुए।"

"तय्यार? कहाँ जाना है?"

"जैसे कुछ मालूम ही नहीं मोहन बाबू को लेने नहीं जाना है क्या?"

"मोहन बाबू? कहाँ पर?"

"स्टेशन पर। चलिये समय थोड़ा है।"

"परन्तु यह मोहन बाबू हैं कौन?"

"अरे, कहते हैं, बहुत अच्छे आदमी हैं। धनी, खूब धनी और फिर इस साल एम. ए. की परीक्षा में बैठ रहे हैं। कहते हैं संगीत में भी निपुण हैं।"

"तब तो इन साहब के साथ में कुछ समय अच्छा बीतेगा।"

"हाँ तो फिर स्टेशन पर चलोगे न?"

"क्यों नहीं, क्यों नहीं, उन्हें तो कार के पीछे बाँध कर लाना होगा। चलेंगे हम भी।"

और वह चल दिये हँसते हुये।

* * *

मोहन बाबू आये। राजू ने स्वभाव में उन जैसा कोई न देखा था। संगीत के सम्बन्ध में उनके लिये जितना उसने सुना था उससे अधिक ही थे। परन्तु राजू को उनकी एक चीज़ न भाती थी—वह सदा राधा की ख़ुशामद किया करते थे। उनके पास कोई भेद था जिसे राजू न समझ सकता था। वह कहा करते, "राधा, तू मेरी हो जा।"

कुछ दिन के बाद वह लौट गये। राजू ने चाची और पिता जी को मोहन बाबू की बहुत तारीफ़ करते देखा वह कहा करते, "कितना अच्छा लड़का है" राजू इसका मतलब भी यह निकालता कि मोहन बाबू अच्छे हैं, पर इस बात को चुपके-चुपके कहने की बार-बार क्या जरूरत है।

कुछ दिन बाद राजू को डर लगने लगा था, वह काँप उठा करता और ईश्वर से प्रार्थना करता, 'हे भगवान् मेरा भय ग़लत निकले।'

एक दिन पिता जी ने कहा, "राजू तुम्हें एक ख़बर सुनानी है।"

"ख़बर कैसी, पिता जी?"

"हमने राधा का ब्याह मोहन बाबू से पक्का कर दिया है।"

"हाँ, बहुत अच्छा किया।" और तो राजू कुछ कह ही नहीं सकता था। वह चुपके से अपने कमरे में चला गया। राजू न जानता था कि उसे प्रसन्न होना चाहिये अथवा रोना चाहिये। वह पागल सा बना जा रहा था। 'राधा चली जायगी दूसरे की हो जायगी। परन्तु मेरा जीवन? उसका क्या होगा? देवी मन्दिर छोड़कर चली जायेगी और पुजारी उसका क्या होगा?' राजू सोच रहा था, "मैं कितना मूर्ख हूँ। मैं गंवार, अनपढ़, निर्धन और राधा क्या कभी मेरी हो सकती थी। मेरा गाँव, हाय मैं उसे

छोड़कर क्यों चला आया। मेरे पिता जी मेरा प्यारा भय्या, जो सचमुच मेरे थे, मैं उन्हें क्यों भूल गया ? केवल स्वार्थ के लिये ही । वह गांव में परिश्रम कर के, पसीना बहाकर मेरे लिये इतना करते थे, मुझ पर आशाएं बाँधे बैठे थे और मैं इधर उन्हें भूल गया । और मेरी वह झौंपड़ी ? मैं उसमें ही कितना सुखी था। दूसरों के झूठे सुख पर उसको छोड़ आया । वह मेरे खेत पर दिन भर की मेहनत के बाद सूखी बाजरे की रोटी और यह आराम का जीवन । उस समय राजू ऐसा अनुभव कर रहा था कि वह कैद था। वह वहाँ अपने घर का राजा था , अब दूसरे पर आश्रित था। फिर उसने सोचा, "जो मेरी कभी नहीं हो सकती , उसे मैं भी भुला दूंगा । उसकी स्मृति को कुचल डालूंगा । उसके लिये चाहे मुझे अपने आप को भ कुचलना पड़े ।"

राजू की यही सोचते सोचते रात बीती जा रही थी। वह उठ खड़ा हुआ और बाहर घूमने को निकल गया । विचारों में मग्न घूमते घूमते जाने कितना समय बीत गया । और जब वह थक गया तो वापिस आया और अपनी चारपाई पर लेट गया। आज की सी अशांति उसके हृदय में कभी भी न हुई थी। कुछ उजियाला हुआ तो वह पास के कमरे में गया। राधा अभी बड़ी चैन की नींद सो रही थी। राजू निराश लौट आया।थोड़ी देर बाद राधा आई, "चलिये दूध पी लीजिये।" और उसने आँखें नीची कर लीं। राजू की आंखों में आंसू भर आये ।

"तुम रो रहे हो, क्यों ?"

"राधा मैं आज जाऊंगा।"

"नहीं, अभी नहीं, तुम्हें कुछ दिन और रहना पड़ेगा।"

"क्यों ?"

"मेरे लिये। राजू, तुम्हारे आगे मेरी यह अंतिम प्रार्थना है। मानोगे ?"

"क्या हां।" उसका मस्तक झुक गया। "मैं पागल हो जाऊंगा राधा, निश्चय ही ।"

"राजू ।"

"राधा, अब मैं यहां नहीं ठहर सकता। मुझे आज ही गांव को लौट जाना होगा। वे दिन एक मीठा सपना बन गये हैं पर मैं उन्हें भूलने की कोशिश करूंगा।"

* * *

राजू ने सोचा कि वह पागल हो गया है । "क्यों सचमुच ?" और वह आइने के पास गया। "कुछ साफ़ नहीं दीखता ।" देखते-देखते उसने कहा, "जरूर मुझे कुछ हो गया ।" वह भागा और राधा के कमरे में पहुंचा। वह न जाने क्या कर रही थी।

राजू ने उससे पूछा, "राधा, देखना मुझे कुछ हो गया था ।"

"क्या हुआ है , राजू ?"

"वह तेरा मोहन बाबू मुझे एक पल को भी चैन से नहीं बैठने देता। अभी पानी पीने लगा तो उसने आकर कहा, कहो बाजी किसकी रही।"

तुम पागल तो नहीं हो गये हो, राजू ?"

"ठीक, तो मैं निश्चय पागल होगया हूं ।"

राजू बाहर को भागा, रास्ते में चाची जी मिलीं, उसने उन्हें कंधे से पकड़ लिया और कहा, "चाची जी देखना मैं पागल होगया हूं ।"

"तू कैसी बातें कर रहा है ?"

"कैसी बातें ? तब तो मैं अवश्य पागल होगया हूं।"

"तुझे क्या होगया है राजू ?"

"मैं पागल होगया हूँ।" कह कर राजू कोठी के बाहर को भागा।

"दरबान, तुम मेरी ओर घूर-घूर कर क्या देख रहे हो ? कहना चाहते हो कि मैं पागल हूँ ?"

राजू भागा जा रहा था। संसार घूम रहा था अथवा उसका सिर, उसे मालूम न था ।

* * *

राजू ने देखा एक आदमी झूमता हुआ चला जा रहा था। संसार की अब राजू को परवाह न थी। वह ठोकर खाकर भी हँस देता। क्या वह देवता था? राजू भागा और उस आदमी के हाथ पकड़ लिये।

"क्या चाहते हो भाई?" उसने मजे में कहा।

"क्यों क्या मैं पागल हूं?" राजू ने विनीत-भाव से पूछा।"

"कौन कहता है तुम पागल हो?"

"राधा, चाची जी, सब कहते हैं मैं पागल हूं। देखो न, क्या मैं सचमुच पागल हूं?"

"ओ, तुम पागल नहीं, संसार ही पागल हो गया है। आओ मेरे साथ आओ।"

राजू उसके साथ चुपचाप चल पड़ा जैसे मां के साथ बालक।

"तो मैं पागल नहीं हूं।" राजू ने रुक कर कहा।"

"अभी मालूम हो जायगा। मेरे साथ चलो।"

वह राजू को ले चला, वहाँ—जहाँ पागल दुनिया को पागल पाता है, जहाँ संसार भर के दुखों को मनुष्य कुछ समय के लिये भुला देता है, जहाँ साक़ी था और पीने वाले।

राजू ने भागकर एक प्याला ले लिया और एक ही घूँट में उसे खतम कर दिया और पीते-पीते ही अपना सब कुछ भूल गया। कितना सरल उपाय था सब कुछ भुलाने का।

राजू खूब पीता। वहाँ के पीने वाले ही उसके जीवन सँगी थे। वह इतनी पीता कि होश न रहता, इतनी पीता कि वह बहक जाता। लोग उससे घृणा करते थे; परन्तु इससे उसे क्या। वह अपना दुख भूले रहना चाहता था। शराब ही उसकी आशा, आश्रय और धन व सुख थी।

उसका आज का दिन कल के दिन की तरह बीतता और अगले दिन में परिवर्तन की कोई आशा न दीखती थी। दिन रातों में बदल जाते और राजू पीता ही जाता।

× × ×

उस दिन राजू सो ही रहा था कि राधा आई और उसने उसे उठाया। वह उठा। उस समय वह होश में था। राधा घबराई हुई थी। उसने कहा, "पिताजी बुला रहे हैं।"

"पिता जी?"

"हाँ, जल्दी चलो।"

राजू उठकर गया। पिताजी ने कहा—"राजेन्द्र! तार आया है।"

"कैसा?" उसने घबराहट से पूछा।

"राजू, यह राज, यह इतनी बड़ी कोठी, यह सुन्दर सुन्दर वस्तुयें, सब बिक जायेंगी। आज से मैं दर-दर का भिखारी हूँ।"

"लेकिन आखिर क्या हुआ चाचा जी।"

"शेयर मार्केट में मुझे कई लाख का घाटा आया है।"

"पिताजी घबराने की कोई बात नहीं, जिसने दिया था, उसे वापिस ले लेने का भी पूरा अधिकार है। यह दो दिन की तड़क-भड़क थी, चार दिन की चांदनी थी। वह समाप्त होगई। इन कहानियों को भूलकर चलिये चलें।"

"परन्तु अब कहाँ जायेंगे?"

"वापिस गाँव को। जहाँ से आये थे, वहीं।"

और हम सब वहाँ से लौट आये। धर्मसिंह ने फिर से खेती बारी शुरू करदी। अब वह शेयर मार्केट को याद करके हँस दिया करते थे।

राधा अब मेरी थी। किसान की कन्या किसान की ही होगी, यह निश्चित हो चुका था।

मूल

[श्री शम्भोदेवी चतुर्वेदी 'हिन्दी रत्न']

अपने धन दौलत आदिक पर,
अधिक फूल हम भ्रांत हुए।
भूल रहे हैं काल अँक में,
हमसे कितने शान्त हुए।
नहीं ध्यान में लाते हैं यह,
जग में जीवन दो दिन का।
अन्त वही होगा सब का ही,
हमको पता नहीं जिसका।
धन चंचल है, जीवन चंचल,
चंचल है सारा संसार।
चंचलता में फँसा हुआ है,
मानव जीवन का सब सार।
चंचल आशा और निराशा,
चंचल जीवन का सुबसंत।
चंचल दुःख-सुख चंचल सबकुछ,
सबका चंचलता में अन्त।
धन सुखड़ा कुछ काम न आवे,
जिस पर तुम फूले भाई।
भूलो, वह घमन्ड, मद, तुम सब,
अन्त समझ कर दुखदाई!

नाटिका ——

मृत्यु की भेंट

[श्री कृष्णचन्द्र मुद्गल 'दुखित']

(अंधकार नष्ट होता जा रहा है। प्रकाश की किरणें अपना अस्तित्व जमा रही हैं। ऊपर नील नभ-मण्डल है, नीचे उसी रंग की जल राशि। यहाँ वहाँ बीच-बीच में बड़े-बड़े कमल पत्रों का कालीन बिछा है, और इधर उधर कमल पुष्प अधखिले रूप में शोभित हैं। कमल पत्रों पर मोती के समान अस्थिर कई ओस बिन्दु नृत्य कर रहे हैं। ऐसा मालूम होता है मानों कमल-दल के मध्य से अद्भुत संगीत की तानें उठ रही हैं। सब अपने अपने रंग में मस्त हैं। ओस बिन्दु आपस में बातें करते से प्रतीत होते हैं।)

ओस बिन्दु १—

जीवन नृत्य नहीं तो फिर क्या है ? युग-युग बीत गये, कभी हमने इन कमल पत्रों पर विश्राम भी किया है ? ऐसा नीला भव्य व्योम और इतना सरस जल ! आत्म संगीत की प्रिय तान में दो क्षण जीवन की अस्थिरता भूल सी जाती है। मुझे तो सदा ऐसे ही बने रहने की इच्छा होती है।

ओस बिन्दु २— (गम्भीरता से)

ओह ! यदि कोई दिव्य संगीत सदा नृत्य में निरत रखे तो मैं इसे कभी न छोड़ूँ, लेकिन दुख केवल यही है और यही निराशा है; न जाने कब और क्यों हमारी आत्मा लुट न जाय ! (निराशा से) उफ ! कौन जाने कब क्या होगा ? यह तो सब उस पार के प्रश्न हैं; जहाँ केवल अंधकार ही अंधकार है और कल्पना पंगु हो जाती है।

ओस बिन्दु ३— (जल बाला से)

तुम न होती तो मैं क्या जीवित रह सकता था ? अब तो मैं मौत से भी नहीं डरूंगा, जलबाला ! हृदतंत्री के तार पर राग रागिनियाँ गाकर मस्ती में झूलने वाले को कहीं मौत भी सता सकती है ? (हंसते हुये) अब तो मुझे तुम्हारे ही संकेत पर जीना और मरना है ।

ओस बिन्दु ४—(कुछ गंभीर होकर)

हृदय को रोकता हूँ तो भी नहीं रुकता। वह देखो पानी की लहरें मेरे हृदय को नचा रही हैं। जो किसी को अच्छा लगता है वही दूसरे को बुरा भी ! लेकिन इससे क्या,(रुक कर) जिसे हम प्यार करते हैं वह मृत्यु के मुख में तो जावेगा ही, फिर भला ऐसे लगने से भी क्या ?

ओस बिन्दु ५—

भाई, मौत भी आजाय तो भी ठीक ! आखिर जीवन भी कब तक एकसा नाचता रहे। कुछ विश्रान्ति भी तो चाहिये !

(चारों ओर शान्ति हो जाती है; लेकिन नृत्य चालू ही रहता है। पानी एवं हवा की एक लहर फैल जाती है। कमल-पत्र हिलने लगते हैं, और बिन्दुओं का नृत्य कुछ शिथिल सा हो जाता है।)

ओस बिन्दु ५— (चौंक कर)

ओहो, मृत्यु ! आ गई ? इतनी जल्दी !

ओस बिन्दु १— (हर्ष से)

आज आवेगी यह तो मुझे याद ही नहीं रही। मैंने क्या-क्या सोच रखा था—(याद करते हुये) वर्षों पहिले इसी ने मुझे इन पत्रों पर नृत्य करने को भेजा था, उस समय मैंने सोचा था किसी दिन मिलने पर इससे कहूंगा—देव, मुझे एक सबल देह और अनुपम आत्मा की भेंट देना। (निराशा से) लेकिन मैं तो सब कुछ भूल गया। सिर्फ नाचता ही रहा जीवन भर !

ओस बिन्दु २—(दुःख से)

हे ईश्वर ! अब क्या होगा ? क्या बे-मौत मर जाना होगा !

ओस बिन्दु ३—(भय से)

जल-बाले ! देखो मौत सर पर नाँच रही है। अभी तो मैं जीवन की उषा-संध्या भली भाँति देख भी नहीं पाया हूं ! तो क्या चला जाना होगा ? (रोने का सा होकर) तुम न बचालोगी जल-बाला, मुझे मौत के मुंह से !

ओस बिन्दु ४—

हृदय को कितना ही पत्थर क्यों न बना लो पर वह मौत के सामने पसीज ही जायगा। आशा की अनेकों दीवारें क्यों न चुन डालो, वे भी चकनाचूर हो जाँयगी; भावनाओं के अभेद्य दुर्ग में क्यों न छिप जाओ पर वह भी सत्य की चिनगारिओं से जलकर खाक हो ही जायगा। जीवन को सात-सात किलों में क्यों न बन्द कर दो लेकिन वह भी मौत के सामने टूट-फूट जाँयगे। (दृढ़ता से) सब झूठ है। बस केवल मृत्यु ही सच है। विश्व से क्यों प्रेम किया जाय, मृत्यु के समान सत्य को छोड़कर ?

ओस बिन्दु ४—

नाचो, नाचो; मौत का नृत्य से स्वागत करो, काल के क्रूर हास्य को मुँह और भृकुटियों की मुस्कराहट से वशीभूत कर लो। यह तो आत्मा और मृत्यु, अनन्तऔर अन्त का मिलन है !

(सब नाचने लगते हैं और अपने अंग-प्रत्यंगों से कला की झांकी दिखाने का जी तोड़ परिश्रम करते हैं। सहसा हवा में तैरती हुई एक नौका दिखाई देती है मानों स्वेत मानस हंस हो। काली देह का एक मजबूत पुरुष अन्दर बैठा है। उसकी आंखें नृत्य करने वालों की ओर एक टकी लगाये देख रही हैं। नौका कमलदल के निकट आकर रुक जाती है ।)

ओस बिन्दु ४— (काँपते हुए)

ओह ! यह तो मृत्यु है !

ओस बिन्दु १—

आओ ! देवा-धि-देव आओ !! मैं तो थक गया अब नाचते नाचते...।

ओस बिन्दु २— (विषाद से)

आशा, ऊर्मि, कल्पना सब झूठ है ! केवल यही सत्य है; परन्तु कितनी भयंकर, ओह !

ओस बिन्दु ३— (त्रसित होकर)

जल-बाला !...प्रियत...मैं !!—

ओस बिन्दु ४—

जितने प्रेम से मैंने जगत को प्यार किया यदि उतने ही प्रेम से तुम्हें प्यार करता तो ? (मृत्यु के होंठ फड़फड़ाने लगते हैं। सब शांत हो जाते हैं, नृत्य बंद हो जाता है। मृत्यु-देव नौका में खड़े हो जाते हैं। कामदेव की देह प्रभा उनके अंग-प्रत्यंग में चमकने लगती है। सौंदर्य और शक्ति का मिश्रित तेज प्रकाश हो जाता है। फिर भी आँखों में विषाद की बदलियाँ छायी रहती हैं।

मृत्यु— (गंभीरता से)

क्या तुम सब तैयार हो ?

(वातावरण में हलचल मच जाती है)

ओस बिन्दु १—

आइये देव !

ओस बिन्दु २—

आइये स्वागत है !!

ओस बिन्दु ३— (काँपते हुये)

न मृत्यु देव न आवो (घबरा कर) जल देवि, ओ जल देवि! तुम कहाँ हो ? मुझे कहीं छिपालो—?

ओस बिन्दु ४— (प्रेम से)

जीवन के अंतिम और अलौकिक सत्य आओ, विनाश की भस्म से हमें बचालो, देव!

ओस बिन्दु ५— (गंभीर शांति से)

जीवन में अभी एक और साध है, देव! तुमने भी वचन दिया था (चारों ओर गंभीरता फैल जाती है) मुझे सबल और समर्थ आत्मा दो, देव!! क्या भूल गये इसे! (मृत्यु की आँखों में निराशा की वेदना छा जाती है)

मृत्यु— (वेदना से)

ओह, तुम भूल में हो ओस बिंदु! नाचते हो, गाते हो, झूलते हो, घूमते हो, सब कुछ करते हो, फिर भी मुझे ही दोष देते हो?

ओस बिन्दु ५—

तुम्हारा दोष नहीं तो और किसका है, देव?

ओस बिन्दु ४—

नहीं तुम्हारा दोष नहीं है। मदन के इस भव्य रूप को कौन असत्य कह कर दोषी ठहरा सकता है!

ओस बिंदु १—

मैं तो नाचते-नाचते थक गया देव? अब मुझे इस फन्दे से छुड़ाओ।

ओस बिंदु २— (कुछ सोचते हुये)

अगम्य में मिलने पर ही मैं शायद इसका रहस्य बतला सकूँ।

ओस बिंदु ३— (रोते हुये)

जीवन में जहाँ प्रेम का संचार हुआ नहीं कि तुम आगये। ज्वलबाला! जगत जितना भव्य है उतना ही भयंकर भी, जितना दिव्य है उतना करुण भी! जो आज हँसता है वही कल रोता भी है!

ओस बिन्दु ४—

जीवन का अंतिम सत्य मृत्यु ही है और फिर सत्य तो सदासुन्दर और कल्याणमय है। तब फिर मौत से क्यों डरा जाय! (चारों ओर मृत्यु देखने लगते हैं। उनकी आँखों में निराशा छा जाती है)

ओस बिंदु १—

देव! आपके मुंह पर निराशा क्यों ?

ओस बिंदु २—

आँखों में विषाद क्यों है ?

ओस बिंदु ३—

शायद हमारे दुःख से दुःखी होंगे।

ओस बिंदु ४— (मुग्ध होकर)

सौंदर्य की निराशा भी कितनी भव्य और मन-मोहक होती है, देव!

ओस बिंदु ५—

मालूम होता है मृत्यु कला को अपने वश में कर लिया है।

(मृत्यु मस्तक ऊंचा करते हैं, नेत्रों में निराशा और कर्तव्य की झलक दिखाई देती है, वह धीरे धीरे कुछ कहने लगते हैं)

मृत्यु—

इसमें मेरा कोई दोष नहीं! मैंने सदा तुम्हें उत्साहित किया है। जगत और जीवन की सेवायें की हैं। लेकिन कोई नहीं जानता। लोग जगत को एकटकी लगाये देखते जाँय, इसीलिये मैंने सदैव उस में रमणीयता रक्खी है। दिन के बाद रात और उषा के बाद संध्या के क्षणजीवी बनाया है।

ओस बिन्दु ४—(प्रेम से)

क्षणजीवी ही तो चिरजीवी है, देव!

मृत्यु—

प्रेम को मेरी छाया में रखकर सदा स्वच्छ और पवित्र रक्खा है। पाप की ज्वाला जब जीवन को झुलसने लगती है तब मैं उसे बचाता हूं।

ओस बिन्दु १—(हर्ष से)

ओह! दिव्य शरण —।

मृत्यु—

तो भी मैं मृत्यु हूँ ! विनाश-प्रलय, रुद्र, मुझे देख कर तुम काँप उठते हो; माया के पाश से मुक्त करता हूँ तो गालियाँ देते हो, कोसते हो !

ओस बिन्दु ३—

तो क्या तुम्हारी पूजा करें ? स्वर्ग का सिंहासन भी मेरी जलबाला के सामने कुछ नहीं है।

मृत्यु—

तुम लोग कहते हो—देव, प्राण दो तो अपूर्व दो, आत्मा दो तो तेजस्वी दो, देह दो तो देव के समान दो ! परन्तु तुमने मुझे क्या दिया ?

ओस बिन्दु १—

नृत्य में सब कुछ भूल गये, देव !

मृत्यु—

और यदि आत्मापूर्ण कला से न खिले तो कला विश्व में कहाँ से ठहर सकती है। सरिता का प्रवाह सागर में जाता है; अतः प्रवल तो होना ही चाहिये। (निराशा से)

मैं चाहता था कि तुम में से कोई अद्भुत व्यक्ति ले जाऊँ, लेकिन निराश होकर लौट जाता हूँ। क्या तुम्हें मेरी इस वेदना का दुःख नहीं है ? झूठ-मूठ नृत्य करोगे तो थकोगे ही। मुझे संताप क्यों दिलाते हो, क्यों गालियाँ देते हो युग-युग से?

ओस बिन्दु ४—

देव क्षमा करो हमें ?

ओस बिन्दु १—

यमदेव ! हम तो अब थक गये हैं।

मृत्यु—

निष्फल और असत्य नृत्य थकावट तो देगा ही। विश्वदेव के भव्य-सँगीत के साथ तुम्हारे पैर कैसे टिक सकते हैं।

ओस बिन्दु ४—

देव ! ऐसा मालूम होता है मानों नई सृष्टि का सृजन ही होगा।

ओस बिन्दु ३—

जलबाले ! प्रियतमे—प्र-णा-म !

ओस बिन्दु ५—

जाना ही होगा ! मृत्यु चाहे कितनी भी सत्य हो, लेकिन फिर भी उसका क्या विश्वास !

(मृत्यु एक रूखी हँसी को लेकर अन्धकार में लीन होजाता है)

ओस बिन्दु १— (हर्ष से)

अब कुछ न भूलूँगा। सोच समझ कर नाचूँगा।

ओस बिन्दु २—

अब तो कर्तव्य के पथ से विलग न होना चाहिये।

ओस बिन्दु ३—

सौन्दर्य के जाल में अब न फँसूंगा। अब तो विश्व सौन्दर्य को ही प्रेम करूँगा।

ओस बिन्दु ४—

अपने कार्यों से अब मृत्यु को खुश करूंगा।

ओस बिन्दु ५—

ओह बच गये, नहीं तो बेमौत मरना होता। देखो कितनी सुकोमल है, यह कमल-बेल !

(कमल दल के बीच से फिर वही संगीत सुनाई देता है। फिर सब नाँचने लगते हैं)

ओस बिन्दु १—

ओफ ! मृत्यु कितना सत्य, कितना गहन !!!

(संगीत बढ़ता जाता है। कल्पना की देह पर सत्य की चादर बिछ जाती है, और अन्धकार में मृत्यु देव की नौका कमल-दल तथा ओस बिन्दु सब धुंधले होजाते हैं)

फूल

[श्री प्रभात कुमार एडवोकेट]

मलयानिल के सखा सुमन हे ! सुन्दरता के सुत सुकुमार ।
स्नेही सहचर प्रिय प्रभात के इष्टदेव के प्रिय उपहार ।
विश्व नन्दिनी सुन्दरता के तुम हो एक चित्र उज्ज्वल
प्रेमी-भक्त मधुप कुल के हो अति पुनीत तुम तीर्थस्थल ।

ललित लता के तुम सुहाग हो रत्न किरीट विटप वर के
तुम ऋतुराज-राज्य के गौरव हो दिव्यास्त्र पंचशर के ।
सौरभ के तुम प्रिय स्वदेश हो कोकिल की मदिरा के पात्र
कान्त कलेवर बतलाओ क्यों कण्टक वलित तुम्हारा गात ?

कोमलता, सुन्दरता, सुचिता के हो मूर्तिमान उपमेय
इसीलिये क्या तुम्हें यक्ष ने दिया मेघ को था पाथेय ?
चारु चाव से रमणी वेणी का करती तुमसे विन्यास
हँस उठती हैं दशों दिशायें देख तुम्हारा दिव्य विकास ।

छवि मन हो मुस्कान प्रकृति की उपवन के सुन्दर शृंगार
शांत तपोवन के वैभव हो सुषमा के अनुपम भंडार ।
लज्जा ललित कुमारी कमल पुष्पों की माला लेकर
हृदय, प्रेम, जीवन सब अर्पित करती निर्वाचित वर पर ।

मधुर मिलन के तुम साक्षी हो, कभी विरह के बनो निशान
बालक के तुम सरल खेल हो, रम्य रूप के हो अभिमान ।
इन्दुमती के कठिन काल हो हो अभीष्ट प्रेमी जन के
वन वासिनी सती सीता के, हो उपाय मनरंजन के ।

जब बसन्त में कुसुमित होते लता वृक्ष मण्डप सारे
भ्रम होता है क्या वसुधा पर उतरे हैं उत्सुक तारे ।
नष्ट होगये जग में कितने ही वैभवशाली साम्राज्य
हे प्रभु ! नष्ट न होने पावे फूलों का यह सुन्दर राज्य ।

भूत का धन

[श्री रामचन्द्र तिवारी]

रामनरायन सेठ थे। उनकी दूकानें थीं। वे पहिले देहाती थे। गाँव में रहते और जैसे तैसे गुजारा करते। उन्हें नगर में आये ४० वर्ष हो गये।

वे परिश्रमी थे। सुबह उठकर रात के दो बजे तक बही पर दृष्टि रखते। उनके नौकर थे मकान था। संक्षेपतः संसार के सफल मनुष्य को जो कुछ चाहिये वह सब उनके पास था।

उन्होंने मकान खरीदा वह बड़े धूम-धड़ाके के साथ पवित्र किया गया। ग्रहशान्ति के पश्चात् शुभ मुहूर्त में सेठ जी किराए के मकान से अपने घर में आये। वह परदेसी से दिल्ली वाले हो गये।

मकान भाग्यवान निकला। उसमें आने से सेठ जी के कारोबार को कोई धक्का न पहुँचा। उनकी उत्तरोत्तर उन्नति होती चली गई। वे सहस्त्र-पति थे अब लक्ष पति हुये।

सोमवार का दिन था। सेठ जी ने ऊपर से आकर बैठक का द्वार खोला। सब सोते पड़े थे। उन्होंने दिया जलाया। कपड़े उतारे।

"हैं! यह क्या ?" उन्होंने बहुत धीरे से आश्चर्य से कहा और एक कोने की ओर बढ़े। चूहों के बिल के पास कोई गोल गोल चमकती हुई वस्तु पड़ी हुई थी। उन्होंने उसे उठा लिया। वह पीली थी। सेठ जी सोना पहिचानते थे। वह पीतल न थी। वह अशर्फी थी। सेठ जी की आँखें आनन्द से चमक उठीं।

"हैं! इस घर में दौलत भरी पड़ी है। मैंने इसे बड़ी अच्छी साइत में खरीदा था। हमारे पण्डित जी भी कहते थे कि बड़ा भाग्यवान घर है। चूहों ने एक मुहर लाकर डाली है। या तो वे घड़े में होंगी, या कलसे का ढकना खुल गया होगा। हैं तो पास ही, थोड़ी सी मेहनत से निकल आयेंगी। वह बैठ गये और चूहे के बिल को बड़े ध्यान से देखने लगे। मिट्टी को हाथ से सरका कर एक ओर को कर दिया और बिल में दो उँगली डाल इधर उधर टटोलने लगे। फिर एक दम झटके से उँगलियाँ बाहर खींच लीं। "गड़े धनों की रक्षा सर्प करते हैं। कहीं यहाँ भी कोई विषधर न हो। अगर कहीं मुझे काट खाता ?" उनका शरीर पसीने से नहा उठा। वह बिल से हट अपने पलंग पर आ बैठे। और मुहर को जेब में डाल लिया। फिर बाहर निकाला और गौर से देखने लगे।

"बादशाही मुहर है। भारी है। ये कितनी होंगी। पांच सौ से तो कम क्या होंगी ? और सिर्फ पांच सौ! यह मकान तो बहुत बड़ा है इसके मालिक के पास क्या बस इतनी ही मुहरें रही होंगी ? नहीं ऐसा नहीं हो सकता। ज़रूर इसमें जगह जगह इसी प्रकार धनराशि दबी पड़ी होंगी। मैं इसे भूमि से निकाल लूँ। पूरा मकान खाली कर के कोने कोने की तलाशी लूँगा। परन्तु इतने किराएदारों के निकलने पर ३५रु० मासिक की हानि है। कोई परवाह नहीं।

यदि चार मुहरें भी मिल गईं तो सब हानि पूरी हो जायगी। नहीं नहीं यह तरकीब ठीक नहीं। किराएदार सदा तो इसमें बैठे ही न रहेंगे। ज्यों ही कोई मकान छोड़ेगा। मैं उसी में अपनी बैठक बना लूँगा। और कोना-कोना ढूंढ कर दफ़ीने को खोज निकालूँगा।" उन्होंने मुहर को उलटा और ध्यान से देखा। "क्या ही अच्छी चीज़ है। अब पता मिलगया है तो मैं छोड़ने वाला नहीं। चाहे कितना भी गहरा क्यों न हो, निकाल कर ही मानूँगा।" उन्हें जोश आगया। वे पलंग पर उठे और कमरे में टहलने लगे। छिपे चोर को बाहर निकालने के लिये तरकीबें सोचने लगे। "क्या मैं अकेले पक्के फर्श को खोद सकूँगा ? नहीं ! नहीं ! किसी दूसरे की सहायता लेना मूर्खता होगी। यह मुझे अकेले ही करना होगा।" वे बिल के पास पहुँचे और आस पास के फ़र्श की ओर देखने लगे। "बस इस पत्थर के जोड़ में गेंती का सहारा देकर ज़रा उभार देने से यह पटिया अलग हो जायगी, फिर खुरपे से या गहदाले से धीरे धीरे मिट्टी निकालूँगा। यदि किसी ने गहदाले की आवाज़ सुनली ?" वह तनिक सिहर उठे और संभल गये। "नहीं ऐसा न होगा। यह सब बड़ी सावधानी से करूँगा। किसी को कानों-कान ख़बर न होगी। यकायक खोदते समय खुरपा किसी वस्तु से टकरा जायगा।" उनका दिल तेज़ी से धड़कने लगा। "इसी आवाज़ से पता लग जायगा कि मुहरें देग में हैं अथवा घड़े में।

वे अचानक चौंक पड़े, घूम कर देखा तो सेठानी खाना लिये खड़ी थीं और न जाने कब से उनकी चेष्टायें देख रही थीं। सेठ जी को पसीना आगया। ग़ुस्सा भी आया। उन्होंने क्रोध को दबाया और सेठानी जी से पूछा "तुम यहाँ कब से खड़ी हो?" उनकी दृष्टि पत्नी के मुख में कुछ खोज रही थी।

"अभी तो आई हूँ सेठानी जी ने उत्तर दिया।" "आज तुम्हें क्या होगया है ?" वह उत्सुकता से उत्तर की प्रतीक्षा करने लगीं।

"कहाँ, कुछ भी तो नहीं।" उन्होंने धड़कते दिल से उत्तर दिया।

"तो फिर बैचेनी से इधर उधर क्यों फिर रहे थे ? मैंने तो तुम्हें कभी भी ऐसा करते नहीं देखा। क्या दुकान में कुछ..."

"नहीं ! नहीं !! हाँ, आज हिसाब में कुछ गड़बड़ी होगई है। बड़ा परिश्रम करने पर भी विधि नहीं मिली। चवन्नी का फ़र्क पड़ता है, कुछ पता नहीं चला। तुम जानती हो न, डाक्टर ने मुझे अधिक काम करने को मना कर दिया है। कह रहे थे कि इतना काम अब आप बहुत दिन नहीं कर सकते।" सेठ जी यह सब एक साँस में कह गये।

"तो फिर एक और मुनीम क्यों नहीं रख लेते आख़िर यह पैसा किस दिन काम में आएगा ?" उन्होंने चिन्तित स्वर में कहा।

"हाँ, वह तो करना ही होगा। अब कहीं से कुछ रुपया और मिल जाय तो एक मुनीम और बढ़ा दूँगा। मगर फिर भी हिसाब देखना तो पड़ेगा ही, तुम्हीं बताओ क्या इतना बड़ा काम कहीं दूसरे के हाथ में यों ही सौंप दिया जा सकता है ?"

"अरे तो क्या इतना रुपया थोड़ा है ? क्या एक मुनीम की तनख्वाह भी न निकलेगी ? इतना लोभ न करो। तुम्हें मेरी सौगन्द, कल से ही मुनीम रख लो। तुम भले चंगे रहोगे तो सब कुछ हो जायगा।"

जिस समय सेठानी जी मुनीम रखने का आग्रह कर रही थी। सेठ जी कौर हाथ में लिए सोच रहे थे कि बैठक में न तो गेंती है न खुरपा। वह कभी यहाँ रक्खे भी नहीं जाते। वह यहाँ किस बहाने से लाये जायें। यदि न लाए जाँय तो सब बेकार है—लाना ही होगा। गेंती तो हमारे यहाँ शायद होगी। मगर खुरपा ! वह तो ख़रीदना पड़ेगा। दोनों को लाकर कहीं छिपाना चाहिये,

खुले रखने से लोग देखकर शँका करेंगे। क्या इस लोहे लँगड़ को रखने को कहीं और स्थान नहीं था।" उन्होंने कौर मुँह में डाल कमरे के चारों कोनों में नज़र डाली। वह निश्चय कर रहे थे कि आगामी युद्ध हथियार कहाँ छुपाए जायें "बस यह कोना है, कपड़ों की अलमारी के पीछे! हाँ, वहाँ कौन देखने जाता है? दो दिन में सब काम हो जायगा तब उन्हें हटा देंगे।"

सेठानी जी ने और बातें करनी चाहीं; पर, उन्होंने उनमें कुछ रुचि न दिखलाई। सेठानी जी समझ गईं कि आज उनका चित्त चवन्नी के फ़र्क के पीछे घूम रहा है। वह चुप हो रहीं। सेठ जी ने भोजन कर लिया। आज उनसे अधिक न खाया गया। सेठानी ने थाली उठा ज़ीने का रास्ता लिया और सेठ जी दिया बुझा पलँग पर जा लेटे।

अँधेरा होते ही सेठ जी को भय मालूम होने लगा। उन्हें बचपन की सुनी बातों का ध्यान हो आया। 'धनवाला भूत बनकर अपने गड़े धन की रक्षा करता है। जो कोई उसे निकालने की इच्छा करता है वह उससे बदला अवश्य लेता है। बदलू को एक हांड़ी रुपये मिले थे। और उसका इकलौता लड़का उसके दूसरे दिन ही मर गया। भूत लोग इस प्रकार धन देकर अपना परिवार बढ़ाते हैं। क्या पता इस धन की रक्षा भी कोई भूत करता हो? तो वह क्या चाहता है? मेरी जान लेना चाहता है?

उनका समस्त शरीर काँप उठा। उन्होंने दोनों आँखें हाथों से ढकलीं। "ऐं मैं इतना डरपोक! इस भूत की कल्पना से मैं डर उठा! असम्भव है।" उन्होंने खूब सख्त मुट्ठी बाँध कर हवा में प्रहार किया और जबरदस्ती अपने मुख पर हँसी लाने की चेष्टा की। वे अपनी कायरता पर स्वयँ ही हँसना चाहते थे। उनका डर दूर होगया। परन्तु दिल की धड़कन अभी साधारण से कुछ तेज थी।

"मान लिया कि कोई भूत इस धन की रक्षा करता है, तो इससे क्या? मैंने स्वयँ धन को ढूँढ़ने का कोई प्रयत्न नहीं किया।

यह मोहर मेरे सामने फेंक दी गई है। धन का पता मुझे अपने आप दिया गया है। क्या पता मुहर चूहे लाए हैं, या वही रात वाला भूत!" भूत का ख्याल आते ही उन्हें पसीना हो आया। "तो क्या वह मुझे लालच देकर फँसाना चाहता वह कोई जी चाहता है। मैं नहीं दूँगा। आखिर होंगी ही कितनी? हमारे कारोबार में उनका क्या पता चलेगा।"

उन्होंने मुहर जेब से निकाली और अँधेरे में उसे उलट-पलट कर देखने की कोशिश करने लगे। "हूँ, यह मछली का काँटा मेरे सामने फेंका गया है। नहीं! नहीं!! मैं इस फन्दे में न फंसूँगा।" वह उठ कर पलँग पर बैठ गये और ज़ोर से मुहर को चूहे के बिल की ओर फेंक दिया। उसने दीवार से टकरा कर एक आवाज़ की और फर्श पर आ पड़ी। "बस चलो पाप कट गया। न रहा बाँस न बजेगी बाँसरी। लो भूत महाराज, क्या मुँह की खाई है। मूर्ख तू ने मुझे इतना लालची समझा था।"

वह पलंग पर फिर लेट गये। "अरे? मैं बड़ा मूर्ख हूँ। एक सोने की मुहर को इस प्रकार फेंक दिया! घरवाले जागते न हों, ईश्वर करे उसके टकराने की आवाज किसी के कानों में न पहुँची हो। हूँ! मैं व्यर्थ ही इसकी चिन्ता करने लगा। किसे पता है कि मैंने मुहर फेंकी है! समझेगा चूहे ने कुछ गिरा दिया होगा।" वे इस ओर से स्वस्थ हो गये। "मैं पागल होगया हूँ। भला जिस लक्ष्मी की मैंने जीवन भर पूजा की, उसी को घर आने पर ठुकरा दिया। लक्ष्मी मैया! मेरा अपराध क्षमा करना।" वे खाट पर से नीचे उतरे, दियासलाई जलाई, और बिल की ओर बढ़े। इस धुंधले प्रकाश में भूमि पर पड़ी मुहर सेठ जी की दशा पर मुस्करा रही थी।

उन्होंने काँपते हुए हाथों से उसे उठा लिया और माथे से लगा कर कहा, "लक्ष्मी मैया, तुम्हारी जय हो। मेरा क़सूर माफ़ करना।" दियासलाई बुझ गई। वह पलंग पर लौट आये। मुहर को तकिये के नीचे रख दिया और चद्दर ऊपर खींच ली।

वह सोचने लगे—मैं व्यर्थ ही डरा। भला भूत भी कोई चीज होती है? यह मूर्खों की कल्पना है, लेकिन ऐसा तो नहीं है। बड़े बड़े बुद्धिमान भी भूत का अस्तित्व मानते हैं। तो क्या सचमुच किसी भूत के पंजे में पड़ गया हूँ? उनकी आँखों के सामने एक अस्पष्ट काला धब्बा अन्धकार में घूमता प्रतीत हुआ। उन्हें जान पड़ा कि वह घूर-घूर कर उनकी ही ओर देख रहा है। वे डर गये। आँखें मूंद कर उलटे लेट गये और थोड़ी देर में उनके सोने की आवाज़ से बैठक गूँजने लगी।

* * *

सेठ जी की नींद खुली। उन्होंने अपनी चाँदी की अंगूठी के दर्शन किये। आँखें मलीं। तकिये को उलटा और मुहर निकालकर देखने लगे।

वे दुकान पहुंचे। एक खुरपा मंगाया। और कोई कागज ले आने के बहाने घर जाकर उसे रख गये। गैंती भी किसी बहाने से बैठक में आ गई।

आज का दिन उन्हें पहाड़ सा जान पड़ता था। दिन-भर उनका जी न लगा। वह बड़ी उत्सुकता से रात्रि की बाट जोह रहे थे, परन्तु रात्रि प्रत्येक क्षण और पीछे को सरकती जाती थी। उनके पेट में दर्द हो आया। वे गद्दी पर लेट गये और रात्रि का कार्यक्रम सोचने लगे—मैं किस प्रकार दिया जलाऊंगा। मेरे किस प्रकार सावधानी करने पर भी गैंती फर्श से टकरा जायेगी, जिसे सुन किरायेदार बैठक के द्वार पर इकट्ठे हो जायेंगे और द्वार खोलने को मुझे आवाज़ देंगे। तब मैं क्या करूँगा? क्या जवाब दूंगा। मैं खाट पर लेट जाऊँगा और गैंती को छुपा दूँगा। फिर कराहते हुए उठकर किवाड़ खोल दूँगा और पूछूँगा—भाई इतनी रात को क्या काम है? वे कहेंगे—हमने आपकी बैठक में कोई आवाज सुनी है। मैं तत्काल ही उत्तर दूँगा मैंने तो नहीं सुनी। यदि वे मान कर उल्टे लौट गये तब तो ठीक ही है और यदि किसी ने बैठक में घुस खुदी हुई मिट्टी देखली तब तो गजब ही हो जायगा। सब भण्डा फूट जायगा। नहीं! नहीं!! ऐसा नहीं होसकता मैं बड़ी सावधानी से हर एक कामको करूँगा। किसी को पता भी न चलेगा कि इस घर में कोई बड़ी घटना हो रही है। उन्होंने करवट ली और इसी प्रकार तरह तरह के तर्क-वितर्क करते दिन बिता दिया।

सन्ध्या आई। सेठ जी उठे। दुकान के बाहर तक आए और फिर जाकरलेट रहे। दस बजेतक तो वैसे भी किरायेदार जागते रहते हैं। काम में बारह बजे से पहिले हाथ न लगाना चाहिये। आज दुकान साढ़े ग्यारह बजे बढ़ा देनी होगी। इस के लिए उन्होंने नौकर को आज्ञा दे दी।

* * *

वह बारह बजे घर पहुँचे। सेठानी जी खाना लेकर आईं। परन्तु पेट के दर्द के बहाने से उन्होंने कुछ न खाया। उन्हें अकेले लेटे रहने में अधिक आराम मालूम देता था। इस कारण सेठानी जी उनकी कुछ सेवा न कर सकीं। वे दुखित मन से ऊपर चली गईं।

एक बज गया। सब लोग सो रहे थे। काम का समय आगया। सेठ जी खाट पर से उठे। दिया जल ही रहा था। उन्होंने गैंती अल्मारी के पीछे से निकाली और पटिया के जोड़ में उसकी नोंक अड़ा कर जोर लगाया। पत्थर पुराना और ढीला था। वह कोनों पर से झड़ कर अलग हो गया। सेठ जी ने बन्द साँस से उसे उठा कर एक ओर रक्खा। वह कुछ देर सुसताये और फिर खुरपा लेकर मिट्टी खोदने लगे। काम कठिन था, उन्होंने फर्श पर एक बड़ा मिट्टी का ढेर लगा दिया,

परन्तु धन का अभी कहीं पता भी न था। वह निराश होकर बैठ गये।

'काम अधूरा न छोड़ना होगा' वह फिर खोदने लगे। यकायक उनका खुरपा किसी पोली भूमि में लगा। सेठ जी ठहरे। उन्हें चूहों का बिल मिल गया था। 'बस वह भी कहीं बिल के सहारे ही होगा। नहीं तो चूहों को वह मुहर कहाँ से मिलती! उनकी हिम्मत बढ़ गई, वे दुगनी सावधानी से बिल के सहारे खोदने लगे।

खुरपा मिट्टी को तेजी से काट रहा था उसके रास्ते में कोई रुकावट न थी। "ऐं, क्या नीचे कंकड़ है? खुरपा किससे टकराया!" उन्होंने मिट्टी को सावधानी से हटाया। एक फूटा घड़ा! उनकी सावधानी बढ़ गई। वह सम्भाल सम्भाल कर मिट्टी हटाने लगे। अब मुहरों से भरा घड़ा साफ़ दिखाई देने लगा।

सेठजी उसे निकाल न सकते थे। उसका केवल मुंह ही खुला था। शेष भाग फर्श के नीचे था। 'इसको निकालने का प्रयत्न करना व्यर्थ है।' उन्होंने चद्दर-भूमि पर बिछा दी और मुहरों की मुट्ठी भर-भर कर घड़े से निकाल उस पर ढेर करने लगे। उन्होंने एक सांस में यह काम कर डाला। मुहरों का ढेर दिये के प्रकाश में चमकने लगा। बैठक का प्रकाश कई गुना बढ़ गया। सेठजी ने सोचा कि पहिले यह गड्ढा बन्द कर लिया जाय। फिर मुहरों को गिना जायगा। वैसे तो डेढ़-दो हजार से कम नहीं जान पड़तीं।

गड्ढा भर कर पटिया उसपर बिछा दी गई। और वह इस काम से निश्चिन्त हो गये।

"क्या अब इन्हें गिना जाये? नहीं। मैं ऐसी मूर्खता न करूँगा यदि कोई जागता हो? नहीं! नहीं! अभी गिनना ठीक नहीं। अभी इसे योंही पड़ा रहने दिया जावे। यह भी तो ठीक नहीं। अच्छा तो दिया बुझाकर अंधेरे में स्पर्श के सहारे गिना जाये। ठीक है कोई आकर अंदर झांककर देख भी न सकेगा कि मैं क्या कर रहा हूँ।"

उन्होंने दिया बुझा दिया और मुहरों को गिनने बैठे। अंधेरा होते ही कोई काली शकल उनके दिल को दबाने लगी। उन्हें भूत का ध्यान हो आया। 'मैंने अब उसका धन निकाल लिया है। वह अवश्य बदला लेगा। कहीं मेरी ओर आता न हो। उन्होंने अंधकार में आंखें फाड़ अपने चारों ओर देखा। उनकी दृष्टि जाकर उखड़ी हुई पटिया पर ठहर गई। उन्होंने अनुभव किया कि उसमें से कोई काली काली वस्तु निकल रही है। वह घबड़ा उठे। उनका शरीर पसीने में तर हो गया, और गौर से उसकी ही ओर देखने लगे। उनकी कल्पित मूर्ति धीरे-धीरे पटिया से बाहर निकली, और उनकी ओर बढ़ने लगी। सेठजी डर से थर-थर कांपने लगे। वह चद्दर पर से उठ खड़े हुए। उनको लगा कि अब मूर्ति ने अपना हाथ ऊंचा उठाया। उसके हाथ में कोई भारी हथियार है। वह उनके सिर पर अब गिरा ही चाहता है। वह भाग निकले और बैठक के दरवाजे पर आ गये। कुण्डा खोला। किवाड़ खोलने ही वाले थे कि ध्यान आया। "अरे यह सब मेरी ही कल्पना है। भला भूत भी कोई वस्तु होती है?"

उन्होंने हिम्मत की और तकिये के नीचे से चाकू निकाल लिया। चाकू के फल से अंधकार चीरते वह मुहरों की ओर बढ़े। वहाँ तो कोई भी नहीं था। वह हंस पड़े; मगर अभी दिल धड़क रहा था। वह बिल की ओर बढ़े। तमाम पटिया हाथ से टटोल चाकू से कुरेद कर देखी। कुछ भी नहीं वह। लौट आये और मोहरें गिनने के लिये सरकाईं। उन्हें अनुभव हुआ मानों किसी ने उनकी चादर खींची है। उन्होंने डर कर चारों ओर देखा। चाकू को हवा में हिलाया। कहीं कुछ भी नहीं था। एक पंजा गिनने पर उन्होंने फिर पांच मुहरें सरकाईं। "ऐं, यह क्या?" वह कल्पना करने लगे, "कोई दूसरा भी मेरी तरह इसमें से मुहरें गिन रहा है।" वह सन्न हो गये। चाकू को ढेर के चारों ओर फिराया। 'यह क्या है जो मुझे इस प्रकार तंग

कर रहा है ?' वह ऊपर को देखने लगे। वही काला धब्बा उनकी ओर सरक रहा था। उन्होंने चाकू संभाला। "हूँ, तू मुहर ले जाना चाहता है ! मैं एक न दूँगा। मैंने इन्हें बड़े परिश्रम से पाया है। कानूनन अब ये मेरी हैं।" वह मुहरों पर पेट रखकर औंधे लेट गये।

वह अनुभव करने लगे कि कोई उनके शरीर पर हाथ फेर रहा था। उन्होंने चाकू उठाने की कोशिश की, परन्तु हाथ न हिला, चिल्लाना चाहा जबान बंद, उठकर भागना चाहा, किंतु सब अंग जकड़ा हुआ था। वह पसीने में स्नान कर रहे थे। मुख काला पड़ गया था। वह बेहोश हो गये और मुहरों पर से एक ओर को लुढ़क पड़े।

* * *

सेठानी ने देखा आज सेठजी को उठने में देर क्यों हुई ? क्या पता तबियत अधिक खराब तो नहीं हो गई ?

वह नीचे उतरीं। बैठक के दरवाजे को धक्का दिया तो किवारें खुल गईं। सामने मुहरों का ढेर जगमगा रहा था। उन्होंने द्वार बन्द कर लिया। ढेर के एक ओर सेठजी की लाश पड़ी थी। एक ओर एक खुला चाकू पड़ा था। इसके अतिरिक्त बैठक का और कोई परिवर्त्तन उन्हें दिखाई न पड़ा।

वह इस पहेली को हल करने की कोशिश करने लगीं।

मेरे आंसू

[श्री ईश्वरचन्द्र पाण्डे]

ए मेरी आखों के आँसू ! बहो, बहो, दिल खोल बहो !
काम यही है, तुम्हें, अभागो ! बहो, बहो, हाँ—बहो, बहो !
रहो न क्षण भर शान्त तुम्हें आना है बहना, बहो, बहो !
जगी मुनी आशाओं को ले—जितना चाहो बहो, बहो !

नहीं ज़रा अधिकार हृदय का दर्द खोलने का मुझको।
मौन-मन्त्र है लक्ष्य, नहीं आदेश बोलने का मुझको।
अपने मन को मार रहा हूँ घुल-घुल पर तुम बहो, बहो !
काम यही है तुम्हें अभागो ! बहो, बहो हाँ—बहो, बहो !

क्या विनोद ? क्या शान्ति और आनन्द ? इन्हें जाने दो तुम।
रखा वेदना का हालाहल, इन्हें चढ़ा जाने दो तुम !
कसक-टीस सब सहो, न निकले हूक ज़रा भी सहो, सहो !
काम यही है तुम्हे अभागो ! बहो, बहो हाँ—बहो, बहो !

धधक रहा है उर के भीतर ज्वालामुखी धधकने दो।
प्रलय मचादे कहीं—इसे मत फटने दो, मत फटने दो !
इसीलिये तो कहता हूँ, ए मेरे आँसू ! बहो, बहो !
काम यही है, तुम्हें, अभागो ! बहो, बहो हाँ—बहो, बहो !

ओ, देश के युवक और युवतिओ !

[श्री रमेशचन्द्र आर्य]

मैं 'लेखकांक' के लिये क्या लिखूँ ? भाई यशपालजी का तकाज़ा है। टाल भी तो नहीं सकता। इसी उधेड़-बुन में था कि एक महाशय कार्यालय में आये और बोले—अखबार में यह ख़बर निकाल दीजिए कि "...लड़की की इच्छा के प्रतिकूल उसके पिता एक बड़ी आयु के पुरुष के साथ शादी कर रहे हैं। कन्या परेशान और किंकर्त्तव्य-विमूढ़ है।" मैंने सोचा इससे क्या लाभ ? केवल अखबार में यह ख़बर प्रकाशित होने मात्र से तो समस्या का हल नहीं हो सकता ? फिर यह कोई नई बात भी नहीं। आये दिन ऐसी घटनायें नित्य होती ही रहती हैं। अभी कल परसों की बात है—यहीं, भारत की राजधानी दिल्ली में ही मैंने एक घटना सुनी थी। एक युवा कन्या ने स्वेच्छा से अपना जीवन-सहचर चुन लिया है। घरवालों पर यह बात प्रकट भी करदी गई ; लेकिन वह भला क्यों मानने लगे ? इधर लड़की ने भी भीषण प्रतिज्ञा करली है—'यदि वही पति मिलेगा तब तो जीवन है अन्यथा मृत्यु की गोद ही भली।' अब दूसरी ओर आइये ! पिछले दिनों पत्रों में यह समाचार निकला ही था कि एक महाशय अपनी कन्याओं के लिए योग्य वर न मिलने के कारण हिन्दू-धर्म को ही अन्तिम प्रणाम कर रहे हैं ।

इस प्रकार हमारे समाज की व्यवस्था के अनेक शिकार आज मिल सकते हैं। सचाई यह है कि हिंदुओं की समाजिकता सदियों से ऐसी विनाशकारी एवं संकीर्ण हो चली है कि उसके असंख्य दुष्परिणाम हमारे सामने हैं, हो चुके हैं और शायद आगे भी होंगे। फिर भी रूढ़िवादियों की आंखें नहीं खुलतीं, यही खेद है ।

स्त्रियों के प्रति तो हमारे इतने कलुषित कारनामे हैं कि जिन्हें लिखते झिझक होता है, शर्म आती है और सोचते हैं—काश, हम जो आज हैं यदि वह न होते तो ही अच्छा था। हमने उन्हें गुलामी का पट्टा पहनाया था, अपाहिज किया, अबला के बाद पैर की जूती तक बना डाला। वे मूर्खा रहीं, कामिनी बनीं और पुरुषों के हाथ की कठपुतली हो गईं। अब उन्हें चाहे बूढ़ों से व्याहो, अबोध बच्चों के सिर बाँध दो या अन्धे, लूले, लंगड़े के सुपुर्द कर दो। सब-कुछ वश में है न ? दुखिया की आह पर हंसो ! विधवा की दाह पर हाथ सेंको अथवा परित्यक्ताओं से रंग-रेलियाँ करो ; सब हमारे लिए क्षम्य है ! हम सर्व शक्ति सम्पन्न जो ठहरे।—लेकिन सावधान ! पुरुष समाज सावधान ! कहीं भूल मत जाना । तनिक भी इतराये तो वह मज़ा चखना पड़ेगा कि जन्म-भर याद रक्खोगे।

आज स्वतंत्रता का युग है। स्त्रियाँ भी समय का उपयोग करने में पीछे नहीं रह रहीं हैं। पश्चिम में, अमेरिका, इग्लेंड, फ्राँस, जर्मनी आदि देशों में उनकी विजय-दुन्दुभि बज चुकी है। भारत में भी सूत्र-पात हो गया है। यहाँ भी वे अब सो नहीं रहीं, कर्त्तव्य की ओर मुड़ चली हैं। अगर होश हो तो अब भी संभल जाना अन्यथा ये अबला नामधारी मूर्तियाँ यथोचित प्रसाद देने को बाध्य होंगी।

भारतीय बहिनो ! अब तुम भी चेतो ! जब तक तुम साहसी बनकर मैदान में न आओगी तब तक यह निश्चित है कि तुम इसी प्रकार पददलित होती रहोगी। अतः कर्तव्य पर दृढ़ होकर कह दो कि अपने जीवन को सुखी बनाने का हम स्वयं अधिकार रखती हैं। अगर कोई न माने तो करो इलाज ! बूढ़े वर के आगे जाते ही कहो 'पिताजी, नमस्ते !' बच्चे के सामने जाते ही खेलने या खिलाने लग जाओ। फिर देखो, कैसे वह तुम्हें पत्नी बनाने का साहस स्थिर रख सकता है ? पिताजी भी मुँह छिपा लेंगे, माताजी भी कोने में खिसक जायेंगी। उस समय तुम निश्शंक सिंहनी के सदृश जमी रहो। किसी की क्या मजाल जो तुम्हारी तरफ़ फूटी आँख भी देख जाय ? 'वीर भोग्या वसुन्धरा' इस तथ्य को साथ लेकर जब तक आगे न आओगी तब तक ठीक इलाज होने का नहीं। इसलिये दृढ़ता के साथ आगे क़दम बढ़ाओ। ये सारी गड़बड़ियाँ तब स्वयं ही मिट जायेंगी। नहीं तो तुम्हारी सहानुभूति में ऐसे एक नहीं अनेक समाचार भी यदि अख़बारों में छप जाँय तब भी कुछ भला होने का नहीं।

प्रणय रात्रि

[श्री अविनाशचन्द्र पाण्डेय 'चातक']

उस दिन सूर्यास्त से वर्षा होने लगी। क्रोधित वायु के झकोरे और भी क्रोधातुर हो चले। वृक्ष पर लगे हुये सुन्दर-सुन्दर पत्तों की हरियाली उन्हें सह्य कहाँ थी? नोंच-नोंच कर बेचारों को पृथ्वी पर गिरा ही तो दिया और न जाने क्यों समीपवर्ती सरोवर को छलछलाती हुई लहरों से अशान्त कर दिया? वह भी क्या मुझ दुखिया का हृदय था? मैं अपने कमरे में सम्पूर्ण दुःखों का जो आगार अपने भीतर छिपाये बैठा था, बाहर प्रकृति उसे प्रकट कर देने के लिये दर्पण स्वरूपा बन गई—अशांत, बिल्कुल अशांत!

* * *

मेरे हृदय-विदारक दुःख को देखकर द्वार भी चिल्ला उठा। मैंने घूमकर देखा, वह वहीं थी—मेरी प्रियतमा।...नहीं नहीं, अब वह मेरी कहाँ थी? कमरे में पदार्पण करते ही उसने वहाँ का सम्पूर्ण वातावरण परिवर्त्तित कर दिया। उसने द्वार को खूब सटा कर बन्द किया मानों उस प्रलयकारिणी प्रकृति को बाहर ही मूँद दिया हो। अंगीठी जला कर कमरे को गरम और प्रकाशमान बना दिया, अपना भीगा हुआ शाल झटककर खूंटी पर लटका दिया, दस्ताने एक ओर डाल दिये और अपने लम्बे सटकारे बाल नीचे लटका दिये। उन पर जल-बिंदु मोती के समान झिलमिला रहे थे। वह मेरे पास बैठ गई और मुझे सम्बोधित किया। मैं इस अनहोनी घटना पर चुपचाप मंत्र-मुग्ध सा बैठा रहा। कभी स्वप्न में भी मैंने यह आशा न की थी कि वह आयेगी तो क्या, मैं उसे कभी देख भी सकूंगा।

उसने मेरा हाथ अपने एक हाथ में ले लिया और दूसरे से अपना गौर वर्ण कंधा खोला, अपने बालों को, जो उस पर बिखरे थे, हटाया और मेरे कपोल को वहाँ रखकर केशों के भूरे रेशमी पर्दे से ढाँप दिया। इसके पश्चात उसने धीमे स्वरों में मुझ से कहना प्रारम्भ किया, "मैं तुम्हें प्रेम करती हूँ—बहुत अधिक प्रेम! किंतु तुम जानते हो मैंने आज तक क्यों नहीं बताया—क्यों मैंने चुपके ही चुपके अपना सर्वस्व तुम्हारे अर्पण कर दिया? मैं उच्च कुल में जन्मी हूँ—उसकी मर्यादा, दाम्पत्य प्रेम का उच्च आदर्श, क्षणभंगुर संसार के थोथले नियम तथा सामाजिक रूढ़ियां इन सब को तोड़ने की शक्ति मेरे निर्बल स्त्री हृदय में कहाँ थी? इनकी वेदी पर मैं तुम्हारे स्वर्गीय प्रेम की आहुति देती रही—हाँ! स्वर्गीय प्रेम की आहुति!!

मेरा हृदय चाहता था कि मैं खुल्लम खुल्ला—संसार के सामने—तुमसे प्रेम कर सकूं। अन्ततः मैंने अपनी दुर्बलता से घोर युद्ध करके उस पर विजय प्राप्त की है। आज एक दावत में बैठे बैठे सहसा मुझे तुम्हारा ध्यान आया। तुरन्त ही मैं व्याकुल हो उठी। इसी वर्षा और तूफ़ान की क्षण-मात्र भी चिंता मुझे न व्यापी। मैं तुम्हारे पास चली आई।"

वह कुछ क्षण को रुक गई। फिर एक ठंढी सांस खींचकर मेरी ओर देखते हुये कहना प्रारम्भ किया, "संसार की स्त्रियाँ प्रियतम को रिझाती हैं—उन्हें प्रसन्न रखने की चेष्टा करती हैं। किन्तु एक मैं हूँ—हतभागिनी कहीं की—जिसने तुम्हें सदैव दु:ख ही दिया है। इसीलिये तो तुम्हारा फूल सा सुन्दर तथा कोमल मुख कुम्हला कर पीला पड़ गया है।"

मैंने सगर्व दृष्टि से उसकी ओर प्रसन्नता-पूर्वक देखा। यह मुझे आज ही ज्ञात हुआ कि वह भी मुझ से प्रेम करती है—केवल आज ही। मेरा मन उल्लास और आश्चर्य से सराबोर हो रहा था—मैं फूला न समाता था। मैंने उसे अपने वक्षस्थल से चिपटा लिया, अपनी खोई हुई सम्पत्ति को सदा के लिये सुरक्षित कर लेने को, मानों मैंने खूब बलपूर्वक दबा कर उसे अपने हृदय की तंग कोठरी में बन्द कर देना चाहा। आज वह मेरी है—समूची मेरी! कितनी पवित्र तथा शुभ्र मूर्तिमान स्वर्ग की देवी है मानों वह!!

यह संसार उसके लिये उपयुक्त स्थान न था—वह स्वर्गीय थी। मेरे बाहुपाश, जिनसे मैंने उसे कसकर जकड़ रक्खा था, ढीले हो चले। मैं विचार-धारा में वह चला। आज वह मेरी है। आज ही मेरे प्रेम ने उसके दुर्बल हृदय पर विजय पाई है, वह फिर भी तो पराजित हो सकता है। उसका दाम्पत्य कर्त्तव्य, समाज का भय सब मेरे समक्ष विकराल रूपेण नर्तन करने लगे। सम्भव है कि कल वह मेरी न रह जाय। विचार पलटने पर वह फिर मेरी कभी न हो सकेगी। किन्तु ऐसा तो मैं कभी होने ही न दूँगा। वह मेरी है और जीवनान्त तक मेरी ही रहेगी।

उसके गले में बलखाती हुई सुन्दर केशों की वेणी जो मैंने स्वयं ही गूंथी थी, मेरे नेत्रों का आकर्षण बनी हुई थी। उसी की ओर निश्चल दृष्टि से देखता हुआ मैं यह सब सोच रहा था और उसे ही देखते-देखते मैंने उपाय सोच कर काय रूप में परिणत भी कर डाला।

वह मेरे पास सो रही थी। उसे कोई कष्ट नहीं प्रतीत होता था—वह परम सुखी थी। उसके नेत्र-कमल मुंद रहे थे किन्तु भौंरा भीतर ही गूंज रहा था। मैंने धीरे-धीरे उन्हें खोला मानों वे हँसते थे। उनसे शान्ति तथा प्रसन्नता छलकी पड़ती थी। उसके सुन्दर कपोलों पर यौवन की लालिमा छाई थी। उसके लजीले अधरों को बिचुम्बित कर, सिर को मैंने अपने कंधे पर रख लिया। जीवन में पहिली ही बार यह सौभाग्य मुझे मिला था।

उसने भी आज सम्पूर्ण बाधाओं का दमन करके अपने प्रियतम को सदा के लिये पा लिया। इसी प्रसन्नता से आज उसका सुन्दर मुख खिलखिला रहा है। वह आज कितनी प्रसन्न है? उसकी एकमात्र अभिलाषा पूर्ण हो गई।

हम दोनों सारी रात उसी प्रकार जकड़े बैठे रहे—वह बिल्कुल निश्चल थी। एक बार आँख मूंद कर फिर उसने खोलीं ही नहीं। इस स्वर्गीय देवी के अपूर्व मिलन पर मैंने सोचा था कि कोई स्वर्गीय देवता अवश्य हमें बधाई देने आवेगा। किन्तु यह मेरा अनुमान मात्र ही निकला। रात्रि व्यतीत हो गई, न कोई आया न गया।—

* * *

मेरे इस जीवन की यह सर्व प्रथम और अन्तिम प्रणय रात्रि थी। उसे अब समाज का भय है न उच्च कुल का मान। अपने दाम्पत्य जीवन के कर्तव्यों से भी वह मुक्त है। उसके विचार पलट कर, संसार की बड़ी से बड़ी शक्ति भी अब हमें प्रथक नहीं कर सकती। शीघ्र ही स्वर्ग में हम दोनों का पुनर्मिलन होगा—नितान्त स्थाई तथा अटूट।—

मां की याद

[श्री ओनिला पाठक]

१

बीते कितने दिवस और माँ !
बीत गईं अब कितनी रातें ।
फिर भी नहीं भूल पाई हूँ ,
प्यार भरी माँ तेरी बातें ।

२

सुनती थी मैं जिसे चाव से
वही न भाती आज कहानी।
जो मुझको प्यारे लगते थे ,
अब न सुहाते "राजा-रानी" ।

३

चाची यह कह कर फुसलातीं,
"अम्मा गंगा गईं नहाने"
कहतीं—"अभी आ रही होंगी
गई हुईं हैं नीर चढ़ाने ।

४

माँ तू मेरा हाथ पकड़ कर
देवी के मन्दिर ले जाती
बांह पकड़ कर बड़े प्रेम से
टन, टन, टन घंटा बजवाती ।

५

क्यों तू छोड़ अकेला मुझको
चली गई मां सोते-सोते ।
उठ कर फिर न सो सकी हूं,
थक गई रात-दिन रोते-रोते ।

६

गंगा पर या मन्दिर में ही
क्या इतने दिन हैं लग जाते ?
ऊब गई मैं गिनते-गिनते,
फिर भी बीत नहीं वह पाते ।

७

सोते-जगते खाते-पीते
मैं हूं उनको देखा करती।
कहां गई वह अम्मा मेरी
थी जो सब दुखों को हरती ?

८

"सो जा रानी, सो जा बेटी"
कह कर चाची मुझे सुलातीं
उनकी यही लोरियां मुझको
अम्मा तेरी याद दिलातीं ।

९

जिसे चूम कर सुखद भोर में
मां तुम मन में प्रमुदित होतीं,
बहला-बहला कर धीरे से
स्नेह-सहित मेरा मुख धोती ।

१०

अब न जगाने आता कोई
पड़ी देर तक रहती सोती
अपने सूखे से मुंह को मैं।
रहती हूं आंसू में धोती ।

११

अंचल से मुंह पोछ प्यार से
काजल जिनमें रोज लगाती,
वही अभागिन आंखें अम्मा
सूज गईं अरु बहुत पिरातीं ।

१२

दूर-दूर थी भागी फिरती
तुम गोदी में पकड़ बिठातीं,
"ना-ना" करने पर भी थीं तुम
मुझे मिठाई निरी खिलातीं ।

१३

आज न मुझ को कुछ भी भाता
लड्डू — पेड़ा ब्यालू—रोटी,
सा घर लगता है सूना-सा
लगती हैं सब बातें खोटी ।

१४

आप अकेली बैठी-बैठी
मैं चौखट पर रोती रहती,
आती ही होगी अम्मा जी
यही निरन्तर आशा रहती ।

१५

शाम हो चली अब बछड़ों से—
बिछड़ी गायें मिलने आतीं,
म्हां-म्हां कर औ' रंभा-रंभा कर
अम्मा तेरी याद दिलातीं।

१६

अम्मा जी अब रहा न जाता
रात हो चली अब तो आओ,
बहुत रो चुकी बिलख-बिलख कर
माँ छाती से मुझे लगाओ ।

राज कवि मुंशी अजमेरी जी

[श्री विष्णु]

चिरगाँव निवासी मुँशी अजमेरी ओरछा नरेश के राजकवि थे। गत ज्येष्ठ की पहिली प्रतिपदा को ही आपका स्वर्गवास हुआ है। उस समय आप केवल ५५ वर्ष ही के थे।

वैसे तो आप सत्कवि थे परन्तु आप ने लिखा कम ही है। हेमलसत्ता, गोकुलदास आदि ही उनकी प्रसिद्ध कविता पुस्तकें हैं। कुछ दिन 'सूरसागर' का सम्पादन भी आपने किया था। बाल साहित्य की ओर आपका विशेष रुझान था। बच्चों के लिए रामायण भी वह लिख रहे थे। उसके कुछ अंश हमने 'सुधा' में पढ़े थे। भाषा पर उनका अपना अधिकार था। ब्रज भाषा, राजस्थानी और आजकल की हिन्दी में वे समान रूप से कविता रच सकते थे। स्वर्गीय साहित्याचार्य पं० पद्मसिंह शर्मा के स्वर्गवास पर आपने 'पुनवन्तो पदम' नाम की कविता डिंगल भाषा में लिखी थी। उसके दो एक छन्द हम यहाँ लिखते हैं :—

पायो पदम पमाव, छीलो दे सागर छल्यो,
आछोड़ा अमराव, रूप सरीखे राजवी।
दई सखी नदी देख, सागर री सोभाग-सुख;
लिख्या बेहरा लेख, कुण अन्दर कूड़ा करै।
सोग सगी सगुणाट, मान्धो मारै सोनसर;
भंवर करै भणणाट, हीवै छा जरना हुआ।

वे हिन्दु थे या मुसलमान इसमें सदा ही शंका रहती थी। सच तो यह है हम उनके स्वर्गवासी होने पर ही ठीक-ठीक जान सके कि वे वास्तव में मुसलमान थे। हमने तो सुना था वे हरि-कथा किया करते थे। संस्कार स वे वैष्णव थे। उनसे कहा गया — "मुन्शी जी आप शुद्ध होकर हिन्दू हो जाइए, विचारों से आप हिन्दू हैं ही।" उन्होंने उत्तर दिया—ऐसा मुझमें अशुद्ध क्या है जो मैं शुद्धि कराने जाऊँ। स्व० पद्मसिंह शर्मा जी ने तो आपसे कहा भी था — 'शुद्ध हुए लोगों से तो मुझे घृणा होती है पर आपके साथ भोजन करने में मुझे आनन्द आता है।' व्यक्तित्व आपका खरा था।

भारत के सुप्रसिद्ध राष्ट्रीय कवि श्री मैथिलीशरण गुप्त तथा उनके परिवार से मुन्शी जी का जो सम्बन्ध था वह नाते रिश्ते की सीमा से कहीं आगे बढ़ा हुआ था। कहते हैं मृत्यु की गोदी में जाते जाते भी वे चिल्ला उठे थे—मैथिली शरण, मैथिलीशरण। यह गौरव ही का विषय है कि जो कुछ भी उन्होंने लिखा उसके पीछे श्री सियाराम शरण जी गुप्त ही की प्रेरणा काम करती थी। प्रेरणा के भण्डार में कवि भी हमारे धन्यवाद के अधिकारी हैं। सियाराम शरणजी ने उनकी मृत्यु पर एक मार्मिक लेख जुलाई के 'हंस' में लिखा है। वे लिखते हैं—'कवित्व उनके लिए स्वाभाविक होने के कारण ही सम्भवतः उसकी ओर वे यथोचित ध्यान न दे सके। स्वयं लिखने की अपेक्षा दूसरों की रचना में संशोधन करने और उन्हें उचित सलाह देने में ही उनके कवित्व का सन्तोष हो जाता था।'

आज कल के साहित्यकों में इस बात का पूर्णतः अभाव है तभी उनकी मृत्यु हमें विशेष रूप से खटकती है।



स्वर्गीय मुन्शी अजमेरी जी



श्री रमेशचन्द्र आर्य



श्री ओमप्रकाश शास्त्री

POPULAR PRESS, DELHI.

सफल प्रेम

[श्री बजरंगलाल सुलतानिया]

(१)

युवक सरिता-तट पर बैठा हुआ स्फटिक से स्वच्छ जल में सांध्य गगन के पथिक का अपूर्व मनोरम दृश्य देख रहा था। जल में सूर्य की लाल किरणें अठखेलियां कर रही थीं। सूर्य का धीरे धीरे हिलता हुआ क्षण भर में तेज की कमी के कारण पीला होता हुआ मुख सरित-गर्भ में एक अतुलनीय सौंदर्य की सृष्टि कर रहा था। आकाश पर दृश्य बदलते थे और जल में उनके प्रतिबिम्ब। यदा-कदा छोटी छोटी मछलियां दीख जाती थीं जिनका कर्त्तव्य ही जल-प्रवाह काट कर रंगरेलियां मचाना था। युवक आनन्द में मग्न हो रहा था। एक तरह से मन ही मन उसने नित्य ही इस दृश्य का निरीक्षण करने का संकल्प कर लिया।

जहाँ पर युवक बैठा था—वहाँ से कुछ दूर हट कर एक घाट था। पक्का घाट नहीं—कच्चा घाट, प्रातःकाल गांव की कुछ स्त्रियां वहाँ स्नान करने आती थीं। वह स्थान जहाँ समतल था अतः उसे ही घाट का नाम दे दिया गया था। युवक ने घाट की ओर देखा—एक सुन्दरी घुटने तक जलमें बैठी हुई झुककर घड़ा भर रही थी। वह एक सफ़ेद साड़ी पहने थी जो शायद अपने ही हाथों धोई गई थी। साड़ी का पल्ला सिर से खिसक कर कंधों पर आ गया था। उसका सिर नीचे की ओर झुका हुआ था—जल में कांपता हुआ उसके सुन्दर मुख का सुन्दर प्रतिबिम्ब युवक को साफ़ साफ़ दिखाई दिया। उसके शरीर पर गहने न थे—पैरों में शायद मामूली छड़े रहे हों—पर वे जल में होने के कारण दीख नहीं रहे थे। वह लापरवाही से जल भर रही थी। युवक उसकी ओर देखता ही रह गया।

घड़ा भर गया था। उसने उसे लाकर किनारे पर रख दिया और खड़ी होकर चारों ओर देखने लगी। युवक उसी ओर देख रहा था। क्षण भर उसने भी युवक को देखा। दोनों एक दूसरे को देखते रहे फिर युवक ने आंखें फेर लीं और जल की ओर देखने लगा। वह जल में उसके मुख का प्रतिबिम्ब देखने का लोभ संवरण न कर सका था।

युवती उसे देखकर जरा लजाई। सिर से खिसकने वाली साड़ी को उसने ठीक कर लिया। फिर नीचे देखती हुई चुपचाप घड़ा उठाकर चली। युवक उसे जी भरकर देखना चाहता था। न जाने क्यों उसका मन उसे देखते रहने का इच्छुक हो गया था। उसने अपने को समझाया—किसी अपरिचित स्त्री की ओर देखना पाप है।

मन ने सात्विकता से उत्तर दिया—'शुद्धभाव से प्रकृति के सौंदर्य का निरीक्षण करना पाप नहीं।'

मन ने उसे समझा दिया। यदि वह चाहता

तो इस पर और भी तर्क कर सकता था। तर्क करने के लिये बहुत जगह थी। शायद वह तर्क में मन को परास्त भी कर सकता; पर यहाँ पर उसने मन की बात मान ली। मानता कैसे नहीं—मन ने उसके अनुकूल ही तो बात कही थी। वह भी तो युवती को जी भर कर देखना चाहता था। केवल यही एक आशंका थी उसे मन ने दूर कर दिया और नेत्रों ने अपना कार्य आरम्भ कर दिया।

वह कुछ दूर जा चुकी थी। आखिर इस तर्क-वितर्क में कुछ समय तो लगा ही होगा। उसे क्या आवश्यकता थी कि इस तर्क का अन्त होने तक खड़ी रहती! वह चलती गई और तर्क होता रहा। तर्क समाप्त होने तक उसका कुछ दूर चले जाना अनिवार्य ही था और वह जा भी चुकी थी।

युवक ने उसकी ओर देखा—घड़े को कमर पर रक्खे मंथर गति से वह चली जा रही थी। उसकी दृष्टि नीचे की ओर थी पर पृथ्वी पर नहीं। वह इस समय विचार-मग्न थी—जाने क्या सोच रही थी। दृष्टि नीचे की ओर होते हुए भी उसे पृथ्वी की कोई चीज दिखाई न देती थी। इस समय वह इस कोलाहलमय संसार से बहुत दूर—स्वप्न-संसार के शांत वातावरण में विचरण कर रही थी। उसके संसार में इस समय केवल वह और उसके विचार थे—और कोई भी न था। वह बिना विचारे चली जा रही थी। रास्ते की ओर उसका ध्यान भी न था। रास्ता छूट जाने का ध्यान उसे उस समय आया जब वह सामने के वृक्ष से टकराती टकराती बची। उसने घूम कर देखा—रास्ता पार करके उसकी नज़र नदी के किनारे तक पहुंची। युवक बैठा था; पर नदी की ओर दृष्टि करके नहीं, उसी ओर देखता हुआ। अपनी इस चेष्टा को छिपाते हुए वह पथ की ओर घूम पड़ी और उसी चाल से अग्रसर होती रही।

युवक उसे देखता रहा,—जब तक वह आँखों से ओझल न हो गई। उसके अदृश्य होने के बाद वह बड़ी देर तक वहीं बैठा उसके बारे में सोचता रहा। सूर्य्य डूब चुका था—अंधेरा भी हो गया। आकाश पर यत्र तत्र एकाध तारे भी दीखने लगे। युवक भारी हृदय से चुपचाप उठ कर घर की ओर चला। वह विचार-मग्न था।

माता ने कहा—'भोजन कर लो।'

युवक ने उत्तर दिया—'भूख नहीं।'

भाभी का आग्रह था—'कुछ तो खा ही लो।'

युवक ने करुणा और दुःख से भरी लाल आंखें खोल दीं। भाभी घबरा उठीं। पिता ने आकर पूछा—'क्या बात है?'

युवक ने संक्षिप्त उत्तर दिया—'कुछ नहीं, जरा सिर में दर्द है।'

धनी का एकलौता बेटा, सुशील और सुशिक्षित—माता पिता जान देते थे। सिर में दर्द सुनकर सन्न रह गये। डाक्टर आया, दवा दी और चला गया। माता के जागरण का सामान हो गया। युवक चादर में मुंह लपेटे पड़ा रहा—शायद सारी रात जागता ही रहा। सुबह उठा—आंखें लाल थीं, सिर जल रहा था, बुखार का अंदेशा हुआ। डाक्टर को फिर बुलाया गया। वह 'मामूली बुखार है'—कहकर फ़ीस लेकर चला गया। पर माता का परितोष तो 'मामूली बुखार है' कहने से नहीं होता। वह तो सोचती है—'बुखार है—मामूली ही सही पर यह है क्यों? अपने पुत्र का जरा सा कष्ट देखकर ही उसकी आत्मा रो उठती है।

जरा देर में ही गाँव भर में यह खबर फैल गई कि पण्डित चन्द्रधर शर्मा के पुत्र विमलकुमार को रात से ही बुखार है। पण्डित जी धनी थे, नम्र थे, मिष्ट भाषी थे। सभी से उनका मेल था। जिसने विमल की बीमारी की खबर सुनी वही देखने गया।

रजनी की माता ने उससे कहा—'बेटी, सुना है परिडत चन्द्रधर जी के पुत्र को बुखार है। मेरी तबीयत भी ख़राब है—नहीं तो मैं ही जाती। जा, तू ही चली जा। विमल की मां से पूछ आना और देखती आना कैसा है। बेचारा परसों ही तो आया और आज ही बीमार भी पड़ गया।'

रजनी ने विमल की मां से जाकर पूछा—'चाची जी, विमल कैसे हैं?'

'वैसा ही है, बेटी। देख ले, उस कमरे में है।'—किसी दवा की तलाश करती हुई इशारे से कमरा दिखला कर विमल की माता बोलीं।

रजनी कमरे में चली गई। विमल सिर तक ओढ़ कर लेटा था। भाभी सिरहाने बैठी थीं। रजनी ने पूछा—'क्या सो रहे हैं? कैसी तबियत है।'

विमल ने चादर सिर से हटादी। रजनी चौंक पड़ी। विमल विस्फारित नेत्रों से देखता ही रह गया। भाभी आश्चर्य में डूब गई, रजनी चीख़ उठी। विमल अवाक् रह गया। भाभी ने विस्मय के समुद्र में डूबते उतराते पूछा—'क्यों क्या बात है?'

रजनी ने बात बनायी—'इनका तो एक ही दिन में चेहरा बदल गया।'

विमल ने छिपाया—'भाभी, दर्द ज्यों का त्यों है।'

भाभी का परितोष हो गया। रजनी भाभी के पास जा बैठी। विमल के सिर पर हाथ रखकर देखा—तवे की तरह जल रहा था। विमल ने मन ही मन स्वर्गीय सुख का अनुभव किया।

विमल ने कहा—'भाभी पानी लादो।'

भाभी पानी लेने चली गयीं। विमल ने आँखें खोल दीं और चुप चाप रजनी की ओर देखता रहा। फिर होठों पर सूखी हंसी लाकर बोला—'तुम्हारा नाम!'

रजनी ने शर्मा कर उत्तर दिया—'रजनी।'

विमल ने कहा—'नहीं,चन्द्रिका।'

रजनी कुछ न बोली। विमल उसे ही देखता रहा। वह पृथ्वी को देखती रही। भाभी पानी लेकर आयीं। विमल ने नाम करने के लिये पानी पिया फिर ग्लास रखने एक ओर को झुका। रजनी ने बढ़कर ग्लास हाथ से ले लिया। विमल बोला—'यह क्या करती हो?'

रजनी ने भी यह बात सुनी और भाभी ने भी, पर दोनों ने इसके दो अर्थ निकाले। रजनी ने इसे प्रिय-सम्बोधन जाना और भाभी ने केवल सभ्यता-जनित सुवाक्य!

रजनी चली गयी। विमल ने भाभी से गम्भीर होकर पूछा—'यह कौन थी, भाभी?'

'रजनी'

'ओह, मैं नाम नहीं पूछता। परिचय पूछता हूँ।'—भाभी के चेहरे पर विमल ने दृष्टि गड़ाकर पूछा।

भाभी ने सरल भाव से उत्तर दिया—'वह जो गाँव के कोने पर बुढ़िया रहती है—वही बेचारी ठकुराइन जो परसों अपने यहाँ आई थी। उसी की लड़की है। बेचारी बुढ़िया बहुत ग़रीब है। किसी समय उसके पास भी पैसा था। पति सेना में सूबेदार था। महीने महीने ख़र्च आता था। एक बार वह लड़ाई पर गया। रजनी उस समय दो साल की थी। एक दिन तार आया—'रजनी के पिता की लड़ाई में मृत्यु होगई।' वह बहुत रोई। सरकार से कुछ रुपये मिले। कुछ दिन काम चला। अब वह पीस कूट कर गुजर करती है। रजनी इतनी बड़ी हो गई। इसका ब्याह कैसे करे?'—भाभी रजनी की माता की ग़रीबी का वर्णन करने लगीं। सबकुछ विमल सुनता रहा—पर बे मन से। मुख्य बात तो उसे मालूम हो ही चुकी थी। रजनी—नहीं उसकी चन्द्रिका—का परिचय उसे मालूम हो चुका था और यही वह चाहता भी था।

विमल धीरे धीरे अच्छा हो चला।

(२)

एक दिन विमल टहलता टहलता रजनी के घर की ओर चला गया। द्वार पर उसकी बुढ़िया माँ बैठी हुई थी। विमल को देख कर बोली—'अब कैसी तबीयत है, बेटा ? मैं उस दिन अस्वस्थ होने के कारण तुम्हें देखने न जा सकी।'

'अच्छा हूँ माता जी, आपकी कृपा से बीमारी दूर हो गई।'—उसके सामने जाकर विमल बोला।

इतने में विमल की आवाज सुनकर रजनी बाहर आई।

बुढ़िया बोली—'रजनी, चटाई बिछादे और थोड़ा सा ताज़ा पानी ला।'

रजनी घर की ओर मुड़ी। विमल उसी की ओर देख रहा था। रजनी ने पीछे घूम कर देखा। विमल मुस्कराया, वह भी मन ही मन हंसती हुई भीतर घुस गई।

रजनी ने चटाई बिछा दी—यह चटाई बुढ़िया ने बहुत दिनों से बचा रक्खी थी। यदा-कदा ही वह इसे बाहर निकालती थी। रजनी घड़ा लेकर पानी लाने चली। विमल ने कहा—'मैं जरा घूम आता हूँ, माता जी। डाक्टर का आदेश है।'

बुढ़िया ने कहा—'रजनी पानी लाती है। पानी पी लेना तब चले जाना।'

'मैं अभी आता हूं। रात हो जाने से देर हो जायगी।'

विमल रजनी की ठीक विपरीत दिशा में चला पर कुछ ही दूर जाते जाते दोनों मिल गये। विमल ने नजदीक जाकर रजनी के कंधे पर हाथ रखते हुए कहा—'चन्द्रिका !'

रजनी ने जरा मुस्करा कर गर्दन घुमा ली और विमल को देखते हुए बोली—'नहीं, रजनी !'

विमल ने छड़ी घुमाते हुये कहा—'किन्तु मैं चन्द्रिका ही कहूंगा।'

रजनी ने जरा हंसकर कहा—'अच्छा यों ही सही।'

फिर दोनों नदी के तट पर गये। नदी के जल में पैर डालकर दोनों बहुत देर तक पास पास बैठे हुए बातें करते रहे। सूर्य देव अस्ताचल को चले गये। अँधेरा हो चला। रजनी घड़ा उठा कर घर की ओर चली। विमल ने कहा—'पहुँचा आऊँ ?'

'रहने दीजिये। सर्दी पड़ने लगी है। एक दिन जरा देर बाहर रहे थे तो सिर में दर्द होने लगा था और एक हफ्ते तक पड़े रहे थे। देर हो जाने से आज भी कुछ गड़बड़ न हो।' रजनी खिलखिला कर हँस पड़ी।

विमल ने मुस्कराते हुए कहा—'अगर क़िस्मत ऐसा ज़ोर मारा करे तो मैं नित्य ही बीमार पड़ा करूं।'

रजनी ने स्नेह-जनित तिरस्कार से कहा—धत ! ऐसी बातें नहीं कहा करते। बीमार पड़ें तुम्हारे दुश्मन।,

विमल अपने घर की ओर चला गया और रजनी अपने घर की ओर।

दूसरे दिन फिर दोनों नदी के तट पर मिले और बड़ी देर तक बातें करते रहे। दोनों एक दूसरे के प्रति खिंच गए थे। विमल ने कहा—'चन्द्रिका, मैं तुम्हें प्यार करता हूं।'

रजनी हँसी और दिल खोलकर हँसी।

विमल ने पूछा—'हँसती क्यों हो ?'

रजनी ने कहा—'क्योंकि तुम मुझे प्यार करते हो पर मैं तुम्हें प्यार नहीं करती।'

विमल अवाक् होगया। उसे अपने कानों पर विश्वास ही न हुआ। उसने रजनी का कंधा पकड़ कर उसे झकझोरते हुए कहा—'क्या ? क्या यह सच है ? बोलो, शीघ्र बोलो !'

रजनी और भी जोर से हंसी।

विमल सशंकित होगया। बोला—'अब क्यों हंसी ?'

'तुम्हारी दशा पर। तुम भी मजाक को सच मान लेते हो। सचमुच विमल, तुम्हारा सा भोला मनुष्य मैंने आज तक नहीं देखा।'

विमल लज्जित होगया—'सच ही तो, इस जरा से मजाक को भी मैं न समझ सका। मैं बड़ा मूर्ख हूं।'

फिर बोला—'तो क्या यह सच है कि तुम मुझे प्यार करती हो !'

यह भी कहने की बातें हुआ करती हैं! अपने हृदय से पूछो !'

विमल प्रेम से विह्वल होगया। बोला—'रजनी' तुमने मुझे जीवित कर दिया। मैं यह बात अपने मुंह से निकालते बड़ा डर रहा था।'

रजनी ने कहा —'पर एक बात है।'

शंकित सा होकर विमल बोला — 'वह क्या ?'

'यही कि समाज हमारे प्रेम को कलुषित बतलायेगा। समाज में रह कर कोई किसी विजातीय से प्रेम करने का अधिकारी नहीं।' —विमल पर दृष्टि गड़ाते हुए रजनी बोली।

विमल कुछ चिन्तित सा हुआ। फिर बोला—'पर रजनी ! क्या समाज से अलग नहीं हो सकते ?'

'ऐसी कल्पना भी न करना' विमल। समाज से निकल कर भला हम कहाँ जायंगे।'— चिन्ता कुल स्वर में रजनी बोली।

'अच्छा तो मैं इस पर विचार कर के तुम्हें फिर बतलाऊंगा।' — विमल उठकर चला। रजनी भी अपना घड़ा भर कर चली।

(३

विमल के पिता चिन्तित सी दशा में मेज के सामने बैठे थे। उनके सामने एक पत्र पड़ा था। वे रह रह कर उसे पढ़ने लगते थे। इस समय उनके मन में गहरा विप्लव मचा हुआ था। वे बीच बीच में बड़बड़ाने लगते। आँखें बन्द करके कुछ सोचने लगते फिर कुछ उदास से हो जाते। उनके माथे पर बल पड़े हुए थे। आज उन्होंने दोपहर को भोजन भी नहीं किया था।

विमल की माता ने आकर पूछा — 'क्यों, उदास क्यों हो ?'

पंडित जी रो से पड़े। बोले — 'बड़ी विकट समस्या है। एक ओर समाज है और एक ओर पुत्र। बोलो — क्या करूं ? यह विमल का पत्र है। उसकी दशा को तुम देख ही रही हो।'

विमल की माता ने पत्र को पढ़ा और वे भी चिन्ता-ग्रस्त हो गयीं।

पंडित जी फिर बोले – —'बोलो, तुम्हीं बतलाओ।'

'मैं क्या बताऊँ। आप ही सोचिये। मैं तो समझती हूं विमल को बुला कर परिस्थिति समझा दीजिये। लड़का है, मान जायगा।'

'नहीं, यह बात नहीं है। मैं उसकी हालत जानता हूं। क्या तुम उसे इतना विवेकहीन समझती हो। उसने बहुत कुछ सोचने के बाद ही यह पत्र लिखा है। उसके विचार भी मैं जानता हूं।'

'तो क्या समाज को छोड़ दीजिएगा ?'

'यही तो विकट समस्या है।'

यकायक पंडित जी कठोर हो गये। बोले — 'नहीं, यह नहीं होगा। मुझे विमल से हाथ धोना मंजूर है पर मैं समाज को नहीं छोड़ूँगा। मैं समाज में शान्ति बनाए रखने के लिये अपना सर्वस्व छोड़ सकता हूँ।'

विमल की माता घबरा गयीं। पंडित जी का यह भयङ्कर रूप उनसे न देखा गया उन्होंने उन्हें समझाने के विचार से कहा —किन्तु......'

पंडित जी बात काट कर बोले—'यह मेरा अन्तिम निश्चय है। मैं इस बारे में 'किन्तु-परन्तु' नहीं सुन सकता।'

उन्होंने पत्र पर क़लम उठा कर 'अस्वीकृत' लिख दिया। और उसे विमल के पास पहुँचा देने

की आज्ञा देकर नौकर के हाथ में रख दिया।

आसन्न विपत्ति से विमल की माता का हृदय काँप उठा। आँखें उमड़ने सी लगीं। पंडित जी को अटल समझ कर वे जी भर कर रोने के लिए कमरे के बाहर जाने लगीं। जाते जाते उन्होंने देखा—पंडित जी बालकों की भाँति फूट फूट कर रो रहे थे।

* * *

दूसरे ही दिन गाँव वाले रजनी की माता का शव श्मशान ले गये। उसके एक हफ्ते बाद लोगों ने एक दिन सुबह उठकर देखा — रजनी और विमल का कहीं पता नहीं है। लोगों ने भाँति-भाँति की टिप्पणियाँ कीं। पंडित चन्द्रधर जी के शोक का पारावार न रहा।

वे उसी दिन से चिन्ताकुल रहने लगे। इस समय उनका एक मात्र आधार विमल का अन्तिम पत्र था जो उसने अपने प्रयाण की पहली रात को लिखा था।

* * *

ग्राम में 'श्री कुमार' जी सपत्नीक आने वाले थे। देश के प्रसिद्ध नेता के प्रति उस ग्राम के निवासियों ने भी स्वागत की तय्यारी कर रक्खी थी। स्टेशन पर गाँव उमड़ आया था। पंडित चन्द्रधर जी अपने साथियों सहित स्टेशन पर इधर से उधर इन्तजाम करते हुए दौड़ रहे थे। उनका हृदय आज उत्साह से भरा था। उन्हीं की चेष्टा से उस ग्राम के निवासियों को अपने देश प्रसिद्ध नेता के दर्शन का सौभाग्य प्राप्त हो रहा था। पन्द्रह साल के बाद — पुत्र विछोह होने के उपरान्त — आज ही पंडित चन्द्रधर जी के मुख मण्डल पर थोड़ी सी प्रसन्नता का आभास मिला था। वे बार बार 'कुमार' जी का पत्र जेब से निकाल कर पढ़ते थे। उन्होंने लिखा था:—

'पूज्यपाद श्रद्धेय,

कृपा पत्र प्राप्त हुआ 'श्री चरणों के दर्शनार्थ १८ ता० को दस बजे की ट्रेन से आऊँगा।'

अनुचर

'कुमार'

पत्र पढ़ कर वे और भी फूले न समाते थे। इनके बड़े नेता ने उनको 'पूज्यपाद श्रद्धेय,' और अपने को 'अनुचर' लिखा था। भला कौन इतना सौभाग्यशाली होगा। पंडित जी की प्रसन्नता का ठिकाना नहीं था।

ट्रेन आगई। 'जयघोष' से स्टेशन गूंज उठा। 'कुमार' जी पत्नी सहित शुभ्र खद्दर परिहित ट्रेन से उतरे। चन्द्रधर जी दौड़कर माला लिए हुए उनके पास पहुंचे। पर माला गले में पड़ने के पहले ही 'कुमार' जी उनके पैरों पर गिर पड़े और रोने लगे। श्रीमती 'कुमार' घुटने के बल हाथ जोड़कर दृष्टि नीची किए हुए उनके पैरों के पास बैठ गयीं। उनके नेत्रों में भी दो बड़े बड़े मोती झलक रहे थे।

ग्रामवासी अवाक् थे। उनकी समझ में ही न आया कि माजरा क्या है। पहले तो पंडित जी भी चकराये; फिर अपने बिछुड़े हुए पुत्र 'विमल कुमार' को देश-रत्न 'कुमार' के रूप में अपनी पत्नी स्वनामधन्या चन्द्रिका रूपिणी रजनी के साथ पाकर उनका हृदय भर आया। उनकी आँखों से आँसू बह चले। विमल को हृदय से लगा कर रजनी के सिर पर हाथ फेरते हुये गद्गद् स्वर में उन्होंने कहा—'तुमने मेरा नाम उज्ज्वल किया है, बेटा, मुझे तुम दोनों पर गर्व है।'

मधुकर की गुंजार

[श्री ओमप्रकाश शास्त्री]

सुनो रे, मधुकर की गुंजार !

भ्रम रहा पुष्पों पर कब से,
चूम-चूम मधु मधुकर नब में,
अनुभव-पूर्ण कह रहा सब से—
"प्रेम न करना यार किसी से,
है स्वारथि संसार !"
सुनोरे, मधुकर की गुंजार !

(२)

रूप मुग्ध मैं चला उधर को,
खिले मनोहर कमल जिधर को,
पाया मैंने उस सरवर को,
लिपटा लिया कमल-पुष्पों को ;
किया उन्हीं से प्यार।
सुनोरे, मधुकर की गुंजार !!

(३)

पैठा जाय प्रेम का प्यासा,
मधुप बना मधु-चूसत सारा,
मस्त हुआ मैं मद का मारा,
सब कुछ मैंने उस पर वारा ;
किया न नेक विचार !
सुनोरे, मधुकर की गुंजार !!

(४)

सायं समय श्रान्त सूर्य जब
चले गये छिपने अस्ताचल ।
मुँदे दुखी हो तभी कमल सब,
कैसा किया गया मुझ से छल !
छलिया है संसार !
सुनोरे मधुकर की गुंजार

(५)

बन्द रहा मैं निशि-भर उस में,
रहा ठिठुरता शीतल जल में,
कैसा फँसा प्रेम-दलदल में,
अनुभव है अब किया प्रेम का
पाकर कारागार,
सुनोरे मधुकर की गुंजार ।

(६)

हुआ सबेरा बन-गज आये,
कमल तोड़ सब खाद्य बनाये,
पर कैसे ही हम बच आये,
घायल होकर लगे सुनाने,
जग को यह गुंजार ।
सुनोरे मधुकर की गुंजार !!

सम्पादकीय

क्षमा याचना—

विशेषाङ्क के निकलने में काफी देर होगई। कुछ हमारे कृपालु पाठकों ने तो निराश होकर हमें लिखा भी है, कि विशेषाङ्क निकलेगा या नहीं! कुछेक ने व्यंग भरी हँसी भी हँसी है। कुछ भी हो पाठकों को प्रतीक्षा काफी करनी पड़ी। उसके लिए यदि वे हमें दोषी ठहराते हैं तो स्वाभाविक ही है। हमारी घोषणा के अनुसार विशेषाङ्क उनको पहिली जनवरी को अवश्य ही मिल जाना चाहिए था; किन्तु उस तिथि के बाद भी कितने दिन और बीत गए।

फिर भी यदि दयालु पाठक हमारी परिस्थितियाँ देखेंगे तो उनका रोष बहुत कम हो जायगा। मनुष्य परिस्थितियों का दास है। हमारी परिस्थितियाँ कुछ ऐसी थीं कि जिन पर हमारा तनिक भी क़ाबू नहीं था।

हमारी कठिनाइयां—

हमारे पाठक अनभिज्ञ नहीं हैं कि जीवन-सुधा अब तक वैद्यक की पत्रिका रही है। साहित्यिक पाठक तो उसके छः वर्ष के लम्बे जीवन के उपराँत भी उसके नाम से परिचित नहीं थे। अतः हम पत्रिका का साहित्यक अङ्क निकालने के लिए साहित्यिक लेखकों से रचनाओं की आशा करना एक प्रकार से अनधिकार चेष्टा करना था। लेखकों के विश्वास पात्र बनने में हमें काफी समय लगा। पाठकों को अचम्भा होगा कि सब कुछ केवल दो ही माह में हुआ है।

हमारी दूसरी कठिनाई कुछ लेखकों का असहयोग था। उन्होंने अपनी रचनाएँ भेजने से पहिले उनका मूल्य लिख भेजा और यह भी लिखा कि यदि जीवन-सुधा उन्हें उतना देने में असमर्थ है तो उसे जीने का कोई अधिकार नहीं है, उसे मर जाना चाहिए। हम इन लेखकों के भी कृतज्ञ हैं इन्होंने पत्रों के उत्तर तो दिए। कुछ लेखक तो ऐसे हैं कि जिन्होंने लगातार कई पत्र लिखने पर भी कोई उत्तर तक नहीं दिया। हमारी समझ में नहीं आता कि मनुष्यता के नाते भी कहाँ तक यह संगत था।

हमारी अन्य कठिनाई प्रेस की थी। हमारी हार्दिक इच्छा थी कि छपाई अच्छी से अच्छी हो, और मोहन प्रेस के पास उतनी सुविधाएँ नहीं थीं। अतः टाइप आदि के प्रबन्ध में भी काफी देर लगी। टाइप के प्रबन्ध के बाद भी प्रेस के कुछ आन्तरिक झगड़ों ने देर कर दी।

लेख हमारे पास बहुत से आए; किन्तु उनमें विशेषाङ्क के योग्य बहुत ही कम थे। हमारे पुराने लेखकों के लेख तो अधिकतर वैद्यक के थे जिनको हम इस अङ्क में स्थान नहीं दे सकते थे। इनके अलावा और और लेख बहुत ही मामूली थे जिन्हें मनमाना संशोधन करने पर भी अपने काम के लायक नहीं बनाया जा सकता था।

इन्हीं कारणों से इतनी देर लग गई। हम अपने कृपालु पाठकों से इसके लिए क्षमा-प्रार्थी हैं और उन्हें विश्वास दिलाए देते हैं कि भविष्य में जीवन-सुधा उन्हें ठीक समय पर ही मिल जाया करेगी।

लेखकांक' के विषय में—

पाठकों को इस विशेषाङ्क का नाम 'लेखकाङ्क' कुछ खटकेगा। वास्तव में नाम इस अङ्क के उपयुक्त नहीं है। हमारा विचार था कि प्रसिद्ध प्रसिद्ध लेखकों के पहिले चित्र होंगे, उसके बाद उनकी जीवनियाँ, तत्पश्चात् उनकी रचनाएँ। इस योजना को पूरा करने के विचार से ही इस अङ्क का नाम 'लेखकाङ्क' घोषित किया गया था, किन्तु हमें शोक है कि इस योजना में हमें सफलता न मिल सकी। इसका मुख्य कारण यह था कि अन्त तक हम साहित्यिकों के विश्वास पात्र न बन सके। दूसरे समय भी कम मिला। अक्टूबर के अन्तिम सप्ताह में इस विशेषाङ्क का काम मेरे हाथ में सौंपा गया था। उसके बाद नवम्बर के अङ्क का भी सम्पादन करना था। यों नवम्बर दिसम्बर के दो महीनों में उपयुक्त तथा मन वांछित सामिग्री भरसक प्रयत्न करने पर भी इकट्ठी न हो सकी।

फिर भी नाम को थोड़ा बहुत सार्थक बनाने के लिए अङ्क के आखीर में लेखकों की जीवनियाँ दी जा रही हैं। वह भी सब की नहीं हैं। कुछ लेखकों ने तो अपनी जीवनियाँ छापने से ही इन्कार कर दिया और कुछ ने अपनी जीवनियों के बारे में एक भी शब्द नहीं लिखा। उधर हमारे पास इतना समय भी न था कि इधर-उधर से खोज-बीन करके उनकी जीवनियाँ तैयार करते। अतः जिन लेखकों की जीवनियाँ इस में नहीं हैं वे हम से अप्रसन्न न हों। वैसे तो यह हमारी धृष्टता ही है और उसके लिए हम उनसे क्षमा भी चाहते हैं।

कृपालु लेखकों की जो जीवनियाँ दी गई हैं, वह किसी प्रकार से भी पूरी नहीं हैं। समयाभाव के कारण जल्दी में जैसी तैयार कर सके दे दी गई। दयालु पाठक, हम आशा करते हैं उनमें किसी प्रकार की भी छान-बीन नहीं करेंगे और यदि उनमें गलतियाँ रह गई हों तो उन्हें बिना ध्यान में लाए हमें सूचना दे देंगे। हम सहर्ष उन्हें अपने आगामी अङ्क में प्रकाशित कर सुधार देंगे।

इसके अतिरिक्त जगह-जगह रचनाओं में अशुद्धियाँ भी रह गई हैं। उनके विषय में अधिक क्या लिखा जाय! हमारी हार्दिक अभिलाषा यही रही थी कि जहाँ तक हो सके अङ्क शुद्ध और साफ़ निकले और वैसी कोशिश भी की। इतने पर भी गलतियाँ रह ही गई हैं। हम अपने पाठकों से प्रार्थना करते हैं कि वे उन्हें स्वयं ही सुधार लें।

हमारी विशेष कृतज्ञता—

वैसे तो हम सभी साहित्यिकों के कृतज्ञ हैं कि उन्होंने कृपा कर के हमें इतना सहयोग दिया। बिना उनके इस सहयोग के हम कुछ भी तो नहीं कर पाते। पर श्री जैनेन्द्र कुमार के हम विशेषरूप से कृतज्ञ हैं। आप ही की सहायता से हमें इस अंक के कृपालु लेखकों से परिचय मिला, जिससे हमारा काम बहुत-कुछ सुगम होगया!

जैनेन्द्र जी के अतिरिक्त हम श्री 'अज्ञेय' के भी कम आभारी नहीं हैं। आपकी विशेष कृपा से ही इस अंक के कई-एक दुष्प्राप्य फ़ोटोग्राफ़ हमें मिल सके हैं। मुंशी अजमेरी जी तथा श्री प्रेमचन्द जी के चित्र तो चाहे जितना मूल्य देने पर भी इतने सुन्दर हमें न मिल पाते। अतः हम आप के भी कृतज्ञ हैं।

श्री विष्णुदत्त प्रभाकर के कुछ जीवनियों में सहायता देने के लिए और श्री जयंतकुमार के टाइटिल-पेज बनाने के लिए हम आभारी हैं।



श्री शरत्‌चन्द्र चटर्जी

पुष्पाञ्जलि—

इस साहित्यिक अंक को प्रकाशित करते समय हमें बार-बार कुछ हिन्दी-साहित्य के रत्नों की याद आ जाती है जो हमसे छीन लिए गए हैं, और ऐसे छिन गए हैं कि अब कभी लौट कर हमारे पास वे नहीं आवेंगे।

श्री मुंशी अजमेरी जी, श्री प्रेमचन्द जी, श्री रामदास जी गौड़ तो इस विशेषाङ्क की योजना से पहिले ही चले गए थे; किन्तु श्री जयशंकर 'प्रसाद' गत् १५ नवम्बर को और श्री ब्रजमोहन जी वर्मा इस १० दिसम्बर को गए हैं। 'प्रसाद' जी को तो दो-तीन पत्र भी लेखकाङ्क में प्रकाशनार्थ कोई रचना भेजने के लिए भेजे गए थे। शायद वे उनकी आँखों के सामने आए हों, या उनके बारे में उनसे जिक्र किया गया हो।

हमें शोक है कि हम अपनी इस तुच्छ भेंट को उनके सम्मुख न रख सके। वे सब आज को होते तो हमें न जाने कितना प्रोत्साहित करते; किन्तु हमारा दुर्भाग्य है कि हम उनकी शुभ कामनाएँ न ले सके।

फिर भी यह अंक उनकी स्वर्गीय उच्चात्मा के लिए पुष्पाँजलि है।

काल की क्रूर गति जो न करे सो थोड़ा है। "प्रसाद" जी के निधन से निकले आँसू अभी सूखने भी न पाए थे कि सूचना मिली है श्रीयुत शरच्चन्द्र भी हमारे बीच से चले गए।

इस समय उनकी अवस्था लगभग ५८ वर्ष के थी। आपने आजन्म विवाह नहीं किया था।

साहित्य में उनका कौनसा स्थान था, यह क्या शब्दों में कहा जा सकता है। वे उपन्यास-सम्राट थे, और उनका स्थान श्री रवीन्द्रनाथ ठाकुर से भी कहीं ऊँचा था।

आप अपनी रचनाओं में समाज की बुराइयों तथा भलाइयों का बड़ा ही सुन्दर चित्र खींचते थे। मानव वेदना का वर्णन करने में तो कोई भी लेखक आपकी समता नहीं कर सकता था।

आपके उपन्यासों और कहानियों का अन्य कई भाषाओं में भी अनुवाद हुआ है।

ईश्वर से हमारी प्रार्थना है कि उनकी पवित्रात्मा को शान्ति दें, और उनके शोक-पीड़ित परिवार को इस भीषण वेदना के सहने की शक्ति दें।

'नए-नए लेखकों में'

श्री प्रभाकर माचवे की यह कहानी बहुत से नये-नये लेखकों को हतोत्साहित करेगी। पर हम क्या आशा न करें कि वे नए-नए लेखक जिनकी जड़ कच्ची नहीं है और जो अपनी बुद्धिमत्ता में विश्वास कर साहित्य में घुसे हैं, उनके लिये यह कहानी अमृत का भी काम करेगी ? माना गालियाँ बुरी होती हैं; किन्तु क्या उन्हें लेकर गाली खाने वाले को मिट जाने मात्र का ही रास्ता शेष रह जाता है ?

यह तो सच है कि युग की माँग को देखते हुए 'राजा-रानी के इश्क के क़िस्सों के Romance के पाश फेंक देने होंगे।' साहित्य में अब उनको स्थान नहीं है। समय की प्रगति के अनुसार साहित्य में बहुत परिवर्तन हो गया है। साहित्य अब गंभीर चीजें चाहता है। वही चीजें टिकाऊ होंगी। भावुकता के क्षणिक आवेग में लिखी हुई चीजें उतनी ही स्थाई होती हैं, जितनी भावुकता स्वयं। जब तक कि वे ठोस न होंगी, साहित्य में चिर-स्थान उन्हें कभी भी नहीं मिल सकेगा।

यह तो नहीं है कि प्रेम के क़िस्से साहित्य से बिल्कुल मिट ही जांयगे। सूरदास के कृष्ण, तुलसी के राम, मीरा के गिरधर गोपाल उनके प्रेमी ही तो थे, और उनकी प्रेम-कथाएं साहित्य की अमर कृतियाँ हैं; किन्तु सूर, तुलसी और मीरा का प्रेम (आज कल की तरह) सस्ता प्रेम नहीं था। तभी तो उनके प्रेमपूर्ण साहित्य को इतना ऊँचा स्थान मिला।

हमारे नए-नए लेखक भी यदि अपने क़िस्सों के प्रेम को इतना ही उच्च और मूल्यवान बना सकें तो अवश्य ही उनकी कृतियों को साहित्य में स्थान मिलेगा। पर क्या यह सम्भव है कि वे वैसा कर सकेंगे ? क्या सूर, तुलसी, मीरा, आदि बनने की उन में शक्ति है, साहस है ? अत: उन्हें यही उचित और संगत है कि अपने निर्धारित विशाल-भवन की नींव बालू पर न रक्खें जो जरा से झोंके पर नीचे आ पड़े। वे उसे मजबूत बनावें जिससे प्रलय में भी वह अचल खड़ी रहे।

'कविता और जीवन—एक कहानी'

इसमें 'अज्ञेय' जी ने 'कहानी से अधिक कुछ' कहा है जो हिन्दी काव्य के सेवियों को रुचिकर न होगा। यही नहीं, सम्भव है जैसा 'अज्ञेय' जी अनुमान करते हैं, वे 'गाली' भी देंगे।

वास्तव में कवि की यह कड़ी समालोचना है, यदि यह तनिक भी आलोचनात्मक होती तो शायद इसका तीखापन बहुत कुछ कम हो जाता। किन्तु 'अज्ञेय' जी ने पक्की धारणा करके इसे लिखा है कि 'कलम घिसने का' उन्हें कुछ भी पारिश्रमिक नहीं मिलेगा। इसीलिए एक ओर का क्रोध उन्होंने दूसरी ओर उतारा है। सोचा होगा पारिश्रमिक तो मिला नहीं, फिर जी की थोड़ी-बहुत बातों को निकाल कर हल्के क्यों न हो लें।

फिर भी यदि ध्यान-पूर्वक देखा जाय तो कहानी में गुस्सा होने लायक कुछ भी तो नहीं है। कवि की पहुँच बड़ी ऊँची होती है, असम्भव को सम्भव और सम्भव को असंभव तक बना देना उसके बाएं हाथ का खेल है। किसी ने कहा भी है—

जहाँ न पहुँचे रवि
वहां पहुँचे कवि।

अत: कवि वहाँ भी पहुँच जाता है, जहाँ सूर्य भी पहुँचने में असमर्थ है।

तो फिर 'शिवसुन्दर' सूर्य से भी अधिक प्रभावशाली—'कवि' बनने की इच्छा करता है और उस साधना में निरत रहता है तो इसमें अनुचित क्या है ?

और कविता है कहाँ नहीं ! कवि का क्षेत्र तो बहुत ही विस्तृत है। उसमें 'प्रकृति, नदी-नाले,

पलाश के उपवन...और दूर कहीं किसी नूपुर-वलयित रहस्यमयी की पगध्वनि, तमोलिन का सिर मटका कर मुस्करा देना, हलवाई की लड़की का लाल हो आना, माँगने वाली औरत का 'बाबू' के गुलाबी गालों पर मरना...'आदि सभी कुछ कवि के क्षेत्र में आ जाते हैं। कवि का क्षेत्र तो निस्सीम है। उसी निस्सीम क्षेत्र में ही तो कवि को कविता मिलती है।

फिर 'अज्ञेय' जी ने 'शिव सुन्दर' के मस्तिष्क में उन बातों को स्थान दे दिया है तो उसमें अनुचित क्या है!

लेखकों की कठिनाइयाँ—क्यों ?

इस विशेषाङ्क के अधिकतर लेखकों ने हमें लिखा है कि उनकी रचनाओं के लिए उन्हें पारिश्रमिक अवश्य कुछ न कुछ न मिलना चाहिए। कुछ ने लिखा है कि पारिश्रमिक १५) से कम न हो, किसी ने लिखा है—आप २०) दें तो हम अपनी रचना भेजें। कुछ कृपालु लेखकों ने रचना प्रकाशित होने से पहिले ही पारिश्रमिक भेज देने का आग्रह किया है।

इन सब से यही अनुमान किया जा सकता है कि लेखकों की आर्थिक दशा संतोषजनक नहीं है।

वैसा क्यों है ?

लेखकों की ओर ध्यान-पूर्वक देखते हुए हमें यही लगता है कि लेखकों ने अपनी यह दशा स्वयं ही बना ली है। वह लिखना चाहते हैं, इस लिए नहीं लिखते; बल्कि इस लिए लिखते हैं कि उसके बदले में उन्हें पैसा मिले। इस स्वार्थभाव के आते ही लेखक अपने आदर्श से गिर जाता है। यही नहीं जो कुछ वह लिखता है उसमें भी इस स्वार्थ भाव की झलक स्पष्ट दिखाई देती है। तो फिर वह क्या साहित्य होगा!

लिखने को व्यवसाय बना कर उस पर ही पेट भरने के लिये निर्भर रहने का समय आज कल नहीं है। मैं यह नहीं कहता कि व्यवसायी लेखक (Professional Writers) हों ही नहीं। वे अवश्य हों; किन्तु मात्र गिने चुने। वे पैसे के लिए लिखें। पर अन्य लेखकों का लिखना लिखने के लिए (Writing for writing's sake) हो, उसमें पैसे का स्वार्थ न हो, साहित्य-सेवा-भाव हो।

पेट भरने के लिए उन्हें अन्य किसी व्यवसाय का अनुकरण करना होगा। इस प्रकार पेट की समस्या हल करने के पश्चात् यदि उनके जी में लिखने की आती है तो लिखें, अन्यथा नहीं।

इस प्रकार व्यवसाई लेखकों को भी पैसा मिल जाता है और अन्य लेखकों की भी पहेली हल हो जाती है।

अब प्रश्न होगा कि ऐसा व्यवसाय रक्खा कौन सा है जिसका स्वावलंबन किया जाय? इसका उत्तर तो राजनीति (Politics) या अर्थ-शास्त्र (Economics) देगा। मैं इतना अवश्य कहूँगा कि आज कल युवकों में अधिकाँश नौकरी की खोज करते हैं। उनमें initiative की शक्ति नहीं होती, उनमें साहस की कमी होती है। इन दुर्बलताओं के साथ साथ दूसरी ओर उनमें बहुत सी अन्य अनावश्यक बातें पैदा हो हो जाती हैं। छोटे-छोटे काम करने में उन्हें लज्जा आती है। कुछ भी सही, इस विचार से हमारा इस समय संबंध नहीं है।

तो मैं कह रहा था कि पैसे के स्वार्थ की झलक दर्शाते हुए जो साहित्य निकलेगा वह स्थायी नहीं होगा।

"स्थायी साहित्य वह जिसमें मानव की अधिक स्थायी वृत्तियों का समर्पण हो।"

अतः स्थायी साहित्य के प्रादुर्भाव के लिए अपने को बहुत कुछ बनाना पड़ेगा।

हमारी आगामी योजना—

इस साहित्यिक अंक को निकालने के पश्चात् विचार हुआ है कि जीवन-सुधा को अब साहित्यिक रूप ही दे दिया जाय। उसे साहित्यिक बनाने की आवश्यकता यों भी प्रतीत होती है कि दिल्ली से एक भी साहित्यिक मासिक पत्रिका नहीं निकलती है। इसी कमी को दूर करने के लिए हमें सलाह दी गई है कि जीवन-सुधा को ही हम साहित्यिक बना दें। एकदम तो पूर्णरूप से उसे साहित्यिक न बनाया जा सकेगा, किन्तु धीरे-धीरे कुछ समय पश्चात् वह वैसी बन जायगी, ऐसा पक्का विश्वास है।

अपनी इस योजना की सफलता के लिए हम को कुछ परिवर्त्तन भी करने पड़े हैं। प्रति-मास अब तक जीवन-सुधा ४० पृष्ठों की निकलती रही है। अब वह ८० पृष्ठों की निकला करेगी और उसका वार्षिक चन्दा भी अब २॥) की जगह ४) होगा।

हमारी इस योजना की सफलता बिल्कुल हमारे कृपालु पाठकों तथा ग्राहकों के ऊपर निर्भर है। यदि उनका सहयोग जैसा कि इस समय मिला है, भविष्य में भी मिलता रहा तो हमें पूर्णाशा है कि हमारे सभी विचार पूरे हो जाँयगे।

किसी अंक की अच्छाई-बुराई तो उसकी सामिग्री के ऊपर निर्भर होती है। यदि अच्छी सामिग्री हमें अपने पाठकों की कृपा से प्रति मास मिलती रही तो शीघ्र ही सफलता मिल जायगी, और जीवन सुधा थोड़े ही समय में काफी उन्नति कर जायगी।

दयालु पाठकों से हमारा अनुरोध है कि भविष्य में वे स्वयं हर मास कोई न कोई रचना अवश्य भेजते रहें।

हमारी कृतज्ञता, और धन्यवाद।

अन्त में हम अपने सभी दयालु लेखकों को उनकी कृपा के लिए हार्दिक धन्यवाद देते हैं, और उन्हें विश्वास दिलाए देते हैं कि उनकी इस अनुकम्पा के लिए हम आजन्म उनके कृतज्ञ रहेंगे।

कुछ लेखकों की रचनायें स्थानाभाव के कारण इस अङ्क में नहीं जा सकी हैं। हम उन लेखकों से क्षमा चाहते हैं। उन रचनाओं को आगामी अङ्क में छापने की यथा साध्य चेष्टा की जायगी। हम आशा करते हैं कि कृपालु लेखक बुरा न मानेंगे।

—यशपाल जैन
बी. ए. एल-एल. बी.

जीवन-सुधा



यशपाल जैन, बी० ए०, एल-एल० बी०
(सम्पादक- जीवन-सुधा)

जीवनियां

श्री मैथिलीशरण गुप्त

आपका जन्म सं० १६४३ चिरगाँव झाँसी में हुआ। अब आप लगभग ५२ वर्ष के हैं। इस उमर में आकर आपको पुत्र वियोग भी सहना पड़ा है। इतने कष्ट और परिश्रम के बाद भी पाठक का अन्धा स्वार्थ आशा करता है— वे कुछ और भी लिखें।

उनकी कुछ मौलिक और कुछ अनुदित पुस्तकें निम्न लिखित हैं —

भारत भारती, जयद्रथ-बध, रंग में भंग, किसान, शकुन्तला, गुरुकुल, हिन्दु, तिलोत्तमा, पलासी का युद्ध, चन्द्रहास, पंचवटी, मेघनाथ बध, स्वदेशी संगीत, वीराङ्गना, साकेत, यशोधरा, द्वापर सिद्धराज और मंगल-घट।

आपका व्यक्तित्व बड़ा सरल और महान है। आप मिलनसार, निरभिमानी, शुद्ध और शान्ति प्रकृति के मनुष्य हैं। वैष्णव सम्प्रदाय के मानने वाले होने पर भी आप अनुदार नहीं हैं। 'द्वापर' में जो भाव व्यक्त हुये हैं उनमें एक महान क्रान्ति की झलक है। सत्य ही कवि क्या किसी सम्प्रदाय विशेष का होता है। कवि तो मानवता का प्रतिनिधि है। फिर गुप्त जी तो युग प्रतिनिधि कवि हैं ही। उनके लिए कुछ भी बाधा-बन्धन क्यों बनें।

गुप्त जी की कविता की क्या विशेषता है, यह बात अब हमारे कहने और पाठक के जानने की नहीं रह जाती। काव्य के विभिन्न अंगों को उन्होंने छुआ है। जनता की व्याप्त सहानुभूति उनके साथ है, उनकी कविता में मानवता ने साकार होकर अपना एक नया संसार बसाया है जिसमें सुख और दुख, सम्वेदन और चिन्तन, कल्पना और कौशल, प्रकृति और परमात्मभाव समान रूप से इकट्ठे हुये हैं।

अन्त में पाठक हमारे साथ कहें — स्वयभू जो स्वयं कवि हैं उन्हें चिरायु करें।

—वि०

दिनेश नन्दिनी चोरड्या—

गद्य गीतों का साहित्य में विशेष स्थान है और गद्य गीत लिखने में श्री दिनेश नन्दिनी जी का अपना स्थान है। श्री वियोगीहरि जी के बाद आप ही जीवन की भावनाओं को इतनी सफलतापूर्वक अङ्कित करने में समर्थ हुई हैं। वास्तव में आपने एक प्राकृतिक आवश्यकता को समझा है और उसकी पूर्ति में जी-जान से संलग्न हैं। 'शबनम' की भूमिका में प्रो० राम-कुमार वर्मा लिखते हैं:—

'दिनेश नन्दिनी जी का संसार भस्म और अन्धकार से बना हुआ है पर प्रकाश पाने के लिए उसके कण अनन्त गति से भ्रमण कर रहे हैं। उसमें शीत का आतंक रहते हुए भी बसन्त के स्वागत की आकाँक्षा है। मानव जीवन की यही कामना उसे परिष्कृत करती हैं, उसे उस आरसी का रूप देती है जिसमें ईश्वरीय शक्ति अपने रूप और यौवन की छवि निहारती है।'

वैसे तो आपकी रचनायें समय समय पर उच्च कोटि की साहित्यिक पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित होती रहती हैं; परन्तु पिछले वर्ष आपकी पुस्तक 'शबनम' पर ५०० रु० का 'सेकरिया पुरस्कार' हिन्दी साहित्य सम्मेलन की ओर से प्रदान किया गया है।

आपकी दूसरी पुस्तक 'मौक्तिक माल' गद्य- काव्यों का ताजा संग्रह है।

हिन्दी माता को आपसे अभी बहुत सी आशायें हैं।

— वि०

श्री रामकुमार वर्मा एम. ए.—

हिन्दी काव्य जगत का कौन ऐसा अभागा होगा जो श्री रामकुमार वर्मा के नाम से परिचित नहीं है।

वर्मा जी प्रयाग विश्वविद्यालय से एम. ए. पास करने के पश्चात कई वर्षों से प्रयाग विश्व-विद्यालय में ही हिन्दी-विभाग में प्रोफेसर हैं। आपकी जन्म-भूमि मध्य-प्रदेश है।

वर्मा जी बड़े ही सुन्दर कवि हैं। आपकी कविताओं की 'रूप राशि' 'चित्र रेखा' 'चन्द्र-किरण' आदि पुस्तकें निकल चुकी हैं। 'चन्द्र- किरण' अभी हाल ही में निकली है। वह स्फुटिक कविताओं का संग्रह है। 'चित्र रेखा' पर वर्मा जी को २००रु० का देव-पुरस्कार मिला था।

इन पुस्तकों के अतिरिक्त गद्य में भी वर्मा जी ने 'कबीर का रहस्यवाद' लिखा है।

कुमार रहस्य वादी हैं; कल्पना का कवि है; वैराग्य और विषाद का चित्रकार है, और सबसे बढ़ कर वह आध्यात्मिक निराशावाद का कुशल गायक है।

सुन्दर में असुन्दर देखने की भावना को इन पंक्तियों में देखिए:—

क्या शरीर है ? शुष्क धूल का-
थोड़ा सा छवि जाल,
उस छवि में ही छिपा हुआ है,
वह भीषण कंकाल ।

आपकी अन्य पुस्तकें — वीर-हमीर; कुल-ललना; प्रणयपरिचय; भीष्म प्रतिज्ञा; माँ; सरोजिनी; चित्तौड़ की चिता; स्वदेश गान, निशीथ; अभिशाप; अञ्जलि आदि हैं।

अभी तो वर्मा जी से बहुत कुछ आशाएँ हैं।

—य०

श्री प्रतापनारायणसिंह 'पद्म,—

आप बिहार के पूर्णिया प्राँत के निवासी हैं और कुछ समय से गोवर्धन साहित्य महा विद्यालय, देवघर में हिन्दी-साहित्य का अध्ययन कर रहे हैं। आपने हाल ही में लिखना आरम्भ किया है। निबन्धों के अतिरिक्त आप कहानी और एकांकी नाटक भी लिखते हैं।

—य०

श्रीयुत यशपाल जैन बी. ए. एल-एल. बी.—

आपके विषय में इतना कह देना बस न होगा कि आप प्रस्तुत पत्र के सम्पादक हैं। तब सम्पादक का परिचय क्या ! पत्र के प्रत्येक अक्षर में उसका वास है। पाठक स्वतंत्र हैं चाहे जिस रूप में उसे देखें और समझें।

आप संयुक्त प्राँत के अन्तर्गत अलीगढ़ जिले के निवासी हैं। जीवन की लड़ाई लड़ने के लिए आप हिन्दी के सुप्रसिद्ध दार्शनिक लेखक श्री जैनेन्द्रकुमार के साथ देहली में रहते हैं। इसी वर्ष आपने प्रयाग विश्व विद्यालय से एल.-एल. बी. पास किया है। आपकी अवस्था २३-२४ वर्ष के लगभग है।

आप कहानी लेखक होने के साथ ही साथ सुकवि भी हैं। व्यक्तित्व आपका सुलझा हुआ है। संभवत: उसी से वकालत छोड़ कर साहित्य में घुसे हैं। तो भी आप अभी नये हैं। आपका विकास अभी होना है। तब हम क्यों न आशा करें आप शीघ्र ही एक कुशल सम्पादक, सफल कहानी लेखक, सुकवि तथा अन्य साहित्यक विषयों के सुलेखक के रूप में प्रसिद्ध होंगे।

—वि०

श्री जैनेन्द्र कुमार—

आपका जन्म सन् १६०५ में कौड़ियागंज (अलीगढ़) में हुआ था। १३-१४ वर्ष की अवस्था में मैट्रिक पास करने के पश्चात् आप काशी विद्याध्ययन के लिए चले गए; किन्तु देश की धधकती आग में कूद पड़ने के कारण आपको पढ़ाई शीघ्र ही समाप्त करनी पड़ी।

सन् २८ से जैनेन्द्र जी का साहित्यिक जीवन आरम्भ होता है। आपकी मौलिकता और अद्भुत तथा नई शैली ने आपको शीघ्र ही हिन्दी साहित्य जगत में प्रसिद्ध कर दिया।

आपने अभी बहुत थोड़ा लिखा है। कहानी संग्रह 'वातायन', 'एक रात', 'फांसी' 'दो चिड़ियाँ' हैं तथा उपन्यास 'परख', 'सुनीता', 'त्याग पत्र' हैं। 'परख' पर आपको हिन्दुस्तानी-एकेडेमी प्रयाग की ओर से ५००) का पुरस्कार मिला था। आपके निबन्धों आदि का एक संग्रह अभी हाल ही में प्रकाशित हुआ है।

जैनेन्द्र जी बड़े सफल कलाकार हैं। उपन्यासकारों में तो आपका आज कल सब से ऊँचा स्थान है। स्वर्गीय प्रेमचन्द्र के निधन के बाद से आप को ही उपन्यास-सम्राट कहा जा सकता है।

भाषा पर आपका पूर्ण अधिकार है। आपकी भाषा में सरसता बहुत पाई जाती है, किन्तु जैनेन्द्र जी भाषा के माधुर्य में कभी भी भावों को छिपने नहीं देते। आपकी सभी कहानियों, उपन्यासों, तथा निबन्धों में भावों की प्रधानता रहती है। भाषा तो आश्रित मात्र रहती है।

आपका अंग्रेजी पर भी समानाधिकार है। यद्यपि अंग्रेजी में जैनेन्द्र जी ने अभी अधिक नहीं लिखा है; किन्तु आशा की जाती है कि अंग्रेजी के भी आप सफल लेखक होंगे।

जैनेन्द्रजी अभी ३२ वर्ष के नव युवक हैं। हम प्रार्थना करते हैं कि ईश्वर आपको चिरायु करें जिससे आप अधिक से अधिक साहित्य-सेवा कर सकें।

जैनेन्द्र जी अपनी पत्नी, दो पुत्रों तथा एक पुत्री के साथ दिल्ली में रहते हैं।

व्यक्तिगत परिचय के लिए इसी अङ्क में श्री प्रभाकर माचवे का 'जैनेन्द्रकुमार: एक व्यक्तित्व चित्र' लेख देखिये।

—य०

महात्मा भगवानदीन जी—

साहित्यिक तथा राजनैतिक क्षेत्र में आज बहुत कम ऐसे होंगे जो महात्मा भगवान दीन जी के नाम से परिचित न हों।

आपकी अवस्था लगभग ५२ वर्ष के है। आपका जन्म अतरौली में हुआ। आरम्भ में आप रेलवे विभाग में स्टेशन मास्टर थे। २४ वर्ष की अवस्था में नौकरी तथा घर-बार छोड़ कर आपने देश-सेवा तथा परोपकार का काम अपने ऊपर ले लिया। उन्हीं दिनों महात्मा जी ने हस्तिनापुर में एक आश्रम की नींव डाली जिसमें बहुत दिनों तक आप स्वयं अध्यक्ष का काम करते रहे।

महात्मा जी स्वभाव के बड़े सरल हैं। इसके अतिरिक्त आप हँसमुख भी बहुत हैं।

बच्चों के विषय में आपका अध्ययन अत्यन्त गहन है। दैनिक हिन्दुस्तान के बाल-विनोद कालम में आप बहुधा लिखते रहते हैं।

जेल में महात्मा जी ने १२०० दोहे लिखे हैं जिनमें से अधिकतर अभी अप्रकाशित हैं।

महात्मा जी का रहन-सहन बहुत ही साधारण है। जाकट-जाँघिया और चादर, बस यही आपका पहनावा है।

हिन्दी के प्रसिद्ध लेखक श्री जैनेन्द्रकुमार आपके भानजे हैं।

महात्मा जी आज कल हिसार में रहते हैं। आपकी धर्मपत्नी और आपके पुत्र सागर (सी. पी.) में हैं।

—य०

श्री प्रभाकर माचवे एम. ए. साहित्य-रत्न—

श्रीयुत माचवे आज-कल माधव कालिज उज्जैन में दर्शन शास्त्र के प्रोफ़ेसर हैं।

आप हिन्दी के अच्छे लेखक हैं। आपकी कहानियां तथा अन्य रचनाओं की भाषा बड़ी गूढ़ होती है उससे आपकी गहन अध्ययन-शीलता का अनुभव होता है।

माचवे जी की सीमा गद्य तक ही सीमित नहीं है, आप सुन्दर कवि भी हैं।

आपके सम्पादकत्व में श्री जैनेन्द्र कुमार के निबंधों का संग्रह "जैनेन्द्र के विचार" के नाम से अभी-अभी निकला है। माचवे जी ने प्रत्येक निबन्ध पर वृहत टिप्पणी दी है।

—य०

श्री इलाचन्द जोशी—

आप हिन्दी-साहित्य के पुराने सेवी हैं। विश्व-मित्र को जो आधुनिक अन्तर्राष्ट्रीय रूप मिला है उसका श्रेय आप ही को है। आपका जन्म नवम्बर सन १९०२ में अलमोड़ा में हुआ।

आरम्भ में जब कि विश्वमित्र निकला था तो आप ही अपने बड़े भाई श्री हेमचन्द जोशी के साथ उसका सम्पादन करते थे। उस समय आप हिन्दी साहित्य पर बड़ी ही सुन्दर आलोचनायें लिखा करते थे।

इलाचन्द जी स्वभाव के बड़े सरल हैं और बड़े ही मिलनसार हैं।

आप प्रसिद्ध कवि हैं। आपकी कविताओं का संग्रह अभी हाल ही में 'विजनवती' के नाम से निकला है। जोशी जी की कविताओं में सौंदर्य है। आपका एक उपन्यास 'घृणामयी' भी प्रकाशित हो चुका है। इनके अतिरिक्त 'परदेशी' तथा 'सन्यासी' उपन्यास शीघ्र ही प्रकाशित होने वाले हैं।

जोशी जी आजकल प्रयाग में रहते हैं।

—य०

श्री उषादेवी मित्रा—

आप का जन्म जबलपुर केदत्त विला के प्रसिद्ध रईस दत्त वंश में हुआ।

आप की प्रतिभा वंशगत है। आप के पिता स्वर्गीय बाबू हरिश्चन्द्र दत्त साहित्य सेवी थे उन्होंने उर्दू में और शिकार की (अंग्रेजी) कई पुस्तकें लिखी थीं। आप की मातामही श्री मती विनोदिनीदेवी अपने समय की अच्छी सुकवि-यित्री थीं।

उषादेवी जी के पति श्री क्षितीशचन्द्र मित्र इंजीनियर थे। विधवा होने के बाद से आप जबलपुर में ही रहती हैं।

आप की प्रतिभा से प्रभावित होकर आप के मामा ने कलकत्ते में लेजाकर आप को संस्कृत और साहित्य की कई साल तक शिक्षा दी।

उषादेवी जी ३-४ वर्ष से हिन्दी में लिख रही हैं। इस बीच में आपने कोई सवा सौ कहानियाँ और तीन उपन्यास तथा एक नाटक लिखा है। 'वचन' का मोल तथा 'पिया' उपन्यास प्रकाशित हो चुके हैं। दो कहानी-संग्रह 'मेघ-मल्लार' तथा 'आँधी के छन्द' छप रहे हैं। तीसरा उपन्यास जीवन की 'मुस्कान' और नाटक 'निदर्शन' अप्रकाशित हैं।

—य०

श्री सियाराम शरण जी गुप्त—

आप चिरगाँव (झाँसी) में रहते हैं। अपका जन्म भाद्र पद शुक्ल १५ स० १६५२ को हुआ। सुप्रसिद्ध राष्ट्रीय कवि श्री मैथली शरण गुप्त के आप छोटे भाई हैं।

व्यापक सहानुभूति और सम्वेदन आपकी रचनाओं के विशेष गुण हैं पाठक के हृदय के अन्तरतम कोर को छूती हुई करुणा मानों आपकी रचनाओं से बही पड़ती है। यही कारण है कि आपकी कहानियाँ इतनी सजीव हो उठती हैं। मानों आपकी भाषा शुद्ध और परिमार्जित होती ही है पर किसी दृश्य का शब्द चित्र अंकित करने की आप में अद्भुत क्षमता है।

सियाराम शरण जी की कविता में अनुभूति है, चिन्तन है और है। कलाकार की कुशलता तभी वह स्थान-स्थान पर मर्म को छू जाती है और तब चिरकाल तक पाठक के मन और मस्तिष्क में द्वन्द चलता रहता है।

कवि का व्यक्तित्व इतना सौम्य और सरल है कि अचरज सा होता है इसके हृदय में पीड़ित मानवता की इतनी व्यापक भावना कैसे समाई है। ऊपर से भोले पर भीतर पैनी दृष्टि छिपाये हुये हैं। दमा ने जबरदस्ती आपको तपस्वीर सा बना डाला है। भेष भूषा से भी आप गंवार से जान पड़ते हैं।

सियाराम शरण जी मात्र कवि ही नहीं हैं उपन्यासकार और कहानी लेखक भी हैं। कवि का सम्वेदन यहाँ भी मूर्तरूप में उतरा है। आर्द्रा, दूर्वादल विषाद, मृण्मयी आदि आपकी कविताओं के संग्रह हैं। 'मौर्य विजय' और 'अनाथ' दो छोटे-छोटे काव्य हैं। 'पाथेय' कहानी संग्रह और 'गोद' 'अंतिम आकांक्षा' और 'नारी' उपन्यास हैं।

इन सब बातों के अलावा श्री मैथिलीशरण गुप्त के महाकाव्यों के पीछे आप ही की प्रेरणा काम कर रही है।

—य०

श्री चन्द्रशेखर शास्त्री—

शास्त्री जी दिल्ली के निवासी हैं। आपकी अवस्था ३७-३८ वर्ष के लगभग है। आरम्भ में आपने काशी में शिक्षा पाई थी।

आप बड़े अध्ययन शील हैं, और अब तक कई पुस्तकें तथा अनुवाद प्रकाशित कर चुके हैं।

शास्त्री जी की 'पृथ्वी और आकाश' 'हिटलर महान' 'आधुनिक आविष्कार' 'आत्म निर्माण' 'चरित्र निर्माण' 'न्याय-बिन्दु' तथा अन्य पुस्तकों के अतिरिक्त 'राष्ट्रनिर्माता मुसोलिनी और 'शरीर विज्ञान' अभी हाल ही में प्रकाशित हुए हैं।

श्री सच्चिदानंद हीरानन्द वात्स्यायन 'अज्ञेय'—

'अज्ञेय' जी हिन्दी साहित्य के पुराने प्रसिद्ध लेखक हैं।

आप पंजाबी ब्राह्मण हैं।

वैसे सुप्रसिद्ध कहानी लेखक और उपन्यासकार तो आप हैं ही; किन्तु उससे कहीं अधिक और ऊँचे आप कवि हैं। आपकी कविताओं में भावों का समावेश इतनी सिद्ध हस्तता से किया जाता है कि वे पाठक के हृदय को गुदगुदा देते हैं।

आप कुछ समय तक 'सैनिक' के सम्पादक रहे थे, और आज कल 'विशाल-भारत' का सम्पादन कर रहे हैं।

'अज्ञेय' जी अंग्रेज़ी के भी बड़े सुन्दर लेखक हैं। अंग्रेजी भाषा पर आपका अधिकार है।

इन सब के अतिरिक्त आपको फोटोग्राफी से भी बहुत शौक है और आप अच्छे आर्टिस्ट भी हैं।

आपकी कहानियों का एक संग्रह 'भग्नदूत' के नाम से प्रकाशित हो चुका है और दूसरा हाल ही में 'विपथगा' नाम से प्रकाशित होने वाला है।

'अज्ञेय' जी की अवस्था लगभग २८ वर्ष के है। हमें विश्वाश है कि हिन्दी साहित्य को अभी आप से बहुत कुछ मिलेगा।

—य०

श्री रामनरेश त्रिपाठी—

हिन्दी मन्दिर प्रयाग के संचालक त्रिपाठी जी ने साहित्य के विभिन्न अंगों पर लेखनी उठाई है। कवि वे हैं। कहानी उपन्यास भी उन्होंने लिखे हैं। केवल पाँच ही दिन में नाटक लिखने की बात भी हमने सुनी है। उन्होंने बालोपयोगी अनेक पुस्तकें निकाली जो मद्रास ऐसे प्रान्तों में भी हिन्दी प्रचार में सहायक हुई हैं। लेकिन हिन्दी, उर्दू, संस्कृत आदि भाषाओं के कवि और उनकी कविताओं का संग्रह जो उन्होंने कविता कौमुदी के नाम से चार भागों में प्रकाशित किया है, वह उनकी अपूर्व देन है। ग्राम-गीतों का संग्रह भी उन्होंने किया और जहाँ तक हमें जान पड़ता है इस ओर इनका ही ध्यान सब से पहिले गया था।

तो भी हम समझते हैं कवि के रूप में जो सफलता उन्हें मिली वह उपन्यास लेखक के रूप में न प्राप्त हो सकी। उनके 'पथिक' नामक खण्ड काव्य की चर्चा बहुत दिनों रही। त्रिपाठी जी ने समय की विचारधारा का लाभ उठा कर 'पथिक' 'मिलन' तथा 'स्वप्न' नामक देश-प्रेम से ओत-प्रोत तीन खंड काव्य-लिखे। उनकी ख्याति के पीछे कविता से अधिक देश प्रेम की भावना थी। भारत के भविष्य की उज्ज्वल भावना का जो चित्र खींचा उसने बरबस ही पाठक के मन को मोह लिया।

इन काव्यों में कवि ने जो प्रकृति-चित्रण किया है वह अद्भुत चीज है। जान पड़ता है कवि को प्रकृति से विशेष अनुराग है तभी वह अपनी कल्पना से अछूती रख कर भी उसे सजीव बना देता है।

भाषा की सफाई पर ध्यान रखते हुये भी आप हिन्दी, उर्दू दोनों के छन्दों का समान रूप से व्यवहार करते हैं। आपकी फुटकर कविताओं का संग्रह 'मानसी' नाम से श्री गोपाल नेवटिया ने किया है। 'रामचरित मानस' पर भी आपने टीका लिखी है। त्रिपाठी जी ने 'कविता कौमुदी, की भूमिका और कवि-परिचय में जो गद्य लिखा है, वह भी अपनी विशेषता रखता है। उसमें गहराई है, प्रवाह है। स्थान और भाव के अनुसार उनकी शैली के विभिन्न रूप हैं। उनका स्वाभाविक प्रकृति चित्रण गद्य में भी खूब निभा है और उर्दू का प्रभाव यहाँ भी वे भुला नहीं सके हैं। सब मिला कर त्रिपाठी जी एक गद्य शैलीकार के रूप में भी अमर रहेंगे।

श्री एडवर्ड कारपेन्टर—

× × ×

तोरणदेवी शुक्ल 'लली,साहित्य चन्द्रिका—

आपका जन्म कान्यकुब्ज ब्राह्मण वंश में सं० १९५३ वि० श्रावण शुक्ल द्वादशी को आपकी ननिहाल (ग्राम पपिपरिय, जिला जबलपुर) हुआ। आपके पिता पं० कन्हैयालाल जी तिवारी का स्थान दिलवल जिला उन्नाव है, परन्तु आपके स्वर्गीय पितामह पं० लालताप्रसाद जी तिवारी सन् १८५७ में वहाँ से प्रयाग चले आये, तब से वह लोग प्रयाग में ही रहते हैं।

सन् १९१२ ई० में 'लली' जी का विवाह जिला रायबरेली में पं० कैलाशनाथ जी शुक्ल बी. ए. एल-एल. बी. के साथ हुआ, और सन् १९१५ ई० में आपके पुत्र चिरंजीव हरिहरनाथ शुक्ल 'सरोज' का जन्म हुआ जो अब बी. एस- सी इंजिनियर हैं। 'लली' जी अनुमानतः १४ वर्षों से लखनऊ रहती हैं।

हिन्दी काव्य की कोकिलाओं में 'लली' जी भी एक हैं। आपकी कविताएँ बड़ी ही सरस और भाव-पूर्ण होती हैं।

आप एक पत्रिका का सम्पादन भी कर चुकी हैं, और कई बार अनेक प्रमुख सभाओं की सभानेत्री भी हुई हैं।

आपने कविता की एक पुस्तक 'ज्योति' भी लिखी है जो अभी तक अप्रकाशित है।

—स०

श्री भगवती प्रसाद वाजपेयी—

वाजपेयी जी का जन्म संवत् १९५६ वि० में हुआ था। आप मंगलपुर जिला कानपुर के निवासी हैं और आज कल इलाहाबाद में रहते हैं। चौदह वर्ष की अवस्था से ही गृहस्थ-जीवन का उत्तरदायित्व सिर पर आजाने के कारण आप उच्च-शिक्षा से वंचित ही गये। पहले तो अपने गाँव में ही कुछ काल तक अध्यापक रहे। परन्तु उस जीवन से सन्तुष्ट न होकर जो निकल भागे, होम-रूल लीग कानपुर की लाइब्रेरी में लाइब्रेरियन हो गये। यहाँ आपका अध्ययन-शीलता का ऐसा चसका लगा और आपको असाधारण प्रतिभा ने ऐसा विकसित किया कि क्रम-क्रम से 'संसार,' दैनिक 'विक्रम' तथा 'माधुरी' के सम्पादन-विभाग में कार्य करने का सुअवसर पाते गये। चार वर्ष तक आप हिन्दी-साहित्य सम्मेलन के सहायक मंत्री भी रह चुके हैं। इधर अनेक वर्षों से आप यहाँ, स्वतन्त्र रूप से, एक साहित्य-सेवी का जीवन व्यतीत करते हैं।

वाजपेयी जी का विकास, बहुत साधारण जीवन से उठने के कारण, यद्यपि मन्दगति से हुआ है, तथापि जीवन का असन्तोष, भयानक, कटु और प्राण-पीड़क अनुभूतियों का समुद्र मंथन आपकी इस काल की कृतियों की मौलिक सजीवता का एक दुर्लभ गुण बन गया है। अब

तक लगभग दो सौ कहानियाँ तथा सात-आठ उपन्यास आप लिख चुके हैं। इधर सन् ३० से आपकी रचनाओं में कला का जो अभिराम प्रस्फुटन हुआ है, वह सर्वथा अभिनन्दनीय है। आपकी कुछ कहानियाँ तो सर्वथा मनोवैज्ञानिक हैं। वे वर्णात्मक होने पर भी चरित्र-चित्रण की दृष्टि से अनोखी और मनोहर हैं। परन्तु इनकी छोटी कहानियों में कला की अच्छी झलक मिलती है।

आपके कहानी-संग्रह 'मधुपर्क' 'दीप मालिका' 'तथा उपन्यास 'मीठी चुटकी' 'त्यागमयी' 'अनाथ पत्नी''लालिमा,' 'प्रेम पत्र''प्रेम-निर्वाह' 'पतिता की साधना' 'पिपासा हैं। जिनमें 'पतिता की साधना तथा 'पिपासा' ने अच्छा सम्मान पाया है।

वाजपेयी जी से अभी हमें बहुत आशायें हैं। —य०

प्रभाकर माचवे एम. ए. साहित्य-रत्न—

(पृष्ठ २३४ पर देखिये)

श्री स्वर्गीय जयशंकर 'प्रसाद'—

'प्रसाद' जी के सम्बन्ध में श्री शान्तिप्रिय द्विवेदी का लेख इसी अङ्क के ७६ वें पृष्ठ पर दिया हुआ है।

'प्रसाद' जी ४८ वर्ष की अवस्था में गत १५ नवम्बर को हिन्दी साहित्य को सूना करके चले गए।

आप उच्च श्रेणी के कवि थे, कहानी लेखक थे, उपन्यासकार थे, नाटककार थे, और थे क्या नहीं ? सब कुछ थे। 'प्रसाद' जी की कृतियाँ उन्हें सर्वदा हिन्दी साहित्य में अमर रक्खेंगी।

ईश्वर 'प्रसाद' जी की उच्चात्मा को शान्ति दें!

—य०

श्री विष्णुदत्त प्रभाकर—

आपका जन्म यू. पी. में मुजफ्फर नगर प्रांत के अन्तर्गत 'मीरापुर' क़स्बे में २१ जून सन् १९१२ को हुआ। ११-१२ वर्ष की आयु में ही आप हिसार चले गए और तब से अभी तक वहीं रहते हैं।

नये कहानी लेखकों में विष्णु जी का महत्व-पूर्ण स्थान है। आपकी कहानियां अन्य पत्रों के अतिरिक्त 'हंस' में नियमित रूप से निकलती रहती हैं। आपकी शैली बिल्कुल नई है, और आपके वर्णन करने का ढंग भी निराला है!

लेखक से अधिक प्रशंसनीय आपका व्यक्तित्व है। विष्णु जी स्वभाव के अत्यन्त ही सरल और मिलनसार हैं। जीवन की भिन्न-भिन्न परिस्थितियों ने आपको बड़ा अनुभवी बना दिया है।

विष्णु जी का भविष्य बड़ा उज्ज्वल है। वह अभी नव युवक हैं। हम आशा करते हैं कि वह शीघ्र ही कहानी लेखक के रूप में ख्याति प्राप्त करेंगे।

—य०

पं० विचित्र नारायण शर्मा—

आपका जन्म देहरादून प्रान्त के एक भद्र ब्राह्मण कुल में हुआ। प्रारम्भिक शिक्षा देहरादून में ही समाप्त कर आप हिन्दू यूनीवर्सिटी बनारस में विद्याध्ययन के लिए चले गए।

स्वास्थ्य और स्वाध्याय दोनों ही उत्तम होने के कारण आप वहाँ से कोई ऊँची डिग्री लेकर निकलते, किन्तु विचारों की स्वतन्त्रता और देश की दुर्दशा ने यूनीवर्सिटी की चहार दीवारी से बाहर निकाल कर उन्हें प्रत्यक्ष रूप से सार्वजनिक जीवन में डाल दिया। फल स्वरूप कई बार विचित्र भाई जेल गए।

आप आचार्य कृपलानी जी की देख-रेख में खादी में लगातार भिन्न-भिन्न रूपों में काम करते रहे हैं। यू. पी. में जो खादी की अपूर्व उन्नति दिखाई पड़ती है, उसमें आपका विशेष हाथ है।

आपकी मिलनसारी और कार्यपटुता युवकों में नव जीवन का संचार करती है।

विचित्र भाई आज-कल मेरठ गांधी आश्रम में मन्त्री हैं।

—य०

श्री तारा पाण्डे—

तारा जी हिन्दी काव्य जगत की इन-गिनी कवियित्रियों में से एक हैं। श्री महादेवी वर्मा की कविता की भाँति आपकी कविताओं के पीछे भी किसी की आराधना छिपी रहती है।

आपकी प्रत्येक रचना बड़ी भाव-पूर्ण होती है। इसके अतिरिक्त आपकी भाषा बड़ी सरल होती है। आपकी कविताओं में 'वेदना' कूट-कूट कर भरी होती है। वास्तव में जीवन है भी वेदना मय।

श्रीमती तारा जी से भविष्य में बहुत कुछ आशा की जाती है।

आप नैनीताल की निवासिनी हैं।

—य०

श्री निर्मला मित्रा

आप होशंगाबाद की निवासिनी हैं।

निर्मला जी बंगला भाषा भाषिणी होने पर भी हिन्दी की भाव-पूर्ण कहानी और गद्य-काव्य लेखिका हैं।

आप की रचनायें हिन्दी के भिन्न-भिन्न मासिक पत्रों में अक्सर निकलती रहती हैं। आप प्रतिभाशालिनी लेखिका हैं।

—य०

श्री प्रभाकर माचवे एम.ए. साहित्य-रत्न—

(पृष्ठ २३४ पर देखिये)

श्री शान्तिप्रिय द्विवेदी

काशी के वे दिन भी चिर स्मरणीय रहेंगे जब कि वहाँ पर स्वर्गीय प्रेमचन्द्र जी, उपन्यासकार; स्वर्गीय जयशंकर 'प्रसाद' जी, नाटक कार; श्री अयोध्यासिंह जी, कवि; श्री रामचन्द्र जी शुक्ल, आलोचक, के रूप में इकट्ठे होते थे। उन्हीं के बीच में श्री शान्तिप्रिय द्विवेदी गद्य-सम्राट के रूप में जाते थे।

द्विवेदी जी ने बहुत कुछ लिखा है। उससे उनकी अध्ययन शीलता का पता चलता है।

द्विवेदी जी कुछ कम सुनने के कारण दुनिया की बहुत सी बातों से बचे रहते हैं।

बहुत समय हुआ आपने भिन्न-भिन्न कवियों की कविताओं का एक संग्रह 'परिचय' नाम से निकाला था।

शान्तिप्रिय जी प्रतिभाशाली लेखक हैं। आपकी अवस्था लगभग ३०-३५ वर्ष के है।

आज कल आप प्रयाग में रहते हैं।

—य०

श्री सच्चिदानंद हीरानन्द वात्स्यायन 'अज्ञेय'—

(पृष्ठ २४० पर देखिये)

श्री सुशीला आगा बी. ए.—

आपका जन्म जौनपुर में अक्टूबर सन १६१४ में हुआ। आज कल सुशीला जी प्रयाग विश्व-विद्यालय में एम. ए. फ़ाइनल की विद्यार्थिनी हैं।

हिन्दी कहानी साहित्य के पाठक सुशीला जी के नाम से भली भाँति परिचित हैं। आपकी कहानियाँ बड़ी सुन्दर और रोचक होती हैं। भाषा भी बड़ी सरल होती है।

कई वर्ष प्रयाग विश्वविद्यालय की गल्प- प्रतियोगिता में आप पुरस्कार पा चुकी हैं।

आपकी कुछ कहानियों का संग्रह 'अतीत के चित्र' नाम से प्रकाशित हुआ है और दूसरा संग्रह शीघ्र ही निकलने वाला है।

—य०

श्री जैनेन्द्र कुमार—

(२३३ पृष्ठ पर देखिये)

श्री विमला बाई अवस्थी—

आप शान्ति कुटीर, मुरादाबाद की निवासिनी हैं।

—य०

श्री उपेन्द्रनाथ अश्क बी. ए. एल-एल. बी.—

श्री उपेन्द्रनाथ लाहौर के निवासी हैं।

हिन्दी के अच्छे कहानी लेखक और कवि होने के अतिरिक्त आप उर्दू में भी अच्छा लिखते हैं।

आपका नाटक 'जय-पराजय' अभी हाल में ही प्रकाशित हुआ है।

अश्क जी अभी नव युवक हैं। हिन्दी साहित्य आपसे भविष्य में बहुत कुछ आशायें रखता है।

—य०

श्री हरवंश सहाय 'बच्चन बी. ए.—

'बच्चन जी' आजकल प्रयाग में रहते हैं। सन् ३० में प्रयाग विश्वविद्यालय में एम. ए. प्रीवियस पास करने के पश्चात् आपने पढ़ना छोड़ दिया था। इस वर्ष आप उक्त विश्वविद्यालय से एम. ए. फ़ाइनल कर रहे हैं।

'बच्चन' जी एक नवीन 'वाद' के प्रवर्त्तक हैं, और वह है—हालावाद। आपके हालावाद की धूम आजकल हिन्दी-काव्य जगत में खूब जोरों की मची हुई है।

आपकी छः पुस्तकें अब तक निकली हैं। 'ख़य्याम की मधुशाला' 'मधुशाला' 'तेरा हार' 'तेरी बाँसुरी', 'मधुबाला' और 'मधुकलश'।

'बच्चन' जी ने २६-२७ वर्ष की आयु में ही जो ख्याति पाई है, वह प्रशंसनीय और बधाई के योग्य है।

—य०

श्री हरदयाल 'मौजी' बी. ए.—

'मौजी 'जी हिन्दू कालिज दिल्ली में संस्कृत में एम. ए. के प्रथम वर्ष में अध्ययन कर रहे हैं। आपकी अवस्था लगभग २३-२४ वर्ष की है।

आप अच्छे कहानी लेखक हैं। आपकी कहानियों में मनोवेदना का बड़ा ही सुन्दर चित्र खिंचा दिखाई देता है।

आपकी कविताएँ भी बहुधा 'नवयुग' में निकलती रहती हैं। उनसे पता लगता है कि आप अच्छे कवि भी हैं।

—य०

श्री योगेन्द्रनाथ भार्गव—

आपका जन्म अक्टूबर मास में सम्वत १६७८ के दशहरे के दिन आगरे में हुआ था। आप श्रीयुत द्वारकानाथ भार्गव जो राजपूत स्कूल जोधपुर में हेड् मास्टर हैं, के सुपुत्र हैं।

योगेन्द्र जी अभी विद्यार्थी हैं, और साहित्यिक जीवन का अभी उनका प्रारम्भ ही है।

—य०

श्री सोमेश्वरसिंह बी. ए एल एल. बी.—

श्री सोमेश्वर सिंह जी हिन्दी के सुप्रसिद्ध तथा गन्य मान्य कविवर ठाकुर गोपाल-शरण सिंह जी के सुपुत्र हैं। आपका जन्म सन् १६१० में नईगढ़ी रीवाँ में हुआ था।

प्रयाग विश्वविद्यालय से एल.एल. बी करने के पश्चात् आप आजकल नईगढ़ी (रीवाँ) में रहते हैं।

सोमेश्वर जी भी अपने पिताजी की भाँति बड़े सुन्दर कवि हैं। आपकी प्रत्येक कविता के पीछे किसी अप्राप्यकी साधना छिपी रहती है। उसी साधना के द्वारा वे पाठक के हृदय को आकर्षित कर लेते हैं। उनके हृदय में छिपी वेदना है, कसक है, टीस है, जो उनकी कविता में निरन्तर बहती रहती है।

आप की स्फुटिक कविताओं का संग्रह 'रत्ना' नाम से प्रकाशित हो चुका है। दूसरा संग्रह शीघ्र ही प्रकाशित होने वाला है।

आपकी अवस्था लगभग २८ वर्ष के है।

श्री रूपकिशोर जैन—

श्री रूपकिशोर जैन विजयगढ़ (अलीगढ़) के निवासी हैं। आपकी अवस्था लगभग ५५-५६ वर्ष के है।

आपने 'अलिफ़-लैला' का अनुवाद हिन्दी में "सहस्र-मंजरी" के नाम से किया है। इसके अतिरिक्त आपने बहुत सी सुन्दर और शिक्षा-प्रद कहानियाँ और नाटक लिखे हैं। आप उर्दू में भी उतनी ही सुगमता से लिखते हैं जितना हिन्दी में।

आपकी कृतियाँ समय की किसी समस्या को लिये हुये होती हैं।

आप अच्छे आर्टिस्ट भी हैं।

—य०

श्री दमयन्ती प्रभाकर—

आपका जन्म २२ सितम्बर सन् १६१८ ई० को हापुड़ शहर में एक प्रतिष्ठित पंजाबी आर्य परिवार में हुआ। आपके बाबा पंजाब के एक छोटे से गाँव बरबैल में रहा करते थे। अतः आपके बचपन के बहुत से दिन गाँव में ही व्यतीत हुए।

वहीं पर दमयंती जी ने साढ़े बारह वर्ष की आयु में प्राइवेट मैट्रिक और चौदह वर्ष की आयु में प्रभाकर की परीक्षायें पास कीं। इस वर्ष आप प्राइवेट एफ. ए. की परीक्षा की तैयारी कर रही हैं। आपको घोड़े की सवारी से भी शौक़ है।

आजकल आपके पिता श्री रिपुसूदन सिंह हापुड़ में चेम्बर ऑव कामर्स के सैक्रेटरी हैं। उन्हीं के साथ आप रहती हैं।

आपने एक उपन्यास तथा एक सीरीज वैदिक-धर्म पर लिखी है। एक पुस्तक 'धूल-धूसरित मणियाँ' ग्राम्य-गीतों पर आपने अपनी बड़ी बहन के साथ मिलकर लिखी है। सभी पुस्तकें अप्रकाशित हैं।

—य०

श्री जगदीश प्रसाद चतुर्वेदी बी. ए.—

श्री जगदीश प्रसाद का जन्म १५ अप्रेल सन् १६१७ को हुआ। आप बरेली निवासी राय साहब पं० रामप्रसाद चतुर्वेदी जेलर के सुपुत्र हैं।

लखनऊ विश्वविद्यालय से १९२६ में बी. ए. करने के पश्चात् इस वर्ष काशी विश्वविद्यालय में राजनीति शास्त्र (Politics) का एम. ए. का कोर्स पढ़ रहे हैं।

आप अच्छे कहानी लेखक और कवि हैं।

—य०

श्री आदर्शकुमारी एफ़. ए.—

श्री आदर्श कुमारी की आयु लगभग २० वर्ष के है। आप अलीगढ़ निवासी बा० कान्ता-प्रसाद एडवोकेट की सुपुत्री हैं। आपने क्रास्थवेट गर्ल्स कालिज इलाहाबाद से सन् १९३७ में इंटरमीडियेट की परीक्षा पास की और अब बी. ए. की तैयारी कर रही हैं।

आप अच्छी कहानी लेखिका हैं। इसके अतिरिक्त आदर्श कुमारी जी को सँगीत विद्या से विशेष प्रेम है।

आजकल टीकाराम गर्ल्स हाई स्कूल अलीगढ़ में आप अध्यापिका हैं।

आदर्श जी अच्छी आर्टिस्ट भी हैं।

—य०

श्री गजेन्द्रनाथ पटैरया बी. ए. एल-एल. बी—

आप का जन्म जुझौतियाँ ब्राह्मण कुल में आज से क़रीब २६ वर्ष पूर्व मध्यप्रदेश में हुआ। आपके पिता पं० देवीप्रसाद पटैरया जी० आई० पी० रेलवे में एक उच्च पद पर हैं। बाल्य जीवन से आपको हिन्दी साहित्य से अनुपम प्रेम है। आपको मैट्रीक्यूलेशन परीक्षा पास करने के पश्चात नौकरी के लिये ललचाया गया; पर आपने अपनी स्वतन्त्र प्रकृति के अनुसार उच्च शिक्षा की ओर बढ़ने का प्रयास किया।

देश प्रेम आपका रोग है। साहित्य सेवा भी आप करते रहते हैं। राष्ट्रीय विषय के लेख भी आप लिखते हैं। कभी-कभी आप कविताएँ भी लिखा करते हैं।

आप दमोह (सी० पी०) के निवासी हैं। —य०

श्री नेमिचन्द जैन—

आपका जन्म २७ अगस्त सन् १९१९ को आगरे में हुआ।

आज कल आप आगरा कालिज में थर्ड ईयर के विद्यार्थी हैं।

नेमिचन्द जी की कविताएँ और गद्य-काव्य 'कर्मवीर' में छपे हैं। इधर आप की कई-एक कविताएँ 'हंस' में भी छपी हैं।

स्कूल के जीवन में आपको कहानी, कविताओं पर पुरस्कार भी मिला है।

—य०

श्री शकुन्तला कुमारी प्रभाकर—

शकुन्तला कुमारी जी दिल्ली की निवासिनी हैं। आपकी अवस्था २० वर्ष के लगभग है।

आपने सन्' ३५ में प्रभाकर की परीक्षा पास की और अब दिल्ली के क्विन मेरी स्कूल में अध्यापिका हैं।

शकुन्तला कुमारी जैनेन्द्र जी की भानजी हैं।

—य०

श्री रामनारायण श्रीवास्तव 'ग़रीब'—

आपका जन्म १४ अक्टूबर सन् १९२० में मध्यप्रदेश के छिन्दवाड़े ज़िले में हुआ। आप श्रीयुत मुन्शी महादेव प्रसाद श्रीवास्तव के सुपुत्र हैं।

१० अगस्त सन् १९३६ को कृष्णाष्टमी के अवसर पर 'व्यावहारिक-जीवन में गीता की उपयोगिता' विषय पर आपको हिन्दी-प्रचारिणी समिति छिन्दवाड़ा की ओर से सर्व-प्रथम पुरस्कार मिला। बाद में दो पुरस्कार और मिले जो सर्व-प्रथम थे।

रामनारायण जी आज कल "ग़रीब-भारत" नामक नाटक लिख रहे हैं जो शीघ्र ही प्रकाशित होने वाला है।

—य०

श्री सुरेन्द्रकुमार अष्ठाना बी. एस-सी, एल-एल. बी.—

श्री सुरेन्द्रकुमार बा० एम. पी. अष्ठाना, एडीशनल जज गोंडा के सुपुत्र हैं। प्रयाग विश्व-विद्यालय से बी. एस-सी, एल-एल. बी. करने के पश्चात् आई. पी. ऐस की परीक्षा की तैयारी कर रहे हैं।

गत जून में आपने भिन्न भिन्न कवियों की कविताओं का एक संग्रह "संग्रह" नाम से प्रकाशित किया है।

आप प्रयाग में रहते हैं। आपकी अवस्था लगभग २२-२३ वर्ष के है।

सुन्दर कविताओं के अतिरिक्त आप अच्छी कहानियाँ भी लिखते हैं।

—य०

श्री रामचन्द्र तिवारी—

आप स्थानीय हिन्दू कालिज में बी. एस-सी प्रीवियस के विद्यार्थी हैं। आप की अवस्था लग-भग २२-२३ वर्ष के है।

तिवारी जी की कहानियाँ तथा कविताएँ बड़ी सुन्दर होती हैं। आपका अध्ययन गहन है। कहानी और कविताओं के स्थलों का आप बड़ा ही स्पष्ट चित्र चित्रित कर देते हैं। यही आप की विशेषता है।

—य०

श्री रंजीतप्रसाद जैन 'अनजान'—

आप का जन्म सन् १९१७ में कौड़ियागंज (अलीगढ़) में हुआ था। फर्स्टईयर से पढ़ना छोड़ कर आज कल आप स्थानीय आयुर्वेदिक एण्ड यूनानी तिब्बी कालेज के द्वितीय वर्ष के विद्यार्थी हैं।

अपने कालिज के मासिक पत्र 'आचार्य धन्वन्तरि' के आप सम्पादक हैं।

'अनजान' बड़े ही हँस-मुख युवक हैं। सादगी आपके जीवन की विशेषता है।

आप कहानियों के अतिरिक्त कविताएँ भी लिखते हैं।

श्री कमलादेवी प्रधान बी० ए०—

कमला जी प्रयाग विश्वविद्यालय की ग्रेजुएट हैं।
आप की रचनाएँ 'माधुरी' और 'चाँद' में आरंभ में छपती थीं।
आपको संगीत से बहुत प्रेम है।

—य०

श्री नरेन्द्र एम० ए०—

नरेन्द्र जी ने हिन्दी के कवियों में अपना स्थान बना लिया है।
प्रयाग विश्वविद्यालय से एम. ए. करने के बाद अब आप प्रयाग में ही रहते हैं।
आप की अवस्था लगभग २३-२४ वर्ष के है। आप बड़े ही मिलनसार हैं।

नरेन्द्र जी का भविष्य उज्ज्वल है। हमें पूर्णाशा है कि एक दिन हिन्दी-काव्य जगत में वे ऊंचा स्थान पावेंगे।

—य०

श्री अक्षय कुमार जैन—

आप विजयगढ़ (अलीगढ़) निवासी श्री रूप किशोर जैन के सुपुत्र हैं।
होल्कर कालिज, इन्दौर से आपने इंटरमीडियेट पास किया है और इस वर्ष बी. ए. की परीक्षा दे रहे हैं।

अक्षय जी की कहानियाँ इधर 'अर्जुन' और 'वीणा' में प्रकाशित होती रहती हैं। फिर भी हिन्दी साहित्य के लिए अभी वह नए हैं।

संगीत विद्या से आपको शौक है। आप भिन्न-भिन्न प्रकार के गायन-यन्त्रों का प्रयोग जानते हैं।

अक्षय जी का व्यक्तित्व सुलझा हुआ है। वह बहुत मिलनसार हैं।

—य०

श्री काली प्रसाद 'विरही'—

आप ग्वालियर राज्यांतगत चचौड़ा ग्राम के निवासी हैं। मध्य-भारतीय हिन्दी साहित्य के कवियों में आपका विशिष्ट स्थान है।

मानव हृदय की गहरी संवेदनामय अनुभूति आपकी कविता का मुख्य विषय है। मानव हृदय के घात-प्रतिघात का सुन्दर चित्र आपकी कविता से चित्रित होता है।

"आपकी कविता पुस्तक "उच्छ्वास" प्रकाशित हो चुकी है। 'वेदना की बूँदें' आपकी अप्रकाशित रचना है।

'विरही' जी आज कल एक खंड-काव्य लिख रहे हैं।

—य०

पं० गोकुलचन्द शर्मा, एम. ए.—

पं० गोकुलचन्द का जीवन आरंभ ही से साहित्यिक रहा है। जीवन में कुछ करने तथा कुछ बनने की प्रेरणा आपको सर्वदा ऊँचा उठाती गई है।

पंडित जी ने मैट्रिक, इंटर, बी. ए., एम. ए. सभी परीक्षाएँ प्राइवेट पास की हैं। आज कल आप धर्म समाज इंटरमीडियेट कालिज अलीगढ़ में हिन्दी विभाग में प्रोफेसर हैं।

पंडित जी हिन्दी के उत्कृष्ट कवि हैं। 'जयद्रथवध' आदि पुस्तकें आपकी प्रकाशित हो चुकी हैं।

आप स्वभाव के बहुत ही सरल और सीधे हैं। अहंकार आपको छू तक नहीं गया।

हम ईश्वर से प्रार्थना करते हैं कि साहित्य सेवा के लिए उन्हें बहुत से वर्ष दें।

—य०

श्री जयंत—

आपका जन्म १७ मई सन् १६१७ को लुधियाने में हुआ। आप प्रो० इन्द्र के सुपुत्र हैं और स्थानीय कमार्शियल कालिज के विद्यार्थी हैं।

इधर एक वर्ष से आपने कहानियाँ लिखना आरम्भ किया है। इसी बीच में जयन्त जी ने लगभग पच्चीस कहानियां लिखी हैं।

आपको चित्र बनाने का शौक है। अपनी कहानियों के लिए आप स्वयं चित्र बनाते हैं। आपके बनाये चित्र समय-समय पर 'साप्ताहिक अर्जुन' में छपते रहते हैं।

खेलों की दुनिया में भी आप पीछे नहीं हैं। आप सब खेलों के खिलाड़ी हैं।

आपकी रचना से आपका भविष्य उज्ज्वल दिखाई पड़ता है।

—य०

श्री मातादीन भगेरिया—

आपका जन्म सन् १९१२ में शेखावाटी चिड़ावा नामक स्थान पर एक उच्च कुल में हुआ है।

आजकल आप दिल्ली में रहते हैं। आपका व्यक्तित्व बहुत खरा है।

मातादीन जी सुन्दर कवि हैं और उस ओर आपका विशेष रुझान है। —य०

श्री इन्द्रदेव—

आपका जन्म १२ अक्टूबर सन् १९१२ को अजमेर में हुआ।

आज कल इन्द्रदेव जी दिल्ली में रहते हैं और स्थानीय साप्ताहिक 'नवयुग' में सहायक सम्पादक हैं। —य०

पं० 'उमेश' चतुर्वेदी साहित्य भूषण, कविरत्न—

आप का जन्म ३ मई सन् १९१६ को बरेली में हुआ।

आज कल आप जयपुर में रहते हैं। इंटरमीडियेट तक आप ने उर्दू के साथ शिक्षा पाई है और हिन्दी की उपाधियाँ सब प्राइवेट प्राप्त की हैं।

'उमेश' जी के 'भक्त सुधन्वा', 'नल-दमयन्ती', 'सावित्री', 'श्रवणकुमार' आदि नाटक हैं तथा 'तलाकवाली' 'हिन्दू-पति' आदि उपन्यास हैं। —य०

श्री नगेन्द्र एम. ए.—

आप दिल्ली में रहते हैं, और स्थानीय कमर्शियल कालिज में प्रोफ़ेसर हैं। आपने आगरा कालिज से दो बार हिन्दी और अंग्रेजी में एम. ए. किया है।

सुमित्रानन्दन 'पंत' जी पर आप एक पुस्तक लिख रहे हैं।

आपकी स्फुटिक कविताओं का संग्रह अभी 'वन-बाला' के नाम से निकला है।

—य०

श्री हजारीलाल जैन—

आपका जन्म विजयगढ़ (अलीगढ़) के एक भद्र जैन कुल में हुआ। आपकी अवस्था लगभग २८-२६ वर्ष के है।

आजकल आप अलीगढ़ से प्रकाशित 'स्वराज्य' और अंग्रेजी के पत्र 'अलीगढ़ टाइम्स' का सम्पादन कर रहे हैं। —य०

श्री सागर—

आप स्थानीय सेन्ट्रल बैंक के एकाउन्टेन्ट, पं० जगन्नाथ के सुपुत्र हैं। पिछले साल २२ वर्ष की आयु में एफ. एस-सी. पास करके अब स्थानीय रैमिंग्टन टाइपराइटर कम्पनी में काम कर रहे हैं।

साहित्य में आपका प्रवेश अभी प्रारम्भिक है। —य०

श्री शन्नोदेवी चतुर्वेदी 'हिंदी-रत्न'—

शन्नोदेवीजी का जन्म २५ जून १६२० को हुआ। आप श्री जगदीशप्रसाद की धर्म-पत्नी तथा शिमला निवासी पं० जमुना प्रसादजी की सुपुत्री हैं।

आपने पंजाब विश्वविद्यालय की 'हिंदी रत्न' की परीक्षा सन् १६३४ में पास की।

आप कहानी लेखका हैं और कविता भी करती हैं।

फ़ोटोग्राफ़ी से आपको शौक है।

—य०

श्री रत्नकुमारी माथुर—

आपकी अवस्था १५ वर्ष की है, आप श्री हरदयाल, फर्स्ट क्लास मजिस्ट्रेट की सुपुत्री हैं, और सांभर लेक की रहने वाली हैं। आप इतनी अल्प आयु में ही सुन्दर कविता करती हैं। आपका भविष्य बड़ा उज्ज्वल है।

श्री कृष्णचन्द्र 'मुद्गल—

आप इन्दौर के निवासी हैं। आपकी अवस्था इस समय २७ वर्ष की है।
आप इन्दौर से प्रकाशित 'फ़िल्म लोक का सम्पादन कर चुके हैं।
सिनेमा साहित्य से आपको विशेष प्रेम है, इसी में आपने लिखा भी अधिक ह।
कृष्णचन्द्रजी एकांकी नाटिकाएँ भी लिखते हैं। —य०

श्री प्रभात कुमार बी. ए. एल-एल. बी. ऐडवोकेट—

आप इलाहाबाद हाई कोर्ट में वकालत करते हैं। आपकी अवस्था लगभग ४० वर्ष के है।
आप सुन्दर कवि हैं। आरंभ में आपकी कविताएँ भिन्न-भिन्न पत्रों में छपती रहती थीं।
इन दिनों तो आपने बहुत कम लिखा है। आपकी कविता 'हिमालय' बड़ी सुन्दर है।
आप अपनी दो पुत्रियों तथा धर्मपत्नी सहित प्रयाग में ही रहते हैं। —य०

श्री रमेश चन्द्र आर्य्य—

आप विजयगढ़ (अलीगढ़) आर्य्य-समाज के मंत्री श्री लाला बैनीराम आर्य्य के सुपुत्र हैं। बचपन से सार्वजनिक सेवाओं की लगन होने के कारण आप धार्मिक, सामाजिक, राजनैतिक और साहित्यिक प्रगतियों में सदा भाग लेते रहे हैं। रमेशजी विभिन्न संस्थाओं के पदाधिकारी हैं। कांग्रेस आन्दोलन में जेल-यात्रा भी की है।

आजकल आप दिल्ली में दैनिक 'अर्जुन' के स० सम्पादक हैं। आपकी लिखी 'श्री सुभाष चन्द्र बोस' नामक पुस्तक हाल ही में प्रकाशित हो रही है। आपकी उम्र लगभग २६-२७ वष की है। —य०

श्री अविनाश चन्द्र पाण्डेय 'चातक'—

आपका जन्म सन १९१७ में बहराइच (अवध) के एक प्रतिष्ठित ब्राह्मण कुल में हुआ। आपकी अवस्था २१ वर्ष के लग भग है। इन दिनों आप मेरठ कालिज में बी.ए. के विद्यार्थी हैं।

आपकी रचनाएं बहुधा सामयिक पत्रों में प्रकाशित होती रहती हैं। पाण्डे जी एक सुमधुर गायक भाव पूर्ण कवि तथा एक होनहार कहानी लेखक हैं साथ ही साथ हंसमुख, नम्र, सभ्य तथा मिलनसार हैं। —य०

श्री ओनिला पाठक—

आप स्थानीय क्विन मेरी स्कूल की ६ वीं कक्षा की विद्यार्थिनी हैं।

—य०

श्री ओमप्रकाश शास्त्री विद्याभास्कर—

आपका जन्म ज़िला सहारनपुर के अंतर्गत देवबन्द नामक स्थान पर हुआ।

आपने स्नातक ज्वालापुर महाविद्यालय में शिक्षा पाई और वहीं से 'शास्त्री' और 'विद्याभास्कर' की परीक्षाएं पास कीं।

आप आर्योपदेशक तथा पुरोहित भी हैं।

संगीत से आपको विशेष रुचि है।

आज कल शास्त्री जी दिल्ली में रहते हैं।

—य०

विज्ञापन दाताओं से—

कुछ विशेष कारणों से हमने सभी विज्ञापन जो हमारे पास जीवन-सुधा में छपने के लिए आए हैं, इस अङ्क में जाने से रोक लिए हैं। हमें स्वयं इसका दुख है।

हम अपने विज्ञापन-दाताओं से प्रार्थना करते हैं। कि वे इसके लिए हमें क्षमा करदें। जीवन-सुधा के आगामी अङ्कों में उन्हें निकाल दिया जावेगा।

—व्यवस्थापक
जीवन-सुधा,
चाँदनी चौक
दिल्ली।

लेखकाङ्क के लिए
शुभ संदेश

भारत में अंग्रेजी राज्य" के रचयिता महात्मा सुन्दरलाल जी लिखते हैं—

प्रिय यशपाल जी !

जीवन-सुधा के लेखकाङ्क के लिये आप मेरा सन्देश चाहते हैं। यह आपकी सम्रादनमन्दी है। आपके और आपके इस प्रयास दोनों के लिये मेरा आशीर्वाद, मेरी शुभकामना है।

सस्नेह—सुन्दरलाल

हिन्दी साहित्यके सर्वोत्कृष्ट कलाकार श्री जैनेन्द्र कुमार लिखते हैं—

जो शख्सी और समाजी जीवन में सचाई और स्वच्छता के लिये बढ़ता है, उस सब के मैं साथ हूँ। मैं चाहता हूँ कि जीवनसुधा रहे तो इसी के लिये, नहीं तो नहीं।

—जैनेन्द्र कुमार

आचार्य चतुरसेन शास्त्री वैद्य लिखते है—

'जीवन-सुधा' निरन्तर अपने पाठकों को जिस प्रकार जीवनसुधा प्रदान करता रहा है वह स्तुत्य है, लेखकाङ्क का आयोजन उस से भी अधिक। उसकी उत्तरोत्तर वृद्धि हो यही मेरी अन्तः कामना है।

—चतुरसेन शास्त्री वैद्य

अर्जुन सम्पादक श्री रामगोपाल विद्यालंकार लिखते हैं—

प्रिय यशपाल जी

...आपने इसके लिये 'मैटर' संग्रह करने में कमाल ही कर दिया है।

...निश्चय है कि कोई भी पाठक इसे बिना पसन्द किये न रह सकेगा। और एक बार उठा कर बिना समाप्त किये न छोड़ना चाहेगा।

...और सब से बढ़ कर यह कि आपका यह एक बार पढ़कर भी सदा सम्भाल कर रखने योग्य वस्तु बन गयी है।

देखिये, अंक प्रकाशित होने पर मेरी प्रति भेजना न भूल जाइयेगा!

आपका—

रामगोपाल

उत्कल भारती डा० (श्रीमती) कुन्तल कुमारी देवी लिखती हैं—

.........इसका लेखकांक रूप नूतन वेश देख कर बड़ी प्रसन्नता हो रही है। हमारे उत्साही नवयुवक साहित्यिक श्री यशपाल जी जैन के सुयोग्य सम्पादकत्व में यह अभिनव साहित्यिक अंक जरूर बहुत ही अच्छा निकलेगा।

दिल्ली।

—श्रीमती कुन्तल कुमारी देवी

जीवन सुधा

JIVAN SUDHA

देहली ।

DELHI

विष विज्ञान



[illegible]



इन्द्रायण



पोस्त



खुरासानी अजवायन

वार्षिक मूल्य ७॥)

इस अङ्क का मूल्य १॥)

जीवन सुधा

विषविज्ञान

(विशेषाङ्क)

इस अङ्क के विशेष सम्पादक

पं० चन्द्रशेखरानन्द 'बहुगुणा' वैद्यशास्त्री

(प्रो०-ए० एण्ड यू० तिब्बी कालेज देहली)



प्रकाशक

वृहत् आयुर्वेदीय औषध भाण्डार

(रजिस्टर्ड)

चांदनी चौक देहली

अशोक प्रिंटिंग प्रेस चांदनी चौक दिल्ली में पं० महावीर प्रसाद जी द्वारा मुद्रित तथा प्रकाशित

विषय सूची

———()०[]०()———

———



वैद्यराज श्री. ईश्वरदत्त 'मिश्र'
वैद्य शास्त्री इन्दौर।



श्री कविराज 'हर्पुल' मिश्र आयुर्वेदाचार्य
रायपुर। (सी. पी.)



श्री पं० चन्द्रशेखरानन्द 'बहुगुणा' वैद्यशास्त्री
प्रा० तिब्बी कालेज देहली।



श्रीयुत डा० बी. सी. शुक्ला
L. M. S., H. M. D.
शुक्ला भवन, मेरठ।



वर्ष ७ } वीर निर्वाण सम्वत् २४६४, अप्रैल-मई सन् १९३७ { अंक १-२

शिव का विषपान

सोचा शिव शंकर ने सिन्धु में विविध रत्न,
अब प्रकटेंगे क्योंकि मन्थन करारा है।
कोई लेगा लक्ष्मी-रत्न, कोई हय गज-रत्न,
किस ने सुधा सा रत्न मन में विचारा है।
किन्तु यह स्वार्थियों का ध्येय है सदैव,
परमार्थ युक्त पंथ अति कठिन करारा है।
दु:खी दीन जन हेतु सारे रत्न तुच्छ हुए,
दीन जन प्यारा, विष रत्न ही हमारा है।

दो शब्द

(०)

पाठक सज्जन गण !

आज हम उस सर्वशक्ति युक्त समदृष्टि परम पिता परमात्मा की कृपा से जीवनसुधा का यह **विष विज्ञान**--विशेषाङ्क आपके सामने उपस्थित कर रहे हैं। भावना तो यह थी कि इस अङ्क को और भी सुन्दर एवं सुपाठ्य बनाते परन्तु इसका आकार बढ़ जाने तथा दूसरे समय बहुत हो जाने के भय से फिरभी इसे जितना सफल एवं उपयोगी बनाने के लिये निरन्तर परिश्रम करके जो कुछ हम तैयार कर सके हैं वह आपके सामने प्रस्तुत किया जाता है।

जिस कार्य की पूर्ति का भार हमने इस विशेषाङ्क द्वारा अपने हाथों में लिया था यदि यथार्थ में पूर्णतया उसे लिखा जाय तो एक बहुत बड़ा शास्त्र बन जाये तथापि जिस इच्छा का हम इसमें समावेश करना चाहते थे किसी हद तक उसकी पूर्ति करने में सफल प्रयत्न हुये हैं। भारतवर्ष में प्रायः विष खाकर आत्मघात करने की कुप्रथा आजकल बहुत सुनने व देखने में आती है और ऐसे विष प्रायःअफीम, संखिया, धतूरा, कुचला, हड़ताल, मंमिल जमालगोटा इत्यादि तथा इनके मिश्रण ही हैं जिनसे ऐसी घटनायें हुवा करती हैं कुछ उच्च श्रेणी के पढ़े लिखे प्रेमी मनुष्यों में उच्च दर्जे के विष जैसे पोटाम साईनाइड, एसिड हाइड्रोसियानिक इत्यादि खाकर प्रेम विरह में मर जाने की दशा भी बहुत जोर पकड़ती जारही है, इसलिए दोनों ही प्रकार के विषों के वर्णन हमने इस अङ्क में समावेश करने का भरसक प्रयत्न किया है जिससे ऐसी हालत होने पर लक्षण जान कर उस विष के विष को दूर करने का प्रयत्न किया जा सके।

हम अपने लेखकोंका हार्दिक धन्यवाद करने में भी नहीं चूक सकते जिनकी कृपाके कारण हम इस महान उपकार के कार्य को पूर्ण करने में सफल प्रयत्न हुए हैं। हम श्रीयुत पं० चन्द्रशेखरानन्द "बहुगुण" वैद्यशास्त्री प्रो० आफकैमिस्ट्री हिन्दूकालेज देहली, की कृपा के बड़े आभारी हैं जिन्होंने हमारी प्रार्थना को स्वीकार कर इस विशेषाङ्क के सम्पादकत्व का भार ग्रहण सहर्ष स्वीकार किया और अपने अमूल्य समय को प्रदान कर हमें कृतार्थ किया। बहुत से लेखक सज्जनों की रचनायें हम स्थानाभाव से छापने में असमर्थ हुये हैं उनमें से कुछ की रचनायें परिशिष्टाङ्क में देरहे हैं बाकी अगले अङ्कों में देंगे उनके भी हम बड़े आभारी हैं जो अपना अमूल्य समय लगाकर अपनी अमूल्य रचनायें भेजकर सुधाके प्रति अपना प्रेम दर्शाया। अज्ञान और प्रमाद वश त्रुटियों और अशुद्धियों का रहना स्वाभाविक है। आशा है पाठक इसके लिये क्षमा करेंगे।

एम० के० जैन

मैनेजर जीवनसुधा

विष

[ले०—पं० चन्द्रशेखरानन्द 'बहुगुणा' आयुर्वेद शास्त्री, प्रो० तिब्बी कालिज देहली]



संसार को समझ ने के लिये आकाश वायु तेज जल और पृथ्वी इन भूतोंको समझना चाहिये किन्तु ये अत्यन्त सूक्ष्म हैं इस लिये प्रत्यक्ष नहीं हो सकते, शब्द स्पर्श रूप रस और गन्ध गुणों के द्वारा इनका ज्ञान उचित तद्‌भूत प्रधान इन्द्रियों से प्रत्यक्ष हो जाता है। इन के परमाणुओं से महाभूत और महाभूतों के परस्परानुप्रवेश द्वारा तथा प्रत्येक के तार तम्यानुसार सम्पूर्ण भौतिक पदार्थ बनते हैं। इसी को प्रकृति का विकार कहते हैं। इसलिये आकाश भाग अधिक होने से आकाशीय वायुतत्व अधिक होनेसे वायवीय आदि मोटी नजर से पांच प्रकारकी भौतिक सृष्टि को बांट सकते हैं। किन्तु आकाशयि वायवीय या तैजस बहुल पदार्थों में आग्नेयान्श अधिक ही रहता है और जलीय या पार्थिव भाग बहुल पदार्थों में आपेक्षिक आग्नेयांश न्यून और सोम गुण अधिक रहता है। इसलिये इस सारे संसार को दो बिभागों में विभक्त कर सकते हैं प्रथम आग्नेय और द्वितीय सौम्य। आग्नेयान्श प्रधान पदार्थ शरीर में बनिस्बत सौम्य पदार्थ के शीघ्र फैलता है इस लिये उसके दोष गुण अत्यन्त आशुकारी होते हैं। सौम्य पदार्थ इतने शीघ्र नहीं व्याप्त होते हैं इस लिये स्थिति स्थापक होते हैं।

जो पदार्थ जितने बलवान और आग्नेयान्श अधिक होंगे उनके दोष गुण उतने ही अधिक शीघ्र व्यापक बलवान दोष या गुण वाले होंगे।

आज हम पाठकों के समक्ष उस पदार्थ को लेकर उपस्थित हो रहे हैं जो कि अपने दोषों के कारण महा भयंकर है और गुणों के कारण अमृत के समान है।

यह पदार्थ 'विष' शब्द से परिचित है जिसका शाब्दिक अर्थ 'शीघ्र व्यापक होने वाला' है। वस्तु जात मात्रानुरूप शरीर के अन्दर व्याप्त होते हैं व्याप्त होने के कारण ही शरीर के अंग बन सकते हैं किन्तु मात्रा से अधिक होजाने पर सबपदार्थ विष कार्य करने वाले हो जाते हैं इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि वस्तु जात शरीर में व्याप्त होते हैं किन्तु अधिक मात्रा से दुर्गुण (दोषका कार्य) करते हैं, इस लिये पदार्थ मात्र विष हैं। अब यह सिद्ध हो जाता है कि पदार्थ जात अपनी मात्रा के अनुरूप अमृत हैं किन्तु अधिक मात्रा में विष हैं क्यों कि तब वो विष कार्य से शरीर को नाश की ओर ले जाते हैं।

उपरोक्त कथन से वस्तुजात के "विष" कहने में कोई अत्युक्ति न होने पर भी हम यहां पर उन विषों के विषय पर ही संक्षेप से वर्णन करेंगे जिनको कि आरम्भ काल से विष कहते आये हैं, जो कि अत्यन्त आशुकारी और मारक हैं, या युक्ति युक्त प्रयोग करने से अमृत के समान हैं।

पहिले लिख आये हैं कि सारा संसार "अग्नीषोमात्मक" है इस लिये कोई भी पदार्थ इन विभागों से बाहर नहीं जा सकते हैं किन्तु अग्नि गुण

भूयिष्ट पदार्थ ही आग्नेयान्श अधिक होने से शीघ्र फैलते हैं इस लिये विष मात्र का अग्नि गुण भूयिष्ठ होना निश्चित है किन्तु तरतम (कमोवेशी) भाव यहां भी रहता है इसलिये जितना अधिक सोम भाग जिस विष के साथ होगा वह उतना ही शरीर के योग्य और कम खतर नाक होगा।

शास्त्रों में कन्द विष १८ प्रकार के गिनाये हैं। जिनमें ८ सौम्य और १० उग्र (आग्नेय) कहे गये हैं। सौम्य भक्षण से तथा उग्र स्पर्श या सूंघने से ही मारक हैं। इसमें साफ मालूम पड़ता है कि ८ विष (सौम्य) ही प्रयोग में लाने चाहियें।

सम्पूर्ण संसार स्थावर और जंगम भेद से दो विभागों में विभक्त है इस दृष्टि से विष भी दो भागोंमें बट जाता है प्रथम स्थावर जिसके अन्तर्गत कृत्रिम विष भी आजाता है। द्वितीय जंगम विष।

स्थावर विष के आश्रय दस होते हैं। जैसे—मूल, पत्र, फल, पुष्प, छाल, दूध, सत्व, निर्यास धातु औ कन्द।

जंगम विष के आश्रय १६ हैं। जैसे—दृष्टि, निःश्वास, दंष्ट्रा, नख, मूत्र, मल, शुक्र, लाला, मुख, स्पर्श संदंश, विशर्धित, (गुदवातविष) गुद, अस्थि, पित्त और शूक।

स्थावर जंगम या कृत्रिम विष अगर अपने सब गुणों से प्रबल हों तो वह विष तत्काल मनुष्य शरीर को नष्ट कर देते हैं। विष में रहनेवाले निम्नलिखित १० गुण होते हैं।

(१) रौक्ष्यः—

यह गुण वायु का है इससे शीघ्र वायु कुपित होकर अपनी रूक्षता को प्रकट कर देता है।

(२) तैक्ष्ण्यः—

यह गुण तेज का है। इसलिये शीघ्रशरीरस्थ पित्त को कुपित कर मति विभ्रम और मर्म बन्धों को छिन्न कर देता है।

(३) औष्ण्यः—

यहभी तैजस प्रधान गुण है जिससे शीघ्र रक्त और पित्त बिगड़ जाते हैं।

(४) सूक्ष्मः—

सूक्ष्मातिसूक्ष्म स्रोतों के द्वारा सर्व शरीर में व्याप्त हो शरीर के अंग प्रत्यंग को विकृत कर देता है यह भी वायु का गुण है।

(५) आशुः—

यह भी वायु का गुण है अथवा आशुकारी पित्त भी होसकता है। इसलिये यह शीघ्र शरीर में पहुंचजाता है या पित्तोल्वण सन्निपात के लक्षण जैसे—अतिसार भ्रम, मूर्च्छा आदि कर देता है।

(६) व्यवायिः—

जो पदार्थ पाक होने से पहिले शरीर में व्याप्त हो जाता है और पश्चात पाक को प्राप्त होता है उसको "व्यवायि" कहते हैं। इस गुण से विष शरीर पाक हुए सब शरीर में व्याप्त होकर प्रकृति को नष्ट कर देता है।

(७) विकाशिः—

यह सन्धि बन्धनों को ढीला कर देता है और धात्वोज को सुखा कर दोष धातु और मलों को नष्ट कर देता है।

(८) विशदः—

यह भी वायु का गुण है जो क्लेद का शोषक होता है।

(६) लघुः--

यह गुण भी वायु का है। इससे यह दुश्चिकित्स्य होता है।

(१०) अविपाकिः--

इसका शीघ्र विपाक नहीं होता है इसलिये बहुत समय तक कष्टकारी बना रहता है।

स्थावर जंगम विष के सामान्य लक्षण जो खाने से या शरीर में पहुंच जाने से प्रकट होते हैं नीचे लिखे जाते हैं।

स्थावरः--

इसमें ज्वर, हिचकी, दन्तहर्ष, गलग्रह, फेनछर्दि अरुचि श्वास और मूर्च्छा होती है।

जंगमः--

इसमें निद्रा, तन्द्रा,क्लम, दाह, कम्प,रोमहर्ष शोफ और अतीसार होता है।

इनके वेग आठ होते हैं। प्रथम में संताप, द्वितीय में कांपना, तृतीय में दाह, चतुर्थ में निपतन पांचवें में झाग का वमन,छठे में विकलता, सातवें में जड़ता और अठावें में मृत्यु।

जंगम विषों में सब से तीक्ष्ण सर्प-विष होते हैं। इनकी तीन जातियां प्रधान होती है। प्रथम "भोगि" द्वितीय 'मण्डली' तृतीय 'राजिल'।

भोगिः--

इनके दंश में काला पन और सब बीमारियां वात प्रधान होती हैं।

मण्डलीः--

इनका दंश पीला और मृदु शोथवाला तथा पित्तके विकार करने वाला होता हैं।

राजिलः--

इनके दंश स्थान पर स्थिर शोथ होता है स्थान पिच्छिल रहता है पाण्डुवर्ण स्निग्ध और अत्यन्त सान्द्र (घन) रक्त निकलता है और कफके रोगों को करने वाले होते हैं।

उपरोक्त ग्राह्य विषों में से विषों की उचित रीति से शुद्धि करली जाय तो विष ठीक २ मात्रा के प्रयोग करने से अमृत कार्य करते हैं। क्योंकि विष ही एक ऐसे हैं जो कि सब रसायनों में अत्यन्त बलवान हैं और सम्पूर्ण व्याधियों को नष्ट करने वाले हैं।

विष अत्यन्त रसायन हैं ताक़त देने वाले वात और कफ के रोगों को हरने वाले हैं यह कटु (वायु और अग्नि गुण भूयिष्ठ) तिक्त (वायु और आकाश गुण भूयिष्ट) और कषाय (वायु और पार्थिव गुण भूयिष्ट) रसवाला है। मदकारि (तमो गुण प्रधान होने से बुद्धिनाशक) है। यह व्यवायि विकाशि, आग्नेय, योगवाहि (संगि के गुण को ग्रहण करने वाला) शीत नाशक, और ग्राहि है। युक्ति से सेवन करने से अत्यन्त सुख देने वाला है।

पथ्यभोजी के लिये त्रिदोषघ्न है। बृंहण और वीर्य वर्द्धक है। कुष्ठ वातरक्त, श्वास, अग्निमान्द्य, प्लीहा, उदर, भगन्दर, गुल्म, पाण्डु व्रण और अर्श आदि रोगों को नष्ट करने वाला है। युक्तिपूर्वक सेवन से प्राण वर्द्धक और रसायन है किन्तु अयुक्ति से सेवन करने पर प्राणों को हरलेता है।

इस लिये सबसे प्रथम ग्राह्य विषों को युक्ति पूर्वक शुद्ध करलेना चाहिये क्योंकि शुद्धि करलेने से इसके दुर्गुण कमज़ोर पड़ जाते हैं और शरीर के विशेष उपयोगी होजाते है किन्तु इसके सेवन में मात्रा पथ्य और घृतदुग्धादिक सेवन

का विशेष ध्यान रखना चाहिये (रोगों के नष्ट करने के लिये हिताशी और घृताशी होना चाहिये। रसायन के लिये दुग्धाशी विशेष होना चाहिये कल्प के लिये भी पथ्य सेवी ब्रह्मचारी दृढ़ता पूर्वक बना रहना चाहिये तब सिद्धि होने में कोई संशय नहीं रहता है।

उपरोक्त विधि से यदि विष उचित मात्रा से ठीक २ सेवन किया जाय तो किसी औषधि से नष्ट न होने वाली दुष्ट व्याधियां व वात कफ से उत्पन्न व्याधियां शीघ्र नष्ट हो जाती हैं।

इसका प्रयोग शरद, ग्रीष्म, वर्षा और वसंत में नहीं करना चाहिये तथा क्रोधित, पित्तार्त, क्लीव, राजयक्ष्मा, भूख प्यास, श्रम, ऊर्ध्वसेवि क्षय रोगी, गर्भिणी, बाल (८ वर्ष) वृद्ध ८० वर्ष और राज मन्दिर में प्रयोग नहीं करना चाहिये। हेमन्त और शिशिर ऋतु में ही युक्ति पूर्वक मात्रा नुसार ही सेवन करना चाहिये। इस में पथ्य नीचे लिखा जाता है। घी दूध मिश्री मधु गेहूं चावल जौ काली मिर्च सैंधा नमक मुनक्का मीठे शर्बत (पानक) ठण्डे ब्रह्मचर्य हिमदेश हिमकाल हिमजल आदि का सेवन करना चाहिये।

यदि कभी प्रमाद से अधिक मात्रा सेवन की जाय तो इसके सेवन से शरीर में आठ वेग होते हैं जिनका वर्णन पहिले कर आये हैं। उन वेगों का ध्यान रख कर तब मंत्र तंत्र या औषधि प्रयोग से विष नष्ट करने का प्रयत्न करना चाहिये।

सबसे प्रथम स्थावर विष की अधिक मात्रा वाले को वमन कराना ही सबसे श्रेष्ठ है जो कि कड़वी कोपात की (बन्दाल डोडा) का क्वाथ बना उसमें मधु और घी मिला (प्रक्षेप भाग) कर पिलवाना चाहिये। अथवा कड़वी तोम्बी की जड़ या पत्र चूर्ण पानी के साथ प्रयोग करना चाहिये। विष अत्यन्त उष्ण होता है यह अपने औष्ण्य तथा तैक्ष्ण्यसे पित्तको कुपितकर देताहै। इसलिये शीतल जल से सिञ्चन करना चाहिये और जल्दी विषघ्न औषधियों को मधु और घी के साथ देना चाहिये। अथवा जिन २ दोषों के लक्षण मिलते हों उन दोषों को शान्त करने वाली औषधियों का प्रयोग करना चाहिये।

वमन के बाद बकरी के दूध का प्रयोग तब तक कराना चाहिये जब तक कि वमन होता रहे जब वमन बन्द हो जाय तब दूध बन्द कर सकते हैं। जब दूध पेट में ठहरने लग जाय तब समझना चाहिये कि विष निकल चुका है वा जीर्ण (पाक) हो चुका है।

हल्दी और चौलाई का रस पीने से विष नष्ट होजाता है। नाई (सर्पाक्षी) और सुहागा घी के साथ सेवन करने से विष वेग नष्ट होजाते हैं। अथवा घी सुहागा ही मिलाकर पीने से भी सवेग विष नष्ट होजाता है अथवा विष सेवित को अभय तो ठीक शोधन कर सूक्ष्म ताम्र चूर्ण मधु के साथ देने से हृदय शुद्ध होजाता है।

सर्प दंष्ट के लिये शीघ्र ही मणि मन्त्र और औषधियों का प्रयोग करना चाहिये क्योंकि मणि मन्त्रादिक अचिन्त्य प्रभाव करते हैं।

चौलाई की जड़के चूर्ण को चावलों के पानी के साथ पीने से मनुष्य निर्विष होजाता है। घी मधु नौणी (मक्खन) पिप्पली, अद्रक काली मिर्च

[शेष पृष्ठ १२२ पर देखिये]

कारबोलिक एसिड् (Acidum Carbolicum)

[ले०—डा० एन० एन० घोष M. B. B. S.]

इस अम्ल को कोलतार के तेल से विशेष रसायनिक विधि द्वारा खेंच कर तैयार करते हैं। यह बे रंग सूई की तरह पतली २ क़लमें मिली हुई होती हैं। जो आसानी से पिघल जाती और जिससे टार के क़िस्म की बू आती है स्वाद किसी क़दर मिठास लिए हुए और खराशदार, हवा में खुला रखने से प्रायः इस का रंग सुर्खी मायल हो जाता है जो कि इसमें किसी अन्य वस्तुओं के मिलावट का प्रदर्शक है, १०२ डि० फारनहाइट पर पिघल जाता है। और इस समय इस का भार प्रायः १०६० से १०६६ तक होता है और ३७१°६ दर्जे फारनहाइट पर उबलने लगता है। फ़ेनोल नीले लिटमस पेपर को सुर्ख नहीं करता—लेकिन ऐलब्युमेन को जमा देता है।

कारबोलिक एसिड १ भाग तीस या चालीस भाग पानी में हल हो जाता है। अलकोहल, ईथर, क्लोरोफ़ार्म, ग्लीसरीन लाइकर- पुटासी और लाइकर सोडियाई में भी आसानी से हल हो जाता है।

अगर ६० डिगरी फ़ारनहाइट की उष्णता पर कार्बोलिक एसिड में ६ से १० फ़ी सदी तक पानी मिलाया जाये तो वह पतला हो जाता है।

मिलावट—

आयरन (लोहा) और रोज़िलिक एसिड् के मिलाने से और खुला रखने से इसका रंग सुर्खी मायल हो जाता है तथा क्रिज़ोल के मिलने से कार्बोलिक मिश्रित जल गदला मालूम होता है।

पहचान—

इस में से एक विशेष प्रकार की गंध जो तारकोल की सी होती है आती है यही इसकी पहचान है।

विरोधि—क्लोरल और फ़ेरस सल्फ़ेट।

मात्रा—१ से ३ ग्रेन।

इसको गोली या मिक्सचर के रूप में दिया जाता है। १२ ग्रेन कार्बोलिक एसिड २४ ग्रेन मुलेठी का चूर्ण मिलाने से बढ़िया गोलियां बनजाती हैं।

१२ग्रेन कार्बोलिक एसिड, लिकरिस पाउडर १७ ग्रेन ७ ग्रेनकतीरा गोंद पाउडर मिलाकर गोली बनायें

मरहम कार्बोलिक—

फ़िनोल १ भाग

ग्लिसरीन ३ ,,

व्हाइटपेराफ़ीन आयंटमेंट १२ भाग

पहले फ़िनोल को ग्लीसरीन में हलकरके फिर पेराफ़ीन आयंटमेंट को इसमें मिलालें। यह लगाने के लिये मरहम तैयार हो गया।

कार्बोलिक तेल—

कार्बोलिक एसिड १ भाग

अलसी का तैल १६ भाग

मिलाकर हल करलें फिर इस्तेमाल करें।

कैथेटर आइल—

फ़िनोल १ भाग

केस्टर आइल ४ भाग

बादाम का तैल २० भाग

इन सब को अच्छी तरह मिला कर काम में लावें।

कार्बोलिक लोशन—

$\frac{1}{20}$ या $\frac{1}{40}$ की शक्ति का अर्थात १ या २ भाग कार्बोलिक एसिड शुद्ध निर्मल पानी भाग ४० में मिला कर इस्तेमाल किया जाता है।

एन्टीमीस्किटो—

कार्बोलिक एसिड ३० ग्रेन

साफ निर्मल पानी ७ औंस

यह लोशन मच्छरों के काटे हुए स्थानों पर लगाने से खारिश, दर्द, और शोथ को दूर करता है।

यदि इस लोशन में जरासी ग्लीसरीन मिला कर रात को सोने से पहले मुंह हाथों पर मल लिया जाय तो मच्छर नहीं काटते।

प्रभाव

आन्तरिक—

खालिश कार्बोलिक एसिड मेदा और अंतड़ियों पर शोथ का प्रभाव करता है। यह जहर क़ातिल है लेकिन इसका सल्यूशन कम मात्रा में दिया जाये तो मेदे में पहुंचकर सल्को कार्बोलेट के रूप में बदल जाता है। यह मेदे में जाकर इस क़दर डायल्यूट हो जाता है कि इसकी एण्टिजाय-मेटिक (नशा लाने वाला) प्रभाव नष्ट हो जाता है अलबत्ता इसको बड़ी मात्रा में अर्थात् जहरीली खुराक में दिया जाये तो इसका असर उपस्थित रहता है।

रक्त परिभ्रमण—

त्वचा, व्रण, श्लेष्मच्छदकला श्वास तथा आमाशय के द्वारा कार्बोलिक एसिड बहुत जल्द रक्त में प्रवेश हो जाता है। और गालिबन अलकेलाइनकार्बोनिट के रूप में यह रक्त में पाया जाता है। लेकिन इसको जरा अधिक मात्रा में देनेसे पहिले यह केन्द्रों में जाता है जिससे मफ़लूज हो जाता है। इस लिये पहले रक्त का भार और नाड़ी की चाल बढ़ जाती है फिर बाद में क्षीणता हो जाती है इसलिये पहले रक्त का वेग और नाड़ी की गति बढ़ जाने से कुछ समय बाद कमजोरी आ जाती है।

थोड़ी मात्रा में देने से हृदय पर इसका कुछ असर नहीं होता लेकिन अधिक मात्रा देने से हृदय की धड़कन क्षीण हो जाती है।

कम मात्रा में प्रयोग करने से इसका श्वास संस्थान पर कुछ असर मालूम नहीं होता परन्तु बड़ी मात्रा देने से केन्द्र को तेज कर देता है जिस कारण से पहले तो श्वास तेज हो जाता है लेकिन अन्त में श्वाससंस्थान पर पक्षाघात होकर मृत्यु होजाती है।

शारीरिक ताप

विधि पूर्वक मात्रा देने से शरीर के तापमान पर इस का कुछ प्रभाव नहीं पड़ता लेकिन अधिक मात्रा में खालेने से शरीर की उष्णता कम होजाती है और इसका निकास बढ़ जाता है।

बड़ी मात्राओं में देने से मस्तिष्कीय शोथ पर उलटा असर पड़ता है।

विष लक्षण

विषात्मक मात्रा देने से सिर में दर्द होने लगता है और चक्कर आता है आंखों की पुतलियां सुकड़ जाती हैं और अन्त में बेहोशी होजाती है।

मूत्र—

कार्बोलिक एसिड अधिकतर मूत्र द्वारा बाहर निकलता है। यदि इस का सेवन बेतरतीबी से किया हो उस के मूत्र की रंगत काली हो जाती है और परीक्षा लेने से सल्फो कार्बोलेट्स, ग्लायको रोनिक एसिड, हाइड्रो कोनीन और पाइरो केटिकीन मिश्रण प्राप्त होते हैं, जो कार्बोलिक एसिड के आक्साइड होने के कारण पैदा हो जाते हैं। क्योंकि पाइरोकेटिकीन मिश्रण का वर्ण काला होता है इस कारण इस से मूत्र भी काला आता है। मूत्र के काला होने का एक यही कारण नहीं हो सकता है, सम्भव है अन्य कोई कारण भी हो।

इस के कारण से कभी कभी मूत्र में अलब्यूमेन भी पाया गया है। मूत्र में स्वास्थावस्था में जो सलफेट्स पाये जाते हैं, वह इस एसिड के विष में बिलकुल नहीं रहते लेकिन इस हालत में मूत्र अर्से तक खराब नहीं होता।

निःसरण—

कार्बोलिक एसिड शरीर से मूत्र पसीनादि द्वारा निस्सरित होता है और कुछ भाग इस का शरीर में से उड़ जाता है जो कार्बोनेट और आगजीलेट में बदल जाता है।

बाह्य उपयोग—

क्योंकि कार्बोलिक एसिड पूतिनाशक और कृमिनाशक है इसलिये गंदी बदबूदार नालियों चबचों और शौचालयों में डालने के काम आता है। अस्पतालों में रोगियों के कमरों की सफाई के लिये बर्ता जाता है। कपड़ों को कृमि विहीन करने के लिये बर्ता जाता है।

ढाई फी सदी वाले कार्बोलिक एसिड के लोशन में एक चादर भिगो कर रोगी के कमरे के दरवाज़े पर लटका देने से कमरे की हवा शुद्ध हो जाती है। एन्टि सैपटिक (कृमि नाशक) और पूतिनाशक होने के कारण बहुत अधिक इस्तेमाल में आता है इस लिये कार्बोलिक लोशन (८० भाग में १ भाग या २० में १ भाग की शक्ति का) सर्जरी के काम आता है। सर्जन चीड़ फाड़ से पहिले हाथ तथा औज़ार कीटाणु रहित करने के लिये इसीसे धोते हैं और मरीज़ की उस जगह को भी साफ किया जाता है जहां आपरेशन करना है।

कमज़ोर खराब व्रणों को ठीक करने के लिये जिससे उसमें स्वस्थ अंगुर पैदा होकर जल्द व्रण भर जाये, गंग्रीन, अलसर या बदबूदार व्रण से बदबू को रोकने के लिये व्रणों के अंगूरों को रक्षित रखने के लिये कार्बोलिक एसिड लोशन का लगाना बहुत ही मुफ़ीद है। पित्ति, एगज़िमा (जलनदार फुंसी) की जलन दूर करने के लिये २० फी सदी का लोशन काम आता है। ग्लोसरीन आफ कार्बोलिक एसिड दाद व गंज के लिये अच्छी दवा है। संधिश्लेष्मिक कला का प्रदाह और गदूदों की सूजन गठिया शोथ, विसर्प ज़हरीले व्रण, गहराई में प्रदाह में इसकी गहरी जिल्द की पिचकारी डा० विटला के कथनानुसार बहुत लाभदायक सिद्ध हुई है।

मात्रा—२० बूंद शुद्ध जल में आधी ग्रेन हल करें।

आधी ग्रेन कार्बोलिक एसिड् को ५ बूंद पानी में हल करके अर्श के मस्सों में इंजेक्ट करें।

गर्भाशय सम्बन्धि रोगों में लगाने से दर्द की कमी हो जाती है—इस को १ की मर्दा के लोशन-से धोने से श्वेत प्रदर गर्भाशय व्रण और कैंसर में लाभ देता है।

नोट—इसे हाशियारी से लगायें वरना खारिश व प्रदाह होने का डर रहता है।

यदि तीव्र कार्बोलिक एसिड पी लिया जाये तो मरीज के मुंह से लेकर मेदे तक श्वेत शोथ मालूम होता है। श्लेष्मिक कला के जल जाने से मुख में सफेद दाग पड़ जाते हैं और वह बहुत जल्द रोगी हो जाता है क्योंकि उसका शरीर शीतल पड़ जाता है। शरीर का तापमान स्वस्थावस्था की अपेक्षा कम हो जाता है। नाड़ी कमजोर चलने लगती है। श्वास क्षीण और बालाई होकर मुश्किल से आने लगता है फिर अन्त में बन्द हो जाता है। श्वासावरोध हो जाने के साथ ही साथ हृदय की चाल भी बन्द होजाती है। श्वास में से कार्बोलिक एसिड की तीव्र गंध आती है। आंख की पुतलियाँ शुरू में सुकड़ी हुई मालूम होती हैं फिर अन्त में फैल जाया करती हैं। मूत्र का वर्ण काला और हरा होता है और सारे शरीर की हरकत बन्द होकर मरीज निश्चेष्ट होकर बेहोश होजाता है।

पोस्टमार्टम—

रोगी के मुख, अन्नप्रणाली और आमाशय में श्वेतदाग पाये जाते हैं जिस के इधर उधर सुर्ख शोथ होता है रंग काला होजाता है और उसकी शारीरिक शक्ति नष्ट हो जाती है।

चिकित्सा—

पहले आमाशय में स्टमक ट्यूब प्रवेश करा कर निम्न औषधियों में से किसी एक से उस समय तक बराबर धोते रहें जबतक कार्बोलिक एसिड की गंध आनी बन्द न होजाये।

१—सोडियम सल्फेट आधा औं० एक पाइन्ट गर्म पानी में मिला कर।

२—मगनेशियम सल्फेट आधा औं० १ पाइन्ट उष्ण जल में मिला कर।

३—सेकेरेटिड सल्यूशन आफलाइम १ ड्राम जल १ औं० में मिलाकर।

यदि किसी कारण वश आमाशय धुल न सके तो शीघ्र से शीघ्र एपोमार्फीन का इंजेक्शन दें जिससे वमन होकर आमाशय साफ होजाये। फिर मगनेशियम सल्फेट १ औं० या सोडियम सल्फेट आधा औं० को आठ औंस पानी में मिलाकर फौरन पिलादें।

नोट—क्योंकि सोडियम सल्फेट आदि कार्बोलिक एसिड के साथ मिलाकर "सल्फो कार्बोनेट मिश्रण तैयार कर देते हैं जो कि विषैले नहीं होते इसलिए मगनेशियम सल्फेट और सोडियम सल्फेट कार्बोलिक एसिड को दूर करने के लिये बहुत अच्छी विषनाशक वस्तुयें हैं। यदि रोगी को वमन कराने या दवा पिलाने का समय व्यतीत हो चुका हो तो फिर "सोडियम सल्फेट" का त्वचा मध्य इंजक्शन करें या पेरीटोनियम में पहुंचाना चाहिए।

आमाशय को साफ कर लेने के बाद बादाम का तेल या जैतून का तेल, २ छटांक गर्म पानी में

एसिड हाइड्रोसियानिक (Hydrocyanic Acid)

[ले०—श्री शान्ति]

यह अम्ल एक घातक विष है इसके चन्द विन्दु यदि असावधानी से अधिक देदिए जायें तो भयंकर परिणाम कर देता है। इसके प्रयोग में हमेशा सतर्कता से काम लेन चाहिए।

फेरोसाईनाइड आफ पोटेशियम और डायल्युटेडसल्फ्यूरिक एसिड को सम भाग मिलाने से जो तरल पदार्थ बनता है उसमें इस परिमाण में जल मिश्रित करें कि इसके १०० ग्रेन या ११० बून्द में नाइट्रेट आफ सिलवर के मिलाने से जो साइनाइड आफ सिलवर नीचे तल भाग में बैठ जाये उसे शुष्क करने पर तोले तो वह पूरा १० ग्रेन हो।

शक्ति—

इसमें २ ग्रेन हाइड्रोजन साईनाईड होता है। यह अम्ल हमेशा अम्बरी या नीली शीशी में मज़बूत शीशे की डाटवाली बोतल में रखना चाहिए और बोतल के सिरों को बांध कर उलटा कर के रखना चाहिए कभी इस का प्रभाव नष्ट न होजाये। पुराना पड़ जाने पर इसका असर नष्ट होजाता है जब इसका रंग भूरा होजाये तब औषध के काम का नहीं रहता।

Scheels Prussic Acid

यह युरोप में प्राय: कुत्तों के मारने के काम आता है यह ऊपर के अम्ल से दुगना तीव्र होता है।

सल्फ्यूरिक एसिड ल्वोर और हाइड्रोक्लोरिक एसिड

विरोधी—कौपर (तांबा) लोहा, चांदी के साल्ट (लवण) मरक्यूरिक औक्साइड सल्फाइड्स।

खांसी में इनको आमन्ड एमलशन में मिला कर देना चाहिए। और हैजे में सोडियम कार्बोनेट, मिलाकर पिलायें या दूध जितना रोगी पी सकता है पिलायें।

ज़ोफ (कमज़ोरी)की हालतमें उत्तजक मसलन बरान्डी आदि दें, या ईथर स्ट्रिकनीन का त्वचा मध्य प्रवेश कर रानों तथा बगलों में गर्म पानी की बोतल रखें श्वासावरोध होने लगे तो कृत्रिम श्वास क्रिया करनी चाहिए ताकि श्वास आना प्रारंभ होजाये।

कभी कौसिक के द्वारा कार्बोलिक एसिड धीरे २ अन्दर प्रवेश होकर विष लक्षण उत्पन्न कर देता है। इस कारण रोगी के सर में दर्द होता है क्षुधा नष्ट होजाती है नींद नहीं आती बुखार हो जाता है विशेषकर मूत्र सब्ज, स्याही मायल धुयें के रंग काआने लगता है।

नोट—सब्ज या धुयें के रंग का मूत्र आना पूर्व लक्षण हुआ करते हैं मरीजों के मूत्र की परीक्षा करके मालूम कर लेना चाहिये कि मूत्र में मामूली सल्फेट उपस्थित हैं कि या नहीं।

विस्मथ कार्बोनेट तथा पिपरमेन्ट वाटर को मिला कर देना विशेष लाभदायक साबित हुआ है।

यह बहुत ही घातक विष है तथापि रोगावस्था में इसका औषधि के रूप में ही सेवन किया जाता है।

यह इतना जबरदस्त घातक विष है इसकी कुछ ही बून्दों से मिनटों में मृत्यु होजाती है यदि प्योर एसिड की एक बून्द भी एक जवान की आंखों में डाल दी जाये तो वह मनुष्य फौरन मर जाता है यह औषधियों में खालिस अम्ल काम में नहीं आता हमेशा पानी मिला हुआ ही व्यवहार में आता है इससे निर्मित मिश्रण भी प्योर अवस्था में हलाहल है।

बाह्य प्रयोग —

डायल्यूटिड हाइड्रो सियनिक एसिड जिल्द पर लगाने पर त्वचा में प्रवेश करके शून्यता पैदा करदेता है मिश्रित लोशन से हर प्रकार की खुजली, पित्ती और खाज पर बहुत अच्छा असर पड़ता है इसके लिये १० बून्द फी औन्स वाला लोशन व्यवहार में लाना चाहिये।

यह एक तीव्र विष है इसलिये व्रण या छिली त्वचा पर लगाना नहीं चाहिए।

अन्तरीय प्रयोग

यह अन्नप्रणाली द्वारा शीघ्र अभिशोषित होजाता है और म्यूकस मेम्ब्रेन द्वारा भी इसी प्रकार शोषित होता है। मुख और आमाशय पर भी इस का ऐसा ही प्रभाव होता है जैसा कि त्वचा पर होता है, यह एक आमाशय शून्यक अम्ल है।

रक्त——

यह प्रत्येक भाग से अभिशोषित होकर रक्त में फौरन मिल जाता है। यदि इसके प्रयोग के बाद शीघ्र ही मृत्यु होजाये तो शरीर का समस्त रक्त बहुत ही अधिक रक्ताभ होजाता है जिसका कारण यह होता है कि रक्त ऑक्साइड होजाता है अर्थात हिमोग्लोबीन में ऑक्सीजन मिल जाती है डा० विलंगटन के कथनानुसार रक्त बिना मामूली तबदीली के तेजी से चला जाता है। लेकिन मृत्यु कुछ मिनट बाद अर्थात २० से ३० मिनट के बाद हो तो फिर रक्त का वर्ण काला पड़ जाता है जिसका कारण यह होता है कि इस अम्ल का असर केन्द्रों पर पड़ कर और श्वासावरोध होकर रक्त का ऑक्सीजन, कारबोलिक एसिड गैस में परिवर्तित होजाता है।

दिल

इस अम्ल की एक बड़ी मात्रा दिल को शीघ्र बन्द कर देता है यदि इस अम्ल को दिल के ऊपर लगायें तब भी दिल की गति बन्द होजाती है। कम मात्रा में इसे देने से मैडेला में वागसनव का केन्द्र तेज होजाता है और नाड़ी की गति मन्द पड़ जाती है क्योंकि श्वासपथ केन्द्र पर इस का प्रभाव पहले किसी क़दर उत्तेजक पड़ता है फिर बाद में उस पर फ़ालिज का असर होजाता है किसी में रक्त का दबाव बढ़ जाता है परन्तु बाद में वह बहुत कम होजाता है।

श्वासपथ——

श्वास का केन्द्र भी हाइड्रोसियनिक एसिड के प्रभाव से फ़ालिजयुक्त होजाता है बल्कि हृदय और धमनियों से भी शीघ्र फ़ालिज के प्रभाव में आजाता है। चुनांचे श्वासपथ के फ़ालिज का असर होजाने से श्वास की गति और ताकत में कमी आजाती है।

रोगी प्राय: श्वास अवरोध के कारण मर जाता है।

जब इस अम्ल की एक बड़ी मात्रा दी जाती है तो हृदय की गति बन्द होजाती है।

मस्तिष्क---

कम मात्रा में इस को देने से मस्तिष्क पर विशेष प्रभाव नहीं पड़ता, अगर बड़ी मात्रा अर्थात जह-रीली मात्रा दे तो बेहोशी कोमा हो जाता है जिसका कारण यह होता है किया तो सीधा मस्तिष्क पर इसका असर पड़ता है या श्वासावरोध के कारण सुर्ख रक्त काला होजाता है तब दिमाग पर नारकाटिक और डीप्रेसेन्ट असर होता है। पशुओं में पहले कमेड़ा होने लगता है फिर कोमा होजाता है परन्तु मनुष्यों में इसके समप्रभाव के कारण कमेड़ा उत्पन्न नहीं होता है।

मेडिल्ला व स्पाइनलकार्ड---

जैसा कि पहले वर्णन हो चुका कि हाइड्रोसियनिक एसिडसेमेडल्ला में हृदय और रक्त की धमनियों पर फालिज पड़ जाता है निगाह भी इससे मफलूज होजाने से पहले इसकी हरकत कमजोर हो जाती है परन्तु अन्त में फालिज का असर होजाने से वह हरकत बिलकुल जाती रहती है।

निःसरण

यह अम्लअधिकतर श्वास के मार्ग से निकलता है कुछ भाग इसका सल्फ्यूसाइ नाईड की शकल में गुर्दों के द्वारा भी बाहर निकलता है।

औषधि में बाहिय प्रयोग----

डिपलूटिड हाइड्रोसियानिक एसिड के लोशन से प्रत्येक प्रकार की कन्डू (खुजली) को और विशेष कर शीतपित्त और जूं के काटने की खारिश वगैरह को बहुत फायदा होता है इस आशय के लिये प्राय: १० बून्द फी औंस पानी वाला लोशन इस्तेमाल किया जाता है इसका यह नुस्खा बहुत मुफीद होता है।

प्रयोग लोशन----

हाईड्रोसियानिक एसिड डि०	२ ड्रा०
ग्लीसरीन	२ ड्रा०
रोजवाटर	७ औं०

इनको मिलाकर खारिश की जगह लगाये।

मरहम----

हाइड्रोसियानिक एसिड डि०	आधा ड्रा०
सादा मरहम	१ औं०

मिलाकर खारिश की जगह इस्तेमाल करें।

नोट—इसका लोशन या मरहम छिली हुई या व्रण वाली त्वचा पर हरगिज नहीं लगाना चाहिए वर्ना इसके फौरन अन्दर प्रवेश होने से विषलक्षण उत्पन्न होने का डर रहता है।

आन्तरिक प्रयोग----

इसका मेदे पर सुन करने वाला प्रभाव पड़ता है इसलिये इसको ऐंठनदार आमाशय के शूल में और ऐंठनदार दर्द मैदा और डिसपेप्सिया में देने से अधिक लाभ होता है शूल शान्त होजाता है। और कै का आना रुक जाता है जो बदहज्मी के कारण से हृदय धड़कता है उसमें भी लाभ दिखाई देता है क्योंकि इसका प्रभाव रक्त प्रणालीस्थ केन्द्रों पर पड़ता है। इसलिये खुश्क खांसी में दमा रोग में काली खांसी हिचकी में इसके देने से लाभ होता है। खुश्क खांसी वगैरह में यह नुस्खा निहायत मुफीद पड़ता है।

हाईड्रोसियानिक एसिड डि०	२॥ बू०
लाइकर मार्फिया हाइड्रो क्लोराइड	७॥ बू०

इंफ्युंकुन सीरप टोलू ४० बूंद रोजी एसडी ४ फ्लूड ड्राम ऐसी १-१ मात्रा दिन में दो बार दें।

प्रभाव----

एसिड हाईड्रोसायनिक बड़ी मात्रा में देने से मृत्यु शीघ्र से शीघ्र उपस्थित होती है। प्राय: चन्द सेकिन्ड से २ मिनट के अन्दर अन्दर आदमी मर जाता है थोड़ी मात्रा में देने से मनुष्य बिल्कुल बेहोश होजाता है उसकी आंखों की टकटकी बंध जाती है और आंखों की पुतलियां फैल जाती हैं नाड़ी कमजोर अनियमित होजाती है। या बिल्कुल सख्त होजाती है। श्वास मन्द और गाध (गहरा) खिचकर आता है और मुंह में झाग भर आते हैं। त्वचा ठंडी और चिपचिपी होजाती है और आखिरकार मृत्यु मुख में चला जाता है।

पोस्ट मार्टम्----

शरीर में से एसिड हाइड्रोसियानिक की गंध आती है त्वचा का वर्ण नीला पड़ जाता है हाथों की अंगुलियां अन्दर को मुड़ी हुई और मुट्ठियां बंधी हुई होती हैं जोर से जबड़ा बन्द होजाता है मुंह में फेन होते हैं आंखों के डेले स्थिर और चमकदार होते हैं और पुतलियां फैली हुई सारे शरीर का रक्त कृष्ण वर्ण होजाता है और भेद में किसी क़दर जमा हुआ खून पाया जाता है।

चिकित्सा---

क्योंकि यह बहुत तीव्र विष है यदि इसका इलाज शीघ्र किया जाये तो मरीज़ के बचने की आशा रहती है नहीं तो मृत्यु होजाती है। यदि जहर खाते ही मरीज़ के इलाज का मौक़ा मिले तो शीघ्र खुली हवा में लेजाकर इसके आमाशय को स्टमक पम्पसे शीघ्र धो डालें। या कोई वमन कारक औषधि देकर कै करा दें। फिर एक या दो गज़ के फासले से इसके सर और पृष्ठ बंश पर जल का सेचन करते रहें या इन पर बारी २ से शीतल और गर्म पानी डालते रहें। मसनूई श्वास क्रिया करें तेज़ इथर या सेल वाले टायज़ या बराएडी वगैरह यदि होसके तो स्ट्रिकनीन व एट्रोपीन की शीघ्र पिचारी (इंजकशन) कर दें। अक्सीजन, एमोनियां सुंघायें और बिजली का इस्तेमाल करें।

यह दवा विष नष्ट करने के लिये पिलायें—

फेराइ सल्फ	१८ ग्रे०
टिं फैराई परक्लोराइड	२० बू०
पानी	२ औं०

इसमें १ या २ ड्राम मैगनशियम कार्बोनेट (जिसको पहले ही से पानी में घोलकर शीरे की तरह बना रखा है) को मिला कर मरीज़ को शीघ्र पिलावें यदि आवश्यकता हो तो थोड़ी २ देर बाद इस दवा को २-३ बार पिला सकते हैं।

प्रयोग----

एसिड हाइड्रोसायनिक डिल	३ बू०
लाइकर बिस्मिथाई	३० ,,
सोडा बाई कार्ब	२० ग्रे०
लाइकर मार्फीनि एसिटेट्स	५ बू०
स्प्रिट क्लोरो फार्म	५ ,,
एका मैंथापिप	१ औं०

ऐसी १-१ खुराक प्रत्येक चौथे घंटे दें।

गुण

स्वारश मेदा में लाभ देता है।

२—एसिड हाइड्रोसायनिक डि० १ बू०
स्प्रिट एमोनियेफेटेडा ७ ,,
टिं० हायोसायमस ४ ,,
सिरप ओरंशियाई १५ ,,
एका एनिसी आई २ ड्रा०
ऐसी १-१ मात्रा दवा प्रत्येक ४-४ घंटे में दें।

गुण

बच्चों के खुनाक में लाभ देता है।

एसिड हाइड्रोसायनिक डिल ३ बू०
लाइकर मार्फी हाइड्रो० २० ,,
सोडा बाई कार्ब २० ग्रे
म्युसलिज एकेशिया आधा ड्रा०
क्रियोजूट १ बू०
शुद्ध जल १ औं०

ऐसी १,१ मात्रा प्रत्येक चौथे या छठे घंटे दें २-३ खुराक तक।

गुण

ऐंठनदार आमाशय के शूल में जिस में साथ ही क़ै भी आती हो लाभदायक है।

एसिड हाइड्रोसायनिक डि० ४ बू०
क्रियोजूट १ ,,
टेरेबिन्थ १० ,,
म्युसलिज एकेशिया ३० ,,
एका सिनेमोमाई ४ ड्रा०

ऐसी १-१ खुराक दवा फौरन पिलायें अगर मर्ज को लाभ न हो १ घंटे बाद फिर एक मात्रा दें जब भी श्वास प्रणाली में ऐंठन हो लाभ देता है।

हाइड्रोक्लोरिक-एसिड, सल्फ़्रिक-एसिड, नाइट्रिक-एसिड, फास्फोरिक-एसिड एसिड-ओग्ज़ालिकम

[ले०—डा० के० पी० भारद्वाज]

बाह्य प्रयोग

इन सारे अम्लोंका त्वचापर दाहकारीप्रभाव पड़ता है, मृदु धातुज अम्लके प्रयोग से अलब्यूमेन जम जाते हैं इनसे स्थानिक नाड़ियां संकुचित हो जाती हैं इनको इसलिये कभी कभी सकोड़ देने और रक्तरोधन के लिये इस्तेमाल करते हैं। अधिक जल में मिलाकर शरीर पर कपड़ा तर करके फेरने से ज्वर में कमी हो जाती है। शरीर में ठंडक अनुभव होती है जब अधिकता से पसीना आरहा हो इस के इस्तेमाल से रुक जाता है। ये सब अम्ल दुर्गन्ध नाशक हैं।

आन्तरिक प्रयोग

मुख, आमाशय, अंत्र —

इनके सेवन से मुख में लुआब अधिक पैदा होता है इसलिए प्यास को बुझाते हैं। आमाशय में ये सब तेज़ाब स्वतंत्र क्षार के साथ मिल कर उदासीन क्षार में परिवर्तित हो जाते हैं। इसी अवस्था में रक्त में सम्मिलित हो जाते हैं इन मृदु अम्लों को भोजन से पूर्व दिया जाये तो आमाशयिक रस का उत्पन्न होना बन्द हो जाता है जब इन को भोजन के साथ या बाद में दिया जाता है तो यकृत में पेंक्रियास और अन्तड़ियोंके ग्रन्थि का अम्ल रस अधिक पैदा होने लगता है।

शोरा तथा नमक का अम्ल ये यकृत को ताकत देने वाले और पित्त को निकालने वाले हैं।

रक्त ——

रक्त में यह अम्ल उदासीन अवस्था में होकर दौरा करते रहते हैं इनके सेवन से क्षार भाग कम हो जाता है परन्तु रक्त अम्लीय कभी नहीं बनता क्लोरोसिस (स्त्रियों का पाण्डु) में हाइड्रोक्लोरिकाम्ल से रक्ताणु बढ़ जाते हैं लेकिन रक्त रंजक हिमोग्लोबीन पर कोई प्रभाव नहीं होता।

वृक ——

इनके सेवन से मूत्र में क्षारीय भाग अधिक नहीं होता बल्कि नाइट्रिक एसिड कुछ भाग मूत्र को अम्ल धर्मी बना देता है।

विष लक्षण ——

यह सारे अम्ल छील देने (खराशदार) या जलन पैदा करने वाले हैं। यदि इन में से कोई अम्ल गलती से पीलिया जाये मुंह से लेकर आमाशय तक तीव्रदाह और शोथ होजाता है ओष्ठ

व मुख अन्दर से दग्ध होकर भूरे या जर्दी माय धब्बे पड़ जाते हैं काले रंग की रक्तमिश्रित वमन होती है।

वमन का पदार्थ पृथ्वी पर पड़ने पर झाग-दार बुलबुले देता है। खाना पीना श्वास लेना सब कठिन होजाता है। श्वासपथ में शोथ होजाने से श्वास कठिनता से आने के अतिरिक्त आवाज़ भी बैठ जाती है। तीव्र प्यास लगती है पेट ज़रा ही हिलने से कड़ा दर्द होने लगता है। प्रायः कोष्ठ-बद्धता होती है। यदि दस्त आये तो रक्त मिले रहने से रंग काला होता है। मूत्र आता नहीं बल्कि बनना बन्द हो जाता है हिचकियां आती हैं सर्द पसीना आकर रोगी बहुत क्षीण होजाता है। अन्त में निर्बलता से या ऐंठन से या श्वासावरोध से मृत्यु होजाती है।

घातक मात्रा

गंधकाम्ल १ ड्राम शोरकाम्ल २ ड्राम लवणाम्ल ४ ड्राम।

चिकित्सा

आमाशय को धोने वाले स्टमक पम्प, स्टमक ट्यूब या कै लाने वाली औषधियों का प्रयोग कभी नहीं करना चाहिए क्योंकि जहां २ से कंठ और आमाशय में दग्ध व्रण होते हैं स्टमक ट्यूब के लगने या कै के होने से रक्त निकलने का भय रहता है।

निम्नलिखित क्षारीय औषधियां सेवन करनी चाहिये।

१—सफेदी चूना १ तोला ढाई पाव पानी में मिलाकर।

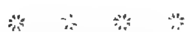
२—१ तो० या १॥ तो० चाक या खड़िया मिट्टी पानी में मिलाकर।

३—पोटेशियम कार्बोनेट आधा या १ औं० १ पाइन्ट पानी में मिलाकर।

४—सोडियम कार्बोनेट १ तो० या १। तो० १पाइन्ट पानी में मिलाकर।

५—देसी या विलायती साबुन पानी में घोलकर शीघ्र रोगी को पिलादें, और उसके बाद जैतून का तेल १२॥ तो० १ पाइन्ट पानी में मिलाकर या आरारोट या मैदा ३–४तो० १ गिलास पानी में घोलकर पिलादें दर्द को दूर करने के लिये मार्फिया का इंजक्शन करें। हाथ पांव शीतल होने लगें तो रानों व बगलों में गर्म पानी की बोतलें रखें।

शक्ति क़ायम रखने के लिये थोड़ा २ दूध गुदा द्वारा पहुंचाना चाहिए।





एमोनियम Ammonium

[लें०—डा० पी० एन० बनर्जी]

यह एक उग्र गन्ध गैस है। जो नौसादर और चूना के मिश्रण से उत्पन्न होती है।

नौसादर एक भाग चूना २ भाग। दोनो को खरल में डालकर खूब पीसें, घिसते समय इसमें से उग्र गंध वाली एक गैस निकलने लगती है बस यही एमोनिया है। खाल, मांस, खुर, सींग और बाल आदि के जलने से एक तीव्र बू वाली गंध निकलने लगती है यह एमोनिया का ही कारण है एमोनिया कोई धातु विशेष नहीं है यह और अम्लों के साथ मिलकर लवण बनता है इसका प्रसिद्ध लवण नौसादर है।

यह एमोनियम और लवणाम्ल के संयोग से बनता है। इससे और भी उपयोगी पदार्थ और लवण बनते हैं जो बहुत कामों में प्रयोग किये जाते हैं।

प्रधान २ औषधियाँ

१ स्प्रट एमोनियम एरोमेटिक

२ लाइकर एमोनिया फोर्ट

३ लिनिमेन्ट कैम्फोरो अमोनीयेटा

४ टिं गोमाई एमोनियेटा

५ लाईकर अमोनियाई एसीटेटिस

लाइकर एमोनिया फोर्ट

(Liq Ammonia Strong)

इसका दूसरा नाम स्ट्रोंगसल्यूशन आफ एमोनियां है।

निर्माण विधि

नौसादर (एमोनियम क्लोराइड) को बुझे हुए चूने में मिला कर अग्नि देने से जो एमोनिया गैस उत्पन्न हो उसको डिस्टिलवाटर में घोल ले।

यह बहुत ही तीव्र गंध वाला वर्ण रहित उत्पन्न क्षारीय पदार्थ होता है।

यह आंतरिक प्रयोग के लिये व्यवहार में नहीं आता बल्कि त्वचा के ऊपर जब कोई छाला डालना हो तब इसका प्रयोग होता है।

यह और भी कई औषधियों के निर्माण में काम आता है जैसे—लिनिमेंट कैम्फोरी एमोनिया, स्प्रट एमोनिया एरोमेटिक लाइकर एमोनी, एमोनियाई ब्रोमाइडस, इत्यादि।

स्प्रिट एमोनिया एरोमेटिक

(Spritus Ammoniae aromaticus)

एमोनियम कार्बोनेट ४ औं० स्ट्रांग सल्यूशन आफ एमोनियां ८ औं०, आइल आफ नटमग ४॥ फ्लुइड ड्राम आइल आफ लेमन ६॥ फ्लुइड ड्राम, एलकोहल ६० फीसदी का ६ पाइन्ट पानी ३ पाइन्ट।

प्रथम, आइल आफ नटमग और आइल आफ लेमन को एलकोहल और पानी के साथ

मिलाकर ७ पाइन्ट जल बनाकर अलग रखले फिर ६ औं० जल और मिला लें, साथ में स्ट्रांग सल्यूशन आफ एमोनिया और एमोनिया कार्बोनेट को मिलाकर इतनी अग्नि दें जिससे पिघल कर मिल जाये। तब इसमें ७ पाइन्ट पहिला छना हुआ जल मिला दें इसका अपेक्षित भार ·८६० होना चाहिए यह लगभग वर्ण विहीन होता है।

मात्रा—जब लगातार प्रयोग करना हो २० से ४० बू० यदि एक बारही देना हो ६० से ६० बून्द तक दे सकते हैं

नोट—स्प्रिट एमोनिया एरोमेटिक के साथ सीरप मिल्ला कभी नहीं देना चाहिए। यह मिश्रण सेवा में पड़ता है।

टिं० एमोनी कम्पोजिटा।

Tinctura ammoniae Composita.

इसको ओ डी लूस (Eau. de. Luce) भी कहते हैं यह सर्प विष की खास दवा है।

प्रभाव

वाह्य प्रयोग

अमोनियां प्राय: विषैले कीड़े मकोड़ों के विष कोप्रभाव हीन कर देता है इसलिये बर्र, ततैया, बिच्छू मधुमक्खी कान खजूरा, मकड़ी रेत में रहने वाले विषैले मकड़ आदि जानवरों के काटने पर एमोनियां का कम शक्ति का सल्यूशन लगाने से वेदना और शोथ कम होजाता है। अम्ल विष सर्प के काट लेने पर दंशित स्थान पर टिंचर अमोनिया कम्पोजिटा का त्वचा मध्य इंजेकशन देने से लाभ होजाता है, बेहोश मनुष्य को एमोनियां सुंघाने से तत्काल होश आजाता है क्योंकि इसके सूंघने से परावर्त्तित रूप से श्वास निःश्वास और हृदय तीव्र गति करने लगता है। चोट, मूर्छा निद्रा अफीम आदि के कारण से होने वाली मूर्छा में इसके सुंघाने से होश आ जाता है।

अमोनियां द्वारा विष लक्षण

अगर आमोनियां के तीव्र मिश्रण की एक बड़ी मात्रा पी ली जाये तो स्वरयंत्र के आक्षेपग्रस्त होने से श्वास की रुकावट के कारण मृत्यु हो सकती है नहीं तो कास्टिक सोडा (दाहकक्षार) पोटास वगैरह के लक्षण होजाते हैं।

चिकित्सा

जो क्षारीय विषोंकी चिचित्सा है वही इसकी है।



संखिया (Arscnic)

[ले०—डा० एस० एम० भारद्वाज M. B. B. S.]

यह एक घातक विष है। दूसरों को चुपचाप मारने के इस्तेमाल में अधिक आता है क्योंकि इसमें कोई स्वाद गंध नहीं होती है।

यह लोहा-गंधक, सुरमा काला, और विस्मिथ आदि धातुओं के साथ मिला हुआ कानों में पाया जाता है—इन धातुओं को डमरू यंत्र द्वारा उड़ाकर प्राप्त किया जाता है—संखिया ऊपर वाले पात्र में उड़कर लग जाता है संखिया फौलाद की शक्ल की तरह अर्थात—सुरमई रंग की एक चमक दार धातु है जो आसानी से टूट जाती और चूर्णित हो जाती है। तीव्र अग्नि देने के बिना द्रवीभूत हुये ही उड़जाती है इस समय इस में से तीव्र लहसन की सी बू (गंध) आती है। एका की रूप से सेवन नहीं कीजाती लेकिन आकसी-मिश्रित औषधियों के साथ करते हैं।

बाजार में सोमल श्वेत पीत कृष्ण रक्त चार प्रकार का प्राप्त होता है इसे आयुर्वेदीय ग्रंथ भी चारही प्रकार का मानते हैं। परन्तु आंतरिक सेवन रूप में श्वेत वर्ण का ही आता है।

इसका आकार --

साधारणतया सोमल संधाल वर्ण और कांच के सदृश पारदर्शक श्वेत रंग के भारी टुकड़ों में या श्वेत चूर्ण रूप में मिलता है स्वाद फीका होता है।

घुलने की शक्ती—

१ भाग सफ़ेद संखिया–१०० भाग शीतल जल में।
,, ,, ,,–२० भाग उबलते हुए जल में।
,, ,, ,,–७ भाग ग्लीसरीन में।
,, ,, ,,–२ भाग हाइड्रोक्लोरिक एसिड् में
,, ,, ,,–४०० भाग अलकोहल ६० फी सदी में।
,, ,, ,,–११ भाग लाइकर पुटासी में।
,, ,, ,,–४० भाग सैचुरेटिड सल्यूशन–आफ़ सोडियमकार्बोनेट में

खाने की मात्रा —

$\frac{१}{१०}$ से $\frac{१}{२०}$ ग्रेन तक

सेवनविधि —

संखिया को अर्क-कुर्स-या गोली के रूप में सेवन करना चाहिए-यदि इसकी बढ़िया गोलियां बनानी हों तो इसको मिल्क शूगर (दूध की शक्कर) के साथ डायल्युटिड ग्लुकोज (अंगूर का सीरा) मिला कर बनानी चाहिए।

लाइकर आरसेनिकेलिस के साथ जब नुस्खे में लाइकर स्टिकनीन लिखना हो तो इस बातका ध्यान रखना चाहिए ऐसी हालत में लाइकर आरसनि के लिम हाइड्रो क्लोरिकस लिखें और लाइकर आरसनिकेलिस न लिखें।

संखिया से निर्मित औषधियाँ

लाइकर आरसनिकेलिस

(Liquor Arsenicalis)

श्वेत संखिया ८७॥ ग्रेन, पोटाशियम कार्बोनेट ८७॥ ग्रेन, कम्पौन्ड टिंचर लिवन्डर ५ फ्लुइड ड्राम

डिल वाटर आवश्यकतानुसार या इस कदर जिस से सब औषधि परिमाण में एक पाइन्ट होजाये।

निर्माण विधि

पहले संखिया और पोटाशियम कार्बोनेट को १० फ्लुइड औंस पानी के साथ एक कांच के बर्तन में डालकर अग्नि दो जब वह साफ मिलकर एक द्रव अर्क जैसा तैयार होजाये उतार कर शीतल होने दो ठंडा होजाने तर टिंचर लिवेन्डर मिलाकर इसमें इतनी मिकदार में डिलवाटर मिलाओ जिससे पूरी औषधि १ पाइन्ट होजाये।

यह एक साफ निर्मल सुर्खी मायल द्रव होता है जिससे लिवेन्डर की गंध आती है, इसका स्वाद खारी होता है।

एक फीसदी या ११० बू० में १ ग्रेन संखिया होता है।

मात्रा २ से ८ बून्द तक।

लाइकर आरसनिसाई हाइड्रो क्लोरिक्स

इसे हाइड्रो क्लोरिक सल्यूशन आफ आरसनिक भी कहते हैं। श्वेत संखिये का चूर्ण ८७॥ ग्रेन, हाइड्रो क्लोरिक एसिड (नमक का तेजाब) २ फ्लुइड ड्राम। डिस्टिल वाटर आवश्यकतानुसार या इस परिमाण में जिससे सब औषध १ पाइन्ट हो जाये।

निर्माण विधि

पहले संखिया और एसिड को २ फ्लुइड औंस डिलवाटर में मिलाकर एक कांच पात्र में डाल कर इतना उष्ण करें जिससे द्रवित होकर एक होजाय फिर शीतल करने के लिए इसमें इतने परिमाण में डिलवाटर मिलायें जिससे सारी औषधि १ पाइन्ट होजाये।

यह साफ निर्मल बिना रंग का द्रव होता है जिसका स्वाद खट्टा होता है।

मात्रा

२ से ८ बून्द तक

उपयोग

यह त्वचा के उन रोगों पर अक्सीर है जिनका सम्बन्ध आतशक से है या जिन मनुष्यों को आतशक होचुकी हो फिर त्वचा रोग ग्रस्त हों। इसके इस्तेमाल से बहुत लाभ होता है।

आरसनी आयोडाइडम

Arseni Iodidum

संखिया और आयोडाइड के संघोलन को मिलाने से अग्नि द्वारा जल उड़ा देने से यह यौग तैयार होता है इसकी नारंजी रंग की छोटी छोटी कलमें होती हैं।

इसका १ भाग जल के ग्यारह भाग या चालीस भाग (६० फीसदी) में हल होजाता है।

शरीर में शक्ति देता है।

मात्रा— $\frac{1}{20}$ से $\frac{1}{10}$ ग्रेन तक।

नोट—एक खुराक में इसको $\frac{1}{5}$ ग्रेन और एक रोज में ! ग्रेन से अधिक न दें।

लाइकर आर्सेनाइ एट हाइड्रेजिराई आयोडीन

Liquor arseni et Hydrargyri Iodidi of Donovans Solution.

संखिया और पारद के आयोडाइड का संघोलन, इसकोही डनवांस सल्यूशन कहते हैं।

आरसनिक आयोडाइड ८७॥ ग्रेन रेड आयोडाइड आफ मरकरी (Red Iodide of mercury) ८७॥ ग्रेन डिस्टिलवाटर आवश्यकतानुसार।

पहले ४ औं० डिलवाटर में दोनों औषधियों को डालकर खरल कर लें छान लें। फिर छानते समय इतना डिलवाटर मिलायें जिस से पूरी दवा १ पाइन्ट होजाये।

यह हलके जर्द रंग का एक साफ द्रव होता है स्वाद धातु के समान कसैला होता है।

एक फीसदी यानी ११० बून्द में १-१ ग्रेन दोनों औषधि होती हैं

गुण :

रसायन है—

आतशक के लिये निहायत फायदेमंद होता है।

मात्रा—५ से १५ बून्द।

एसिडस, मार्फीन, साल्ट्स वगैरह अलकलाइड (क्षारीय) और दारचिकना इसमें मिला देते हैं।

फेरी आरसेनास (Ferri arsenas)

इसे आरसनेट आफ आयरन भी कहते हैं।

यह सब्ज रंग का एक चूर्ण सज्जीक्षार है जो संखिये कसीस के मिलने से तैयार होता है।

पहचान—आयरेन फास्फेट से इसका रंग नीला होता है। इसकी पहचान करने में भूल नहीं करनी चाहिए।

यह पानी में तो हल नहीं होता परन्तु हायड्रोक्लोरिक एसिड (Hydrochloric acid) में शीघ्रता से हल होजाता है।

इसमें लगभग ९० फीसदी फेरीआर्सिनेट होता है।

गुण:

रसायन है शरीर में शक्ति देता है। आर्सिनी एसिड के समान स्फूर्ति पैदा होती है।

सोडियाई आर्सेनास

Sodii arsenas

इसको सोडियम आर्सेनेट (Sodium arsenate) भी कहते हैं।

यह एक श्वेत वर्ण का चूर्ण होता है। जो एक भाग दो भाग पानी में हल होजाता है।

इसमें २५ से ३२ फीसदी आर्सनिक एसिड होता है।

मात्रा

$\frac{१}{४०}$ से $\frac{१}{१०}$ ग्रेन तक।

लाइकर सोडियाई आरसनेट

Liq Sodii Arsenate.

सोडियाई आरसीनास (३०० डिग्री की अग्नि पर खुश्क किया हुआ) ८७॥ ग्रेन यानी एक भाग को डिस्टिलवाटर ४ फलुइड औंस यानी ९९ भाग में मिलाकर हल करें। यह बिना रंग का तरल होता है।

शक्ति

१ फीसदी या ११० बून्द में १ ग्रेन।

नोट—लाइकर आरसनिकेलिस की अपेक्षा इसकी ताकत आधी होती है। लेकिन पियर सन्स सल्यूशन (Pearson's Solution) की शक्ति ६०० में १ होती है।

यह निहायत सुन्दर शक्तिदायक टानिक है त्वचा के रोगों से पीड़ित क्षीण मनुष्यों के लिए विशेषकर एग्जिमा रोग में विशेष लाभ प्रद सिद्ध हुआ है।

नोट—इसके सेवन से मेदे में खराश कम पैदा होते हैं।

मात्रा—२ से ८ बून्द तक।

ब्रोमाइड आफ आर्सेनिकम

(Bromide of arsenicum)

इसकी जर्दीमायल छोटी छोटी क़ल्में होती हैं जो पानी में आसानी से हल होजाती हैं।

मात्रा—[illegible] से [illegible] ग्रेन तक।

गुण

यह मधुमेह (डायाबेटीज) और इपिलेप्सी में लाभ देता है।

लाइकर आर्सेनीसी ब्रोमेटस

Liq Arsenici Bromatus.

आर्सेनीअस इन हाइड्रेट का पतला चूर्ण १ भाग पोटेशियम कार्बोनेट १ भाग डिस्टिल वाटर ८० भाग।

विधि

दोनों औषधियों को डिलवाटर में मिलाकर इतना गर्म करें कि दोनों मिल जायें फिर शीतल जगह पर रखदें। ठंडा होने पर ब्रोमीन २ भाग मिलाकर इसमें फिर डिस्टिलवाटर मिलायें जिससे सब मिलकर पूरा सौ भाग होजाये। फिर इसे यहां तक अग्नि दें कि वह एक बेरंग का तरल द्रव्य बन जाए।

मात्रा—५ बू०।

गुण

यह मुनासिब पथ्य के साथ मधुमेह और एपिलैप्सी में दिया जाये तो बहुत मुफ़ीद पड़ता है

नोट—यह औषध कई हफ्तों या महीनों तक लगातार सेवन किया जासकता है। इससे संखिये के विष लक्षण प्रकट नहीं होते।

कापर आर्सेनास

(Copper Arsenite)

यह लाइट हरे रंग का चूर्ण होता है।

मात्रा—[illegible] से [illegible] ग्रेन।

कम मात्रा में बार बार इसका देना बहुत लाभ दायक पाया गया है। इसलिये एक युवा रोगी को पहले [illegible] से [illegible] ग्रेन की मात्रामें प्रत्येक १०–१० मिनट बाद एक घंटे तक दें और फिर १–१ घंटे बाद दें। बच्चों को पूर्ण मात्रा से आधी मात्रा दें।

गुण

अंतड़ियों के बहुत से रोग जैसे कालरा (हैजा) डायरिया (संग्रहणी) डिसेन्ट्री (पेचिस) तथा आन्तरिक सन्निपात ज्वर में लाभदायक पाया है। क्लोरोसिस (हलीमक) रक्त की कमी में इसको [illegible] से [illegible] ग्रेन की मात्रा में दिन में ३ बार देना चाहिए।

किनीन आर्सेनास

(Quinine Arsenas)

यह सफेद रंग की छोटी छोटी बारीक क़ल्में होती हैं जो शीतल पानी में हल नहीं होतीं।

शक्ति

इसमें अनुमानिक २० फ़ीसदी संखिया और २ से २४ फ़ीसदी तक किनीन होती है।

गुण

यह पुराने मलेरिया ज्वरों में लाभ प्रद साबित हुआ है। एन्टि पिरियाडिक अर्थात दौरे से पैदा होने वाले रोगों में लाभ देता है।

आरसनिकल सिगरिट्स
(Arsenical Cigarettes)

हरएक सिगरिट में ? ग्रेन सोडियाई आरसेनस होती है।

गुण

श्वास, श्वासपथ सम्बन्धि रोगों में इसको सिगरट की तरह पिलाया जाता है रोगी को ३-४ वार इसका धूम्र पीना चाहिए।

लाइकर ओरी एट आर्सेनाई ब्रोमाइड
Liq Auri et Arsenii Bromide.

आरसनिडस एसिड ५ से ? ग्राम, ट्राई ब्रोमाइड आफ गोल्ड २५ से ३ ग्राम, ब्रोमीन वाटर आवश्नकतानुसार डिस्टिलवाटर आवश्यकतानुसार या इस परिमाण में कि तरल १००० क्योबिक सेन्टिमीटर हो जाये।

मात्रा — १ से २ बून्द।

इसको आतशक और न्यूरिस थीनियां में देते हैं।

आरसनिकल पेस्ट (Arsenical Paste)

आरसनिडस एसिड २ भाग मार्फिनसल्फेट १ भाग, क्रियोजूट इस कदर मिलायें जिससे सरेस जैसा गाढ़ा पेस्ट बन जाये।

गुण

एक सुई के सिर के बराबर या खशखाश के दाने के बराबर जो एक बार लगाने के लिये काफी होता है जरासी रुई पर रखकर विकृत दांत में रखदें और ऊपर से जरासी रुई और भरदें। यह खराब भाग को ठीक कर देता है।

२—पेस्ट आर्सेनिकेलिस (Past Arsenicallis)

संखिया २ भाग कोकेनहाइड्रोक्लोराम ४ भाग मैन्थल तथा ग्लीसरीन आवश्यकतानुसार इनको मिलाकर पेस्ट बनाकर लगायें

आर्सेनिसी एक्योरे टिक
Past Arsenici Escheratic

संखिया १ भाग चारकोल १ भाग रेड सल्फेट आफ मरकरी ४ भाग पानी आवश्यकतानुसार सब को मिलाले।

गुण

यह सिर के बाल उड़ जाने पर लगाना चाहिए और मरतान वगैरह में जलाने के लिये इस्तेमाल किया जाता है।

सोडियम काकोडीलेट
(Sodium Cacodylate)

यह सोडा और काकोडायलक एसिड का मिश्रण है जिसमें संखिया एक बड़ी मात्रा में मिला रहता है जिससे शरीर में बड़ी मात्रा संखिये की जा सकती है।

गुण

अभी हाल में फ्रांस के अनुसंधानकर्त्ता डाक्टरों ने इस औषधि के अनुभव लिये हैं कि यह अनीमियां (रक्त की कमी) जो विविध कारणों से उत्पन्न हुई हो नपेदिक न्यूरस्थेनियां, डायबटीज में विशेष लाभदायक बताया है।

नोट----

इसका हमेशा हाइपोडर्मिक इंजैक्शन देना चाहिए। इसके ट्यूब्ज भी आते हैं।

मात्रा—,'. से ' ग्रेन तक।

डी० सोडियम मेथिलास्सीनेट

(Di-Sodium methylarsinate)

इसको अरहीनाल (Arrhinal) भी कहते हैं यह भी काकोडायल एसिड का मिश्रण है। जिसको ट्यूबर क्लोसिस, मौसमी बुखार, स्लीपिंग-आदि रोगों में दिया जाता है

मात्रा—२ से ५ ग्रेन तक।

सोडियम-एमिनो फिनेल आर्सेनेट

(Sodium Amino Phenyl Arsinate)

यह एक क़लमी चूर्ण है जिसका स्वाद खारी होता है क्योंकि यह विषैला नहीं होता है इस लिये इसे निर्भय बड़ी मात्रा में दे सकते हैं।

मात्रा—१ से ३ ग्रेन तक कभी कभी १० ग्रेन तक भी दे सकते हैं।

गुण—

काला अजार मलेरिया, आतशक पर इसका अनुभव किया जारहा है अभी पूरा लाभदायक होना सिद्ध नहीं हुआ।

आर्सेनिक की गोली

(Pilula Ariatica) श्वेत संखिया ७ ग्रेन काली मिरच ७५ ग्रेन गमाकेशिया आवश्यकतानुसार।

संखिये को बारीक पीसकर कालीमिरच के चूर्ण के साथ खूब खरल करें फिर गोली बनालें।

प्रत्येक गोली में 1/16 ग्रेन संखिया होता है बाज नुसख़ों में 1/60 से 1/40 तक रहता है।

मात्रा—१ से २ गोली

गुण—

आक्षेपहर-दौरे के रोगों को लाभ देता है त्वचाजन्य रोगों में इसका सेवन लाभ देता है।

नोट—यह एशिया की गोलियां योरप के कई देशों में अभी तक इस्तेमाल होती हैं।

विष प्रभाव—

संखिये के विष का प्रभाव दो प्रकार से होता है एक तात्कालिक दूसरा चिरकालिक।

२—३ ग्रेन या १—२ रत्ती संखिया खाने से प्रायः मृत्यु हो जाती है।

संखिया खाने के थोड़ी देर बाद ही मूर्च्छा सी महसूस होने लगती है, जी मिचलाता और वमन आती है। मेदे को दबाने से वेदना होती है। यह लक्षण शीघ्र बढ़ जाते हैं।

वमन भूरे रंग की अकसर खून आमेज आती है। और पेट में तीव्र शूल होने लगता है और ऐंठन के साथ बहुत से दस्त आने प्रारम्भ हो जाते हैं। तथा पिंडलियों में तशन्नुज (ऐंठन) होता है। वमन शीघ्रता से आने लगती है और लगातार जारी रहती है। गले में जलन प्रतीत होती है और तीव्र प्यास लगती है। मूत्र आना बन्द हो जाता है नाड़ी सुस्त चलने लगती है। रोगी बहुत बेचैनी महसूस करता है शरीर शीतल पड़जाता है या बहुत कमजोरी होकर या मूर्च्छा की हालतमें मर जाता है।

मृत्यु समय—

कभी २० मिनट,प्रायः १ दिन, कभी कभी दस दिन भी लगजाते हैं।

संखिये के तात्कालिक विषात्मक लक्षण विशूचिका (हैजा) से मिले जुले होते हैं।

पोस्ट मार्टम—

संखिया खाये हुए आदमी की लाश चीर कर यदि देखी जाये तो उसके मेदा (आमाशय) और

छोटी आंतों में प्रदाह के लक्षण मिलते हैं और इनमें कहीं २ रक्त के धब्बे या जख्म होते हैं।

यदि रोगी किसी कारण मृत्युसे बच जाये और चन्द साल तक जीवन व्यतीत करे—उसके मरने पर यकृत या गर्दन या हृदय की परीक्षा की जाये तो ये सख्त चर्बी में बदली हुई मिलती हैं।

नोट—

यदि संखिया मुँह के द्वारा न भी दिया जाये केवल किसी व्रण या सतान पर अधिक मात्रा में लेप कर दिया जाये तो यह त्वचा द्वारा शोषित होकर विष लक्षण पैदा कर देता है। तब भी आमाशय (मेदा) में सख्त प्रदाह पाई जाती है जिससे यह परिणाम निकलता है। कि संखिया रक्त से मेदे में स्रवित होता है।

चिकित्सा—

आमाशय को स्टमक पम्प से धो डालें या वमनकारक औषधियों का सेवन करायें।

एपोमार्फीन हाइड्रोक्लोराइड का जल्द इंजेक्शन दें जब वमन होकर मेदा बिलकुल खाली होजाये तब निम्न विषनाशक औषधियों में से किसी एक का सेवन करायें।

१—लाइकर फेराइपर क्लोराइड ।। फ्लुइड औंस को २ औंस पानी में मिला दें और सोडियम कार्बोनेट आधा औंस प्रथक दो औंस जल में हल करें फिर इन दोनों दवाओंको हमवजन साथ मिलाकर इसमें से आधे औंस की मात्रा में प्रत्येक ५-५ या १०-१० मिनट के अन्तर से दें।

यह दवा संखिये के साथ मिलकर इसे नाकाबिले तहलील कर देती है जो शरीर को हानि नहीं पहुँचाती रेचन द्वारा आसानी से शरीर से निकल जाती है।

नोट—

उपरोक्त फादजहर की चार मात्रा ४-५ ग्रेन संखिये को बेकार बना देती है।

२—टिंचर स्टील ४ ड्राम में इतना ही पानी मिलाकर उसमें सोडियम कार्बोनेट या एमोनियम कार्बोनेट ६० ग्रेन मिलावें इस को जल्दी से मलमल के कपड़े में छान कर रोगी को पिलादें और ऐसी एक एक मात्रा आध २ घंटे के बाद दो तीन बार पिला दें। या

३—फेरीक क्लोराइड (Frerie Chlorid) या स्ट्रोंग सल्यूशन आफ फेरी क्लोराइड ३ भाग साफ पानी १५ भाग।

दोनों को मिलाकर एक कांच की डाट वाली बोतल में रखें और कालसी नेटिड मगनेशिया या मगनेशिया औक्साइड १ भाग साफ पानी १६ भाग में खूब मिलाकर एक दूसरी शीशी में रखें आवश्यकता के समय दोनों दवाओं को सम भाग मिला कर दें।

यह ध्यान में रखना चाहिए इस दवा को ताजा तैयार करके सेवन करायें।

डायल्यूटिड फेरि सल्यूशन और मेगनेशिया औक्साइड दो प्रथक २ बोतल में तैयार करके हमेशा तैयार रक्खें जिससे शीघ्र सम भाग मिला कर दी जाये।

सेवन विधि

दोनों दवाओं को सम भाग मिला कर ४ ड्राम या खाना खाने का चमचा भरकर ५-५ या १०-१० मिनट बाद तब तक पिलाते रहें जब तक विष का

असर न आये या जितनी तादाद में संखिया खाया गया हो उससे १२ गुनी मात्रा अधिक पिलानी चाहिए। यदि इसमें से कोई भी दवा मौके पर मिल न सके तब कैलसिनेटिड मेगनेशिया या एनीमल चारकोल या जैतून का तेल या लाइम वाटर (चूने का पानी) अधिक मात्रा में दें। प्यास के लिये बरफ़ चुसवायें यदि यह मिल न सके तो शीतल जल को घूंट २ करके दें। कमजोरी के लिये शक्ति बर्द्धक दवा दें या बाण्डी या विस्की वग़ैरह दें।

यदि शरीर शीतल होने लगे तो बगलों और रानों में गर्म पानी की बोतलें रखें कम्बल उढ़ायें यदि श्वास बन्द होने लगे तो कृत्रिम क्रिया करें। जब सब विष के लक्षण शान्त होजायें बेचैनी वग़ैरह को दूर करने के लिये "मार्फ़िया" का इंजैक्शन दें।

विषनाशक दवाओं के सेवन के बाद दस्त लाने के लिये मेगनेशिया सल्फ २४० ग्रेन या कास्टर आयल ४ ड्राम ४ औंस दूध के साथ दें।

नोट—

संखिये के खाये हुए आदमी को तुर्श (खट्टी) वस्तु नहीं देना चाहिए।

मकोय के पत्तों के रस या शाक या दूध में घी या जैतून का तेल पिलायें।

हरताल खाये जाने पर कूष्मांड का रस निरन्तर पीने को दें।

इसके अन्य योग

१—हरताल

(Sulphide of Arsenic or Trisulphurate at Arsenic)

इसमें चार भाग गंधक और ५ भाग संखिये के होते हैं बाज़ार में यह दो प्रकार की आती है।

१—वंशीपत्री अथवा वर्की

२—पिण्ड

पहली का रंग स्वर्णवत् चमकीला उज्ज्वल भार गुरु सूक्ष्म पत्रों से निर्मित यही दवाओं के काम में आती है।

पिण्ड हरताल में कोई चमक नहीं होती केवल हिरमजी के से डले होते हैं।

शोधन

चूने का पानी, कांजी, नीम्बूरस किसी एक के साथ मर्दन कर गर्मपानी से धो डालने से शुद्ध हो जाती है। हरताल को एक वस्त्र में बान्ध पोटली बनालें, पेठे के रस में दोलायन्त्र द्वारा पकालें।

मारण

शुद्ध हरताल को थोड़े चूने के पानी में मर्दन कर टिकिया बना मजबूत हान्डी में दुगनी या तिगनी पुनर्नवा, पीपल की भस्म, ढाक की भस्म, किसी एक की भस्म के मध्य में टिकिया बना धतूरे के पत्तों में लपेट कर रखदें ऊपर से हाण्डी का मुख बन्द दृढ़ता से करें १ या २ दिन कोयलों की आग पर रखें।

द्वितीय प्रकार

हरताल ४ तो० शुक्ति भस्म ४ तो० समुद्र फ़ेन या घी कुवार के साथ घोट कर टिकिया तैयार करें "बराह पुट" दें भस्म होजायगी।

२—मनःशिला

(Bisulphurate of Arsenic)

यह खनिज भी आती है। तीन भाग गंधक

और ५ भाग संखिया को किसी पात्र में रखकर अग्नि द्वारा पिघलाने से तैयार होती है।

इसका रंग लाल और चमकीला होता है। इसके खंड वजनी होते हैं स्वभावतः प्राकृतिक संखिया और लोहे की कच्ची धातुओं को मिला ऊर्ध्वपातन करने से प्राप्त होती है।

शोधन

भृंगराज निम्बूरस, अदरक स्वरस की सात भावना देने से।

संखिये का प्रभाव

बाह्य

संखिया स्वस्थ त्वचा पर लगाया जाये तो इस का कुछ भी प्रभाव नहीं पड़ता यदि छिली हुई त्वचा या व्रण हो उसपर लगाने पर प्रदाह या खराश पैदा हो जायगी और कास्टिक अर्थात जलानेवाला असर होता है बशर्ते कि संखिया अधिक मात्रा में लगाया जाये, अगर कम मात्रा में लगाया गया है तो त्वचा के द्वारा अभिशोषित होकर अन्दर विष लक्षण उत्पन्न कर देता है।

आन्तरिक

इसको छोटी मात्रा में सेवन करने से (. से . ग्रेन) मेदे की नाड़ियां चौड़ी हो जाती हैं और आमाशयिक रस अधिक परिमाण में बनने लगते हैं। इसी कारण से सोमल क्षुधा वर्द्धक है और मेदे को शक्ति देने वाला है।

यदि इसका अधिक मात्रा में सेवन किया जाये तो आंतों में तीव्र प्रदाह और खराश उत्पन्न होजाती है।

अगर संखिये को इंजैक्शन द्वारा शरीर में प्रवेश करें तब भी मेदे में ही जाकर जमाहोता है और तीव्र प्रदाह के लक्षण पैदा होजाते हैं।

रक्त

संखिया रक्त में शीघ्र प्रवेश करता है स्वस्थावस्था में तो संखिये का कोई असर नहीं होता लेकिन पाण्डू में इसके सेवन से रक्ताणु की वृद्धि और रक्त में सुर्खी बढ़ जाती है।

हृदय तथा रक्त परिभ्रमण

बहुत ही कम मात्रा में जैसे लाइकर आर्सेनिकलिस की आधी बिन्दु से १ बून्द तक हृदय को शक्ति देता है लेकिन अधिक मात्रा देने से रक्त का वेग और नाड़ी की चाल में कमी आजाती है और नाड़ियों में कुछ परिवर्तन ऐसे होजाते हैं जिनके कारण वे फट जाती हैं और रक्त प्रवाह हो जाता है।

शारीरिक परिवर्तन

इसमें डाक्टरों के भिन्न २ मत हैं सारांश यह है कि शारीरिक परिवर्तन पर सोमल का खास प्रभाव पड़ता है शरीर के प्रत्येक अंगप्रत्यंगों की रचना व कार्यों को ऐसे क्रम से बदल देता है जो भोजन के दोषों से रोग पैदा हो जाते हैं उनको इनसे बहुत लाभ होता है। इसलिये यह बलप्रद और रक्तशोधक है।

श्वास

श्वास क्रिया पर होने वाले प्रभाव का निश्चयरूप से मालूम नहीं परन्तु श्याम देश के मनुष्य तथा भारतवर्ष में सर्पों को पकड़ने वाली जातियां सेवन करती हैं।

इससे उनका श्वास गहरा और त्वचा सुन्दर तथा चमकीली होजाती है बहुत से मनुष्य इसको ८-१० ग्रेन की मात्रा तक भी खा लेते हैं।

वातसंस्थान

बहुत थोड़ी मात्रा में संखिया वातसंस्थान को ताक़त देता है लेकिन बड़ी मात्रा सेवन करने पर पट्ठों की स्पर्श शक्ति और उनके केन्द्रों की संचालन शक्ति को कम कर देता है।

नोट—चिरकाल तक संखिये का सेवन करने से स्नायविक प्रदाह होकर अंगों पर फ़ालिज का असर होजाता है शोथ भी होता है।

त्वचा

त्वचा पर संखिये का विशेष असर होता है इसके सेवन से त्वचा की शक्ति तथा नीचे रहने वाली वसा में वृद्धि होने लगती है। कभी इसका निस्सरण पसीने के द्वारा भी होता है इसलिये फोड़े फुंसी ददोड़े होजाते हैं और त्वचा का वर्ण स्याही मायल होजाता है कभी इसमें एक विशेष प्रकार की चमक आजाती है।

हड्डी

यह हड्डी की बनावट को मज़बूत करता है। और मलेरिया तपेदिक आदि के कीटाणुओं को बढ़ने से रोकता है।

निःसरण

संखिये का निःसरण अधिक तथा मूत्र द्वारा होता है लेकिन आंसू, पित्त, मल और थूक के द्वारा भी होता है।

कई डाक्टरों का मत है कि दूध के द्वारा भी संखिया निकलता है। माता के उदर में भी बच्चे पर इसका प्रभाव पड़ता है इसलिये ऐसी हालत में इसे नहीं देना चाहिए।

संखिया यकृत, वृक्कमें जमा रहता है, इसे खाने के कई मास बाद भी मरने पर उनके शरीर में पाया गया है।

सहनशक्ति

अभ्यास करने पर बड़ी मात्रा सेवन करने की आदत होजाती है। प्रायः आधी रत्ती की मात्रा मार देती है। बच्चों को वृद्धों से अधिक सहनशक्ति होती। वृद्धों को यह अच्छी तरह बर्दाश्त भी नहीं होता।

संखिये का व्यवहार

बतौर कास्टिक (जलानेवाला) के रूप में गंज, गुदलिंगादि में चारों तरफ़ की शोथ तथा मस्सों का उत्पन्न होना इत्यादि में मरहम, चूर्ण लेप के रूप में इसे लगाते हैं।

इन दो बातों का ध्यान रखना चाहिए लेप करने पर शीघ्र जल कर छिल्का मुर्दार भाग अलग होजाये, २—यदि रोग दूर तक फैला है तो प्रथम थोड़े भाग में ही लगायें थोड़े २ मस्से, आटन (चट्टे) लाइकर आर्सेनिकालिस के लगाने से अच्छे होजाते हैं।

दवा लगाने से पूर्व दृढ़ त्वचा को छील देना चाहिए। प्रायः बवासीर के मस्सों का इलाज भी इससे ही किया करते हैं मस्से कट कर गिर जाते हैं।

आंतरिक प्रयोग

दांतों के चिकित्सक प्रायः ऐसा करते हैं खोखले दांत में मसाला भरने से पूर्व संखिये की पेस्ट से दांत के मांसल भाग को जला दिया करते हैं अति सूक्ष्म मात्रा में संखिया रक्त की संचालन शक्ति बढ़ाने वाला और आमाशय को बलदायक है, इससे हाज़मा बढ़ जाता है भूक की वृद्धि होती है।

अम्लपित्त, अजीर्ण, दर्द मेदा आमाशय के व्रण, मेदे के सरतान में लाभ देता है इन रोगों में भोजन से पहिले देना अच्छा होगा।

हृदय, फुप्फुस--

दिल के दर्द में और हृदय को क्षीण करने वाले ज्वर या अन्य रोगों में चौथाई से १ बून्द लाइकर आर्सेनिक देना हृदय को बल देता है जब हृदय के कमजोर होजाने से पैरों पर शोथ होजाता है ऐसी हालत में संखिये को मुनासिब तौर पर देने से रक्त परिभ्रमण ठीक होजाता है और शोथ नष्ट होजाता है। वातज कास तथा वात प्रधान श्वास रोग में दमकशी में न्यूमोनियां में इसके सेवन से लाभ होता है।

डा० ब्रन्टे साहब का कहना है कि दिक़ की प्रारम्भिक अवस्था में लाभ होता है परन्तु बढ़ जाने पर कोई लाभ नहीं होता।

मलेरिया के दौरे से होने वाले पट्ठों के दर्द में अर्द्धावभेदक वगैरह में इससे लाभ होता है। जब मलेरिया के ज्वर में किनीन लाभ नहीं देती तो संखिये से लाभ होता है ऐसी हालत में बड़ी मात्रा में देना चाहिए।

श्लीपद (फील पांव) के ज्वर को रोकता है कम्पवात को विशेष लाभ देता है इसको बड़ी मात्रा में दें। प्रथम ४ बू० से प्रारम्भ करके १५ बून्द की खुराक में दिन में ३ बार दे सकते हैं।

डा० गोवर्स कहते हैं कि चाल में बेतरतीबी (शंकुर्गात) में संखिया विशेष लाभ देता है।

डा० मरे साहब मधुमेह में लाभदायक बताते हैं रोगी को चंद दिन तक अफीम का सत देने के बाद पेशाब में शकर बंद करनेके लिये फिर इसे देते हैं।

ध्यान देने योग्य बातें--

जब त्वचा में प्रदाह हो इसका सेवन न करें संखिये को प्रायः भोजन के बाद देना चाहिए, कम मात्रा से शुरू करना चाहिए जब संखिये का मेदे पर असर डालना हो तो भोजन से पूर्व देना चाहिए चूंकि संखिया उन विषों में से है जो धीरे २ जमा होकर एकदम विष लक्षण पैदा कर देते हैं इसलिए इस्तेमाल करते हुए १०-१५ दिन बाद बन्द कर देना चाहिए। संखिये को लगातार सेवन से चिरकालिक विष लक्षण पैदा होजाते हैं।

मेदे में दर्द जलन, जी मिचलाना कभी वमन होजाती है कभी मरोड़ के साथ दिन में दस्त हो जाते हैं। नेत्र सुर्ख नीचे के पपोटों में शोथ हो जाता है आंख और नाक से जल बहने लगता है सर भारी होता है मूत्र कम होता है जब ऐसी हालत हो दवा की मात्रा कम कर देनी चाहिए तब भी लक्षण शान्त न हों तो दवा बन्द कर देनी चाहिए।

यदि त्वचामें प्रदाहकारी खाज हो तो एक दस्त दिया जाये।

संखिये से निर्मित आयुर्वेदीय और यूनानी औषधियां

औषधि में डालने से पूर्व संखिये को शुद्ध करना चाहिए।

संखिया के टुकड़ों को दूध सुहागा, चूने के पानी के साथ या क्षारीय जल या कांजी के साथ डोलायंत्र द्वारा पका कर धोलिया जाता है। निम्बू रसमें भी २-३ दिन रखनेसे शुद्ध होजाता है। रस

प्रति दिन बदलते रहना चाहिए।

सोमल भस्म

शङ्खनाभी में संखिये को भर कर ऊपर से अर्कदुग्ध डालकर मुख बन्द कर लघुपुट देने से भस्म होती है शङ्ख नाभि सहित चूर्ण कर प्रयोग करना चाहिए।

मात्रा—१ से २ यव।

रोग

दमा, मलेरिया, गठिया कमजोरी।

जौहर सीम

संखिया १ तो० बरासडी १ नम्बर ३ तो०।

खूब खरल करें फिर मिट्टी के दो प्यालों में बन्द करके उनके जोड़ को आटे से बन्द करके मन्द अग्नि पर रखें और ऊपर के प्याले पर पानी से भीगा कपड़ा रखदें और कपड़े को तर रक्खें। २-३ घंटे में जौहर उड़ कर ऊपर के प्याले में लग जायेगा।

गुण :

नामर्दी, जलोदर कफज ज्वर मलेरिया बुखार और नजले को आराम करता है।

सेवन विधि

नामर्दी और कमजोरी में माजून जालीनूस लूलुई ४ माशा के साथ, जलोदर में दबीदुलवर्द ४ मा० के साथ सेवन करें। ज्वरों में मुनक्का में रखकर।

मात्रा—१ से २ चावल

हब्बे अहमर

शुद्ध संखिया शु० तबकी हरताल और हिंगुल तथा गंधक १-१ तोला।

सबको १०० निंबू के रस में मर्दन करके मूंग के बराबर गोलियां बनालें।

गुण

काम शक्ति को बढ़ाने में और नामर्दी को दूर करने के लिये अजीब व ग़रीब चीज़ है यह हकीम अजमल खां साहब का खास नुसखा है।

सेवन विधि

पहिले ७ दिन तक आधी गोली फिर १-१ गो० दूध के साथ।

इसे शरद् काल में सेवन करना चाहिए इस को खाते समय घी दूध ज्यादह खायें।

परहेज़

तेल, गुड़, खटाई और भारी वस्तुयें।

तिला मजलूक़

कुचला १ तो० के छोटे २ टुकड़े करके ३ दिन तक शराब में भिगो दें।

६ माशा अफीम, आसगंध २ तो०, संखिया ६ माशा अकरकरा ६ माशा को २४ घंटे शराब में भिगोकर पीस कर पिघली हुई मोम में मिलाकर तिला बनायें।

गुण

हस्त मैथुन से उत्पन्न हुई नपुंसकता को नष्ट करता है इन्द्रिय को दृढ़ करता है विशेष लाभ-दायक है।

तिला जदीद

संखिया २॥ तोला, आक का दूध ५ तोला जावित्री जायफल; अकरक । लौंग १-१ तोला केसर ४ माशा, कस्तूरी ३ माशा, गाय का घी ३ छटांक।

पहले संखिये को कुछ समय तक आक के दूध में खरल करें फिर सब दवाइयां पतली पीसकर मिला दें फिर घी में खरल करें।

गुण

शिथिलता दूर करती है चाहे किसी कारण से क्यों न हो। वृद्धावस्था में विशेष हितकर है।

जौहरे कलां

रस कपूर, संखिया, पारद और शिगरफ १-१ तोला शराब और गुलाबके अर्क में घोटकर जौहर उड़ालें।

आतशक, वायु के रोगों पर विशेष लाभदायक है।

सेवन विधि

दो चावल मुनक्का में रखकर निगल जायें।

जौहर मुनक्का

संखिया, रसकपूर, दारचिकना १-१ तोला।

बराण्डी में घोटकर जौहर उड़ालें।

मात्रा—१ से २ चावल।

मुनक्का में रखकर निगल जायें। दांत से लगने न पाये नहीं तो मुंह आजायेगा।

गुण

आतशक और वातव्याधि अंग के सुन्न हो जाने में।

पुराना नजला

संखिये का सत्व १ माशा शिलाजीत ६ माशा लोह भस्म ६ माशा अम्बर ३ माशा लेकर सबको गावजुबां के अर्क में घोट कर काली मिरच के बराबर गोलियां बनालें १-१ गोली प्रातः समय खिलाने से पुराना जुकाम नष्ट होता है।

संखिये का तेल

१ भाग हल्दी को रात भर दुगने दूध में भिगो दें, दिन में सुखायें, इस प्रकार ७ दिन के पश्चात आधा भाग संखिया श्वेतको, पातालयंत्र विधि द्वारा ८, १० घंटे की अग्नि देवें।

नोट—इसी प्रकार हरताल और मनःशिला का भी तेल निकलता है।

रोग

रक्तविकार, श्वास कमजोरी, नपुंसकता।

मात्रा—सुई का अग्र भाग मात्र।

संखिये का घृत

संखिया ५ तोला दश सेर भैंस के दूध में छोटे २ टुकड़े कर पोटली बना दोला यंत्र की तरह दूध में लटकादें मुख बन्द कर सुखालें। फिर मृदु अग्नि से पकायें भाप बाहर न निकल सके। ४ प्रहर की अगनी दें शीतल होजाने पर दूध को जमादें फिर मथ कर घी निकाल लें गर्म करके रखें।

गुण

वातज और कफज रोगों पर।

सोमल मृगशृंग भस्म

संखिया १ भाग, मृग शृंग ५ भाग अक दुग्ध द्वारा मर्दन कर वराह पुट दें।

मात्रा १ से ४ मेन।

रोग—श्वास।

हरतालादि लेप——

हरताल, मनःशिला, गंधक, चकमर्द बीज, बावची, सुहागा, तुत्थ १-१ तोला। कपूर आधा तोला।

कपड़छन चूर्ण बनावे वैसलीन में मिलाकर लेप करें।

रोग—कण्डू और दाद, छाजन, फुंसी चर्म रोग।

सोमल स्फटिका—

संखिया १ तोला स्फटिका १० तोला। निम्बू स्वरस में मर्दन कर लघुपुट में फूंक दो।

मात्रा—आधे से १ यव।

रोग—श्वास रोग तथा मलेरिया।

हरताल स्फटिका—

वर्की हरताल १ तो० फटकरी श्वेत १० तोला निम्बू रस में मर्दन कर लघु पुट में फूंक दें।

मात्रा—आधे से १ यव।

रोग—मलेरिया, श्वास।

उन्माद गज केशरी—

शु० पारद० शु० गंधक, मनःशिला धतूरे के बीज १-१ तो० को वच, ब्राह्मी और शंख पुष्पी के रस की ७ भावनायें दें।

मात्रा—आधी र० से २॥ र०।

रोग—अपस्मार, उन्माद, हिस्टीरिया।

सोमलादि गुग्गुल—

संखिया, हरताल, हिंगुल, कुचला शुद्ध मीठा तेलिया, रस कपूर १-१ तोला।

केशर ½ तो० जायफल, जावित्री, प्रत्येक ।। तो० काली मिरच पीपल, गंधक शुद्ध, २-२ तो०।

सब के बराबर गुग्गुल, घीकुमार के रस से मर्दन कर गोलियां बनाए।

मात्रा—४ से १० यव।

रोग—गृध्रसीशूल नाड़ीशूल, आमवात, पक्षाघात, कमजोरी।

पौष्टिक वटी—

शु० सोमल—शु० कुचला चूर्ण, बंग, नाग, लोहभस्म १-१ तो० शिंगरफ भस्म ६ माशा शिलाजीत १ तोला बंश लोचन ६ माशा छोटी इलायची १ तोला।

सबको शिलाजीत में मिला कर रखलें। २-३ रत्ती शरीर को पुष्ट करती है काम शक्ति बढ़ती है भूक लगती है। दूध और घी खूब खाये।

हरिताल और मनसल के योग—

तालसिन्दूर—

पारद १ भाग गंधक २ भाग हरताल ½ भाग घृतकुमारी के रस में घोट कर कज्जली बनायें फिर कपड़ मिट्टी की हुइ आतशी शीशी भर कर रससिन्दूर विधि से तैयार करलें।

नोट—

इस प्रकार हरताल के उस स्थान पर संखिया या मनसल डाल दिया जाये तो उस ही नाम का सिंदूर तैयार होगा।

मात्रा—½ से २ यव

गुण—

रक्तदोष, आमवात कुष्ठ उपदंश, क्षीणता—मल्लसिंदूर में कस्तुरी, कपूर अम्बरादि मिलादें तो यह उत्तम बलप्रद हो जाता है हिस्टीरिया में लाभ दायक है।

रस माणिक्य—

हरताल के चूर्ण को अभ्रक पत्र पर बिछा ऊपर से दूसरा अभ्रक पत्र रख संधिबन्द करदें फिर कोयलों पर मंदी आंच से पकायें शीतल हो जाने पर पत्र हटायें चमकीले स्फटिक छुड़ालें।

मात्रा—१ से ५ यव

रोग--

रक्तदोष-उपदंश खुजली आदि

प्रयोग--

१—लाइकर आर्सेनिकेलिस ४ बू०
सोडाबाई कार्ब ८ ग्रेन०
स्प्रिट क्लोरो फोर्म ७ बू०
अर्क सौंफ १ आं०
ऐसी १—१ मात्रा दिन में ३ बार भोजन के बाद दें।
यह क्रानिक (पुराने) एग्जिमामें लाभ देती है।

२—डोनोवेन्ज सल्यूशन १२ बू०
लाइकर हाइड्राजराइ परक्लोराइड ३० बू०
स्प्रिट क्लोरो फार्म ८ बू०
इंफ्यूजन चिरेटा (चिरायतेका क्वाथ) १ तोला
ऐसी १—१ खुराक दिन में ३ बार भोजन के बाद दें। यह अतिशय लाभ देता है।

३—लाइकर आर्सेनिकलिस ४ बू०
पोटासिडेटिस १५ ग्रेन
वाइनम कालचीसाई ६ बू०
टि० सिमसी फ्यूजा ७ बू०
सर्बत नीबू ½ ड्रा०
पानी ४ ड्रा०
ऐसी १—१ खुराक दिन में ३ बार भोजन के बाद देना। जोड़ों के सख्त होजाने पर लाभ देती है।

एन्टिमनि क्लोराइड एन्टिमनी कम्पौन्ड और टारटार एमेटिक

Antimony Comp-Tartar Emetic

विष लक्षण

इसके विष लक्षण वही हैं जो संखिया के। पोस्टमार्टम करने पर भी वही लक्षण मिलते हैं, गैस्ट्रो इन्टस टाइनल इरिटेशन वैसी ही होती है जैसे कि संखिये में परन्तु इसके निशानात वैसे वाजह तौर पर नहीं पाये जाते।

चिकित्सा

जब तक वमन खुले तौर पर न आने लगे एपोमार्फीन को इंजैक्ट करदें।

जिंक सल्फेट से मुंह द्वारा य स्टमक पम्प द्वारा मेदे को साफ करें।

टैनिक एसिड और गेलिक एसिड आधा ड्राम जल में मिश्रित करके लगातार देते रहना चाहिए।

तेज चाय या काफी या ऐसे अर्कों का सेवन लाभदायक है जिसमें गोंद का मिलाव हो।

स्टिम्युलैन्ट (उत्तेजक)औषधियां देनी चाहिएं गर्म पानीकी बोतल और गर्म कम्बल भी जरूरी हैं।



कास्टिक पोटास Caustic Potas

सल्यूशन आफ पुटैशियम कोलेकर गर्म करें और सब पानी को उड़ादें। सांचों में भर दें।

विशेषता---कड़ा सफेद, चाक की पेंसिल के समान हवा में खुले रहने से नमी को खेंचकर पिघल जाता है त्वचा पर लगने से जला देता है।

प्रभाव

बाह्य

यदि तीव्र घोल त्वचा पर लगाया जाये तो इस स्थान के तरल को चूस कर जला देता है अर्थात इरीटेन्ट प्रभाव करता है दाह करता है यदि त्वचा पर किसी प्रकार की चर्बी लगी हुई हो तो हल कर लेता है, यदि बहुत मृदु घोल (सल्यूशन) त्वचा पर लगाया जाये तो सेडेटिव और रेन्टेसिव (तेजाब के प्रभाव को दूर करने वाला) असर होता है।

आन्तरिक

मुख --क्योंकि खारी घोल हमेशा खारी पन के रिसने को कम कर दिया करते हैं इसलिए लाइकर पुटैशी मैलाइना (लालारस) को कम कर देता है।

आमाशय

इस के मिश्रण तुर्श (खट्टे) रस को अधिक निकालते हैं इसलिये गैस्टिक जूस (आमाशयिक रस) भोजन से पूर्व इसके देने से बढ़ जाता है। यह ध्यान रहे कि मेदे में एल कली के न्यूट्रल (उदासीन) होजाने पर भी आमाशयिक रस का

स्राव होता रहता है, लेकिन भोजन के बाद यदि इनका सेवन कराया जाये तो सारा आमाशयिक रस जो पहले उपस्थित होता है उसकी तुर्शी जाती रहती है।

खारी दवा मेदे में बहुत शीघ्र शोषण हो जाती है। क्योंकि वह शीघ्र घुल जाती है।

रक्त

यह अधिक खारी होजाता है प्रायः सभी खारी औषधियां रक्त में कार्बोनेट की शक्ल में दौरा करती हैं मगर उनकी रक्त को खारी करने की तासीर क्षणिक होती है क्योंकि ये रक्त से शीघ्र निकल जाती हैं। कहा जाता है कि हिमोग्लोबीन (रक्त रंजक) की संख्या कम हो तो इनके सेवनसे पूर्ण होजाती है। जब खारी औषधियोंको कुछ अर्से तक लगातार सेवन किया जाये तो चर्बीकी मात्रा घट जाती है।

हृदय

पुटैशियम के प्रयोग बड़ी मात्रा में मांसपेशी के तन्तुओं की गति कम करते हैं इसलिये हृदयकी शक्ति को भी कम करते हैं। अन्त में हृदय डायस्टली की हालत में सुकड़ने से रह जाता है।

वृक्क

पुटैशियम के मिश्रण वृक्क की झिल्ली पर मूत्रल प्रभाव करते हैं।

यह मिश्रण मूत्र द्वारा शीघ्र निकल जाते हैं। इसलिये मूत्र को क्षारीय बना देते हैं। ऐसे क्षारीय मूत्र में यूरिक एसिड की मात्रा अधिक घुली रह सकती है।

श्वास संस्थान

फेफड़े से कफ अधिक निकल पड़ता है और तरल हो जाता है मगर ब्रोंकाइटिस के रोगियों में कफ कम होजाता है।

मांसपेशी

बेरट्रीन और बेरियम के मिश्रण से जो ऐंठन पैदा होजाती है वह पुटैशियम से जातीरहती है। इन मिश्रणों का प्रभाव मांस पेशी, मस्तिष्क और पृष्ठवंश के तन्तुओं को सुस्त कर देता है।

उपयोग

बाह्य—

कास्टिक पोटास का पहले बाह्य प्रयोग बहुत होता था मगर अब नहीं होता। गंज की बीमारी में रोगीस्थान जला दिया करते हैं यदि ऐसा करना पड़ जाये तो होशियारी से करना चाहिये ताकि स्वस्थ स्थान पर फैलकर नुकसान न करे। त्वचा पर से चिकनाइ उतारने और शल्यक्रिया से पहिले त्वचा को पूरे तौर से शुद्ध करने के लिये लाइकर पोटेशी को काम में लेते हैं। त्वचा की बीमारी में छिलके को उतारने के लिए उसका हलका घोल काम में लाते हैं। इनग्रोइंगटोनेल की बीमारी में ४० फीसदी का सल्यूशन नाखून को निकालने के लिये लगाते हैं। ऐसा करते हैं कि बीमार नाखून पर सल्यूशन को खूब लगा देते हैं चन्द सेकन्ड के अन्दर ही वह नाखून मुलायम होजाता है। फिर उसको आसानी से तराश डालते हैं यह क्रिया बराबर करते हैं यह नाखून पतला होजाता है फिर कैंची के द्वारा आसानी से उतारा जा सकता है।

इसके डायल्यूट सोल्यूशन सुन्नताकारक प्रभाव के कारण खाज को कम करते हैं।

आन्तरिक

इसका आन्तरिक प्रयोग नहीं होता है ।

नोट—कास्टिक सोडियम के लक्षण भी कास्टिक पोटाशियम के समान ही हैं ।

विष लक्षण--

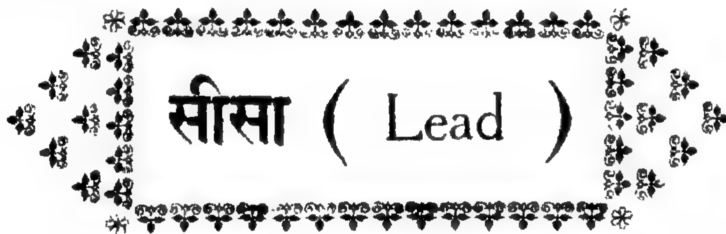
इससे कभी कहीं विष लक्षण नहीं होते हैं। स्वाद कास्टिक होता है। लेकिन गैस्ट्रो इन्टस्टाइनल की नाली में खराश के लक्षण होजाते हैं अर्थात गले में जलन, वमन होने लगती है। दस्त होते हैं। पेट में शूल होता है। नाड़ी क्षीण, हृदय गिरा हुआ होने लगता है। त्वचा शीतल और चिपचिपी होजाती हैं ओष्ठ, जिह्वा, गला सूज जाता है और सुर्ख व मुलायम होजाते हैं।

चिकित्सा--

मेदे को धो डालें या वमन लाने वाली औषधि देकर वमन करावें। जैसे-जिंक सल्फेट २० ग्रेन या इपिककेवाना ३० ग्रे० या कौपर सल्फेट ५ ग्रेन को आधा पाइन्ट नीम गरम जल में मिलाकर या वाइमन इपिकाक १ औं० या राई का २ टेबिल स्पूनफुल ½ पाइन्ट नीमगर्म जल में।

सेंधानमक २॥ तो० ½ पाइन्ट गर्म पानी में।

यदि इनमें कोई भी औषध न हो तो गर्म जल को बड़ी मात्रा में पिलवायें और हलक़ के अन्दर किसी चीज से या उँगली से खुजलाना चाहिये इसके बाद खट्टी वस्तुओं का सेवन कराना चाहिए। जैसे सिरका डाइल्यूट किया हुआ लैमन जूस डाइल्यूट सल्यूशन आफ साइट्रिक एसि डाइल्यूट एसिटिक एसिड बाद में स्निग्धता क वाली दवायें देनी चाहिये जैसे आइल लिनसिड (अलसी का तैल)



इसके बहुत से मिश्रण तय्यार होते हैं। उनको विस्तृत रीति से न लिखकर हम यहां केवल उन मिश्रणों के प्रभाव एवं विष लक्षण तथा उनके चिकित्सा सम्बन्धि प्रयोगों ही का वर्णन करते हैं।

सीसे के मिश्रणों के बाह्य प्रयोग

लोशनों या मरहमों की शक्ल में स्तम्भन और सुन्न करने के लिए सीसे के प्रयोग उस एग्जिमा में जिस से रतूबत रिसती है, और कई प्रकार के व्रणों में काम में लाये जाते हैं। अगर इन हालतों में सब एसिटेट की ग्लीसरीन को ४ ग्रेन ग्लीसरीन या दूध को मिलाकर इस्तेमाल किया जाये तो विशेष लाभदायक है इंजैक्शन के तौर पर इसके लोशन श्वेत प्रदर, प्रदर-ग्लीट (सूजाक केव्रण) कान बहने में इस्तेमाल होते हैं। लेकिन नेत्र के व्रण में इस्तेमाल नहीं करना चाहिये क्यों कि कार्नियां के व्रणों में यह नीचे बैठकर उसको धुन्धला कर दिया करते हैं जो हमेशा के लिये धुंधले हो जाते हैं। खाज की बीमारी में इसके सुन्न करने की तासीर बहुतफ़ायदा करती है।

यदि हो सके खाज के कारण को ही दूर करना चाहिये जब इस का सेवन करना ही हो तो डायल्यूट सौल्यूशन का सेवन करें क्यों कि तीव्र मिश्रण से जलन पैदा हो जाती है इस लोशन को प्राय: कनक्ष्यूजन (त्वचा के नीचे की धमनी फट जाये परन्तु ऊपर की त्वचा न फटे) में इस्तेमाल करते हैं इसके लिये यह अच्छा प्रयोग है:—

लाइकर प्लम्बाई सब एसिटेटस डिल.	१ औं०
एक्स० ओपियम	५ ग्रेन
जल	१ औं०

इसके लोशन में कपड़ा तर करके उस पर रक्खें।

आन्तरिक—

अन्दर सेवन के लिये केवल एसिटेट आफ लैड का ही सेवन होता है। तीव्रातिसार में एस्ट्रिनजैन्ट (स्तम्भक) के तौर पर देते हैं। जैसे—टाईफाइड फीवर में या रक्तरोधन के लिये गैस्ट्रिक अल्सर (आमाशय के व्रण) टाईफाइड फीवर,ट्यूबर क्लोसिस में अन्दुरूनी रक्त स्राव को रोकने के लिये पिल्हुला प्लम्बाई ओपियम अधिक लाभदायक होती है। रेकटम (गुदद्वार) से रक्त स्राव को रोकने के लिये इसकी वर्ती प्रयोग की जाती है सीसे के मिश्रणों से सख्त क़ब्ज हो जाता है प्राय: दूसरी औषधियों को प्रधानतादी जाती है लेकिन सब एसिटेट आफलैड का गारगल (कुल्ले) के तौर पर इस्तेमाल होता है या जब मुंह और कंठ में एस्टिंजैन्ट फ़ायदा करना हो तो इसकी ग्लीसरीन स्थानिक तौर पर ब्रुश से लगा देते हैं।

तीव्र विष लक्षण—

जिस प्रकार लैड के तीव्र मिश्रण बाह्य तौर पर इरिटेन्ट प्रभाव पैदा करते हैं इसी प्रकार यदि उनके कन्सन्टे्टिड सल्युशन इस्तेमाल किये जावें तो तेज इरिटेन्ट प्रभाव करते हैं लैड (सीसा) के तीव्र विष लक्षण वाले रोगी कम देखने में आते हैं। अकसर एसिटेट आफ लैड से ही विषात्मक लक्षण होते हैं।

मुख में जलन मीठा जायका अनुभव होता है प्यास लगती है वमन होने लगती है उदर में दर्द होने लगता है प्राय: क़ब्ज होजाती है लेकिन यदि दस्त आयें उनका रंग: काला होता है। शरीर शीतल हो जाता है और कोलैप्स (पसीना आकर शरीर का शीतल होजाना) होजाता है। यदि रोगी कुछ देर तक जीवित रहे तो पैरों में ऐंठन शुरू होजाती है। सिर में चक्कर आते हैं। तन्द्रा हो जाती है। फिर बेहोशी और ऐंठन पैदा होजाती है।

पोस्ट मार्टम

आमाशय और आंतो से इरिटेन्ट विषलक्षण मालूम होते हैं।

चिकित्सा

वमन कारक दवाओं का इस्तेमाल करायें और मेदे को धो डालें सोडियम और मैगनेशियम सल्फेट दें जिससे सल्फेट बिना घुलने वाला बन जाये। और तीव्र अतिसार शुरू होजाये यदि कोलैप्स उपस्थित हो तो उत्तेजक दवाओं का सेवन करायें और शरीर को उष्णता पहुंचायें।

पुरातन विष लक्षण

प्राय: यह उन लोगों को होता है जो सीसे का काम करते है क्योंकि वह खाने से पहले अपने हाथ नहीं धोते और इसलिये उनकी रोटी के साथ उसके हिस्से अन्दर चले जाते हैं। यह जहर उन आदमियों में प्राय: होता है जो उन कारखानों मे काम करते हैं जहां सफेदा तैयार होता है और कई प्रकार से भी इसका विप चढ़ जाता है अर्थात जब किसी कारण से खाने पीने की वस्तुओं में सीसा जा पड़े खासकर जबकि सीसे के तालाबो या नलकों में मुलायम पानी जमा किया जावे।

लक्षण

सबसे पहले क़ब्ज़ और आंतों में दर्द होता है सीसा वास्तव में अभिशोषित होजाता है। क्योंकि यह रक्त में दौरा करता है और मल वृक्क द्वारा बाहर निकल जाता है। यह ख़याल किया गया है कि यह एल्ब्यूमीनेट की सूरत में जज़ब हो जाते हैं। लेकिन खून में यह एल्ब्यूमीनेट की शक्ल में नहीं रहता क्योंकि यह रक्त के क्षारीय धर्म से जम जाता है। अभिशोषित होने के बाद यह हिमोग्लोबीन की मात्रा और रक्ताणुओं की संख्या कम करता है और एनीमियां (रक्त न्यूनता) पैदा हो जाता है। यह यूरेट्स को रक्त से प्रथक होने नही देता और उनको वृक्कों के बाहर निकलने से रोकता है। इसलिये इन मनुष्यों में जिन में सीसे का विष हुआ हो प्राय: गाउट (आमवात) की बीमारी अकसर होती रहती है जब यह दौरा करता हुआ मसूड़ों में पहुंचता है उनके एपिथोलियम में सीसे का भरा हुआ साज़ मारच जाता है और वहां उस गंधक के साथ मिलता है जो गिज़ा के बाकी और दांतों के मैल में उपस्थित होती है इस गंधक के साथ मिलकर सीसे का लैडसल्फेट मिश्रण बनकर मसूड़ों के ऊपर काली लकीर बन जाती है। इसी सबब से कभी कभी मल द्वार के इधर उधर भी नीली लकीर देखी जातीं है। और मृत्यु के बाद आंतों में भी काला रंग मिलता है।

जब यह वात तन्तुओं में दौरा करता है तो अकसर पेरी फरल पेशियो में पुरातन दाह उत्पन्न कर देता है। लेकिन खास तौर पर इन असबों में जो हाथ के जहर में रिस्टड्रोप एक आम लक्षण है किसी अजले या शरीर की सारी पेशियों के वात तन्तुओं में प्रदाह होकर फालिज हो सकता है। यह बात याद रखने योग्य है कि सोपाईनेटर लौगस् पट्टा पक्षाघात होने से प्राय: बच जाता है बहुत वार अजलों के सन्सरी रेशों पर कुछ भी प्रभाव नहीं पड़ता इसलिये दर्द और कभी सुन्नपना देखने में आता है। लेकिन दर्द अमूमन जोड़ों के पास होता है स्पाइनल कोर्ड के एन्टीरियरकारनवा की एट्रोफ़ी होजाती है रीढ़ की हड्डी के अन्दर का भाग बढ़ जाता है और सीसे से दिमाग पर असर होजाता है याने दीवाना होजाता है। और उसमें कमेड़ा आने लगता है आंख की रगों में प्रदाह होता है और रोगी अंधा होजाता है।

लेकिन पट्ठों में विना किसी परिवर्तन के नेत्रज्योति कम होजाती है प्राय: वृक्कों में पुरानी प्रदाह होती है। इस का कारण मालूम नहीं कि यह सीसे के कारण होती है या गाउट के सबब से, जो सीसे से होजाता है।

तूतिया (Copper Sulphat)

[कविराज हर्षुल आयुर्वेदाचार्य]

कौपर और सलफ्यूरिक एसिड के मिलाने से प्राप्त होता है। इसकी गहरे नीले रंग की तिरछी क़लमें होती हैं स्वाद कसैला होता है। यह ३॥ भाग पानी में १ भाग हल होजाता है। इसके सल्यूशन का रिएकशन निहायत तेज़ एसिड होता है।

मिलावट—लोहा

विरोधि—

एलकली और उनके कार्बोनेट के मिश्रण लाइमवाटर धानुज मिश्रण सिवा सलफेट के आयोडाइड मिश्रण

मात्रा—आधे ग्रेन से २ ग्रेन तक।

तूतिया का रसायनिक विश्लेषण—

ताम्र के लवणों में यह सबसे अधिक महत्व का है। यह बड़े नीले रंग के (क्रीस्टाल) के रूप में पाया जाता है। नीलाथोथा का नीला पन जलीय पदार्थ है। आप हमारे इस कथन की परीक्षा नीचे लिखे अनुसार कर सकते हैं:—

नीला थोथा के नीले टुकड़ों को एक आतशी शीशी में डालकर एक गोल छिद्र वाले कार्क से उसका मुख बंद कर दीजिये। फिर उस छिद्र वाले कार्क मेंएक वक्र नली लगाकर, आतशी शीशी को लोहे की तीपाई पर रख कर धीरे धीरे स्प्रिट लैम्प से ताप देना प्रारंभ कीजिये। उस नलिका से वाष्प निकले उसे अन्य शीतल आतशी शीशी में एकत्रित कीजिये धीरे धीरे नीला थोथा का नीला वर्ण लोप होने लागेगा और वह श्वेत वर्ण का चूर्ण बन जायगा। इसी प्रकार शीतल आतशी शीशी में एकत्रित वाष्प जल बून्द के रूप में दिखाई पड़ेगी। इस क्रिया के बाद तूतिया के श्वेत चूर्ण को फिर जल में मिला दीजिये तुरंत श्वेत चूर्ण नील वर्ण का घोल बन जायगा। इस प्रयोग से स्पष्ट होजाता है कि तूतिया की नीलिमा जलीय पदार्थ है।

जल के अतिरिक्त तूतिया में अन्य पदार्थों का भी मिश्रण मिलता है। रसायनिक विश्लेषण से तुत्थ, गंधक और ताम्र का यौगिक मालूम होता है। इसकी जांच भी आप नीचे लिखे अनुसार कर सकते हैं।

ताम्र के अत्यन्त महीन चूर्ण को गंधक के साथ गरम करो। थोड़े ही देर के बाद दोनों पदार्थ

(पृष्ठ ३७ का शेष)

चिकित्सा

इसका इलाज पहला यह कि सीसा शरीर में जाना रोका जावे।

पोटास आफ आयोडाइड का अन्दरूनी प्रयोग किया जावे यह विश्वास किया जाता है कि सीसा इससे मूत्र के द्वारा बाहर निकल जाता है।

मगर यह सिद्धान्त ठीक नहीं मालूम होता है क्योंकि मूत्र के द्वारा सीसा बहुत कम निकलता है। बहुत सारा भाग शौच के द्वारा निकलता है। यह भी ख़याल किया जाता कि पित्त, स्वेद दुग्ध द्वारा भी बाहर निकलता है।

मिलकर एक नया रसायनिक योगिक बन जायेंगे आप इस योगिक की परीक्षा करें आपको मालूम होजायगा कि गंधक और ताम्र के योग से बना हुआ सल्फाइड आफ कौपर (Sulphid of Copper) ताम्र गन्धक अर्थात नीलिमा रहित तूतिया है फिर इस ताम्र गन्धक को जल से भिगो वायु में थोड़ी देर रहने दें तो वह धीरे धीरे कापर आफ सल्फेट (नीला थोथा) के रूप में परिणित हो जायगा।

तूतिया के उपर्युक्त रसायनिक विश्लेषण से यह स्पष्ट होजाता हैं कि नीलाथोथा गंधक, ताम्र और जल का रसायनिक योगिक है। इस प्रकार विश्लेषण करने से हमें तूतिया में स्थित विषैले पदार्थों का भी पूरा २ पता लग गया। अब हम कह सकते हैं कि तूतिया में भयंकर विषैला प्रभाव उत्पन्न करने वाला यदि कोई पदार्थ है तो वह ताम्र है। ताम्र के विषों में भ्रांति वमन और विरेचन आदि लक्षणों की प्रधानता रहती है। अन्तर इतना ही है कि तूतिया में गंधक के विष का प्रभाव दृष्टि गोचर होता है, ताम्र में नहीं होता।

प्रभाव

बाह्य—

यदि ताम्र के मिश्रण व्रण पर लगाये जावें तो बहुत तेज़ कास्टिक प्रभाव करते हैं। इनके डायल्युटेड अर्थात मृदु सल्यूशन सल्फेट आफ जिंक के समान एट्रंजैंट (संकोचक) प्रभाव करते हैं मगर इनसे ज़रा ज्यादह तेज़ होते हैं।

आन्तरिक—

भोजन की नाली—बड़ी खुराक में अगर सल्फेट आफ कापर का इस्तेमाल करायें या इसे निहायत तेज़ शक्ल में प्रयोग करें तो इसका प्रभाव तेज़ कास्टिक इरिटेन्ट (दाहकारी) पड़ता है।

लेकिन इसका विषात्मक प्रभाव कभी अचानक ही होता है, औषध की मात्रा में इसकी तासीर बहुत तीव्र क़ाबिज़ पड़ती है। ५ से १० ग्रेन मात्रा में सल्फेट आफ कापर का प्रभाव तीव्र वमन कारक है। क्योंकि इस का प्रभाव अधिक इरिटेन्ट अर्थात दाहक होता है इसलिये सल्फेट आफ ज़िंक की अपेक्षा कुछ शीघ्र प्रभाव पड़ता है परन्तु हानि इसमें यह है कि इसके देने के बाद यदि वमन न आवे तो किसी और विधि या औषध से वमन करानी पड़ती है क्योंकि यह आमाशय के अन्दर रुक जाये तो आमाशय में तीव्र प्रदाह उत्पन्न कर देता है।

चिरकालिक कापर के मिश्रण धीरे धीरे अभिशोषित होजाते हैं और फिर यकृत के रास्ते पित्त में मिल कर निकल जाते हैं।

उपयोग

बाह्य—

सल्फेट आफ कापर अपने दग्धकारी प्रभाव से व्रण के उभरे हुए दानों को कम कर देता है और टेनियाटारसाई की बिमारी में पलकों के किनारों पर मला जाता है। नाइट्रेट आफ सिल्वर की अपेक्षा यह हलका होता है इस के लगाने से दर्द कम होजाता है एक मिश्रण और जिसका नाम लेपिसडीवाईनस (Lepis Divinus) है प्रायः इस प्रकार की बीमारियों में व्यवहृत होता है।

इसका नुस्खा यह है ।

सल्फेट आफ कौपर ३ औंस नाइट्रेट आफ पुटाशियम ३ औंस एलम (फिटकरी) ३ औंस कपूर ६० ग्रेन।

पहली तीन वस्तुओं को इकट्ठे पिघला लें बाद में काफूर मिलाकर वर्त्तियां बनाने के लिए साचों में ढाल देते हैं।

सल्फेट आफ कापर के लोशन २ ग्रेन फी औंस शक्ति के स्ट्रैन्जन्ट तौर पर इन्हीं अवस्थाओं में इस्तेमाल हो सकते हैं जिनमें सल्फेट आफ जिंक के लोशन इस्तेमाल होते हैं परन्तु इस बात का ध्यान रखना चाहिये ये बहुत शक्तिशाली होते हैं इससे जरा ज्यादह तेज ताकत का सल्यूशन होमोस्टेटिक तौर पर ही इस्तेमाल होसकता है।

ओलिएट आफ कापर को लेनोलीन के साथ १० से २० फी सदी शक्ति की एक मरहम बनाई जाती है जो दाद के लिये उम्दा कीटाणु नाशक है।

आन्तरिक—

कम मात्रा देने पर सल्फेट आफ कापर तीव्र डायरिया में लाभदायक है प्रायः इसको गोली की शक्ल में देते हैं मगर रेक्टम (गुदा) में इंजेक्शन के तौर पर भी इस्तेमाल होसकता है इसका वमन कारक प्रभाव भी बहुत शीघ्र उत्पन्न होता है इस-लिये बच्चों के लिए लेरंजाइटिस, ब्रांकाइटिस में इस्तेमाल कर सकते हैं और नारकोटिक जाति के विषों में जिसमें वमन शीघ्र करने की आवश्य-कता होती है देसकते हैं।

क्योंकि फास्फोरस के ऊपर तांबे की तह चढ़ जाती है फिर फासफोरस का कुछ असर नहीं हो सकता प्राय: ३ वा ४ ग्रेन सल्फेट आफ कापर को पानी में हल कर के ५-५ मिनट बाद देते जाते हैं जब तक कि वमन आनी शुरू होजाये, सल्फेट आफ कापर को वमन कराने के विचार से देने से एक ही वार वमन आती है। मगर यह वमन ऐसी होती है सारा आमाशय बिल्कुल रिक्त होजाता है। क्लोरोसिस की बीमारी में सल्फेट आफ कापर बहुत लाभ पहुंचाता है।

विषप्रभाव—

कापर (तांबे) के मिश्रणों को एक बड़ी मात्रा में देने से पेट में तीव्र दर्द होने लगता है परन्तु पुरातन विपलक्षण कहीं ही देखने में आते हैं यदि कापर को थोड़ी मात्रा में सेवन कराया जाये तो बिना किसी खराब असर उत्पन्न होने के इसको बहुत देर तक सेवन किया जासकता है क्योंकि बहुत से मनुष्य ऐसी हरी शाक भाजियों का सेवन करते हैं जोकि काफी अर्से से रक्खी रहती हैं और जिनका हरियाला पन, कापर के मिश्रणों के कारण होता है।

उन मनुष्यों को जो तांबे का काम करते हैं आम तौर पर तपेदिक हो जाती है और उनको यह बिमारी वैसी ही होती है जैसी कि अन्य मनुष्यों को होसकती है।

जो मनुष्य पीतल का काम करते हैं एनमियां (रक्त की कमी) की बिमारी में फंस सकते हैं। इनके दांतों की सतह पर और जड़ों पर एक सब्ज रंग की लकीर पड़ जाती है, शरीर कमज़ोर और दुबला हो जाता है। पाचन शक्ति में भी खराबी आजाती है सर में दर्द और अन्य भागों में भी दर्द होने लगता है।

फेफड़े और हलक के जुकाम में जिसके साथ कभी कभी नकसीर और इन्फ्लोनिया भी होता है पसीना अधिक आता है जिस की रंगत कभी हरी भी होती है इसका कारण तांबा है जो पीतल में मिला हुआ होता है। कभी २ तांबा और पीतल से सीसे की मिलावट के कारण अंत्र शूल होजाता है।

तूतिया का शरीर पर विषैला प्रभाव:—

इसका चूर्ण या घोल आंखों में पड़ जाता है तो प्राणी अंधा हो जाता है और कहीं मुख में चला जाता है तो अत्यन्त प्रदाह और व्रण उत्पन्न करता है इस का लेप शरीर की कोमल त्वचा को तुरंत छील देता है। अधिक मात्रा में सेवन करने से अन्न नली से लेकर मलाशय तक समस्त अंत्रों में प्रदाह उत्पन्न कर उन्हें व्रणों के द्वारा चलनी की तरह बना आंतों में भयंकर पीड़ा और ऐंठन कर देता है। बार बार नीले रंग का वमन तथा विरेचन होता है। शीघ्र उपचार न किया जाय तो रक्तातिसार उत्पन्न हो कर प्राणान्त तक हो जाता है। दाह, ज्वर, वमन भ्रान्ति, घबराहट तथा ग्लानि आदि उपद्रव कभी २ एक साथ ही होने लगते हैं। तूतिया के विष से नीले रंग का वमन तथा प्रदाह होना प्रधान लक्षण है। इसके व्रण में भयंकर पीड़ा और जलन होती है।

तूतिया के विष शांति के उपाय:—

तूतिया विष के द्वारा यदि आंतों में व्रण हो जाय तो त्रिफला के क्वाथ में गो घृत मिलाकर पिलाना चाहिये। बाहरी व्रणमें गो घृत और नवनीत आदि का लेप लाभप्रद है। शरीर में फैले हुए विष को शांत करने के लिये जंबीरी का रस परम हितकारी है। इलायची का १॥ माशा चूर्ण मिश्री और नवनीत के साथ चटाने से वमन होना तुरंत बंद होता है। मीठा इन्द्रजौं का चूर्ण ३ माशा गो घृत तथा मिश्री के साथ चटाने से विरेचन बंद हो जाता है

वमन तथा विरेचन को प्रारंभिक अवस्था में एकदम न रोकना चाहिये। कुछ वमन और हो जाय तब शामक औषधि का प्रयोग करना चाहिये।

—※※—

आयोडीन

(प्रो०—मातादीन 'भार्गव' B. Sc: M. B. S.)



यह समुद्री जड़ी बूटियों की भस्म से प्राप्त की जाती है। इसके अतिरिक्त आयोडाइड और आयोडीट के मिश्रणों से भी प्राप्त करते हैं।

यह मंसूर किस्म या अठ पहलू कल्मों की शक्ल में होती है। जिनसे विशेष प्रकार की गंध आती है। वर्ण काला होता है मगर अग्नि दिखाने से इससे बैंगनी रंग की वाष्प निकलती है। पानी के ५००० भाग में १ भाग हल होजाती है, अल्कोहल (६० फी सदी) ईथर, क्लोरोफोर्म और आयोडाइड आफ पोटैशीयम या क्लोराइड आफ सोडियम के अर्क में बहुत ही सरलता से हल होजाती है।

विरोधी

एमोनियां, धातुओं के मिश्रण, पृथ्वी से उत्पन्न होने वाले अम्ल वानस्पतिक औषधियों के सत्व।

खोट—

आयोडाइड आफ सायनोजन, फौलाद और पानी।

मिश्रण

लाइकर अयोडाई फोर्टिस

(Liqr. Iodi-Fortis)

आयोडीन ५ भाग पोटाशियम आयोडाइड ३ भाग, पानी ५ भाग, अलकोहल (६० फी सदी) ३६ भाग।

शक्ति—

१० फी सदी आयोडीन, यह मिश्रण ब्रिटिश फार्मोकोपिया १८८५ सन के लिनिमेन्ट के बजाय रक्खा गया है।

टिंचर आयोडीन

(Tinctura Iodine)

आयोडीन १ भाग आयोडाइड आफपोटाशियम १ भाग पानी १ भाग अलकोहल (६० फी सदी) ३७ भाग।

शक्ति—४० बून्द में १ ग्रेन या २½ फी सदी आयोडीन।

मात्रा—२ से ५ बून्द तक।

अङ्गुएण्टम आयोडाई

(Unguentum Io-di)

इसको आइंटमेन्ट आफ आयोडीन भी कहते हैं। आयोडीन १ भाग आयोडाइड आफ पोटाशियम १ भाग ग्लीसरीन ३ भाग चर्बी २० भाग।

शक्ति—५ फी सदी आयोडीन

प्रभाव

बाह्य—

जब बाहरी तौर पर त्वचा के ऊपर आयोडीन लगाई जाती है तब इसका प्रभाव वैसाही पड़ता है जैसे क्लोरीन का यानी यह भी तेज डिसिनफैकटेन्ट और इरिटेन्ट होतीहै डिसिनफैकटेन्ट

की निस्बत इसका इरिटेन्ट प्रभाव अधिक है। आयोडीन के लगाने से त्वचा पर जर्द वर्ण का धब्बा हो जाता है जिस के ऊपर अगर कोई खारी दवाई या हाइपोसल्फाइट आफ सोडियम लगाया जाये तो दाग (धब्बा) हटजाता है इसके लगाते ही इस स्थान पर उष्णता और दाह (जलन) अनुभव होने लगती है रगें फैल जाती हैं।

जगह सुर्ख होजाती है और किसी कदर शोथ होजाता है और श्वेताणु रोगों से बाहर निकल आते हैं और गालिबन इसी बात पर इसकी बड़ी भारी अभिशोषित तामीर होने का प्रभाव माना जाता है और प्रायः त्वचा के बालाई तबके के नीचे सीरम जमा होकर आबला की शक्ल पैदा करता है। आडीन के मिश्रण ऐसी तीव्र शक्ति वाले कभी इस्तेमाल नहीं होते हैं कि जिससे अधिक इरिटेन्ट प्रभाव उत्पन्न करें।

बाह्य—

इसके लगाने मात्रा से उस स्थान के नीचे के भागों पर रेफ्लेक्स के तौर पर प्रभाव पड़ता है यानी वहां की रगें फैल जाती हैं यह आयोडीन का कोनटइरिटेन्ट प्रभाव है, यदि इसके मिश्रण बहुत तेज लगाये जायें तो उनसे फफोले पड़जाते हैं या पस्तुवल की किस्म के दाने निकल कर गहरे व्रण होजाते हैं त्वचा के ऊपर कास्यूटिकल इनके लगाने से मुरदार पड़ जाता है। इस लिये जब कभी इसको लगाया जाता है तो वहां की त्वचा पर से छिलके उतरने लगते हैं आयोडीन त्वचा के अन्दर प्रवेश करती है। रक्त के सीरम के क्षारीय माद्दों से सोडियम आयोडाइड तथा सोडियम आयोडीट बनजाते हैं। यह जब किसी एसिड के साथ मिलते हैं तब इनमें दोहरी तबदीली होती है इस लिये आमाशय और वृक्क में फ्रेरीआयोडीन बन जाती है।

अन्तरिक प्रभाव--

जब आयोडीन अन्दर सेवन के लिये दिया जाये तो यह किसी आयोडाइड के मिश्रण में परिवर्तित हो जाता है बहुत थोड़ी मात्रा में टिंचर आफ आयोडीन के प्रयोग से वमन का आना बन्द हो जाता है। इसकी वाष्प वायुपथ में खराश उत्पन्न कर देती है।

उपयोग--

एन्टिसेपटिक लाभ के लिए आयोडीन का सेवन क्लोरीन से बहुत कम होता है क्योंकि क्लोरीन बहुत लाभप्रद पड़ती है मगर इरिटेन्ट और कोन्ट्रीटेन्ट फायदे के लिये आयोडीन के मिश्रण बनिस्बत आयोडायड लिनिमेन्ट के जो कि सन् १८८४ के ब्रिटिश फार्मोकोपिया में आफीशियल था अधिक सेवन होते हैं।

इसके मरहम टिंचर, और लाइकर बहुत हलके होते हैं। जोड़ों की तेज सूजन, प्लूरसी पेरीएस्टाइटिस बहुत सी ऐसी ही हालतों में कोन्ट्रीटेन्ट प्रभाव के लिये आयोडीन के मिश्रण इस्तेमाल होते हैं। आयोडीन के मृदु मिश्रण बढ़े हुए लम्फेटिक गदूदों के ऊपर पेन्ट किये जाते हैं विशेषकर जब इसके कारण को नष्ट न कर सकते हों।

आयोडीन का एक सफेद टिंचर भी होता है जिसमें आयोडीन को रेक्टिफाइड स्प्रिट में हल

कर के इस में स्ट्रौंग सल्यूशन आफ़ एमोनियां डालते हैं इसमें आयोडीन का रंग उड़जाता है। इसके ४० भाग में क़रीब १ भाग आयोडीन होता है इस मिश्रण का लाभ यह होता है कि त्वचापर दाग़ नहीं पड़ता है परन्तु इस मिश्रण के अन्दर आयोडीन नहीं के बराबर होती है क्योंकि आयोडीन आयोडाइड, आयोडीट आफ़ एमोनियम में परिवर्तित हो जाती है, इस लिये यह मिश्रण आयोडीन के अन्य मिश्रणों के मुक़ाबिले बहुत मृदु होता है।

अगर इस से कुछ इरिटेन्ट प्रभाव पड़ता भी है वह एमोनियां की वजह से ही जो इसमें अधिक काम आता है। इरिटेन्ट प्रभाव के लिये आयोडीन के आफिशल टिंचर को हाइड्रोसील या किसी और सिस्ट में इंजैकशन द्वारा प्रवेश किया जाता है और जोड़ों व फोड़ों के अन्दर पीव खून में शामिल होजाने के बाद में इसे प्रवेश किया जाता है मगर ऐसी हालत में बड़ी सावधानी की आवश्यकता होती है ताकि इससे जो प्रदाह उत्पन्न हो वह कहीं उग्र रूप धारण न कर ले, आज कल इस प्रकार की चिकित्सा बहुत कम की जाती है क्योंकि उपर्युक्त रोगों में इन स्थानों को ऐन्टीसेप्टिक तौर पर साफ़ रक्खे जायें तो यह स्थान बहुत शीघ्र ठीक हो जाते हैं।

दाद की बीमारी में क्रीमिनाशक लाभ के लिये इसका टिंचर या यह सहन न हो सके तो लाइकर प्रायः सेवन किया जाता है। इसी रोग में कार्स्टर्ज पेस्ट नामक मरहम इस्तेमाल कीजाती है।

प्रयोग--

आयोडीन १२० ग्रे० लायट आयल आफ़ तूड़टार १ औं० इसको मिलाकर खूब हल करें एक अर्क आयोडीन का जो प्रायः हाइड्रोसील में पिचकारी के द्वारा प्रवेश किया जाता है Morton's Fluid कहलाता है

नुस्खा यह है--

आयोडीन १० ग्रेन आयोडाइड आफ़ पोटाशियम ३० ग्रेन ग्लीसरीन १ औंस

आन्तरीय प्रयोग--

आयोडीन की वाष्प कभी २ फेफड़ों की बीमारी में सुंघाई जाती है मगर इससे लाभ के बजाय हानि ही होती है।

१--२ बून्द की मात्रा में टिंचर आफ़ आयोडीन आधा औंस पानी में हल करके आधे २ घंटे के बाद इम्पिरिकल तौर पर वमन रोकने के लिये दिया जाता है कभी इससे लाभ भी होता है। अशिक्षित लोगों में समुद्र की जड़ी बूटियों के मिश्रण स्थूलता को नष्ट करने के लिये अधिक लाभदायक समझे जाते हैं, यदि इन में कोई ऐसा प्रभाव है तो इस कारण से है कि इन में जो आयोडीन क्लोरीन औरब्रोमीन होती है इतनी बदहज़मी पैदा कर देती है कि जिससे हाज़मा बिगड़ जाता है और भोजन का पचना रुक जाता है। एक्सट्रैक्ट आफ फ़ुकस (Extract oF Fucus) वेसिक्युलस (Vasiculasus) जिसको Bledderurack या सीरेक (Seawrack) भी कहते हैं, में इस्तेमालमें आता है, और अशिक्षित इनको अन्य कार्यों में भी व्यवहार करते हैं।

पारद

(प्रो० धर्मदत्त जी सिद्धान्तालंकार गुरुकुल कांगड़ी)

——(❀):(❀)——

रस कपूर:—नाम:—Calomel, रासायनिक Mercurous Chloride पारदस हरिद् ।

निर्माण विधि:—भर्जित कासीस, सैन्धव, पारद भर्जित स्फटिका प्रत्येक ५ तो० अच्छी तरह मर्दन कर डमरूयन्त्र में डाल मन्दाग्नि से १२ से २४ घंटे तक पकाएं अथवा इनको बालुकायंत्र में रक्खी कांच कुप्पी को ¼ भर दें और जलीय वाष्प निकल जाने पर स्फटिका से मुख बन्द करदें और ऊपर लगा हुआ रस ले लें। नवीन विधि के अनुसार पारे को एक प्याले में सान्द्र गन्धकाम्ल से मिला गरम कर सूखा पारदिक गन्धित बनाएं, फिर उसे खरल में थोड़े से पारद में मिला मर्दन करें तो यह पारदस गन्धित बन जाता है। इसमें लवण मिला ऊर्ध्वपातनयंत्र में डालकर पकाएं तो ऊपर की हण्डिका में रसकपूर के स्फटिक मिलते हैं। ऊपर की हण्डिका में लगे स्फटिकों को गरम जल में धो, सुखाकर लेना चाहिये, जिससे यदि इसमें दाहक रसकपूर भी बन गया हो तो वह जल में घुल जाए।

परीक्षा—रस कपूर की परीक्षा करने के लिए उसे चाकू या लोहे की फलक पर रख, ऊपर मद्य सार की बिन्दु डाल दें तो लोहे का वह प्रदेश काला नहीं होता, किन्तु यदि थोड़े से भी दाहक रस कपूर का मिश्रण हो तो वह काला हो जाता है।

रस कपूर भारी श्वेत चूर्ण के रूप में होता है जल, मद्यसार और ईथर में नहीं घुलता।

मात्रा— १ से ५ यव तक।

रसकपूर के योग—

रसकपूरादि वटी—

कपूर, चन्दन, कुङ्कुम, मरिच समान भाग ले, गोलियां बनाएं।

मात्रा ५ से १० यव तक।

रोग—फिरङ्ग।

रसकपूर प्रलेप—

२४ गुना मधूच्छिष्ट की मलहम या शतधौत घृत में मिलाकर बनाएं।

आयोडीन

विष प्रभाव—

यदि यह घोर अवस्था में थोड़ी सी भी खाली जाये तो एक दम गले में आग लगजाती है मुंह में छाले पड़जाते हैं बीनाई धुंधली हो जाती है दिल धड़कने लगता है, हाथ पांव कांपने लगते हैं और पित्त की वमन होने लगती है।

चिकित्सा—

स्टमक पम्प से मेदे को धो डालें, और पानी में आटा घोल कर खूब पिलायें तथा एनीमा द्वारा आंतों को साफ कर डालें।



रोग—फिरङ्ग व्रण। इसमें रसकपूर के समान मृद्दारश्रृंग और दो गुना या तीन गुना खदिरसार भी मिला सकते हैं।

रसकपूर द्राव—

रसकपूर १, ग्लीसरीन ८, सुधाजल १६० भाग तक मिलाकर बनाएं।

प्रभाव तथा उपयोग—

रसकपूर पित्तरेचक है, शरीर में विद्यमान विषों को निकालने के लिए उत्तम औषध है। फिरङ्ग रोग के लिए विशेषतः घातक है। फिरङ्ग जन्य व्रणों को इसके द्राव से धोकर उन पर इसी की मलहम लगाई जाती है। शरीर से पित्त को निकालने के लिए रात्रि को रस कपूर की एक मात्रा देकर प्रातः त्रिवृत्त चूर्ण ४ माशे शर्बत के साथ या एक दो हर्रितकी का मर्दन कर बना हुआ शीत कषाय पिला दिया दिया जाता है। आंत्रज्वर तथा विशूचिका की आरम्भिक अवस्थाओं में कुछ रसकपूर की छोटी छोटी मात्राओं के दे देने से रोगका वेग हलका होजाता है। फिरङ्ग रोग में इसको थोड़ी थोड़ी मात्रा में कुछ दिन तक देना चाहिए।

दाहक रसकपूर—

Corrosive sublimate. Mercuric Chloride (पारदिक हरिद)। दालचिकना (हिन्दी)—

निर्माण विधि—

पारद को [illegible] गुणा गंधकाम्ल में डालकर अग्नि पर रख द्रव भाग उड़ादें। इससे पारदिक गंधित बन जाता है। इसमें सैन्धव मिला ऊर्ध्वपातन या बालुकायंत्र में ६ घंटे अग्नि दें ऊपर लगे हुए स्फटिक ले लें। लवण के साथ थोड़ा मांगल का काला ओषिद (Black oxide of Manganese) भी मिला दिया जाता है। इसके मिलाने से दाहक रसकपूर ही बनता है रसकपूर का मिश्रण नहीं होता है। यह भारी श्वेत स्फटिकों के रूप में होता है। जल, मद्यसार ईथर इत्यादि में घुल जाता है। यह तीव्र विष है। मात्रा —[illegible] से [illegible] चावल तक।

दाहक रस-कपूर के प्रयोगः—

(१) **दाहक रस कपूर चूर्ण**—४० भाग खांड में १ भाग दाहक रसकपूर मिलाकर बनाएं मात्रा—१ से ३ यव तक।

रोग—अतिसार, विशूचिका, प्रवाहिका तथा फिरङ्ग।

(२) **दाहक रसकपूर जल**—[illegible] यव दाहक रस कपूर को ११० बू० जल में या १ यव को ११०० बू० जल में मिलाएं।

मात्रा—[illegible] से १ ड्राम।

(३) **दाहक रसकपूरादि प्रलेप**—दाहक रसकपूर, कपूर, मुर्दासङ्ग प्रत्येक १ भाग श्वेतखदिरसार १२ भाग और मधूच्छिष्ट प्रलेप या शत धौत घृत ८० भाग मिलाकर प्रलेप बनाएं।

रोग

पामा और स्फोट व्रण।

(४) **दाहक रसकपूर द्राव**—१००० से १०००० गुने जल में मिलाकर बनाएं।

प्रभाव तथा उपयोग

यह बहिः तथा अन्तः प्रयोग में जीवाणुहर है

शल्यकर्म में हाथ धोने, शल्यकर्म योग्य स्थान धोने, धात्वीय शस्त्रों के अतिरिक्त अन्य उपकरणों के धोने, रोगी के जीवाणुयुक्त वस्त्रों, जीवाणुयुक्त गृहों को धोने के लिये १००० भाग जल में १ की शक्ति का द्राव प्रयुक्त होता है। फिरङ्ग व्रण धोने के लिए भी यही द्राव काम आता है। नेत्र, योनि-मार्ग, गर्भाशय तथा साधारण व्रणों को धोने के लिए भी ५००० से १०००० तक जल में १ की शक्ति का द्राव काम आता है। आन्त्रज्वर, प्रवाहिका, अतिसार संग्रहणी में इसका उपर्युक्त जल वा चूर्ण अन्य अन्य औषधियों के साथ मिलाकर दिया जाता है।

रससिन्दूर (Red Mercuric sulphide)

पारद १ भाग तथा गंधक २ भाग को नीबू के स्वरस, कुमारी स्वरस, बटजटा कषाय, कर्पासी पुष्प स्वरस में से किसी एक से तीन चार दिन मर्दन कर सुखा बालुकायंत्र की कूपी में उसके ¼ भाग में डाल २ से ४ दिन तक पाक किया जाता है। इसमें गंधक द्विगुण, चतुर्गुण या षटगुण भी डाली जाती है और पाक में उतना ही अधिक समय लगता है। जब तक गंधक का पीला सा धूम निकलता रहे लोहे की पतली सी शलाका को शीशी की ग्रीवा में कभी कभी फेरते रहें। जब पीला धूम्र निकलना बन्द होजाय और शलाका पर भी गंधक का पीलापन न मालूम हो तब शलाका डालना बन्द करदें और खड़िया का डाट दे दें। कुछ काल में शीशी का ग्रीवा स्वयमेव भी बन्द होजाती है। यह भारी लाल स्फटिकाकार होता है। जल में नहीं घुलता। मात्रा—१ से ४ ग्रेन तक। १ वर्ष के बालक के लिये ¼, २ वर्ष के बालक के लिये ½ चावल। इस रस सिन्दूर में २ भाग गंधक मिला पाक करें तो वह चतुर्गुण और फिर उसमें द्विगुण गंधक डाल पाक करें तो वह षड्गुण बलिजारित रससिंदूर कहाता है।

प्रभाव तथा उपयोग

यह बल्य द्रव्य शरीर के सभी अवयवों को बल देता है। योगवाही होने के कारण जिस किसी औषध के साथ मिलाकर दिया जाता है उसकी शक्ति को बढ़ा देता है। इसलिए क्षय रोग तथा वृद्धावस्था की निर्बलता में स्वर्णभस्म तथा अभ्रक-भस्म के साथ तथा अन्यान्य रोगों में औषध के अनुपान से दिया जाता है।

हिंगुल

नाम—Cinnabar | English | Mercuric sulphide यह स्वाभाविक तौर पर प्रकृति में मिलता है, अथवा रस गंधक की कज्जली को बालुकायंत्र में रखी कांच कुप्पी में डाल रससिंदूर की विधि से बनाया जाता है स्वभावत: मिलने वाले हिंगुल को निंबुकादि अम्लवर्ग, आर्द्रक स्वरस या शुण्ठीकषाय किसी से ७ दिन भावना दे जल से धो सुखा लिया जाता है।

मात्रा—१ से ४ ग्रेन।

हिंगुल के प्रयोग

(१) पक्व हिंगुल—हिंगुल को कई औषधियों के रस में पकाया जाता या उनके कल्क में रख लघुपुट दिया जाता है। उदाहरणतया ५ भाग धत्तूर स्वरस में १ भाग हिंगुल को कड़ाही में तब तक पकाया जाता है जब तक सारा रस हिंगुल में विलीन नहीं होजाता। कारस्कर कल्क या त्रिफला

(भांग) स्वरस में भी पकाया जाता है। फिर इसकी उष्णता कम करने के लिए इसे थोड़े घृत में भी पकाया जाता है। १० गुणा धतूरा रस और विजया के मिश्रित कल्क में रख पुट में डाल कपड़ मिट्टी कर हलका सा पुट भी दिया जा सकता है। पक्वहिंगुल उत्तम वातरोगहर निर्बलताहर, क्लीवरोगहर और अतिसारहर है।

हिंगुल से बनने वाले प्रसिद्ध प्रयोग

हिंगुलेश्वर, सन्निपात भैरव, विषूची विध्वन्सक रस, दुग्धवटी।

(इनके प्रयोग आयुर्वेदिक पुस्तकों में देखिये)

(१) **पारद सोमलयोग** रसकपूर, दाहक रस कपूर, हिंगुल और सोमल प्रत्येक १ भाग को ब्रांडी से कुछ दिन मर्दन कर १०। १२ घंटे तक ऊर्ध्वपातन यंत्र या दृढ़ पुटयंत्र में मन्दाग्नि देकर उड़ाएं।

मात्रा—½ से ¼ यव तक।

रोग—निर्बलता, श्वास ज्वर, श्वास रोग और फिरङ्ग।

(२) **हिंगुलादि प्रलेप**—हिंगुल १, मुर्दारश्रृंग, सिन्दूर, स्फटिकी प्रत्येक ½, कपूर ¼, मधूच्छिष्ट प्रलेप १२ भाग मिलाकर बनाएं।

रोग—पामा, स्फोट और व्रण।

(१) **हिंगुलादिधूम**—हिंगुल, अर्कमूल, मायाफल समान भाग मिला १२ पहर कोयलों पर रख धूम दें।

रोग—फिरङ्ग।

प्रभाव तथा उपयोग

आंत्रविदाहहर होने के कारण ग्रहणी अतिसार आदि रोगों तथा बल्य होने के कारण ऊर्ध्वव अनेक रोगों में इसका उपयोग होता है। हिंगुल रसकपूर, सोमल, शोरक, नवसार, मुर्दारश्रृंग गंधक १। १ भाग, नारियल के कठोरभागके खण्ड ४ भाग मिला डेकी यंत्र में तेल निकाल लिया जाता है इसे लाहौरसोर [लाहौरीव्रत] पर कुछ दिन लगाने से लाभदायक कहा जाता है।

मकरध्वज के प्रयोग—

चन्द्रोदय रस—मकरध्वज, भीमसेनी कपूर १-१ तोला मरिच, जातिफल, लवंग, कस्तूरी प्रत्येक ¼ तोला मर्दन कर गोलियां बनावे।

मात्रा—२ से ८ रत्ती तक।

(इन गोलियों में मकरध्वज से प्राप्त हुई स्वर्ण भस्म भी ½ भाग मिला सकते हैं)

(२) **स्वल्प चन्द्रोदय रस**—रस सिंदूर ४, जातीफल, लवंग, कपूर, मरिच प्रत्येक १, स्वर्ण भस्म, कस्तूरी प्रत्येक ½ भाग मिला मर्दन कर गोलियां बनाएं। मात्रा—२ से ८ यव।

प्रभाव और उपयोग—मकरध्वज, त्रिदोषहर और बल्य द्रव्य है। सर्वांग या किसी अंग की निर्बलता के लिये तीव्र रोगों में हृदय की निर्बलता और बालकों एवं वृद्धों के रोगों की निर्बलता को हटाने के लिए शहद के साथ चटाया जाता है। सब प्रकार की चिरस्थाई निर्बलता के लिए कुछ काल तक इसका उपयोग करना चाहिए।

रस पर्पटी का उपयोग

इस पर्पटी का उपयोग उपद्रवोंसे युक्त ग्रहणी रोग के लिए विशेषतः किया जाता है। प्रातःकाल मधु के साथ इसकी १ मात्रा दीजाती है जो धीरे धीरे २० यव तक बढ़ाई जाती और फिर इसी प्रकार

धीरे धीरे घटाई जाती है। सेवन काल में पानी मिला दुग्ध और तक्र ही देना चाहिए। अम्लएवं उष्ण भोजन नहीं देना चाहिए। दूधमें थोड़ी मिश्री डाल सकते हैं। कुटज भस्म,शंख व कुटजके अन्य योग लशुनादि बटी आदि ग्रहणीहर योग पर्पटी के सेवनकाल में दे सकते हैं।

रसकज्जली

पारद् में समान या द्विगुण गंधक मिलाकर अच्छी प्रकार मर्दन किया जाता है।

मात्रा १ से ५ यव। यह आमाशय और आंतों के लिये जीवाणुहर है। इन में किसी प्रकार का विदाह हो तो उसे हटाती है। अजीर्ण, आमातिसार आदि उपद्रवों के लिए विशेष रूप से हितकर है। रससिंदूर आदि के समान यह उत्तम योग बाही है। अतः आयुर्वेद में प्रायः औषधियां रसकज्जली के साथ मिलाकर दी जाती हैं। रसकज्जली, रससिंदूर हिंगुल आदि के साथ थोड़ी मात्रा में भी औषध दी जाए तो वह कई गुणा लाभ दिखाती हैं, इस कारण प्रायः रसौषधियां पारद् के साथ बनाई जाती हैं।

पारदादि प्रलेप

पारद, गंधक, सिन्दूर, राल, कम्पिल्ल, मृद्दारशृंग, खदिरसार, तुत्थ समान भाग मिला ४ गुणा घृत में मिलाकर बनाएं। रोग--व्रण एवं दुष्ट व्रण।

रसोत्तमादि चूर्ण तथा प्रलेप

रस, गन्धक, सिंदूर, श्वेत जीरक, कृष्णजीरक, मरिच, दोनों हरिद्रा, प्रत्येक १, मनः शिला, कपूर प्रत्येक आधा भाग मिला चूर्ण करें, ६ गुना तेल मोम या मधूच्छिष्ट भी मलहम में मिलाकर लगाएँ। रोग—कण्डू आदि त्वक् रोग।

कज्जली कम्पिल्ल आदि प्रलेप—

कज्जली २, कम्पिल्ल ८, मृद्दारशृंग २, तुत्थ ½ भाग मिला ६ गुने मधूच्छिष्ट प्रलेप में मिला मलहम बनाएँ। रोग—कंडू आदि त्वग्रोग।

पारद के प्रयोग

(१) भैरव रस—

पारद १००, खाण्ड ३०० यव को लोहे के खरल में निम्बदंड से मर्दन कर श्वेत खदिरसार चूर्ण १०० यव मिला फिर अच्छी तरह मर्दन कर ५ से १० यव की गोलियां बनाएँ। प्रथम मात्रा तीन दिन तीन तीन गोली फिर प्रति दिन एक गोली कुल २० गोलियां दें। रोग—फिरंग।

पथ्य—घृत, खांड चावल।

अपथ्य—उष्णद्रव्य।

(२) रस गुग्गुल—रस १००, खांड ३०० और गुग्गुल ४०० यव मिला घृत में मर्दन कर ४ से ८ यव की गोलियां बनाएं।

मात्रा—तीन दिन तीन तीन, फिर एक-एक कुल बीस गोलियां। रोग–फिरंग।

(३) रस शेखर—पारद ४, अहिफेन २४ यव, मर्दन कर फिर हिंगुल ४, जातिफल, जावित्री, पारसीक यवानिका [अजवायन] अकारकरभ प्रत्येक ६४, श्वेत खदिरसार १२८ यव डाल तुलसी स्वरस से मर्दन करे।

मात्रा–२ से १० यव। रोग फिरङ्ग।

(४) सुधारस कज्जली—पारद १, सुधाचूर्ण २ भाग मिलाकर मर्दन करें।

मात्रा–१ वर्ष के बालक के लिये ½ से ¼ यव। रोग–बालकों का अतिसार।

(५) पारद प्रलेप–

पारद ६, मधुच्छिष्ट प्रलेप १३, गृहधूम १ भाग मर्दन कर बनाएँ।

रोग—फिरंगव्रण, फिरंग ग्रंथि।

(६) पारद कर्पूरादि प्रलेप–

उपरोक्त पारद प्रलेप १०, मधुच्छिष्ट ६, कर्पूर ३, जैतून का तेल ६ भाग मिलाकर बनाएं। पहले कर्पूर को जैतून के तेल में मिला लें।

रोग—सन्धिशोथ, ग्रन्थशोथ, अर्बुद।

(७) पारद कर्पूरादि लेप–

पारद प्रलेप ५, जैतून का तेल ६।।, अमोनियां जल ४, कर्पूर १।। भाग लेकर कर्पूर को जैतून के तेल में मिला पारद प्रलेप को अमोनियाजल से मर्दन कर फिर दोनों को मिला दें।

रोग—सन्धिशोथ, ग्रन्थिशोथ, अर्बुदा।

(८) पारदादिधूम–

पारद, हरताल, मृदार शृंग, तुत्थ प्रत्येक १।। स्फटिक, यवक्षार, टंकण, अर्क मूल त्वक, लवण प्रत्येक १ भाग, हिंगुल—२।। भाग, मिलाकर चूर्ण करे। १५-२० यव को कोयलों पर रखकर धुआं दें आंख और मुखको धुआं से बचाएं।

(९) पारद गुटिका

पारद की गोलियां अनेक विधियों से बनाई जाती हैं जिनमें से एक दो ये हैं—

१ तो० पारद छोटी कढ़ाई में डाल तुत्थ और सैंधव १-१ तो० ऊपर डाल दें, प्याले से ढक दें। प्याले के ऊपर के भाग में पानी डालदें। प्याला धीरे उठा लेने से पानी उपरोक्त द्रव्यों से मिल जाएगा इसे अग्नि पर रखें। जब पानी थोड़ा शेष रह जाए तो कढ़ाई उतार लें। पारद की गोली सी बना उसे अनेक बार पानी से अच्छी तरह धोएं अथवा १० तो० पारद एक मिट्टी के पात्र में ४ सेर धत्तूर रस में पका आध सेर शेष रह जाने पर जतनत्रित २।। तो० डाल आध पाव शेष रहने पर पारा लेलें। इसे निम्बु स्वरस में कई बार धो साफ कर कपड़े में छान लें। कपड़े के ऊपर रहे पारे की गोलियां बनाएं। इसे थोड़ी देर तेल में पकाने से ये दृढ़ हो जाती हैं।

पारद को रजत पत्रों के साथ रगड़ कर गोली बना थोड़ी देर तेल में पका लेते हैं। इनके मुख में रखने अथवा इनसे पकाया हुआ दूध पीने से ये बल्य हैं।

(१०) पारद भस्म

काकोदुम्बर के दूध से ५ तो० हिंगु को भावनाएं दे देकर दो सम्पुट बनाएँ। १ तो० पारद को काकोदुम्बर के दूध से कई बार मर्दन कर इसे सम्पुट में रख सन्धिबन्धन करदें। इस सम्पुट को एक बड़े मिट्टी के सम्पुट में रख मिट्टी के सम्पुट के ऊपर खटिका लवण तथा लोह किट्ट को महिषी के दूध में गूंध कर लेप करदें। निर्वात प्रदेश में १ सेर उपलों की निर्धूम अग्नि में इस सम्पुट को रख दें। स्वांग शीत होने पर पुट को खोल पारद की भस्म लें। इसे फिर हिंगु की मूषा में रखकर इसी प्रकार पुट दें।

मात्रा—½ से ¼ यव तक। भिन्न २ अनुपानों से सभी रोगों में इसका प्रयोग होता है।

[१] शिंगरफ

शिंगरफ रासायनिक नाम पारद (Oxide of mercury) यह दो प्रकार का होता है। लाल

और पीला।

निर्माण विधि

लाल शिंगरफ बनाने के लिए पारद नत्रित को पृथक अथवा थोड़े से पारद के साथ मिलाकर गर्म किया जाये तो लाल स्फटिक से बन जाते हैं। यदि पारद को थोड़ी देर ३५ डिग्री शतांश तक गरम किया जाए तो भी लाल शिंगरफ के स्फटिक बन जाते हैं।

पीला शिंगरफ बनाने के लिए दाहक रसकपूर के द्राव में कुछ क्षार जैसे पोटाशियम, सोडियम, अमोनियम आदि के उद्रित डाल दिए जाएँ तो पीलाशिंगरफ नीचे बैठ जाता है।

योग-पारद पात प्रलेप

पीले शिंगरफ को ४० गुना घृत या वैसलीन आदि में मिलाकर बनाएं।

रोग–नेत्रव्रण, नेत्रकण्डू।

पारद रक्त प्रलेप

१० गुना घृत मक्खन आदि में बनाएं।

रोग–त्वक्रोग, फिरङ्गव्रण।

पारद नैलिद (Iodide of mercury)

निर्माण

इसके बनाने के लिए दो वस्तुओं की आवश्यकता है एक दाहक रसकपूर और दूसरा पोटाशियम नैलिद। दाहक रस कपूर बनाने के लिए ऊपर लिखा जाचुका है। पोटाशियम नैलिद बनाने की विधि निम्न है:—

कास्टिक पोटास को गरम पानी में घोल आयोडीन डालें, घोल को सुखा थोड़ा सा पिसा हुआ कोयला मिलाएं और गरम करें, ठण्डा होने पर गरम पानी डाल कर छान लें। कोयला ऊपर रह जायगा नीचे आए द्रव को गाढ़ाकर एकान्त में रख दें स्फटिक नीचे बैठ जायेंगे इस में फिर कोयला मिलाने से सम्पूर्णतः प्राप्त हुए पोटाशियम नैलिद के घोल में दाहक रसकपूर मिला गरम करें तो पारद नैलिदका लाल प्रक्षेप नीचे बैठ जाता है।

मात्रा–$\frac{1}{32}$ से $\frac{1}{16}$ यव तक।

योग पारद नैलिद चूर्ण–

६४ गुनी खाण्ड में मिलाकर बनाएं।

मात्रा–१ से ५ ग्रेन।

रोग–फिरंग रोग, ग्रन्थिशोथ।

प्रलेप— २५ गुना साधारण मरहम में मिलाकर बनाएं।

रोग—गलगण्ड और फिरंग ग्रंथि।

पारद के प्रभाव

पारद को जिस द्रव्य के साथ मूर्च्छन मर्दन आदि द्वारा मिला दिया जाता है उसके गुणों को तीव्र कर देता है। स्वयं शरीर के अवयवों में फैल जाता है, और अपने सहयोगी द्रव्य के प्रभाव को दिखाता है, अतः आयुर्वेद में प्रायः पारद के साथ या पारद के किसी अनुपान से औषधियां दी जाती हैं। पारद शरीर के सब अवयवों की निर्बलताओं में बल्य होने के कारण दिया जाता है। वह इसलिए बल्य है कि इसके देने से रक्त में रक्ताणुओं की संख्या और उनका रंजक द्रव्य बढ़ जाता है। महास्रोतस पर भी इसका विशेष प्रभाव होता है। पारद के योग आंतोंमें होने वाले विदाह को हटाते हैं, इसलिए,रसपर्पटी,हिंल,गू

सुधारस कज्जली आदि महणीरोग हर और अतिसार हर हैं। रसकपूर विदाह हर होने के अतिरिक्त वृक्क से पित्त को निकलाना और रेचक है। फिरङ्ग रोग की प्रथम और द्वितियावस्था पर पारद का विशेष प्रभाव होता है। इस रोग के विष के लिए यह घातक है।

बाह्य प्रयोग करने में पारद के योग जैसे दाहक रसकपूर, रसकज्जली, शिंगरफ इत्यादि जीवाणुहर हैं। दाहक कपूर के २५ हजार में १ की शक्ति के द्राव में सभी साधारण जीवाणु नष्ट हो जाते हैं, नेत्र रोग के जीवाणु भी रसकपूर शिंगरफ हिंगुल आदि की मलहमों के लगाने से मर जाते हैं। पारद के प्रलेप तथा लेप लगाने में स्थानिक शोथहर हैं। इसके लगाने से या मलने से सन्धियों आदि में एकत्र हुआ श्लेष्म द्रव्य विलीन होजाता है।

पारद,मल मूत्र और लार द्वारा शरीर से बाहर निकलता है, और निकलता हुआ इन स्रावों को बढ़ा देता है, अतः कभी अधिक मात्रा में खाया जाए तो मुख का स्वाद कसैला, दांत मांस और तालु पक जाते, और दन्त हिल जाते हैं, और वृक्क भी रुग्ण हो जाते हैं। पारद शरीर के अन्दर हरएक अंग में फैलकर संचित हो जाता है विशेषतः यकृत और अस्थियों के सछिद्र भाग में इकट्ठा हो जाता है।

उपयोग-

दाहक रसकपूर का द्राव शल्य कर्म में शोधन के लिए अधिक काम में आता है। कण्डू शोथ, स्राव आदि से युक्त त्वक् रोगों में रसोत्तमादि हिंगुलादि पारद के प्रलेप लगाए जाते हैं। फिरंग जन्य व्रणों के लिए पारद के प्रलेप बहुत अधिक प्रयुक्त होते हैं, फिरंग जन्य नेत्र व्रणों में रस कपूर हिंगुल, शिंगरफ, आदि के प्रलेप लगाए जाते हैं, मुख में यदि फिरंग जन्य व्रण हो तो बला स्वरस डालकर तब तक मर्दन किया जाता है जब तक सारा पारा विलीन न हो जाए। २० से ६० यव की मात्रा में किसी पारद प्रलेप को कक्ष या वंक्षण की त्वचा पर मर्दन किया जाता है। शरीर के भिन्न भिन्न अंगों की वातिक निर्बलताओं में रस सिंदूर, मकरध्वज को थोड़ी स्वर्णभस्म के साथ मिलाकर दिया जाता है।

पथ्यापथ्य

पारद के सेवन काल में गोधूम, यव, चावल दूध, घृत, मूंग, अरहर, खांड, सैंधव, जीरक, हिंगु, आर्द्रक तथा मधुर फल पथ्य हैं।

अपथ्य

तीक्ष्ण, उष्ण, अम्लरस, गुरुगुण, अजीर्ण कारक भोजन नहीं देने चाहिये। इसलिए तेल, खट्टी, दही, मांस, मसूर, मटर आदि गुरु दालें, अम्लफल, पान आदि अपथ्य हैं।

पारद का विषैला प्रभाव और उसकी चिकित्सा

कई बार भूल से दाहक रसकपूरादि पारद के तीव्र योग अति मात्रा में खाए जाते हैं जिससे आमाशय, और आंतों में दाह, आमाशय शूल, अतिसार, वमन तथा वृक्कों पर असर हो जाने से रक्त मेह, मूत्राघात आदि हो जाते हैं, बहुत अधिक मात्रा खाए जाने पर शीघ्र मृत्यु हो जाती है। साधारणतः पारद की कुछ अधिक मात्रा

फ़ॉसफ़ोरस (Phosphorous) अस्थिसार

[कविराज हर्षुल मिश्र आयुर्वेदाचार्य]

——(❀):(❀)——

अभी तक वैद्य समाज फासफोरस को पाश्चात्य विद्वानों का ही आविष्कार मानते हुए आया है, किन्तु फासफोरस की उत्पत्ति का इतिहास मालूम हो जाने पर यह पूर्णतया स्पष्ट होजाता है कि यह आयुर्वेदोक्त अस्थिसार से भिन्न वस्तु नहीं है। भारत पर विदेशियों के अनेक आक्रमण हुए, आक्रमणकारी विधर्मी और क्रूरकर्मी थे, उनके द्वारा भारत की आर्यकला और साहित्य अनेक बार नष्ट भ्रष्ट किए गए। अब जो कुछ भारतीय प्राचीन साहित्य में मिलता है वह केवल भग्नावशेष है। आयुर्वेद भी तत्कालिक समय के प्रभाव से अछूता नहीं रह सका, उसमें अब जो कुछ है वह उसके प्राचीन विशाल भण्डार के फूटे जाने के बाद का अवशिष्ट अंश मात्र है और वह भी संक्षिप्त और सूत्र रूप में है, जिसे समझना असम्भव नहीं तो कम से कम कठिन तो अवश्य है। आयुर्वेद में रक्तसार, मांससार, मज्जासार, मेदसार, अस्थिसार आदि का वर्णन मिलता है किन्तु उनके वास्तविक स्वरूप का विवेचन नहीं पाया जाता वैद्य समुदाय भी, धातुसार क्या वस्तु है और उसका स्वरूप क्या है, इस पर विचार कर अपने मस्तिष्क को पीड़ा देना नहीं चाहता। यदि भिषक् वर्ग इस विषय पर थोड़ा भी मनन करे तो 'फासफोरस' शब्द के अतिरिक्त सब भांति भारतीय प्रतीत होगा। यह परम रसायन और महौषधि है:—इसको अल्पमात्रा में अन्य वस्तुओं के साथ मिश्रण बनाकर औषधि रूप में प्रयोग किया जाता है। इसका इस प्रकार का प्रयोग जीवन दायक होता है, किन्तु अधिक मात्रा में अथवा शुद्ध रूप में इसका प्रयोग हानिकारक और प्राणघातक हो जाता है।

फासफोरस की उत्पत्ति

हमने पहले ही लिखा है कि यह अस्थिसार है अतः इसकी उत्पत्ति भी अस्थियों से होना स्वाभाविक है। परन्तु यहां यह बताना आवश्यक है कि यह अस्थियों से किस प्रकार प्राप्त होता है। सर्व

औषधि में खाया जाए तो विशेष लक्षण होते हैं। मुख कसैला हो जाता, दन्त मांस सूज जाते, दांत हिलने लगते, मुख से राल बहने लगती, श्वास में दुर्गन्ध आने लगती है, यदि:—

"पारद के विषैले लक्षण तीव्र हों तो दूध में घृत डाल कर, पिला दें। पारे के विष को आमाशय से निकालने के लिए १ सेर भर लवणोदक पिला उल्टी करा दें। आंतों में दाह होती हो तो दूध की वस्ति दें। मूत्र को अधिक मात्रा में लाने के लिए क्षार औषधियां दें। यदि पारद के विषैले लक्षण हल्के हों तो अहिफेनके हल्के द्राव के गण्डूष दें, और १०-१० यव गन्धक चूर्ण दुग्ध के साथ कुछ दिन तक दो तीन बार निरन्तर दें।



"माला से"

प्रथम अस्थियों को अत्यन्त उष्णता देकर उनको खड़िया मिट्टी अथवा चाक मिट्टी के रुप में परिवर्तन किया जाता है, तदुपरांत उनका चूर्ण बना लिया जाता है। इस अस्थि चूर्ण को सल्फ्यूरिक एसिड (गंधकाम्ल) व पानी में मिलाया जाता है और इस मिश्रण के लाल होने तक उष्णता देने के उपरांत यह मेटे फास्फेट आफ कैल्शियम नाम का पदार्थ बन जाता है। इस पदार्थ को वक्र नाड़िका यंत्र में डालकर अत्यंत ऊंचे तापमान की उष्णता दी जाती है जिससे फास फोरस निकल आता है। फास फोरस निकलते समय धुआं के समान दिखाई देता है, उसे पानी में एकत्रित कर घन किया जाता है। यह पदार्थ सर्वथा पानी में ही रखा जाता है। पानी के अलग होते ही यह जलने लगता है।

अस्थिसार (फासफोरस) का विषैला प्रभाव

अल्कोहल आदि के साथ मिश्रण कर औषधि रुप में इसका प्रयोग स्वास्थ्य कर तथा रोगनाशक होता है। इससे शरीरमें ओज और वीर्य की विपुल वृद्धि होती है, किन्तु विशुद्धावस्थामें इसका प्रयोग विष तुल्य होता है। शरीर पर इसका विषैला प्रभाव नीचे लिखे अनुसार देखा गया है:—

(१) संखिया की तरह इसके विष में भी अन्तर्दाह प्रधान लक्षण हैं। सारे शरीर में मानो आग लग गई हो इस प्रकार जलन होती है। शरीर की त्वचा में विशेष प्रकार की जलन होती है प्राणी मछली के समान तड़फने लगता है। शिशिर ऋतु में भयंकर गर्मी का अनुभव होता है कभी २ इस भयंकर ज्वाला से प्राणी मर भी जाता है।

(२) तृषा का वेग भीषण होता है बार २ उष्ण जाल का वमन होता है।

(३) उदर में शून्यता का बोध, भयंकर अतिसार अथवा मलावरोध भी हो जाता है।

(४) कान बहरे होजाते हैं।

(५) रति क्रिया दुर्बल होजाती है और मनुष्य नाना प्रकार का व्यभिचार करने लगता है।

(६) आंतों में विशुद्ध रुप में पहुंचने पर भयंकर प्रदाह उत्पन्न कर मनुष्य को मार डालता है।

(७) भष्मक रोग उत्पन्न होजाता है।

(८) श्वास नली में प्रदाह होजाता है जिससे गला बैठ जाता है, समीप बैठने वाले को भी रोगी के कंठ से निकले हुए शब्द साफ साफ सुनाई नहीं पड़ते।

(९) फुफ्फुस में भयंकर दाह होने लगता है।

(१०) रक्त पित्त होजाता है। रक्त का वमन और विरेचन करते २ रोगी प्राण त्याग देता है।

(११) धीरे २ आंखों में ज्वाला उत्पन्न होकर आंखें रक्त वर्ण होजाती हैं और देखने की शक्ति नष्ट होजाती है।

(१२) रक्त का जलीय भाग नष्ट होने लगता है, जिससे भीषण दाह होता है और हृदय की गति एक दम तीव्र होकर फिर मंद होने लगती है। शीघ्र उपाय न किये जाने पर मृत्यु भी हो जाती है।

विष शांति का उपाय

अस्थिसार की उत्पत्ति और प्रभाव को देखते हुए उसके विष को शांत करने वाली एक मात्र औषधि शुद्ध गो घृत ही होना चाहिये।

सिलवर (चांदी)

[ले०—एम० के० जैन H. H. P.]

इस बात को बहुत प्रचीन समय से प्राय: सभी मनुष्य जानते हैं कि औषध विज्ञान में सबसे पहिले अरब के हकीमों ने इसे काम में लिया। वो इसे मस्तिष्क रोग, कम्प वायु दिल की धड़कन आदि में प्रयोग करते थे। अब भी यूनानी हकीम और वैद्य लोग चान्दी के वरक और इसके कुश्ते को दिल और दिमाग की बीमारियों में प्रयोग करते हैं। ऐलोपैथी में प्राय: निम्नलिखित चान्दी के मुरक्कबात काम में लिये जाते हैं।

(१) सिल्वर नाइट्रेट।

(२) अर्जन्टाई नाइट्रास एन्डयूरेस।

(३) अर्जन्टाई नाइट्रस मिटिगेटस।

(४) अर्जन्टाई ऑक्साइडम।

अलावा इनके चान्दी के मुरक्कब से बनी हुई बहुत सी पेटेन्ट दवाइयां बाजार में बिकती हैं।

फासफोरस का प्रयोग आज कल पाश्चात्य चिकित्सक ही अधिक करते हैं। इसलिये इसके विष को शांत करने की विष के लक्षणानुसार भिन्न २ प्रकार की औषधियां पाश्चात्य चिकित्सा शास्त्र में वर्णित हैं। वैद्यक शास्त्रानुसार 'अस्थिसार' पित्त प्रधान विष होना चाहिये इसके अतिरिक्त सभी विष वातपित्त प्रधान होते हैं अत: हमारा उपर्युक्त गोघृत फासफोरस के पित्त प्रधान लक्षणों की सर्वोत्तम शामक औषधि होनी चाहिये।

सिल्वर नाइट्रेट—नाइट्रिक एसिड और सिल्वर के मिलने से बनता है इसकी बेरंग की चौड़ी २ सफेद रंग की कलमें या बत्तियां सी होती है जो १ भाग पानी में दो भाग हल हो जाती हैं। इसे अंधकार में रखना चाहिये नहीं तो काला पड़ जाता है।

प्रभाव

बाह्य—

इसके मिश्रण के प्रभाव ठीक सीसे ही जैसे होते हैं परन्तु तेज अधिक होते हैं। इसलिये नाइट्रेट आफ सिल्वर का प्रयोग दग्ध करने के लिये अधिक किया जाता है, परन्तु इसका दग्धकारी प्रभाव गहराई तक नहीं पहुंचता। इसलिये जब किसी ऊपरी स्थान पर इसको प्रयोग करना हो तो ये दवा दग्ध प्रभाव में बहुत गुण दिखलाती है। इसके लोशन संकोचक प्रभाव भी रखते हैं। लेकिन इस काम के लिये विशेषतया लैड लोशन ही अधिक प्रयोग में लाया जाता है क्योंकि इससे खराश पैदा होजाती है और उस स्थान पर दर्द होने लगता है। चान्दी के मिश्रण लैड के मिश्रण की भान्ति हेमोस्टेटिक प्रभाव भी रखते हैं यदि इन्डोलेन्ट व्रणोंकी सतहपर सिल्वर नाइट्रेटके हल्के सल्यूशन लगाये जायें तो उन व्रणों पर स्टिमुलैन्ट प्रभाव होता है और व्रण पूर्णतया ठीक हो जाते हैं।

आन्तरिक--

इस के मिश्रण यदि म्यूकस मैम्ब्रेन पर मुकामी तौर पर लगाये जावें तो उनकी त्वचा के व्रणों के अनुकूल ही प्रभाव होता है। मेदे में पहुंचकर इसके मिश्रण के अणु प्रथक होजाते हैं और नया मिश्रण बन जाता है जिसकी बाबत अभी तक केवल इतना ही ज्ञात होसका है कि यह मिश्रण अलेट्रैन्ट प्रभाव नहीं रखता। अलेमेन्ट्री कनाल के रास्ते से इसके मिश्रण शरीर में प्रवेश होजाते हैं। चान्दीके मिश्रणका अधिक समय तक प्रयोग करने से होटों कपोलों की अन्दरूनी सतह, मसूढ़ों, नथनों और पपोटों का रंग काला नीला सलेटी होजाता है और बाद में शरीर की रंगत भी ऐसी हो होजाती है। इसकी अधिक मात्रा यानी ज़हरीली खूराक देने से वमन और कमेड़े जारी होजाते हैं और कालिज की अलामात पैदा होजाती हैं जैसे सीसे से होजाया करती हैं। अल्व्यूमन खारिज होने लगती है जिल्द की रंगत काली पड़ती चली जाती है। इसका कुछ मिश्रण सल्फाइड आफ सिल्वर की शकल में मल के रास्ते से खारिज होने लगता है और बाकी जिस्म के अन्दरूनी भागों में विशेषतया गुर्दे और मसाने में जमा होजाता है।

रोग चिकित्सा

बाह्य

इसका उपयोग ग्रेनुलेशन को जलाने के लिये, जानवरों के काटे पर लगाने के लिये अधिक होता है। गहराई तक जलाने के लिये इसका प्रयोग करना कोई फ़ायदा नहीं करता, इसके ५ ग्रेन फ़ी औंस वाले लोशन को कमज़ोर व्रणों, बडसूर, क्रानिकफ़ेरन्जाइटिस, लेरन्जाइटिस में लगाने से बहुत फ़ायदा होता है, इसका इन्जेक्शन ग्लेट और आस्योटाइ की प्रदाह में भी फ़ायदा करता है २ ग्रेन फ़ी औंस वाला लोशन ग्रेन्युलर रलडज़ और कई प्रकार के आफ्थेलिमिया में प्रयोग होता है जो बड़ा गुण करता है। उसके मिश्रण कभी कभी प्रदाह में भी फ़ायदा करते हैं। बहुत से डाक्टर एरी सिफ़िलस में नाइट्रेट आफ सिल्वर का सोल्यूशन तथा टीनियां टारसाइ में इसकी बत्ती भी लगादिया करते हैं। व्रणों के रक्त को बन्द करने के लिये वा जोकों के व्रणों से रक्त को रोकने के लिये यह निहायत मुफ़ीद हेमोस्टेटिक दवा है। चेचक के दानों में भी बाद में उनमें गढ़ा पड़ने से रोकने के लिये इसे लगाते हैं छोटे २ फोड़ों पर इसे लगाने से फोड़े बैठ जाया करते हैं। क्रानिक सरवाइकल कटार में सरोकस यूटराइ पर भी इसको लगाया जाता है। प्रोटारगल, जिसमें ८ फ़ी सदी सिल्वर मिश्रित होती है और जो आसानी से जल में हल हो जाता है गनोरिया में इन्जेक्शन के तौर पर प्रयोग किया जाता है। इसके लिये १ फ़ी सदी का लोशन व्यवहार करना चाहिये।

आन्तरिक--इसका प्रयोग बहुतकम होता है। सिल्वर नाइट्रेट बच्चों के डायरिया में कभी २ प्रयोग किया जाता है। डिसेन्टरी की बीमारियों में ६० ग्रेन सिल्वर नाइट्रेट को ३ पाइन्ट नीम गरम जल में मिलाकर एनीमा के तौर पर रेक्टम के रास्ते से खूब ऊपर तक पहुँचाने से फ़ायदा होता है।

ज़िंक (जस्त)

[ले०—एम० के० जैन H. H. P.]

—(❀):(❀)—

प्राकृतिक तौर पर इस धातु का सल्फाइड या कार्बोनेट ही प्राप्त होता है इसको लेकर जोश देने से आक्साइड बनजाता है। इसमें कोयला मिलाकर पुनः जोश देने से आक्सीजन अलहदा होकर प्योर जस्त बन जाता है।

इसके निम्न लिखित मिश्रण इलमे अद्वयात में प्रयोग किये जाते हैं।

(१) लाइकर ज़िन्साइ क्लोराइडाई
(२) सोल्यूशन आफ क्लोराइड आफ ज़िंक
(३) ज़िन्साइ सल्फास
(४) अनगवेन्टम ज़िन्साइ ओलियेट
(५) ज़िन्साइ कार्बोनास
(६) ज़िन्साई ऑक्साइडम
(७) ज़िन्साइ एसीटास
(८) ज़िन्साइ सल्फो कार्बोनास
(९) ज़िन्साई वेलेरियेनास
(१०) ज़िन्क फोस्फाइड

ज़िन्साइ सल्फास

यह मिश्रण जस्त को डायल्यूटेड सल्फ्यूरिक एसिड में हल करने से बनता है।

लक्षण—मन्शूर की किस्म की छोटी २ कलमें होती हैं सल्फेट आफ मैगनेशियम से बहुत कुछ मिलती जुलती हुई होती हैं जायका कसैला होता है। ये ७ भाग जल में १० भाग हल हो जाता है।

मात्रा—१ से ३ ग्रेन तक (बतौर टानिक)
१० से ३० ग्रेन तक (बतौर एमेटिक)

प्रभाव

इसके मिश्रण त्वचा पर लगाने से एस्ट्रन्जैन्ट प्रभाव पैदा करते हैं इसलिये इसके मिश्रण सीसा चान्दी आदि के मिश्रणों जैसा ही प्रभाव रखते हैं मगर ताकत में इनसे ज़रा कम होते हैं इन मिश्रणों में सबसे अधिक ताकतवर सल्फेट और असीटेट आफ ज़िंक होते हैं।

चिकित्सा में प्रयोग

बाह्य—

सल्फेट आफ ज़िंक का प्रयोग कई प्रकार के सल्यूशनों की सूरत में अकसर हुवा करता है। जैसे—लोश्यो रुब्रा, रेडवाश इत्यादि। जो:—

सल्फेट आफ ज़िंक २ ग्रे०
टिं० लेवेन्डुला कम्पा० १२ बून्द
एक्वा डिस्टिलेटा १ औंस

के मिश्रण से बनते हैं। ये लोशन कई प्रकार के व्रणों में संकोचक और उत्तेजक प्रभाव के लिये वाह्य प्रयोग में आते हैं गनोरिया, लिकोरिया, योनिकण्डू और ओटाइरिस में इसी फायदे केलिये बरते जाते हैं। केवल सल्फेट आफ ज़िंकका सोल्यूशन २ ग्रेन फी औंस वाला आंखों के रोहों को दूर करने के लिये आंखों में डाला जाता है। ज़िंक ओलीयेट थोड़ा संकोचक प्रभाव के लिये सर्व

मीठा विष

[ले०—राजवैद्य महावीर प्रसाद जैन प्रोप्राइटर 'जीवनसुधा']



काकोल, गरल, क्ष्वेड, विष, दारद, सौराष्ट्रिक, शौल्किकेय, ब्रह्मपुत्र, प्रदीपन आहेय, अमृत, गरल, कालकूट' कसाकुल, दारिद्र, रक्तश्रृङ्गिक, नील, गर, घोर, हलाहल, श्रृङ्गी, अगर, जाङ्गल, तीक्ष्ण, रस, रसायन, जंगुल, जांगुल, वत्सनाभ जीवनाघात, किषल, प्राणहर इन नामों से भी बोला जाता है।

भाषान्तरों में नाम

सं:—	वत्सनाभ	अमृत
हि:—	बचनाग,	मीठाविष
ताम:—	वसनावी	
तै:—	वसनाभी,	नाभी
कन:—	वसनवी	
पील्:—	वसनभी	
बंग:—	काठविष,	अमृतविष
गु:—	छिगंडियो,	बच्छनाग
महा:—	बच्छनाग	
फा:—जहर,	बिषशलगमी,	ताजुलमलूक
अर:—र्षव	खानिकउलजयब	

इं:—अकोनाईट वुल्फसबेन

लै:—एकोनाईटफेरोक्स, मांक्सहुड

यूनानी:—अकूनीतून,

सर्व साधारण में इसको मीठातेलिया, मीठादुधिया या मीठा जहर कहते हैं। इसका युनानीनाम अकूनीतून है जो अकूना शब्द से बना है। जिसका अर्थ पत्थर का तख्ता है, चूंकि यह ऊंचे २ पर्वतोंपर उगता है इसलिये इसका नाम अकूनीतून रक्खा गया—इसके फूल की आकृति प्राचीन अंग्रेजों के साधुओं की टोपी से मिलती है इस लिए अंग्रेजी में मांक्सहुड कहते हैं। परन्तु ईरानी बागवानों ने इसके फूलों का ताज सुलतानीकी तरह देख कर इसका नाम ताजउलमलूक रख दिया है।

प्रकार के व्रणों पर अत्यन्त उत्तम साबित हुवा है।

औक्साइड और कार्बोनेट आफ् जिंक चूर्ण की सूरत में या मरहम की शक्ल में उन मौकों पर रोजाना इस्तेमाल होते हैं जहां थोड़ा सा संकोचक प्रभाव करना हो।

आन्तरिक

अतिसार के रोग में इसके आक्साइड और सल्फेट अच्छे वमन कारक हैं क्योंकि इसका प्रभाव शीघ्र पड़ता है और जी नहीं मिचलाता और न दिल घबराता है इसलिये जहरों में वमन लाने के लिये दिया करते हैं बच्चों में जब छाती पर कफ जमा हो निकालने के लिये दिया करते हैं ओक्साईड आफ जिक तपेदिक् रोग में रात्रि स्वेद रोकने को दिया जाता है।

सल्फेट आफ जिंक को १ से ३ ग्रेन तक की मात्रामें दिनमें तीन बार हिस्टीरिया, मृगी, कुकुर खांसी और कम्प वायु में भी दिया करते हैं।



प्राचीन समय में भेड़िये चीते आदि जंगली भयानक जीवों को इसका विष देकर मारा करते थे इससे इसका नाम वुल्फ्सबेन पड़ गया है। विष शलगमी इस कारण इसका नाम रक्खा गया कि इसकी जड़ छोटे शलगम से मिलती जुलती है।

यूनानी पुस्तकों में इसे पांच प्रकार का लिखा है। आयुर्वेद शास्त्र में १८ प्रकार का परन्तु योरोप और अफ्रीका के डाक्टरों ने बीस से भी विशेष क़िस्में लिखी हैं।

यूनानी हकीम देसक़ूरीदूस ने अक़ूनीतून के नाम से जिस विष का बयान लिखा है। वह एकोनाईट नेपालस अर्थात विशलगमी ही है परंतु हकीम जालीनूस ने लाईकोकयेन के नाम से जिस पीले रंगके विषका वर्णन किया है उसको प्राचीन समयमें जंगली भयानक जीवों को मारने के काम में लाया करते थे—प्राचीन समय में एक प्रकार का ज़हर बनाया जाता था जिससे खूनका बदला लिया जाता था—फ्रांस वाले इसके ज़हर में अपने तीरों को बुझाया करते थे। जो व्यक्ति इस तीर से घायल होता था उसकी मृत्यु अवश्य हो जाती थी। अब भी अफ्रीका के कोई २ हबशी अपने तीरोंको इसी ज़हर से बुझाते हैं।

भावप्रकाश ने भी कई भेद किये हैं। उनके अलग अलग नाम बनावट तथा गुण नीचे लिखे जाते हैं।

विष के भेद

वत्सनाभ, हारिद्र, सक्तुक, प्रदीपन, सौराष्टिक, शृङ्गिक, कालकूट, हालाहल और ब्रह्मपुत्र।

वत्सनाभ-यह संभालू के पत्ते और बछड़े की नाभि की आकृतिसे पतला होता है इसके समीप दूसरा वृक्ष नहीं लग सकता।

हारिद्र—इसकी जड़ हलदी के समान होती है।

सक्तुक-इस की गांठ को तोड़ने से मैदा जैसी चीज़ मिलती है, जो विचित्रवर्ण कमल कन्द के समान होती है।

प्रदीपन-इसका रंग लाल चमकता हुआ होता है। खाने से एक दम सारे बदन और पेट में अग्नि सी लग जाती है।

सौराष्टिक—यह विष सौराष्ट्र देश (सूरत) में पैदा होता है। इस ही से इसका नाम सौराष्टिक पड़ गया है।

शृङ्गिक—कहते हैं इस को गाय के सींगों से बांधने से दुग्ध लाल होजाता है।

कालकूट—पीपल के समान एक वृक्ष अहिच्छेत्र, शृङ्गवेर, कोकस और पलवार में होता है। उस के गोंद को कालकूट विष कहते है।

हलाहल—इस प्रकार के विष का वृक्ष दक्षिण समुद्र के तट के देशों और कोकड़ आदि देशों में उत्पन्न होता है। फल अंगूरों के गुच्छे समान और वृक्ष ताड़ के सदृश होते हैं। इसकी गरमी से समीप के वृक्ष जल जाते हैं।

ब्रह्म पुत्र—यह कपिल वर्ण का होता है। और रस भी ऐसा ही होता है। यह मलयाचल पर्वत पर उत्पन्न होता है।

उत्पत्तिस्थान

योरोप और एशिया के कई देशों के पर्वतों पर होता है। प्राय: योसेपदेराल्पस पर्वत पर

और एशिया में हिमालय पर कमायूं से कश्मीर तक और सिकम से गढ़वाल तक कहीं २ पैदा होता है। नेपाल में जो विष पैदा होता है। जिस को Aconite Foron कहते हैं बहुत जहरीला होता है यह विष चीन और जापान में भी पैदा होता है।

इस विष का फूल बड़ा सुन्दर मन को लुभाने वाला बैंजनी रङ्ग का होता है। इस कारण बागों में इसे पहिले बहुत लगाया करते थे मगर अब कम लगाते हैं क्योंकि इसके अनुपम सुन्दर विषैले फूलों को तोड़ने और लगाने से कई सुन्दरियां इस लोक से परलोक को चल बसीं। विष शलगमी Aconite Nepellus की बरतानियां वाले अब भी खेती करते हैं क्योंकि इसकी जड़ औषधियों में काम आती है।

उपरोक्त सब प्रकार के विषों में से वत्सनाभ Acorite Foron विशेष रूप से औषधियों में काम लाया जाता है।

इसे स्वतन्त्र रूप से और बहुत सी औषधियों में मिश्रित रूप से भी सेवन कराते हैं। प्राचीन शास्त्रोक्त तथा अनुभूत बहुत से प्रयोगों में से थोड़े से प्रयोगों का नीचे वर्णन करूंगा जिस में इस का मिश्रण किया गया है।

बनावट

वत्सनाभ [Aconite ferox] का रंग स्याह होता है. यह अंग्रेजी विष से बहुत बड़ा होता है यह अंग्रेजी में Aconite nepellus कहलाता है, आकार में गावदुम अर्थात ऊपर से मोटा और नीचे से पतला होता है प्रायः २ से ४ इंच लम्बा और ऊपर के हिस्से में आधेसे चौथाई इंच तक चौड़ा निचला भाग मोटा होता है। इसका रंग बाहर से बिल्कुल काला और अन्दरसे सफेद होता है। जड़के ऊपरी स्थान परटूटे हुए तन्तुओंके से चिन्ह होते हैं जो आसानी से टूट जाते हैं और उस की लम्बाई में प्रायः झुरियां होती हैं। वत्सनाभ आकार में ६ इंच लम्बा अन्दर से रंग हलका पीला, भूरा लाली सा लिए हुए और काले रंग गुणों में Aconite nepellus से मिलता हुआ होता है बल्कि उससे कुछ अधिक गुणकारी है यदि मुंह में चबाया जावे तो कुछ मिनट के बाद मुंह में झनझनाहट मालूम होने लगती है।

इस में से एक प्रकार का खारी जौहर निकलता है जिसको एकोनाईटीन (Aconoten) कहते हैं। इसके अतिरिक्त दो जौहर और भी निकलते हैं। जिनको Acorine और Berza-Corine कहते हैं परन्तु एकोनोटीन विशेष विषैला होता है।

विष (Aconite) को भी अशुद्ध सेवन नहीं करना चाहिये इससे शरीर को बहुत हानि होती है।

शुद्ध वत्सनाभ (विष) के गुण

वात और कफ से उत्पन्न होनेवाले हर तरह के रोग इसके सेवन से नष्ट हो जाते हैं सन्नि-पात को दूर करता है। मंदाग्नि, श्वास, खांसी प्लीह, उदररोग, भगन्दर, वायगोला, पांडुरोग और बवासीर को नष्ट करने वाला है, और कुष्टों को विनाश करता है, विधि पूर्वक सब रोगों को दूर करने वाला रसायन है, और शुद्ध सेवन करने से डाक्टरी मतानुसार गुणोंका वर्णन आगे करेंगे।

वत्सनाभ वर्ण भेद—पांडु रंग का विष ब्राह्मण, काले रंग का क्षत्रिय पीले रंग का वैश्य, और काले रंग का शूद्र होता है। रसायन में ब्राह्मण विष, वीर्य को पुष्ट करने में क्षत्रिय विष, कुष्ट को दूर करने में वैश्य और मारण के लिये शूद्र जाति का विष लेना चाहिये।

ग्रहण योग विष

विष को उसके फल पकने के पीछे ग्रहण करे जो नवीन, चिकना, भारी-पवन और आतप से शोषित न हो—

विष शोधन

विष के छोटे छोटे टुकड़े करके कपड़े में रख पोटली सी बांध दोलायंत्र में पानी और दुग्ध डाल कर एक पहर तक स्वेदन करे तो शुद्ध हो जाता है।

मतान्तर

विष के छोटे छोटे टुकड़े करके मिट्टी के पात्र में डाल गौ मूत्र भरदे। तीन दिन तक नया मूत्र रोज़ बदलते रहें और धूप में रक्खे-फिर निकाल कर छाया मे सुखावे और विष के ऊपर से छिलका हटा देवे फिर रोगों में काम में लावे।

अकेला विष सेवन विधि

विषकल्प

शरीर को रेचनादि क्रियाओं से शुद्ध करके विषका सेवन करे। प्रथम दिन एक सरसों प्रमाण, दूसरे दिन दो सरसों के बराबर, तीसरे दिन तीन सरसों के बराबर इसी प्रकार ७ दिन तक एक २ सरसों बढ़ाता रहे। दूसरे सप्ताह में सात सारसों प्रमाण देता रहे। तीसरे सप्ताह में फिर १—१ सरसों क्रम से बढ़ाता जावे। अर्थात पन्द्रहवे दिन बढ़ावे नहीं ८ सरसों बराबर सोलहवे दिन ६ सरसों बराबर इस ही तरह २१ वे दिन १४ सरसों प्रमाण ले फिर चौथे सप्ताह में क्रम से बढ़ावे इस तरह ४१ दिवस पर्य्यन्त तक देवे इस प्रकार सप्ताह बीतने पर विष की परम मात्रा मानी जाती है। इसके पश्चात इसको छोड़ते समय घटाता हुआ चले और फिर बन्द करदे। इससे सब प्रकार के रोग नष्ट होकर शरीर बलवान वीर्यवान बन जाता है। कुष्टी रोगियों को १ रत्ती प्रकरण से सेवन करना चाहिये। विष की बड़ी से बड़ी मात्रा ८ रत्ती है। यह मात्रा क्रम से बढ़ाई जाती है। एक दम देने से मृत्यु हो सकती है।

विषम ज्वर—नीलाथोथा और पारद के साथ।

रक्तपित्त—मुल्हटी, रास्ना, खस, कमलगट्टा के चूर्ण, चावल के धोवन के साथ।

श्वासकास—रास्ना, वायविडंग, त्रिफला, देवदारु, त्रिकुटा, कमलगट्टा, शहद और गिलोय के रस के साथ।

ज्वरघ्न—मिश्री, पारा, दूध, मूंग की दाल, और शहद के साथ।

यक्ष्मा—शहद, पित्त,पापड़े, कासस, मद्य, नोन, हल्दी, कुड़ाकी छाल, च्यवन प्राश वलेह।

बवासीर, गोला, प्रमेह, तिमिरकृमि, पाण्डु, गलग्रह, उन्माद, कुष्ट

भांग, पीपलामूल, छोटी पीपल, गजपीपल, चित्रक, पोकरमूल, कचूर, दाख, अजवायन, जवाखार, अजमोद मिश्री, मुलहटी, दोनों कटहली, सेंधानमक, निसोथ, और विष प्रत्येक २-२ तोला

एक प्रस्थघृत में भूनकर अनुपान मासिक सेवन करे, पचने पर घृतपान करे।

संग्रहणी—नागर मौथा, कुडा की छाल, पारद, चित्रक, सौंठ, मिरच, पीपल अतीस, धाय के फूल, मोचरस, आम की गुठली, में विष पीला मिलाकर खावें।

पथरी और उदावर्त–हड़, चित्रक, दन्ती, हाटव, अफीम, अनुग, शिलाजीत, त्रिकुटा के साथ विष सेवन करे।

पथरी–गोमूत्र, सेंधानमक, पाषाण भेद के साथ विष का सेवन करे।

गोला त्रिफला और सज्जीखार के साथ विष सेवन करे।

क्रमि रोगशूल—पीपल, पीपलामूल के साथ विष सेवन करे।

प्लीह–द्रवती, महुआ, दाख, रास्ना, कचूर, पीपल, वायविडग, सौंफ और दुग्ध के साथ विष सेवन करे या अमलतासकी छाल त्रायमान बावची खरैटी को दुग्ध के साथ विष का सेवन करे।

क्रमि—सौंठ के साथ विष सेवन करे।

कुष्ट–मकोय की जड़ के काढ़े के साथ विष सेवन करे या बावची, एलुआ, सज्जीखार जवाखार, सेंधानमक और सींगिया विष को जल में पीस कर लेप करे अथवा विष भिलावा चित्रक, दूंघर्वा, निबौली का लेप करे।

कुष्ट-नाडीव्रण अर्शो–चित्रक, आक, गजपीपल, बावची, वच्छनाग विष, कपूर, आमाला, नाग केसर, कंजा का फल, सेंधा नमक, त्रिकुटा सज्जीखार, जवाखार, हल्दी, दारुहल्दी का सेवन करे।



अफ़ीम (Opium)

[ले०—डा० बी० सी० शुक्ला विशारद वैद्य H. M. D.]



हिन्दी—अफीम, आफू। अर्बी—अफयून। बंग—आफीम। मं०—अकुकडीर तथा अफून। माल०—अफिन। ति०—नलमएट्ठू। सं०—अहिफेन। ई०—ओपीयम ले० सोमनीफेरम, पोपीपापावर इत्यादि" Opium.

स्वाद में कड़वी, मादक, निद्रा कारक, दर्द व आक्षेप निवारक, कफ नाशक, वात पित्त वर्द्धक, स्पर्श शक्ति को हानीकारक, मस्तिष्क उत्तेजक, स्वेदजनक, मलमूत्र अवरोधक, बलकारक और वीर्य स्तम्भक है।

यह समर्ना और मालवा में विशेष उत्पन्न की जाती है। ये चार प्रकार की होती है।

(१) श्वेत = अन्नपाचक (२) कृष्ण = प्राण नाशक (३) पीत = मलमूत्रावरोधक (४) विविध रंगवाली = मल मूत्रविरेचक।

भारत में प्रायः कृष्णवर्ण की अहिफेन राज्य द्वारा बिकी की जाती है इसकी उपज के लिये भी प्रतिबन्ध हैं देशी राज्यों में इतनी विशेष रोक टोक नहीं है।

उत्पत्ति

अफीम प्राप्त करने की विधि यह है कि पोस्त के वृक्ष पर जब फल आजाता है तो उसके पकने पर सन्ध्या के समय सुइयों से ४-५ जगह खरोंच लगा देते हैं रात्रि को इसे ऐसे ही छोड़ देते हैं इसमें से दुग्ध निकल कर ऊपर जम जाता है प्रातः काल जाकर उसे एकत्रित कर लेते हैं और दुबारा फिर खरोंच लगा देते हैं। इसी प्रकार जबतक उसमें से दुग्ध निकलता रहता है यह क्रिया करते रहते हैं बाद में समस्त दुग्ध इकट्ठा करके मिट्टी के वर्तनों में भर देते हैं। मिट्टी इत्यादि भी इसमें मिल जाती है या बहुत से मिला भी देते हैं। थोड़े समय बाद यह जमकर कृष्ण वर्ण होजाती है राज्य के एक्साईज़ कर्मचारी इसका निरीक्षण करके बिक्री के वास्ते गोदामों में भेज देते हैं। यही इसकी संक्षिप्त उत्पत्ति है।

मात्रा—१ चावल से १ रत्ती तक। इसे शुद्ध करके व्यवहार करना अति उत्तम है।

वृक्ष

इसका वृक्ष १।। या दो फीट लम्बा होता है, रंग ज्यादह हरा नही होता बल्कि कुछ श्वेतता लिये होता है पत्तों के किनारे कटे हुए ऊपर से गोलाकार २-३ इंच तक लम्बे होते हैं चैत्र मास में बोया जाता है और ज्येष्ठ आषाढ़ में फूल आकर डोडा निकल आता है जिसका रंग श्वेत आकार में अखरोट के समान बड़ा होता है इसका दूध निकाल लेने पर यह भी कृष्ण होजाता है इस फल के अन्दर जो बीज होते हैं उनको तुख्म खशखास, और तुख्म अफयून भी कहते हैं।

अहिफेन

को ज्यादा खालेने पर प्राण लेलेती है परन्तु

औषधि रूप में व्यवहार करने पर बड़ा उपकार करती है। इसे लगातार ज्यादह समय तक नित्य सेवन नहीं करना चाहिये अन्यथा अभ्यस्थ बनाकर बड़ा क्लेश पहुंचाती है और सारी आयुके लिये इल्लत लग जाती है।

मुख्य तत्व

इसमें १८ प्रकार के मुख्य क्षार (Alkloids) पाए जाते हैं मार्फिया १० प्र० श०, कोडीना ·३ से १·६ प्र०श०, थेकैना प्रायः ·३ प्र०श०, नार्कोटाईन ४ से ६ प्र० श०, नारसीना, पापावरीना, स्यूडोमा फाइन, क्रपटो पाईन, प्रोटोपाईन, हाइड्रोकोटाईन, लोडेनाईन लाडे नोजाईन, मिकोनी डाईन, राई डाईन, कोडे माईन, प्रोस्कोपाईन, लेन्थोप्टाईन और लेन्था लाईन जल १६ प्र० श०। इसके तत्वों के प्रथक प्रथक बहुत से तीक्ष्ण प्रयोग बनाए जाते हैं।

व्यवहार

अहिफेन मुख तथा त्वचा पर लेपन करने से शूल नाशक शक्ति कारक होती है। इसे दूसरी औषधियों के साथ मिश्रण करके लेपन करने से दर्द पसली दर्द आमवात, दर्द कमर, कार्बंकल, गदा किशरज व ऐसाबी दर्द तत्क्षण शान्त होते हैं। इसके अन्तर प्रयोग से बेचैनी घबराहट और शूल शांत होकर निद्रा आजाती है प्रवाहिका संग्रहणी, और दस्तों को बन्द करके व शुक्र पुष्ट करने में विशेष महत्व रखती है। विशूचिका की प्रथमावस्था में भी लाभ देती है। प्रतिश्याय नवीन में लाभ नहीं करती जीर्ण के लिए तत्क्षण गुण दिखलाती है। नेत्रों के रोगों में भी लाभ करती है। इसको यदि अधिक खालिया जाये तो:—

विष लक्षण

उत्पन्न होकर प्राण नाश होजाता है यथा—:

मस्तिष्क ज्ञान शून्य होजाता है। आंखें झपकने लगती हैं और शनै २ गाढ़ आजाती है दिल घबड़ाने लगता है बेचैनी अत्यन्त होजाती है। श्वास गति मंद पड़ जाती है। नथूने फूलने व श्वास में खुर्राटे दार शब्द होने लगता है हृदय स्पन्दन झटकेदार होजाता है। फुफ्फुसों पर भी प्रभाव पड़े बिना नहीं रहता खुश्की दौड़ जाती है चेहरा निस्तेज, नेत्र अध मुद्रित होजाते हैं। पुतलियां फैलकर सिकुड़ जाती हैं। यदि अफीम खाने के थोड़े समय बाद ही रोगी को हिलाया डुलाया जाए या जोर से पुकारा जाए तो वह एक दम चौंक कर चैतन्य होने की चेष्टा करता है पर फिर अचैतन्य होजाता है। जब ज्यादा समय होजाता है तो हिलाने डुलाने पर भी चैतन्य नहीं होता क्योंकि इसका विष समस्त रक्त में सम्मिलित होकर सारे शरीर एवं मस्तिष्क में व्याप्त होजाता है मलमूत्रावरोध, श्वास कष्ट, शरीर का खिंचाव, पलकों का बिखर जाना, गहरी बेसुधी, शरीर पसीनेसे तर एवं हाथ पैर ठन्डे होकर मृत्यु अवश्यं भावी होजाती है।

जब रोगी की असाध्यावस्था मालूम दे तो बड़े यत्न से चिकित्सा करनी चाहिये थोड़े विष में सरल चिकित्सा भी काम दे जाती है।

चिकित्सा

रोगी ने अहिफेन खाया है यह पूर्णतया निश्चय हो जाने पर स्टमक पम्प से पेट धो डालना चाहिये यदि रोगी को जरा भी चैतना है

तो सल्फेट आफ जिंक या पल्व एपीकाक २० ग्रेन जलमें घोलकर पिलादें या राई इत्यादि दूसरी वमन कारक औषधिएं पिलाकर वमन जरूर कराएं। यदि चेतन्यता न हो तो एपोमार्फाइन (Appomorphine Hypodermically Injection gr 1/6 to 1/6 per c.c.) का सूचिका भेद 1/6 से 1/6 ग्रेन की मात्रा में करें इससे वमन होकर सब विष निकल जाएगा। इसके बाद पुटास परमें-गनेट(ot. Permagnate)२० ग्रेन जल १ पाईन्ट में मिला कर पिलाएं। हृदय व नाड़ी गति स्वस्थ करने के लिए बेलेडौना टिञ्चर ३० बूंद १ औन्स जल में मिला कर ऐसी एक मात्रा हर १५ या २० मिन्ट बाद देते रहें या स्ट्रिकनिया एक बटा ६० ग्रेन के हाइपो डर्मिक इंजैक्सन करने से दिल व हृदय क्षीण न होगा।

नौसादर व चूना मिलाकर सुंघायें। गीले तौलिए से शरीर को थमथमाते रहें ताकि निद्रा न आ जाए। शरीर में चुटकी काटना, और बात चीत करते रहना जिससे रोगी को नींद न आये। रोगी को यदि सोने न दिया जायगा तो उसकी मृत्यु कदापि न होगी हाथ पैरों के खिंचाव दूर करने को बिजली लगाना या अलसी की पुल्टिस बांधना हितकर है। मस्तिष्क पर ठन्डे व गर्म पानी के क्रम से तैड़े देना युक्ति संगत है। कृत्रिम श्वास प्रश्वास क्रिया करना उचित हैं। एटोपाइन, स्ट्रिकनिया, पाईथर के इञ्जैक्शन हर आध घन्टे बाद करते रहें जब इसका असर हो जाय तो बंद कर दें। यह उपाय रोगी को बचाने में असमर्थ है। अहिफेन विषपान किए हुये रोगी को भूल कर भी मद्य या सिरके का सेवन नहीं कराना चाहिये। यह बहुत ही अनिष्ट कारी है।

होम्योपैथी—

में उपरोक्त कोई झंझट नहीं करनी पड़ती है केवल लक्षणों के अनुसार निम्नलिखित कोई भी औषधि पिलाएं, कै होकर विष शान्त हो जाएगा—

होम्योपैथिक विषघ्न औषधियें—

बेलेडोना-कैम्फर-कोफिया-एपीकाक मक्यूरिस-कार नक्स वामीका, ऐल्बम, एन्टिमटार्ट, डिजी टेलिस, लेकिसस, कोनियम और स्ट्रीकना।

अफीम से बनने वाली मुख्य औषधिएँ—

अगले पृष्ठ पर देखिये

अफीम से बनने वाली मुख्य औषधिएं:—

नाम अंग्रेजी में	नाम हिन्दी में	गुण	मात्रा व प्रयोग स्थान
Emplastum opii	लेप अफीम	शूल नाशक	त्वचा पर लेप करें
Ext: opii	शुद्ध अहिफेन	शूल नाशक निद्रा जनक	मात्रा-¼ से १ ग्रेन तक
Ext: opiiLigd		" "	मात्रा-५ से ३० बू० तक
Pilula Plumbi cum opii	पिलूला प्लम्बी कम ओपीयम	ग्राही व विकासी	मात्रा-२ से ४ ग्रेन तक
Pilula Saponis Co.	पिलूला सेपोनिसको	,, ,, विशेष शुद्ध	मा०२ से ४ग्रेन तक
Pulv. Cretae Aromati cm cum opii	पल्व क्रेटा एरोमेटिकम ओपीमाई	कफनाशक ग्राही बच्चों के लिए विशेष गुण कारक	मा० १० से ४० ग्रेन ¼ से १ग्रेन बच्चों को
Pulv. Ipecacuanhoe composita(DoversPowdr.)	पल्व एपी काक को (डोवर्स पौडर)	स्वेदक	मा० ५ से १५ ग्रेन
Pulv.pecac cum scilla	पल्व एपी काक कम सिल्ला	कफहर, विकासी	मा० ४ से ८ ग्रेन
Pulv. Kino Compositus.	पल्व किनो कम्पोजीटस	ग्राहीव विकासी	मा० ५ से २० ग्रेन
Pulv. opii compositus	पल्व ओपी कम्पोजीटस	शूलहर व विकासी	२ से १० ग्रेन
Suppositoy Plumbi compositus.	सेपोजीटरी प्लम्बी कम्पोजीटस	किशर व अर्श नाशक	गुदा में रखने के लिये
Tincture opii	अहिफेनासव	शान्ति कारक, ग्राही निद्रा जनक	मा०५ से १५ बू०तक दिनमें ३-४ मात्राएं दें
Liniment opii	लेप अहिफेन	शूलहर	एकमा०२० से ३० बू० मलने के लिये
Tr- opii amonata		कफहर, शूलहर	½मा०से१ ड्राम तक जल मिलाकर
Tr: Camphora Composit		कफहर, शूलहर दिल को शक्ति दायक	मा० ¼ से १ ड्राम ४ बू० एक वर्ष के बच्चे को
unguentum gatti Cum opii	मरहम	अर्शहर	गुदा में लगाएं

इसके मिश्रण से सहस्रों योग बनते हैं जिनका यहां पर उल्लेख विस्तार भय से नहीं किया गया है क्योंकि हमारा लेख केवल अहिफेन पर ही प्रकाश डाल रहा है २-३ प्रयोग अन्त में दिए जारहे हैं।

यूनानी

चिकित्सा शास्त्र भी परोक्ष सिद्धान्तों से सहमत है इसलिए उनका यहां वर्णन युक्ति संगत नहीं ज्ञात होता संक्षेप में यह दर्जे चार में सर्द व खुश्क है। इसका अनुपान केसर व दारचीनी है। इसके प्रभाव में अजवायन खुरासानी लेनी चाहिए।

मात्रा—१ रत्ती तक।

गुण

सुस्त करने वाली, काबिज, नींद लाने वाली, दर्द व सुरत इंजाल को मुफीद है, आंखों के रोगों में लेप गुणकारी है। थोड़ी मात्रा में अमृत भी है ज्यादह मात्रा में विष भी है। इससे अनेक औषधियें बनती हैं।

धातु पुष्ट की गोलीः—

अफीम शुद्ध १० तो० काली मिरच, दारचीनी, सोंठ, कतीरा, गोंदकीकर, केसर पियाबासा हरेक ५ तो० हुब्बेविलसां मुसफ्फी, अकरकरा, रब्बेसूम जरम्बाद, जुन्द बेदस्तर, जदवार खताई, दरूनज अकर्बी, मस्तगी, ऊदखाम प्रत्येक २ तो० खुरफा तुख्म करफ्स, करनफल, दार फिलफिल, त्याना, जैन्शियन पाई नील, हरेक ३ तोला, मुश्क खालिस १ तो० मिश्री १५ तो० कूट छान कर अर्क गुलाब से खरल करके चने समान वटिंग बनालें। रात्रि को एक वटि खाकर ऊपर से घी दूध का विशेष सेवन करें धातु पुष्ट हो जायगी।

स्तम्भन के लिए सम्भोग से १ घन्टा पूर्व खाकर ऊपर से दूध पीएं जब तक नमक न खाया जायगा वीर्यपात न होगा।

दर्द कान

ग्लीसरीन १ तो० टिंचर ओपी १ तो० मिलाकर ४।५ बून्दें कान में डालें।

जुकाम

अफीम व जायफल समभाग गाय के दूध में घिसकर मस्तक पर लेप करें दर्द सर व जुकाम शीघ्र नष्ट हो जाता है।

(२) टिञ्चर अफीम की २।२ बून्दें नाक में डालें फौरन जुकाम गायब।

नेत्रबिन्दु

जिंक सल्फ ग्रेन १ वाईनम ओपी आधा ड्राम फटकड़ी ग्रेन २ बोरिक लोशन औन्स १ मिलाकर नेत्रों में डाले। नजले की दुखती आंखें ठीक हो जाती हैं। रोहों को भी गुण कारी है।

स्तम्भन

जावित्री, जायफल, लालचन्दन, पीपल, केसर लौंग, सोंठ, अकरकरा, प्रत्येक २ तो० पाईनील, १ तो० शुद्ध रूमी सिंगशरफ गन्धक शुद्ध प्रत्येक ६ मासा, शुद्ध अफीम ४ तो० सबको मिलाकर २।२ रत्ती की गोलियां बनालें। वक्त जरूरत एक खाकर दूध पीएं वीर्यपात तुर्षचीज खाने के बाद होगा।

अर्श नाशक

एसिड गैलिक ग्रेन १० एक्सट्रैक्ट ओपी ग्रेन ६, एक्सट्रैक्ट बेलेडोना ग्रेन ५, सादामरहम औन्स १ मिलाकर मस्सों पर लगाएं।

श्वेत प्रदर

एसिड सलफ्यूरिक डिल १० बून्द टिञ्चर अफीम २ बून्द एसिड गैलिक ग्रेन ...

लिस ४ बून्द एक्सट्रेक्ट अरगट लिक्वि१० बून्द १५ जल मेन्था पिप० औन्स एक मिला कर ऐसी एक २ मात्रा दिन में ३ बार पिलाएँ।

गर्भणी की वमन रोकने के लिये---

केपली चूर्ण ग्रेन १, शुद्ध अफीम १ ग्रेन,एक्स ट्रेक्ट हाये सायमस ग्रेन २--एक गोली बनाएं। नित्य प्रातः खाएं।

गठिया---

पुटास बाई कार्ब १० ग्रेन, वाईनम कोलची साई १० बून्द, टि० ओपीयम ३ बून्द, मैग कार्ब १० ग्रेन मैग सल्फ १ ड्राम, टि० हाये सायमस आधा ड्राम, एक्वा मेन्थापिप १ औन्स मिलाकर ऐसी ३ मात्रायें बनाकर प्रातः दो पहर व सायंकाल दिन में ३ बार १-१ दें। १ सप्ताह में आराम हो जायेगा।

प्रवाहिका---

कलई चूना आधा मा० अफीम शुद्ध आधी रत्ती मिलाकर खिलाएं दिन में एक बार दें। ३ दिन में पेचिश व दर्द शान्त हो जाता है।

तम्याक---

रीठे को पानी में खूब पकावें जब झाग आने लगे तो रोगी को २ तो० पिलायें। इससे खूब कै होकर जहर अफीम नष्ट हो जायगा।

आयुर्वेद---

में अफीम को उपविष माना गया है "भाव मिश्र लिखते हैं---

अर्क क्षीरं स्नूही क्षीरं लांगली करवीरकम।
गुंजाहिफेनो धतूरः सप्तोप विष जातयः॥

मात्रा २ चावल से १ रत्ती--२ रत्ती से विशेष खाने पर मादक और २ मासे से विशेष मारक है। विष के लक्षण जो ऊपर वर्णन किए गए हैं वही आयुर्वेदानुसार भी माने गए हैं। इसको अशुद्ध व्यवहार नहीं करनी चाहिए। प्रथम इसे शुद्ध करलें तब अल्प मात्रा में व्यवहार करें तो अमृत का गुण देती है। परन्तु ज्यादः समय तक नित्य इसका व्यवहार मनुष्य को अभ्यस्त बना देता है फिर समय पर मात्रा न मिलने से बेचैनी आलस्य शरीर में शूल व नेत्रों से पानी जाना शुरू होजाता है इसलिए इसे चन्द दिन खाकर तर्क कर देना चाहिए।

अहिफेन शोधन

अफीम को पानी में घोलकर जरा गर्म करें और गर्म ही गर्म कपड़े की दुहेरी तह में छान लें अथवा ब्लाटिंग पेपर में से छान लें तो मिट्टी इत्यादि ऊपर रह जायगी और स्वच्छ अफीम नीचे चली जायगी इसे अग्नि पर पका कर गाढ़ा करलें यही शुद्ध अफीम है। १ छटांक अफीम शुद्ध करने पर शुद्ध अफीम २॥ तो० प्राप्त होती है।

विषनाशक

यदि अहिफेन का विष चढ़ जाएगा तो श्वास के साथ अहिफेन की गंध आने लगेगी ऐसी हालत में निम्नलिखित कोई भी उपचार किया जायगा तो रोगी मृत्युमुख से भी बच जायगा।

(१) केसर या दारचीनी अरण्ड की कोंपल प्रत्येक ३ मा० काली मिर्च ५, ठंडे पानीमें पीस कर रोगी को पिलाएं।

(२) १ तोला श्वेत फटकड़ी पानी में पीस कर ३ बार १-१ घन्टा बाद पिलाएं या एक दम अवस्थानुसार पिलादें।

(३) तूतिया ३ मा० केले का अर्क ३ तो० में मिलाकर पिलावें कै होकर विष नाश हो जायेगा।

(४) यदि यह पता लगजाए कि कितनी अफीम खाई है तो उससे दुगनी मात्रा हीराहींग पानी में घोल कर पिलादें विष कै द्वारा दूर होगा। पेट साफ हो जाने पर चाय खूब तेज बना कर पिलादें इससे सारे शरीर में स्फुर्ती आजाएगी कमजोरी दूर हो जा गी।

रसायन अफीम

छोटी इलायची के बीज, अक़रक़रा १-१ तो० बंसलोचन २ तो० छोटी पीपल ६ मा० बहमन सुर्ख ६ मा० कपूर भीमसैनी ६ मा० जावित्री २ मा० जायफल ३ मा० कस्तूरी १ मा० अनबिध सच्चे मोती ३ मा० सोने के वर्क ३१ चान्दी के वर्क़ १०८, किनीन सल्फ ३ मा० पाई नील १तो०। मोतियों को १२ घन्टे तक गुलाब जल में खरल करो फिर इसमें पाई नील, किनीनसल्फ वर्क़ व कपूर कस्तूरी डाल कर दो घन्टे तक घोटो और समस्त दवाएं कपड़ छन करके इसमें मिलादो तदोपरांत शुद्ध अफीम २ तो० एक कलई दार कटोरी में जल ५ तो० डाल कर पकाओ जब जरा गाढ़ा जाय तो उसमें उपरोक्त समस्त चूर्ण डाल कर खूब मिलाओ ताकि अफीम सब में यकसां मिल जाएह। फिर एक २ रत्ती की गोलियां बनालो। रात्रि को एक गोली खाकर ऊपर से मिश्री मिला दूध पीएं जिनका जुकाम, खांसी नजला पीछा न छोड़ता हो तत्क्षण लाभ होगा। स्त्री प्रसंग में आनन्द आएगा स्तम्भन इच्छानुसार होगा। प्रमेह नाश होगा। शरीर का दर्द लक़वा कानों की सनसनाहटो दिलकी कमजोरी मसूढ़ों की सूजन आंखों से पानी बहना इत्यादि आराम होते हैं। खूबी यह है कि कोष्ठ बद्धता नहीं होती। महारसायन बात व कफ प्रकृति वालों के लिए अमृत है। पित्त प्रकृति वाले बजाये मुश्क के चन्दन चूरा २तो० कपड़ छन करके मिलालें तो हितकर हो जायगी। बटियें तौल २ कर या मशीन द्वारा बान्धनी चाहियें ताकि छोटी बड़ी न हों। इस रसायन को ४० दिन खाकर फिर छोड़ देना चाहिए ४० दिन में पर्य्याप्त लाभ हो जाता है। यदि फिर खानी होतो २ सप्ताह बाद सेवन करें। शतशोनुभूत योग है।



अफ़ीम-विष नाशक उपाय

[श्री हरवंशप्रसाद जी पाठक]



(१) घी पिलाकर वमन कराना बहुत लाभदायक है।

(२) पुराने कागजों की राख पानी में घोलकर पिलाने से वमन होकर जहर उतर जाता है।

(३) मकोय के पत्तों का रस पिलाने से अफ़ीम का विष नष्ट हो जाता है।

(४) बिनौले और फिटकरी का चूर्ण देने से विष उतर जाता है

(५) घाग की कपास के पत्तों का रस पिलाने से विष उतर जाता है।

(६) अगर बहुत देर हो गई व अफ़ीम पच गई हो तो आध पाव आंवले के पत्ते आध सेर जल में घोट कर ३-४ बार पिलाने से सारे उपद्रव शांत होजाते हैं।

(७) अरण्डी की जड़ या कोंपल पानी में पीस लेप करने से विष उतर जाता है।

(८) दो माशे हीरा हींग २, ३ बार में खाने से विष उतर जाता है।

(९) गाय का घी और ताजा दूध पीने से विष उतर जाता है।

(१०) अरीठे का पानी थोड़ा सा पीने से अफ़ीम का विष उतर जाता है।

(११) कपास के पत्तों का गर्म रस, इमली के पत्तों का रस, सीताफल के बीजों की गिरी पानी में पीस कर पिलाने से अफ़ीम का विष अवश्य नाश होता है।

(१२) रोगी को सोने मत दो, शिर में शीतल जल की धारा छोड़ो, थोड़ी ब्रांडी पिलाओ।

(१३) काली मिर्च, हींग और देवदारु बराबर २ पीस कर एक २ गोली के समान खिलाओ।

(१४) बेहोशी की हालत में छींक लाने की दवा सुंघाओ, शरीर को मलो और पसीने लाने वाली दवा दो।

(१५) नाड़ी बैठ गई हो तो लाइकर एमोनियां १० बूंद अथवा स्प्रिट एमोनिया एरोमेटिक ३० से ४० बूंद तक जल में मिला कर पिलाओ।

(१६) सरफोंका की जड़ पानी में घिस कर पिलाने से अफ़ीम का जहर उतर जाता है।

(१७) घी के साथ सोंठ और काला भांगरा पिलाने से जहर उतर जाता है।

(१८) बच तथा हींग मट्ठा के साथ पीने से जहर उतर जाता है।

(१९) बड़ी कटेरी के पत्तों का रस दूध के साथ पीने से जहर उतर जाता है।

(२०) नमक, मूली के बीज, शहद, सोया का क्वाथ पिलाने से उल्टियां होकर अफ़ीम का जहर उतर जाता है।

(२१) माल कांगनी के पत्तों का रस शक्ति के अनुसार ४ तोले तक पिलाने से जहर उतर जाता है। एक बार से फ़ायदा न होने पर बलाबल विचार कर दुबारा देना चाहिये।



बेला डोना (Belladonea)

(कविराज कृष्ण शंकर भट्ट एल० एम० पी०)



इसके पेड़ का नाम एट्रोपिया बेलेडौना है इसके पत्ते जड़ और सत्व काम में आते हैं।

इस वृक्ष के फूलने पर पत्ते तोड़ कर सुखालेते हैं शाख पर पत्ते क्रम पूर्वक लगे रहते हैं एक के नीचे एक होते हैं ऊपर के पत्ते एक दूसरे के सामने होते हैं प्रत्येक पत्ता ३ से ८ इंच तक लम्बा होता है पत्ते की शकल अंडाकार किनारे साफ ऊपर की ओर नोकदार नीचे की तरफ छोटा सा डंठल होता है, खुरासानी अजवायन और धतूरे के पत्तों के समान होते हैं इसकी जड़ को पतझड़ के दिनों में खोद कर सुखा लेते हैं यह जड़ अर्लौइक (अंडे की शकल) टुकड़ों में मिलती है। ½ से १ फिट तक लम्बे ½ से ¾ तक मोटे होते हैं, रंगत बाहर से हलकी भूरी और अंदर से सफेद, तोड़ने पर आसानी से टूट जाती है।

इसके पत्ते और जड़ों से एक सत्व प्राप्त होता है उसे एट्रोपीन कहते हैं। बेरंग सुई के समान पतली २ क़लमें होती हैं स्वाद—कड़वा होता है।

विष प्रभाव

इसके सत्व एट्रोपीन के खिलाने से मुख और हलक खुश्क होकर निगलने में तकलीफ होती है नजर धुंधला जाती है आंखों की पुतलियां फैल जाती है त्वचा सूखी नाड़ी मंद यदि अधिक मात्रा में दिया जाये तो यह लक्षण शीघ्र शुरू हो जाते हैं-चेहरा आंखें त्वचा सुर्ख हो जाती हैं-नाड़ी की गति बहुत तीव्र हो जाती है कभी २ दुगनी हो जाती है। त्वचा गर्म और एक समान रक्ताभ हो जाती है या इस पर सुर्ख २ ददोड़े पड़ जाते हैं पुतलियां बहुत फैल जाती हैं मूत्र तकलीफ से आता है कभी २ बन्द भी हो जाता है कभी अतिसार हो जाता है श्वास मंद और गाध (गहरा) होता है मूर्च्छा होती है कभी २ रोगी प्रलाप करता है हृदय की गति रुक जाने से या श्वासावरोध होने से मृत्यु होती है।

चिकित्सा—

आरम्भ में स्टमकपम्प से आमाशय को धो डालें या वमन कारक औषधियों से वमन करायें। टैनिक [माजूका सत्व] टी [चाय] क्लोरल दें। मार्फीन, कैफीन, या पाइलो कार्पीन का इंजैक्शन करें, उत्तेजक वस्तु दें गर्म पानी की बोतल लगायें। ½ ग्रेन पाइलो कार्पीननाइट्रेट का इंजैक्शन करें।

श्वासावरोध होने पर कृत्रिम श्वास जारी करायें क्योंकि एट्रोपीन मूत्र द्वारा निकलती है इसलिये कैथेटर से भी मूत्र निकालते रहें ताकि मूत्र जज़ब न होने पाये।

उपयोग

बाह्य—

इसका लिनिमैंट, प्लास्टर, मरहम, बेला डोना

ग्लीसरीन वगैराह स्नायविक शूल पार्श्वशूल भौंका दर्द, गौट, रुमेटिज्म (गठिया) के दर्दों में अधिक काम में आता है।

साइटिका (गृध्रसी) में एट्रोपीन का त्वचा मध्य इंजैक्शन बहुत शीघ्र लाभ देता है।

दर्द और प्रदाह को दूर करने के लिए बेला डौना ग्लीसरीन, या कलोडियम बेला डौना फौड़ों कार्ब कल गर्भाशयिक शोथ, अंडकोष का शोथ विसर्प, आदि में प्रयोग होता है।

लिनिमैन्ट आफ बेला डोना के इस्ते माल से दर्द कम हो जाता है, दुर्गन्ध युक्त पसीने को दूर करने के लिए इसमें युडी कोलन मिलाकर काम में लेते हैं।

बेला डौना का मरहम खालिस या इसमें कोनाइम मिला कर बवासीर के दर्द और जलन को लाभ देता है।

जच्चा अगर किसी कारण से शोथ हो जाने के कारण अपना दूध न पिला सकती हो और यदि इसके दूध को कम या खुश्क करना ही हो तो ग्लीसरीन बेलडौना लगाने से शोथ नष्ट हो जाता है औ दूध सूख जाता है।

गर्भाशय के प्रदाह में ग्लीसरीन बेलाडौना लगाने से बहुत लाभ होता है। यदि गर्भाशय के मुख में व्रण हों और श्वेतप्रदर हो १ औंस ग्लीसरीन में ५ से १० ग्रेन एक्स. बेला डौना मिला कर विलायती रुई में लगा कर प्रयोग करना लाभ देता है–।

एक्स. बेला डौना	२ ग्रे०
टैनिक एसिड	७ ग्रे०
काका बटर	आवश्यतानुसार

मिला कर वर्त्ति बनायें फिर गर्भाशय में रखें इससे गर्भाशय मुख व्रण तथा लिकोरिया में यह बर्ती अधिक लाभ देती है तथा कष्ट प्रद मासिक एवं पेडू के दर्द में भी इससे लाभ होता है। जब औफ थल मस कोप (नेत्र परिक्षण यंत्र) नेत्र की परीक्षा करने के लिए पुतली को फैलाने के लिए बरतना हो एट्रोपीन ४ ग्रे० फी औंस वाला सल्यूशन काम में लाते है यह और आंख की बिमारीयों में भी लाभ देता है।

आन्तरिक प्रयोग

एट्रोपीन कभी २ मर क्यूरल सेली वेशन (पारे से मुख का आना) को रोकती है। एक्यूट टांसलाइटिस, (तीव्र कंठ प्रदाह) में बेला डौना टिंचर कम मात्रा में एकोनाइट के साथ मिला कर देने से रोग रुक जाता है कभी रेचक औषधियों को तीव्र करने के लिए या जो रेचक औषधियां पेट में मरोड़ पैदा करती हैं इस को रोकने के लिये इन में प्रायः एक्स बेलाडौना मिला दिया करते हैं। बतौर इन डायरक्ट ओपेरी एन्ट बेलाडौना को पुरानी कब्ज और आदती कब्ज में या रफ़ाह हाजत के समय दर्द में देते हैं। इसलिये ½ से ½ ग्रेन एक्सट्रेक्ट आफ बेलाडोना को सुबह व शाम इस्तेमाल करने से यह शिकायत जाती रहती है कभी २ जब तीव्र रेचक औषधियों के प्रयोग करने पर भी दस्त नहीं होता १ या २ ग्रेन एक्स. बेला डौना वाली वर्त्ति के प्रयोग से टट्टी खुल कर हो जाती है।

इन्टस्टाइनल एब्सट्रक्शन (आंतों में रुकावट पड़ जाना) पेरीटो नाइटिस (उदर की शोथ) एन्टिराइटिस और एपेन्डी साइटिस (आंत्र शोथ)

में बेलाडौनाका एल्कोहालिक एक्सट्रैक्ट अकेला या ओपियम [अफीम] के साथ मिलाकर देना बहुत लाभदायक होता है और उदर के शूल को इससे बहुत लाभ होता है ।

रक्त परि भ्रमण और हृदय

इससे दिल के दर्द व बेचैनी को बहुत लाभ होता है कमजोर दिल वाले को यदि क्लोरोफार्म देना हो तो इसके बजाय एट्रोपीन की पिचकारी देना अच्छा होता है ।

श्वास—वातिक कास, काली खांसी में विशेष लाभ देता है वृद्धावस्था की कास में और पुरानी खांसी में फायदे मंद है जुकाम में रतु बन जय अधिक बहतो हो एट्रोपीन के सेवन से जल्द फायदा होता है ।

यक्ष्मा के रोगी का रात्रि स्वेद बन्द करने के लिये एट्रोपीन इंजेक्ट करते हैं ।

बच्चों के रोग बून्द २ पेशाब करने में या बिस्तर पर मूत्र करने में यह अति लाभ देता है ।

स्वप्न दोष में यह जिनकी मुत्रेन्द्रिय सुस्त, शिथिल होगई हो सोते हुये बिना स्वप्न देखे वीर्य स्खलित होजाता हो उनको भी लाभ देता है ।

दर्द गुर्दे में जब पथरी मूत्र पथ में अटक जाये तीव्र शूल हो उसको निकालने और दर्द नष्ट करने के लिये बड़ी मात्रा देने पर लाभ होता है । बस्ति प्रदाह, अंड कोष प्रदाह मूत्रकच्छ्र, मूत्र में एंठन होना पेडू के सब प्रकार के दर्दों में बेलाडौना को पिलाने से बहुत फायदा होता है ।

औषधियां

१—टिंचर बेलेडौना	१० बूं०
टिं० लोबीलिया ईथर	१० ,,
टिं० जेबूरेन्डी	१० ,,
एक्वा क्लोरोफार्म	१ औंस

ऐसी १-१ मात्रा श्वास [दमा तशम्नुजी] में दें

२—टिंचर बेलेडौना	५ बूं०
टिं० केम्फर को०	१० ,,
सीरप ओरंशियाई	½ डा०
एक्वा केम्फोरी	१ औं०

ऐसी १-१ मात्रा दिन में ३ बार आवश्यकतानुसार देना हौल दिल (पलपीटेशन) और हार्टपेन [दर्दिल] में लाभ देता है ।

३—टिं० बेलेडौना	२ बून्द
ब्रोमोफार्म	२ ,,
वाइनम इपिकाक	५ ,,
मिसचूरा एगिडली	२ डा०
एक्वाडिस्टिलेटा	½ औं०

ऐसी १-१ मात्रा ४-४ घंटे बाद दें । कुकर खांसी मे लाभ देती है ।

४—एक्स० बेलाडोना	⅙ ग्रे०
एलोइन	¼ ,,
स्ट्रिकनीन सल्फ	1/60 ,,
पल्व एपिकाक	¼ ,,

सब की एक गोली बनालें ऐसी १-१गोली दिन में दोबार दें पुरानी कोष्ठबद्धता को दूर करती है ।

५—एक्स० बेलेडौना	¼ ग्रे०
पल्व केपसीसाई	¼ ,,
एक्स० केसकरा	३ ,,

सब की एक गोली बनालें आवश्यकतानुसार रात को सोते समय दें । कब्ज को दूर करती है ।

डिजिटेलिस (Digitalis)

(कविराज शशिकान्त मिश्र भिषगाचार्य)

—:(※):—

पहचान

इसके चार से बारह इंच लम्बे, ६ इंच चौड़े पत्ते होते हैं। जहां डंडी पत्ते के साथ लगती है वहां एक छोटा सा पर लगा हुआ होता है। शक्ल में अण्डाकार नोक तेज़ नहीं होती पत्तों का किनारा कंगूरेदार (दन दानेदार) ऊपर की सतह लोमयुक्त और मांदसब्ज़ रंग की होती है। नीचे के भाग का वर्ण ज़रा फीका होता है मगर रोम इस पर अत्यधिक होते हैं। इसकी गंध हल्की मगर प्रिय, चाय के समान होती है।

स्वाद—अत्यधिक कड़वा और बुरा होता है।

विशेष विश्लेषण

डिजीटाक्सीनः—

यह ग्लूकोसाइड की तरह का सत्व होता है डिजीटेलिस का यह सबसे अधिक तीव्र भाग है।

६—एक्स० बेलडौना एल्कोहालिक	[illegible] ग्रे०
एगरीसीन	[illegible] ,,

दोनों की एक गोली बनालें रात को सोते समय यक्ष्मा रोगी का रात्रि स्वेद रोकने में लाभ देती है।

७—टिं० बेलडौना	८ बूं०
एक्स० कोका लिक०	१५ ,,
इन्फ्यू० ब्यूकों	१ औं०

ऐसी १-१ मात्रा दवा की १ गिलास वार्लि वाटर में मिलाकर ६-६ घंटे बाद दें। ममाने की प्रदाह में लाभ देता है।

यह बड़ा जहरीला होता है और इसमें बड़ी भारी शरीर में धीरे धीरे जमा होने की शक्ति होती है।

यह पानी में हल नहीं होता, ईथर में बड़ी कठिनता से हल होता है। लेकिन क्लोरो फार्म और अल्कोहल में आसानी से हल होजाता है यह सत्व बहुत पतली २ और श्वेत कलमों की शक्ल में मिलता है।

मात्रा—[illegible] से [illegible] ग्रेन तक।

(२) डिजिटेलेन —

यह एक चमकदार ग्लूकोसाइड होता है जिस में डिजीटेलिस के प्रभाव का बहुत सा भाग होता है। इसको डीजिटीलीन वेरम भी कहते हैं। पानी के १०० भाग में १ भाग मिल जाता है।

मात्रा—[illegible] से [illegible] ग्रेन तक।

(३) डीजिटिलीएन

यह एक मार्फीन के प्रकार का ग्लूकोसाइड होता है जिसका रासायनिक असर अभीतक पूरे तौर पर मालूम नहीं होसका। यह पानीमें हल होजाता है और इसलिये यह हाइपोडर्मिक इंजेक्शन के लिए ठीक है। पिचकारी देने की मात्रा [illegible] ग्रेन है। कहा जाता है कि इस सत्व में क्यूमोलेटिव नहीं होता है। यह तीनों ग्लूकोसाइड सत्व कार-डिक स्टीम्यूलेन्ट प्रभाव रखने वाले हैं।

(४) डीजिटोनीन

यह ग्लूकोसाइड की किस्म का सत्व है। इसका रासायनिक प्रभाव सेनेगा के जौहर सेनीन से इस कदर मिलता जुलता है कि इन दोनों के प्रयोग में कुछ अन्तर ही प्रतीत नहीं होता इसका प्रभाव कार्डिक डीप्रेसेन्ट होता है इसलिये उपर्युक्त जौहरों से यह भिन्न हैं।

(५) डिजिटेनेन

इस जौहर पर कोई फिजिलोजिकल असर नहीं होता। उपर्युक्त पांचो जौहरों के रासायनिक विश्लेषणों में नाइट्रोजन नहीं होती।

खोट—फौलाद के मिश्रण, साल्ट, असिटेट आफ लैड, सिंकोना।

मात्रा—½ से २ ग्रेन तक (चूर्णित पत्तों के रूप में)

इससे निर्मित औषधियां

इनफ्युजन डिजिटेलिस (Infuson Digitalis)

सूखे पत्ते ६० ग्रेन, खौलता हुआ जल १ पाइंट इस मिश्रण में डिजो टोनीन बहुत होती है। मगर डिजीटेकसीन बहुत नहीं होती।

मात्रा—२ से ४ ग्रेन वाले फ्लुइड औंस तक।

टिंकचर डिजिटेलिस (Tinctura Digitalis)

खुश्क पत्ते २½ औंस अल्कोहल (६० फीसदी वाला) २० औंस परकोलेट (छान) कर लेवें। इसमें डिजीटेलीन और डिजीटाक्सीन दोनों होते हैं।

मात्रा—५ से १५ बू०।

क्योंकि इन मिश्रणों में डिजीटेलिस के सत्व न्यूनाधिक होते हैं इसलिये बहुत से चिकित्सक चूर्णित पत्रों को अधिक पसन्द करते हैं।

प्रभाव

बाह्य

पत्तों से त्वचा पर किसी कदर खराश पैदा होती है मगर यह निश्चय नहीं कर सके इनके सत्व त्वचा द्वारा अभिशोषित हो सकते हैं या नहीं।

आन्तरिक

अन्न प्रणाली और आंतें

आंतों के पाचक रस को कुछ उत्तेजना देता है। कभी २ थोड़ी खुराक में भी दस्त और वमन शुरू हो जाते हैं।

रक्त

यह रक्त में बहुत शीघ्र मिल जाता है मगर रक्त पर इस का कोई असर नहीं होता।

हृदय

पहला प्रभाव डिजीटेलिस का यह होता है कि दिल की गति शिथिल हो जाती है, हृदय की फैलने की गति का समय बढ़ जाता है परन्तु सिकुड़ने के समय में कुछ फर्क नहीं आता मगर इसकी ताक़त बहुत बढ़ जाती है यहां तक कि बड़ी मात्रा में देने से जानवरोंमें भी दिल बिलकुल फ.के रंग का होजाता है, क्योंकि शारीरिक भाग इस क़दर जोर से सिकुड़ते हैं कि दिल की खाल के अन्दर एक बून्द भी रक्त शेष नहीं रहने देते। नाड़ी इसीलिये ताक़त वाली होजाती है मगर तेज रफ़्तार कम होजाती है, अगर इस दवा के देने से पहले दिल की गति बेक़ायदा तौर पर होरही हो इस दवा के इस्तेमाल के बाद बाक़ायदा होजाती

है अगर वह दवा आन्तरिक प्रयोग के रूप में सेवन की जाये तो दूध पिलाने वाले जानवरों में दोनों विन्ट्रेकल्जके हरएक भागपर प्रभाव पड़ता है। पर मेंडकों में जिस समय कि एक भाग सुकड़ रहा होता है उस समय दूसरा भाग फैल रहा होता है, मेंडकों में दिल सुकड़ने की हालत में हरकत करने से रह जाता है और इस अवस्था में दिल निहायत जोर से सुकड़ा हुआ होता है देखने में बिलकुल फीके रंग का होता है और किसी किस्म कास्टिम्यूलेशन करने से हरकत नहीं करता लेकिन दूध पिलाने वाले जानवरों में दिल अन्त में फैलने की हालत में गति करने से रह जाता है यदि डिजीटेलिस मेंडक के विन्ट्रीकल के किसी भाग पर मुकामी तौर पर लगा दिया जावे तो वही भाग सिकुड़ता है जिसको इसे लगाया जावे, लेकिन दूध पिलाने वाले जानवरों में ऐसी हालत उपस्थित नहीं होती, बाज हैवानों में इससे ओरीकल सुस्त होजाते हैं मगर इनकी शक्ति में कुछ फर्क नहीं आता। सारे हैवानों में इसकी बड़ी मात्रा से ओरीकल की गति बहुत बेकायदा होजाती है।

यह प्रभाव अधिकतर इस दवा के प्रयोग करने से दिल के अजलों पर सीधा असर पड़नेके कारण होता है और यह इस प्रकार से साबित होता है कि मेंडकके दिलको डिजीटेलिस जिस समय मुकामी तौर पर लगाया जावे जो टानिक तौर पर ही नहीं सुकड़ता बल्कि यदि सिनेकस के टुकड़े को दिल से काट दो जिसमें ख्याल किया जाता है पट्ठे नहीं होते, इस पर इस दवा को लगाया जावे तो इसकी भी सुकड़ने की ताकत बहुत बढ़ जाती है, और चूजे के एम्बरीओ के दिल पर भी इसका असर पड़ता है जिसमें अभी पट्ठे उत्पन्न नहीं हुये होते मगर वागस के उन अन्त के सिरों की तेजी बढ़ जाती है जो दिल पर समाप्त होते हैं क्योंकि वागस को जरा सा स्टीम्यूलेंट करने से हृदय बिल्कुल चलने से बन्द होजाता है हालांकि औषधि के प्रयोग करने से पूर्व इतनी ही स्टम्यूलेशन से कुछ भी असर नहीं पड़ता। गर्म खून वाले जानवरों में अगर दोनों वागस काट दिये जायें, हालांकि डिजिटेलिस से दिल के सुकड़े की शक्ति बढ़ जाती है मगर नाड़ी अधिक सुस्त नहीं होती, मुमकिन है कि मेडला में वागस के केन्द्र पर भी किसी प्रकार स्टीम्युलैंट प्रभाव पड़ता हो।

डा० कुशनी महोदय ने यह सिद्ध कर दिया है कि डिजिटेलिसवर्ग की बहुत सी औषधियों से अन्य भागों की बनिस्बत वागस पर असर पहिले शुरू हो जाता है। यह सिद्ध किया गया है थोड़ी खुराक से भी दिल एक निश्चित समय में बहुत अधिक काम कर सकता है। इस प्रकार हरएक विन्ट्रीकल के सुकड़ने पर अधिक समय लग जाता है।

नाड़ी

कम मात्रा से रक्त का दबाव बहुत बढ़ जाता है यह रक्त के दबाव का बढ़ जाना किसी कदर हृदय की शक्ति बढ़ जाने के कारण होता है, लेकिन कुल असर इस कारण से उत्पन्न नहीं होता, क्योंकि जब मेंडक को डिजिटेलिस दिया जावे तो देखा जाता है मेंडक के पांव की झिल्ली खरगोश की मेसिनिट्री की नाड़ियां बहुत जोर से सुकड़ने लगती हैं और इसी प्रकार का प्रभाव

छोटी नसों में भी होता है जिनको शरीर से बिलकुल प्रथक किया जा सकता है, और जिसमें मसनवी तौर पर डिजीटेलिस और रक्त का दौरान मिलाकर गुज़ारा जावे, इसलिये ज़ाहिर है कि नाड़ियों का सुकड़ना इनके अज़लाती तबक़े पर डिजिटेलिस का सीधा प्रभाव पड़ने के कारण होता है क्योंकि स्वस्थ जानवरों में यह प्रभाव बनिस्बत इनके जिनके स्पाइनल कार्ड को निकाला गया है या जिनमें इन भागों को काट दिया गया है जो इन स्थानों की परवरिश करते हैं। अधिक होता है इसलिये सिद्ध होता है कि डिजिटेलिस से मेडलरी और स्पाइनल वेसो मोटर केन्द्र स्टिम्युलैंट हो जाते हैं। विषात्मक मात्रायें इन केन्द्रों और छोटी नाड़ियों की अज़लाती तबक़ की तेज़ी सुस्ती में तबदील हो जाती है और इस लिये रक्त का दबाव कम हो जाता है।

वृक्क

वृक्क पर डिजीटेलिस का प्रभाव मुश्तबा तौर पर पड़ता है, कइयों का मत है कि स्वस्थावस्था की हालत में इन पर डायोरेटिक प्रभाव पड़ता है। परन्तु बहुतसे चिकित्सक इस मत से सहमत नहीं, हृदय के रोग में भी वृक्क के ऊपर इसके प्रभाव में ही नहीं सुकेड़ता बल्कि यदि ऐपैक्स के टुकड़े को दिल से काट दो जिसमें ख़याल किया जाता है पट्ठे नहीं होते, इस पर इस दवा को लगाया जावे तो इसकी भी सुकड़ने की ताक़त बहुत बढ़ जाती है, और चूज़े के एम्बरीओ के दिल पर भी इसका असर पड़ता है जिसमें अभी पट्ठे उत्पन्न नहीं हुये होते मगर वागस के उन अन्त के सिरों की तेज़ी बढ़ जाती है जो दिल पर समाप्त होते हैं क्योंकि वागस को ज़रा सा स्टीम्यूलैंट करने से हृदय बिल्कुल चलने से बन्द हो जाता है हालांकि औषधि के प्रयोग करने से पूर्व इतनी ही स्टीम्यूलेशन से कुछ भी असर नहीं पड़ता। गर्म खून वाले जानवरों में अगर दोनों वागस काट दिये जायें, हालांकि डिजिटेलिस से दिल के सुकड़ने की शक्ति बढ़ जाती है मगर नाड़ी अधिक सुस्त नहीं होती, मुमकिन है कि मेडला में वागस के केन्द्र पर भी किसी प्रकार स्टीम्यूलैंट प्रभाव पड़ता हो।

डा० कुशनी महोदय ने यह सिद्ध कर दिया है कि डिजिटेलिस वर्ग की बहुत सी औषधियों से अन्त भागों की बनिस्बत वागस पर असर पहले शुरू हो जाता है। यह सिद्ध किया गया है थोड़ी खुराक से भी दिल एक निश्चित समय में बहुत अधिक काम कर सकता है। इस प्रकार हर एक विन्ट्रीकल के सुकड़ने पर अधिक समय लग जाता है।

बहुत चिकित्सक भिन्न मत रखते हैं। अमूमन इन हालतों में डायोरेटिक प्रभाव पड़ता है इन में मत भेद इस कारण है यदि शरीर की नाड़ी की तरह वृक्क की नाड़ी सुकड़ जायें तो बहुत थोड़ा रक्त वृक्क में जाता है लेकिन डिजिटेलिससे वृक्क की नाड़ियां बहुत न सङ्कोच को प्राप्त हों तो दिल की ताक़त बढ़ जाने के कारण और रक्त के वेग के अधिक होने के कारण वृक्क में रक्त अधिक आता है इसलिये मूत्र भी अधिक नि:सरित होता है।

बहुत से चिकित्सकों का मत है कि डिजिटेलिस और डिजिटाक्सीन वृक्क की नाड़ियों को

अपनी विशेषता से फैलाते हैं। मूत्र बनाने वाले भागों के ऊपर डिजिटेलिस के असर की निसबत कुछ विश्वासनीय बात नहीं कही जा सकती।

शारीरिक ताप

कम मात्रा का शरीर के तापमान पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता। जहरीली मात्रा लेने से स्वस्थावस्था में भी शारीरिक ताप कम हो जाता है।

श्वास

मामूली मात्रा से श्वास पर कुछ भी असर नहीं पड़ता, जहरीली मात्रा से फुफ्फुस में रक्त के अधिक न जाने के कारण कमजोरी हो जाती है।

वात नाड़ी

वात नाड़ियों पर इसकी मात्रा का कोई प्रभाव नहीं होता। बड़ी खुराक से मस्तिष्क के रक्त वेग में फर्क पड़ने के कारण शिर शूलहोने लगता है और सर में चक्कर आते हैं कर्ण शक्ति और नेत्र की शक्ति में अन्तर पड़ने लगता है।

इसके जहर की हालतों में बहुत से रोगियों को प्रत्येक वस्तु नीली नीली नजर आने लगती है।

गर्भाशय

गर्भाशय पर स्टिम्युलैंट असर पड़ता है जिस के कारण यह सुकड़ जाता है।

उपयोग

वाह्य प्रयोग—

बाह्य प्रयोग में डिजिटेलिस का इस्तेमाल नहीं होता है।

आन्तरिक प्रयोग

यह औषधि प्रभावशाली औषधियों में से एक है। विशेष कर हृदय रोग की यह अमोघ औषधि मानी जाती है।

अगर किसी रोगी के दिल की गति अव्यवस्थित और तीव्र हो गई हो तो डिजिटेलिस के कम मात्रा में देने से हृदय की गति में शक्ति आजायेगी और नियमित चलने लगेगी तथा तेज चाल कम हो जावेगी।

डिजिटेलिस मूत्रल भी है जिसको मूत्र कम मात्रा में रक्त वर्ण का आता हो इसके देने से खुल कर आने लगता है। दिल की बीमारी में जब कि रोगी को दर्द और तकलीफ होती है वह इस से दूर हो जाती है, क्योंकि इससे रक्त की गति भी ठीक हो जाती है चेहरे की रंगत जो नीलाहट को लिये होगई हो वह भी ठीक हो जाती है। डिस्पेनिया की तकलीफ कम होजाती है और एक दो दिन में ही रोगी की तबियत अच्छी हो जाती है वह बीमार जोकि डिजिटिलिस को सेवन कर रहे हों उनको अगर एक दम उठा कर बैठाया जाय तो तीव्र मूर्च्छा आकर मर सकते हैं।

डिजिटिलिस के सेवन के बाद यदि वमन आजाय तो इसके मायने हैं वह और नहीं चाहता ऐसी अवस्था में रोगी को डिजिटेलिस बन्द कर

देना चाहिये। यह हृदय की शक्ति को बढ़ाता है।

अगर रोग के कारण फेफड़ों और शरीर की नाड़ी में रक्त जम जावे इसके प्रयोग से लाभ होता है रक्त पर इसका और कोई प्रभाव नहीं पड़ता केवल रक्त का दबाव अधिक होजाता है।

हृदय के पट्ठों की बीमारियां

हृदय के अन्दर यदि बसा या और किसी प्रकार की कमी हो तो डिजीटेलिस के देने से कोई लाभ नहीं होता क्योंकि जब धमनियों का खिंचाव बढ़ जाये तब हृदय बीमार को अधिक जोर लगाना पड़ता है, और जो तन्तु बसा में बदल गये हैं उन के फट जाने का भय रहता है।

टाइफाइड फीवर, रुमेटिज्म, स्कार्लेटफीवर और घातक रोगों से बचने के बाद यदि हृदय का कार्य क्षीण होगया हो तो डिजिटिलस के सेवन से बहुत ताक़त आजाती है इसको कैफ़ीन के साथ देना चाहिए बहुत से मनुष्य जो नौका चलाने का व्यायाम करते हैं या और ऐसी ही कठिन वरजिश करते हैं उनको प्राय: श्वास कष्ट से आने लगता है और उनके हृदय का सिरा अपने स्थान से बाहर की ओर हट जाता है मगर कोई रोग हृदय कपाटमें पैदा नहीं होता, फौज के सिपाहियों में भी कई महीनों के सफर के बाद इसी प्रकार की हालत होसकती है। इन सब में डिजिटेलिस के सेवन से बहुत लाभ होता है जब हृदय का कार्य बेक़ायदा और निहायत तेज होजाये यानी पलपिटेशन होजाये तो इस से बड़ा लाभ होता है।

इसका रक्त प्रदर में भी अच्छा प्रभाव पड़ता है।



कर्पूर (Camphor)

[ले०—एम० के० जैन H. H. P. मैनेजर 'जीवन सुधा']



यह एक स्टीयेरापटीन है जो सिनेमम कैम्फोरा नामी पेड़ की लड़की से प्राप्त होता है। ईस्ट इन्डीज चाइना और जापान के मुल्कों से आता है। प्राकृतिक हालत में यह पदार्थ निहायत मैली शक्ल में होता है। कारखानों में लाकर इसे मैली मशीनों के ज़रिये साफ करते हैं।

कारखानों से ये दो हालतों में बन कर आता है एक प्रकार टिकियों की हालत में जिन्हें फ्लावर आफ कैम्फर कहते हैं, दूसरे डलों की हालत में जो आसानी से चूरा हो जाते हैं यदि इनको अल्कोहल ईथर या क्लोरोफार्म के साथ मिलाया जावे तो इस में से एक खास किस्म की निहायत तेज़ गन्ध आने लगती है स्वाद तेज़ और कड़वा हो जाता है, इसके बाद मुंह में ठण्ड महसूस होती है। काफूर पानी पर तैरता रहता है। इसको जलाने से फौरन जल जाता है। जलते वक्त रोशनी अच्छी देता, परन्तु धुवां बहुत करता है। साधारण ताप पर भी यह सदा उड़ता रहता है। ज़रा अधिक ताप देने पर उड़ कर बर्तन के ठण्डे भाग पर जम जाता है। १ भाग, तारपीन के तेल २ भाग में और आलिव आयल के चार भाग में भली प्रकार से हल हो जाता है। दूध, ईथर, अल्कोहल और क्लोरोफार्म में भी बखूबी हल हो जाता है।

मात्रा—२ से ५ ग्रेन तक।

एलोपैथिक में इसके निम्नलिखित मिश्रण तय्यार होते हैं। आयुर्वेदिक और यूनानी में बेशुमार दवाइयां इसके योग से तय्यार होती हैं।

(१) एक्वा कैम्फोरी।

(२) लिनिमेन्टम कैम्फोरी।

(३) स्प्रिट कैम्फोरेटा।

(४) टिं० कैम्फोरेटा कम्पोजिटा।

(५) कैम्फरोडीन।

अलावा इसके और भी अनेक प्रकार के मिश्रणों में बर्ता जाता है।

प्रभाव

बाह्य—

बेरूनी तौर पर ये कई प्रकार के लिनिमेन्ट्स में काम आता है इसको इरीटेन्ट प्रभाव के लिये बहुत से रोगों में बरतते हैं। ये चीज़ लोकल अनेस्थैटिक है और इसी लिये यदि क्रानिक रूमेटिज्म या क्रानिक स्वैलिंग की वजह से किसी जगह की सख्ती दूर करने या बच्चोंके सीनेकी बीमारियों, माइएलजिया, न्यूरेलजिया, लम्बेगो (कमर दर्द) साइटिका (गृध्रसी) में दर्द की शान्ति के लिये इसे प्रयोग करते हैं। इसके मिश्रण से बना हुआ निम्न योग न्यूरेलजिया और दान्त के दर्द के लिये बहुत उत्तम साबित हुआ है।

[शेष पृष्ठ ६० पर देखिये]

सैलोल Salol.

ले० "श्री० विरक्त"

यह सोडियम सेलिसिलेट से बनता है। सेलिसिलक एसिड और फ़ेनोल को या सोडियम सेलि. सिलेट और फ़ासफ़ोरल क्लोराइड को या सोडियम सेलिसिलेट व कार्बोनाइल क्लोराइड को मिलाने से तैयार किया जाता है।

इसकी छोटी छोटी बेरंग क़लमें किंचित मात्र सुगंध युक्त व निःस्वाद होती हैं।

नोटः—इसमें ६० फ़ी सदी सेलिसिलक एसिड और ६० फ़ी सदी कार्बोलिक एसिड होता है।

घुलनशीलता—

यह जल में नहीं घुलता १ भाग–२० भाग एल्कोहल (६० फ़ी सदी) में नीज़ फ़िकूस्ड और वालिटायल आइल्ज़ (स्थिर और अस्थिर तैल) में घुल जाता है इन्टस्टाइनल एन्टिसेपटिक अर्थात आंतों के कीटाणुओं को मारने वाला और आनलरोसिक है।

प्रभाव।

बाह्य—

अभ्रक ४ भाग और सैलोल १ भाग मिलाकर व्रणों पर छिड़कते हैं। यह कीटाणु नाशक है।

आन्तरिक—

क्योंकि इसका प्रभाव आंतों और मूत्र संस्थानपर कीटाणुनाशक पड़ता है इसलिए अधिकतया इसको वृक्क-वस्त्याशय आदि मूत्र संस्थान के रोगों में ही विशेषकर वस्त्याशय शल्य की क्रियामें प्रयोग करते हैं।

पहले इसे इन्टस्टाइनल ऐन्टिसेपटिक अर्थात आंत्रिक कीटाणुनाशक होने से हैजा डायरिया, टाइफ़ाइड फ़ीवर (आंत्रिक सन्निपातिक ज्वर या मोतिझारा) और आंत्रिक क्षय में सेवन किया करते थे लेकिन अब इसका प्रयोग कम होता जा रहा है क्योंकि बहुत से डाक्टरों का ख़्याल है कि आंत्रिक कीटाणुनाशक होने में शक है फिर भी इसको इस मतलब के लिए इस्तेमाल करना हो तो बिस्मथ सेलिसिलेट और सोडियम कार्बोनेट के साथ मिला कर देना चाहिए।

यह आंतों में जाकर सेलिसिलिक एसिड और कार्बोलिक एसिड में परिवर्तित होजाता है। इसलिए इस से कार्बोमेह (बोल कार्बोलिक–मूत्र में कार्बोलिक एसिड निकलना) उत्पन्न होजाने का भय रहता है। इसको न तो बड़ी मात्रा में देना चाहिए और न लगातार काफ़ी टाइम तक, अन्यथा वृक्क के रोग शोथ वग़ैरह होजाते हैं।

अनुभूत प्रयोग।

१	सैलोल	७ ग्रे०
	बिस्मथसेलिसिलेट	६ ग्रे०
	सोडा बाई कार्ब	१० ग्रे०

ऐसी ३ खुराक दिन में ३ बार डायरिया में मुफ़ीद हैं।

२	सैलोल	७ ग्रे०
	पैराफ़ी लिक्विड	½ ड्रा०
	पल्व एकेशी	२० ग्रे०
	एक्वासनेमोमाई	१ औं०

ऐसी १-१ मात्रा दिनमें ३ बार दें समरडायरिया, अरटीकेरिया और सिस्टाइटिसमें लाभदायक है।

३	सैलोल	१० ग्रे०
	पैराफ़ीन	½ ड्रा०

आइल सेनेटेलाई	१० बूं०	एका सिनेमोमाई	१ औं०
सीरप ओरंशियाई	½ ड्रा०		
पल्व एकेशी	३० ग्रे०		

ऐसी १-१ मात्रा दिन में दो बार दें। सूजाक और उसकी गठिया में लाभप्रद है।

सल्फोनाल (SALPHONAL)

डा० डी० डी० शर्मा।

इथल हाइड्रोसल्फेट को ईसीटोन के साथ मिलाने से मरकेपटोल प्राप्त होता है। उस में पर्मेंगनेट-आफ पोटेशियम मिलाने से परकेपटाल में औकसीजन मिल कर सल्फोनाल बन जाता है।

इसको बे रंग चौड़ी चौड़ी कलमें होती हैं जिनमें गंध और स्वाद कुछ नहीं होता है।

घुलन शीलता।

४५० भाग	शीतल जल में	१ भाग
१५ भाग	खौलते पानी में	१ भाग
६० भाग	एल्कोहल (६० फीसदी) में	१ भाग
,, ,,	ईथर में	१ भाग
३ भाग	क्लोरोफार्म में	१ भाग

हल होजाता है।

मात्रा—१० से ३० ग्रेन तक चूर्ण रूप में या यूर्सालिज के साथ दिया जाता है या गर्म पानी में मला कर उसी समय पिला दिया जाता है जब बिलकुल शीतल हो जाये।

प्रभाव

और औषध प्रयोग।

सल्फोनाल में हिपनोटिक (नींद लाने वाला) प्रभाव होता है। इस औषध के प्रयोग करने से हृदय सुस्त नहीं होता मगर श्वास की विकृति होजाने से मृत्यु होजाती है। इसका सेवन उन्हीं अवस्थाओं में किया जाता है जिन में क्लोरल हाइड्रेट का सेवन होता है क्योंकि यह आसानी से घुलता नहीं मुश्किल से बहुत समय के बाद घुलता है—इस लिये इस का प्रभाव पड़ने में दो या इस से कुछ अधिक घंटे लगते हैं भोजन करने के अधिक समय बाद असर पैदा होता है कभी कभी इस का प्रभाव यहां तक कि दूसरे दिन जाकर पड़ता है अगर इसको किसी गर्म अर्क में मिला कर दिया जावे तो इसका प्रभाव शीघ्र होता है लेकिन इसका प्रभाव इतना जल्द होता है कि यह आम तौर पर सोनेसे डेढ़ घंटे पहिले दिया जाता है। सल्फोनाल सोने की आदत कम पैदा करता है और बाद में कोई बुरे लक्षण पैदा नहीं होते। सल्फोनाल का अभ्यासी होजाने से शारीरिक कमजोरी दिमागी चीणता मानसिक दुर्बलता मांस पेशियोंका शक्तिह्रास, न्यूट्रेशनमें फर्क होजाता है और क्षुधा मंदी होजाती है इस से कभी २ शरीर के ऊपर दाने दाने से निकल आते हैं।

क्लोरीन

डा० एम० एस० टंडन F. R. C. S. (London)

फार्मोकोपिया में क्लोरीन पृथक बनाना नहीं की इसे दो तरीकों से हासिल किया जाता है अर्थात क्लोरीनेटेड लाइम और क्लोरीनेटेड सोडियम से एसिड नाइट्रो हाइड्रो क्लोरिकम डायल्यूटम में भी क्लोरीन होती है। इसके वैसे तो कई मिश्रण तैयार होते हैं परन्तु औषधियों में व्यवहृत कम होने से

उनको नहीं दिया जाता है। क्लोरीन का एक मिश्रण अत्यन्त उपयोगी है। वह नीचे दिया जाता है—

क्लोरीन मिकश्चर—

एक १२ औंस वाली बोतल लेकर इसमें ३० ग्रेन पोटाशियम क्लोरेट को चूर्णित कर डालदें। और इस के ऊपर स्ट्रोंग हाइड्रो क्लोरिक एसिड को डालकर बोतल के मुंह पर मजबूत डाट लगादें। फिर बोतल को जरा हिला कर देखें यदि गैस शीघ्र ही बननी शुरु होगई है तो बोतल को २-२ या ४-४ मिनट बाद हिला दिया करें। यदि शीत काल हो तो बोतल को गर्म पानी में रक्खें जब इसमें क्लोरीन गैस के उत्पन्न होजाने से बोतल सब्जमायल जर्द रंग की गैस से भर जाय तब इसमें थोड़ा थोड़ा जल मिला कर हिलाते जायें, ताकि गैस पानी में हल होती जाये जब बोतल पानीसे भर जाय तब इसमें २४ या ३२ ग्रेन क्विनीन सल्फेट और सीरप आफ लाइम (नीबू का या नारंगी का शर्बत) मिलादें।

बोतल में गैस उत्पन्न होने के बाद जब पानी मिलाने लगें तो थोड़ा थोड़ा मिलायें और बोतल पर डाट लगा कर इसे हिलाते जायं जिससे गैस पानी में मिलती जाये। यदि एक बार ही बोतल को पानी से भर दिया जाये तो क्लोरीन गैस पानी में हल होने के अलावा बोतल से बाहर निकल आती है।

मात्रा—१-१ औंस की मात्रा में ३-३ घंटे या ४-४ घंटे बाद दें। यदि मरीज अधिक कमजोर हो तो ३-३ घंटे में और मरीज यदि क्षीण नहीं है तो ४-४ घंटे में देते रहें ७ दिन यह दवा देने के बाद ६-६ घंटे बाद १-१ मात्रा दें। बच्चों को यह आधी मात्रा दें। ३-४ बरस के बच्चों को १-१ ड्राम। ४-७ बरस के बच्चों को २-२ ड्राम। १० बरस के बच्चों को ४-४ ड्राम प्रत्येक तीसरे या चौथे घंटे बाद यदि मिकश्चर तेज मालूम होतो जरासा पानी मिलाया जासकता है।

टाइफाइड (मोतीझारा) के ज्वर में शुरु से ही इसे देना चाहिए इससे जब तक लाभ न होजाये भोजन का खास ध्यान रखना चाहिए।

प्रभाव

यह एक बड़ी जबरदस्त पूतिनाशक और कीटाणु नाशक दवा है।

उपयोग

क्लोरीन गैस—क्लोरिनेटेड लायम की शक्ल में नालियों और पाखानों वगैरह की बदबू दूर करने के लिये बहुत इस्तेमाल की जाती है। छूतदार बीमारियों के बाद कपड़े को शुद्ध करने के ख्याल से भी इस्तेमाल किया जाता है। कपड़े को इससे धोने के पूर्व धातु वाली वस्तु और रंगीन वस्तु कमरे से हटालेनी चाहियं या इनके ऊपर कोई सफेद वस्त्र बांध देना चाहिए। खिड़कियों और चिमनियों को बन्द कर देना चाहिए। सैंधानमक ब्लैक औक्साइड आफ मेगनीज और सल्फ्यूरिक एसिड को मिला कर यह गैस पैदा कर सकते हैं। इस के बाद फौरन बाहर आजाना चाहिए दरवाजा खूब बन्द करदेना चाहिए दरवाजों पर कागज लगा देना चाहिए। क्लोरीन वाटर बदबूदार जख्मों के धोने के काम भी आता है। एक मुरक्कब भी जिस को इलैक्ट्रोजोन कहते हैं का एन्टिसेपटिक प्रभाव क्लोरीन के कारण ही होता है। यह समुद्र का पानी होता है जिस के एलकेलाइन क्लोराइड को एलकट्रोनाइसिस के द्वारा खारी हाइपोक्लोराट्स में तबदील किया गया हो इस की किटाणुनाशक शक्ति इतनी ही है जितनी कि लाइकरसोडी क्लोरीनेटी में।

आन्तरिक

मुंह की बीमारी में गरारे के तौर पर सेवन होती है। इस का एक अर्क जो कि स्ट्रोंग हाइड्रो-क्लोरिक एसिड ५ बू० पोटेशिम क्लोरेट ९ ग्रे० पानी १ फ्लुइड औ० मिलाने से बनता है

जिस में भी क्लोरीन मिली होती है स्कार्लेट फिवर में हलक व नाक को पिचकारी से साफ करने के लिए लाभदायक है। इसकी वाष्प श्वास नालियों में इतनी खराश पैदा करता है कि इसे कभी सेवन नही करना चाहिए।

हायोसायमस Hyocymus.

[ले० डा० बी० रामाराव M.B. आयुर्वेद शास्त्री]

खुरासानी अजवायन एक महत्वपूर्ण औषधि होते हुए भी वैद्य इसका बहुत कम प्रयोग करते हैं। यह भारत में विदेश से आती है, यह इसके नाम से ही स्पष्ट है। पूर्व भारतीय वैद्य इसको बाहर से ही प्राप्त करते थे।

यह धत्तूर वर्ग की औषध है। खुरासान, ईरान, मिश्र, उत्तर भारत में पारवत्य प्रदेशों में उत्पन्न होती है। खुरासानी अजवायन और अजवायन इस नाम से दो प्रकार की वनस्पति मिलती हैं, नाम में अधिकाधिक साम्यता होने से यह नहीं समझ लेना चाहिए कि इनके गुण में भी साम्यता होगी। यह सोलेनेसीई वर्गकी औषधोंमें जिसमें धत्तूर बेलाडोना आदि विषाक्त प्रभावशाली औषधियां हैं सम्मिलित हैं। इसका वृक्ष अजवायन के पौदे से कुछ बड़ा होता है। पत्र कटे कंगूरेदार, फूल श्वेत, अनार की कलियों के समान परन्तु पुष्प पत्र कंगूरेदार व मूल भाग सुर्खी मायल होता है। पकने पर फल छत्राकार लगता है। जिसमें बीज होते हैं। यह अजवायन के बीज से दुगने बड़े वृक्काकार और धूमर वर्ण का होता है। स्वाद में तैल तिक्त चरपरा होता है।

रासायनिक पदार्थ—

खुरासानी अजवायन में हायोसायमीन (Hyoscyamine) नामक सत्व पदार्थ होता है जिसकी रासायनिक रचना एट्रोपीन के समान होती है इसकी सूचिवत त्रिपार्श्वाकार कल्में होती हैं। यह एट्रोपीन की अपेक्षा जल में शीघ्रता से विलीन होजाता है। हिल अल्कोहल मे शीघ्र हल होजाता है यह एट्रोपीन के समान नेत्र कनीनिका प्रसारक है। हायोसायमीन अन्य सोलेनेसी वृक्षों से भी प्राप्त होता है। जल में उबालनेसे यह ट्रोपिक एसिड और ट्रोपानमें विभाजित होजाता है। इसके अलावा-हायोस्कोपीन (Hyoscripin) कोलीन (Cholin) फैरी आइल, अंडे की सफेदी, और एक लेसदार वस्तु, पोटाशियम नाइट्रेट में दो प्रतिशत तक हायोसायमीन होता है। बीज में भी तैल, वसा, २६ प्रतिशत, एक एम्पाइर युमेटिक आइल (Empyreumatic Oil) होते हैं।

ऐलोपैथी में इसका बहुत प्रयोग होता है। यह काली जातिभी खुरासानी अजमायन (Hyoscyamus है। इस के पत्ते कुछ डंठल सहित सब को तोड़ कर खुश्क कर लिय जाता हैं।

इसके पत्ते बेलाडोने और धतूरसे मिलते हुए बेरोम होते हैं।

संयोग विरुद्ध

लेड एसिटेट, लाइकर पुटासी, सिलवर नाइट्रेट वानस्पतिकाम्ल

प्रभाव

वेदनाशान्तकर (Anodyne) निद्राकारक (Narcotic) और अवसादक (Sedative)।

Official Preparations.

टिंचर हायोसायमस

(Tincture Hyoscyamus)

निर्माण विधि—हायोसायमस के पत्तों और पुष्प युक्त शाखाओं का नं० २० का चूर्ण २ औंस, अलकाहल ४५% यथोचित। पहिले चूर्ण को २ फ्लुइड औंस अलकाहल से तर करके फिलटर पेपर द्वारा टपका कर १ पाइण्ट टिंचर में पूरा करलें।

मात्रा—½ से 1 फ्लुइड ड्राम।

सक्सस हायोसायमस

(Succus Hyoscyamus)

नूतन पत्तों पुष्पों और शाखाओं को कुचलने से जो रस प्राप्त होता है उसके प्रति तीन भाग में १ भाग

६० प्रति शत की अलकोहल मिलादें और एक सप्ताह रखा रहने दें फिर फिलटर कर लें।

मात्रा—½ से १ फ्लुइड ड्राम।

एक्सट्रेक्टम हायोसायमस

(Extractum Hyoscyamus)

विधि—नवीन पत्ते पुष्प फल और कोमल पल्लवों को कूट कर रस निकाल लें फिर उसे क्रमशः १३० डिगरी फारनहाइट का ताप दें। फिलटर कर उसका रंगीन अंश प्रथक करदें, फिर उस छने हुए भाग को २०० डिगरी फारनहाइट की अग्नि देकर सोडे जैसा घन बनालें। उस छने हुए रंगीन अंश को छानकर फिर मिलादें और लगभग १४० डिगरी के ताप पर इतना शुष्क करें कि वह मृदु अवलेह के समान होजाय।

मात्रा—२ से ८ ग्रे०।

पिलुलाकालोसिन्थ डिसएटहायोसाइमाई

(Pilula Calocynthidis-et Hyoscyami)

निर्माण विधि—पिलकालोसिन्थ कम्पोन्ड १ औ० एक्सट्रेक्ट हायोसायमस १ औ० दोनों को मिलालें।

मात्रा—४ से ८ ग्रे०।

नोट—आफिशल।

क्लोरोफ़ार्म हायोसाइमाई

(Chloroform Hyoscyami)

हायोसायमस के जड़ का चूर्ण ३० भाग, क्लोरोफ़ार्म २० भाग।

नोट—यह क्लोरोफार्म एकोनाइटीनी के समान प्रस्तुत किया जाता है।

टिंक्चर हायोसाइमाइ रेडिसिस

(Tincture Hyoscyami Radicis)

हायोसायमस के जड़ का चूर्ण ५ भाग अलकोहल (६० प्रति शत) ४० भाग में ७ दिन रखदें फिर फिलटर करलें।

मात्रा—२० से ६० बून्द।

गुण तथा प्रयोग

हायोसायमीन जो एक इसका प्रभावात्मक सत्व है अपनी रचना में एट्रोपीन के समान होता है। यह फिक्सड अलकेलीज की उपस्थिति में साधारण अग्नि पर एट्रोपीन में बदल जाता है।

इस कारण से हायोसायमस में धतूरे या बेलेडौना के समान गुण होने चाहिऐं परन्तु उनके प्रभाव में यह भेद पाया जाता है।

१—सुषम्ना पर इस का अवसादक असर अधिक होता है।

२—यह आंत्र की गति कृमिवत् संकोच को तेज करता है आमातिसार में मरोड़ को कम करता है।

३—बेलाडौना की अपेक्षा इस से मादक प्रभाव (अज्ञानपन) तो कम होता है परन्तु मस्तिष्क पर शान्ति कारक (Sedative) तथा निद्रा जनक प्रभाव शीघ्र होता है।

४—बेलाडौना जैसा यह हृदय को बल और उत्तेजना प्रदान नहीं करता।

५—बेलाडौना की अपेक्षा यह मूत्रेन्द्रिय पर शान्ति कारक प्रभाव अधिक करता है क्योंकि यह वस्ति की श्लैष्मिक कला की नाड़ियों के आन्त्रीय भाग पर शान्ति कारक और दुर्बलता जनक प्रभाव करके मांसपेशियों के तन्तु की ऐंठन को नष्ट करता है।

६—हायोसायमस के सत्व हायोसीन से नेत्रपिण्ड का तनाव कम होजाता है परन्तु यह प्रभाव बेलेडौना के सत्व एट्रोपीन से निर्बलता जनक होता है।

७—भिन्न २ प्रकार की वेदना में मस्तिष्क की उत्तेजना को शान्त करने के लिए और नींद लाने के लिए जैसे उन्माद अनिद्रारोग, हिस्टीरिया तथा की उन्मत्तावस्था में वस्ति वेदना में इसका प्रयोग उत्तमता से होता है।

इसलिए हायोसामीन के तरल सत्व की १-१ घंटे के अन्तर से तीस तीस बूंद को १ औंस पानी में मिला कर पिलाते रहें। जब नींद आजाये तब नहीं देना चाहिये। उन्मत्त शराबी को भी दिया जा

सकता है। इसकी ४–६ मात्रा ही अपना काम कर देती है।

निन्द्रा लाने के लिए "हायोसामीन" १ ग्रेन को शुद्ध उष्ण जल १ ड्राम में मिश्रण कर हायपोडर-मिकसिरज में भर त्वचामध्य प्रवेश करदें।

दस्तावर औषधियां जो पेट में मरोड़ दर्द पैदा करती हैं उन के इस दोष को कम करने के लिए इसे प्रयोग किया जाता है।

मूत्र मार्ग की चीस चबक को दूर करने के लिए जैसे—बस्ति-प्रदाह प्रोस्टेट ग्रन्थि प्रदाह तथा अश्मरी आदि में वस्तिस्थ मांस पेशी आक्षेप निवारण के लिए इसका सत्व "हायोसायमीन" लाभ देता है यह कुछ मूत्र कारक भी है वहां होने वाले प्रदाह युक्तझिल्ला में वात तन्तुओं पर शान्ति कर प्रभाव करता है।

जब बार बार मूत्र विसर्जन के लिए बस्ति में ऐंठन होती है तब यह विशेष लाभकारी है। उस समय इसको क्षारों के साथ मिलाकर सेवन करना चाहिए। इस अवस्था में मूत्रल औषधियों के साथ जैसे बुक्कु और बैंजोइक एसिड में मिश्रण कर सेवन कराते हैं।

खांसी और दमा में श्वास पथ के संकोचन तथा ऐंठनको कम करनेके लिए, व्रण की जलन दर्द आदि को कम करने के लिए पुल्टिस के रूप में इस्तेमाल करते हैं। कनीनिका प्रसारण के लिए तेल में डालते हैं। यह बेलाडोना के समान, शोथ नाशक, उन्माद हर, नेत्र कनीनिका प्रसारक और नींद लाने वाला है। थोड़ी मात्रा में यह शान्तिकारक और हृदय को शक्तिदायक है। अधिक मात्रा में उत्तेजक अत्यधिक मात्रा में निर्बलताजनक है। हृदय से सम्बन्ध रखने वाले अवयवों श्वास, कमर आदि के विकार में इसका उपयोग किया जाता है। बच्चों में इसकी बड़ी मात्रा के सहन करने की शक्ति होती है। क्षीण वृद्धों में कम मात्रा भी अपना गहरा प्रभाव डालती है।

हायोसायमस के सत्व:-

हायोसायमीनी हाइड्रोब्रोमाइडम

(Hyoscinæ Hydrobromidum)

यह खुरासानी अजवायनके पत्रों और सोलेनेसाई वृक्षों में पाये जाने वाले क्षारीय सत्व का हाइड्रो-ब्रोमाइड है। यह वर्ण रहित रवेदार होता है वायु के लगने पर स्थिर रहता है, गलता नहीं, स्वादमें कड़वा होता है जल में शीघ्रता से घुल जाता है। इसका एक भाग ४ भाग जल में घुल जाता है।

प्रभाव

निद्राजनक (Narcotic)।

मात्रा— $\frac{१}{२००}$ से $\frac{१}{१००}$ ग्रेन तक

प्रयोग—मुख या त्वचा मध्य प्रवेश के लिये

हायोसीन (Hyoscine)

यह हायोसीमस का क्षारीय सत्व है जो एक उडनशील तैल होता है, अपने प्रभाव में "हायो-सायमीन" से ५ गुना अधिक प्रभावशाली है। यह स्वयम औषध रूप से व्यवहृत नहीं होता इसके हाइ-ड्रोक्लोरेट, हाइड्रोब्रोमेट और लवण काम में आते हैं इनमें अर्क लवण अधिक उपयोग में आता है।

Not official Preparations

१—इञ्जैक्सिओ हायोसीनी हाइपोडर्मिका—
(Injectio Hyoscinæ Hypodermica.)
शक्ति—१००० बू० डिलवाटर में १ ग्र०।
मात्रा—५ से १० बू०।

हाइपोडर्मिक लमीली

(Hypodermic Lamele)

प्रत्येक लेमीली में $\frac{१}{१२००}$ ग्रे० हायोसीनी हाइ-ड्रोब्रोमाइड होता है।

गटा हायोसीनी

(Guttæ Hyoscine)

२॥ तो० डिलवाटर में २ ग्रेन हायोसीनी हाइड्रो-ब्रोमाइड होता है।

उपयोग तथा प्रभाव

यह एट्रोपीन से इतनी अधिक साम्यता रखता है कि कहीं २ ही कुछ भिन्नता होपाती है। यह शान्तिकर और निद्राजनक है परन्तु एट्रोपीन जैसा इसमें हृदयोत्तेजक प्रभाव नहीं है। इससे मस्तिष्कावर्णों की उत्पादक नाड़ियां कमजोर होजाती हैं इसकी $\frac{१}{१२०}$

ग्रेन की मात्रा बहुत शीघ्र नींद ले आती है पहले सुस्ती अंध स्तब्धता होकर रोगी सो जाता है उठने पर उसे किसी प्रकार की थकान या कमजोरी महसूस नहीं होती, केवल कुछ काल के लिये कंठ में सूखापन अनुभव होता है।

उन्माद और मस्तिष्कके रोगोंमें बहुतही पुरअसर निद्राकारक औषध है। इसका सर्वोत्तम प्रभाव त्वचा में इंजेक्शन करने पर होता है। इसे $\frac{१}{२००}$ ग्रेन से अधिक मात्रा में उपयोग करना ठीक नहीं क्योंकि किसी २ में इसके सहन करने की शक्ति कम होती है। इससे एट्रोपीन से उत्पन्न होने वाले तीव्र उन्माद जैसे लक्षण बहुत कम होते हैं या होते ही नहीं यह एट्रोपीन से शीघ्र कनीनिका को प्रसारित कर देता है इसका यह प्रभाव एट्रोपीन से ४-५ गुना अधिक होता है।

डा० क्रास का कहना है कि:—

उन्माद में हायोसीनी हाइड्रो ब्रोमाइड के प्रयोग करने पर शीघ्र प्रभाव पैदा होता है। रोगी की बेचैनी जल्द शान्तिमय निद्रा में परिवर्तित होजाती है। रोगी सुख की नींद सोजाता है। मद्यान्माद प्रसूतिकोन्माद, या अन्य अनिद्रा रोगों में अत्यधिक लाभदायक सिद्ध हुआ है। ऐसे अनिद्रा रोगी जिसके शरीर में उन्माद का प्रभाव छिपा हो इसके सेवनसे उसे तत्काल नींद आजाती है।

डा० ब्रूस के कथनानुसार यह वृक्करोगों में अच्छा प्रभाव करता है हृदयशूल में भी सेवन किया जा सकता है।

तपेदिक के रात्रिस्वेद को रोकने के लिए और दमा, वायुस्राव, अफीम तथा कोकीन के नशे वालों की चिकित्सा में लाभदायक है।

जर्मन के सुप्रसिद्ध डा० शनीडरलीन कहते हैं 'व्यापक अवसन्नता पैदा करनेके लिए "स्कोपोलेमीन तथा मार्फीया" को मिश्रत करके प्रयोग करते हैं जिस से आपरेशन भली प्रकार होजाये'।

ज्वर सहित तीव्रोन्माद के रोगियों में यह विशेष लाभदायक पाया गया है इस से किसी प्रकार के नुकसान होने की सम्भावना नहीं। वृक्क विकारों में मार्फिया सर्वथा निषिद्ध है और जब सब शान्तिकारक औषधियां फेल होजाती हैं इसका प्रयोग उस समय निर्भयतापूर्वक करना चाहिए।

शुक्रमेह में हाइड्रो ब्रोमेट, हाइड्रो क्लोरेट, हाइड्रिओडेट, इत्यादि हायोसीन की अपेक्षा अधिक लाभदायक पाये गये हैं!

हायोसायमीन

(Hyoscyamine)

यह बिल्कुल एट्रोपीन जैसा ही होता है। इसकी रचना में कोई अन्तर नहीं होता। और हायोसीन व हायोसिनिक एसिडमें विश्लेषण किया जा सकता है। यह स्फटिक और विकृत दोनों दशाओं में मिलता है। इसके सफेद रवे होते हैं। या श्याम धूसर रंग का सत्व पदार्थ होता है।

हायोसायमीनी सल्फास

(Hyoscyaminæ Sulphate)

यह सोलेनेसाई वृक्षोंमें तथा खुरासानी अजवायन के पत्तों में पाया जाने वाला एक क्षारीय सत्व का सल्फेट है।

यह पीला या पीतश्वेत वर्ण का स्फटिकवत गंधरहित पाउडर है। जो वायु में खुला रहने पर नमी से युक्त होजाता है।

स्वाद—तिक्त और चरपरा होता है।

इसको खास तौर पर वायु से बचाते हुए गहरे अम्बरी रंग की मजबूत डाट वाली शीशी में रखना चाहिए।

घुलनशीलता

यह २ भाग, १ भाग जल में तथा १ भाग ४॥ भाग अल्कोहल में और बहुत कम क्लोरोफार्म में तथा ईथर में घुल जाता है।

प्रभाव

निर्बल निद्राजनक (weak hypnotic) कायिक शान्तिकारक और सामुद्रिक रोगों में लाभदायक है।

मात्रा—$\frac{१}{२००}$ से $\frac{१}{१००}$ ग्रेन तक

प्रयोग—मुख या त्वचा द्वारा।

हायोसायमीनी हाइड्रोब्रोमाइडम

(Hyoscyaminae Hydro-bromidum)

छोटे २ सफेद दानेदार रवे होते हैं जो ३ भाग १ भाग जल में घुल जाते हैं।

मात्रा—१/२०० से १/१०० ग्रे० तक

हायोसायमीनी सल्फास के गुण तथा प्रभाव

यह दोनों क्षारीय पदार्थ नाड़ी की गर्मी को मंद करते हैं और कनीनिका प्रसारक हैं। विभ्रमकारक हैं शारीरिक तापमान को रोकते हैं, धमनियों के तनाव की वृद्धि करते हैं।

अधिक मात्रा प्रयोग करने पर तत्क्षण नाड़ी की चाल को रोक देते हैं। वात प्रसन्नता अशक्तता और निद्रा उत्पन्न करते हैं। हायोसीन की अपेक्षाकृत हायोसायमीन प्रभाव में एट्रोपीन से अधिक समानता रखता है। अधिकतया बिना विभ्रम के निद्रा पैदा करता है। हायोसायमीन एट्रोपीन से अधिक पुतली को फैलाता है इस में विभ्रम कारी प्रभाव कम और निद्राजनक प्रभाव एट्रोपीन से अधिक है। इसमें जल्द नशा लाने वाला गुण रहता है यह वात मंडल को शान्ति देता है और क्लोरल हाइड्रेट या मार्फिया से कम नुकसान दायक है।

डा० रिंगर साहब कहते हैं:—मैं ने अशुद्ध लवण का उन्माद में प्रयोग किया, इसकी एट्रोपीन से तुलना करने पर कोई अन्तर मालूम नहीं हुआ। यह कनीनिकाप्रसारक है परन्तु एट्रोपीन से कम लाभदायक है।

डा० कुश्नी की सम्मति है:—नौका पर सवार होने से पूर्व यदि इसे कुछ दिन तक १/१०० ग्रे० की मात्रा में प्रयोग करें या इसे कुछ समय तक प्रतिदिन ८-२ घंटे पर बार बार लेते रहें, सामुद्रिक रोग नष्ट करने में अद्वितीय है।

फालिज (पक्षाघात) सहित कम्पन में कम्प को रोकने के लिए तथा पारदीय पक्षाघात के लिये अमोघ औषध है परन्तु प्रयोग के लिये यह हायोसीन से कम शक्ति का है।

पागलपन, अनिद्रा, मद्योन्माद, दमा, कास, अर्धांग सहित कम्प, वात वेदना, कम्पन, इन रोगों में इसका प्रयोग किया गया परन्तु हायोसीन की अपेक्षा कम शक्ति का प्रतीत हुआ। व्यग्रता मानसिक रोग, भ्रम, शंका, स्मृति अपस्मार-उन्माद पुरातन बुद्धिविकार में इसे प्रयोग किया गया।

पागलपन में बिना किसी बुरे प्रभाव के क्लोरल की अपेक्षा निश्चित निद्रा पैदा होती है। तीव्रोन्माद में त्वचामध्य इंजैक्शन करना ठीक होता है।

वात विकार

अर्धाङ्ग कम्पन में यह वह काम करता है जो किसी औषध ने कभी नहीं किया—अचेतनता उत्पन्न किये बिना ही अंग के कम्पन को चार घंटे तक रोक देता है। जब सब औषधियां फेल होजाती हैं उस समय वायु कम्पन को ठीक करता है। इसी प्रकार यह वृद्धावस्था का कम्पन, पारदीय कम्पन, हिस्टीरिकल आक्षेप निर्बलता जन्य कम्पन कोरिया को शमन करता है। बाल तथा युवा दोनों की अवस्था में आक्षेप की अवस्था में वेदना को शान्त करता है वात वेदना में इस के प्रयोग से ज्ञान तन्तुओं की उत्तेजना कम होकर वेदना कम होजाती है।

आक्षेप

यह आक्षेप को नष्ट करता है इस कारण आक्षेप युक्त कास श्वास, हिचकी में लाभदायक है।

मूत्र पथ

यह रेचक है, वृक्क और वस्ति की वेदना और मूत्राशय को नष्ट करता है।

निद्राकारक

यह समस्त शरीर की वेदना शान्त करता है और नींद लाने वाली औषध है। जब अफीम का व्यवहार अनुचित होता है उस समय इस के प्रयोग से नींद आजाती है।

मात्रा

हायोसायमीन (स्फटिकवत) $\frac{1}{200}$ से $\frac{1}{40}$ ग्रेन । हायोसायमीन (विकृताकार) $\frac{1}{16}$ से $\frac{1}{2}$ ग्रे० ।

नूतन उन्माद में $\frac{1}{8}$ से १ ग्रेन की मात्रा में भली प्रकार हलका कर होशियारी से प्रयोग करना चाहिये । क्योंकि कुछ रोगियों में सहनशक्ति कम होती है ।

हायोसायमीनी सल्फ $\frac{1}{120}$ से $\frac{1}{100}$ ग्रेन

त्वचामध्य इंजैक्शन की मात्रा $\frac{1}{50}$ से $\frac{1}{25}$ ग्रे०

अधिक से अधिक $\frac{1}{10}$ कम से कम $\frac{1}{25}$ ग्रे०

डाक्टरी नुस्खे

१—टि० हायोसाइमाई ३० बू०

सोडा बैंजो एट्स १० ग्रे०

एलक्सर सक्किराइनी ५ बू०

इन्फ्युजन बुक्कू १ औंस

ऐसी १ मात्रा ४-४ घण्टे बाद देते रहें बस्ति प्रदाह (सिस्टाइटिस) वृक्क प्रदाह (पाइला-इटिस) में लाभ देता है ।

२—सोडा ब्रोमाईड १५ ग्रे०

सक्काई हायोसाइमाई $\frac{1}{2}$ ड्राम

सीरप पेपे वरस १ ड्रा०

जल १ औं०

ऐसी एक मात्रा रात में सोते समय अनिद्रा (नींद के न आने) में काम देती है ।

३—हायोसायमस हाइड्रोब्रोमाइड $\frac{1}{100}$ ग्रे०

मिल्कशूगर २ ग्रे०

गोली बना कर सोते समय पक्षाघातीय कम्प में लाभ देती है ।

४—एक्स० हायोसायमस २ ग्रेन

जिन्माई विलेरियेनेट्स २ ग्रेन

एक गोली बना कर दिन में दो बार लें । वात अवसादक है ।

५—एक्स० हायोसायमस ३ ग्रे०

पल्व कैम्फोरी २ ग्रे०

एक गोली बना लें रात में सोते समय मूत्राकी उत्तेजना में लाभ देती है ।

कपूर २ भाग, क्लोरोफार्म १ भाग, क्लोरल हाइड्रेट ४ भाग, कार्बोलिक एसिड १ भाग, थाइमोल २ भाग।

आन्तरिक

इसको प्रतिश्याय के लिये अधिक बरतते हैं। दौरान खून पर इसका उत्तेजक प्रभाव पड़ता है। यह एन्टिपायोरेटिक, डायफोरेटिक असर करता है। ये एक्सपैक्टोरेन्ट मिश्रणों में भी पड़ता है। इसे एन्टिस्पैजमोडिक तौर पर हिस्टीरिया आदि रोगों में भी दिया जाता है। बहुत से चिकित्सक इसे कालरा की बीमारी में भी बड़ा गुणकारी पाते हैं। जहरीली मात्रा में देने से दिमागी एक्साइटमैंट होजाती है। सर में चक्कर आते हैं, नब्ज़ सुस्त होजाती है, सर में दर्द होने लगता है। मेदे में जलन व दर्द होने लगता है। मरीज़ बेहोश होजाता है और आखिर कार मौत वाका होती है। इसमें थोड़ी सी एन्टिपाइरेटिक तासीर भी होती है। ऐसी हालत होने पर फ़ौरन स्टमक ट्यूब से पेट साफ किया जाय और अमेटिक दवाई देकर वमन कराना चाहिये यदि मुमकिन होसके मैडिकल एड लेनी चाहिये।



कैन्थरेडीज़ (Cantharides.)

(लेखक—वैद्यराज श्री धरणीधर जी शर्मा शास्त्री, आयुर्वेदाचार्य)



यह एक प्रकार की मक्षिका (मक्खी) है। जो भौंरे की जातियों में मानी जाती है। पाश्चात्य मतानुयायी इसे कैंथरीडिनम Cantharidinum अथवा कैन्थरेडीन Cantharidin और लैटिन में कैन्थेरिस Cantharis एवं हिन्दी में तेलिन कही जाती है।

यह बहुधा हंगरी, विलायत आदि विदेशों में अधिकांश पाई जाती है। भारतवर्ष के दक्षिणी एवं पूर्वीय (बंगाल आदि) प्रदेशों में भी इसकी एक प्रकार की जाति मिलती है। इसकी लम्बाई पौन इंच से १ इंच तक की होती है। इसके बाजू झिल्ली (झिंगुर) की तरह चमकदार और मनोहर होते हैं जो कि कुछ हरे रंग के दो पंखों से ढंके रहते हैं। इस मक्खी से एक प्रकार की दुर्गंधि निकला करती है जो बहुत नागवार मालूम पड़ती है। मक्खी को सुखाकर विचूर्ण करने पर इसकी रंगत मैली, कुछ खाकीसी होती है, जिस में कुछ २ हरे रंग की कणिकायें चमका करती हैं। इस चूर्ण का स्वाद कषैला किन्तु जलनदार होता है।

विष और प्रभाव

इस मक्खी का मुख्य विष कैनथरेडीन (Cantharidin) जो सफेद चमकदार पर्तों में होता है इतना उग्र विष है कि एक ग्रेन (आधी रत्ती) के सौ टुकड़े किये जांय और एक भाग किसी अंग पर लगा दिया जाय, तो तुरंत आबला (फफोला) पड़ जायगा। इस भयंकर विष को खाने के लिये अधिक मात्रा में कदापि न दें अन्यथा इसका प्रभाव मूत्राशय और जननेन्द्रिय पर हुवा करता है और हृदय श्वास क्रिया एवं मस्तिष्क संबन्धी लक्षण दृष्टिगोचर होने लगते हैं, जैसे नाड़ी की गति तीव्र होजाती है, श्वास जल्दी २ चलने लगता है और मूर्छा होकर शरीर में एंठन शुरू हो जाती है अंतड़ियों में सूजन होकर रक्त मिश्रित दस्त आने लगते हैं। अतः अधिक मूर्च्छा आने २ रोगी का श्वासावरोध हो जाता है और वह मर जाता है। उचित मात्रा में प्रयोग करने से बहुत लाभ भी होता हुवा देखा गया है किन्तु खाने के लिये इसका टिंचर Tincture बना कर देवें फिर भी बड़ी समझदारी एवं होशियारी के साथ। कभी किसी को किंचित मात्रा भी मात्रा से अधिक देने पर उसके मूत्र नालिका में जलन होकर ऐलब्यू मेन और रुधिर आने लगता है बूंद २ पेशाब होने लगता है और हर समय मूत्र त्याग करने की इच्छा बनी रहती है।

प्रयोग गुण

मासिक धर्म की खराबी में इसके टिंचर का व्यवहार २० मिनम (बूंद) से ३० मिनम तक करना चाहिये। इससे गर्भाशय में रुधिराधिक होकर मासिक धर्म हो जाता है। गर्भावस्था में

देने से गर्भपात हो जाता है इसलिये आवश्यकता पड़ने पर भी उक्त दशा में इसका प्रयोग कदापि न करे। वृक्क (मसाने) की शक्ति नाश होने पर मूत्र बूंद २ करके टपकने लगता है, उक्त दशा में १५ मिनम इसके टिंचर को गोंद के लुवाब के के साथ देने से बहुत जल्द आराम मिलता है। इसके टिंचर को ५ से १५ मिनिम्ज की मात्रा में जल के साथ मिला कर मिक्चर के रूप में देना नपुंसकता को दूर करता है। धड़ के अधोभाग के लकवे (पेरे प्लेजिया) अथवा साइटिका (गृद्ध सी) की बिमारी में ज्ञान तन्तुओं के ऊपर इसके प्लास्टर द्वारा छाला उठाने से अत्यधिक लाभ होता है। गंज रोग (बाल खोर) पर लगाने से वहां के बाल पुनः उग आते हैं इसके लिये १ भाग कैन्थर डीन में आठ भाग एरण्ड तेल मिला कर व्यवहार करना चाहिये किसी जोड़ में दर्द होने पर इसका प्लास्टर लगावे, तो ऊपर छाला उठ कर दर्द दूर हो जाता है। छाती में पानी इकट्ठा होने पर, जैसा कि प्लूरिसी में होता है, इसी प्लास्टर से छाला उठाने से आराम होता है. किन्तु दर्द स्थान से हट कर ही छाला उठाना चाहिये, आंख के दर्द में दोनों कनपटियों पर छाला उठाने पर आराम मिलता है। छाला उठाने के लिये बहुत ही उत्तम इसका प्लास्टर (प्रलेप) होता है। प्लास्टर कम से कम आठ घण्टे और अधिक १२ घण्टे तक लगा रखना चाहिये। यों तो तीन-चार घण्टे में ही छाले उठ आवेंगे, यदि छाले उठ जायं तो प्लास्टर शीघ्र ही हटा दें और उस पर तीसी (अलसी) की गरम पुल्टिस बांध देने से तज्जनित कष्ट दूर हो जाता है छाला उठाने वाले स्थान को पहले साबुन से खूब साफ करलें और तौलिये से इतना रगड़ें कि वह स्थान बिलकुल लाल हो जाय। तदोपरान्त प्लास्टर लगावे। छाले का पानी निकालने के लिये सुई चुभो देवें और ऊपर से वैसलीन लगा कर बांध देवे। अच्छे चिकित्सक बच्चों की कूकर खांसी में गर्दन पर, कै (वमन) एवं पेट की जलन में पेट पर भी इसके प्लास्टर द्वारा छाला उठा कर लाभ पहुंचाते हैं परन्तु बड़ी सावधानी के साथ. यह प्रत्येक का काम नहीं है। वृद्ध, बालक, शक्ति क्षीण, गर्भवती प्रभृति को छाला नहीं उठाना चाहिये। कैन्थरडीन पाउडर (चूर्ण) की मात्रा बहुत ही कम है अर्थात ½ ग्रेन से १ ग्रेन तक दिया जा सकता है।

मिश्रण

इसके मिश्रण से कई औषधियां प्रस्तुत की की जाती हैं। जैसे—

(१) एसीटम कैन्थरेडीनी (Acetum Cantharidini) इसका दूसरा नाम विनीगर आफकैन्थरेडीनVinegar of Cantharidinहै इसमें ०.०५ भाग प्रतिशत कैन्थरेडीन होती है।

(२) कैलोडियम वैसीकैन्स (Callodium Vesicans दूसरा नाम ब्लिस्टरिंग क्लोडीयन अर्थात फफोला उठाने वाली दवा है।

(३) एम्प्लास्ट्रम कैलीफेसियन्स Emplastrum calefacins दूसरा नाम वारमिंग प्लास्टर Warming Plaster है इसमें ०.०२ भाग कैन्थ रेडीन है।

(४) लाइकर एपिसपास्टीकस Liquor Epispasticus दूसरानाम ब्लिस्टरिंग लिक्विड Blistering Liquid है इसमें ०.५ भाग कैन्थ रेडीन है।

(५) एम्प्लास्ट्रम कैन्थरीडीनी Emplastrum Cantharidini इसमें ०'२ प्रतिशत कैन्थरेडीन है।

(६) टिंक्चूरा कैन्थरेडीनी Tinctura Cantharidini इसमें ०'०१ फ़ीसदी कैन्थरेडीन होती है। मात्रा २ से ५ बून्द तक है।

(७) अंगुऐण्टम कैन्थरीडीनी Unguentum Cantharidini इसमें कैन्थरडीन की मात्रा ०.०३३ प्रतिशत है। इसे लगाने से वह स्थान लाल होजाता है।

(१) विनेगर Vinegar (सिरका)

कैन्थेराइडीज पाउडर २ औंस, ग्लासियल ऐसेटिक एसिड १० औंस, पानी १० औंस। क्रिया—कैंथराईडीज के चूर्ण को पानी में भिगो कर २ घण्टे मन्दाग्नि से पकावे, ठंडा होने पर उसे छान ले। तदनन्तर ऐसेटिक एसिड मिला कर एक दिल करे और पुनः उसे फिल्टर (छान कर) करके रखले।

(२) बिलिस्टरिंग कलोडियम

बिलिस्टरिंग लिक्विड २० औंस पाईरोग्जलीन १ औंस दोनों को एक बोतल में भर दें और कार्क लगाकर खूब हिलावें, जब एक दिल होजाय, तो इसे तैयार हुआ समझना चाहिये।

(३) एम्प्लास्ट्रम कैलीफेसियन्स

(Emplastrum Calefacins)

केन्थरडीज पाउडर, जायफल चूर्ण, सीमाव तवा रोग़न(अत्तारों से प्राप्त होगा) देशी मोम,रेजिन प्रत्येक चार औंस। सो० प्लास्टर सवा तीन पौंड रेजिन प्लास्टर २ पौंड,,उबला हुवा पानी १ पाइन्ट पहले मक्खियों के चूर्ण को खोलते हुये जल में ६ घन्टे तक भिगो रक्खे फिर कपड़े से उसे छान वाटर बाथ की गर्मीसे उसे गाढा करें तदन्तर अन्य औषधियों को पिघला कर डालता जाय और मिलाता जाय। एकत्रित हो जाने पर पलास्टर की तरह जमा कर रख ले। यह बात की शोथ (सूजन) चोट के लिये बहुत लाभदायक है।

(४) ब्लिस्टरिंग लिक्विड

(Blistering Liquid)

कैन्थरेडीज आठ औंस, ऐसिटिक ईथर, केवल मिलाने मात्र के लिये। प्रथमतः ३ औंस ईथर लेकर पावडर को भिगोकर किसी चौड़े मुंह के पात्र (प्लेट) में जमा कर रख दे। २४ घण्टे पश्चात उस पर धीरे २ ईथर छिड़कता जाय और उसे एक किनारे एकत्रित होने दे। जब लग भग २० औंस अर्क हो जाय तो उसे किसी शीशी में धीरे से उतार कर खूब मजबूत कार्क लगा कर रखदे। यह फफोला उठाने के लिए उम्दा दवा है। जिस स्थान पर रुई से दवा लगाई जाती है, वहां शीघ्र छाले उठ आते हैं।

(५) कैन्थरेडीज़ प्लास्टर (Cantharidis Plaster

कैन्थरेडीज चूर्ण १२ औंस, मोम देशी ८ औंस, भेड़ की चर्बी ८ औंस, रेजिन ३ औंस, बिन्जोयटैड लार्ड ६ औंस। मोम और चर्बियों को वाटर बाथ की गर्मी में पिघला कर अन्यान्य को बारी २ से मिला दे और ठण्डा होने तक किसी लकड़ी से चलाता रहे। ठण्डा होने पर रखले और व्यवहार में ले।

(६) टिंचर कैन्थरेडीज़ (Tinctura Cantharidis)

उक्त मक्खियों का दरदरा चूर्ण, चौथाई औंस प्रूफ स्प्रिट १ पाइण्ट। दोनों को बोतल में भर कर काग लगादे और एक सप्ताह तक रख छोड़े। इसके पश्चात् फलालेन या फिल्टर पेपर से छान कर रखले और समयानुकूल व्यवहार में लावे।

(५) एंगुएण्टम कैन्थरेडीज़

मक्खियों का चूर्ण १ औंस, देशी मोम १ औंस, रोगन जैतून ६ औंस। चूर्ण को पहले तेल जैतून में १२ घण्टे भिगो रक्खे और बरतन को खूब ढकदे। तदनन्तर उस पात्र को खौलते हुये पानी में १५ मिनट तक रखा रहने दे। तदोपरान्त मल मलके कपड़े से उसे छान ले और भली भांति निचोड़कर उसी में मोम डाल कर शीतल होने तक चलाता रहे। बस मरहम तैयार हो गया। जिस घाव को ताजा रखना हो, मवाद बाहर निकालना हो तो इसे बर्तें।

(८) ब्लिस्टरिंग पेपर

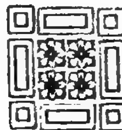
मोम देशी ४ औंस, इस्परमेंसीटी १॥ औंस तेल जैतून २ औंस, रेजिन पौन औंस, स्वच्छ जल ६ औंस। कैनेडा बाल सम चौथाई औंस, कैन्थ-रेडीज पाउडर १ औंस।

क्रिया—केवल कैनेडाबालसम को छोड़ कर अन्यान्य को जल में डाल कर मंदाग्नि से २ घण्टे तक पकावे, पश्चात् उसे किसी चौड़े मुख के बर्तन मे छान ले और प्लास्टर को पानी से अलग कर के बालसम मिलादे। तदनन्तर कारतूस वाला कागज की पट्टी उस पर फेरता रहे, जिससे उस में दवा लग जाये प्लास्टर के स्थान पर इसका व्यवहार होसकता है।

विषोपचार

कैन्थरेडीज के विष शान्ति के लिए वमन, विरेचन (एनीमा से दस्त कराना) कराना चाहिये ताजा अण्डा खिलावे, मार्फीन या ओपियम की बत्ती गुदा में लगावे, गर्म जल में बैठावे बार्ली वाटर (जौ का पानी) पिलावे। रोगी का विषोप-चार शीघ्र ही होना आवश्यक है अन्यथा उसका प्राणान्त शीघ्र होने का भय है।





लोबीलिया (Lobelia)

[लेखक—श्री 'विरक्त']

इसके वृक्ष का नाम लोबीलिया इनफ्लेटा (Lobelia inflata) है। यह उत्तरी अमेरिका से आता है। इसका तना पहलदार होता है और उसमें नाली सी बनी हुई होती है जिसके दोनों ओर छोटे २ पर से लगे हुए होते हैं इनका वर्ण अरगावानी और लोमश होता है। उनके ऊपर दाग होते हैं इसका कैपसूल दो खाने वाला होता है जिसके बीच छोटे २ और तिकोने जालदार और भूरे रंग के बीज होते हैं ख़ुरराश पैदा करनेवाली स्वाद पहले हलका और जब चबाया जाये तो जलन और तलखी पैदा होजाती है।

रासायनिक विश्लेषण—

१—लुबोलीन—यह एक तरल उड़नेवाले तेल की जाति का अलकलाइड होता है। और ३० फ़ीसदी उसमें उपस्थित होता है।

स्वाद इसका बहुत ही अधिक तेज़ गंध तम्बाकू जैसी होती है।

यह अल्कलाइड लोबिलिक एसिड के साथ भी मिला हुआ होता है और इस के क़लमों की शक्ल में नमक तैयार होते हैं।

२—इनफ्लेटीन

विरोधी—

कास्टिक, एलकली। इनसे लोबीलीन के अंग अलग होजाते हैं।

मिश्रण

टिंचर लोबीलिया ईथर—

(Tinct. Lobelia Etherea)

लोबीलिया १ भाग, स्प्रिट आफ़ ईथर ५ भाग के साथ परकोलेट (छान) करलें।

यह टिंचर १८८५ सन की अपेक्षा १½ गुना ज्यादह लोबीलिया से तैयार किया जाता है।

मात्रा—५ से १५ बून्द तक।

प्रभाव

बाह्य—

लोबीलिया का त्वचा पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता मगर कहाजाता है कि त्वचा के छिद्रों द्वारा अन्दर प्रविष्ट होकर विषलक्षण उत्पन्न कर देता है।

आन्तरिक—

अन्नप्रणाली—साधारण या बड़ी मात्रा के सेवन करने से बहुत अधिक इरीटेन्ट प्रभाव होता है फिर इसी कारण वमन और अतिसार तीव्रवेग से प्रारम्भ होजाते हैं। लोबीलिया के प्रभाव में यह विशेषता है कि इन लक्षणों में मरीज़ क्षीण होजाता है, नाड़ी कमज़ोर होजाती है शीतल स्वेद आने लगते हैं, त्वचा का वर्ण फ़ीका होजाता है मांसपेशियां शिथिल पड़ जाती हैं।

रक्तपरिभ्रमण--

मेंडक पर तजुर्बा करके देखा गया है कि हृदय पहले तो तीव्र गति करने लगता है, परन्तु शीघ्र ही मन्द मन्द चलने लगता है। डायस्टली की अवस्था में गति करनेसे रुक जाता है। रक्त का दबाव कम होजाता है और यह प्रभाव दोनों तरफ से पड़ता है। कुछ तो हृदय पर प्रभाव पड़ता है और कुछ असर वेस्टोमोटर के केन्द्रों पर पक्षाघात का हो जाता है।

श्वास पथ--

कम परिमाण में देने से श्वास मन्द होने लगता है बड़ी मात्रा में देनेसे श्वास केन्द्र अत्यन्त सुस्त होजाते हैं और यहां तक कि श्वास के बन्द होजाने पर मृत्यु होजाती है। कहा जाता है कि ब्रांकाई का अजलाती तबक ढीला होजाता है।

वात केन्द्र---

मस्तिष्क के केन्द्रों पर तब तक कुछ प्रभाव नहीं होता जबतक कि इस दवा को जहरीली मात्रा में न दिया जाये तब कोमा और कन्वलशंज. आक्षेप पैदा होजाता है मगर यह स्पष्टतया नहीं कहा जासकता कि ये लक्षण कहां तक इस के कारण पैदा होते हैं जैसे कि पूर्व वर्णन कर चुके हैं।

श्वास केन्द्र

वैसो मोटर का केन्द्र और हृदय का केन्द्र शिथिल होजाता है अनुभव से सिद्ध हुआ है कि मस्तिष्क के मोटर के केन्द्र भी सुस्त होजाते हैं। मांसपेशी पर कुछ असर नहीं पड़ता।

लुबेलीन प्रायः वृक्क और त्वचा के द्वारा बाहर निकलती है यह भी कहा जाता है कि डायोरेटिक और डायोफोरेटिक (पसीना लाने वाला) प्रभाव करती है।

उपयोग--

लाबीलियाको परगेटिव (रेचक) और अमेटिक तौर पर भी इस्तेमाल किया जाता है मगर इन फायदों के लिये इसका सेवन नहीं करना चाहिये क्योंकि इन से कोलैप्स का बड़ा भय रहता है।

दमा (श्वास) की बीमारी में वायु प्रणालियों के तनाव को शिथिल करने के लिये सेवन किया जाता है। इसके टिंचर की दस बू० इस रोग में दे सकते हैं यदि रोगी का जी मिचलाने लगे तो इस दवा का सेवन उसी समय बन्द कर देना चाहिये।

ब्रांकाइटिस की बीमारी में जब आक्षेप (डिस‑पोनिया) मौजूद हो तो इसका सेवन करा सकते हैं।



विष संबंधि यूनानी, एलोपैथी, वैद्यक की कुछ साधारण बातें

[लि०—कवि विनोद वैद्य भूषण पं० ठाकुरदत्त शर्मा वैद्य "अमृतधारा]

विष क्या है ?

जो पदार्थ खाने पीने या सूंघने, घाव में लगने या शरीर में छूने या काटने या डंक लगाने इत्यादि से हानि विशेष पहुंचावे या मारक चिन्ह प्रगट करे, उसे विष कहते हैं। इस परिभाषा की दृष्टि से एक साधारण पदार्थ भी और औषधि भी मात्रा से अधिक खाई जावे तो हानि पहुंचाने के कारण उसको विष कह सकते हैं, परन्तु विष का शब्द उन्हीं पदार्थों पर वरता जाता है जिनकी स्वल्प मात्रा ही बहुत हानि पहुंचाती है और आधिक्य मृत्यु का कारण होता है। जो पदार्थ पेट अन्त तक भर कर खाने से एक मनुष्य को मार देवे वह विष नहीं कहला सकता है। विष को अंग्रेजी में पाईजन (Poison) यूनानी में सम्म और उर्दू में जहर कहते हैं।

अगद या फ़ाद जहर

यह यूनानी शब्द बाज जहर का अपभ्रंश है, विष को दूर करने वाला और प्राण रक्षक पदार्थ बाज जहर कहलाता है इसी को अगद कहना चाहिए।

फ़ाद जहर का यूनानी वर्णन

जो पदार्थ जिस पदार्थ का विष दूर करे, उसको उसका 'अगद" या "फ़ाद जहर" कहते हैं। उसे अंग्रेजी में Antidote (एन्टीडोट) पुकारा जाता है। यथाहि, मारफ़िया का अगद या एन्टीडोट परमेंगेनेट ओफ़ पोटाशियम है, या वच्छनाग का निरविषी है। जिस विष का जो विपक्ष है वही उसका फ़ाद जहर है, परन्तु यूनानी में फ़ाद जहर खास औषधि का नाम भी है। यथाहि जहां लिखा हो, फ़ाद जहर मादनी (खनिज) तो प्रयोजन "जहर मोहरा" से होता है।

फ़ाद जहर उस पदार्थ के साथ आता है जिसमें यह गुण हो कि विष को दूर करे, प्रकृति को सहायता दे। विष चाहे सरद हो या गरम, स्वभावत: उसको दूर करने वाला है। जहर मोहरा खताई, जहर मोहरा हैवानी, जदवार खताई, नारियल दरियाई, पपीता इत्यादि यूनानी फ़ाद जहर हैं। फ़ाद जहर तीन प्रकार का होता है। फ़ाद जहर हैवानी (पाशविक विष नाशक पदार्थ) फ़ादजहर मादनी (खनिज विष नाशक पदार्थ) फ़ाद जहर नबाताती (वानस्पत्य विष नाशक पदार्थ)

जहर मोहरा हैवानी

कई प्रकार का होता है। एक बन्दर के पित्ता या आन्त से निकालते हैं। चीन और हिन्दुस्तान उसको अपने खजाने में रखा करते थे। जो

पत्थर की आकृति का होता है। दूसरा प्रकार वह है जो जंगली पशुओं चूहा, हिरण इत्यादि से निकालते हैं। एक को हजकलतीस कहते हैं और यह शीराज से आता है। एक बारहसिंहा से निकता है उसको हजरूल अमल कहते हैं। और कहते हैं कि कोई व्यक्ति तीन रोज तक तीन रत्ती की मात्रा को घिस कर प्रति दिन पीले तो आयुपर्यन्त कोई विष असर नहीं करेगा।

अफ़सोस ! कि यह सब प्रकार के विष आधुनिक समय में नहीं प्राप्त होते हैं। राजाओं का ऐसे पदार्थ संग्रह करना काम था सो उन वेचारों को यह बात कभी सूझनी भी नहीं है कुछ ऐसे पुरुष भी हैं जो यत्न से कुछ न कुछ अन्वेषण करते रहते हैं। एक प्रकार यह है कि उसे हजरुल हय्या वा मुहरामार कहते हैं और पार्थविक जन्तुओं के काटने पर प्रयुक्त होता है और एक प्रकार यह है कि 'मार खोर' जो बकरे के पेट से निकलता है और सर्प के डंक पर लगाने से सब विष को चूस लेता है और प्राय: (सपेरों) सर्प वालों से मिलता है। हमारे पास एक टुकड़ा या फ़ाद जहर हैवानी, को वर्षों पर्यन्त राजा लोग खाया करते थे उन की प्रशंसा अपार है। इन के कई योग बनते हैं।

यथा निम्न लिखित योग प्राण रक्षक है शरीर को सर्व विषों से शुद्ध करना है। शरीर की शक्ति और उत्तेजना को बढ़ाता है और आज़ाए रईसा अर्थात् दिल दिमाग और जिगर का शक्ति वर्धक है।

यूनानी योग

फ़ाद जहर हैवानी ६ रत्ती, अनविंध मोती ३ रत्ती, याक़ूत सुर्ख ३ रत्ती, लाल बदख़शानी ३ रत्ती, संग यशम ३ रत्ती, मोमियाई ३ रत्ती, अम्बर अशहब ३ रत्ती, केशर ईरानी ३ रत्ती, स्वर्ण पत्र २ रत्ती, ख़ालिस कस्तूरी १ रत्ती, प्रथम कठोर पदार्थों को सीमाक़ पत्थर के खरल में खरल करें। पश्चात् शेष पदार्थ प्रविष्ट करके मिश्री की चाशनी बना कर सब पदार्थों को डाल कर तीन विभाग करें और प्रति दिन एक भाग खायें और ऊपर से प्याला उष्ण दूध का पीवें और थोड़े चलें तथा थोड़ी देर के पश्चात् मिश्री के शर्बत में गुलाब का अर्क मिला कर पीवें और आराम से रहें, जब तक पूर्ण क्षुधा न लगे, भोजन न करें और जब पूरी क्षुधा हो तो हलका और अच्छा भोजन करें।

फ़ाद जहर मादनी

यह पत्थर खानों से निकलता है। देहली (इन्द्रप्रस्थ) में एक हौज़ (जलाशय) था और उसमें पानी भरा रहता था उस में फ़ादजहर मादनी लगा हुआ था। जिस किसी को शहर में कोई विष धारी जन्तु काटता उसका पानी लेजाकर पिला देते, आराम आ जाता था सुना जाता है कि अब उसे उखाड़ २ कर अंग्रेज ले गए हैं फ़ादजहर मादनी प्रसिद्ध आज कल जहर मोहरा ख़ताई ही है फ़ादजहर मादनी श्वेत, पीत, हरित इत्यादि ५ प्रकार का होता है। असली जहर मोहरा ख़ताई वही है कि हल्दी को प्रथम पत्थर पर घर्षण करें तत्पश्चात् उसे घिसें, यदि रंगत लाल हो जावे तो अच्छा है। यह भी

लिखा है कि निम्ब के पत्ते मुंह में डालने से जो कड़वा पन मुंह में हो जाता है वह इसके डालने से जाता रहे और जिसका धूप में पसीना निकले वह सब से बढ़िया है। यह थोड़ा सा सर्प के मुंह में डालें उसी समय मार देवे। असली की मात्रा एक रत्ती, परन्तु बाजारों में जो बहुतायत से मिलता है वह तो तोला २ भी खाया जाता है विशेष अच्छा भी ३ माशा तक। यह सब विषों को दूर करता है। इसका खाना स्वास्थ्य रक्षक है और महा मारियों के दिनों में बीमारियों के बुरे असर से सुरक्षित रखता है, इत्यादि।

फ़ादज़हर नवाती

नारयल दरयाई, निरवसी, पपीता इत्यादि हैं। खूबकलां गुलेदाग़स्तानी, इत्यादि भी फ़ाद-ज़हर हैं। इनका वर्णन हमारी पुस्तक "प्लेग के प्रति बंधक उपाय" में लिखा है। इच्छा हो तो वहां से लेवें।

ज़हर की क़िस्में

यूनानी में विष तीन प्रकार के होते हैं:—ज़हर हैवानी जैसे सर्प, चूहा, बिच्छू। ज़हर नवाती जैसे अफ़यून, धतूरा बच्छ नाग। ज़हर जमादी जैसे संखिया, सिंदूर। जो विष संयोग से स्वयं तय्यार किया गया हो उसको ज़हर मुरक्कबा कहते हैं।

वैद्यक में

विष को दो भागों में विभक्त किया गया है स्थावर (बेजान) और जंगम (जानदार) डाक्टरी में यों तो विष की बहुत क़िस्में हो सकती हैं परन्तु उन्होंने इस प्रकार इसे विभाग नहीं किया है, उनका विभाग उनके गुणों के सम्बन्ध से है यथा साधारणतया निम्न लिखित विभाग किए जाते हैं प्रथम Irritant (इरिटेन्ट) वह विष जिनसे वमन और दस्त बहुत हो जावें जैसे नीलाथोथा, द्वितीय नारको टैन्ट (Narco tant) जिससे दिमाग़ या दिल के कार्य्य मे अन्तर आजावे और शरीर में शैथिल्यादि होकर संज्ञानाशादि हों यथा कोकेन। तृतीय नारकोटेको इरिटेन्ट (Narcotico Irritant) जिसमें उपरोक्त दोनों बातें हों।

चतुर्थ

Corrossive (कोरोस्सिव) नष्ट करने वाला। डाक्टरी के विष बहुत से सत इत्यादि उनके आपने बनाए हुए हैं।

लक्षण

१—अफ़ीम की श्रेणी के विषों में—

शिर पीड़ा, तिमिर, धुन्ध, पुतली का सिकुड़ना, कर्णनाद, भारीपन, तन्द्रा, संज्ञानाश।

२—बेलेडोना की श्रेणी के लक्षण—

बेहोशी, तिमिर (नेत्रों के आगे परमाणुओं का उड़ना) चक्षुतारक फैलाव, मुख शोष्य, तृषा और कभी २ तन्द्रादि।

३—अलकोहल की श्रेणी के लक्षण—

रक्त भ्रमण और मास्तिष्क्य कार्य्य प्राबल्य तथा दो वस्तु दृष्टिगोचर पड़ना, मांसपेशियों की अल्प शक्तित्व अनियमता, पश्चात् निद्रा और भयंकर अवस्था में संज्ञानाश।

पोस्ट मारटम—

अफ़ीम की श्रेणियों में मस्तिष्क की नसों आदि का भरा हुआ होना और हृदय के छिद्रों

और झिल्लियों में रुधिर का बहाव, बैलाडौना में कुछ नहीं, अल्काहल की श्रेणी में: सोजिश, मस्तिष्क और झिल्लियोंमें रक्त ज्यादह होना रुधिर का पतला होना।

४--विष जो पृष्ठवंश (रीढ़) पर प्रभाव डालते हैं--

यथा कुचला का सत्व इत्यादि इसमें एक प्रकार की अचेतनता होती है जिससे शरीर जकड़ जाता है और शिर तथा पाद आगे को होते हैं बस यही चिन्ह हैं।

५--विष जो हृदय पर प्रभाव डालते हैं---

यथा वत्सनाभि, तमाल पत्र (तम्बाकू) अग्ज़ालिक एसिड इत्यादि ऐसे विषों से मौत एकाकी, मृगी, निमोनिया, हृदय की गति बन्द होने से होती है।

६--विष जो फेफड़ों पर प्रभाव डालते हैं---

यथा कार्बोलिक एसिड। चिकित्सा का क्रम तीन प्रकार से है, वान्ति द्वारा या स्टमक पम्प द्वारा निकालना, उसके कार्य को रुद्ध करना और मृत्यु लक्षण को बदलना है।

विष को वमनकारी औषधि देकर वमन द्वारा निकाल देते हैं या स्टमक पम्प द्वारा अथवा ट्यूब उपयुक्त करते हैं जो उपस्थित हो वही उत्तम है। एपोमारफीन एक औषधि होती है जिसका ।। रत्ती त्वचा के भीतर प्रवेश करने से वमन आरम्भ होजाती है और सल्फेट आफ ज़िंक २० ग्रेन (१० रत्ती) की मात्रा में अच्छी वान्ति कर है विकाशि विष में जब अन्य औषधियों से वमन नहीं आती तो सल्फेट आफ कापर (नीला थोथा) ४ से १० ग्रेन की मात्रा तक प्रयुक्त करते हैं उष्ण जल में २ चमच राई के और साधारण लवण कई बार देना और किसी जानवर का पंख कंठ में फेरने से वमन आजाती है। स्टमक पम्प उपयुक्त करने के अर्थ प्रथम आमाशय में पानी प्रवेश करना चाहिए वरना झिल्ली आजावेगी ट्यूब देख लेना उचित है कि टूटी हुई न हो, यदि स्टमक पम्प अप्राप्त हो तो रबड़ की नाली को भीतर प्रविष्ट करके साईफन बनाकर काम लिया जासकता है। द्वितीय कार्य विष प्रभाव उसका अगद देकर कम करना है। अगद अंग्रेजी विषों के बहुत ज्ञात हुए हैं वह पिचकारी के द्वारा जल्दी दिए जाते हैं अथवा मुख द्वारा भी पिचकारी के द्वारा देने वालों के वास्ते यदि हाईपोडर्मिकसिरिंज उपस्थित न हो तो गुदा के द्वारा चढ़ा देते हैं और वह रक्त में संयुक्त होजाते हैं। यथा—

संखिया के विषों के वास्ते अगद हाईड्रेटेड आक्साइड आफ आईरन है। नाइट्रेट आफ सिल्वर के वास्ते लवण है।

एमोनिया, पोटास और सोडा के वास्ते सिर का वा वानस्पत्यक्षार जल में डालकर देना एग्ज़ालिक एसिडके वास्ते अगद मैगनेशिया वा चाक अथवा दीवार की सफेदी है।

दूषी विष

विषावशिष्ट दोष का नाम दूषीविष है अथवा वह विष अल्प हो, उपाय न किया गया और शरीर के भीतर पुराना होगया हो या औषधियों से दबाया गया हो, परन्तु निकला न हो अथवा वह विष ही इस प्रकार का हो कि मृत्यु या भयंकर कोई रोग तो

नहीं कर सकता, परन्तु कफ में लिपटा हुआ वर्षों शरीर में मिला रहता है।

जिस मनुष्य के शरीर में दूषी विष अवशिष्ट हो, उसके शरीर और मल के वर्ण में अन्तर आ जाता है। मुख में दुर्गंधि और रसनाशक्ति बिगड़ जाती है तृषा अधिक होजाती है कभी अचेतनता और वमन भी हो जाती है। यदि यह आमाशय में रहता है तो उस पुरुष को वात, कफ के रोग होते रहते हैं और यदि पक्वाशय (आंतों) में हो तो वात पित्त के रोग सताते हैं और शिर के बाल और रोम उखड़ जाते हैं और यदि किसी धातु रस, रुधिर माँस, मेदा, हड्डी मज्जा वा वीर्य्य में स्थित होजावे तो जिस में स्थित हो उसकी खराबियां आरम्भ होती हैं। शरद वायु, मेघ और वर्षा ऋतु में यह विष उपस्थित होता है। इसके दूषित होने से प्रथम यह लक्षण होते हैं। निद्रा अधिक आना, शरीर भारी होजाना जृम्भाधिक्य, रोम हर्षता, अंगड़ाई, पश्चात् विष अपना वेग प्रकट करता है। पाचन शक्ति की विनष्टता भोजन से अरुचि शरीर पर चकत्ते, दफ्कड़ इत्यादि, कभी अचेतना, हस्तपाद में शोथ, धातु नाश, जलोदर, वमन, अतिसार, वर्णपरिवर्तन, कदाचित ज्वर अत्यन्त तृष्णादि उपद्रव होते हैं कोई विष दूषित होकर उन्मादी बनाते हैं अथवा अपस्मार आदि करते हैं। कोई पेट फैला देते हैं। कोई वीर्य्य विकार कर देता है।

विषारी नाम अगद

यदि कोई दूषी विष का रोगी हो अर्थात् उस के अन्दर विष स्थित हो तो उसको स्वेद कर्म करावें तत्पश्चात वमन विरेचन देवें। अनन्तर इसके निम्नलिखित अगद पिलाया करें।

योग—

पीपल, बालछड़, लोध, धनिया, जवाखार, छोटी इलायची, नेत्रवाला, सोनागेरू, प्रत्येक क़रीब ३ माशे लेकर क्वाथ करके मधु मिलाकर पिलाया करें। बलवान मनुष्य का दूषी विष शीघ्र दूर हो जाता है और यदि कोई कुपथ्य करता रहे तो उपाय हो ही नहीं सकता।

—※—



मूषिक विष (Rat-bite poison)

[ले०—आयुर्वेदसूरिः कृष्ण प्रसाद त्रिवेदी बी० ए० आयुर्वेदाचार्य]



हमारा ख्याल है कि संसार में समस्त विषैले प्राणियों से जितनी हानि मनुष्यों की होती है, उस से कई गुणा बढ़ कर हानि चूहों से होती है। अन्य विषैले प्राणि तो केवल शारीरिक हानि ही करते हैं, किन्तु चूहा शारीरिक भयंकर हानि के साथ ही साथ आर्थिक हानि भी बहुत पहुंचाता है। रुई के गोदामों में आग लगा देना (ये कभी २ जलते हुये तिनकों को रुई के गोदाम में ले जाते हैं), घर के कपड़े वगैरा सामानों को तहस नहस कर देना, मकानों की नीव में छेद कर उन्हें कमजोर बना देना, पक्के तालाबों में छेद कर पानी को बहा देना आदि कई प्रकार की आर्थिक हानि चूहों द्वारा अज्ञात रूप में होती है। अस्तु हमें यहां पर उनके विषजन्य शारीरिक हानि की विवेचना करनी है।

प्लेग रूपी जनसंहारक भयंकर रोग, जिसमें अन्य विषधर प्राणियों के विष की अपेक्षा कोटि गुणा अधिक जनसंहार होता है इन्हीं चूहों की कृपा से सर्वत्र फैलता है। अपने प्लेग शीर्षक निबन्ध में हम इस विषय में विस्तार पूर्वक लिखेंगे। प्लेग के अतिरिक्त कौन कौनसे भयंकर विकार मूषिक विष से होते हैं, केवल उनकी ही विवेचना इस लेख में की जावेगी।

संसार में जो कतिपय रोग मनुष्यों में देखे जाते हैं, उनकी कारण परंपरा का पता लगाने पर मालूम होगा कि विप्रकृष्ट कारणों में से सब से महत्व का कारण मूषिक विष ही है। सर्पादि विषैले जीव तो केवल काटकर या डंक मार कर ही अपने विष को शरीर में प्रवेपित करते हैं, किन्तु चूहा पांच प्रकार से विष को मनुष्यादि प्राणियों के शरीरों में फैलाता है—

शुक्रेणाथ पुरीषेण मूत्रेणापि नखैस्तथा।
दंष्ट्रा भिर्वा क्षिपन्तीह मूषिका पंचधा विषम्॥

अर्थात् चूहों के दांतों में, नखों में, वीर्य में मल में, और मूत्र में विष होता है। शरीर के जिस स्थान पर ये दांतों से काटते हैं या नखों से कुरेदते हैं, वहीं से उनका विष शरीर के अन्दर प्रविष्ट हो रक्त को विकृत कर देता है। चूहों का वीर्य, मल या मूत्र शरीर में प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रीति से लग जाने पर भी उनका विष शरीर में प्रविष्ट हो जाता है। कहा भी है—

शुक्रं पतति यत्रैषां शुक्र दृष्टैः स्पृशांतिवा।
नख दंतादिभिस्तस्मिन गात्रे रक्तं प्रदुष्यति॥

(सुश्रुत)

सुश्रुताचार्य जी का कथन है कि प्रत्यक्ष इनके शुक्रादिक शरीर पर लग जाने से तो विष का विस्तार शरीर में होता ही है, किन्तु इनका विष इतना प्रखर और जाज्वल्य होता है कि यदि घर की किसी भी वस्तु में उनका वीर्यादि लग जाय और उस वस्तु का स्पर्श हमारे शरीर से हो जाय

तो बस उनका विष शरीर में प्रविष्ट हो रक्त को दूषित कर देता है।

भला अब बताइये कि हम चूहों के विष से कैसे अपनी रक्षा कर सकते हैं ? ऐसा शायद ही कोई घर हो जहां चूहों का साम्राज्य न हो। इन का परिवार भी दिन दूनी रात चौगुनी वृद्धि करते ही जाता है। घरेलू चूहा वर्ष में कोई ८ बार बच्चे देता है, एक बार में लगभग १० बच्चे जनता है। इस हिसाब से चूहों का एक जोड़ा वर्ष भर में ८० चूहों को पैदा करता है। और प्रत्येक चूहा जब ३ या ४ मास का हो जाता है, तब बच्चे पैदा करने में समर्थ हो जाता है। इस प्रकार एक जोड़े से इनकी पैदाइश का हिसाब लगाने पर मालूम होगा कि ३ वर्ष में ४०१८०१४६० इतनी इनकी औलाद घर में बढ़ जाती है। तब भला हम इनके विष से कैसे सुरक्षित रह सकते हैं। यही कारण है कि हमारे प्रतिशत २५ से भी अधिक भाई और बहन रक्त दूषित जन्य रोगों में फंसे हुये दृष्टिगोचर होते हैं। रक्त दूषित जन्य रोगों का विस्तार पूर्वक विवेचन करना कुछ सरल कार्य नहीं है। एक बड़ा भारी पोथा इस पर रचा जा सकता है। संक्षेप में यहां इ ना ही दर्शाये देते हैं कि शरीर में गांठें पड़ जाना, हाथ पैरों में सूजन, शरीर में दरोरा पड़ जाना, कर्णिका या कमल गट्टा के आकार की गांठें प्रायः गले में या बगल में या रगों में होना, सँधियों में पीड़ा, मूर्च्छा,अंग का स्तम्भन ज्वर, अरुचि, दुर्बलता, श्वास, वमन, रोमहर्षण शरीर का पीलापन, बधिरता, मुख या नाक से रक्तस्राव, मूसे के समान शरीर में लम्बी लम्बी ग्रन्थियां होना, अग्निमांद्य, दाद, खाज, चकत्ते, फुंसियां, सिध्म (बनरफ) आदि १८ प्रकार के कुष्ठ, मुख जीभ होंठ हाथ पैर आदि का फटना, मसूरिका, विसर्प, एवं अनेक प्रकार के चर्म रोग, नेत्ररोग आदि रक्त के दूषित होने से उत्पन्न हो जाते हैं।

सुश्रुताचार्य जी ने १८ प्रकार के चूहों की गणना एवं उनके प्रथक प्रथक लक्षणादि का बयान किया है। विस्तार भय से हम यहां नहीं लिखते। किन्तु खेद के साथ इतना जरूर कहेंगे कि आजकल बड़े बड़े विषों के प्रतिकारार्थ जितना शोध लगाया जाता है तथा उनके विषय में जितना कुछ लिखा और पढ़ा जाता है उसका शतांश भी शोध या लिखा पढ़ी मूषिक विष के बारे में नहीं होती है। कारण क्या है ? कारण यही मालूम देता है कि या तो हम मूषिक विष के भयंकर परिणामों से अनभिज्ञ हैं अथवा हम घुल घुल कर मरना पसंद करते हैं बनिस्बत तड़ाक फड़ाक मरने के। सर्पादि जन्य विष या अन्य विष मनुष्य को तुरन्त ही काल के गाल में झोंक देते हैं, तथा मूषिक विष धीरे २ अपना वही कार्य करता है, इसी से हम उसकी अवहेलना या दुर्लक्ष्य करते हैं। हमारे ऋषि मुनियों ने इसके विषय में जितना कुछ लिखा है, उस से अधिक विशेष कुछ नहीं लिखा गया है। अस्तु !

मूषिक दंश प्रणाली

चूहा क्रूर सर्प या बावले कुत्ते के जैसा, दौड़ कर नहीं काटता। वह तो अपना दंश कार्य बड़ी युक्ति के साथ करता है। जब हम घोर निद्रा की अवस्था में होते हैं, तब चूहा धीरे से शरीर के

किसी भाग में, विशेषतः हाथ पैर की उंगली के पास आकर प्रथम सूंघता और फूंक मारता है। उसकी फूंक या मुख की लार के स्पर्श से हमारे शरीर का वह भाग बधिर होजाता है, फिर वह वहां पर चाटता है। सूंघने, फूंकने और चाटने के पश्चात् ही वह काटता है।। इतनी क्रियायें हो जाने पर भी हम जागृत नहीं होते। यदि नींद कच्ची हुई तो जाग भी जाते हैं, और देखने लगते हैं कि किसने काटा। काटनेवाला तो अपना कार्यकर तुरन्त रफुचक्कर होजाता है। हम देखते हैं कि दंश स्थान में थोड़ा रक्त आगया है। ध्यान रहे चूहे का दंश विशेष गहरा नहीं होता, किंतु रक्त में विष के मिश्रण के लायक काफी गहरा होता है। इसके दंश की पीड़ा कुछ नहीं के बराबरही होती है। हम ख्याल कर लेते हैं कि किसी चिंउटे ने काटा होगा. उसकी उपेक्षाकर, फिर चादर तान कर सोजाते हैं।

मूषिक विष कार्य

शरीर के अन्दर रक्त मार्ग से प्रवेश हुआ यह विष गुप्त रूप से अपना कार्य करता रहता है। किसी २ चूहे का विष दो सप्ताह के अन्दर ही अपने कार्य को बाहर प्रकट करने लग जाता है, किसी २ का तो सप्ताह के पश्चात्।

आदंशाच्छोणितं पांडु मण्डलानि ज्वरोऽरुचिः
लोमहर्षश्च दाहश्चाप्याखु दूषी विषार्दिते।
मूर्च्छाऽङ्ग शोथ वैवर्ण्य क्लेदशब्दाश्रुतिज्वराः।
शिरो गुरुत्वं लालासृक छर्दिश्चासाध्यमूषिकैः॥

जहरीले चूहे के काटने पर (जैसे सर्प विषैले नहीं होते वैसे ही सब चूहे विषैले नहीं होते, किंतु उक्त प्रकार से काटने वाले चूहे प्रायः विषैले ही होते हैं) दंशस्थान से फीका रक्त स्राव होता है, शरीर पर चक्राकार मंडल उठते हैं, ज्वर आता है, अरुचि, रोम हर्ष, दाह, मूर्च्छा, शरीर पर सूजन, शरीर का रंग बदलना, क्लेद, बधिरता सिर में भारीपन, मुख से लार का स्राव होना, रक्त की वमन आदि लक्षण होते हैं।

वाग्भट्टाचार्य जी कहते हैं:—

शुक्रं पतति यत्रैषां शुक्र दिग्धैः स्पृशन्तिवा।
यदङ्गमङ्गै स्तत्रास्रे दूषिते पाण्डुतां गते॥
ग्रन्थयः श्वयथुः कोथो मण्डलानि भ्रमोऽरुचिः।
शीतज्वरोऽतिरुक्सादो वेपथुः पर्व भेदनम्।
रोम हर्षः स्रुतिर्मूर्च्छा दीर्घकालानु बन्धनम्॥
श्लेश्मानुबद्धबह्वाखुपोतकच्छर्दनं सतृट्।
व्यवाय्याखु विषं कृच्छ्रं भूयोभूयश्च कुप्यति॥

अर्थात् मनुष्य के अंग पर जहां चूहे का वीर्य गिरता है या स्पर्श होता है, उस स्थान का रक्त दूषित होकर फीकासा होजाता है, तथा वहां पर ग्रन्थि सड़ान, चकत्ते, होते हैं। फिर उसे भ्रम आने लगते हैं, शीतज्वर अरुचि अत्यन्त वेदना, ग्लानि, कंप, हड्फूटनसी वेदना, रोमांच, रक्तस्राव मूर्च्छा,तथा वमन (कै) में चूहे के बारीक २ बच्चे से कफ में सने हुये निकलते हैं प्यास बार २ खूब लगती है। ये विकार कई दिनों तक जारी रहते हैं। चूहे का विष सर्वशरीर व्यापी एवं कष्टसाध्य होने से, बार २ कुपित होता रहता है। जब २ वह कुपित होता है,तब २ उक्त लक्षणोंमें उग्रता आती है।

मूर्च्छा, शोथ, विवर्णता, लसिका या लालास्राव बधिरता, ज्वर, सिर भारी होना, रक्त की वमन इन लक्षणों से जानना चाहिये कि विष असाध्य कोटिका है।

तथा—शूनबस्तिं विवर्णोष्ठमाखुया-,
भैर्ग्रन्थिभिश्चितम् ।
छुच्छुन्दर सगन्धंच वर्जयेदाखुदूषितम् ।
(वाग्भट)

जिस रोगी का बस्ति प्रदेश सूज गया हो, ओष्ठ (होंठ) का वर्ण बदल गया हो (होंठ बिलकुल काले पड़ गये हों) जिसके शरीर पर लम्बी २ चूहों जैसी ग्रन्थियां निकली हों, और जिसके शरीर से छछूंदर की गंध जैसी गंध आने लगी हो, ऐसा रोगी भी असाध्य होता है ।

लक्षणों के विषय में विशेष द्रष्टव्य यह है कि दंश स्थान में शीघ्र हो सूजन आती है, तथा वह भाग प्राय:लाल वर्ण का हो जाता है । सूजन में पीड़ा भी होती है शरीर में दाह घबराहट (बेचैनी) होती है चूहे के विष के ये तीव्र लक्षण प्राय: मास दो मास में स्वयं ही शान्त हो जाते हैं, किन्तु शोथ प्राय: जैसे की तैसी ही बनी रहती है । कुछ काल बाद यह सूजन कड़ी पड़ जाती है । मूषिक विष की विलक्षणता यही है कि रोगी को कुछ समय के लिये ऐसा मालूम देता है कि शरीर में कोई विकार नहीं किन्तु कुछ दिनों बाद ही उक्त तीव्र लक्षणों से वह व्याकुल हो जाता है। यह क्रम कई वर्षों तक जारी रहता है ।

आधुनिक शोध से केवल इतना ही पता लगा है कि रोगी के रक्त में जो मूषिक विष जंतु होते हैं, उनका आकार प्रकार उपदंश (Syphilis) के जंतु जैसा ही होता है, जो जल्दी नष्ट होना नहीं जानते अत: उपदंश जैसा ही यह मूषिक विष विकार चिरस्थायी होता है । तथा उपदंश की ही चिकित्सा इस पर उत्तम लाभप्रद होती है । किन्तु यह शोथ हमारे लिये कुछ नवीन नहीं है । हमारे प्राचीन आचार्यों ने अपने स्वानुभव से इसी प्रकार की चिकित्सा विधि का आदेश दिया है। हमारे आर्य वैद्यक में इसपर वमन विरेचन रक्तमोक्षन आदि की विधि दर्शाते हुए सिद्धौषधियों में से मल्ल सिंदूर, उपदंश सूर्य मल्ल भस्म, गंधक रसायन आदि उन्हीं औषधियों की उपयुक्तता बतलाई गई है जो उपदंश पर भी लाभप्रद होती हैं ।

दोषों की प्रधानता:— मूषिक विषका चिकित्सा क्रम जानने के पूर्व हमें यह जान लेना आवश्यक है कि इसमें किस दोष की प्रधानता हुआ करती है। वाग्भट जी का कथन है कि जहरीले चूहे प्राय: कफ प्रधान हुआ करते हैं —

"श्लेष्मिका कर्णमुन्दुरा"

अर्थात इनका विष भी प्राय:-कफ प्रधान हुआ करता है इसी से कफ के संचय और कोप के समय अर्थात हेमंत और वसंत ऋतु में (वर्षा से वसंत तक कारण के अनुसार) मूषिक विष का कोप (जोश) अधिकता से होता है । लिखा भी है—

मूषिकानां विषं प्राय: कुप्यत्यभ्रेषु निर्हृतम् ।
(सुश्रुत)

और—

यथा यथं वा कालेषु दोषाणां वृद्धि हेतुषु ।।
(वाग्भट)

अर्थात शरीर में व्याप्त हुआ चूहे का विष अभ्र या बदली के दिनों में प्राय: कुपित होता है, अथवा दोषों की वृद्धि के हेतु के अनुकूल यथायोग्य समय में इसका कोप होता है ।

मूषिक विष एक प्रकार का दूषी विष है, जोकारण पाकर बीच २ में जोशीला हो उठता है। इसके विशेष कारण इस प्रकार हैं—

प्राग्वाताजीर्ण शीताभ्र दिवास्वप्नाहिताशनैः।
दुष्टं दूषयते धातूनतो दूषी विषं स्मृतम्॥

अर्थात् पूर्व दिशा की हवा के लगने से, अजीर्ण से, शीतकाल या सरदी लगने से, दिन में सोने एवं अहित भोजन करने से तथा वर्षा के दिनों में विष कुपित होकर रक्तादि धातुओं को दूषित करता है, अतएव ही शरीर में स्थित होकर काल पाकर कुपित होने वाले विष को दूषी विष कहते हैं।

यद्यपि मूषिक विष साधारण रूप से कफ प्रधान होता है परन्तु विशेषतः मूषकों की जाति भेद के कारण या देश काल प्रकृति आहार विहारादि के अन्तर से इसमें अन्यान्य दोषों का उद्रेक एवं प्रधानत्व होना बहुत संभव है तथा उपद्रव भी उनमें से प्रधान दोष के अनुसार ही होते हैं।

जैसा कि हम ऊपर कह आये हैं विषैले मूषिक प्रायः श्लैष्मिक होते हैं किंतु इन जहरीले चूहों में भी कई जाति के चूहे अन्य दोषों को भी कुपित करने वाले होते हैं—

अरुणेनानिलः क्रुद्धो वातजान् कुरुते गदान
महाकृष्णेन पित्तं च श्वेतेन कफ एव च॥
महता कपिलेना सृक् कपोतेन चतुष्टयम्।

अर्थात् अरुण या लाल वर्ण वाले मूषक विष से रक्त में वायु कादोष होकर कुपित होता है, तथा वात संबन्धि विकारों को करता है। अत्यन्त काले वर्ण वाले मूषिक विष से रक्त में पित्त दोष की दुष्टि होकर पित्त जन्य विकारों की प्रधानता रहती है। श्वेत वर्ण वाले चूहे के जहर से रक्त में कफ का प्रकोप होकर कफोत्पन्न विकारोंकी प्रबलता होती है महाकपिल वर्ण पीत युक्त श्वेत वर्ण के चूहों का विष रक्त को विशेष प्रकुपित करने वाला होता है। कपोत वर्ण अर्थात् धूसर वर्ण वाले चूहों के जहर से रक्त सहित तीनों दोषों का कोप होता है। अतएव जहां जैसे विष से जिस दोष का प्रकोप हो तथा जैसे उपद्रव हों तदनुसार ही चिकित्सा करनी चाहिये।

चिकित्सा :— इस विषय में "वैद्यकल्पतरु" में एक बार प्रकाशित हुआ था - कि चूहे के विष का निदान निश्चित किये बाद भी उपचार में कठिनाईयां उत्पन्न होती हैं। मषिक विष के लक्षण वातरक्त रोग से मिलते जुलते से होते हैं। वात रक्त में जिस प्रकार शरीर पर चक्र के आकार उठ आते हैं ऐसे ही चक्राकार मंडल मूषिक विष में भी होते हैं विसर्प और उपदंश में भी ये ही लक्षण होते हैं। अतः संदेह होता है कि ये विकार मूषिक विष जन्य ही हैं या वात रक्त के हैं या विसर्प के हैं। या उपदंश के हैं। दंश के स्थान का शोथ रक्त वात की शोथ जैसी होती है इस रोग से ग्रस्त रोगी जब अस्पताल में डाक्टर के सामने जाता है। तब वे सूजन पर टिंक्चर आयोडीन लगाकर उसे रुखसत दे देते हैं। रोगी चूहे के काटने की शिकायत भी यदि करे तो उसकी शिकायत की ओर कुछ भी ध्यान नहीं दिया जाता। वे तो अपनी परिपाटी के अनुसार चाहे जिस कारण से शोथ हो, टिंक्चर आयोडीन लगाकर छुट्टी पा जाते हैं, चाहे उधर रोगी की पीड़ा घटे या बढ़े उसकी उन्हें कोई परवाह नहीं। हमारी मान्यता है कि टिंक्चर आयो-

डीन मूषिक विष जन्य शोथ पर कदापि लाभकारी नहीं है, प्रत्युत हानिकारक है। कई केस इस प्रकार बिगड़ जाने पर डाक्टर लोग ऐसे अभिप्राय पर आजाते हैं कि बस रोगी के हाथ या पांव काट डालने चाहिये और तदनुसार बेचारे रोगी के हाथ पांव व्यर्थ ही में काटे जाते हैं। रोगी भी समझ लेता है कि खैर हाथ पांव कटने पर प्राण तो बचेंगे। किन्तु यह सौदा उसे बड़ा महंगा पड़ जाता है। मूषिक विष सर्व शरीरमें व्याप्त होजाने के कारण वह शरीर के दूसरे भागों में बड़े जोश के साथ उभर कर, रोगी के अमूल्य प्राणों को हरण कर लेता है। अस्तु,

मूषिक विष के केस में, स्थानिक उपचार के रूप में दशांग लेप का उपयोग विशेष लाभकारी पाया गया है।

शिरीष यष्ठी- नत चन्दनैला
मांसी हरिद्रा द्वय कुष्ठ बालैः।
लेपो दशांग सघृतः प्रयोज्यो
विसर्प कुष्ठ व्रण शोथ हारी॥

सिरस की छाल, मुलैठी, तगर, लालचन्दन इलायची, जटामांसी, हल्दी, दारु हल्दी, कूठ और सुगन्धवाला, सब द्रव्य समभाग लेकर महीन चूर्णकर मूषिकविष जन्य शोथ पर हम गुलाबजल में बांटकर लगाते हैं। घृत के साथ लगाने पर शीघ्र लाभ नहीं होता। गुलाब जल में घोलकर २ या ३ दिन लगाने पर शीघ्र ही लालसूजन अदृश्य होकर, जलन और पीड़ा भी दूर होजाती है। खाने के लिये रोगी को शार्ङ्गधरोक्त महायोगराज गुग्गुल का सेवन पाटला मूल की छाल के क्वाथ के साथ दोनों समय कराना चाहिये। किंतु असाध्य अवस्था में कोई भी इलाज कारगर नहीं होता। इस विषय में लेखक ने अपना अनुभव वैद्यकल्पतरु में प्रकाशित कराया था, वही अविकल रूप से यहां पाठकों के लाभार्थ हम उद्धृत किए देते हैं:—

लगभग १२ वर्ष के पहले सूरत के एक जैनी गृहस्थ को यही मूषिक विष जन्य विकार हुआ था सारे शरीर का रक्त बिगड़ गया था, तथा शरीर में अतिशय पीड़ा थी। कई प्रकार के इलाज करने से तथा विकार भी बहुत पुराना होजाने से रोग कुछ दब सा गया था। तथापि शरीर पर विवर्णता, बधिरतादि लक्षण स्पष्ट दिखलाई देते थे। इस पर से हमने ख्याल किया कि उसके शरीर में प्रविष्ट हुआ मूषिक विष नष्ट नहीं हुआ है। किंतु रोगी कहता था कि रोग बिलकुल दूर होगया। खैर, हमने कहा ठीक है। थोड़े ही दिनों के बाद उन्हें अकस्मात ठोकर लग गई। पैर में भयंकर शोथ होगई। पुनः हमारी उनसे मुलाक़ात हुई। स्थिति असाध्य देखकर हमारे प्रथम किये निदान का हमें पूरा विश्वास हुआ। वहीं के एक डाक्टर उस पर बार २ चीर फाड़ (आपरेशन) करते थे। पट्टियां बांधते थे, तथा कारबोलिक आईल और आयडोफार्म मुक्त हस्त से बर्ते जाते थे। किंतु डाक्टर साहब को लेशमात्र भी भ्रांति न थी कि रोगी के शरीर में चूहे का विष है। थोड़ा सा लग जाने से ऐसी भयंकर हालत होगई (रोगी को मधुमेह की शिकायत बिलकुल नहीं थी) उसका कारण भी शरीरस्थित पुरातन मूषिक विष ही था। चूहे के विष की ओर डाक्टरों का बहुत ही कम ध्यान जाता है, अतः उस विष से रोगी के शरीर का रक्त कितना बिगड़ जाता है, तथा उसका

पश्चात् असर (After effects) कहां तक गुप्त रहता है, यह बात उपचारक के ध्यान में नहीं आती अन्त में उक्त रोगी कई दिनों तक असाध्य दुःखदायक अवस्था में रहकर परलोक सिधार गया। अस्तु,

चिकित्सक एवं रोगी को भी यह भलीभांति स्मरण में रखना चाहिये कि औषधि प्रयोग से शारीरिक विष के लक्षण दूर होजाने पर भी चूहे का विष समूल नष्ट होगया ऐसा कदापि नहीं समझ लेना चाहिये। महायोगराज गुग्गुल का सेवन, पाठला (पाढ़ या पहाड़-मूल) की जड़ की छाल के क्वाथ के साथ, अथवा मंजिष्ठादि क्वाथ के साथ कराते ही रहना चाहिये। तथा खानपान में विशेष सावधानी रखनी चाहिये खटाई, मिर्च, गरम पदार्थ एवं उत्तेजक पदार्थों से सख्त परहेज रखना आवश्यक है।

मूषिक विष प्रतिकारार्थ अन्यान्य योग:—

सर्वसाधारण के लाभार्थ हम यहां पर और भी उत्तमोत्तम प्रयोग प्रकाशित किये देते हैं, जो मूषिक विष के संहार में अकसीर हैं—

(१) अंकोल की जड़ की छाल को बकरी के मूत्र के साथ पीसकर, यथायोग्य प्रमाण में, नित्य दो बार खिलाने से तथा इसी का लेप करने से शीघ्र ही सर्व प्रकार के चूहों का विष नष्ट होजाता है।

(२) शुद्ध हरताल, कमल के फूल, और शुद्ध मनसिल समभाग लेकर चूर्ण कर, फिर उसमें तुलसी के रस की लगभग २१ भावनायें देकर शीशी में भर रक्खें। मात्रा २ से ४ रत्ती तक, तुलसी पत्र स्वरस और शहद के साथ दिन में दो बार चटाना चाहिये। इससे चूहे का भयंकर विष भी शमन हो जाता है।

(३) मूषाकर्णी बूटी का प्रयोग :—

मूसाकानी लता जाति भी प्रायः चौमासे में होती है इसकी लंबाई १ से ३ फीट तक, घनी शाखाओं से युक्त भूमी पर फैली हुई होती है। पत्ते चूहे के कान के आकार वाले बीच में किंचित् कमानदार गोलाई लिये हुये श्वेत रोमावली युक्त हरे रंग के होते हैं।

मूसाकानी बूटी को लाकर उसके काढ़े से दंश स्थान को धोकर वही काढ़ा पिलाना चाहिये इसके स्वरसका भी लेप दंश स्थान पर किया जाता है।

दंश स्थान के पक जाने पर मूसाकानी बूटी के क्वाथ से व्रण धोकर उसे घृत में पकाकर मर-हम सा बना लगाना चाहिये। तथा मूसाकानी की पत्ती ६ माशे और काली मिर्च ५ नग एकत्र घोट कर दोनों वक्त पिलवें।

(४) सिरस के बीजों को आकके दूधमें ३ बार भावनायें देकर इसमें छोटी पीपल का चूर्ण मिला खूब घोट घाट कर चने जैसी गोलियां बना रक्खें प्रातः सायं १-१ गोली जल के साथ सेवन किया करें। अथवा अपामार्ग के कोमल तुर्रो का रस शहद मिला प्रातः सायं पिलायें।

(५) श्वेता पुनर्नवा की जड़ और त्रिफला समभाग एकत्र महीन चूर्ण कर रक्खें। प्रातः सायं १ से २ माशे की मात्रा में शहद के साथ सेवन करने से कुछ दिनों में लाभ अवश्य होता है —

बाह्य प्रयोगार्थ निम्न लिखित औषधियां लाभ दायक हैं—

(१) सिरस बीज, करँज बीज और नीमपत्र इन तीनों को गोमूत्र में पीस लेप करना चाहिये।

(२) मँजीठ धमासा हल्दी सेंधानमक पानी में पीस कर लेप करें। अथवा केवल मँजीठ और धमासा का लेप भी फायदा करता है। अथवा हाथी की लीद का प्रलेप भी लाभ दायक होता है।

(३) चित्रक मूल के चूर्ण के साथ पकाकर सिद्ध किये हुए तिल तेल को रोगी के तालु पर उस्तरे से बारीक चीरा दे र मर्दन करने से विशेष लाभ होता है।

(४) नागदमन पत्र के क्वाथ से धोना उसी की लुगदी लगाते रहने से भी लाभ होता है। अथवा राई को सिरका में पीस लेप किया करें। पुटासियम परमैगनेट का लेप लाभदायक है अथवा जहां चूहे ने दँश किया हो उस स्थान पर बहुत से घी का शीघ्र ही लेप कर देने से भी लाभ होता है।

(५) नारियल के फल के छीलड़ को १६ तोले जल से पीस लेप कर देने से मूषिक विष इस प्रकार नष्ट हो जाता है जैसे अम्ल कांजी इमली की खटाई को दूर कर देती है।

कहा है —

आढ़ कार्ध वसु भाग पेषितँ।
नारिकेल फल वल्कलोदकम् ॥
आखु संभव विषँ विनाशयेत्।
तिन्तिणीक मिव साम्लकांजिकम् ॥
(वैद्य मनोरमा)

—*—*—*—



कौलचिकम (Colchicum)

[ले०—कविराज एस० के० भारद्वाज आयुर्वेदभास्कर]



इस के वृक्ष का नाम Colchicum autumnale है। इसकी गाठें जून के मास के अन्त में इकट्ठी की जाती हैं इनके छिलके उतार कर इन को आडेरुख काट लेते हैं, और १५० दर्जे फारनहाइट से कम ताप पर गर्म करके शुद्ध कर लेते हैं यह औषध ब्रिटेन से यहां आती है।

ताजी गाठें १½ इंच लम्बी और एक इंच चौड़ी तिकोनी शक्ल की एक तरफ से चपटी और दूसरी ओर से महदब होती हैं। बाहर का छिल्का पतला और भूरे रंग का झिल्ली के समान होता है और अन्दर का छिल्का सुर्खी मायल जर्द रंग का होता है। बीच में से गांठ सफेद और ठोस होती हैं जिन में से एक दूध जैसा पदार्थ निकलता है, जिसका स्वाद कड़वा और गन्ध बहुत बुरी होती है इसे जहां से तोड़ना चाहें वहीं से टूट जाता है।

अवयव

(१) कालचींसीन

यह इसका एक सत्व अल्कलाइड है। जो छोटी २ कलमों में मिलता है। यह एल्कोहल में घुल जाता है लेकिन अकसर एसिडों के मिलने से इस के सत्व कालचीसीईन में तबदिल होजाते हैं।

(२) वेरेट्रीन

यह कम परिमाण में गैलिक एसिड के साथ मिली हुई होती है।

(३) एक शकील तेल

(४) स्टार्च शूगर और गम (गोंद)

विरोधी—सारे एस्ट्रीजेन्ट मिश्रण। टिंचर आफ आयोडीन और टिंचर आफ ग्वायकम।

मात्रा — २ से ५ ग्रेन - (चूर्ण की हालत में)।

मिश्रण

एक्सट्रैक्टम कोलचीसाई--

(Extractum Colchici)

यह ताजा कोरम से तैयार किया जाता है।

वाइनम कोलचीसाई

(Vinum Colchici)

शुष्क गांठ कालचीसाई १ भाग, शीरी वाइन ५ भाग।

मात्रा — ० से ३० बून्द।

(कालचीकम सीड्ज)

कालचीसाइ सेमिना

(Colchici Semina)

यह कालचीकम के वृक्ष के नीचे से इकट्ठे किये जाते हैं, और सुखा लिये जाते हैं।

पहिचान

बीज इन का लगभग ⅟₁₂ इंच गोल एक तरफ से नोकदार सुर्खी मायल भूरे रंग के खुरदरे और बहुत कठोर बड़ी कठिनता से चूर्ण होने वाले बीज होते हैं। गन्ध इनमें कुछ नहीं होती मगर स्वाद निहायत तेज और कड़वा होता है।

मस्टर्ड सीड्ज़ (कालीराई के बीज) जैसे होते हैं।

प्रभाव

बाह्य

त्वचापर लगाने से कालचिकम की इरीटैन्ट तासीर बढ़ जाती है। जिस स्थान पर लगाया जावे उस जगह हाईपरमिया होजाता है। त्वचा पर जलन पैदा हो जाती है यदि इसका चूर्ण सूंघा जावे तो छींके आने लगती हैं।

आन्तरीय

मुख-आमाशय और आंत्र

कमपरिमाण की औषध देनेसे बहुतसे आदमियों पर सिवाय इसके कुछ असर नहीं होता, केवल जिगर से कुछ पित्त निकलने लगता है लेकिन बाज आदमियों को इस से भूक बन्द हो जाती है। दस्त लग जाते हैं, जी मिचलता है. और कौलिक पेन की तरह पेट में शूल होता है। बड़ी मात्रा से मनुष्य के उदर में तीव्र शूल होने लगता है। वमन और अतिसार के साथ साथ रक्त भी मिला हुआ आता है अर्थात यह औषधि गैस्ट्रोइन्टस्टाइनल इरिटैंट है। इन लक्षणों के कारण रोगी बहुत कमजोर हो जाता है नाड़ी बहुत मंद पतली और तेज़ हो जाती है जिस को अंग्रेज़ी में "थ्रैडीपल्स (Thready pulse) कहते हैं।

त्वचाशीतल होजाती है और इसके ऊपर ठंडा पसीना आता है श्वास मन्द होजाता है फिर मृत्यु हो जाती है। यह प्रसिद्ध है कि सारे लक्षण इस कारण से ही नहीं होते कि कालचिकम का प्रभाव हृदय या श्वास के ऊपर पड़ता है बल्कि यह सब परिणाम गैस्ट्रोइटिराइनटिस का है, जिससे यह मृत्युकारक कोलैप्स होता है अगर कालचीसीन को हाइपोडरमिक इंजैक्शन द्वारा शरीर के अन्दर प्रवेश करें तो तब भी यही लक्षण उपस्थित होते हैं जिससे जाहिर होता है कि अल्कलाइड कालचिकम का प्रभावशाली सत्व है रक्त में पहुंचकर गेदों में स्रवित होजाता है और यहां पहुंच कर गैसट्रो इन्टीराइटिस के तीव्र लक्षण उत्पन्न कर देता है। बड़े अचम्भे की बात है, एक परिमित परिमाण से अधिक सेवन कराया जाये तो फिर उस से ज्यादा तीव्र लक्षण पैदा नहीं होते हैं। पशुओं में इसका हृदय पर प्रभाव ठीक नहीं पड़ता लेकिन वमन और दस्त अधिक तीव्रता से आते हैं

मांस पेशी संस्थान

औषधि की ठीक मात्रा देने पर कोई प्रभाव नहीं होता है जहरीली मात्रा से भी मनुष्य के होश हवाश में कुछ फर्क नहीं आता, ठंडे खून वाले जानवरों की अपेक्षा गर्म खून वाले जानवरों में इस औषध के सहन करने की शक्ति कम होती है, लेकिन सारे जानवरों में बड़ी मात्रा के बाद हिस (चेतना शक्ति) मफ़लूज होजाती है अन्त में मस्तिष्क व शुषुम्नाके केन्द्र मंद पड़ जाते हैं, श्वास संस्थान पर पक्षाघात का प्रभाव होजाने से मृत्यु होजाती है और कालचिकम का प्रभाव मांस पेशियों पर ऐसा ही पड़ता है जैसा कि वेसोट्रीन का पड़ता है।

वृक्क –

मूत्र पर पड़ने वाले कालचिकम के प्रभाव के बारे में डाक्टरों के भिन्न भिन्न मत हैं, परन्तु निश्चयात्मक बुद्धि से कुछ कहा नहीं जा सकता कि मूत्र के परिमाण पर इस का कुछ असर होता है

या नहीं। इसके विष से जब मृत्यु होती है तो इस दवा का अल्कलाइड रक्त के आन्तरिक भाग में होता है।

उपयोग

केवल नुक़रस (आमवात) की बीमारी के अतिरिक्त यह दवा और किसी रोग में सेवन नहीं होती। अगर इसे गठिया के दौरे के बीच में दिया जाये तो दर्द में बड़ी भारी शान्ति होती है। थोड़ी मात्रा में परिमाण के अन्दर दी जाय तो दौरे की तीव्रता को कम कर देती है। जब गठिया के रोगियों को डिसपेप्सिया, एग्ज़िमा, सरदर्द, न्यूराइटिस, ब्रांकाइटिस आदि शिकायतें हो जायें तो इस दवा से बहुत फ़ायदा होता है यह औषधि इस रोग में विशेष प्रभाव रखती है मगर यह मालूम नहीं कि यह प्रभाव किस प्रकार से होता है। अक्सर इस को अन्य पित्तरेचक दवाओं के साथ मिला दिया करते हैं, विशेष कर जब कि पित्तरेचक औषधियां किसी आमवात के रोगी को देनी हों और इन्टसटाईनल इरिटेशन के लक्षण उत्पन्न हो जायें तो इस के इस्तेमाल को कुछ समय के लिये छोड़ देना चाहिये क्योंकि यह दिल को सुस्त करती है।

इसके सेवन काल में कोष्ठबद्धता कभी नहीं होनी चाहिए क्योंकि यह शरीर के अन्दर जमा होना शुरू हो जाती है इसलिये इस को किसी रेचक औषधि के साथ मिला कर देते हैं। गांठों की निम्नवत बीज अधिक शक्ति रखते हैं।

औषधियां

आमवात में जब शोथ उग्ररूप में हो तो इस का सेवन बहुत लाभदायक सिद्ध हुआ है।

वाइनम कौलाचिकाई	२० बूंद
सोडा सैलीसिलास	१२ ग्रेन
सोडा बाई कार्ब	१६ ग्रेन
मैग सल्फ़	१ ड्राम
एक्वा मेन्थी पिपरेटा	१ औंस

ऐसी १-१ खुराक ३-३ घंटे के बाद आमवात के रोगी को सेवन कराना चाहिए।

हमने बहुत बार ऐसा देखा है जब आमवात में शोथ अधिक होती है संधियां सूजी रहती हैं रोगी शूल से बेचैन रहता है उस समय यह दवा ख़ास प्रभाव दिखाती है।

यकृत पित्ताधिक्य या पाण्डु, कामला में इस को पित्तस्राव करने के लिए देना अभीष्ट हो तो उस समय मूत्रल औषधियों के साथ देने से कौलचिकम पित्त का स्राव कर देता है। क्रानिक गाउट के रोगियों में जब रोग का वेग न हो परन्तु एक दो संधि पर शोथ शेष हो ज़रा सी सर्दी लग जाने पर अथवा वातल वस्तु खाते ही शूल शोथ हो जाता है उस समय यह आयुर्वेदीय प्रयोग विशेष लाभ देता है।

अश्वगंधा	१ तोला
विधारा	१ तोला
सुरंजान शीरीं	४ तोला
यवक्षार	१ तोला
सनाय	६ माशा

सब को कूट छान कर सम भाग मिश्री मिला कर ३-३ माशा प्रातः सायं उष्ण जल से सेवन कराने से जमी हुई आमवात की सब रतूबत बह जाती है।

चाय में विषैला तत्व

[ले०—श्री वैद्यराज ईश्वरदत्त मिश्र 'आयुर्वेद मणि']



चाय का प्रथम उत्पत्ति स्थान चीन देश है, चीन के अतिरिक्त हिन्दुस्थान तथा लंका में भी इसकी उत्पत्ति काफ़ी होने लगी है। हमारे नव शिक्षित युवकों में इसका प्रचार देखा देखी अधिकाधिक बढ़ता जारहा है। वे लोग इस के दुर्गुणों पर ध्यान न देते हुये रात दिन प्रयोग करते हैं। हम जानते हैं कि प्राणहारी सोमल आदि विष भी युक्ति युक्त मात्रा में देने से प्राण देने वाले हो जाते हैं परन्तु इस को अच्छे शास्त्रानुभवी चिकित्सक ही युक्ति युक्त मात्रा में देकर प्राण देने वाला बना सकते हैं, अन्य नहीं।

चाय के गुण-:

रूक्ष, उष्ण, लतकी, कटु, विश्लेषणी, द्रव को शोषने वाली है। इसमें खास कर टैनिक एसिड् और थीन के भाग निम्न लिखित प्रकार से होते हैं टैनिक एसिड् १ गिलास में १० से १२ हिस्से तक रहता है, और थीन २ से ४ हिस्से तक।

टैनिक एसिड्

इसका प्रभाव ५ प्रकार के कफों में से क्लेदन नामक जो कफ है उसके ऊपर इतना बुरा पड़ता है, कि मन्दाग्नि होकर पाचन शक्ति कम हो जाती है और अंतड़ियों में भी इसका बहुत बुरा असर पड़ता है, जिससे कि मलावरोधकादिक शिकायतें होने लगती हैं।

थीन

इस विषैले तत्व का प्रभाव खास कर ज्ञानेन्द्रियों पर तथा हृदय पर घटित होता है, जिससे कि क्रमशः उन्माद, हृदय धड़कन आदि व्याधियों का सामना करना पड़ता है। चायके पीते ही जो ताज़गी व फुर्ती प्रतीत होती है वह इसी (थीन) के ही गुण हैं इसके अतिरिक्त निद्रा नाश, शरीर कम्पनभी होता देखा गया है। लोग चाय को मस्तिष्क को स्फूर्ति देने वाली समझते हैं यह केवल भ्रम है इसके अतिरिक्त लोग यह भी कह सकते हैं कि इससे हमें अभी तक कोई भी हानि नहीं हुई किन्तु इसके गुणों का अनुभव कुछ दिन पश्चात मालूम होगा। आजकल लोग चाय की बुराइयों पर ध्यान न देते हुए इसे दुनियां में सभ्य संसार का

हिरण्यतुत्थासव

उपरोक्त प्रयोग कूट कपड़ छन कर २ छटांक लेकर मृत संजीवनी सुरा (७५ फ़ी सदी अल्कोहल वाली) १ पौंड में मिलाकर काच के डाट वाली बोतल में डाल कर रख दें। और १ मास बाद फ़िल्टर पेपर में छान लें।

मात्रा

१ ड्राम से २ ड्राम तक पानी के साथ दिन में ३-४ बार सेवन करावें।

रोग

आमवात के लिये विशेष हितकर है।



सर्वोत्तम पदार्थ मानकर उपयोग में लाते हैं फलत: वे चाय की उपासना से अपने मस्तिष्क स्थित ज्ञान तन्तुओं को निर्बल बनाकर मन्दाग्नि का आवाहन करलेते हैं. मन्दाग्नि से मनुष्य के शरीर पर कितना बुरा प्रभाव पड़ता है इसके विवेचन की आवश्यकता नहीं. आचार्य सुश्रुत का कथन है कि अग्नि मूलं बलं पुंसाँ रेतो मूलंहिजीवनम्। अर्थात् अग्नि ही शरीर में बल की जड़ है और शुक्र ही मनुष्य के जीवन का मूल है। अक्सर देखा गया है कि चाय के सेवन करने से खुराक बहुत कम हो जाती है। अन्नका ठीक २ परिपाक न होने से उत्तमरस भी नहीं बन पाता, रसके अभाव से अन्य धातुएं भी क्षीण होने लगती हैं जैसे कहा है —

रसाद्रक्तं ततो मांसं मांसान् मेदः प्रजायते।
मेदसोऽस्थि ततो मज्जः मज्जाया शुक्र संभवः–

अर्थात् रस से रक्त, रक्त से मांस, मांस से मेदा, मेदा से हड्डी, हड्डी से मज्जा, मज्जा से शुक्र क्रमशः बनते हैं।

इसी प्रकार इस विष रूपी चाय का असर क्रमशः शुक्र तक प्राप्त होकर प्रमेह आदि भयंकर रोगों को कर देता है. और होने वाले जो बालक बालिकायें हैं उनमें भी इसका दुर्गुण प्राप्त होकर जीवन भर नेत्रों में दुर्बलता, तथा शुक्र संबन्धी व्याधियों से ग्रसित रहते हैं। एतदर्थ जिन्हें वीर्य संबन्धी कोई विकार हो अथवा वीर्य की रक्षा चाहते हों तो चाय का सेवन कदापि न करें क्योंकि चाय में जितने गुण हैं वे सब वीर्य को हानि पहुंचाने वाले हैं, जैसे शुक्र का गुण शीतल है तो चाय का उष्ण, शुक्र का गुण भारी है तो चाय का हल्का इसी प्रकार क्रमशः शुक्र के गुण स्निग्ध, मधुर, गाढ़ा, और पोषक हैं तो चाय के गुण क्रमशः रूक्ष, कटु, विश्लेषणी और शोषक हैं। अतएव चाय को अत्यन्त हानिकर पदार्थ समझ कर हमेशा इससे दूर रहने का प्रयत्न करना चाहिए। चाय पीने की आदत भी एक प्रकार का व्यसन है जैसे गांजा, भांग, शराब आदि व्यसनों को छोड़ने में कष्ट मालूम होता है इसी प्रकार चाय भी मनुष्यों से बहुत कठिनाई से छूटती है। एतदर्थ इस व्यसन से अपने आप को अलग रखना ही श्रेयस्कर है और जिसकी आदत पड़ गई हो उसे धीरे धीरे छोड़ देना ही लाभदायक होगा किन्तु देखा गया है चाय के प्रेमी लोग इन सब दुर्गुणों को न समझते हुए अपने नवजात बालकों को भी इसे हितकर समझ कर पिलाते हैं परन्तु बालकों के उस सुकोमल शरीर पर इस उत्तेजक पदार्थ का क्या प्रभाव पड़ता है और इस से क्या हानि होती है उसे व्यक्त करना कठिन है इस के लिये बाल चिकित्सा के एक सिद्ध हस्त डाक्टर साहब का कथन है कि मैं बच्चों को दिनमें तीन बार शराब पिला देना पसन्द करता हूं, परन्तु चाय और काफी जैसे उत्तेजक पदार्थों को देना नहीं चाहता।" किन्तु हमारे भारत वर्ष में तो ग्रीष्म ऋतु में भी इस का प्रयोग करने में नहीं संकुचित होते। एतदर्थ मेरा कथन यही है कि ऐसी उत्तेजक तथा दुःस्वाद वस्तु तो सेवन करना कहां तक ठीक हो सकता है कि जिस का दुःस्वादु मिटाने के लिये दूध और शक्कर मिलानी पड़ती है। यदि प्रतिदिन पीने वाले व्यक्तियों को भी सिर्फ जल में चाय उबाल कर दे दी जाय तो उन्हें भी वमन होना असम्भव नहीं होगा। इसीलिये यदि इस विषरूपी

चाय को त्याग कर यदि केवल दूध और शक्कर का ही सेवन किया जाय तो कितना लाभदायक होगा यह बताने की आवश्यकता नहीं है। यदि क्षीर का भी अभाव हो तो हमारे आचार्यों के बताये हुए निम्नलिखित उषः पान ही का सेवन करना अत्यन्त लाभदायक होगा,

उषःपान

अर्शः शोथग्रहण्यो ज्वर जठर जरा कुष्ठ मेदो विकारा। मूत्राघातास्त्र पित्त श्रवण गल शिरः श्रोणि शूलाक्षिरोगा ॥ १ ॥ ये चान्ये वातपित्त क्षतज कफ कृता व्याधयः सन्ति जन्तोः। तांस्तानभ्यासयोगा दपहरति पयः पीतमंते निशायाः ॥ २ ॥

अर्थात सूर्योदय होने के पहले ही यदि शीतल जल का पान किया जाय तो बवासीर, शोथ, संग्रहणी, ज्वर, उदर के रोग, बुढ़ापे को नहीं आने देता, कोढ़, मेद रोग मूत्राघात मूत्र कृच्छ्र रक्त पित्त कर्ण रोग कन्ठ के रोग शिरोरोगकमर का दर्द नेत्रा भिष्य-न्दादि रोगों के लिये अत्यन्त हितकारक है। वात पित्त कफ और क्षतज सम्बन्धी जो व्याधियां हैं, उन्हें भी नाश करने वाला है, इसके अतिरिक्त मलावरोध के लिये तो रामबाण के ही समान हितकर है बड़े खेद की बात है कि ऐसे अमृत तुल्य उषः पान को प्रातः काल काम में न लाते हुए इस विषैले तत्व का सेवन करते हैं। मैं आशा करता हूं कि आप लोग विचार पूर्वक इस से मुक्त होकर भयंकर व्याधियों से बचते हुए उषः पानका सेवन कर स्वतन्त्रता को प्राप्त करेंगे।

सर्वे कुशलिनः सन्तु सर्वे सन्तु निरामयाः।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु माकश्चित् दुःख भाग्भवेत्



नाम	लक्षण	घातक मात्रा	घातक समय	चिकित्सा
संखिया (हरताल) (रुसिल)	खाने के बाद मेदे में जलन, दर्द, बेहोशी, क़ै अतिसार, प्यास, गलेमें ऐंठन. हृदय की गति क्षीण नाड़ी मंद और श्वास कष्ट, त्वचा चिपचिपी, शीतल मूर्च्छा होकर रोगी मर जाता है	१ रत्ती से २ रत्ती तक	२० मिनट से लेकर १ दिन या १० दिन तक	स्टमक साइफ़न से मेदे को धोना या क़ै कराना एपोमार्फीन हाइकलोराइड का इन्जैक्शन लाइ०र फ़ेरीपर क्लोराइड १।। फ्लुइड औंस को २ औंस पानी में पिलायें (देखो संखिया)
ट्रिकनियां	धनुवति (टिटेनश) आक्षेप, अंग मर्द कम्प नेत्र कनिनीका का विस्तार, नाड़ी मंद, सुनने तथा देखने की शक्ति तेज, चेहरा नीला, चेतना अन्त तक।	[illegible] ग्रेन से १ग्रेन तक	१० मिनट से ६ घंटे तक	कोयले काचूर्ण, पान का रस गोघृत क्लोर फार्म या ईथर सुंघाना मेदे को पुटेशियम पारमेंगनेट से धोना पोटेशियम ब्रोमाइड क्लोरल हाइड्रेट को बड़ी मात्रामें गुद द्वारा देना टि० एकोनाइट टि० बेलाडोना क्लोरोफार्म व क्लोरल इन में से किसी को पिलाना।
धतूरा	मुख, कंठ शोष, तीव्र पिपासा, बेहोशी क़ै सिर में चक्कर, गशी, फिर मृत्यु। इस के नशे में चारों ओर दरोदीवार सुनहरी दिखाई देती हैं।	१ माशा		देसी नीलेथोथे से कै कराना सरको शीतल रखना उत्तेजक वस्तु देनातेज विरेचन देने के बाद अफीम देना काफी का काढ़ा देना, एरण्डमूल कल्क, बच दूध, कपास बीज कषाय, सर चेहरे गरदन पर शीतल पानी डालें।
एकोनाइटीन एकोनाइट (वत्सनाभ)	मुख कंठ में सनसनाहट बाद मुंह सुन्न हो जाता है क़ै दस्त, मेदे में दर्द, जलन और गर्मी कानों में घुनघुनाहट पुतली फैली हुई, दिल का डूबना, होश अन्त तक रहता है पट्ठों पर फ़ालिज गिर जाता है।	[illegible] ग्रेन	१० मिनट से ६ घंटे तक	सल्फ आफ जिंकसे वमन करायें। कास्टरायल की पूरी मात्रा दें बरान्डी गर्म पानी में या एयोनियां बार २ देते रहें काफी दें गर्म मालिश करें गर्म पानी की बोतल इधर उधर रक्खें बिजली लगायें पीठ पर राईलगायें। गूलर चौलाई शामन्ठ स्वर्णी जामुन इनका रस देहींग दें।

नाम	लक्षण	घातक मात्रा	घातक समय	चिकित्सा
एलिटेरियम	आंतों में दर्द, शीतल स्वेद, अतिसार, वमन ठंडा पसीना आकर मृत्यु होजाती है।	½ ग्रेन	१दिन	बीहदाने, इसबगोल, रेशाखतमी का लुआब देना,गोंद का पानी गुद द्वारा देना, थोड़ी मात्रा में अफ़ीम देना, गर्म पानीसे स्नान कराना।
अफ़ीम	सर में चक्कर, बेहोशी, (निश्चेष्ट) श्वास खर्राटे के साथ, श्वास मंद, नाड़ी क्षीण चेहरा सुर्ख़, आंखें बन्द, पुतलियां सुकड़ी हुई हिलाने डुलाने से होश में नहीं होता, श्वास में अफ़ीम की गंध।	४ ग्रेन (२ रत्ती।	४५ मिनट से १२ घंटे तक	स्टमक पम्प से मेदेको साफ़ करें, क़ै करायें, चेहरे सर गर्दन पर शीतल जल छिड़कें,होश आने तक हथेली तलवोंको खुजलावें टहलायें, सोने न दें, होश आने पर चाय काफ़ी माजू इनका तेज़ कथ पिलायें बेहोशीके कारण क़ै न हो तो एपोमार्फ़ीन का इंजैक्शन देने से फ़ौरन क़ै होजाती है। श्वास के क़ायम करने के लिये बिजली लगायें। हींग की बड़ी मात्रा पानी में घोलकर पिलायें, अदरक का रस पिलायें, कपास की जड़ का चूर्ण, पीपल त्वग कषाय दें।
ऑग्ज़लिक एसिड्	कंठ,मेदे में जलन और दर्द,काले रंग की खून मिली हुई वमन, खाना पीना, सांस लेना निगलना कष्ट से,तीव्र प्यास, ओष्ट और मुख का अन्दर से जलकर सफ़ेद होना, हिक्का शरीर में ऐंठन और श्वासावरोध होकर मृत्यु।	½ औंस	१० मिनट से कुछ अधिक	इसमें क़ै व स्टमक पम्प काम में न लायें। खड़िया मिट्टी, सफ़ेदी चूना १। तोला सवापाव जल में घोलकर दें—दूध बार २ पिलायें। विशेष चिकित्सा के लिये (देखो एसिड् ऑग्ज़लिकम्)

नाम	लक्षण	घातक मात्रा	घातक समय	चिकित्सा
एसिटेटआफ लैड	कंठ में खुश्की व तंगी मेदे व आंतों में दर्द प्रसरित मांस पेशियों पर फालिज अन्त में सन्यासावस्था।	+	+	फौसफेटआफसोडा, मगनेशिया, सल्फेट आफ मगनेशिया, सिरका पिलाना तथा गर्म, पानी से स्नान कराना।
एसिटेटआफ कापर (जंगार)	नीलो या हरे रंग की तीव्र वमन, सिर दर्द, उदर शूल, पीलिया, अतिसार।	+	+	स्टमक पम्प से मेदे को साफ करना, आटा पानी में घोलकर पिलाना—
आयोडीन	गले का जलना मुंह आजाना अतिसार में पित्त निकलना, दृष्ट मांद्य हाथ पांव का कांपना।	+	+	स्टमकपम्प से मेदे को धोना पानी में आटा घोल कर पिलाना।
बेलेडौना	(देखो धतूरे को)	+	×	+
विजिया गांजा चरस	इन से मृत्यु नहीं होती यदि विषैला प्रभाव हो तो पट्ठे कठोर होजाते हैं—बेहोश मनुष्य कभी २ हंस पड़ता है।	+	+	कै लाने वाली दवा, दही का पिलाना खट्टी वस्तु देना जैसे- इमली नीबू- आम का अचार मट्ठा, चावल की धोवन, सोंठ पड़ी दही,
एसिड सलफ्यूरिक नाइट्रिक या साल्ट स्प्रिट	मुख ओष्ठ जले हुए और उन पर कभी २ सफेद दाग (साल्ट स्प्रिट) पीले या काले दाग (नाइट्रिक एसिड, लसफ्युरिक एसिड)	+	+	वमन कारक औषध न दो पानी में खड़िया मिट्टी मिलाकर टेबल स्पून भर पिलाओ। जैतून का तेल (२॥ छ०) १० छ० पानी दूध बराबर का मिलाया दो।

नाम	लक्षण	घातक मात्रा	घातक समय	चिकित्सा
	२— मुख कंठ और उदर में शूल । ३— तीव्र प्यास । ४— रक्त मिश्रित वमन । ५— बोलने में कष्ट । ६— मूर्च्छा ।			
कार्बोलिक एसिड,	१— मुख और ओष्ठों पर सफेद दाग होते हैं । २— पट्ठे नरम और बेकार । ३— मूर्च्छा । ४— श्वास में कार्बोलिक की गंध ।	+	+	साल्ट या सल्फेट आफ सोडा ½ पाइन्ट पानी या दूध में जैतून का तेल (२।। छ० में १० छ० पानी) दूध बहुत पिलाओ मद्य पांव को गर्म रखना कृत्रिम श्वास
कास्टिक सोडा व पोटास	उदर में शूल और मरोड़, मूर्च्छा ।	+	+	सिरका नीबू का रस या चूने को पानीमें मिला कर दो । दूध दो । जैतून का तेल –२।। छ० पानी १० छ० मिला कर दो ।
पिसा कांच कीलें	इससे उदर में तीव्र शूल होता है ।	+	+	हलवा, गेहूं का दलिया, आलू की खिचड़ी इसबगोल की भूसी, बहुत सारी कंचाई आये भिंडी का शाक, लेसदार वस्तु में मिलाकर दो, लुआब में फंस कर शौच के साथ निकल जावेगी ।

नाम	लक्षण	घातक मात्रा	घातक समय	चिकित्सा
मिट्टी का तेल	मुख तथा कंठ में जलन और दर्द । वमन पदार्थ में तेल की बू, श्वास में मिट्टी के तेल की बू, मूर्च्छा।	+	+	वमन कारक दवा दो, बरांडी से पांव तथा शरीर को उष्ण रक्खो।
कै टट करने वाले विष मांसका विष मछली शाक	वमन होना, अतिसार, थकान, पट्ठों की कमज़ोरी जिह्वा का बादामी रंग, ज्वर, नाडी तीव्र, नोट— विशूचिका के समान लेकिन हैज़े में कभी ज्वर नहीं होता।	+	+	वमन कारक वस्तु, अरंडी का तेल २ औंस बरण्डी और गर्म दूध, बदन की गर्मी, क्रित्रिम श्वास क्रिया।
मरकरी (पारा)	मुख का स्वाद कसैला वमन और अतिसार, जिह्वा सफेदी मायल, मूर्च्छा।	+	+	मैदा और पानी घोल कर पिलाओ। फिर वमन कारक औषधियां दो। जैसे गर्म पानी और नमक लेमोनेट और बरान्डी
तारपीन का तेल	श्वास खर्राटेदार पुतलियां सुकड़ी हुई, पट्ठे फड़कते हुए और कठोर। श्वास में तारपीन की गंध और और मूत्र में बनफ़से की।	+	+	वमन कारक औषध दो। सारक दवा दो। दूध— मैदा पानी में मिला कर दो।
मद्य अल्कोहल	मुख मंडल और नेत्र रक्त, ओष्ठ नीले रोजाना, चक्कर आना, पैरों का लड़खड़ाना, मूर्च्छा, श्वास में मद्य की गंध।	+	+	रोगी के मुख पर शीतल जल के छींटे मारकर जगादो, गर्म चाय, क्रित्रिम श्वास क्रिया करें एमोनियां का सुंघायें,

कोकेन	रोगी ।। मुख फीका और दुबला, नाड़ी और श्वास तीव्र, त्वचा शुष्क, पट्ठों का कम्प, मूर्च्छा।	+	+	१— वमन कारक औषध २— नमक और पानी पिलाना ३— बरांडी पिलाना ४— क्रित्रिम श्वास
कुकर मुत्ता (सांप की छतरी)	पिपासा, उदर शूल वमन तथा अतिसार रोगी पहले बहुत ऊधम करता है फिर शान्त होजाता है श्वास खर्राटेदार, पुनलियां फैली हुई, मूर्च्छा।	+	+	वमन कारक दवा, विरेचक योग, अरंडीका तेल २ औंस, बरान्डी। हाथ और पांव गरम रखना।
फ़ास फ़ोरस	दर्द तथा वमन का होना, वमन में लहसन की गंध, और अंधकार में चमक, नाक से खून निकलना, ऐंठन।	+	+	वमन कारक दवा दो, १ पाइन्ट जल में १० ग्रेन पो० परमेगनेट मिलाकर दो। तेल मत दो।
कुचला	जोरदार ऐंठन और पीठ का टेढ़ा होना। जबाड़ों का बन्द होना। आंख के ढेले उभरे हुए और पुतलियां फैली हुई, श्वास में कष्ट, नाड़ी तीव्र तथा क्षीण	+	+	वमन कारक दवा दो, १० ग्रेन परमेगनेट आफ पोटास १ पाइन्ट गर्म पानी में, तेज चाय व काफी, क्लिोरोफार्म देना, क्रित्रिम श्वास क्रिया करना।



सेंधा नमक के चूर्ण को प्रयोग करने से सर्प विष नष्ट होजाता है। शिरस के फूलों के रस के साथ ५ दिन तक श्वेत मिरचों की भावना देकर रख छोड़े। सर्प दंष्ट मनुष्य को इनका पान नस्य और अन्जन कराना चाहिये यह सर्प दंष्ट के लिये अच्छा है। कलीहारीकी जड़ का नस्य पानी के साथ लेने से सर्प विषनष्ट हो जाता है।

कृत्रिम विष :—

यह पदार्थ उन वस्तुओं के संयोग से बनता है इस लिये इसको संयोगज विष या गर कहते हैं इस के लक्षण निम्न लिखित होते हैं। रक्त स्राव ज्वर, शोफ, आंखों में पीला पन, आलस्य जड़ता, खांसी, श्वास और वलक्षय कर देता है। १५ दिन या एक मांस बाद शरीर में उपरोक्त बाधायें करता रहता है इसके लिये सुवर्ण भस्म सोना माखी भस्म थोड़ा सा भाग चूना मिलाकर और शक्कर मिला सेवन करना चाहिये।

और भी अनेक स्थावर जंगम विष हैं जिनके लिये विस्तार पूर्वक सुश्रुत आदि ग्रन्थों को देखना चाहिये।

आधुनिक वैज्ञानिकों ने बड़े २ भयंकर विष गैसेज (वायवीय) या "रेज" (तैजस किरण) निकाले हैं जिनके कि प्रयोग करने पर संसार को क्षण मात्र में नष्ट किया जा सकता है। ऐसे विष जो कि आकाश या वायु आदि महाभूतों के विशेषांश संयोग से विषरूप हैं जिनको कि उन २ महाभूतों में ही फैलाकर क्षणभर में संसार का प्रलय किया जा सकता है। ये सब भी पांच भौतिक होने पर उन २ महाभूतों का विष क्रिया करने वाला विशेषांश उनमें मानना ही पड़ेगा। इसलिये विषों का प्रयोग, शब्द से, स्पर्श से रूप, रस या गन्ध द्वारा भी होना सम्भव है। जैसे प्राचीन समय में शाप (जो कि क्रोध से उत्पन्न होने वाला शब्द मात्र है उस शब्दसे ही शप्त मनुष्य नष्ट हो जाता था या मारण मोहन उच्चाटन आदि कर्म मन्त्रों के द्वारा (जोकि शब्द मात्र हैं) करते थे। स्पर्श से भी विष कन्या आदि द्वारा प्रयोग करते थे रूपसेदिव्य सर्पों के दृष्टि द्वारा होता ही है रस और गंध प्रत्यक्ष स्थूल हैं ही।

मेरा विचार है कि जैसे नाशक जहरीली "गैसेज" या "रेज" या अन्य कोई साधन आधुनिक वैज्ञानिकों ने संसार में प्रत्यक्ष कर दिये हैं यदि विचार पूर्वक इस में अनुसन्धान किया जाय तो सम्भव है कि इनके रोधक गैसेज या "रेज" भी मालूम की जा सकती है जिससे व्यर्थ प्रलय को हटाया जासकता है। क्योंकि भूत पांच ही हैं और सारा "जोड़ तोड़" इनका ही है।

चन्द्रशेखर वैद्य



कहानी

विषैली सुन्दरी

(महावीर प्रसाद जैन)



बाबा आदम के निषिद्ध फल खाने के बहुत से कारणों में से एक यह भी था कि उस फल को खाने से उन्हें मना कर दिया था, जिस वस्तु से हमें मना किया जाय न जाने उसके प्रति हमारी उत्सुकता क्यों और भी तीव्र हो उठती है। सिगनर गिवानी को अभी उस कमरे में आये हुये केवल दो दिन हुवे थे परन्तु उसकी दृष्टि बार २ बन्द खिड़की के द्वार पर पड़ कर लौट आती थी। यदि मकान मालिकिन उसको वह खिड़की खोलने से मना करती तो शायद वह महीनों तक उसकी ओर ध्यान भी देता परन्तु अब उसकी उंगलियां मकान मालिकिन की आज्ञा के विरुद्ध कोने से लगी हुई एक पुरानी छतरी की तीली निकाल कर मोड़ने में लगी हुई थीं। आखिरकार उसने मुड़ी हुई तीली से खिड़की में लगे हुए ताले को खोलकर भूमि में डाल दिया और धक्का देकर दोनों किवाड़ एक साथ खोल डाले।

खिड़की के नीचे एक अद्भुत बगीचा था। दक्षिणी इटली के उस गांव का तो कहना ही क्या जहां से वह यहां पैडुआ के विश्वविद्यालय में रसायन शास्त्र का अध्ययन करने आया था, उसने किसी दूसरे नगर में भी ऐसे विचित्र पौदों और पुष्पों का संग्रह नहीं देखा था। उद्यान के बीचों बीच संगमर्मर का एक बहुत ऊंचा और पुराना फव्वारा था जिसके टूटे हुये मुख से पानी की एक मोटी धार अविराम गति से निकल कर आस पास की भूमि को तर कर रही थी, पत्थर के हौज का भग्नावशेष अपनी ठोस सुन्दरता की बर्बादी को इधर उधर छितराए पड़ा था, परन्तु सूर्य की रंग बिरंगी किरणें अब भी पहिले की भांति पानी की बूंदों के साथ खेल कर रही थीं जैसे उन्हें अपने चारों ओर के परिवर्तन का ज़रा भी ध्यान न हो।

यकायक गिवानी की दृष्टि एक ओर के लता कुञ्ज से निकलते हुये एक बूढ़े आदमी पर पड़ी जो प्रत्येक पौदे के पास जाकर उसे अत्यन्त ध्यान पूर्वक देखता हुआ हौज की तरफ बढ़ रहा था ऐसा मालूम होता था कि वह उनसे बचना चाहता है क्योंकि वह किसी पौदे को हाथ से नहीं छूता था बल्कि फैली हुई लताओं से इस प्रकार बच २ कर चल रहा था जैसे वह विषैले सर्पों के मध्य से जान बचा कर धीरे से निकल जाना चाहता हो। वह हौज के पास आकर खड़ा हो गया।

हरे २ पत्तों पर एक अत्यन्त सुन्दर सुनहरे रङ्ग का बड़ा सा फूल हौज के पानी में

इधर उधर ऐसे तैर रहा था जैसे परियों की रानी अपने ज़मर्रुद के खटोले पर बैठ कर आकाश की सैर कर रही हो। ऐसी सुन्दर तथा कोमल वस्तु इतनी भयोत्पादक होगी इस बात का गिवानी को ध्यान भी न था—परन्तु उस बूढ़े ने डरते २ अपना दस्ताने से मंढ़ा हुआ हाथ उपरोक्त पुष्प की ओर बढ़ा कर तुरन्त पीछे खींच लिया और ज़ोर से गला साफ करके ऊंची आवाज़ से "बियट्रीस, "बियट्रीस" पुकारने लगा।

"अभी आती हूं पिताजी। सामने के मकान से आवाज़ आई। गिवानी को वह आवाज़ मुदित प्रभात के उदित होते हुये सूर्य की नाईं सुन्दर जान पड़ी और ठीक अन्धकार को भेद कर 'उदित होते हुये सूर्य की भांति घनी हरी लताओं को चीर कर एक सुन्दरी ने उस उद्यान के धुंधले वातावरण को अपने आगमन से चमका दिया।

"बियट्रीस इधर देखो तुम्हारे प्यारे पुष्प की क्या दशा हो रही है। मुझे जान पड़ता है कि अब मुझे इसको बिलकुल तुम्हारे अधीनस्थ छोड़ना पड़ेगा वरना किसी दिन इसके निकट पहुंच कर मुझे अपनी जान से हाथ धोने पड़ेंगे।" बूढ़े ने कहा।

बियट्रीस ने प्रेम से पुष्प की पत्तियों को चूम कर कहा:—

"आप चिन्ता न कीजिये मैं अपने प्यारे 'कालकूट' की आप सेवा कर लूंगी" और यह कह के उसने पुष्प के लम्बे डण्ठल को पानी से निकाल कर गले से चिमटा लिया। गिवानी को ऐसा मालूम हुआ जैसे दो सगी बहिनें गले मिल रही हों। वह सुन्दर पुष्प और युवती एक दूसरे से भिन्न थे परन्तु फिर भी कितनी एकता थी उनमें! कितनी समानता!!

गिवानी ने खिड़की बन्द करदी।

दूसरे दिन गिवानी ने मकान मालिकिन से बातों ही बातों में पूछ लिया कि खिड़की के नीचे वाला बाग़ जादूगर डाक्टर रिपैचिनी का है उसको मकान मालिकिन जादूगर वाली बात पर विश्वास नहीं हुआ। अस्तु, उसने विद्यालय पहुंच कर डाक्टरी के प्रौफेसर सिगनर प्रेटो बेग्लोनी से रिपैचिनी का जिक्र किया।

उन्होंने उत्तर दिया—"डाक्टर रिपैचिनी केवल पैडुआ के ही नहीं बल्कि समस्त योरुप के भिषगाचार्यों की नाक हैं। परन्तु फिर भी मैं तुम्हें उनकी संगति से बचने की ही सलाह दूंगा—"

गिवानी ने आश्चर्य से पूछा कि उनकी इस सलाह का क्या कारण है?

प्रोफैसर बेग्लोनी ने मुस्कराकर कहा:—"कहीं तुमने उसकी लड़की बियट्रीस को तो नहीं देख लिया है जो उसके लिये इतने उत्सुक होरहे हो—"

गिवानी:—"जी हां, मुझ को उन के दर्शनों का सौभाग्य प्राप्त हो चुका है।

प्रोफैस्सर ने गम्भीर स्वर में कहा:—"यह तो ठीक है कि रिपैचिनी की लड़की अत्यन्त सुन्दर है परन्तु वह स्वयम बड़ा भयानक आदमी है। उसने भिन्न भिन्न प्रकार के विषों का अनुसंधान करके यह थ्योरी बनाई है कि प्रत्येक रोग का इलाज विषों किया जा सकता है। उसके प्रसिद्ध उद्यान में संसार के सबसे अधिक विषैले पौदे और पुष्प एकत्रित

किये गये हैं। उसे अपनी वैज्ञानिक खोज के सामने आदमी की जान की जरा भी पर्वाह नहीं है यदि तनिक भी बात जानने के लिए उसे सैंकड़ों हत्याएं करनी पड़ें तो भी वह नहीं चूकेगा। इसलिये मैं तुम्हें उससे बचने को कहता हूं। कि कहीं उसके किसी एक्सपेरिमेन्ट का शिकार न हो जाओ यह कह कर प्रोफैस्सर पेट्रोबेग्लोनी अपनी क्लास के कमरे में चला गया।

विद्यालय से लौटते हुवे गिवानी ने रास्ते में एक फूल बेचनेवाली से ताजा गुलदस्ता मोल ले लिया और उसे लिये हुवे अपने कमरे की खिड़की में जाकर बैठ गया। आज उद्यान में उसे एक अद्भुत दृश्य दिखाई पड़ा, उसका सांस रुक गया उसके गले में फंदा सा लग गया। चिल्लाने की कोशिश करने पर भी वह चिल्ला न सका। बियट्रीस हौज के किनारे झुकी हुई कल वाले सुनहरे फूल को ऐसी तन्मयता से तोड़ने में व्यस्त थी कि उसे अपने पैर की ओर पत्तों में रेंगते हुवे भयानक सर्प का जरा भी ध्यान न था। गिवानी ने यकायक उसे इस खतरे से सूचित करने को मुंह खोला ही था कि एक ऐसी घटना हो गई जिसे देखकर उसका रक्त धमनियों में जम सा गया। वियेट्रीस के हाथ से टूटे हुवे फूल के डन्ठल से एक या दो बून्द रस निकल कर सप पर गिर पड़ा और वह कुछ क्षण तक तड़प कर वहीं ठन्डा हो गया मरा हुवा सर्प बियट्रीस की दृष्टि से भी छुपा न रहा, उसे देखकर वह केवल मुस्कुरा दी और अपने हाथ के फूल को चूमकर गले से लगा लिया

"हे भगवन् ! मैं इसे वन देवी कहूं या विषैली नाग कन्या ?" "गिवानी ने मन में कहा। धीरे २ टहलती हुई बियट्रीस ठीक गिवानी की खिड़की के नीचे आकर खड़ी होगई न जाने किस आकर्षण से आकर्षित होकर उसकी आंखें आप से आप ऊपर को उठ गई और अपनी ओर देखती हुई दो बड़ी भूरी आंखों से टकरा कर स्थिर हो गई- कुछ क्षण तक दोनों निर्निमेष नेत्रों से एक दूसरे की ओर पत्थर के बुत बने देखते रहे- अन्त में गिवानी ने इस मनोहर तन्द्रा को तोड़कर अपने हाथ के फूलों को बियट्रीस की गोद में फैंक दिया। "क्या सिगनोरा अपने पड़ौसी का यह तुच्छ उपहार स्वीकार करेंगी ? उसने उत्सुकता से पूछा।"

"धन्यवाद सिगनर। यदि होसकता तो मैं भी यह फूल आपकी भेंट करती परन्तु ऊपर उछालने से यह आपकी खिड़की तक नहीं पहुंच सकेगा।" बीयट्रीस ने अपने कोकिल कण्ठ से उत्तर दिया और सामने वाले मकान की ओर चल दी। जाने से पहिले उसने गिवानी के गुच्छे को धीरे से वहीं डाल दिया।

गिवानी ने विस्मय विस्फारित नेत्रों से देखा कि बियट्रीस के हाथ में जाकर उसके ताजे फूल बिल्कुल मुरझा गये थे। ऐसा मालूम होता था जैसे उन्हें आग में झुलसा कर निकाल लिया हो॥

छः महीने बाद।

आज गिवानी अपने कमरे में बैठा हुवा इन पिछले छः मास की घटनाओं पर विचार कर रहा है जो एक २ कर के उसके मानसिक नेत्रों के सामने सिनेमा के रजतपट पर होते हुवे खेल की भांति आ रही हैं।" कैसे वह सब से पहिले दिन अपनी खिड़की मे कयन्द लगाकर चोर की नाई

डाक्टर रिपैचिनी के रहस्यपूर्ण उद्यान में वियट्रीस से साक्षात करने उतरा, किस प्रकार वह प्रथम मिलन उसके जीवन के मधुमास की सब से अधिक मधुर स्मृति में परिवर्तित हो गया, और किस प्रकार तभी से वियट्रीस की संगति उस पर अपना अनूठा प्रभाव डालने लगी !" यही सब वह सोच रहा था।

कुछ दिन से अपने अन्दर वह एक परिवर्तन पाने लगा था, न जाने क्यों अब उससे जीवित जन्तु स्वयम घबराकर भागने लगे थे। उसी दिन विद्यालय में प्रोफैस्सर ने उससे कहा था:—"गिवानी, तुम्हारे शरीर से एक प्रकार की सुगन्ध निकल रही है जिससे मेरे सिर में दर्द होने लगा है।" उस समय तो गिवानी ने उनकी बात पर कुछ ध्यान न दिया, परन्तु अब उसी बात ने उसके मस्तिष्क को एक अत्यन्त यन्त्रणात्मक संदेह से भर दिया। वह बेचैन होकर इधर उधर टहलने लगा कि यकायक नीचे से वियट्रीस के पुकारने की आवाज़ आई:—

"गिवानी ! गिवानी !! तुम अब तक क्यों नहीं आये, मैं तुम्हारी घण्टे भर से प्रतीक्षा कर रही हूं।"

थोड़ी देर बाद गिवानी वियट्रीस की प्रेमसुधा से छलकती हुई आंखों के सामने जाकर खड़ा हो गया। उसके मुख का भाव जानकर वियट्रीस ने जान लिया कि अब उन के बीच में एक ऐसी खाई उत्पन्न हो गई है जिसे दोनों में से कोई भी पार न कर सकेगा। वह उसके साथ टहलती र सुनहरे फूल वाले हौज़ के किनारे पहुंच गई। गिवानी ने पूछा—"वियट्रीस ! यह फूल कहां से आया ?"

"मेरे पिता जी ने इसकी रचना की है।" वियट्रीस ने सादगी से उत्तर दिया—

"रचना ? इससे तुम्हारा क्या मतलब ?"

"मेरे पिता प्रकृति के जटिल रहस्यों में परिदार्शनिक हैं। जिस प्रकार मैं उनकी पुत्री हूं, उसी प्रकार यह पुष्प उनके मस्तिष्क की उपज है और मेरे साथ ही इसका जन्म हुआ है।" यकायक गिवानी को फूल की ओर बढ़ने से रोकते हुए उसने फिर कहा—"इस फूल में बहुत से ऐसे गुण हैं जिनका तुम्हें स्वप्न में भी अनुमान न होगा। "प्यारे गिवानी ! मैं इस फूल के साथ रहकर ही इतनी बड़ी हुई हूं, यह मेरा छोटा भाई है। इसकी गंध में जीती हूं, परन्तु आह ! मुझे इस बात का कितना दुख है !"

"दुःख ! क्या तेरे भी हृदय है जिसमें करुणा का स्थान है ?" इन जलते हुए शब्दों ने वियट्रीस के गुलाबी गालों को कुम्हला दिया।

"हां, गिवानी, मेरे भी हृदय है। मेरे पिता के विष प्रेम ने मेरे और संसार के अन्य मनुष्यों के मध्य एक खाई खोद दी थी जिसे तुमने यहां आकर कुछ भर दी है।"

"विषैली नागन ! यह सब तेरी ही करतूत है। तूने मुझे भी अपने जैसा विषैला बना डाला है। इस नाशकारी फूल की सुगन्ध से पल कर तेरे शरीर में इसके विष का इतना प्रभाव हो गया है कि तू भी एक सांघातिक विष बन गई है। शोक ! तूने अपने कुप्रभाव से मुझे भी अछूता न छोड़ा। अब भी यदि सौभाग्यवश हम दोनों के स्वास में एक दूसरे के प्राण लेने की

शक्ति हो तो आ—हम दोनों अपने होठों को मिलाकर एक घृणापाश में अपने अपवित्र जीवन का अन्त कर दें !" गिवानी के मुख से चिनगारियां झड़ रही थीं।

"गिवानी !" वियट्रीस दुख पूर्ण स्वर में बोली—"तुम यह क्या कह रहे हो ? मुझ अभागी पर घृणात्मक दृष्टिपात करके इस उद्यान से चले जाने को तुम्हें कौन रोक सकता है ?"

"पिशाचिनी ! तू मुझ से अब भी निर्दोषता का बहाना कर रही है ? देख रिपैचिनी की पवित्र पुत्री की संगति का मुझे यह फल मिला है।" पास ह बहुत से छोटे चमकीले कीड़े हवा में उड़ रहे थे। गिवानी ने उनकी ओर मुख करके फूंक मारी और पैशाचिक मुस्कराहट से वियट्रीस की ओर देखने लगा। उसके पैरों पर दस या बारह कीड़े मर कर गिर पड़े थे।

"ठीक है ! ठीक है ! यह सब मेरे पिता के विषैले विज्ञान का प्रताप है। गिवानी—तू प्रसन्नता से मेरी जान लेले, क्योंकि तेरे कटु वचनों को सुनकर मुझे अब इस जीवन का तनिक भी मोह नहीं रह गया है। "घुटने टेककर वह उसके सामने बैठ गई।

यकायक आशा के अन्तिम सूत्र को हाथ में लेते हुए गिवानी बोला—"प्रिये ! अभी हमें निराश नहीं होना चाहिये। लो यह औषधि मुझे प्रोफैस्सर बेगलोनी ने दी है, यह विष दूर करने के लिये अमृत है। सम्भव है इससे हमारे शरीर का विष दूर हो जाये।"

वियट्रीस ने हाथ लपका कर शीशी छीन ली और एक ही सांस में उसकी सारी औषधि पी गई। उसी क्षण डाक्टर रिपैचिनी ने वहां प्रवेश करके कहा—"पुत्री ! अब से तू अकेली नहीं रहेगी। मेरा अनुसन्धान सफल हो गया है। मेरे विज्ञान ने तुम दोनों प्रेमियों के लिये ऐसी दुनियां कर दी है जिसमें तुम एक दूसरे को प्रेम करो, परन्तु दूसरे मनुष्य तुम्हें भय की दृष्टि से देखेंगे !"

"आह ! क्या अच्छा होता जो मुझे दूसरे मनुष्य भय के स्थान पर स्नेह की दृष्टि से देखते !" वियट्रीस ने दम तोड़ते हुए कहा—"पिता जी, इस जीवन में मैं आपके विष से मुक्ति न पा सकी, परन्तु मृत्यु मुझे मुक्ति का मार्ग दिखायेगी। गिवानी तेरे शब्द अब भी मेरे हृदय में तीर की नाई खटक रहे हैं। परन्तु वह भी मेरे शरीर के साथ यहीं रह जायेंगे। आह ! क्या तेरी जबान में मुझ से अधिक विष नहीं था ?"

अभागी वियट्रीस के लिये विष जीवन था इसलिये गिवानी की अमृत समान औषधि उसे विष हो गई ! उसके प्राणों ने इस नश्वर शरीर से प्रयाण कर दिया।

शायद यह मनुष्य के विज्ञान का अन्तिम परिणाम था !!

\+ \+ \+ \+



सम्पादकीय

उस सर्व शक्तिमान परमपिता परमात्मा की अनुकम्पा से आज जीवन-सुधा का विशेषाङ्क 'विषविज्ञान' उपस्थित कर रहे हैं। विष जैसे महत्वपूर्ण विषय पर वैद्यों की उपेक्षा देखते हुए लज्जा के मारे नीचे सिर झुक जाता है। बहुत से लेख हमारे पास ऐसे आये जिनमें ग्रन्थों की नक़ल के सिवाय निज अनुभव का एक भी अक्षर न था। कतिपय डाक्टरों से अब की बार हमें अच्छा सहयोग प्राप्त हुआ है बहुत से डाक्टरों के लेख पढ़ने के क़ाबिल हैं। बहुत से अच्छे लेख असमय पर प्राप्त होने तथा स्थानाभाव के कारण न छप सके जिन्हें 'परिशिष्टांक' में दे रहे हैं। हमारे आयुर्वेद साहित्य को यवन काल में बड़ा धक्का पहुँचा, सैकड़ों पुस्तकें जला दी गईं इसलिये यह विद्या आधुनिक काल में छिन्न भिन्न हो रही है। पूर्व काल में बहुत पहिले की बात जाने दीजिये अभी चन्द्रगुप्त का समय बीता है उसके समय अगद तंत्र कितना उन्नतावस्था में था यह बात कौटिल्य शास्त्र को देखने से आपकी समझ में भली प्रकार आजायेगी इसमें एक स्थान पर लिखा है शत्रु की फौजों को नष्ट करने के लिए मृदंग या अन्य वादन पर औषधियों के लेपकर बजाने से फौज सुनने मात्र से मर जाती थी। आजकल भी इस प्रकार की खोज हो रही है अभी कुछ अदृश्य किरणें मालूम हुई हैं जिनसे कई मील पृथ्वी समतल पर और सैकड़ों गज़ ज़मीन के अन्दर सिर्फ १ सैकेण्ड में प्राणनाश किया जा सकता है। यह किरण लोहे और कंकरीट की दीवारों को बड़ी सुगमता से पार कर जाती हैं और वहां स्थित मनुष्यों को मार डालती हैं।

आजकल के विज्ञान युग में नये २ आविष्कार हो रहे हैं—कहते हैं एक प्रकार की ध्वनि का आविष्कार हुआ है उस ध्वनि को "मृत्युध्वनि" या "मृत्युनाद" कह सकते हैं।

यह चुपचाप बड़ी शीघ्रता से फ़ौजों को पल भर में धराशायी कर सकती है, आकाश में उड़ने वाले हवाई जहाज़ों को गिरा सकती है, बड़े २ जंगी जहाज़ों को समुद्रतल में डुबो सकती हैं, क़िलों और शहरों का पल भर में नाश कर सकती हैं।

यद्यपि यह मृत्युध्वनि मानवीय कर्णेन्द्रिय से नहीं सुनी जा सकती परन्तु अपना प्रलयकारी व्यापार करने में कभी नहीं चूकती।

चन्द्रगुप्त के समय में विषों के ऐसे २ संयोग विकल्प मालूम थे जिन्हें दर्पण में लगा देने मात्र से उस में मुख देखने वाले की मृत्यु हो जाती थी, विषों से सिंचित आभूषण का केवल स्पर्श मात्र करने और विषाक्त वस्त्रों के पहनने मात्र से मृत्यु हो सकती थी।

वास्तव में इस समय को उन्नत समय कहा

यह चंद सैकेण्ड से लेकर १-२ मिनट में ही प्राणी का संहार कर देते हैं।

इन सब आविष्कारों से भी अधिक आश्चर्य-जनक कल्पना बुद्धि का उदाहरण भगवान सुश्रुत के समय में मिलता है। उस समय में शत्रु को नष्ट करने के लिये "विषकन्या" का प्रादुर्भाव हुआ केवल सहवास मात्र से चन्द मिनटों में मृत्यु हो सकती थी।

मैं इन बातों को इसलिये आपके सामने रख रहा हूं। आप देखें पूर्वजों का ज्ञान कितना विस्तरित था।

जमालगोटा

इसके बीज अति विषैले होते हैं बीजों में एक स्थिर तैल होता है जिस को जमालगोटे का तैल कहते हैं। यह अत्यन्त प्रदाहोत्पादक औषधियों में से एक है यदि इसकी एक बून्द त्वचा पर रख दी जाए तो लाली या जलन पीड़ा होती है। उदर में १ बून्द भी चली जाये पेट में दर्द प्रारम्भ हो जाता है और ऐंठन से दस्त भी आते हैं दस्त १ घंटे बाद आते हैं रक्तमिश्रित भी हो सकते हैं और पतले होते हैं यह तैल आमाशय विशेषकर आंत में प्रदाह उत्पन्न कर देता है। श्लैष्मिक धराकला रक्त के संचार से अधिक गहरे रंग की हो जाती है वह शोथयुक्त हो जाती है क्षुद्रांत्रिय रस अधिक बनता है पर पित्त अधिक नहीं बनता अंत्र का कृमिवत आंकुचन बढ़ जाता है। त्वचा पर तैल लगाने से दस्त हो जाते हैं क्यों कि यह आंत्र में स्रवित हो जाता है।

मुख, कंठ में जलन तथा पीड़ा होती है उदर-शूल होता है वमन होने लगता है ऐंठन के साथ पतले दस्त रक्त मिले होते हैं। क्षीणता बढ़ जाती है। घातक मात्रा—१ बीजसे मृत्यु हो चुकी है युवा तैल की २५ बून्द, शिशु ३ बून्द में मर जाता है। समय—कुछ घंटे या ४-५ घंटे तक।

चिकित्सा

आमाशय को धो डालो—फिर अफीम दो आवश्यकता पड़ने पर उत्तेजक दवा दो, गौ का घृत, दही के साथ इलायची का चूर्ण, धनिये का चूर्ण शक्कर के साथ, नीबू की सिकंजबीन ३-३ घंटे बाद पिलायें। दही भात भोजन धनिये का जल शक्कर मिलाकर पीने से गर्मी नष्ट होती है।

भिलावा

प्रायः शोधनकाल में या अवलेह निर्माण समय में इसकी वाष्प लग जाये तो शोथ जलन, लाली या कंडू उत्पन्न हो जाती है, या इसके विकार गर्मी आदि हों तो दही मिश्री दें। गोला तिल चिरौंजी तथा दही दूध सेवन करना चाहिये। वाष्प लगने पर तिलों को दही में मिलाकर या दूध में पीसकर लेप करें, या काले तिल १ छं० नारियल की गिरी १ छं० इन को बकरी या भैंस के दूध में घिसकर लेप करें नारियल तिल या बादाम दूध सेवन करायें चावल खानेको दें। अर्जुन-पत्र का कल्क, कसौंदी के पत्रों का कल्क, हल्दी का कल्क, बहेड़े की मज्जा का लेप करें।

एरण्ड

इस के बीजों से निकाला हुआ तैल विरेचन देने के काम आता है। अरण्डी का तैल शूल-

नाशक स्नेहन नेत्राभिष्यन्द में नेत्र में डाला जाता है।

विष लक्षण

कंठशूल, वमन, उदरशूल, विरेचन, अतिदुर्बलता होकर मृत्यु—इसके तीन बीजों से मृत्यु हो चुकी है परन्तु १७ बीजों से बच भी गये हैं। मृत्यु समय—निश्चित नहीं।

चिकित्सा

आमाशय को धोवो, मार्फिया का इंजक्शन दो, गर्म जल की बोतल से सेको, आवश्यकता पड़ने पर उत्तेजक दवाई दो।

गुञ्जाफल (चिरमिटियां)

इस के बीज गोल अंडाकार रक्तवर्ण के होते हैं जिसको कि एक सिर पर काला धब्बा होता है। प्रत्येक बीज एक तिहाई इंच लम्बा चौथाई इंच चौड़ा होता है प्रत्येक का भार २ ग्रेन होता है यह सोना चांदी तोलने में काम आता है।

इसके लक्षण सर्प विष के लक्षण से मिलते जुलते होते हैं इसलिये मनुष्यों को सर्प विष का भ्रम हो जाता है।

चिकित्सा

इसके विष में धनियां विशेष लाभदायक है तण्डुल का पानी शक्कर के साथ, गौ घृत, धनिये का पानी पका कर देना चाहिए।

७--इन्द्रायण

बीज रहित सूखा गूदा काम में लाते हैं इसकी जड़ या फल में कैलोसिनथिन नामक विशेष पदार्थ होता है जो कि अधिक मात्रा प्रयोग करने से दाहोत्पादक है इसे विरेचनीय औषधियों में काम लाते हैं कभी २ यह भ्रूणहत्या के काम में भी आता है।

थोड़ी मात्रा देने से आमाशय, पक्वाशय उत्तेजित होता है। इससे आमाशयिक और क्षुद्रांत्रिय रस की वृद्धि होती है। अंत्र की मांस पेशियां उत्तेजित हो जाती हैं कुछ उदर में ऐंठन भी होती है पित्त अधिक बनता है क्षुधा बढ़ जाती है आंत्र की मांस पेशियों में ऐंठन होकर पतले दस्त आते हैं।

विष लक्षण

वमन, उग्र अतिसार, मूर्छा फिर मृत्यु।

चिकित्सा

आमाशय को खाली कर दूध या घृत पिलाओ उत्तेजक औषधियां दो।

८--मिट्टी का तैल

कंठ में पीड़ा होती है आमाशय में जलन, मूर्छा, सिर में भारीपन चक्कर श्वास तथा मूत्र में तैल की बू, नेत्र के तारे संकुचित हो जाते हैं, कभी २ ऐंठन हाथ पैरों में होने लगती है।

घातक मात्रा

पौन छटांक तैल से एक बार १४ मास के बच्चे की मृत्यु हो गई है।

वमन कारक औषधियों का प्रयोग करना चाहिए स्टमकट्यूब से आमाशय को गर्म जल से धोना, रेचक औषधि देना, आवश्यकता पड़ने पर हृदयोत्तेजक औषधि देनी।

९--तम्बाकू

तम्बाकू में क्रिया शील सत्व नीकोटीन होता है यह बहुत अधिक घातक है इसकी १ ड्राप अर्थात्

१ बून्द प्योर नीकोटीन की मनुष्य को मारने में समर्थ है। यह फ्रांसीसी तम्बाकू में अधिक सात या आठ प्रतिशत तक मिलता है।

यह बेरंग एक तैल सा होता है वायु में रखने से भूरा हो जाता है, मुख में अत्यन्त जलन, तीक्ष्ण दुर्गन्धयुक्त पानी में घुल जाता है।

२ माशा तम्बाकू के क्वाथ से मृत्यु हो गई है यहां तक कि शरीर पर तम्बाकू के पत्ते बांधने से मृत्यु हो गई है १ तोला तम्बाकू १५ मिनट में मार डालती है तथा नीकोटीन से ३ मिनट में मृत्यु हो गई है।

विष लक्षण

सर में चक्कर, अंग का कम्प, ग्लानि, नाड़ी का तेज चलना, उन्मत्त होना, वमन, ठंडे पसीनों का आना, कमजोरी, हृदय का कमजोर होना, उदर-शूल तथा आन्तान पुतलियां प्रायः प्रसरेन, सिर का भारी होना, अतिसार।

चिकित्सा

आमाशय को स्टमकपम्प द्वारा धोना यदि पीड़ा हो तो थोड़ी मात्रा में अफीम देनी चाहिए, उत्तेजक दवा दो, स्ट्रिकनीन ... ग्रेन का इंजक्शन करना।

वमन के साथ दूध देना चाहिए।

११-अगारिकस् एल्वस्

इसको यूनानी नाम गारीकून और वैद्यक में छत्रिका कहते हैं पंजाब प्रान्त में छत्रिका खूब खाई जाती है यह दो प्रकार की होती है सविष और निर्विष।

यहां केवल सविष का ही उल्लेख करेंगे। विषैले छत्रांकुर (Poiscarin Fungi) में भिन्न २ दो विषैली वस्तुयें होती है।

१—मास्केरीन (Mascarin) जिसका प्रभाव बिलाडौना और धुस्तुर के सर्वथा विपरीत होता है।

२—दूसरा प्रभाव ठीक धत्तूरीन (Atropine) तथा हैस्थ रिया के समान होता है।

चिकित्सा

वमन कारक औषधियां जैसे—जिंक सल्फेट १५ ग्रेन जल के साथ दें या स्टमक पम्प द्वारा मेदा साफ करें फिर अफीम का सत टानिक एसिड के साथ मिलाकर दें काफी पिलानी चाहिए। कनीनिका विस्तार काल तक बार २एट्रोपीन ; ग्रेन का त्वचा मध्य प्रवेश करें। डिजिटैलिस या मार्फीन देना चाहिए उत्तेजक औषधियां दो-राई का पलास्टर लगायें।

१२-क्विनीन

क्विनीन के अधिक सेवन से विष लक्षण उत्पन्न हो जाते हैं, कानों में घूं घूं का शब्द होता है रात को दीखना बन्द हो जाता है वमन, अजीर्ण, भूक का न लगना, नेत्र ज्योति नष्ट होना इत्यादि लक्षण हो जाते हैं।

यदि क्विनीन को पोटास ब्रोमाइड जल और शर्बत में घोलकर दें तो उपद्रव नहीं होते हैं। या एसिड हाइड्रोब्रोमिक डिल ४ बू० के साथ दे सकते।

१३-कोकेन

इस की अधिक मात्रा सेवन करने से विजया विष के समान उपद्रव होते हैं। रोगी हिलडुल नहीं सकता और त्वचा के नीचे कुछ चीज रेंगती हुई सी मालूम होती है।

इसके लिये कै कराकर चाय या काफी का तीव्र घोल पिला दें।

१४—मद्य

मद्य अधिक पान करने से बेहोशी और नींद आती है। नींद में रोगी घुरांटे लेता है इस के लिये वमन करायें। चिरकाल तक शराब पीने से अजीर्ण और निद्रानाश आदि लक्षण होते हैं अति-मात्रा पीने से हृदय और फुफ्फुस दोनों के केन्द्र अवसन्न होकर मृत्यु हो जाती है आसन्न मृत्यु समय अचेतनता, नेत्रों की स्थिरता और ज्योति-हीनता, नेत्र तारों का संकुचित होना, नाड़ीक्षीणता, पसीने का आना, श्वास खिंचावदार होना, कभी २ प्रलाप, ऐंठन लक्षण होते हैं।

चिकित्सा

वमन कारक औषधियां दो आमाशय को स्टमक पम्प से धो डालो। रोगी को कैलसियम क्लोराइड (नौसादर) मिलाकर चाय, क वा पीने को दें। यदि न पी सके मेदे को धोकर कैलसियम क्लोराइड को स्टमक पम्प से अन्दर डाल दें। पेट पर राई का पलस्टर लगायें मुख पर शीतल जल के छींटे दें। ऐमाइल नाइट्रेट को सुंघावें। स्ट्रिक-नीन से, ग्रेन तक का इंजक्शन करें।

मदात्य रोग में शराब की आदत धीरे २ छुड़ा देनी चाहिए। चन्दनासव और खण्डासव देना चाहिए।

१५—फिटकरी

फिटकरी के खाने से कभी मृत्यु नहीं होती है विष लक्षण कभी होते हैं जब कभी होते हैं तो मेदे और आंतों में खराश होकर वमन और अतिसार होते हैं।

आमाशय को धोयें सोडियम कार्बोनेट नीम गर्म पानी में मिलाकर पिलायें।

नोट—जब इस से विष लक्षण धीरे २ होते हैं तो भूक मर जाती है कोष्ठबद्धता रहती है आमाशय और आंत में थोड़ी शोथ हो जाती है। जो लोग गदले पानी को फिटकरी से साफ करके पीते हैं उनमें विपलक्षण पाये जाते हैं।

१६—ब्रोमिज्म

सब से पहले लाल रंग के दाने मुख पर निकल आते हैं एकनी से मिलते जुलते होते हैं। यह त्वचा के द्वारा निकलता है इसलिये ऐसा होता है।

त्वचा और श्वासपथ चेतनाहीन होता जाता है। इसके बाद पौरुषशक्ति कम होने लगती है। रोगी उत्साहहीन हो जाता है बहुत जल्द थक जाता है काम करने के योग्य नहीं रहता है और बुद्धि विभ्रम हो जाती है खराब अवस्थाओं में, डिम-निशया मैलंगकोलिया और अन्य मस्तिष्क के रोग पैदा हो जाते हैं। इनके साथ कभी २ नेत्रों का सुर्ख होना भी हो सकता है। श्वास संस्थान से कफ अधिक निकलने लगता है जो मनुष्य नींद लाने के लिये सेवन करते हैं उनको धीरे २ मात्रा बढ़ानी पड़ती है इसका परिणाम खराब होता है और मस्तिष्क में विकार उत्पन्न हो जाते हैं।

इसको बन्द कर देना चाहिये और उत्तेजक दवा का सेवन करना चाहिये।

१८—क्लोरल हाइड्रेट

अफीम के समान है नींद आती है श्वास मंद और धीरे २ आने लगता है नाड़ी क्षीण हो जाती है। शरीर कमजोर ढीला शीतल पड़ जाता है। हृदय की गति क्षीण होती चली जाती है पुतलियां

फैल जाती हैं रोगी बेहोश होकर मर जाता है। २-३ ड्राम से विषलक्षण उत्पन्न हो जाते हैं।

चिकित्सा

अहिफेन की तरह, स्ट्रिकनियां की पिचकारी लगायें।

कार्बोनिक गैस

यह एक गैस है नजर नहीं आती वायु से भारी होती है इस कारण नीचे की सतह पर रहती है पुराने खंडहर, कुएं सूखे, मैली नालियों और खत्तों की सतह पर पाई जाती है। प्राय: समाचार पत्रों में पढ़ते होंगे पुराने कुयें को साफ करने उतरे और मर गये। इसलिये पुराने कुवों में देख भाल कर उतरना चाहिए।

यदि खालिस गैस सूंघी जाये तो दम घुटकर मृत्यु हो जाती है। जब इसका वायु से कुछ मिश्रण हो तो सूंघने से सिर दर्द घबराहट होकर रोगी बेहोश हो जाता है श्वास खर्राटेदार आता है।

चिकित्सा

रोगी को शीघ्र बाहर निकाल कर खुली हवा में रक्खें शीतल जल चेहरे पर डालें। आक्सिजन खालिस मिल सके सुंघायें।

नोट—कुएं में उतरने से पहले एक चिराग जलाकर किसी पात्र में रखकर कुएं में उतारें यदि दीपक बुझ जाये तो इस जहरीली गैस का वहां उपस्थित होना सिद्ध होता है फिर कभी भूलकर भी कुएं में न जायें।

२०—कार्बोनिक आक्साइड गैस

यह कार्बोनिक गैस से भी घातक होती है यह जलते कोयलों से उत्पन्न होती है जब से यह कोयला जलाना शुरू हुआ है प्राय: ऐसे केस हो-जाते हैं। शीत काल में कोयले जलाकर रखना मृत्यु को बुलाना है कमरे में तब रखना चाहिये जब कि धुआं निकल गया हो कोयले सुर्ख होकर दहकने लगे हो तब कोई हानि नहीं होती सिर में दर्द, कनपटी की नाड़ी फड़कना कमजोर होकर मूर्च्छा की अवस्था में मृत्यु हो जाती है।

चिकित्सा

खुली हवा में रखना एमोनियां सुंघाना किसी नाड़ी से रक्त मोक्षण करना।

नोट—यह गैस जलनशील है इसके शोले का रंग नीलगू होता है। ईंटों के पजावे से यह गैस बहुत निकलती है मामूली दीपकों में नील रंग जो लौह में दिख पड़ता है वह इसी गैस का भाग है, इस गैस द्वारा मृत्यु होने पर शरीर के पट्ठे और रक्त सुर्ख रंग के हो जाते हैं। यह अवस्था अन्य रोग में नहीं होती।

सर्प

अमेरिका के बहुत से भागों में जहरीले सर्पों की बहुतायत है वहां की "टेक्सास" रियासत के सेनएन्टनी नगर में डा० डडली जैक्सन की अध्यक्षता में डाक्टरों का एक कमीशन सर्प के काटने के उपचारों की खोज कर रहा है यह सीरम-चिकित्सा को उपयोगी नहीं मानते। इन्होंने एक और ही विधि निकाली है वह यह है—

सर्प के काटने पर दंश स्थान के चारों तरफ तेज नस्तर से गहरा काटना चाहिये फिर इन स्थानों पर कांच की कुछ प्याली जिन्हें (Sucton-Cups) कहते हैं रखकर उनके द्वारा विषाक्त रक्त को खैंचकर बाहर निकाल देना चाहिये यह प्याले

थोड़ी २ देर बाद दो दिन तक लगाने चाहिएं। इस से वहां की सर्पदंश मृत्यु संख्या घट कर दो की सदी कम हो गई है। अमेरिकन सरकार ने इसे अपने चिकित्सालयों के लिये स्वीकार भी कर लिया है।

नोट—यह चिकित्सा आयुर्वेद की ही है हमारे यहां विष को चूस कर बाहर निकालते थे ये कांच के प्यालों से वही काम लेते हैं। हमारी विधि मुख से चूसकर विषाक्त रक्त को खेंचना किन्हीं अवस्थाओं में घातक है यदि मुख में व्रण हैं तो विष व्रण द्वारा उसके शरीर में फैल जायेगा अन्त में मृत्यु हो जायेगी, परन्तु यह प्यालों की विधि उत्तम है इस चिकित्सा शैली को अपनाना चाहिए।

बिच्छू

बिच्छू के काटने पर दाह, जलन, शोथ उत्पन्न हो जाती है तीव्र पीड़ा की लहर ऊपर को चढ़ती हुई प्रतीत होती है।

जिस ओर काटा है उससे विपरीत ओर के कान में थोड़ा सा नमक पानी में घोल कर डाल दीजिये तुरन्त लाभ होगा।

चूना और नौसादर का लेप करने से भी लाभ होता है, इमली का बीज घिसकर लगाने से लाभ होता है, इसी प्रकार निमली का बीज घिस-दंश स्थान पर चिपकाने से यह बीज सारा विष चूस लेता है।

लाइकर एमोनिया फोर्ट की फुरेरी दंश स्थान पर लगायें, यदि पीड़ा अधिक हो सहन करना कठिन हो तो "नोवोकेन" या "कोकेन" का इंजैक्शन कर देना चाहिए, यह फौरन पीड़ा को शान्त कर देता है फिर किसी प्रकार का दर्द नहीं रहता। अपामार्ग की जड़ या लकड़ी घिसकर लगाने से भी आराम होता है।

परमेंगनेट आफ पोटास और टारटारिक एसिड का चूर्ण एक रत्ती दंश स्थान पर रख कर ऊपर से १ बून्द पानी डाल देने से वह उबलने लगेगा। ५-७ मिनट के बाद बिच्छू का विष नष्ट हो जायेगा। डोवर्स पावडर को पानी में मिलाकर लगाने से उसकी जलन और दर्द में आराम आ जाता है। ईश्वर मूल भी यही कार्य करता है।

कुत्ते का विष

जिस स्थान पर काटा हो उस व्रण में लाल मिरच कड़वे तेल में पीसकर भर देने से आराम हो जाता है।

सिल्वर नाइट्रेट से जला देने से लाभ होता है। प्योर नाइट्रिक एसिड भी टच करते हैं। तारपीन का तैल पान करने से भी लाभ होता है। "औषधि विज्ञान" में वर्णित अलर्कविष चिकित्सा लिखते हैं—पहले कुत्ते के विष की चिकित्सा धतूरे के स्वरस से होती थी, रोगी को पहले २ से ३ ड्राम कोयले का चूर्ण खिला आध घंटे बाद १ औंस धत्तूर स्वरस पिलाया जाता था, वमन रोकने के लिये गुड़ आदि खिला देते थे। रोगी को ४-५ घंटे धूप में रखने से रोगी में पागलपन के लक्षण पैदा हों तो इस से यह पता लग जाता है कि पागल कुत्ते ने काटा है। उन्माद के लक्षण प्रकट होने के बाद शीतल जल से स्नान कराते थे। रोगी को पहले से ही बांध दिया जाता था, स्नान के बाद वह ठीक होने लगता था।

नोट—इसी प्रकार पागल बंदर, पागल गीदड़ इत्यादि जानवरों की चिकित्सा समझिए।

मधुमक्खी

लाइकर एमोनियां फोर्ड उस जगह लगा दो, नकचूंटी से पकड़कर डंक खैंच लो, इससे डंक ऊपर को उभर आता है।

ततैया-भिर्र

लौंग, दारचीनी का तैल लगावें, कार्बोलिक एसिड टच करें। अमृतधारा भी लगाना लाभ देता है। लाइकर एमोनियां फोर्ड लगायें। चूना और नौसादर मिलाकर लगायें।

पाश्चात्य देशों में विष तीन श्रेणियों में विभक्त किये गये हैं—

१—अम्ल विष

इन विषों में अम्ल (Acids) अलकलीज (Alkalies)आदि शामिल हैं। इनके शरीर के किसी भाग में लगते ही तीव्र पीड़ा होने लगती है। वमन आती है मुखादि जल जाते हैं।

२—इरिटेन्ट विष (Irritants)

मुख गला आदि .. जलन कर देते हैं, प्राय: वमन अतिसार मरोड़ और दर्द होने लगता है। धातुजविष और फंगी तथा बेराज़ के विष (Poisonous fungi and ferries) भी इन्हीं में सम्मिलित हैं।

३—नरकोटिक्स (Narcotics)

इन से प्राय: नींद आती है, रक्त परिभ्रमण के द्वारा इनका प्रभाव मस्तिष्क पर पड़ता है।

लक्षण—भेद

१—नींद आती है संज्ञाशून्यता, फिर थोड़ी देर बाद कोमा की अवस्था में बदल जाता है नेत्र के उपतानुमंडल (Pin-Point Pupils) बिल्कुल सिकुड़ जाते हैं। श्वास धीरे २ लम्बा होता जाता है नाड़ी मंद और क्षीण पड़ जाती है। इस विष में अफीम और इससे निर्मित औषधियां सम्मिलित हैं।

२—पहले सन्निपात (Delirium) की अवस्था, तत्पश्चात् जड़िया (Coma) उत्पन्न करते हैं आंख के तिल फैल जाते हैं, नाड़ी तीव्र हो जाती है। बेलाडौना धतूरा, क्लोरोफार्म, एल्कोहल भांग आदि इनमें गिने जाते हैं।

३—जिन से ऐंठन अकड़न होने लगे, गला घुटने लगे मूरत नीली पड़ जाये, ऐंठन बार बार हो, शरीर शिथिल हो जाये, ऐसे विष स्ट्रिकनीन, एकोनाइट प्रूस्सिक एसिड आदि होते हैं।

अम्ल विष (Acid Poisons)

चिकित्सा—

जैतून या तेल, ओलिव आइल, घी, दूध और शान्तिकारक औषधि दो जैसे—जौ के आटे का पानी (Barley Water) लस्सी आदि। यदि गले में शोथ बढ़ता जा रहा हो तो सेक करें, गर्म फलालैन से सेकें, पुल्टिस बांधें, गुल बनफशा पका कर गले पर बांधे। पीने के लिए शीतल पदार्थ दें।

इरीटेन्ट विष चिकित्सा

वमन कारक औषधि देकर कास्टर-आइल पिलाओ, जैतून या ओलिव आयल पीने को दो। गर्म घृत, पेराफीन, जौ की पेय शामक औषधियां दो।

नारकोटीन विष चिकित्सा

रोगी के सो जाने पर भी इधर उधर से पकड़कर टहलाते रहो उस के मुख गर्दन, छाती आदि पर पानी से भीगा कपड़ा थपथपाते रहो ताकि जागता रहे। तेज़ कहवा पिलाओ।

वमनकारी पदार्थ दो।

ऐंठन और जाकडाइट (convulsions) हो तो वमन करायें। कृत्रिम श्वास क्रिया करो।

विष अवस्था में दूध, पानी, जौ की लस्सी तीव्र चाय देनी चाहिये।

हिमाद्रिजा

रक्त विकार की अचूक औषधि



हिमालय पर्वत की उन दुर्गम चोटियों की ओर जो हजारों मन बर्फ मे ढकी रहती हैं, एक विशेष जड़ी पाई जाती है। प्राचीन काल मे ऋषि मुनि इस औषधि का प्रयोग करते आये हैं। १२० वर्ष हुये जब हमें पहले पहल यह बूटी एक पहाड़ी रियासत के राजा साहिब की कृपा से प्राप्त हुई थी। तब से आज तक लाखों रोगियों पर इसे आजमाया गया और हमेशा गुणकारी पाया है।

रक्त विकार

के कारण पैदा हुये तमाम रोगों की एक मात्र अचूक दवाई है। एक पैकट सात दिन के लिये काफ़ी है। कीमत १ पैकेट केवल १) डाक व्यय पृथक।

वृहत् आयुर्वेदीय औषध भाण्डार, चांदनी चौक, देहली।

जीवन-सुधा के इस ही अङ्क का क्रोड पत्र

जगत प्रसिद्ध

(गवर्नमेन्ट ऑफ इण्डिया से रजिस्टर्ड)

बृहत् आयुर्वेदीय औषध भाण्डार

जौहरी बाज़ार देहली

की

पवित्र आयुर्वेदिक, यूनानी व पेटेण्ट औषधियों

के

थोक और खुर्दा भाव का संक्षिप्त सूचीपत्र

अध्यक्ष—

रसायनशास्त्री राजवैद्य शीतलप्रसाद एण्ड संज़

जौहरी बाज़ार, चांदनी चौक देहली ।

प्यारे मित्रो, हमने बहुत वर्षों के लगातार परिश्रम के बाद, आपके लिये बड़े २ आर्ष ग्रन्थों से अपने प्राचीन ऋषियों की अनुभूत, प्रत्यक्ष फलदायक औषधियां तैयार की हैं, जिनको कि हमारे देशवासी अनेक वर्षों से भूले हुए थे । हमारे औषधालय की दवाइयों की बड़े २ राजा, महाराजा, रईस, जमींदार, वकील, डाक्टरों तक ने मुक्तकंठ से प्रशंसा की है । आपसे साग्रह सविनय निवेदन है कि इस सूचीपत्र को आप स्वयं पढ़ें और अपने मित्रों को दिखला कर अपनी इस प्राचीन आयुर्वैदिक चिकित्सा की तरफ उनकी रुचि बढ़ाते हुये हमारे इस परिश्रम को सफल करें ।



"धर्मार्थ काम मोक्षाणामारोग्यं मूलमुत्तमम्"



र्थात् धर्म, अर्थ, काम, मोक्षादि व सांसारिक सुखों का आधार यह नीरोग शरीर ही है। आजकल हमारे स्वास्थ्य की दिन प्रति दिन अधोगति क्या हो रही है, इसका मूल कारण क्या है, इसकी तरफ अभी तक किसी ने सूक्ष्म दृष्टि से विचार नहीं किया यदि हम पक्षपात शून्य होकर इस प्रश्न पर विचार करें तो हमें और कारणों के साथ २ यह भी मानना पड़ेगा कि आजकल हमारे देश में प्रकृति विरुद्ध विदेशी औषधियों का अत्यधिक प्रचार हो रहा है। क्यों कि जो औषधियाँ वहाँ पर बनती हैं उनमें वहाँ के देश काल जलवायु का ध्यान रखते हुवे तैयार की जाती हैं, और जो बनस्पतियाँ यहाँ हमारे देश से विदेश को जाती हैं, वे वहाँ पहुँचने से पहले ही सूखी और निर्वीर्य हो जाती हैं। आप विचारें कि वे हमारे लिये किस प्रकार उपयोगी हो सकती हैं, इसी सिद्धान्त को लक्ष्य करके प्राचीन आचार्यों का यह कथन बिलकुल सत्य है कि— "यस्यदेशस्य यो जन्तुस्तज्जंतस्यौषधंहितम्" अर्थात जो प्राणी जिस देश में उत्पन्न हुआ है, उसी देश की उत्पन्न हुई और बनी हुई औषधियाँ वहीं के देश वासियों के लिये अनुकूल होती हैं, क्यों कि उन मनुष्यों का शरीर भी वहीं के जल-वायु से चिरकाल से पोषित होता है, इसलिये पाठक विचारें कि शीत प्रधान पाश्चात्य देश में उत्पन्न हुई और बनी हुई औषधियाँ उष्ण प्रधान भारत देश वासियों के लिये किस प्रकार हित कर हो सकती हैं, इस कमी को पूरा करने के लिये आज यद्यपि अनेक फार्मेसियाँ व रसायन शालायें स्थान २ पर खुली हुई हैं, और साथ ही अनेक धर्मार्थ औषधालयों द्वारा देश में निर्धन जनता की सहायता भी की जा रही है, और यहाँ तक कि आयुर्वेद रूपी महोदधि के बसन्त मालती, च्यवन-प्राश, मकरध्वज इत्यादि अमूल्य रत्नों के गुणों से मुग्ध होकर पाश्चात्य चिकित्सक गण भी उन्हें बड़े गौरव से प्रयोग करने लगे, परन्तु इतना सब कुछ होते हुवे भी अभी इस बात की बड़ी ही आवश्यकता है, कि औषधियाँ शास्त्रोक्त विधि से तैयार की हुई ठीक भाव पर मिलें, क्योंकि कुछ फार्मेसियों ने तो अपने यहाँ औषधियों के भाव इतने अधिक बढ़ाये हुवे हैं कि उतने मूल्य पर औषधि खरीदने में वैद्यों व औषधि व्यवसायियों के लिये लाभ उठाना अति कठिन है, और साथ ही इससे भोली जनता की आर्थिक हानि भी होती है, और इसी प्रकार कुछ महानुभावों के सस्ते पन ने तो इतना आश्चर्य दिखाया है कि उन भावों पर औषधिका ठीक २ शास्त्रानुकूल सर्वाङ्ग पूर्ण होकर

बनना भी हमारी समझ से बाहर है। इन ही सब कारणों को ध्यान में रखते हुये ही हमने यहाँ इस देहली शहर में **बृहत आयुर्वेदीय औषध भण्डार** की योजना की हुई है, और जिसमें कि हर समय कूपीपक्क रसायनें, रस, भस्में, चूर्ण, अवलेह, गुटिका, घृत तैल, अरिष्ट, आसव, क्षार, गुग्गुलु आदि अनेक शास्त्रोक्त सिद्ध प्रयोग, और हमारे २२ पुश्त से परम्परा गत प्राप्त हुवे खानदानी सिद्ध सहस्त्रशोऽनुभूत प्रयोग, जिनका पूरा पूरा विवरण हम आगे लिखेंगे, हर समय मौजूद रहते हैं।

हम आपको विश्वास दिलाते हैं कि जिन ठीक भावों पर थोक भाव से रस भस्मादि मूल्यवान औषधियाँ हम दे सकते हैं, उतनी आपको अन्यत्र मिलनी मुश्किल हैं, क्यों कि हमारा यह औषधालय एक ऐसे स्थान पर है जो कि तमाम भारत का केन्द्रीय स्थान है, इस लिये भारत के प्रत्येक स्थान-स्थान से सम्पूर्ण खनिज द्रव्य और हर प्रकार की काष्ठौषधियाँ यहाँ विक्री के लिये बड़ी तादाद में आती हैं और हम उनको थोक भाव से लेते हैं, जिससे कि वे हमें काफी सस्ती पड़ती हैं। और भस्म रस आसवादि द्रव्य जो कि पुराने हो कर अधिक गुण दायक होते हैं, इसमें शार्ङ्गधर का प्रमाण है कि:— **'पुराणाः स्युर्गुणैर्युक्ताः आसवाः धातवोरसाः'** इसलिये हम इन द्रव्यों को एक बार ही अधिक से अधिक मात्रा में बना कर तैयार कर लेते हैं, इसका परिणाम यह होता है कि हम बहुत ही कम मुनाफा लेकर वैद्यों व धर्मार्थ औषधालयों को उसी भाव में औषधियाँ देते हैं जिसमें कि वे स्वयं भी तैयार नहीं कर सकते। इसका फल यह होता है कि हमारे यहाँ की औषधियाँ बहुत ही शीघ्र हाथों हाथ बिक जाती हैं, जिससे कि वैद्य बन्धुओं को औषधि बनाने के कठिन परिश्रम से मुक्ति मिल जाती है, और हमें थोड़े नफे में अधिक लाभ का होना इस नियम के अनुसार ज्यादा बिक्री होने से अधिक आमदनी होती है, इस प्रकार इस औषधालय ने थोड़े समय में ही जो आशातीत उन्नति की है, यह सब इसके व्यवहार में सच्चेपन व सफाई का होना ही कारण है, अतएव जो महानुभाव चिकित्सा-कार्य से समय न मिलने के कारण अथवा औषधि निर्माण की पर्याप्त सामग्री के न होने से औषधि तैयार नहीं कर सकते, (क्यों कि इसमें एक बड़ा नुकसान तो यह होता है कि जब तक रोगी के रोगानुकूल औषध बन कर तैय्यार होगी तब तक या तो रोग बढ़ कर रोगी को खतम कर देगा या रोगी आतुर होकर किसी दूसरे वैद्य के पास चला जायगा), इसी लिये हम ऐसे वैद्य बन्धुओं से साग्रह सविनय निवेदन करते हैं कि वे हमारे औषधालय से अपने यहाँ का स्थायी सम्बन्ध करलें जिससे कि वे समय पड़ने पर रोगी को सफलदायक औषधि देकर यश के भागी बन सकें। क्योंकि हमारा यह उद्देश्य है कि आयुर्वेदिक औषधियों को शास्त्रोक्त विधि से तैयार करके भारत के प्रत्येक प्रान्त में चिकित्सकों के पास पहुँचावें, जिससे कि देश का लाखों रुपया विदेशी कम्पनियों की पाकेट से बचकर देश की निर्धन जनता के निर्वाह के लिये पहुँच सके। हमने उपरोक्त अपने उद्देश्य की पूर्ति के लिये विपुल

द्रव्य व्यय करके एक **वृहत् रसायन शाला** खोली हुई है जिसमें कि बड़े बड़े योग्य आयुर्वेदाचार्यों की अध्यक्षता में सम्पूर्णरस क्रियाएं की जाती हैं। हमारा दूसरा यह भी उद्देश्य है कि आयुर्वेद की सच्ची सेवा करते हुवे उसके उत्थान के लिये पठन पाठनादि व लेखादि द्वारा आयुर्वेदिक व पाश्चात्य मतानुसार गम्भीर रोगों का निदान व उनकी चिकित्सा का वर्णन करना। हमारे यहाँ से इस कार्यकी पूर्ति के लिये

जीवन-सुधा

नामकी मासिक पत्रिका निकली है, जिसमें कि बड़े बड़े योग्य वैद्यों व डाक्टरों के गम्भीर गवेषणा पूर्ण लेखों के अतिरिक्त नवीन २ जड़ी बूटियाँ व शरीर के अङ्ग-प्रत्यङ्गों के सुन्दर सुन्दर चित्र भी विद्यमान रहते हैं, और जिसके द्वारा बाहर के रोगियों को अपने रोग का निर्णय कराने में बड़ी सुविधा रहती है, और उनके लिख रोग के लक्षणों को प्रश्नोत्तर के रूप में छापकर बड़े बड़े योग्य वैद्यों के निश्चयानुसार उनकी चिकित्सा की व्यवस्था कर दी जाती है, इसके अतिरिक्त विशेष बात यह है कि वर्षभर में दो विशेषाङ्क भी सुन्दर सुन्दर चित्रादि से सुसज्जित हुए पाठकों की सेवा में भेट किये जाते हैं। इस पत्रिका को इतना उपयोगी बनाते हुवे भी हमने इसका मूल्य केवल ३) तीन रुपया वार्षिक ही रक्खा है वास्तव में यह पत्रिका अपने ढङ्ग की एक निराली ही है, यह वैद्यों के अतिरिक्त प्रत्येक गृहस्थी के भी बड़े ही काम की है, इसके द्वारा मनुष्य अनेक रोगों की चिकित्सा घर बैठे ही कर सकते हैं। इस लिये हम आपसे सामह सविनय निवेदन करते हैं कि आपको आवश्यकता पड़ने पर जिस किसी औषधि की आवश्यकता हो, या किसी रोग की सम्मति लेनी हो अथवा कोई अनुभूत प्रयोग पूछना हो तो आप हमें निःसंकोच होकर तत्काल लिखें, आपकी हर प्रकार से सहायता की जायगी। आप लोगों की सेवा के लिये ही हमारी रस शाला आदि का जीवन है।

वैद्यजी का परिचय

पाठक गण ! चिकित्सा कराने से पहिले रोगी के लिये यह जानलेना अत्यावश्यक है कि चिकित्सक कितना कार्यकुशल और अनुभवी है और उसकी कितनी योग्यता है, वैद्यक व्यवसाय उनका नूतन है या प्राचीन, क्योंकि रोगी के जीवन मरण का उत्तरदायित्व केवल वैद्य के ऊपर ही निर्भर होता है, इस विषय में हमारा आपसे यही निवेदन है कि वृहत् आयुर्वेदीय औषध भाण्डार के संचालक महोदय खानदानी वैद्य हैं, यह चिकित्सा कार्य आपके वंशमें नवीन नहीं है प्रत्युत २२ पुश्त से चला आरहा है, इसी लिये आपको शास्त्रीय-सिद्ध-प्रयोगों के अतिरिक्त अपने वंश परम्परागत अनुभूत प्रयोगों का भी विशेष ज्ञान है। आपके पिता श्री पूज्य **राजवैद्य शीतलप्रशाद जी रसायन शास्त्री देहली** एक बड़े यशस्वी वैद्य हो गये हैं, देहली की सर्व साधारण जनता आप के नाम से भली प्रकार परिचित है, विशेष क्या कहना रोग विज्ञान के लिये रोगी की कठिन अवस्था के समय एकत्रित

हुवे स्थानीय वैद्य और डाक्टर महोदय भी आपकी तात्कालि की गम्भीर गवेषणा पूर्ण रोग विवेचना पर मुग्ध थे, आपकी प्रत्युत्पन्नमति सराहनीय थी, इन ही श्री वैद्य जी के निरीक्षण में रह कर इन के सुयोग्य-पुत्र **वैद्य राज पं० महावीर प्रसाद** जी ने आयुर्वेद शास्त्र का अध्ययन व चिकित्सा क्रम प्राच्य प्रतीच्य मतानुसार सीख कर अपनी असाधारण कार्य कुशलताका परिचय दिया है, हमारे इस प्रकार के लेख से पाठक गण यह न समझे कि हम इसमें कुछ बढ़ाकर लिख रहे हैं, हमने जो कुछ लिखा है वह अक्षरशः सत्य है। हमारी इस औषधालय की सेवा से देहली की तमाम जनता अच्छी प्रकार परिचित है।

धर्मार्थ औषधालय

और विशेष बात यह है कि आपने अपने निवास स्थान पहाड़ी धीरज पर एक धर्मार्थ औषधालय भी खोला हुवा है जिसमें कि असहाय निर्धन जनता को औषध मुफ़ दी जाती है, और यहाँ तक कि आवश्यक्ता पड़ने पर उनके घर पर जाकर भी मुफ़ देखा जाता है।

विद्यालय विभाग

हम पहले ही निवेदन कर चुके हैं कि हमारा यह उद्देश्य है कि पठन पाठनादि लेखादि द्वारा आयुर्वेद का प्रचार करना, इस कार्य के लिये जीवन सुधा मासिक पत्रिका के अतिरिक्त हमने अपने यहाँ एक आयुर्वेदिक विद्यालय की भी योजना की हुई है, जिसमें कि विद्यार्थियों को आयुर्वेद की उच्च कोटि की शिक्षा देकर उनको प्रामाणिक परीक्षायें उत्तीर्ण कराई जाती हैं, और साथ ही उनको क्रिया कुशल बना कर इस योग्य बना दिया जाता है कि जिससे वे अपनी जीविका स्वतन्त्रता पूर्वक अच्छे प्रकार निवाह करते हुवे यशोपार्जन कर सकें।

भवदीय-मैनेजर—
भगवद्देव शर्मा, आयुर्वेदाचार्यः।

औषधि मंगाने के नियम

(१) अब से पहिले के छपे हुवे सूचीपत्रों का भाव रद्द किया जाता है, इसी लिये पहले भावोंपर औषधि मंगानेका आग्रह नहीं करना चाहिये।

(२) ग्राहकों को चाहिये कि आर्डर देते समय अपना पूरा २ पता साफ हिन्दी, उर्दू, अंग्रेजी में स्टेशन व रेलवे लाइन सहित लिखें। यदि आपके पत्र भेजने के बाद ८ या ९ दिन तक माल या उत्तर न पहुंचे तो समझ लीजिये कि आपका पत्र पढ़ा नहीं गया या वह पहुंचा ही नहीं इसी लिये दुबारा पत्र डालना चाहिये।

(३) जिन औषधियों का जो थोक भाव लिखा है वह पहले ही कमीशन काट कर लिख दिया गया है, इस लिये थोक भाव में कमीशन के लिये पत्र व्यवहार न करें, परन्तु हमारी फ़ार्मेसी के थोक भाव के ग्राहक वेही समझे जायेंगे जिनका पहिला आर्डर कमसे कम २०) रु० का होगा, और फिर हम उनको अपने यहाँ के थोक भाव का ग्राहक रजिस्टर नम्बर देंगे जिससे कि वे भविष्य में ५) पाँच रुपये का माल भी थोक भाव से मंगा सकेंगे।

(४) थाक भाव में जिन औषधियों की जो तोल लिखी है उससे कम में वे नहीं भेजी जा सकेंगी।

(५) पोष्ट ऑफिस से अधिक से अधिक ५ सेर तक का पार्सल रवाना हो सकता है, जिसका महसूल करीब २॥) ढाई रुपये तक होता है और रजिस्ट्री मनिआडर फीस इससे पृथक् लगता है इस लिये द्रवपदार्थ अरिष्ट आसव तैलादि रेलवेद्वारा ही मगाने चाहियें। क्योंकि इसमें महसूल भी कम लगेगा और बोतलों में भर कर लकड़ी के बक्स में बन्द कर अच्छी तरह भेजे जासकते हैं, और रास्ते में टूटने फूटने का डर भी नहीं रहता।

(६) पत्र लिखते समय यह साफ २ लिखना चाहिये कि माल रेलवे या पोष्ट ऑफिस किसके द्वारा भेजा जावे, रेलवे द्वारा माल मंगाने वालों को अथवा ज्यादह वजन की पोष्ट पार्सल मंगाने वालों को चाहिये कि ऑर्डर के साथ २ औषधि का पूरा या आधा मूल्य अवश्य भेजदें, बिना एडवान्स आये हम माल (पेशगी) नहीं भेज सकेंगे।

(७) वैद्यों व धर्मार्थ औषधालयों तथा औषधि विक्रेताओं के लिये खास रियायत की जाती है उनको कम से कम ४०) चालीस रुपये का एक साथ आर्डर आने पर उनको थोक भाव में भी १२॥) साढ़े बारह रुपये सैकड़ा कमीशन दिया जायगा, और उन की सेवा में साल भर तक हमारे यहाँ का जीवन सुधामासिक पत्र भी विशेषाङ्कों सहित मुफ्त भेजा जायगा।

(८) हमारे यहाँ उधार का लेन देन नहीं है, इस लिये नकद दाम देकर या वी० पी० द्वारा माल मंगाना चाहिये, मार्ग व्यय हर हालत में ग्राहकों को ही देना होगा।

(९) रोगी का हाल लिख कर औषधि मंगाने वाले ग्राहकों को चाहिये कि रोग का प्राचीन इतिहास सब सिलसिले वार लिख कर वर्तमान लक्षणों को भी लिखें और साथ ही यह भी लिखें कि औषधि कितने मूल्य की भेजी जावे।

(१०) यदि किसी बिल में अथवा पार्सल की वी० पी० में भूल से दाम अधिक लग गये हों तो भी पार्सल छुड़ा लेना चाहिये। फिर बिल का नं० तारीख आदि लिखकर ठीक करा लें यदि असावधानता से मूल्य अधिक लग गया होगा तो शेष मूल्य भेज दिया जायगा या आपकी पसन्द की हुई कोई दूसरी चीज भेज दी जायगी।

(११) हमारे यहाँ से पैकिंग बहुत होशियारी से अनुभवी मनुष्यों द्वारा कराया जाता है। इतने पर भी यदि रास्ते में कुछ टूट-फूट हो जावे तो कार्यालय उसका जिम्मेवार न होगा।

(१२) माल पहुँचने पर यदि रुपये का इन्तजाम न होतो उसे आप डाकखाने (डिपॉजिट) रखकर ७ सात दिन के अन्दर ही छुड़ा लें।

(१३) सूचीपत्र में लिखित औषधियों के अतिरिक्त आपको जिस औषधि की आवश्यकता हो उसका आर्डर आने पर वह तुरन्त आपकी आज्ञानुसार बनाकर भेज दी जायेगी, औषधालय उसकी लागतके अलावा १०) रु० सैकड़ा अधिक चार्ज कर लेगा, ऐसी औषधि के बनवाने के लिये कम से कम आधा मूल्य पेशगी देना होगा। लेकिन ऐसी औषधि ५) रु० से कम मूल्य की नहीं बनाई जायेगी।

शास्त्रीय अनुभूत औषधियां

ज्वराधिकार

मृत्युञ्जय रस—यह सब प्रकार के ज्वरों की खास दवा है। इसको मधु के साथ १ रत्ती चटानी चाहिये। मूल्य ।।) तोला।

महाज्वरांकुश—इसके सेवन से वातज, पित्तज, आदि अनेक प्रकार के ज्वर, विशेषतया मलेरिया फीवर शीघ्र ही शान्त होता है। मूल्य १ तोला का १) रु०, अनुपान अदरक का रस मधु मात्रा १ रत्ती से २ रत्ती तक।

श्री जयमङ्गल रस—इसमें सोना, चाँदी आदि बहुमूल्य भस्में पड़ती हैं। यह पुराने बुखार खून की कमी, अत्यन्त कमजोरी, विशेषकर तपैदिक के बुखार में शीघ्र फ़ायदा करता है। मूल्य १३।।) तोला।

हिंगुलेश्वर—यह जाड़े बुखार की खास दवा है; मूल्य ।=) तोला।

तरुणज्वरारि—यह नये ज्वर में विरेचन लाकर कोष्ठबद्धता को दूर करके ज्वर शान्त करता है। मात्रा १ रत्ती मिश्री के शर्बत के साथ, मूल्य ।।) तोला।

विषमज्वरान्तक लौह—(पुट पक्व) इसमें सोना, मोती, लौह, अभ्रक इत्यादि बहु मूल्यवान और पौष्टिक द्रव्य पड़ते हैं। यह खासकर पुराने बुखार, बारी का बुखार, म्यादी बुखार, खून की कमी, तिल्ली और जिगर के बढ़ने पर अत्यन्त लाभदायक है। भूख को बढ़ाता है, अत्यन्त पौष्टिक है। मूल्य ६।।) तोला। मात्रा १ रत्ती से ४ रत्ती तक अनुपान—पीपल चूर्ण, हींग, सैंधानमक।

अमृतारिष्ट—पुराने बुखार, मलेरिया, जिगर, तिल्ली और पाण्डु रोग में भी अत्यन्त लाभदायक है। मूल्य २।।) सेर।

स्वर्णमालती बसन्त—यह पुराने बुखार, तपैदिक (यक्ष्मा) हृदय की दुर्बलता, हर समय मन्दा-मन्दा रहनेवाले ज्वरों की एक मशहूर और राम बाण दवा है। अत्यन्त बलकारक है। मू० १४) तोला।

बृ० सर्व ज्वरहर लौह—(स्वर्णघटित) मूल्य १५) तोला।

सर्व ज्वरहर लौह—यह सब प्रकार के ज्वरों की एक खास दवा है। मूल्य १) तोला।

कस्तूरी भैरव—२) रुपये तोला।

बृ० कस्तूरी भैरव—यह सन्निपात में दिल की कमजोरी, हाथ पैरों के ठण्डे होने पर बड़ी लाभदायक चीज है। मू० १२) तोला।

नारदीय महालक्ष्मी विलास—इस के सेवन से अनेक प्रकारके ज्वर, बीसों प्रकार के प्रमेह अर्श भगन्दरादि अनेक रोग शीघ्र ही नष्ट होते हैं, और अत्यन्त बाजीकरण है। मू० ६) तोला।

बसन्त तिलक — इसमें कस्तूरी, सोना, मोती आदि द्रव्य पड़ते हैं। हृदय की दुर्बलता, ठण्डे पसीनों का आना, जीर्ण ज्वर विशेष कर तपैदिक के ज्वर और उसकी कमजोरी को दूर कर शक्ति को उत्पन्न करता है। मूल्य २४) प्रति तोला।

विषमज्वरान्तक लोह—(सोने मोती वाला) मूल्य १०) तोला।

किरातादि तैल—यह ज्वर से उत्पन्न शरीर की रुक्षता और दुर्बलता तथा दाह इत्यादि को नष्ट करता है। मूल्य १६ औंस की शीशी ३) तीन रुपया।

मकरध्वज—(स्वर्णघटित) कीमत ४) प्रति तोले।

षड्गुणबलिजारितमकरध्वज— ८) प्रति तोला।

सिद्ध मकरध्वज—मूल्य २४) तोले—यह अमृत तुल्य रसायन बहुरोग नाशक है जगत प्रसिद्ध महौषधि है। छोटे-बड़े गरीब-अमीर मूर्ख और पण्डित सबही नगर के लोगों ने इस अनुपम रत्न की मुक्त-कण्ठ से प्रशंसा की है। यह वही दवा है जिसके बल से वैद्य लोग मृत्यु के मुख में भी रोगी को निकाल लेते हैं। आज तक इसके मुकाबले की कोई औषधि किसी पाश्चात्य वैज्ञानिक ने ईजाद नहीं की। यह दुर्बलता, धातु-क्षीणता, हृदय की धड़कन, अग्नि-मान्द्य, जीर्णज्वर, सन्निपात, मोती झाग, इत्यादि कठिन से कठिन रोगों की एक मात्र सर्व-श्रेष्ठ महौषधि है। इसे तन्दुरुस्त और बीमार दोनों ही समान-भाव से सेवन कर सकते हैं। यह अनुपान विशेष से सब रोगों की रामबाण दवा है। मात्रा—३ चावलसे १ रत्ती तक। बच्चों को आधे चावल से २ चावल तक देनी चाहिये।

लाक्षादि तैल—१ औंस (२॥ तोले) की की० ।)

महालाक्षादि तैल — एक औंस (२॥ तोले) —कीमत ।≈)

बृ० चन्दनादि तैल— एक औंस ।≈)

जब कि अधिक दिन ज्वर आने से शरीर में रुक्षता और हाथ पैरों में जलन होती है, तथा शरीरमें विशेष कमजोरी होने पर और विशेषतया यक्ष्मा के ज्वर में इस की मालिश से अमृत तुल्य गुण होता है।

बृ० सुदर्शन चूर्ण—(भा० प्र०) वात-पित्तादि अनेक प्रकार के ज्वर, मलेरिया, जीर्णज्वर अग्निमान्द्य इत्यादि की एक अकसीर—प्रसिद्ध दवा है। कीमत १) एक रुपया का ८ तोला।

ज्वरातीसार

सिद्ध प्राणेश्वर रस —(र०रा० सु०) मूल्य १॥) प्रति तोला

कनक सुन्दर—(भै० र०) ॥) तोला

आनन्द भैरव—(शा० ध०) ॥) तोला

ये उपरोक्त रस ज्वर के साथ अतीसार, या पेचिश होने पर अथवा खून के आने पर अत्यन्त लाभदायक होते हैं। मात्रा रत्ती २ गरम जल से

अतीसार-संग्रहणी

कर्पूर रस—(र० रा० सु०) मूल्य १ तोला

यह हैजे की बीमारी, और सब प्रकार के दस्तों की खास दवा है।

महाराज नृपति वल्लभ—यह पुराने अतीसार और संग्रहणी में शीघ्र फायदा करता है। जठराग्नि को दीप्त करता है। मूल्य २॥) तो०

कुटजावलेह—(शा० ध०) मूल्य ॥।) ८ तोला

कुटजारिष्ट—यह रक्तातिसार (खूनी दस्तों) रक्तपित्त, खूनी बवासीर पैत्तिक अतीसार की अचूक दवा है। मूल्य १६ औंस का १।) रु०

महागन्धक—(भै० र०) यह बच्चों के पेट के हर प्रकार के रोगों की खास दवा है। मूल्य १) तोला

कणाद्य लोह—यह अत्यन्त दीपन-पाचन है, और सब प्रकार के अतिसार संग्रहणी में विशेष फायदेमन्द है।

पञ्चामृत पर्पटी—१) तोला रस पर्पटी १) तोला, ताम्रपर्पटी २) तोला लोह पर्पटी १) तोला

स्वर्ण पर्पटी ८) तोला, विजय पर्पटी २४) तोला, विजय पर्पटी नं० २ मूल्य १०) तोला

पर्पटी सेवन विधि पर्पटी सेवनके लिये मनुष्य को चाहिये कि १ रत्ती से प्रारम्भ करके बारह दिन तक १-१ रत्ती बढ़ावे, फिर १३ वें दिन से रोज एक २ रत्ती घटाकर सेवन करे पर्पटी सेवन करते हुऐ दूधया छाछ ही सेवन करना चाहिये, अन्न नमक जल, को बिलकुल बन्द कर दें तो सब से अच्छा है। नहींतो हल्की गिजा और फलों का रस ले सकते हैं। यह सब रोगी की अवस्था विशेष तथा वैद्य की कल्पना पर निर्भर होता है। इस पर्पटी प्रयोगसे—संग्रहणी, जलोदर, शोथ (सूजन) आन्त्रिक दुर्बलता और अजीर्ण इत्यादि रोग शीघ्र ही नष्ट होते हैं।

पिप्पल्याद्यासव—मूल्य १६ औंस की शीशी १।)

बृ० लाई चूर्ण—मूल्य १) तोला

लोकनाथ रस—कीमत १) तोला

यह अतीसार की सर्व श्रेष्ठ औषधि है। मात्रा २ रत्ती शहद अथवा दही में मिलाकर सेवन करावें।

ग्रहणी गजेन्द्रवटिका—मूल्य १॥) तोला

हँस पोटली—मूल्य १) तोला

बृ० ग्रहणी मिहिर तैल—मूल्य ॥।) का ८ तोले

लवंगादि चूर्ण—।) तोला

चित्रक गुटिका—॥) तोला

कपित्थाष्टक—=) प्रति तोला।

दाड़िमाष्टक—=) तोला।

अर्श (ववासीर)

कांकायन गुटिका—यह छै हों प्रकार की बवासीर के लिये अक्सीर दवा है मू० =) तो०

बृ० शूरण मोदक (च० द०) जिनको बहुत पुराना कब्ज रहता हो, मन्दाग्नि, बवासीर, सांस, खाँसी, तथा बातगुल्म हो ऐसे मनुष्यों को यह औषधि अमृत के समान गुणकारी है, इसके सेवन के साथ सब प्रकार के-गुरु (भारी) स्निग्ध (चिकने) भोजन सेवन कर सकते हैं मूल्य ॥) ८ तोला

अभयारिष्ट—१६ औंस १ पौंड १।)

दन्त्यरिष्ट -१६ औंस १ पौंड १।)

इसमें बवासीर के साथ २ रहनेवाला पुराना कब्ज भी शीघ्र ही दूर होता है।

प्राणदा गुटिका—मूल्य =)॥ तोला

बृ० कासीसादि तैल—मूल्य ४ तोला ।=)

पिप्पल्यादि तैल—इसको (एनिमा) बस्ति द्वारा करने से या इसको पखाने के बाद लगाने से मस्से मुलायम पड़ कर स्वयं ही बिना कष्ट के नष्ट होजाते हैं। और साथ ही चीस चबक वगैरा भी नहीं रहती यह बवासीर के लिये एक सर्वोत्तम प्रसिद्ध तैल है। मूल्य ८ तोले का ।।)

अग्निमुख लोह—खूनी और बादी दोनों तरह की बवासीर के लिये सर्व श्रेष्ठ औषधि है इससे बवासीर जड़ से नष्ट होजाती है मू० २)तो०

बाहुशाल गुड़—मूल्य २० तोला २)

अजीर्ण मन्दाग्नि—बदहज़मी—अरुचि

लवणभास्कर—यह मन्दाग्नि-अरुचि-वायगोला आदि की एक बड़ी मशहूर दवा है

कीमत १० तोला ।।)

श्री रामबाण रस—(भै० र०) यह रस वास्तव में संग्रहणी रूपी कुम्भकर्ण, आम बात (गठिया) रूपी खरदूषण, मन्दाग्नि रूपी रावण को समूल नष्ट करने के लिये साक्षात् रामबाण के समान है। वास्तव में यह रस उपरोक्त रोगों में बहुत शीघ्र फायदा करता है। मूल्य ॥) तोला।

अग्नितुन्डी वटी—मूल्य ।=) तोला।

वज्रक्षार—=) तोला

शङ्खद्राव—१ शीशी १)

श्वेत पर्पटी—(स्वकृत) यह दर्द गुर्दा, बदहज़मी, अम्ल-पित्त, सूजाक अम्लपित्त की अक्सीर दवा है। मूल्य ।=) तोला।

महाशङ्ख वटी—(भा० प्र०) ।।) तोला।

गन्धक वटी—१ तोला ।।)

संजीवनी वटी—यह विसूचिका (हैजा) गुम्म हैजा, शूल इत्यादि की प्रसिद्ध दवा है—अमृत के समान गुणकारी है। मूल्य एक तोला ।) चार आने।

अग्निकुमार रस—।=) तोला।

हिंग्वष्टक—इसको भोजन के पहले ग्रासों में घृत से मिलाकर खाने से उदर में इकट्ठी हुई वायु दूर होकर जठराग्नि दीप्त होता है। मू० ॥)॥ तोला।

क्रिमिरोग

क्रिमि मुद्गर रस—इसे नागरमोथे के काढ़े के साथ १-२ रत्ती सेवन करें। मू० ।≠) तोला

क्रिमि कालानल—यह रस, क्रिमि रोग (पेट में कीड़े पड़ने) से उत्पन्न हुई सूजन, गुल्म, खून की कमी, जी मिचलाना इत्यादि को शीघ्र दूर करता है। मूल्य १) तोला।

विडङ्ग लौह—यह कीड़ों को और साथ ही बवासीर, अरुचि, मन्दाग्नि, श्वास-कास वगैरह को नष्ट कर के शरीर में नवीन रक्त को पैदा करता है। मूल्य १॥) तोला।

विडङ्गारिष्ट—(ग० नि०) मूल्य १॥) १ बोतल।

पाण्डु—कामला—यकृत (जिगर) प्लीहा (तिल्ली)

नवायस लौह—यह पाण्डु, जिगर, तिल्ली की मशहूर दवा है। इसको मधु तथा घृत और छाछ से १ रत्ती से ४ रत्ती तक चटाना चाहिये मूल्य १॥) तोला।

लोहासव—१६ औंस शीशी १।)

पुनर्नवादि मँडूर—१) तोला

धात्र्यरिष्ट इसके सेवन से हृदय की धड़कन, पाण्डु-खाँसी, आदि शीघ्र ही नष्ट होते हैं।

कुमार्यासव—१६ औंस शीशी १।)

अमृतारिष्ट—१६ औंस शीशी १।)

पञ्चामृत लौह मंडूर—१ तोला १)

प्लीहारि रस—१ तोल १)

रक्त पित्त (नकसीर) राजयक्ष्मा (तपेदिक) खांसी

उशीरासवः—यह रक्तपित्त पाण्डु, कुष्ठ, प्रमेह अर्शः सूजन की एक श्रेष्ठ दवा है। कीमत १॥) बोतल

वासा कूष्माण्ड खण्ड—जबकि ज्यादह गर्मी से नाक-मुंह से खून आता हो, या पेशाब के रास्ते खून आवे, तपेदिक, खांसी, या उसमें खून मिला कर आवे ऐसी हालत में इसके सेवन से जादू कासा असर होता है। कीमत ५ तोले ॥)

कूष्माण्ड खण्ड—मूल्य ५ तोले ।—)

द्राक्षासव—१६ औंस शीशी १।) द्राक्षारिष्ट १६-औंस १।) अंगूरासव १६ औंस शी: ३। यह अंगूरों से बना हुवा एक स्वादिष्ट और पौष्टिक अर्क है यह फेफड़े की हर एक

१—नोट—सब प्रकार के आसव-अरिष्ट प्रायः भोजन के बाद ही पीने चाहिये। प्रत्येक औषधि की विशेष सेवन विधि पत्र द्वारा मालूम करें।

बीमारी के लिये बड़ी प्रसिद्ध अकसीर दवा है। शरीर के अन्दर नवीन रक्त उत्पन्न करके उसे सुन्दर और बलवान बनाने में अपूर्व है, और कोष्ठबद्धता को दूर करती है।

वृ० वासावलेह—१० तोले १॥) मालतीवसन्त १२) तोला, चद्रामृतरस मूल्य ॥।) तो० यह सूखी और तर दोनों प्रकार की खांसी के लिये एक मशहूर दवा है।

बसन्त तिलक—(भैं० र०) मूल्य २२) तो० इस रसमें सोना-मोती-कस्तूरी इत्यादि बहुमूल्य पदार्थ पड़ते हैं, यह क्षय की खांसी, हृद्रोग, ज्वर, आदिको शीघ्र नष्ट करता है, अत्यन्त पौष्टिक और वृष्य है। क्षयमें विशेष लाभकारी है। मात्रा १ रत्ती से २ रत्ती तक

च्यवन प्राश—यह खांसी-सांस की एक प्रसिद्ध दवा है, छोटे, बड़े, धनी, निर्धनी सभी तरह के मनुष्य इसके गुणों से अच्छी प्रकार परिचित हैं। यह नपेदिक से उत्पन्न हुई फेफड़ों की कमजोरी को दूर करके शरीर को मोटा ताजा हृष्ट पुष्ट बना देती है। यह दिमाग़ी काम करने वालों को अमृत के समान गुण करती है, बालक-वृद्ध युवा सभी इसे हर मौसिम में हर मिजाज वाले मनुष्य सेवन कर सकते हैं। मूल्य ४) सेर।

राजमृगांक रस—मूल्य १०) तोला यह राजयक्ष्मा, धातुशोष, हृद्रोग (दिल की कमजोरी) की बड़ी लाभदायक महौषधि है।

चन्दनादि तैल—मूल्य ॥।) ५ तोले

सितोपलादि—४ तो० ॥)

कफ केतु रस—।) तोला

श्वास-(दमा) हिचकी

श्वास कुठार रस—(र० सा० सं०) मूल्य ॥) तोला

श्वास चिन्ता मणिः—मूल्य १२) तोला। इसमें सोना मोती इत्यादि बहुमूल्य द्रव्य पड़ते हैं-यह श्वास (दमे) के लिये राम बाण दवा है। इसको २रत्ती मात्रा १ मासे बहेड़े केचूर्ण और मधु से देवें।

कनकासवः—(भै०र०) यह सीने के ऊपर जमे हुए बलगम को पतला करके बाहर निकालता है। और सांस-खांसी, उरः क्षत (छाती में जख्म) रक्तपित्त, जीर्ण-ज्वर में विशेष लाभ करता है। मूल्य १॥) बोतल

भार्गी गुड़ (भै० र०)—मूल्य ८ तोले ॥।) च्यवनप्राशावलेह ४) सेर।

अपस्मार (मृगी) उन्माद [पागलपन] मूर्छा

दशमूलारिष्ट—१६ औंस शीशी २)

अश्वगन्धारिष्ट—१६ औंस शीशी १॥) यह

स्त्रियों के हिस्टीरिया के दौरे की अकसीर दवा है, इसके अलावा मृगी-उन्माद, बेहोशी इत्यादि मानसिक रोगों को दूर कर शरीर को हृष्ट पुष्ट बना देती है। और वात व्याधियाँ शीघ्र ही नष्ट होती हैं। मात्रा-२-२ तोले भोजन बाद।

चतुर्मुखरस—यह हर प्रकार के दौरे की अनुभव सिद्ध शर्तिया दवा है, यह सोना कस्तूरी इत्यादि बहुमूल्य द्रव्यों से बनती है-इसकी चौथाई ¼ रत्ती त्रिफला तथा मधु में मिला कर चटाना चाहिये। इसके सेवन से अपस्मार, उन्माद, हस्त कम्प, शिरकम्प इत्यादि शीघ्र दूर होते हैं। मूल्य २०) तोला।

वातव्याधियां-फ़ालिज-लक़वा वग़ैरा

त्रयोदशाँग गुग्गुलु—मूल्य ८ तो० ॥।) इसके (भै० र०) सेवन से गठिया, लकवा आदि वायु के रोग शीघ्र जड़ से नष्ट होजाते हैं।

चिन्ता मणि चतुर्मुख—(भै० र०) मूल्य १०) तोला इसमें स्वर्ण भस्म पड़ती है यह रस दिल और दिमाग़ की कमज़ोरी को दूर कर शरीर को हृष्ट पुष्ट बनाता है। मात्रा १ रत्ती त्रिफला तथा मधु में।

वात गजाङ्कुश—इसके सेवन से कठिन से कठिन पक्षाघात आदि वात रोग शीघ्र नष्ट होते हैं। मात्रा २ रत्ती पीपल का चूर्ण और मजीठ के काढ़े में। मूल्य २) तोला।

लक्ष्मी विलास रस—यह ऊपर कहे हुए चतुर्मुख रस के समान ही गुण करने वाला है, यह विशेष कर बलवर्धक और वृष्य तथा स्तम्भक है। मूल्य १०) तोला

बृ० वात चिन्तामणि—यह हर तरह के दर्द, किसी अंग का सूख जाना या कमज़ोर होजाना, हाथ पैर का जकड़ना, कमज़ोरी के कारण दिल का धड़कना, फ़ालिज वग़ैरा यहाँ तक कि हिस्टीरिया और मृगी के दौरों के लिये यह अत्यन्त लाभदायक अचूक रामबाण दवा है। इसमें सोना, चाँदी, मोती आदि बहुमूल्य द्रव्य पड़ते हैं। इसके सेवन से वृद्ध मनुष्य भी फिर जवान होकर कामदेव के समान सुन्दर और पराक्रमी होजाता है। इसकी १रत्ती मात्रा अनुपान रोगानुसार सेवन करें। मूल्य १५)तो०

नारायण तैल—कीमत ८ तोले ॥।)

मध्यम नारायण तैल—कीमत ८ तोले १) इस में दशमूल और अष्टवर्ग की दुर्लभ औषधियाँ तथा कस्तूरी वग़ैरा मूल्यवान सुगन्धित द्रव्य पड़ते हैं। जिससे कि यह वायु विकारों के नष्ट करने में एक प्रसिद्ध रामबाण दवा है इसके नाम और गुणों से साधारण से साधारण मनुष्य भी अच्छी प्रकार परिचित हैं। सारे शरीर में या हाथ पैर में कहीं भी दर्द या सूजन या सुन्नता हो अथवा लक़वा या फ़ालिज किसी अंग में

मार गया हो तो यह तेल मालिश करने से, पिलाने से सब रोगों को दूर करके हड्डी तक के दर्द को निकालने में अक्सीर साबित हो चुका है। और यह हमारे यहां खास तौर से तैयार किया जाता है।

कुब्जप्रसारिणी तैल—मूल्य ८ तोले ।।।)

श्रीगोपाल तैल —(कस्तूरी रहित) ८ तोले १।।)

हिमसागर तैल—मूल्य ८ तोले का १)

विष्णु तैल—मूल्य ८ तोले ।।।)

विषगर्भ तैल—(योग चिन्तामणिः) मूल्य ।।) ५ तोले

वातरक्त, कुष्ठ, विसर्प

कैशोर गुग्गुलुः—इसके सेवन से खून की तमाम खराबियाँ, और कोढ़, वातरक्त शीघ्र ही शान्त होते हैं। ४ तोले ।≈)

खदिरारिष्ट—यह सब प्रकार के कुष्ठ, आतशक, सूजाक, वातरक्त, रक्तसम्बन्धी सब विकारों की एक अक्सीर दवा है। मूल्य १६ औंस १।।)

माणिक्य रस—(भै० र०) इससे श्वित्र, गलित कुष्ठ, नासूर, उपदंश, तथा नासिका और मुख रोग शीघ्र ही दूर होते हैं। मात्रा १ रत्ती शहद या घृत से। मूल्य ३) तोला

दशाँगलेप—≈) तोला

बृहन्मरिचाद्य तैल—८ तोले ।।≈)

अमृताद्यगुग्गुलुः १ तोला ।)

पंचतिक्त घृत—१० तोले १)

कुष्ठराक्षस तैल—१० तोले १।।)

आमवात (गठिया)

महायोगराज गुग्गुलु (समधातु मिश्रित)—मूल्य १।) तोला भर

योगराजगुग्गुलुः—मूल्य ४ तोले ।≈)

यह औषधि ८० प्रकार के वायु विकारों की एक ही रामबाण दवा है साधारण से साधारण मनुष्य भी इसके प्रशंसनीय गुणों से परिचित हैं। यह तिल्ली, गुल्म, उदर, बवासीर और सूजन के लिये भी बड़ी अक्सीर महौषधि है।

सिंहनादगूगल (कज्जलीवाला)—यह पथरी, मूत्रकृच्छ्र, कास, श्वास, आँतों का उतर आना अर्श (बवासीर) इत्यादि रोगों की सिद्ध रसायन है मात्रा २ रत्ती से ४ रत्ती तक, अनुपान गरम जल या मुलठीके काढ़ेसे।

वातगजेन्द्रसिंह—यह रस, गठिया रूपी हाथी के मारने में शेर के समान है। यह रस वायु नाशक होने के अलावा बड़ा ही पौष्टिक है। इसकी २ रत्ती की मात्रा दूध से सेवन करें। मूल्य १) तोला।

शिवागुग्गुलुः—मात्रा ६ रत्ती से ६ मासे तक। मूल्य ४ तोला ।≈)

विषगर्भ तैल—यह तैल शरीर के हर प्रकार के

दर्द व सूजन को शीघ्र ही दूर करता है, और साथ ही लिंगेन्द्रिय की शिथिलता व कमज़ोरी आदि के लिये भी अक्सीर दवा है। इसको मसलकर धूप में बैठ जायें फिर गर्म जल से स्नान करें। मूल्य ८ तोला ।।।)

बृ० सैन्धवादि तैल—मूल्य ८ तोला ।।।)

शूल-अम्लपित्त

यवानिकादि चूर्ण—मूल्य ≡) तोला। अविपत्तिकर चूर्ण मूल्य =) तोला।

महा शंखवटी—।।।) तोला।

सामुद्राद्यचूर्ण—इसके सेवन से, वात पित्त, कफ का उत्पन्न हुआ शूल, नाभि शूल, यकृच्छूलादि सब प्रकार के शूल शीघ्र आराम होते हैं। मूल्य ।।) तोला

धात्रीलौह—मूल्य १।।) तोला यह शूल, अम्लपित्त के लिये एक अक्सीर दवा है।

शंखद्राव—यह, हैजा, तिल्ली, जिगर, अम्लपित्त अरुचि, मन्दाग्नि का एक बढ़िया दवा है, शीघ्र ही अपना असर दिखाती है। शीशी एक १)

नारिकेल लवण—इससे परिणाम शूल और सब प्रकार का शूल शीघ्र शान्त होते हैं। मात्रा १ माशे से २ माशे तक पीपलके चूर्ण १ रत्ती में मिलाकर देव मूल्य ।=) तोला

तारामन्डूर गुड़—मात्रा ३-६ रत्ती तक मूल्य ।।।) तोला

श्री विद्याधराभ्र—मूल्य २) तोला मात्रा २-४रत्ती गौ दुग्ध अथवा ठंडा जल

उदावर्त, गुल्म (वायगोला) आनाह (अफ़ारा)

नाराचरस—कीमत १) तोला। बृ० इच्छा भेदी रस—मूल्य ।।।) तोला। वज्रक्षार—मूल्य ८ तोला १।।) इसके सेवन से वायगोला—शूल, अजीर्ण, सूजन, उदररोग, बढ़ी हुई तिल्ली ये रोग जल्दी आराम होते हैं। मात्रा १ माशे से २ माशे तक।

विन्दुघृत—यह गुल्म, अफ़ारा, कोष्ठबद्धता में एक अक्सीर दवा है इसके सेवन से पेट के क्रिमी भी शीघ्र मर जाते हैं। इसकी जितनी विन्दुएं घृत में मिलाकर पी जावें उतने ही दस्त आते हैं। मूल्य ।।) तोला

दन्ती हरीतकी—इसके सेवन से, तिल्ली, सूजन गुल्म, बवासीर, हृद्रोग, पाण्डु, ग्रहणी इत्यादि रोग जड़ मूल से नष्ट होजाते हैं। मात्रा १-२ तोले तक

गुल्मकालानल—मात्रा २ रत्ती हरड़ के क्वाथ से। मूल्य ।।।) तोला

प्राणवल्लभ रस—यह वात पित्त, कफ, रक्तगुल्म प्रमेह, कुष्ठ, वातरक्त वगैरा को शीघ्र ही दूर करता है। इसकी मात्रा ३ रत्तीका दूध या उष्ण जल से लेवें! मूल्य ।।) तोला

हृद्रोग (दिल की बीमारियाँ)

अर्जुन घृत—(भै० र०) मूल्य ८ तोले १)

त्रिनेत्र रस—इसके सेवन से हृदय के सब प्रकार के रोग शीघ्र ही आराम होते हैं। मूल्य ४) तोला।

चिन्तामणि रस—इसमें सोना, चाँदी की भस्में पड़ती हैं। यह फेफड़े की सब तरह की बीमारी, प्रमेह—भयंकर खाँसी और साँस को दूर करता हैं। मात्रा १ रत्ती गेहूँ के काढ़े से मूल्य १२) तोला।

शंकर वटी—अनुपान गरम जल से २ रत्ती लेवें मूल्य १) तोला।

पार्थाद्यरिष्ट—इसके सेवन से हृद्रोग में उत्पन्न मानसिक कमजोरी शीघ्र ही नष्ट होता है। मूल्य १८ औंस शीशी १)।

मूत्रकृच्छ्र

(पेशाब का मुश्किल से चीस चबक मार कर आना)

मूत्राघात

(पेशाब का बन्द हो जाना)

अश्मरी (पथरी) उष्णवात (सूज़ाक)

तारकेश्वर रस—यह रस मूत्राशय (मसाना) की कमज़ोरी को दूर करके, पेशाब को खुलासा और साफ़ लाता है, बड़ा पौष्टिक है मूल्य ३) तोला।

चन्द्रप्रभा वटी—यह प्रमेह (जरियान) की बड़ी खास दवा है, इसके सेवन से स्वप्न दोष, सूज़ाक (पूयमेह) शीघ्र आराम होता है। मूल्य १) तोला।

कुशावलेह—यह सूज़ाक की अकसीर दवा है। मूल्य ८ तोले ।।।)

चन्दनासव—सूज़ाक और पैत्तिक मूत्रकृच्छ्र की खास दवा है। मूल्य १।।) पौण्ड १

एलादि चूर्ण—मात्रा ८ रत्ती। चावलों के पानी के साथ। मूल्य ।।) तोला।

बृहद्गोक्षुराद्यवलेह—मात्रा २ माशे से ४ माशे तक।

चन्द्रकला रस—३) तोला।

त्रिविक्रम रस—मात्रा ½ आधी रत्ती बिजौरे की जड़ के चूर्ण या स्वरस से देवें। मात्रा २) तोला।

प्रमेह, मधुमेह (डायबिटीज़) बहुमूत्र, धातु—दौर्बल्यता

न्यग्रोधादि चूर्ण—यह एक बहुत उत्तम सर्व प्रमेह नाशक चूर्ण है। इसके थोड़े दिन के सेवन से ही २० प्रकार के प्रमेह जड़ से नष्ट हो जाते हैं। मात्रा १ माशे से ३ माशे तक, त्रिफले के काढ़े से। मूल्य ।।) तोला।

देवदार्व्यरिष्ट—मूल्य १६ औंस १।)

चन्दनासव— " १६ " १।)

लोध्रासव— " १६ " १।)

ये आसव प्रमेह, मूत्रकृच्छ्र, शुक्रमेह, मधुमेह और प्रदर रोग इनको ही शीघ्र शान्त

करके शरीर में शक्ति उत्पन्न करते हैं। भूख को बढ़ाते हैं।

बसन्त कुसुमाकर—यह रस सोना, चाँदी, मोती, लोह इत्यादि बहु मूल्य द्रव्यों के योग से तैयार किया जाता है, यह पुराने से पुराने प्रमेह, मधुमेह को दूर कर कुछ ही दिन में शरीर में शक्ति उत्पन्न करता है, तपेदिक की खास दवा है। मूल्य २४) तोला।

चन्द्रप्रभा—मूल्य ।।।) तोला।

स्वर्ण बँग—मूल्य ४) तोला।

सोमनाथ रस भै० र०—इसके सेवन से पेशाब में शक्कर व चर्बी का आना शीघ्र बन्द हो जाता है। और स्त्रियों के चारों प्रकार के प्रदरों की तथा सोमरोग की एक बड़ी चमत्कारिक दवा है। बहु मूत्र को शीघ्र ही नष्ट करती है। मूल्य ३) तोला।

शिलाजत्वादि वटी—मूल्य २०) तोला। ये गोलियाँ दर्द गुर्दा, पथरी, मूत्राघात, पेशाब में धातु का मिल कर आना, इन सब शिकायतों को दूर करने में जादू का सा असर दिखाती हैं।

चन्दनादि चूर्ण—१ तोला ।।=)।

बृहद् बङ्गेश्वर रस २०) तोला।

स्थौल्यता [शरीर का मोटापन]

अमृताद्य गुग्गुलु मूल्य ।।।) तोला।

नवक गुग्गुलु—इसके सेवन से मेदः रोग (चर्बी का बढ़ना) कफ के रोग, आम वात (गठिया) ये शीघ्र ही शान्त होते हैं।

लौह रसायन—मूल्य २) तोला।

उदर रोग-जिगर-तिल्ली

नारायण चूर्ण—इसमें विरेचन होकर सब प्रकार के उदररोग शीघ्र शान्त होते हैं। मूल्य =) तोला।

जलोदरारि रस—मूल्य १।।) तोला।

रोहितकारिष्ट—इसके सेवन से उदर के सम्पूर्ण रोग तिल्ली, जिगर, बवासीर, कुष्ठ, कामला यह सब रोग शीघ्र ही शान्त होते हैं। मूल्य १६ औंस १।)

यकृदरि लोह—यह (यकृत) जिगर के रोगों की एक श्रेष्ठ दवा है। जिगर के बढ़ने से पैदा हुई कामला (आँखों का पीलापन) ज्वर को भी शान्त करता है। मूल्य १) तोला।

शङ्खद्राव १) शीशी ड्राम १

अर्कलवण—मूल्य ।।।) तोला।

कुमार्यासव—(शा० ध०) मूल्य १६ औंस की शीशी का १।)

लोहासव—(शा० ध०) मूल्य १६ औंस की शी० का १)

लोकनाथ रस—(भै० र०) मू० २।।) तोला।

अभया लवण—८ तोले का १)

बिन्दु घृत—१) तोला

इच्छा भेदी रस—।।) तोला

नाराच रस—।।।) तोला

विद्याधर रस—(मात्रा ½ रत्ती मधु के साथ) मूल्य २) तोला

महामृत्युञ्जय लोह—इसके सेवन से तिल्ली-जिगर-गुल्म यकृत क्षय (जिगर का छोटा होजाना) पाण्डु-कामला इत्यादि रोग जड़ से नष्ट होजाते हैं।

शोथ (सूजन)

पुनर्नवादि गुग्गुलु—(मात्रा १ माशा जल के साथ) मूल्य ।) तोला

त्रिनेत्राख्यो रस मूल्य ३) तोला (मा: ½ रत्ती से १ रत्ती अपा मार्ग के रस के साथ)

शोथ कालानल रस—(मात्रा १ रत्ती तान मखाने के रस के साथ) मूल्य १।।) तोला

पञ्चामृत रस—मूल्य १) तोला (मात्रा ½ रत्ती से १ रत्ती तक अदरख के अर्क के साथ) इस रस के सेवन से शरीर के एक भाग में या सम्पूर्ण शरीरमें उत्पन्न हुई सूजन शीघ्र शान्त होजाती है, और सांस, खांसी आदि इसके उपद्रव भी शीघ्र दूर हो जाते हैं।

पुनर्नवारिष्ट—मूल्य ४० तोले का (एक पौंड) का १।) रुपया

शुष्क मूलादि तैल—५ तोला का मूल्य ॥) आने

दुग्धवटी—मूल्य ।।।) तोला दुग्ध के साथ मात्रा १ रत्ती

तक्रवटी—(मात्रा २ रत्ती छाछ के साथ) इसमें नमक और पानी बन्द करके भूख प्यास में भी तक्र (छाछ) ही पिलावे मूल्य १) तोला

अन्त्रवृद्धि, गलगण्ड 'कण्ठमाल' विद्रधि: श्लीपद

शशि शेखर रस—मात्रा २ रत्ती मूल्य २) तोला

वातारि रस—मात्रा ४ रत्ती अनुपान तिल तैल अदरख का रस। मूल्य १) तोला

छुच्छुन्दरी तैल—इस तैल की मालिश से कण्ठमाला बहुत शीघ्र अच्छी हो जाती है। मूल्य ।।।) ५ तोले

सिन्दूरादि तैल—यह भी अत्यन्त लाभ दायक तैल है पहिले के समान शीघ्र ही कण्ठमाला को दूर करता है। मूल्य ।।।) ५ तोला

काञ्चनार गुग्गुलु—८ तोले ।।।)

विडंगारिष्ट—१६ औंस शीशी १।)

नित्यानन्द रस—मूल्य २) तोला

श्लीपद गज केसरी—मात्रा रत्ती १ गरम जल से। मूल्य ।।।) तोला

व्रण, शोथ-भगन्दर-नाड़ीव्रण [नासूर]

त्रिफला गूगल—मूल्य ≈) तोला

सप्ताङ्गगूगल—मूल्य ≡) तोला

जात्यादिघृत व, तैल—यह घृत सब तरह के जख्मों की पीपको साफ करके शीघ्रही भर देता है। मूल्य ।≈) तोला

विपरीत मल्ल तैल—यह चाकू तलवार छुरा आदि से कटे हुए स्थान, उपदंश, नासूर, कोढ़, खुजली इत्यादि पर बहुत लाभदायक है।

बृहद् व्रण राक्षस तैल—मूल्य ।) तोला। इसे जख्म में भरने से चाहे वह कैसा ही जहरीला जख्म क्यों न हो शीघ्र ही नष्ट होता है।

जात्यादिवर्ति—यह नासूर में अन्दर लगाने से पीप को बहुत जल्दी साफ करती है।

सप्तविंशति को गुग्गुलुः—यह विशेष कर भगन्दर, खाँसी, सांस, हृदय, पँसवाड़े, कुक्षि, मसाने इत्यादि में उत्पन्न हुए शूलों को शीघ्र दूर करता है। मात्रा ४ रत्ती मधु से।

उपदंश—आतशक

वरादि गुग्गुलुः—इसके सेवन से रक्त की खराबी, दूषित व्रण (जख्म) और आतशकके व्रण सूखकर शरीर में शुद्ध रक्त का सञ्चार होता है। मात्रा ४ रत्ती से २ माशे तक मूल्य ॥ तोला

सारिवाद्यरिष्ट—यह उपदँश, वातरक्त, कुष्ठ, सूजाक, इत्यादि रोगों के लिये एक ही अक्सीर दवा है। मूल्य १६ औंस १।)

फिरंग गजकेसरी—(योग रत्नाकर) मूल्य १॥) तोला

रस कपूर (र० सा० सं)—मूल्य १ तोला ॥)

शीतपित्त, उदर्द, कोठ

हरिद्रा खण्ड—इसके सेवन से पित्ती का उछलना कण्डू (खाज) दाद इत्यादि खून के विकार शीघ्र ही शान्त होते हैं।

आर्द्रक खण्ड—मात्रा ६ माशे मूल्य ।) तोला

श्लेष्मपित्तान्तक रस—मूल्य ॥) तोला मात्रा २ रत्ती,

मसूरिका (माता छोटी)

ऊषणादि चूर्ण—मात्रा १ माशे मूल्य ।) तोला।

सर्वतोभद्र रस—मूल्य १५) तोला

इन्दुकलावटी—मूल्य १२) तोला

एलाद्यरिष्ट—मूल्य १६ औंस १॥)

क्षुद्ररोग

मूषिकादि तैल—यह बच्चों की कांच के निकलने में अक्सर गुदा में लगाया जाता है।

कुंकुमाद्य तैल—इस तैल को मुंह पर लगाने से झाईं, मुँहासे इत्यादि बहुत शीघ्र दूर हो

कर चमड़ी मुलायम चेहरा खूबसूरत और सोने के समान रंग वाला सुन्दर बन जाता है। मूल्य ८ तोला १।)

भृंगराज तैल—इसके लगाने से बालों का गिरना, शिर का दर्द, गंजापन इत्यादि दूर होकर उनकी जड़ें मज़बूत होती हैं, और वे चिकने घुंघर वाले होजाते हैं। मूल्य ८ तोला ।।।)

चन्दनादि तैल—इसको नाक में टपका कर नस्य लेने से, बालों का सफेद होना, जल्दी गिरना दूर होकर बाल भौंरे के समान शीघ्र ही काले रंग के निकलते हैं। मू० ८ तोला ।।।)

मुंह-आंख, नाक, कान, नेत्र के रोग

बृ० खदिर वटिका—इसको मुख में रखके चूसने से कण्ठ, होठ, जीभ, दांत, तालु इन के रोग शीघ्र ही दूर होते हैं, मुख सुगन्धि युक्त और दांत दृढ़ होकर मुंह के छाले घाव वगैरा सब शीघ्र शान्त होजाते हैं। मू० १ डिब्बा ≡)।।

क्षारतैल—(भै० र०) इस तेल के कान में डालने से, कान का बहना, दर्द, कीड़ों का पड़ जाना, धुन २ आवाज का होना, बहरापन, बहुत जल्द दूर होजाता है। मूल्य १ शीशी ।।)

दार्व्यादि तैल—(भै० र०) मूल्य १ शीशी ।।)

स्वर्जिकादि तैल—मूल्य १ शीशी ।)

चित्रक हरीतकी—इसके सेवन से पुराने से पुराना जुकाम, पीनस, खांसी, सांस, मन्दाग्नि गुल्म, उदावर्त, बवासीर इत्यादि शीघ्र नष्ट होते हैं।

चन्द्रोदयादिवर्ती—इसको घिसकर आंख में लगाने से, रतौंदा (रात्रि में न दीखना) आंखमें ढलका (नेत्र स्राव) इत्यादि शीघ्र ही दूर होता है।

महात्रिफलाद्य घृतम्—जिनकी हर साल आंखें दुःखनी आती हों, दृष्टि दुर्बल हो, आंखों में खाज और ललाई रहती हो उनके लिये यह घृत अमृत के समान गुणकारी है। मूल्य ८ तोला १)

नयनामृताञ्जन—यह बहुत उत्तम सुर्मा है, और आंखों के सब रोगों के लिये रामबाण दवा है मूल्य १ तोला १)

षड्बिन्दु तैल—इस तेल का प्रतिदिन २-२ बिन्दु नाक में डालने से बहुत दिन का पुराना सिर का दर्द जल्दी दूर होता है। मूल्य ८ तोला ।।।)

महालक्ष्मी विलास—इसकी २ रत्ती मात्रा जल से लेने पर पुराने से पुराना सिर का दर्द बहुत जल्द दूर होता है। मूल्य १ तोला ५)

अपामार्ग तन्दुलीय नस्य—(चरक) इसको सूंघने से आधा शीशी, सूर्यावर्त, जुखाम

पीनस, इत्यादि शीघ्र आराम होते हैं।

मूल्य १ तोला ।=)

स्त्रियों के खास २ रोगों की कुछ औषधियां

पुष्या नुग चूर्ण—इसे १ माशे से २ माशे तक शहद में मिला कर चाटें फिर ऊपर से चावलोंका भिगोया हुवा पानी पिलावें इससे चारों प्रकार के प्रदर शीघ्र ही दूर होते हैं।

मूल्य =) तोला।

प्रदरान्तक लौह—यह प्रदर (सफेदी) की खास मशहूर दवा है, इससे कमर का दर्द हड़-फूटन, खून की कमी और प्रदर से उत्पन्न वायु के रोग भी शीघ्र दूर हो जाते हैं मूल्य १।।) तोला।

शिलाजतु वटिका—मात्रा ६ रत्ती से १।। माशे तक अनार के रस से। मूल्य ।।।) तोला।

अशोकारिष्ट—यह प्रदर की एक मात्र अव्यर्थ प्रसिद्ध महौषध है इसको प्रतिदिन १।-१। तोला भोजन बाद पीना चाहिये इससे सब प्रकार का प्रदर अवश्य शीघ्र ही नष्ट होता है। मूल्य १६ औंस १।)

पत्रांगासव—मूल्य १६ औंस १।)

फलकल्याण घृत—जिस स्त्री के गर्भ न ठहरता हो, अथवा ठहर कर गिर जाता हो, या लड़कियां ही लड़कियां उत्पन्न होती हों, उनके लिये यह घृत अमृत तुल्य रसायन है। इसके सेवन से हृष्ट, पुष्ट, और दीर्घ जीवी सन्तान पैदा होती है। मूल्य २) रु० २० तोले।

रजः प्रवर्तिनीवटी—इससे मासिक धर्म की रुकावट, नलों में दर्द इत्यादि शीघ्र ही दूर होकर मासिक धर्म खुलासा होजाता है।

मूल्य ।–) तोला।

गर्भ चिन्तामणि रस—यह रस गर्भिणी स्त्री के ज्वर, प्रदर, दाह, और प्रसूत रोग की सर्वोत्तम औषध है। मूल्य ६) तोला।

सौभाग्य शुण्ठी मोदक—मूल्य ८ तोला ।।।)

मात्रा ६ माशे से २ तोला तक गर्म दूध से।

सूतिकारि रस—मात्रा ½ रत्ती अदरक के अर्क से। मूल्य १।।) तोला।

सूतिकाहर रस—मात्रा १ रत्ती। मूल्य २) तोला

जीरकाद्यरिष्ट—मात्रा २ तोला भोजन बाद।

मूल्य १६ औंस १।)

बालरोगाधिकारः

बालचातुर्भद्रिका—यह बच्चों के सांस खांसी, ज्वर-अतीसार इत्यादि को रोकता है। मात्रा ४ रत्ती से ८ रत्ती मधु या माता के दूध से। मूल्य =) तोला।

शृङ्ग्यादि चूर्ण—यह भी ऊपर लिखे फायदे करता है। मूल्य =) तोला।

दन्तोद्भेदगदान्तक—मात्रा २ रत्ती । मूल्य ॥) तोला ।

कुमार कल्याण रस—मात्रा ३ रत्ती माता के दूध से। यह रस बच्चों के ज्वर, श्वास, वमन, इत्यादि कष्टसाध्य रोगों को दूर करके बच्चों को हृष्ट, पुष्ट, सुन्दर बनाने में अद्भुत गुण करती है। इसमें सोना-मोती इत्यादि बहुमूल्य द्रव्य पड़ते हैं। मूल्य २०) तोला ।

महागन्धक—मात्रा १ रत्ती से ६ रत्ती तक। मूल्य १) तोला, यह बच्चों के हरे-पीले दस्त, ज्वर, दूध गेरना वगैरा के लिये बड़ी लाभदायक औषधि है।

अरविन्दासव—यह अत्यन्तस्वादिष्ट, मीठा, बच्चों को मोटा, ताजा, बनाने वाला एक अर्क है। मू० १६ औंस की शीशी ३॥)

विषरोगाधिकारः

दशाङ्गोऽगद—एक चूर्ण है। गर्म जल के साथ लेने से सब प्रकार के कीट विष (बिच्छू आदिके जहर) दूर होते हैं। मूल्य ।≈) तो० ।

शिरीषारिष्टम्—मात्रा १। तोला से २॥ तोले तक मूल्य १६ औंस १)

रसायन-वाजीकरण

(कुव्वते बाह को बढ़ाने वाली दवाइयां)

लक्ष्मी विलास—इसके सेवन से-अट्ठारह प्रकार के कुष्ठ, बीस प्रकार के प्रमेह, वात, पित्त, कफ के अनेक प्रकार के रोग दूर होकर शरीर में अपूर्व शक्ति उत्पन्न होकर वृद्ध मनुष्य भी युवा के समान्य पराक्रमी होकर अनेक स्त्रियों से सम्भोग कर सकता है। यह अपने ढंग को एक ही दिव्यगुण युक्त अमृत तुल्य रसायन है। अत्यन्त स्तम्भन शक्ति को उत्पन्न करती है। मूल्य २) रु० तोला मात्रा ३ रत्ती पान के अर्क से।

वसन्तकुसमाकर रस—इसमें कस्तूरी, मोती, सोना चाँदी इत्यादि बहुमूल्य पौष्टिक द्रव्य पड़ते हैं यह मधुमेह (डायबिटीज) और उससे उत्पन्न हुई कमजोरी, धातु क्षीणता दिल व दिमाग की दुर्बलता को दूर करने के लिये एक बड़ा ला जवाब दवा है। मूल्य २५ तोला।

मकरध्वज—५) तोला ।

षड् गुण वलि जारित मकरध्वज—८) तोला

इस चमत्कारिक. अमृत तुल्य रसायन, महौषधि के गुण बालक-वृद्ध-युवा सभी मनुष्य अच्छी प्रकार जानते हैं। यह वही दवा है कि जिसके बल से वैद्य लोग मृत्यु के मुख से भी रोगी को निकाल लेते हैं आज तक इस के समान गुण कारी दवा किसी वैज्ञानिक ने ईजाद नहीं की। यही आयुर्वेदकी महत्ता है।

नारसिंह चूर्ण—यह एक बड़ी ही पौष्टिक, वीर्य विकारों के लिये अक्सीर दवा है। मूल्य ।) तोला

कामदेव घृत—मूल्य ८ तोला १॥)

कामाग्नि संदीपन मोदक—मूल्य १ पाव २)

मदनानन्दमोदक—मूल्य १ पाव २)

श्री गोपाल तैल—यह तैल अत्यन्त वायु नाशक है इसकी दो या ३ बूंद लिंगेन्द्रिय पर मालिश करने से इन्द्रिय का तिरछापन व टेढ़ापन शीघ्र दूर होकर ध्वजभंग (नामर्दी) व सुस्तीपन दूर होती है।

मन्मथाभ्र रस—मूल्य ३।) तोला।

बृहत् चन्द्रोदय मकरध्वज—इसको २ रत्ती पान में रख कर खाना चाहिये। मूल्य ६) तोला

पूर्ण चन्द्र रस—३) तोला।

चन्दनादि तैल—यह तैल—रक्तपित्त, क्षय, ज्वर, दाह, दौर्गन्ध्य, कुष्ठ, कण्डू इत्यादि को बहुत जल्द दूर करके शरीर में नवीन शक्ति का संचार करता है। मूल्य २॥) पाव भर।

दशमूलारिष्ट—१६ औंस शीशी २)

शुक्र वल्लभ रस—इसमें सोना, चाँदी की भस्में पड़ती हैं, अत्यन्त वीर्य स्तम्भक, व उत्तेजक है। मूल्य १०) तोला मात्रा ४-८ र० तक दूध में

कामिनी विद्रावण रस—मूल्य १ तोला मात्रा १-३ रत्ती दूध से।

नोट—हर प्रकार के स्वादिष्ट व पौष्टिक पाकों के लिये हमारा पाक मंजरी नाम की पुस्तक मुफ्त मंगा कर देखिये।

कुछ यूनानी अनभूत सिद्ध औषधियां।

इत्रिफल जवानी—नजले की शिकायत में अक्सीर है, मस्तिष्क को शुद्ध करता है, सर, पेट के दर्द के लिये मुफीद है, आँखों की रोशनी को बढ़ाती है मूल्य)॥ तोला मात्रा ६ मासे १ तोला तक।

त्रिफल कशनीजी—दिमागी बीमारी, पुराने दर्द सर, मेदे की तपखीर और उस के दर्द को दूर करता है। कब्ज के लिये अक्सीर है, बवासीर में विशेष लाभदायक हैं, नजले की कुल बीमारियों में अक्सीर है। मात्रा ६ मासे से १ तोले तक)॥ प्रति तोला

दर्पाशा—कम्पन वाय, किसी बात को भूल जाना (स्मृति नाश), कुलंज का दर्द, मालीखोलिया, जुकाम, नजले में अक्सीर है, मात्रा ६ रत्ती सुबह या रात को सोते समय अर्क गाजुवाँ से। फी तोला ≡)

तिर्याक् नजला—सब तरह की खांसी और नजले में मुफीद है। फी तोला)॥

जवारिश जालीनूस (काफ़ानी)—मेदे की बीमारियों के लिये यूनानी हकीमों की एक मानी हुई बड़ी मशहूर दवा है, सब अवयवों को शक्ति देता है, पेट के दर्द को दूर करती है, भोजन को हजम करती

है, मुख की दुर्गन्ध को दूर करती है, रिहार (वायु) को खारिज करती है, जनून (पागलपन) दर्द सर, बलग़मी खाँसी, बादी बवासीर, गठिया, सीप, पेशाब की ज्यादती, गुर्दे और मसाने की पथरी में मुफ़ीद है, बालों को स्याह रखती है। मैथुन शक्ति को प्रबल करती है, भूख खूब लगाती है, कब्ज़ को रफ़ा करती है मात्रा ६-६ माशे सुबह शाम फी तोला ≈)

जवारिश कमूनी (कबीर)—मेदे और आँतों और दिल को क़ुवत देती है, कब्ज़ कुशा, है, पेट के दर्द और कुलंज (आंत के दर्द) को दूर करती है। मनी, डकारों और हिचकी को दूर करती है ।।। तोला

जवारिश मस्तगी—मेदे की सर्दी और उम्र की कमजोरी को दूर करती है, धड़कन, व कफ, अतिसार, बहु मूत्रता, मुख से पानी बहने में बहुत गुणदायक है, जिगर को कुवत देती है। फी तोला)।। खुराक ६ माशे।

जवाहर मोहरा—यह यूनानी अदवियात में एक मानी हुई अजीब व गरीब दवा है इसका सेवन दिल व दिमाग को कुवत देता है, स्वाभाविक शारीरिक उष्णता की रक्षा करता है। मूर्छा व दिल की धड़कन को दूर करता है, यह सोना, मोती, जवाहिरात का मुरक्कब है सख्त बीमारियों की कमजोरी को दूर करता है, मात्रा दो चावल इसे खमीरा गावज़ुबाँ में खावें। ४) रु० माशे

हब्बे जदवार—दिल व दिमाग को ताकत देती है, मणि के पतलेपन को दूर करती है, काम शक्तिवर्धक खाँसी और नजले को नष्ट करती है। मात्रा १-२ गोली तक सुबह या रात के समय। प्रति तोला १)

हब्बे रसौत—बवासीर के खून व दस्तों को रोकती है, प्रति तोला ।)

खमीरे गाजुवाँ अम्बरी—दिल व दिमाग, आंखों की रोशनी को कुव्वत, और स्मृति शक्ति को बढ़ाता है, दिमागी काम करने वालों को जरूरी चीज़ है, ≈) तोला

खमीरे गाजुवाँ अम्बरी (जवाहरवाला)—यह ऊपर के खमीरे से ज्यादा गुणकारी है, प्रति तोला ।) और सोने के वर्क वाला ।।) तोला

खमीरा मुरवारीद—दिल व दिमाग को ताकत देता है, खफ़क़ान व दिल की धड़कन, में बड़ा मुफीद है। रक्तातिस्राव की कमजोरी को दूर करता है, मोतीभरा, और चेचक, में बड़ी कामयाब चीज़ है, दानों को बाहर निकाल कर दिल की गर्मी व घबराहट को दूर करती है। फी तोला ।।)

दवाउल मिस्क (बारिद जवाहर वाली)—धड़कन, व दिमागी परेशानी को दूर कर के जीवन शक्ति और दिल व दिमाग को

कूवत देती है, दिल की कमज़ोरी व गर्मी को दूर कर के दिल को फ़रहा करती है। मूल्य ।।।) तोला

खमीरा आबरेशम हकीम अर्शदवाला—सब तरह की (वायु) सौदावी बीमारियों को फ़ायदा करता है, दिल, दिमाग़ और जिगर को ताक़त पहुँचाने में अजीब व ग़रीब है। खाने में बहुत ही स्वादिष्ट है, दिलकी धड़कनको जल्द दूर करता है। ।।।) फी तोला मात्रा ३ माशे से ६ माशे तक।

अर्क़ अम्बर—दिल व दिमाग़ और आज़ा रईसा को ताक़त देने में बेमिसाल है। हर प्रकार की मूर्च्छा, बवासीर या हैज़ (मासिक धर्म) ख़ून के ज़्यादह निकलने से जो दुर्बलता होती है, उनके लिये यह अमृत तुल्य है। यह अपना असर तुरन्त ही करती है। फी बोतल २।।) रु०

अर्क़ गाज़र अम्बरी—चेहरे को सुर्ख़ करता है। नवीनरक्त को उत्पन्न करके, दिल व दिमाग़ को कुव्वत देता है। फी बोतल २)

माजून जालीनूस लूलुई (मोतीवाली)—कुव्वतेबाह और क़ब्ज़ियत को बढ़ाती है, तज़लक़ी और अधिक मैथुन से, गुर्दे, मसाने, इत्यादि में कमज़ोरी आकर, दौराने ख़ून में जो दुर्बलता आ जाती है उसको असली हालत में ले आती है, लिंगेन्द्रिय में सख़्ती और ताक़त पैदा करती है, जोश को देर तक क़ायम रखती है, मर्द की अज़मत क़ायम रखती है, चेहरे का रंग निखारती है, ख़ून ख़ूब पैदा करती है, गई हुई शक्ति को फिर वापिस लाती है। १) फी तोले ख़ुराक ६ माशे।

नोट—अर्क़ों का ख़ास सर्टिफ़िकेट नुमाइश आल आल्यांर में दीजिये।

माजून हाफ़िज़ उल जनीन (अम्बरी) उलिवखाँ—जिन स्त्रियों का हमल बार २ गिर जाता है या बच्चा पैदा होने के बाद परछाँवे या कमेड़े की बीमारी से मर जाता हो, हमल के दिनों में इसको इस्तैमाल करना चाहिये। इससे हमल नहीं गिरेगा, और बच्चा सम्पूर्ण तन्दुरुस्त पैदा होगा। और गर्भ वाली स्त्री की शक्ति पूर्णतया क़ायम रहेगी। अकसर तजुर्बे में आया है कि इसके इस्तैमाल से लड़के पैदा हुए हैं। इसको तीसरे महीने से ही खिलाना शुरू कर देना चाहिये। मात्रा ५ माशे अर्क़ गुलाब के साथ सुबह के वक़्त खावें। मूल्य ।।) तोला।

मुफ़र्रह याक़ूती—सब तरह की कमज़ोरियां को दूर करती है, दिल व दिमाग़को कुव्वत पहुँचा कर भूख ख़ूब बढ़ाती है, दस्तों और गर्भाशय (रहम) की बीमारी में बड़ी मुफ़ीद है। ।।) तोला ख़ुराक ३ माशे।

शास्त्रीय औषधियों के थोक भाव की संक्षिप्त सूची

कूपी पक्व रसायनें

औषधि नाम	ग्रन्थनाम	मूल्य
मकरध्वज (षड्गुण बलि जारित स्वर्ण घटित विषोपविष संस्कारित पारद वाला)	र० रा० सु०	१तो० ६०)
मकरध्वज (त्रिगुणबलि जारित स्वर्ण घटित)	,,	१तो० २४)
मकरध्वज (हिंगुलोत्थ पारदद्वारा निर्मित स्वर्ण घटित षड्गुणबलिजारित)	र० सा०	१ तो० ८)
मकरध्वज (स्वर्ण सिन्दूर द्विगुण बलि जारित)	,,	१ तो० ६)
रस सिन्दूर (द्विगुण बलि जारित)	रसायन सार	१ तो० २)
रस सिन्दूर (सम भाग बलिजारित)	रसेन्द्र	१तो० ५॥)
मल्ल सिन्दूर	सि० भै०	१ तो० ४)
ताल सिन्दूर	र० सा०	१ तो० ४)
शिला सिन्दूर	,,	१ तो० ३)
ताम्र सिन्दूर	,,	१ तो० ३)
नाग सिन्दूर	,,	१ तो० ३)

औषधि नाम	ग्रन्थनाम	मूल्य
स्वर्ण वंग	योग र०	१ तो० ३)
रस कपूर	र० सा० सं०	१ तो० १)

पर्पटी

औषधि नाम	ग्रन्थनाम	मूल्य
स्वर्ण पर्पटी	र० सा०	१तो० १०)
विजय पर्पटी	र० रा० सु०	१तो० १२)
विजय पर्पटी नं० १	,,	६मा० १२)
पञ्चामृत पर्पटी	भै० र०	१तो० १॥)
रस पर्पटी	र० रा० सु०	१ तो० १)
लौह पर्पटी	,,	१ तो० १)
बोल पर्पटी	र०सा०सं०	१ तो०॥)
ताम्र पर्पटी	रा०रा० सु०	१तो०१॥)
श्वेत पर्पटी	र० रा० सु०	१तो० ≈)
जौहर संख्या	उपदंश हर, तथा बलकारक	१तो० २)
जौहर ताल	रक्त शोधक कुष्ठ, उपदंश नाशक।	१तो० २)
हम्मीर रस	उपदंश (आतशक)की खास दवा	१तो०२॥)
रस माणिक्य	कुष्ठनाशक	१तो० १)

बृहत आयुर्वेदीय औषध भाण्डार (रजिस्टर्ड) जौहरी बाजार, देहली ।

भस्में

औषधि नाम	ग्रन्थनाम	मूल्य
स्वर्ण भस्म	शा०ध०सं०	१तो० ४८)
रौप्य (चांदी) भस्म	र०सा०सं०	१तो० ४)
रौप भस्म नं २	,,	१ तो० ३)
ताम्र भस्म नं १ (कज्जली द्वार जारित)	र० रा० सु०	१ तो० २)
ताम्र भस्म नं० २ (गंधक जारित)	,,	१ तो० १
मुक्ताभस्मनं१(कज्जलीद्वारा)	रसे०	१ तो० ४२)
मुक्ता भस्म नं २ श्वेत	,,	१तो० ४०)
मुक्ता शुक्ति भस्म	रसत०	१तो० १॥)
लौह भस्म नं० १ (हिंगुल जारित)	र० रा० सु०	१तो० २॥)
लौह भस्म नं० २ (वनौषधि द्वारा)	,,	१तो० १॥)
बंग भस्म (हरिताल द्वारा जारित निरुत्थ)	,,	१ तो० २)
बंग भस्म श्वेत	रसे० सं०	१तो० १॥
नाग (सीसा भस्म नं १ (मैनसिल से मारी हुई निरुथ)	भाव०शार्ङ्ग०	१ तो० ३)
नाग भस्म नं० २	र० सु०	१ तोले १॥)
यशद भस्म	,,	१ तो० १॥)
त्रिधातु (त्रिवंग भस्म)	र० सा०	१ तो० २॥)
मंडूर भस्म	र० सा० सं०	१ तो० १)
स्वर्ण माक्षिक भस्म	,,	१ तो० २॥)
रौप्य माक्षिक	,,	१ तो० २)
श्वेत अभ्रक भस्म (यह प्राय: सांस, खाँसी के लिये यूनानी चिकित्सा में काम आती है)	र० श० सु०	१ तो० १॥)
वज्राभ्रक भस्म	,,	१ तो० ७॥)
कृष्णाभ्रक (सहस्र पुटित)	,,	१ ,, १०)
कृष्णाभ्रक नं० १		,, १०)
,, नं० २		,, ६)
शंख भस्म	र० सा० सं०	,, ॥=)
कपर्दिका भस्म (कौड़ी)	,,	,, ॥=)
प्रवाल भस्म (चन्द्र पुटी नं० १)	,,	,, ३॥)
प्रवाल भस्म नं० २	,,	,, १॥)
गोदन्ती हरिताल ,,	,,	,, ॥।=)
गोदन्ती भस्म नं० १	,,	,, ।॥)
स्फटिका भस्म	रस तरङ्गिणी	,, ।–)
पित्तल भस्म	,,	,, १॥)
कांस्य भस्म	,,	,, १॥)
शृंग भस्म (अर्क दुग्ध से बनी हुई)	,,	,, ।)
तबकी हरिताल भस्म	र० रा० सु०	१ तो० ४॥)
संखिया भस्म	रस तरङ्गिणी	,, ३)
लाजवर्द (राजा वर्त)	र० रा० सु०	,, २)

यूनानी भस्में

औषधि नाम	ग्रन्थ नाम	मूल्य
अकीक भस्म	पुराना ज्वर- हृदय की धड़कन गुर्दा (वृक्क) रोग	१ तो० १)

औषधि नाम	ग्रन्थ नाम	मूल्य
संगेयहूद भस्म न० १	पथरी वृक्क रोग-मूत्र कृच्छ्र नाशक	१ तो० १)
संगेपशब भस्म	हृदय रोग उन्माद हृदय की धड़कन धनु स्तम्भ प्रसूता का मद ज्वर, हाथ पैर ऐंठना, हिस्टीरिया।	१ तो० ॥)
संगजराहत भस्म	कास, रक्त, वमन, श्वेतप्रदर, मूत्र कृच्छ्र इनको नष्ट करता है, शीतल है।	१ तो० ।)
हजरुलयहूद भस्म न० २	शीतल, दाह नाशक, वृक्क रोग पथरी, इनको नष्ट करती है।	५ तो० १॥)
फ़ीरोज़ा भस्म	शीतल—हृदय को बलदायक, रक्तस्तम्भक, रक्त प्रदर, नकसीर, ज्वर, इनको नष्ट करता है।	४ तो० १)

औषधि नाम	ग्रन्थ नाम	मूल्य
ज़मर्रुद भस्म	दिमाग़ी कमज़ोरी, पैत्तिक रोग, पट्ठों की कमज़ोरी, बुद्धि की मन्दता,	४ तो० १)

शोधित द्रव्य

शुद्ध रूमी शिंगरफ़ (हिंगुल)	शार्ङ्ग० रसे० भाव०	१०तोले ४)
शु० आमलासार गन्धक	,,	२० तो० २)
हिंगुलोत्थ पारद	,,	२० ,, ६॥)
संस्कारित पारद	रस०रा०रसा०	४ ,, ३०)
शु० पारद	,,	४तो०१॥।=)
शु० जयपाल	,,	१०तो० ३॥)
शु० वर्की हरिताल	,,	१० ,, ३)
शु० विष	,,	१०तो० १।)
शु० भल्लातक	रसे०-भाव०	१० ,, ४)
शु० मैनासल	रसे०-सुन्दर	१० ,, १।।)
शु० कुचला विषतिन्दुक	रस०	१० ,, १।)
शु० गूगल	रसे०	५ ,, ॥=)
शु० नीलाथोथा	रसे०	५ ,, ॥=)
शु० शिलाजतु न० १ (मलाई सूर्य तापी)	भावप्रकाश	१ ,, १)
शु० शिलाजतु नं०२ अग्नितापी	,,	४ ,, २॥)
शिलाजीत के पत्थर	×	१० सेर ६।)

औषधि नाम	ग्रन्थ नाम	मूल्य
कमल केसर	×	१ तो० ।–)
कस्तूरी नं० १ (माला-सिब्बती)	×	१ तो० ६०)
कस्तूरी नं० २	×	१ तो ४८)
कस्तूरी नं० ३	×	१ ,, ३२)
कस्तूरी नं० ४		१ ,, २४)
केशर (काश्मीरी मोगरा)		१ ,, २॥)
मधु नं० १		१ सेर १॥)
मधु नं० २		१ सेर १)
सत गिलोय		१ तो० ।)
कज्जली		१ ,, ॥)

अधिकारभेद से औषधियोंका थोक मूल्य

रस-गुटिका

ज्वराधिकार

औषधि नाम	ग्रन्थ नाम	मूल्य
मृत्युञ्जय	रसे० भै०	५ तो० १।)
महाज्वराङ्कुश	,,	५ ,, १।)
हिंगुलेश्वर रस	,,	५ ,, १)
तरुण ज्वरारि	,,	५ ,, १)
नारदीय लक्ष्मी विलास	र० रा० सु०	१ ,, ४)
कफ केतु रस	,,	१ ,, ॥)
चन्दनादि लोह	,,	१ ,, १)
श्लेष्म शैलेन्द्र रस	,,	१ ,, ३)
विद्याधर रस	,,	१ ,, २)
अमृत मंजरी	रसेन्द्र	१ ,, ॥)

सन्निपात ज्वर

औषधि नाम	ग्रन्थ नाम	मूल्य
वसन्त तिलक	भै०भा०सं०	३माशे२॥)
बृ० कस्तूरी भैरव	भै०भा०सं०	३ मा० २॥)
चतुर्भुज रस	,,	३ ,, ५)
रस गिरि रस	,,	३ ,, ७॥)
स्वल्प कस्तूरी भैरव	,,	६ ,, ४)
पञ्चानन रस	,,	१ तो० २)
ज्वर केशरी	,,	१ ,, ।॥)
सर्वतोभद्र रस	,,	१ ,, २)

विषमज्वर

औषधि नाम	ग्रन्थ नाम	मूल्य
श्री जय मंगल रस	भैषज्य	६ माशे ६)
शीत भंजी	,,	१ तो० ।॥)
वसन्त मालती		६ मा० ३।)
बृ० सर्व ज्वरहर (सोने वाला) लौह	,,	३ माशे ३॥)
सर्व ज्वरहर लौह	,,	२॥ तो० १।)
पुटपक्वविषम ज्वरान्तक लौह	,,	३ माशे २॥)
स्वच्छन्द भैरव	,,	१ तो० ।॥)
मकरध्वज (स्वर्णघटित)	भैषज्य	१ तो० ४)
षड्गुणबलि जारित मकरध्वज	,,	१ तो० ७)
चिन्तामणि रस	,,	१ तो० १॥)
सिद्ध मकरध्वज	,,	३ माशे ७॥)
ज्वरारि अभ्र	,,	१ तो० २॥)
श्लेष्म कालानल रस	,,	१ तो० ३)
बेताल रस	,,	१ तो० १)

नोट—खनिज द्रव्यों का बाजार भावके अनुसार मूल्य में कमी वेशी हो सकती है।

ज्वरातीसार, अतीसार, संग्रहणी-

औषधि नाम	ग्रन्थ नाम	मूल्य
सिद्ध प्राणेश्वर	रसेन्द्र० भैष०	५ तो० ५)
कनकसुन्दर	,, ,,	५ तो० १)
आनन्दभैरव	,, ,,	५ तो० १)
कर्पूररस	,, ,,	५ तो० ३)
महाराज नृपतिवल्लभ	,, ,,	१ तो० २।)
महागन्धक	,, ,,	२ तो० १॥।=)
लोकनाथ	,, ,,	५ तो० ४॥)
ग्रहणीराजेन्द्र वटिका	,, ,,	५ तो० ५)
हंस पोटली	,, ,,	५ तो० ३)
चित्रक गुटिका	,, ,,	५ तो० २।)
कपाथ लोह	,, ,,	२ तो० १)
जातीफलादिवटी	,, ,,	२ तो० १)
ग्रहणी कपाट रस	,, ,,	१ तो० ॥)
हिरण्यगर्भ पोटलीरस	,, ,,	१॥ माशे ५)

अर्श [बवासीर]—

अर्शः कुठार	रसेन्द्र	१ तो० १)
चन्द्रप्रभावटी	,,	२ तो० १॥)
अग्निमुख लोह	भैषज्य	५ तो० ५)
बृ० सूरण मोदक	,,	१०तो० १॥)
प्राणदा गुटिका	,,	१०तो० १।)
कांकायन गुटिका	,,	१०तो० १॥)
बाहुशाल गुड़	,,	२०तो० १॥।)

अजीर्ण, मन्दाग्नि, अरुचि—

श्रीराम बाणरस	रसेन्द्र	५ तो० १॥।)

औषधि नाम	ग्रन्थ नाम	मूल्य
अग्नि तुण्डीवटी	भैष०	१०तो० २)
शंखद्राव	रसरा० भैष०	१ ड्राम १)
महाशंखवटी	भाव० रसरा०	५ तो० २)
गन्धकवटी	रसायन०	१०तो० २)
संजीवनीवटी	शार्ङ्ग० सं०	५ तो० १।)
अग्निकुमार	रसेन्द्र	५ तो० १)
बड़वानलरस	,,	२ तो० १)
अजीर्ण कण्टकरस	,,	२ तो० १)
क्रव्यादरस	,,	१ तो० २)
बृ० लवंगादिवटी	,,	१ तो० २)
चिन्तामणिरस	,,	२ तो० १॥)
क्षुधासागर रस	,,	२ तो० १॥)
अग्निसन्दीपन रस	,,	१ तो० २)
पाशुपत रस	,,	१ तो० ३)

क्रिमि [पेट के कीड़े]

क्रिमि मुद्गर रस	भैषज्य	५ तो० १)
क्रिमि कालानल रस	,, रसेन्द्र	५ तो० ४)
विडंग लोह	,, ,,	५ तो० १)
क्रिमि घातिनी गुटिका	भैषज्य	२ तो० १)

पाण्डु, कामला, यकृत [जिगर तिल्ली]

नवायस लोह	शार्ङ्ग	५ तो० २)
पुनर्नवादि मंडूर	भैषज्य	५ तो० १।)
पञ्चामृत लोह मंडूर	,,	५ तो० ४॥)
प्लीहारिरस	,,	५ तो० ४)
धात्री लोह	,,	२ तो० १।)

औषधि नाम	ग्रन्थ नाम	मूल्य
विडंगादिलोह	,,	२ तो० १।)
कामलान्तक लौह	,,	२ तो० ३)
पाण्डु पञ्चानन रस	,,	२ तो० १।)
प्राणवल्लभरस	,,	२ तोले १॥)
चित्रकादि लौह	भैषज्य	४ तो० १।)
प्लीहारि वटिका	,,	२ तो० ३)
लोकनाथरस	भैषज्य	२ तो० ३)
यकृदरि लौह	,,	१ तो० २)
महामृत्युञ्जय लौह	,,	२ तो० २॥)

रक्त, पित्त, राजयक्ष्मा-खांसी

औषधि नाम	ग्रन्थ नाम	मूल्य
मालती बसन्त	भैषज्य	१ तो० १२)
चन्द्रामृत रस	,,	२ तो० २॥)
बसन्त तिलक	भा० सं०	३ मा० ५॥
राजमृगांक रस	भै० र०	६ ‧ १० २)
मकरध्वज	र० रा० सु०	१ तो० ४)
श्लेष्म शैलेन्द्र रस	भै० र०	१ तो० ३
शृङ्गाराभ्र	,,	२ तो० २)
शतमूल्यादि	,,	२॥ तो० १)
रक्तपित्त कुल कुठार	,,	२॥ तो० २।)
यक्ष्मान्तक लौह	,,	२ तो० २)
मृगांक रस	,,	१॥ मा० २)
स्वर्णगर्भ पोटली रस	,,	१॥ मा० १२॥)
(हीरे वाली)		
हेमगर्भ पोटली रस	,,	१॥ मा० ३॥)
पंचामृत रस	,,	२॥ तो० २)

औषधि नाम	ग्रन्थ नाम	मूल्य
कास मंहार भैरव	भै० र०	४ तो० २)
कास कुठार रस	,,	४ तो० १)
तरुणानन्द रस	,,	१ तो० २)

श्वास-हिक्का

औषधि नाम	ग्रन्थ नाम	मूल्य
श्वास कुठार	रसे०	२ तो० १॥-)
श्वास कास चिन्तामणिरस	रसेन्द्र	१॥मा० ३॥)
महाश्वासारि लौह	भैषज्य	२॥ तो० २)
बांसा चांदि रस	र० रा० सु०	२ तो० १)
कालेश्वर रस	,,	३ मासे २॥)

अपस्मार (मृगी) उन्माद, मूर्छा

औषधि नाम	ग्रन्थ नाम	मूल्य
चतुर्भुज रस	र० रा० सु०	१॥ मा० २)
उन्माद भञ्जन रस	,,	२ तो० २॥)
वात कुलान्तक	,,	२॥ ,, १०)
ब्रह्म वटी	,,	२ ,, ३)

वात व्याधियां-आमवात

(लक़वा-फ़ालिज वग़ैरा)

औषधि नाम	ग्रन्थ नाम	मूल्य
चिन्तामणि चतुर्मुख	भैषज्य	३ माशे ७॥)
वात गजांकुश	रसेन्द्र	२ तो० ६।)
बृ० वात चिन्तामणि	,,	६ माशे ६)
महा लक्ष्मी विलास	,,	२ तो० ९)
वात गजेन्द्रसिंह	,,	२ ,, ५)
चतुर्मुख (कृष्ण)	,,	१ ,, ७)
चिन्तामणि रस	भैषज्य	६ माशे ६)
आम वातारि रस	,,	४ तो० १)
स्वच्छन्द भैरव	रसराजसुन्दर	२॥ ,, २)
एकांग वीर रस	र० रा० सु०	२ ,, ४)

वातरक्त-शीतपित्त, कुष्ठ, श्वित्र-विसर्प रक्त विकार इत्यादि

औषधि नाम	ग्रन्थ नाम	मूल्य
विश्वेश्वर रस	र० रा० सु०	२॥ तो० १)
गजकुठारि रस	रसेन्द्र	२॥ ,, ४)
वात रक्तान्तक रस	,,	५ ,, ५)
अमृतांकुर लौह	,,	२ ,, ५)
कुष्ठ कुठार रस	,,	५ ,, ४)
श्लेष्म पितान्तक रस	भैषज्य	५ ,, ५)
रस माणिक्य	,,	२ ,, ३)
भूत भैरव	,,	२ ,, ३)

शूल-अम्लपित्त-परिणामशूल

औषधि नाम	ग्रन्थ नाम	मूल्य
धात्री लौह	भैषज्य	५ तो० ७॥)
महा शंख वटी	रसेन्द्र	१ ,, ३॥)
प्राण वल्लभ रस	भैषज्य	५ ,, ४)
तारामन्डूरगुडः	,,	४ ,, १)
अम्लपित्तान्तक लौह	भै० म० व०	२॥ ,, ५)
त्रिफलामंडूर	,,	५ ,, २॥)
लीला विलास	,,	२ ,, ४)

उदावर्त-गुल्म (वायगोला) आनाह

औषधि नाम	ग्रन्थ नाम	मूल्य
नाराचरस	भैषज्य	५ तो० १।)
कांकायनगुटिका	,,	१० ,, १॥
वडवानल रस	,,	५ ,, ६।)
गोपी जल	,,	५ ,, ८)
इच्छाभेदी रस	,,	५ ,, १॥)
बृ० गुल्मकालानल रस	,,	५ ,, ६)
गुल्म शार्दूल रस	,,	५ ,, ४)

हृद्रोग (दिल की बीमारियां

औषधि नाम	ग्रन्थ नाम	मूल्य
त्रिनेत्र रस	भैषज्य	२॥ तो० ५)
चिन्तामणि रस (सोने चांदी वाला)	,,	६ माशा ५)
हृदयार्णव रस	,,	५ तो० ४)
शंकर वटी	,,	५ ,, ५)

मूत्रकृच्छ्र, मूत्राघात (पेशाब बन्द होना) अश्मरी (पथरी)

औषधि नाम	ग्रन्थ नाम	मूल्य
नारकेश्वर रस	भैषज्य	२ तो० ५)
चन्द्र प्रभावटी	,,	१० ,, ४)
वरुणाद्य लौह	,,	५ ,, ४)
चन्द्र कला रस	,,	५ ,, ४)
त्रिविक्रम रस	,,	५ ,, ३।)

प्रमेह (जरियान) मधुमेह, धातुदौर्बल्यता-बहुमूत्रता

औषधि नाम	ग्रन्थ नाम	मूल्य
वसन्त कुसुमाकर	भैषज्य	१॥ माशे ५)
चन्द्र प्रभा	,,	५ तो० २)
स्वर्ण प्रभा	,,	१ ,, ३)
सोमनाथ रस	,,	५ ,, २॥
शिला जत्वादि वटी (स्वर्ण भस्म वाली)	,,	६ मा० ७॥)
मेहमुद्गर रस	,,	५ तो० ५)
मेह कुलान्तक रस	,,	५ ,, २॥)
बृ० बंगेश्वर रस (सोना मोती वाला)	,,	३ माशे ४॥)

औषधि नाम	ग्रन्थनाम	मूल्य
वसन्त तिलक	भैषज्य	३ मा० ५॥)
इन्द्र वटी	,,	२ तो० ३॥
बृ० पूर्ण चन्द्र	,,	६ माशे ३॥)
पूर्ण चन्द्र	,,	१ तो० ३)

उदर रोग

औषधि नाम	ग्रन्थनाम	मूल्य
इच्छाभेदी रस	भैषज्य	५ तो० १॥
नाराच रस	,,	५ ,, १।)
घोड़ा चोली रस	,,	२ ,, १
जलोदरारि रस	,,	२ ,, ३)
लोकनाथ	,,	२ ,, ३)
यकृत्प्लीहारि लोह	,,	५ ,, ४)
त्रैलोक्य सुन्दर रस	,	२ ,, ३,

शोथ (सूजन) अन्त्रवृद्धि श्लीपद भगन्दर

औषधि नाम	ग्रन्थनाम	मूल्य
त्रिनेत्राख्य रस	भैष०	२तो० ५)
शोथ कालानल रस	,,	२तो० ४
पञ्चामृत रस	,,	५तो० ६)
स्वर्ण पर्पटी रस	,,	१तो० १०)
वातारि रस	,,	५तो० २॥)
नित्यानन्द रस	,	५तो० ४)
अग्निमुखमँडूर	,,	५तो० २)
दुग्ध वटी	,,	२तो० ४
तक्र वटी	,,	२तो० ३)
शशि शेखर रस	,,	१तो० २)
श्लीपद गज केशरी	,,	२तो० २)

उपदंश

औषधि नाम	ग्रन्थनाम	मूल्य
फिरंग गज केशरी	योगरत्नाकर	१तो० ३)

क्षुद्ररोग

औषधि नाम	ग्रन्थनाम	मूल्य
बृ० खदिर वटिका	भैषज्य	४तो० १)
चन्द्रोदयादि वर्ती	,,	१तो० १)
चित्रक हरीतकी	,,	२०तो० २)
महा लक्ष्मी विलास	,,	१तो० ४)
शिरः शूलादि वज्र रस	,,	५तो० ४)

स्त्रियों और बच्चों के रोग

औषधि नाम	ग्रन्थनाम	मूल्य
प्रदरान्तक लौह	भैषज्य	५ तो० ५)
गर्भ चिन्तामणि	,,	१तो० ४)
सूतिकारि रस	,,	१तो० २॥)
दन्तोद्भेदगदान्तक	,,	५तो० ४)
महागन्धक	,,	२तो० १।॥=)
सूतिकान्तक रस	,,	२॥तो० ६)
प्रदररिपु	,,	२तो० १)
नष्ट पुष्पान्तक रस	,,	२तो० ३)
रजःप्रवर्तिनी वटी	,,	४तो० १)
कुमार कल्याण रस	,,	१॥मा० ६)

रसायन-वाजीकरण

औषधि नाम	ग्रन्थनाम	मूल्य
वसन्त कुसमाकर रस	भैषज्य	१॥ माशे ५)
मकरध्वज	रसेन्द्र	१ तो० ४)
मदनानन्दमोदक	भैषज्य	२० ,, २)
मन्मथाभ्र रस	,,	१ ,, ३।)

औषधि नाम	ग्रन्थ नाम	मूल्य
बृ० चन्द्रोदय मकरध्वज	भै० र०	१ तो० ८)
पूर्ण चन्द्ररस	,,	१ ,, ३
कामिनीविद्रावण रस	,,	१ ,, ३)

गुग्गुलुः

औषधि नाम	ग्रन्थ नाम	मूल्य
त्रयोदशाँग गुग्गुलुः	वातव्याधि	२० तो २)
कैशोर गुग्गुलुः	वात रक्त	२० तो० २)
महायोगराज (सप्त धातु मिश्रित)	आम वात (गठिया)	४ ,, ३)
योगराज (चक्रदत्त)	,,	२० ,, २)
सिंहनाद गूगल	आम वात	१० ,, १।)
गोक्षुरादि गूगल	मूत्र कृच्छ्र पथरी	१० ,, १।)
कांचनार गूगल	गंड माला अपची ।	१० ,, १।)
अमृतादि गुग्गुलुः	भगन्दर	१० ,, १।)
सप्ताँग गुग्गुलुः	कुष्ठ-नाड़ी-व्रण	१० ,, १)
नवक गुग्गुलुः	स्थौल्यता-भगन्दर	१० ,, १)
चन्द्र प्रभा गुग्गुलुः	प्रमेह	४ ,, २॥)
सप्तविंशतिको गुग्गुलुः	भगन्दर वस्तिशूल आदि पर	१० ,, १।)
शिवा गुग्गुलुः	आम वात (गठिया)	१० , १॥)

चूर्ण

औषधि नाम	ग्रन्थ नाम	मूल्य
बृ० सुदर्शन चूर्ण	जीर्ण ज्वर, विषम ज्वर	१ सेर ४)
ज्वर भैरव चूर्ण भैषज्य)	ज्वर	१ सेर २॥)
निम्बादि चूर्ण भावप्रकाश)	विषम ज्वर	१ सेर ३)
गँगाधर चूर्ण	अतीसार	१ सेर २)
जाती फलादि चूर्ण	,,	५॥ सेर ३)
बृ० लाई चूर्ण	संग्रहणी	२० तो० ६।)
लवँगादि चूर्ण	,,	४० तो० ३)
भास्कर लवण	अग्निमान्द्य	१ सेर ४)
हिंग्वष्टक	,,	२० तो० १॥=)
कपित्थाष्टक	अरुचि	१ सेर २॥)
चन्दनादि चूर्ण	प्रमेह	१ सेर ३॥)
तालीशादि	कास अरुचि	१ सेर ५)
सितोपलादि	कास जीर्ण ज्वर	५॥ सेर ३॥)
कामदेव चूर्ण (रस चिन्तामणि)	वाजीकरण	५१ सेर
सामुद्रादि चूर्ण	उदरशूल	५१ सेर ६
यवानिकादि चूर्ण	,,	२० तो० ३=)
यवानी षाँडव	अरुचि	२० तोला २॥)
नारायण चूर्ण	उदर रोग	१ सेर २)
पुष्यानुग चूर्ण	प्रदर रोग	१ सेर ४)
[illegible]त्तिकर चूर्ण	अम्लपित्त	२० [illegible]

औषधि नाम	रोग नाम	मूल्य
अर्क लवण	तिल्ली	२०तो० १)
अभया लवण	जिगर-तिल्ली	२० तो० १।।।=)
दन्त मुक्ताकर मंजन	दन्त रोग	१ शीशी ।)
अपामार्ग तण्डुलीयनस्य	शिरो रोग	१ तो० १।)
नारसिंह चूर्ण	धातु पौष्टिक	२० तो० २।।)
अश्वगंधादि चूर्ण	वीर्य विकार	२० तो०।।।)
आमलक्यादि चूर्ण	ज्वर-अरुचि कफ	२० तो०।।।)
त्रिफला चूर्ण	कब्ज-रक्त-विकार।	२० तो० ।।)
दाडिमाष्टक	अतीसार-अरुचि	४०तो०१।।)
यवक्षारादि चूर्ण	बच्चों की खांसी कफ विकार	१०तो०१।।)
शृंग्यादि चूर्ण	बच्चों की खांसी ज्वर-पसीला,	१०तो०१।।)
दशांग लेप	विसर्प शोथ	४०तो०१।।)
वच्यादि चूर्ण	स्वरभेद-पा-नस कफ-अरुचि	ऽ।पावभर१।।)
चातुर्भद्राव लेहिका	बच्चों की खांसी कफज ज्वर,	ऽ= ।।।)
जीर काद्य चूर्ण	ग्रहणी रोग	ऽ। २)
पञ्चकोल चूर्ण	अजीर्ण क-फ खांसी	ऽ। १)
बड़वानल चूर्ण	अजीर्ण	ऽ। ।।।)

औषधि नाम	रोग नाम	मूल्य
बृ० नायिका चूर्ण	ग्रहणी रोग शोथ-शूल अतीसार	ऽ। २)
मरिचादि चूर्ण	कास	ऽ। ।।।)
समशर्कर चूर्ण	कास-श्वास अरुचि मन्दाग्नि	ऽ। १)
लवणोत्तमादि चूर्ण	बवासीर	ऽ। १।)
व्योषादि चूर्ण	ज्वरातीसार ग्रहणी	ऽ। १।)
सारस्वत चूर्ण	उन्माद	ऽ। १।।)
न्यग्रोधादि चूर्ण	प्रमेह मूत्र कृच्छ्र	ऽ। २)

आसव-अरिष्ट

अमृतारिष्ट	ज्वर	२ सेर ७)
कुटजारिष्ट	अतीसार-संग्रहणी	२।। सेर ४)
पिप्पल्यासव	क्षय-गुल्म-पाण्डु	२।। सेर २।।)
अभयारिष्ट	अर्श उदरविकार	२।। सेर ५)
दन्त्यरिष्ट	उदर विकार बवासीर	२।। सेर ५)
शंख द्राव	गुल्म-शूल	४ड्रामशी०४)
विडंगारिष्ट	अन्तर्विद्रधि अन्दर का फोड़ा	२।।सेर ५)

औषधि नाम	रोग नाम	मूल्य
लोहासव	प्लीहा	२॥सेर २।)
धात्र्यरिष्ट	पाण्डु-कामला	२॥सेर २॥)
कुमार्यासव	उदर-गुल्म	२।सेर ४)
उशीरासव	रक्तपित्त	२ सेर २)
द्राक्षासव (योग चिन्तामणि)	क्षय-खाँसी अरुचि	२॥सेर ५॥)
द्राक्षारिष्ट	,,	२॥सेर ५)
अँगूरासव	दौर्बल्यता खून की कमी	१॥सेर ७॥)
कनकासव	कास-श्वास	२॥सेर २॥)
दशमूलारिष्ट	प्रसूत कमज़ोरी	२॥सेर ५।)
अश्वगन्धारिष्ट	कमज़ोरी-मूर्छा	२ सेर ४॥)
खदिरारिष्ट	कुष्ठ-रक्त-विकार	२ सेर ४)
पार्थ्यारिष्ट	हृदय रोग रक्त पित्त	२ सेर ४।)
चन्दनासव	प्रमेह-वीर्य-[illegible]	२ सेर ४॥)
देवदार्व्यारिष्ट	,,	२ सेर ५)
लोध्रासव (आयुर्वेद संग्रह)	प्रमेह प्रदर	२ सेर ४॥)
रोहितकारिष्ट	जिगर तिल्ली	२ सेर ४॥)
पुनर्नवारिष्ट	शोथ(सूजन	२ सेर ५)
सारिवाद्यारिष्ट	रक्त विकार	२ सेर ४॥)
अशोकारिष्ट	प्रदर	२ सेर ५)

औषधि नाम	रोग नाम	मूल्य
पत्रांगासव	स्त्रीरोग	२ सेर ५)
अरविन्दासव	बालरोग	२ सेर ५)
कूष्माण्डासव (योग चिन्ता मणि)	श्वास-कास	२ सेर ८)
जम्बीरीद्राव	उदर रोग	२ सेर ८)
बब्बूलारिष्ट	कास-श्वास	२॥सेर २॥)

अर्क

औषधि नाम	रोग नाम	मूल्य
महामंजिष्ठादि	रक्त विकार वात रक्त	२ बो० १॥)
अर्क दशमूल	प्रसूति-शोथ	,, ,, १)
अर्कसुदर्शन	मलेरिया, जीर्ण ज्वर	,, ,, १)
पुनर्नवाष्टक	शोथ-जलन्धर	,, ,, १)

घृत

औषधि नाम	रोग नाम	मूल्य
बिन्दुघृत	उदर रोग	२०तो० १॥)
अर्जुनघृत	हृदय रोग	ऽ। २)
जात्यादिघृत	व्रण (ज़ख्म)	ऽ। २)
महात्रिफलादिघृत	नेत्ररोग	ऽ। २।)
फल कल्याणघृत	स्त्री रोग (बन्ध्यात्व)	,, २)
कामदेवघृत	वाजीकरण	,, ३॥)
कासीसादिघृत	व्रणनाशक	,, २॥)
ब्राह्मीघृत	अपस्मार-उन्माद.	,, १॥।)
सारस्वतघृत	मेधाशक्ति वर्धक	ऽ। १॥।)
चैतसघृत	,,	ऽ। २)

तैल

औषधि नाम	रोग नाम	मूल्य
किरातादि तैल	ज्वर	ऽ।। ३)
अँगारक तैल	,,	,, २॥)
लाक्षादि तैल	,,	,, ३)
महालाक्षादि तैल	,,	,, ४)
बृ० चन्दनादि	,,	,, ५)
बृ० ग्रहणीमिहिर तैल	ग्रहणी	,, ३)
बृ० कासीसादि तैल	अर्श:	,, ३)
पिप्पल्यादि तैल	अर्श:	,, ३)
चन्दनादि तैल	यक्ष्मा	,, ५)
नारायण तैल	वातव्याधि	,, ३)
मध्यम नारायण तैल	,,	,, ५)
कुब्ज प्रसारिणी तैल	,,	,, ३)
श्रीगोपालतैल (कस्तूरीरहित)	वाजीकरण	,, ७॥)
,, (कस्तूरी सहित)	,,	,, १६)
बृ० मरिचादि तैल	वात रक्त	,, ३)
बृ० सैन्धवादि	आम वात (गठिया)	,, ३)
विषगर्भ तैल	,,	,, २॥)
बृ० व्रणराक्षस तैल	व्रण	,, ४)
कुंकमादि तैल	मुखसौन्दर्य	,, ४)
भृङ्गराज तैल	शिरोरोग	,, ३)
चन्दनादि तैल	बलिपलित	,, ३)
क्षार तैल	कर्ण शूल	,, ४)
स्वर्जिकादि तैल	,,	,, ३)
षड्बिन्दु तैल	शिरो रोग	,, ३)
प्रमेह मिहिर तैल	प्रमेह	,, ३)

औषधि नाम	रोग नाम	मूल्य
वासा चन्दनादि तैल	यक्ष्मा-क्षय	ऽ।। ३)
	उरःक्षत कास जीर्ण ज्वर	ऽ।। ३)
माष तैल	वातव्याधि	,, ३)
मल्लतैल (संखियेकातैल)	वात रोग नपुंसकता	१ तो० ४)
हिम सागर तैल	वात रोग	२० ,, ४)
विष्णु तैल	,,	२० ,, ४)

क्षार-लवण-सत्व

वज्र क्षार	उदर-गुल्म-अजीर्ण तिल्ली	१० तो० १)
अपामार्ग क्षार	मूत्र का रुकना खांसी-सांस	१० ,, १)
वासा क्षार	कास-श्वास	१० ,, १॥)
करेली क्षार	,, ,,	१० ,, १)
केले का क्षार	मूत्रावरोध	१० ,, २)
इमली क्षार	अजीर्ण	१० ,, १॥)
तिल क्षार	,,	१० ,, २)
पलाश क्षार	रक्त गुल्म	१० ,, १॥)
आक क्षार	तिल्ली	१० ,, १)
यव क्षार	मूत्राघात	१० ,, १)
गिलोय का सत्व	जीर्ण ज्वर प्रमेह	१ ,, २)
सत्व शिलाजीत नं० १	धातुदौर्बल्य	१ ,, ३)

औषधि नाम	ग्रन्थ नाम	मूल्य
धतूरे का क्षार	कास-श्वास	१०तो० १।)
शर पुंखा क्षार	यकृत्	१० ,, १।)
अर्क लवण	तिल्ली-गुल्म	५ ,, ॥)
अष्टाङ्ग लवण	मदात्य	५ ,, २)

खण्ड-मोदक-अवलेह-पाक

औषधि नाम	ग्रन्थ नाम	मूल्य
कुटजावलेह	अतीसार-संग्रहणी	१ सेर १॥)
बृ० शूरण मोदक	अर्श	½ ,, ५)
वासा कूष्माण्ड खण्ड	रक्त पित्त	½ ,, २)
कूष्माण्ड खण्ड	,,	१ ,, ४)
नारि केल खण्ड	,, शूल	½ ,, ६)
बृ० वासावलेह	कास-श्वास	१ ,, ५)
च्यवनप्राशावलेह	धातु-दौर्बल्य	२ ,, ७)
कुशावलेह	मूत्र कृच्छ्र-मूत्राघात-उष्णवात-सूज़ाक (गनोरिया)	१ ,, ४)

औषधि नाम	ग्रन्थ नाम	मूल्य
हरिद्रा खण्ड	शीत पित्त पित्तीउछलना	ऽ॥ ३)
चित्रकहरीतकी	प्रतिश्याय-नजला	ऽ॥ ३)
सौभाग्य शुण्ठी पाक	प्रसूत (स्त्री-रोगों पर)	,, २॥)
भारंगीगुड़	कास	,, ३)
कण्टकारि अवलेह	कास	१ सेर ५)
सिद्ध सुपारी पाक	प्रदरकमजोरी	,, ,, ७)
सुपारी पाक	,,	,, ,, ४)
सिद्धमालव पाक (रजिस्टर्ड)	धातुदौर्बल्य	,, ,, ७)
सालवपाक	,,	,, ,, ४)
बादाम पाक	,,	,, ,, ६)
अश्वगन्धा पाक	,,	,, ,, ५)
मदनानन्द मोदक	,,	,, ,, ७)
बाहुशालगुड़	,,	२०तो० १॥।)

नोट— हर प्रकार के स्वादिष्ट व पौष्टिक पाकों के लिये हमारे यहां की पाक मंजरी नाम की पुस्तक मुफ्त मंगाकर देखिये।

हमारी कुछ खास २ खानदानी पेटेन्ट औषधियां



श्रीकामदेव रसायन की सुनहरी गोलियां

ये गोलियाँ अत्यन्त पौष्टिक और स्नायविक दुर्बलता तथा बाल्यावस्था में किये गये अनुचित कार्यों से, अथवा युवावस्था मे की गई असावधानियों से उत्पन्न हुई नपुंसकता को दूर करने में जादू का असर रखती हैं। इनके थोड़े ही दिन के सेवन से शक्ति अपनी पूर्वावस्था को प्राप्त होजाती है, भूख खूब लगती है, जो भोजन खाया जाता है उसका आहार रस बना कर शरीर को मोटा, ताज़ा सुन्दर, सुडौल, और ताकतवर बना देती है। मुख, सुन्दर, तेजस्वी होजाता है, और खास कर दिमागी काम करने वालों के लिये ये गोलियां निहायत अक्सीर हैं, हर मौसिम में इस्तेमाल की जासकती हैं। कीमत ४८ गोलियां की शीशी २) दो रुपया। तीन शीशियां के ५) डाक व्यय प्रथक।

लक्ष्मी विलास गोलियां

(मस्तिष्क शक्ति वर्धक)

ये गोलियां सोना चांदी इत्यादि बहुमूल्य द्रव्यों से बनती हैं, इसलिये ये दिमागी काम करने वालों के लिये अमृत का काम करती हैं। जब कभी अधिक लिखने, पढ़ने और अनेक प्रकार के दीर्घ कालिक रोगों के कारण दिमाग कमजोर हो जावे, काम काज को दिल न चाहे, सिर में चक्कर, नेत्रों की ज्योती में फर्क तथा शरीर के प्रधान २ अवयव कमज़ोर पड़जावें ऐसी हालत में चिकित्सा न करने से बहुत से रोग पैदा होजाते हैं। इस लिये शारीरिक व मस्तिष्क शक्ति बढ़ाने के लिये हमारी लक्ष्मी विलास गोलियाँ फौरन इस्तेमाल कीजिये। बेशुमार रोगी भोगी, स्त्री पुरुष, वृद्ध युवा, इनके अद्भुत गुणों पर मोहित हो चुके हैं। मू० १२ गोलियों की शीशी ३), ३ शीशी के ८) डाक व्यय प्रथक।

प्रिया मनमोहिनी गुटिका

इसका नाम ही इसके गुणों को प्रकट करने के लिये काफी है, विशेष लिखने की आवश्यकता नहीं इसलिये यदि आप अपनी प्रिया को अपने ऊपर मुग्ध करना चाहते हैं, तो अवश्य ही इन गोलियों को मंगा कर इनका चमत्कार देखिये आपका हृदय समुद्र की तरह लहर मारने लगेगा आप मस्त होजायेंगे मूल्य ८ गोली शीशी १), ३ तीन शीशी २॥) डाक व्यय प्रथक।

बृहत आयुर्वेदीय औषध भाण्डार (रजिस्टर्ड) जौहरी बाज़ार, देहली।

स्वप्नदोष नाशकवटी

ये गोलियाँ स्वप्नदोष (बद ख्वाब) के रोगियों लिये अमृत तुल्य गुणकारी हैं, इनके थोड़े ही दिन के सेवन से ख्वाब में बिगड़ना, धातु का पतलापन, बहुत जल्द दूर होकर शरीर हृष्ट, पुष्ट, शक्तिशाली बन जाता है। मूल्य २४ गोलियों की शी० १)। ३ शीशी २॥) डाक व्यय प्रथक।

अजीब व गरीब तिला

बचपन की खराब आदतों व युवावस्था की अत्यन्त विषय वासना, हस्तमैथुन इत्यादि से जो इन्द्रिय छोटी, पतला, टेढ़ा और दुर्बल होजाती है इसके थोड़े ही दिन लगाने से ये सब शिकायतें बहुत जल्द दूर होकर लिंगेन्द्रिय स्थूल, और दृढ़ होजाती है, और मैथुन शक्ति प्रबल होकर पुरुष सन्तानोत्पत्ति के योग्य होजाता है, और इस से किसी प्रकार की हानि नहीं होती, और न छाला वगैरा ही पड़ता है। मूल्य १ शीशी २) छोटी शीशी १।) बड़ी तीन शीशियाँ ५) डाक व्यय आदि प्रथक।

नस ढीली की पोटलियां

(नामर्दी की अजीब दवा)

जिन पुरुषों ने हस्त मैथुन, प्रकृति विरुद्ध मैथुन, अकाल मैथुन, और अति मैथुन से लिङ्गेन्द्रिय को बेकार कर लिया है, उन पुरुषों को इन पोटलियों को एक हफ्ते तक सेवन करने से लिङ्ग में कैसा ही ढीलापन और सुस्ती व कमजोरी हो निहायत ताकत आजाती है। बूढ़े को मानिन्द जवान के कर देती हैं। मूल्य १४ पोटलियों की जो एक सप्ताह के लिये काफी हैं सिर्फ ३) है। डाक व्यय आदि प्रथक।

सिद्ध उपदंश कुठार रसायन

[रजिस्टर्ड]

(आतशक की अक्सीर गोलियाँ)

इन गोलियों के सेवन से आतशक और उससे उत्पन्न हुए कुल उपद्रव अति शीघ्र जड़से दूर होकर शरीर कुन्दन की भाँति चमकने लगता है। न इनसे मुंह आता है और न उल्टी, दस्त आदि ही होते है। क्योंकि इनमें पारे और संखिये की मिलावट नहीं है। आप आवश्यकता पड़ने पर तुरन्त गोलियां मंगाकर सेवन कीजिये क्योंकि यह भयानक रोग एक से दूसरे को लग कर पीढ़ी दर पीढ़ी चलता रहता है। इसलिये इसकी चिकित्सा में लापरवाही करना बड़ी भारी नादानी है। मूल्य एक शीशी म० मरहम की डिबिया के ४) ।

काया कल्प वटी

(चर्म रोगों की अद्भुत दवा)

इसके फायदे इसके नाम से ही जाहिर होते हैं। इसके सेवन से शरीर अति साफ चमकीला और नवजात शिशु की भाँति कान्तिमान बन जाता है। सर्व प्रकार के चर्म रोग फोड़े, फुन्सी, दाद, खाज, स्याह व सफेद दाग, मुंह की भाँई, आतशक, सूजाक, के विष से उत्पन्न हुए सारे उपद्रव और चम्बल आदि बड़े २ भयानक रोग

दूर होकर शरीर कान्तिमान होजाता है। अर्थात् यह गोलियाँ सर्व प्रकार के चर्म रोगों के लिये एक अद्भुत राम बाण दवा हैं। मूल्य १६ गोलियों का १) डाक व्यय प्रथक।

कृच्छ्र नाशक

(रजिस्टर्ड)

(सूज़ाक व क़ुरहा का अचूक इलाज)

रजस्वला स्त्री के साथ विषय करनेसे, गर्म चीज़ों के इस्तेमाल से अथवा चूने की तपी हुई छत पर गरमी में पेशाब करने से और धूप में अधिक देर तक काम करने से अक्सर यह रोग हो जाता है। जिससे लिङ्गेन्द्रिय के मुख पर वरम हो जाता है पेशाब में जलन, खून और पीप का आना शुरू हो जाता है। फिर धीरे २ उसमें क़ुरहा पड़ जाता है। हमारा **कृच्छ्र नाशक** इन सब दर्दनाक हालतों को एक सप्ताह ही में पूर्णतया आराम कर देता है। चीस,चबक, जलन तो २४ घण्टे में ही जाती रहती है मूल्य फी शीशी १।) तीन शीशी एक बार लेने पर ३) डाक व्यय प्रथक।

बृहत् प्लीह नाशक वटी

(तिल्ली दूर करने की अक्सीर दवा)

यह गोलियाँ तिल्ली के लिये अमृत समान गुण-कारी हैं। वर्षों की बढ़ी हुई तिल्ली और पेट का बेडौलपना बहुत जल्द दूर होकर भूख बढ़ने लगती है, और शरीर में नवीन रक्त उत्पन्न करके शक्ति देती है। मूल्य ४८ गो० की० १॥)

सर सुगन्ध

यह सर धोने का निहायत खुशबूदार मसाला है जो कि झड़ते हुये बालों की जड़ों को मजबूत करके उनको मुलायम और भौंरे के समान काला बनाता है। मूल्य ।) पैकेट

बृहत् समीर पन्नग वटी रसायन

(रजिस्टर्ड)

इसके सेवन से एड़ी से चोटी तक के सर्व प्रकार के शारीरिक दर्द चाहे वह वात पित्तादि किसी भी दोष व किसी कारण से कैसा ही सख्त क्यों न हो उसे दूर करने में बिजली की भाँति असर दिखाती हैं। दर्द से बेचैन मनुष्य तुरन्त हँसने लगता है। इसके अतिरिक्त यह गोलियाँ माहवारी को साफ लाने व नलों के दर्द में अपना तुरन्त असर दिखाती हैं। मूल्य ३२ गोलियों की एक शीशी का १) डाक व्यय पृथक।

आनन्द वर्धक तैल

यह एक अद्भुत तैल बड़ी बड़ी कामती दवाओं के मिश्रण से खास तौर पर बनाया जाता है। इस को अपनी प्रिया से आलिङ्गन करने के ५-७ मिनट पहिले लिङ्गेन्द्रिय पर लगाया जाता है जिससे कि बिल्कुल बेकार,मुर्दा लिंगेन्द्रिय में भी चैतन्यता(तेज़ी) और दृढ़ता आ जाती है। और परस्पर में इतना प्रेम हो जाता है कि जिसका बयान नहीं किया जा सकता; बस इसके सेवन से ही इसकी खूबियाँ मालूम हो सकती हैं। यह चीज बड़े २ रईसों राजाओं के सेवन करने योग्य है। प्रति शी० ५)

कोष्ठ वद्धारि वटी

ये गोलियाँ अत्यन्तपाचक, कब्जकुशा, जिगर और मेदे को ताकत देने वाली हैं। इनके खाने से भूख खूब बढ़ जाती है, पेट साफ और हल्का रहता है, दस्त बिना तकलीफ के आसानी से आजाता है. दायमी कब्ज के लिये तो ये गोलियां अक्सीर हैं। २ गोलियां रात को सोते समय दूध से लेनी चाहिये। कीमत २४ गोलीकी शीशी ।।) १२ शीशी का ५) डाक व्यय पृथक।

शूलगज हरि

इन गोलियों के सेवन से, पेट का फूलना. हवा का ज्यादह पैदा होना, वायु गोला, शूल इत्यादि सब प्रकार के उदरविकार दूर होते हैं। मूल्य २४ गोली का ।।)

अग्निस्थादिष्ट चूर्ण की गोलियां

ये गोलियां बहुत ही खुश मजा हैं खाने के बाद १-२ गोली अवश्य ही खाना चाहिये खाना हजम होकर एक दो डकार आकर मन प्रसन्न होजाता है। बदहजमी, क़ै, जी मिचलाना हैज़ा (विसूचिका) आदि के लिये निहायत अक्सीर हैं मूल्य फी० शीशी ।।)

सिद्धश्वास कुठार रसायन

दमा एक खौफनाक मर्ज है इसका मरीज प्रति दिन कमजोर व दुबला होता जाता है, इसकी तकलीफ अक्सर रात को ज्यादह होती है, दौरे के वक्त खांसते २ दम फूल जाता है, पसलियां दुःखने लगती हैं। कभी २ दम इतना उखड़ता है कि सांस लेना दुश्वार हो जाता है, मरीज़ घबरा कर उठ बैठता है। बदन पसीना २ होजाता है। इसके सिवाय खाँसी हमेशा उठती रहती है, और दम सा घुटा रहता है। ऐसी दर्दनाक हालतों में हमारा **श्वास कुठार** निहायत ही मुफीद रहता है, पहले ही दिन के सेवन से दमा बिलकुल दब जाता है। दौरे के वक्त एक दो खुराक देने से ही जादू का सा असर दिखाता है, बलगम आसानी से निकलकर रोगी को चैन पड़ जाता है, इसी तरह कुछ अर्से के इस्तेमाल से दमे की जड़ बिलकुल जाती रहती है। मूल्य ५० गोली ३)

प्रतिश्याय नाशक

(जुकाम दूर करने की हुक्मी गोलियां)

नए और पुराने जुकाम के वास्ते अत्यन्त लाभ दायक है कुछ ही दिनों के सेवन से मस्तिष्क शक्ति बढ़कर बार बार जुकाम होना बन्द होजाता है। दिमाग को बड़ा ताकत देनेवाली चीज़ है। मूल्य २४ गोलियों के एक पकेट का १)

सिद्ध अर्शोहरि रसायन

(बवासीर की अक्सीर गोलियां)

यह गोलियाँ बवासीरके इलाज में हुक्मी असर रखती हैं बवासीर कितनी ही पुरानी हो खूनी

हो या बादी, कब्ज़ की शिकायत, मस्सों में चीस चबक दर्द आदि इन सबको रफ़ा करके बहुत जल्द बवासीर को जड़ से नष्ट कर देती हैं। मूल्य २५ गोली मरहम की १ डिबिया २)

रक्तार्श विमोचिनी गुटिका

यदि बवासीर का खून बहुत ज़ोर से आरहा हो तो इन गोलियों का सेवन करना चाहिये। इस से रक्त बहुत जल्द बन्द होजाता है। २४ गोलियों का दाम १)

मरहम बवासीर

इसके लगाने से मस्से और गुदा नरम रहते हैं, दस्त आते समय तकलीफ नहीं होती, मस्सों व गुदा की सोजिश व जलन और फूलापन जाता रहता है। प्रति शीशी ॥)

अग्निसन्दीपनी वटिका

(अजीर्ण का अनुभूत इलाज)

अजीर्ण रोग देखने में तो एक साधारण सा मालूम होता है, परन्तु वास्तव में यह सब रोगों की जड़ है खाने पीने मे असावधानी करने से अक्सर बदहज़मी होजाता है। जिसमें कि मुंह का मज़ा खराब, खाने की तरफ रुचि न होना, छाती मे जलन, खट्टी २ डकारें, भोजन करते ही दस्त की हाजत होना, पेट मे गड़गड़ाहट का होना, जी मिचलाना, अफारा, दिन प्रतिदिन कमज़ोरी का बढ़ते जाना, इन सब हालतों मे हमारी अग्नि-सन्दीपन वटिका निहायत ही अक्सीर है। चन्द रोज़ के इस्तेमाल से कुव्वत हाज़मा बढ़कर गिज़ा अच्छी तरह तहलील होने लगती है और आहार रस बनकर शरीर दिन प्रति दिन मोटा ताज़ा और बलवान हो जाता है। मूल्य ४८ गोली १॥)

अमृत कर्पूर

(हैज़े की मुजर्रबउल मुजर्रब दवा)

यह हमारे दवाखाने की तैयार की हुई जादू असर दवा है, जो क़रीब २ कुल घरेलू बीमारियों का जो अक्सर बूढ़े, बच्चों और जवानों को होती रहती हैं पूरा इलाज है। प्रायः जो बीमारियाँ अचानक आक्रमण कर देती हैं—जैसे सब प्रकार के पेट के दर्द, कै, हैज़ा, अफारा पेचिश, दौरा ज़ुकाम, खाँसी, नज़ला वगैरह २ इसके इस्तेमाल से फौरन ही दूर होजाते हैं। यह वह अमृत समान गुणकारी दवा है जिसकी एक बिन्दु गले मे उतरते ही फौरन जादू का असर दिखाती है खासकर वबाई (संक्रामक) रोग में निहायत मुफ़ीद है। ताऊन (प्लेग) हैज़ा, मलेरिया बुखार के ज़माने मे ज़रूर इस्तेमाल करना चाहिये। यह वह दवा है जिसकी हर मनुष्य को घर मे और मुसाफिर को अपने साथ रखने की बड़ी ज़रूरत है। यह दवा खासकर दर्द-पसली, दर्द-साना, दर्द-दाँत व दाढ़, बदहज़मी, तिल्ली, वमन, हैज़ा, पेचिश, मरोड़ा, सिर में चक्कर अम्लपित्त इत्यादि में निहायत मुफ़ीद है। मूल्य ॥) शीशी १२ शीशी ५)

महा सुगन्धित उद्वर्तन

(निहायत खुशबूदार जिस्म पर मलने का उबटन)

यह उबटन मुहम्मदशाह बादशाह के लिये हुक्माने तैयार किया था, इसको जिस्म पर मल कर नहाने से जिस्म कुन्दन की तरह दमकने लगता है, और जिल्दी बीमारियाँ पास नहीं आतीं, खुशबू इतनी है कि आदमी मस्त हो जाता है। क्रीमत फी पैकेट १)।

बच्चों के कमेड़े की दवा

कैसे ही जोर से कमेड़े आते हों तीन चार खुराकें देने से आराम हो जाता है। फी शीशी ॥)

समस्त चर्म रोग व रक्त सम्बन्धी सम्पूर्ण रोगों की

एक मात्र दिव्य बूटी

सुगंधित हरित हिमाद्रजापर्णी

यह हिमालय पर्वत की उत्पन्न हुई दिव्य गुण वाली एक बूटी है जो कि हमारे यहाँ संवत १९७२ से काम में लाई जाती है। इसके प्रयोग से आतशक, कुष्ठ आदि का विष जो कि फूटकर शरीर को सड़ा देता है, और कई २ पुश्तों तक बराबर चलता रहता है शीघ्र ही १ सप्ताह में जड़ से नष्ट होकर काया को कुन्दन की तरह चमकाकर शरीर में शुद्ध रक्त का प्रवाह कर देता है। अब तक लाखों रोगी रोग से मुक्त होकर मुक्त कण्ठ से इसकी प्रशंसा कर चुके हैं। यह उपदंश (आतशक) सूजाक (गनोरिया) अट्ठारह प्रकार के कुष्ठ, चम्बल, सूखा और गीली हर प्रकार की खारिश विसर्प, विस्फोट आदि दूर करने में रामबाण महौषधि साबित हो चुकी है। प्रार्थना है कि आप भी बतौर नमूने के कम से कम एक पाव बूटी जिस का मूल्य सिर्फ १।) रु० है, मंगाकर आज़माइश कीजिये। हमें पूर्ण आशा है कि आप एक बार में ही इसके गुणों पर मुग्ध हो जायेंगे। इसको स्त्री, पुरुष, बालक, वृद्ध, सभी समान रूप से प्रयोग कर सकते हैं।

एक बार १ सेर मंगाने पर ४) रु०

डाक-व्यय हर हालत में पृथक होगा।

बुद्धि-बल वीर्य-वर्द्धक वयःस्थापक

प्राचीन मुनियों का पेय

द्राक्षासव

या

"अंगूरों का शुद्ध रस"

यह शुद्ध साफ़ अच्छे से अच्छे अंगूरों के रस से बनाया जाता है। यह सुबह शाम पाखाना साफ़ लाकर अग्नि को दीप्त करता है, इसके बल से १-१। सेर दूध २॥-३ छटांक घी रोज़ सहज में पच जाता है। रक्त बढ़ाने में, चेहरे को सुख कान्तिमान् व तेजस्वी बनानेमें अपूर्व है, यह सभी अंगूर सेवन करने वाले जानते हैं। कैमिकल जांच करनेपर मालूम हुआ है कि इसमें कण रंजक (Haemoglobin) जो इस प्रकार की प्रोटीन है जिसमें आक्सीजन, नाइट्रोजन, हाइड्रोजन, एवं लौह अंश पाये जाते हैं, जो

जीवन और रक्त-वर्धन के लिए जरूरी हैं, यही प्रोटीन जब रक्त में कम हो जाती है, द्राक्षासव इस कमी को पूरा कर देता है। बलवर्द्धक होने के कारण दिमाग को पुष्ट करता है, इसको बालक, वृद्ध, स्त्री, पुरुष, युवा सब ही समान रूप से सेवन कर सकते हैं। यक्ष्मा, क्षय, खाँसी, श्वास तथा दुर्बलता की महौषध है। देखने तथा खाने में, गुण-लाभ में, गन्ध-स्वाद में, आकर्षक, मन-मोहक, दिल पसंद है। क़ीमत २॥) की बोतल (४० तोला) पोस्ट खर्च अलग।

२॥ नग से अधिक पर खास भाव होगा।

बच्चों के सूखिया ममान की मुजर्रब दवा

रत्न गर्भ गुटिका

ये गोलियाँ जवाहर, सोना, अम्बर, मुश्क, शेरनी का दूध और बहुत किस्म की जड़ी बूटियाँ मिलाकर तयार की जाती हैं ४० दिन के खिलाने से बच्चा कैसा ही सूख गया हो, तन्दुरुस्त होकर हृष्ट पुष्ट हो जाता है। ४० दिन के खिलाने और जिस्म पर लगाने की दवा का मूल्य १०)।

अष्ट मंगल तैल

बच्चे को नहलाने से पहले इस तैल को मलना चाहिये, बच्चे के जिस्म पर जिल्दी बीमारी नहीं होगी, जिस्म कुन्दन की तरह चमकने लगेगा। बच्चा ताक़तवर और सुडौल होगा। सब अंग खूब पुष्ट हो जायेंगे, कुशल दिमाग़, अच्छी यादाश्त वगैरा सारी बातें कायम रहेंगी। हम सिफ़ारिश करते हैं कि हर बच्चे वाला इस शीशी को खरीद कर फायदा उठावे। कीमत फी शीशी १)

शिशु सुखदा वटिका

(हबूब हाफ़िज़-सेहत बचगान)

इन गोलियोंके हमेशा इस्तैमाल करने से बच्चे बिल्कुल तन्दुरुस्त रहते हैं और हालत बीमारी में इस्तैमाल करने से बीमारी दूर होकर बच्चे मोटे ताज़े हो जाते हैं। निहायत अजीब व गरीब गोलियाँ हैं। कीमत १०० गोली की १।)।

बच्चों के लिये एक सफ़ूफ़

जिससे रोज़ाना नियमित रूपसे दस्त आता है। पेट साफ़ रहता है। कीमत एक डिबिया ।)।

कुमार कल्याणक कषाय

श्लेष्म नाशक

बच्चों के कफ़, खाँसी, पसली रोग, बुखार, मलसन्त, जुकाम आदि व्याधियोंमें निहायत मुफ़ीद है। कीमत एक शीशी ॥) डाक व्यय पृथक।

स्त्रियों की खास बीमारियों की चन्द मुफ़ीद दवाएं

प्रदरान्तक वटिका

(योनि मार्ग से सफ़ेद के गिरने को रोकने की लाजवाब दवा)

यह व्याधि स्त्रियों के लिये निहायत ही खौफ़नाक है। परन्तु वे इस व्याधि को शरम की

वजह से नहीं बतातीं। इस व्याधि के रहने से स्त्री गर्भ धारण नहीं कर सकती, और रोज़ व रोज़ कमज़ोर होती जाती है। कमर और पेड़ू में हमेशा दर्द सा रहता है, भूख मर जाती है। चेहरे का रंग फीका सा हो जाता है धीरे धीरे दुबलापन आ जाता है। अन्त में तपेदिक होकर स्त्री की मृत्यु हो जाती है। ऐसी हालत देखकर उसके पति को चाहिये कि हमारे औषधालय से अपनी प्राण प्रिया को "प्रदरान्तक वटिका" फौरन मँगाकर सेवन करावे जिसके एक माह के सेवन से स्त्री तन्दुरुस्त और ताकतवर हो जायेगी। चेहरा खुशरंग और पुर रौनक हो जावेगा। ६० गोली की डिबिया का मूल्य ३॥) डाक व्यय पृथक।

सौभाग्य वटिका

मासिक-धर्म की खराबियों की लाजवाब दवा

अक्सर औरतों को मासिक धर्म (माहवारी) में नलों में सख्त दर्द हुआ करता है। जिससे वह घबरा रहती है। माहवारी बहुत कम या बिलकुल नहीं होती। और अक्सर माहवारी के दिन गुजरने के पश्चात मिकदार से बहुत अधिक हो जाती है। कइयों को शुरू से ही अधिकता से खून गिरता और कई रोज़ तक जारी रहता है। इस प्रकार की व्याधियाँ गर्भ को गिराने वाली होती है और गर्भ कदापि नहीं रह सकता। इस बीमारी से छुटकारा पाने के लिये हमारी तैयार करदा "सौभाग्य वटिका" माहवारी के दिन से एक सप्ताह पूर्व सेवन करनी चाहिये। इसके सेवन करने से मासिक धर्म के मुताल्लिक कुल व्याधियाँ नष्ट हो जाती हैं। यदि दर्द के समय खाई जावे, तो दर्द फौरन बन्द हो जाता है। कैसी ही पुरानी बीमारी क्यों न हो उपर्युक्त तरीके से ३ मास तक सेवन करने से पूर्णतया आराम हो जाता है।

मूल्य ४८ गोलियों की एक शीशी का ६) रुपये। डाक व्यय पृथक।

बांझ-स्त्रियों की चिकित्सा

शास्त्र में ७ किस्म की बाँझ मानी गई हैं जो औलाद पैदा करने के नाकाबिल हैं। यदि इनकी चिकित्सा की जाय तो ९० प्रतिशत औलादवाली हो सकती हैं। ऐसी स्त्रियों के वास्ते बड़ी मुजरब दवाइयाँ हमारे औषधालय में मौजूद हैं। जो साहब हमारा इलाज कराना चाहें, वह हमसे पत्र व्यवहार करें।

हम चन्द सवालात दरयाफ्त करने के बाद इस बात को मालूम करके कि औरत किस किस्म की बाँझ है उसके मुताबिक दवाई तजवीज करेंगे।

ज्वर मुरारि

ये गोलियाँ सब प्रकार के नवीन और प्राचीन तथा वारी से आने वाले ज्वरों को जड़ से दूर कर देती है। इनके सेवन से भूख और शक्ति दिन प्रति दिन बढ़ती जाती हैं, चित्त प्रसन्न हो जाता है, मलेरिया के दिनों में स्वस्थ मनुष्य भी १ गोली प्रातःकाल दूध या गरम जल से लेते रहें तो मलेरिया के आक्रमण से बचे रहेंगे, इनसे किसी प्रकार खुश्की या गरमी नहीं होती। मूल्य २४ गोली का ॥।)

प्रमेह नाशक वटी

प्रमेह (जरियान) २० प्रकार का होता है, जिसमें सबसे भयङ्कर मधुमेह है, इस रोग में पेशाब में शकर मिलकर आती है, इसलिये पेशाब में चीटियाँ लगने लगती हैं, प्यास ज्यादह लगती है। कमजोरी दिनोंदिन बढ़ती जाती है। हमारे यहाँ इस बीमारी के लिये खास तौर पर गोलियाँ तैयार की जाती हैं कुछ दिनों के सेवन करने से पेशाब में शकर आना बन्द हो जाता है और गई शक्ति फिर आ जाती है। मूल्य ४८ गोलियों का ४)।

नमक सुलेमानी

जायका निहायत मजेदार है, हाजिम इस कदर है कि पेट के दर्द, बन्द हैजा, चुभन वगैरः बदहजमी के रोगों को आनन फानन में ही दूर कर देता है, और अनुपानोंके साथ आँखों, मेदे व पुरुषत्वको ताकत देता है, गठिया, बुखार, खाँसी दमा आदि बहुत से रोगों में गुणदायक है। चेहरे के रंग को निखारता है. फी शीशी ।≈)।

दद्रुनाशक

नया पुराना कैसा ही दाद हो इस दवा के दो तीन बार लगाने से जड़ से आराम हो जाता है, किसी तरह की जलन व तकलीफ नहीं होती। कीमत ।) शीशी।

दन्त शूल नाशक

इसकी दो तीन बूँदें ही दाँत में या डाढ़ में लगाने से फौरन आराम हो जाता है। कीमत फी शीशी ।।

कर्ण शूल नाशक

कान में चोंस हो या फुन्सी, या पीप निकलती हो या सूजन हो दो कतरे डालने से आराम हो जाता है। और इसी तरह दो चार दिन डालने से बिलकुल आराम हो जाता है। फी शीशी ।)

दन्त मुक्ताकर मंजन

इस मंजन के सेवन से दाँतों की सब प्रकार की तकलीफें दूर होती हैं, बत्तीसी मोतीं की तरह चमकने लगती है, दाँत या मसूड़ों में कैसा ही सख्त दर्द हो, दाँत हिलते हों, मसूड़े फूल गये हों, पीप व खून आता हो, बदबू आती हो इत्यादि बीमारियों को यह मंजन लगाते ही फायदा करता है, इसकी मजेदार खुशबू बड़ी ही उत्तम है। कीमत ।)

कोकिल कण्ठ

आवाज़ को उत्तम बनाने की अजीबोगरीब गोलियाँ हैं, व्याख्यानदाताओं और गवैयों की जान हैं। फी शीशी ।)

महा सुगन्धित दशांग धूप

थोड़ी सी धूप लेकर धूपदान या अगरदान में डालकर रख दीजिये बहुत जल्द तमाम कमरे में खुशबू फैल जायेगी, जहाँ २ यह खुशबू पहुँचेगी तमाम किस्म के जहरीले माद्दों से हवा को शुद्ध कर देगी। जहाँ पर ताऊन, हैजा, चेचक, मलेरिया बुखार वगैरा २ रोग फैल रहे हों वहाँ के निवासियों को इस धूप का सेवन करना बहुत जरूरी है। इसकी खुशबू निहायत दिल लुभाने वाली है कीमत फी पैकेट ।) फी सेर २)

करामाती टिकिया

सब प्रकार के फोड़े, फुन्सियों को दूर करने में जादू का काम करती है, केवल एक बार लगाने से ही फुन्सियाँ राख की तरह उड़ जाती हैं; कीमत २० टिकिया का पैकट ।)

सुगन्धित बादाम तेल

यह तेल बादाम की गिरियों को कुछ खास सुगन्धित द्रव्यों में भावना देकर देशी तरीक़े पर तैयार किया गया है। इसको सिर पर मलने और कुछ बूंद सूंघने से दिल व दिमाग को बड़ी प्रफुल्लता होती है, दिमागी कमजोरी, सिर का दर्द, सिर का घूमना, नींद का न आना, कानों की भिन भिनाहट, आँखों के आगे तिरमिरे दिखाई देना, आँखों की कमजोरी, रतौंधी, नाककी खुश्की, पुराना जुकाम, दाँतों का ढीलापन, बेवक्त बालों का सफेद होना, चेहरे का फीकापन वगैरा २ दूर होते हैं। दो २ बूंदें कुछ अर्से तक कानों में डालने से कान की खुश्की और बहरापन दूर हो जाता है, जिस्म पर मलने से बदन की ताकत बढ़ जाती है वबाई बीमारियों का असर नहीं होता। फालिज, लक़वा, कम्पवाय, मृगी, दीवानगी, और भूल की बीमारियों में सिर पर मलना बहुत फायदेमन्द है।

महा सुगंधित केश वर्धन तैल

(बाल बढ़ाने वाला खुशबूदार तैल)

बालों को गिरने से रोकता है। और मजबूत करता है। इसके लगाने से बाल बहुत जल्द बढ़ जाते हैं। निहायत नरम, काले और चमकदार हो जाते हैं। कीमत फी शी० एक रुपया १) डाक व्यय पृथक।

चन्द्र बदन

चेहरे के मुहासों भाईं आदि को दूर कर सुन्दर बनाता है। मूल्य ॥)

सुधासागर चटनी

यह एक निहायत हाजिम, कब्ज कुशा और बहुत ही लजीज नरम चूर्ण है कैसी ही बदहजमी हो एक माशे भर चाटते ही डकार आ जाती है, भूख लग आती है, तबियत निहायत खुश हो जाती है। प्रति पैकट ।)

नयन पीयूष बिन्दु

इस दवा के दो तीन बिन्दु दिन में दो तीन बार आँख में डालने से आँख का दुखना, आँख की कड़क, रड़क, ढक, खुजली, सूजन, रोहे, सुर्खी, वगैरा दूर होते हैं कीमत फी शीशी ।)

अपस्मार नाशक

(मृगी की नायाब दवा)

यह मृगी की अक्सीर दवा है. इस के कुछ दिन सेवन करने से यौवनावस्था मे पहले की मृगी निश्चय जाती रहती है. सिर पर लगाने और खाने की दवा मूल्य ५) रु०

कण्ठ माला की दवा

इस बीमारी को अक्सर लोग जानते हैं। इस में बेर से छोटी और बड़ी २ गाँठें गले में हो जाती हैं और निहायत तकलीफ होती है। इसके लिये हमारे यहाँ की दवा इस्तेमाल करने से यह मर्ज़ बहुत जल्द दूर हो जाता है। खाने लगाने की दोनों दवाओं की कीमत ५) डाक व्यय पृथक।

प्लेग संरक्षक मकरध्वज वटी

(ताउन से बचने के लिये बेमिसाल दवा)

इस मर्ज को वर्णन करने की कुछ जरूरत नहीं। तकरीबन सबही मनुष्य इसे समझते हैं। यह एक ऐसी संहारक व्याधि है, व्याधि क्या बल्कि जान की दुश्मन है, कि जहाँ जब यह फैलने लगती है खान्दान के खान्दान गारत और गाँव के गाँव तबाह कर देती है। जहाँ इस व्याधि ने एक बार अपना बीज बो दिया तकलीफ ही देती रहती है। हमारे कारखाने में इस व्याधि को रोकने के लिये "प्लेग संरक्षक मकरध्वज वटी" नाम वाली गोलियां तैयार होती हैं। जिस संक्रामक व्याधि के दिनों में एक एक सुबह शाम इस्तेमाल करने रहने से प्लेग का असर हरगिज़ नहीं होता। तजुर्बे ने साबित कर दिया है कि इससे उत्तम दवा इस मर्ज को रोकने के लिये दूसरी नहीं होगी। अलावा इस के निहायत मकव्वी दिल व दिमाग है। बड़ी २ असबी कमज़ोरियों को दूर करने में रामबाण है। मूल्य १६ गो० का १) डाक व्यय पृथक।

शोथ नाशक

इसके लेप करने से हर प्रकार की सूजन, दर्द, गाँठ आदि को बहुत जल्द आराम हो जाता है। यहाँ तक कि प्लेग की गिल्टी में भी बड़ी मुफीद है। कीमत फी शी० ॥) डाक व्यय चार शी० तक ।≡)

शेरनी के दूध का सुर्मा

(रजिस्टर्ड)

यह हमारे औषधालय का तैयार किया हुआ अजीबो गरीब मुतअय्यान सुर्मा है। इसमें शेरनी के दूध के लिये जो मुल्क आसाम के भीलों से मिलता है बड़ी मेहनत करनी पड़ती है। मोती, मूंगा, फीरोजा, लाल, बदख्शानी, जमुर्रद, याकूत अकीक यमनी, ताजा चाँदी, सोना मक्खी, दहना फरंग जाफ़रान, मुश्क, अम्बर, मामीरा चीनी, भीमसैनी कपूर संगबसरी, सुर्मा अस्फहानी वगैरा २ ५० कीमती अदवियात से सबज़ हरड़ के पानी में ६ माह तक कांसे के सिलबट्टे पर पीसा जाता है, बाद अर्से दराज़ तक नीम की जड़ को खोखला कर के उसमे रखते हैं, इसके बाद दो बार पीसकर

काम में लाया जाता है, इसके इस्तेमाल से बहुत दिनों का अन्धापन बशर्ते कि आंख की बनावट में बिगाड़ न आया हो अच्छा हो सकता है। इस के सेवन करने वाले को आँख का कोई रोग नहीं हो सकता, दृष्टि को साफ, तेज, और रोशन करता है, ऐनक लगाने की आदत छुड़ा देता है आंखो की कमजोरी, शुरू मोतिया बिन्द, आंखों की धुन्ध, जाला, फूला, खारिश, ढलका, नाखूना वगैरा आंख की बीमारियों में मुजर्रब है। मूल्य फी तोला ४) नमूने की शीशी ।।)

मोतियों का सफ़ेद सुर्मा

यह सुर्मा हमने उन साहिबान के लिये तैयार किया है कि जो काला सुरमा लगाना पसन्द नहीं करते, इसके तमाम गुण शरबत के दूध वाले सुर्मे के मानिन्द ही हैं। मूल्य फी तोला [illegible] नमूने की शीशी ।।

मदनराज सुगन्ध

प्यारी, भीनी व मोहित करने वाली खुशबू का खज़ाना। मूल्य ।।) शीशी

सुन्दर शरीर

जिस्म को खुशबूदार, चमकीला व सुन्दर बनाने वाला उबटन। कीमत ।)

बीमारों की बाबत आवश्यकीय प्रश्न जिनके उत्तर पूरे ध्यान से तहरीर में लाकर हमारे औषधालय को भेज देने चाहिये।

१—बीमारी कितनी देर से है और क्यों कर आरम्भ हुई ?

२—बीमार स्त्री है या पुरुष, यदि स्त्री है, तो गर्भवती है या नहीं ?

३—बीमार की आयु कितनी है ?

४—बीमार क्या काम करता है ?

५—बीमार की आदतें कैसी हैं, गर्म या ठंडी चीजें सेवन करने से क्या असर होता है ?

६—बीमार में ताकत कैसी है, शरीर मोटा है या दुबला ?

७—आंखों का रंग कैसा है, ज़बान का जायका और रंग कैसा है ?

८—दस्त साफ़ आता है या कब्ज़ा रहता है।

९—नींद का क्या हाल है ?

१०—पेशाब रात दिन में कितनी बार आता है, रुक रुक या जलन से तो नहीं आता ? रंग कैसा आता है, ठंडा होता है या गरम ?

११—भूख प्यास कैसी है ?

१२—भोजन में क्या २ वस्तुएं शामिल हैं ?

१३—बीमार को किसी नशे की आदत तो नहीं है ?

१४—वैद्यों, डाक्टरों, हकीमों ने जिनका इलाज आपने कराया मर्ज़ का क्या नाम आपको बताया ?

१५—क्या बीमारी खान्दानी है ?

१६—अलावा इसके जो जो बातें आपको अपने मरीज़ की बाबत ज्ञात हों तहरीर फरमावें।

नोट:—प्रश्न लिखने की आवश्यकता नहीं केवल नम्बर देखकर उत्तर लिख दें।

सिद्ध सालव पाक रसायन

(रजिस्टर्ड)

यह रसायन वीर्य-सम्बन्धी सब दोषों को दूर करके उसे शुद्ध पुष्ट एवं सन्तानोत्पत्ति के योग्य अमोघ बना देती है। धातु दौर्बल्य रोग से आक्रान्त होकर जिन मनुष्यों के रस, रक्त मांस शुक्रादि सम्पूर्ण धातु क्षीण हो गए हैं तथा वीर्य के पतला होनेसे स्वप्नदोष, शीघ्रपतन, इन्द्रिय की शिथिलता, पुरुषत्वहानि, अधिक शुक्रपात तथा ध्वजभङ्गादि रोगों के कारण से इन्द्रिय-सुख रहित वंशलोप की आशङ्का से समय व्यतीत कर रहे हैं, उन्हें इस रसायन का सेवन करना संसार सुख एवं सन्तानोत्पत्ति के लिए अतीव सुखकारी होगा। यह दैवी औषधि वृद्ध पुरुषों को भी युवा तुल्य शक्तिमान् बना देती है, दिमाग को बड़ी ताक़त देती है। इस कारण उन लोगों के लिए जिन्हें दिमाग़ी काम करना होता है जैसे जजों, बैरिस्टरों, वकीलों, मास्टरों, कवियों विद्यार्थियों, क्लर्कों, एवं पत्र-सम्पादकों, व्याख्यानदाताओं आदि को बड़ी सुखकारी वस्तु है। हर तरह की निर्बलता को दूर करने वाली एक उत्तम स्वादिष्ट अनुपम खुराक है। मूल्य एक सेर ७) रु० १ पाव का डिब्बा २) रु०।

सिद्ध सुपारी पाक रसायन

(रजिस्टर्ड)

यह दिव्यौषधि ४० बहुमूल्य दवाओंसे तैयार होती है। योनि रोगों के दूर करने में इसके समान दूसरी औषध नहीं है। सहस्रों स्त्रियाँ जो योनि-रोगों की वेदना सहते २ लाचार होगई थीं जिन्हें गर्भ रहने की आशा ही न रही थी, जो स्त्री-समाज में लज्जित और दुःखित होती थीं, जिन्हें अपनी जिन्दगी भार मालूम होती थी, जो सन्तान के लिए रात दिन कुढ़ती और तरसती थीं आज वही सौभाग्यवती देवियाँ हमारे **सिद्ध सुपारी पाक रसायन** के गुणगान कररही हैं। जिसके सेवन से वे श्वेतप्रदर, रक्तप्रदर, मासिकधर्म की अनियमितता, बार २ गर्भ का गिरना, बालक हो-होकर मरजाना तथा एक बार बालक होकर फिर न होना, दौरे की बीमारी (हिस्टीरिया) शारीरिक निर्बलता, दुर्बलता, सिर, कमर, नलों का दर्द, सिरका घूमना, चेहरे का फीकापन आदि अनेक रोगों की यन्त्रणा से छूटकर स्वस्थ और पुष्ट होकर कई २ बालकों की माताएं बन गई हैं। इसके सिवाय जापे की बीमारी, बुढ़ापे की कमज़ोरी में बड़ा मुफ़ीद है। मूल्य एक सेर ७) रु० १ पाव का डिब्बा २) रु०।

सिद्ध कस्तूरी रसायन तिला

(रजिस्टर्ड)

यह एक प्रकार का सुगन्धित तैल है जो अनेक बहुमूल्य औषधियों द्वारा बड़ी मेहनत से तैयार किया जाता है, इसकी पूरी २ तारीफ़ करने के लिये सभ्यता आज्ञा नहीं देती, इसलिये केवल इतना ही बता देना पर्याप्त होगा, कि इस की मालिश से लिङ्गेन्द्रिय की दुर्बलता, शिथिलता, छोटापन, टेढ़ापन व पतलापन दूर हो कर, इन्द्रिय में दृढ़ता, स्थूलता, और दीर्घता आ जाती है, जिससे कि वृद्ध मनुष्य भी युवा के समान आनन्द प्राप्त कर सकता है। सन्तानोत्पत्ति तथा गृहस्थ सुख से वञ्चित (महरूम) हुए अनेक पुरुषों ने इससे आशातीत लाभ प्राप्त करके इस दिव्यौषधि की मुक्त कण्ठ से प्रशंसा की है। मूल्य प्रति तो० १०) २ माशे की शीशी २॥)

बृहत् आयुर्वेदीय औषध भाण्डार (रजिस्टर्ड) जौहरी बाज़ार, देहली।

महावीर प्रेस, ईश्वर-भवन, खारीबावली, देहली।

सिद्ध सालव पाक रसायन

(रजिस्टर्ड)

यह रसायन वीर्य-सम्बन्धी सब दोषों को दूर करके उसे शुद्ध पुष्ट एवं सन्तानोत्पत्ति के योग्य अमोघ बना देती है। धातु दौर्बल्य रोग से आक्रान्त होकर जिन मनुष्यों के रस, रक्त मांस शुक्रादि सम्पूर्ण धातु क्षीण हो गए हैं तथा वीर्य के पतला होनेसे स्वप्नदोष, शीघ्रपतन, इन्द्रिय की शिथिलता, पुरुषत्वहानि, अधिक शुक्रपात तथा ध्वजभङ्गादि रोगों के कारण से इन्द्रिय-सुख रहित वंशलोप की आशङ्का से समय व्यतीत कर रहे हैं, उन्हें इस रसायन का सेवन करना संसार सुख एवं सन्तानोत्पत्तिके लिए अतीव सुखकारी होगा। यह दैवी औषधि वृद्ध पुरुषों को भी युवा तुल्य शक्तिमान् बना देती है, दिमाग को बड़ी ताक़त देती है। इस कारण उन लोगों के लिए जिन्हें दिमागी काम करना होता है जजों, बैरिस्टरों, वकीलों, मास्टरों, कवियों विद्यार्थियों, क्लर्कों, एवं पत्र-सम्पादकों, व्याख्यानदाताओं आदि को बड़ी सुखकारी वस्तु है। हर तरह की निर्बलता को दूर करने वाली एक उत्तम स्वादिष्ट अनुपम खूराक है।* मूल्य एक सेर ७) रु० १ पाव का डिब्बा २) रु०।

सिद्ध सुपारी पाक रसायन

(रजिस्टर्ड)

यह दिव्यौषधि ५० बहुमूल्य दवाओंसे तैयार होती है। योनि रोगों के दूर करने में इसके समान दूसरी औषध नहीं है। सहस्रों स्त्रियाँ जो योनि-रोगों की वेदना सहते २ लाचार होगई थीं जिन्हें गर्भ रहने की आशा ही न रही थी, जो स्त्री-समाज में लज्जित और दुःखित होती थीं, जिन्हें अपनी जिन्दगी भार मालूम होती थी, जो सन्तान के लिए रात दिन कुढ़ती और तरसती थीं आज वही सौभाग्यवती देवियाँ हमारे सिद्ध सुपारी पाक रसायन के गुणगान कररही हैं। जिसके सेवन से वे श्वेतप्रदर, रक्तप्रदर, मासिकधर्म की अनियमितता, बार २ गर्भ का गिरना, बालक हो-होकर मरजाना तथा एक बार बालक होकर फिर न होना, दौरे की बीमारी (हिस्टीरिया) शारीरिक निर्बलता, दुर्बलता, सिर, कमर, नलोंका दर्द, सिरका घूमना, चेहरे का फीकापन आदि अनेक रोगों की यन्त्रणा से छूटकर स्वस्थ और पुष्ट होकर कई २ बालकों की माताएं बन गई हैं। इसके सिवाय जापे की बीमारी, बुढ़ापे की कमजोरी में बड़ा मुफ़ीद है। मूल्य एक सेर ७) रु० १ पाव का डिब्बा २) रु०।

सिद्ध कस्तूरी रसायन तिला

(रजिस्टर्ड)

यह एक प्रकार का सुगन्धित तैल है जो अनेक बहुमूल्य औषधियों द्वारा बड़ी मेहनत से तैयार किया जाता है, इसकी पूरी २ तारीफ़ करने के लिये सभ्यता आज्ञा नहीं देती, इसलिये केवल इतना ही बता देना पर्याप्त होगा, कि इस की मालिश से लिङ्गेन्द्रिय की दुर्बलता, शिथिलता, छोटापन, टेढ़ापन व पतलापन दूर हो कर, इन्द्रिय में दृढ़ता, स्थूलता, और दीर्घता आ जाती है, जिससे कि वृद्ध मनुष्य भी युवा के समान आनन्द प्राप्त कर सकता है। सन्तानोत्पत्ति तथा गृहस्थ सुख से वंचित (महरूम) हुए अनेक पुरुषों ने इससे आशातीत लाभ प्राप्त करके इस दिव्यौषधि की मुक्त कण्ठ से प्रशंसा की है। मूल्य प्रति तो० १०) ३ माशे की शीशी २॥)

बृहत् आयुर्वेदीय औषध भाण्डार (रजिस्टर्ड) जौहरी बाजार, देहली।

मदावर प्रेस, ईश्वर-भवन, खारीबावली, देहली।

शास्त्रों में लिखा है कि पहिले ज़माने में राजा, महाराजाओं के अलावा रईसों, नवाबों एवं उच्च श्रेणी के मनुष्यों के भी सैकड़ों स्त्रियाँ हुआ करती थीं, सर्वसाधारण मनुष्य जो धनसम्पन्न था या खर्चा बर्दाश्त कर सकने वाले थे, इच्छानुकूल स्त्रियां रख सकते थे। शासक लोग भी इसमें कोई हस्तक्षेप नहीं करते थे। आजकल प्रायः मनुष्य प्रश्न किया करते हैं क्यों जी आधुनिक समय में मनुष्य एक स्त्री से अधिक क्यों नहीं रख सकता और शासन अधिकार (Govt. Authority) भी इसकी आज्ञा क्यों नहीं देता?

इसके कई कारणों के अलावा एक सब से बड़ा कारण यह भी है कि आज कल मनुष्य शिथिलाचारी होगये हैं, ९९ प्रतिशत मनुष्य ऐसे मिलेंगे जिन्होंने अपनी बाल्यावस्था एवं युवावस्था में, हस्त मैथुन, गुद मैथुन, अतिमैथुन, इत्यादि अनुचित कार्यों द्वारा अपने बल को क्षीण करलिया है, जिन्हों के वीर्य में उत्तम सन्तान पैदा करने की शक्ति नहीं रही। आज कल मनुष्यों में इस शक्ति हीनता को देखते हुए ही शासकों ने एक स्त्री से अधिक रखने की आज्ञा नहीं दी। अस्तु

यदि आप हमारी

"कामदेव रसायन पिल्ज़"

का सेवन करें।

हम विश्वास पूर्वक कहते हैं कि ऐसी कोई बात नहीं कि आप पहिले ज़माने जितनी शक्ति प्राप्त न कर सकें। बिल्कुल क्षीण शक्ति वाले मनुष्य जो सर्वथा नपुन्सक होगये थे और पुरुष समाज से लजाते थे इन गोलियों के सेवन से महाबलवान बन गये हैं और कई कई दीर्घ जीवी सन्तानों के पिता होगये हैं, और मनुष्यों की भान्ति हमभी अपनी दवा की बहुत प्रशंसा कर सकते हैं परन्तु हम इसे निरर्थक समझते हैं। जब आप इसे सेवन करेंगे यह स्वयं ही अपने गुण कह देगी।

मूल्य प्रति शीशी (४८ गोली) २)

डाक व्यय पृथक

मिलने का पता **बृहत् अयुर्वेदीय औषध भण्डार, चान्दनी चौक, देहली।**

Regd. No. L. 2701

Title Printed at Popular Press, Delhi

जीवन सुधा
देहली

JIWAN SUDHA
DELHI.

शिशु रोग विज्ञान



वार्षिक मूल्य २॥)

इस अंक का मूल्य १॥)

विषय सूची





राज वैद्य श्री पं० महावीर प्रसादजी रसायन शास्त्री

अध्यक्ष-जीवन सुधा और " बृहत आयुर्वेदीय औषध भंडार "
विशेषज्ञ चिकित्सक. आपकी नूतन आविष्कृत चिकित्सा प्रणाली से
लाखों रोगी आरोग्य लाभ कर चुके हैं

पापुलर प्रेस, देहली।



वर्ष ६ | वीरनिर्वाण सं० २४६२, वि० सं० १९९३, अप्रैल, मई १९३६ | अङ्क १–२

शिशु

[ले० श्रीयुत "श्री हरि जी" लखनऊ ।]

शिशु है प्रेम ब्रह्म साकार

सुख-दुःख, चिन्ता से वह न्यारा, राग-रोष से किये किनारा,

शुद्ध सच्चिदानन्द दुलारा ।

मातृशक्ति का प्राणाधार ॥१॥

शत्रु-मित्र का भेद न जाने, सबको ही अपनाकर माने,

परमहंस सा साधन ठाने ।

अद्भुत है ममत्व-व्यापार ॥२॥

हंसकर जब वह गोदी आता, स्वर्गिक सुख अपने संग लाता,

पाप-ताप सब तुरत नसाता ।

सकल सुकृतिका मधुउपहार ॥३॥

दम्पति के प्राणों का प्यारा, प्रेमभरी आंखों का तारा,

सौख्य-सिन्धु [illegible] किनारा ।

जीवन के [illegible] वह सार ॥४॥

अवतरण

[लेखक—चन्द्रशेखर पाण्डेय "चन्द्रमणि" काव्यसूरि]

(१)

कहे जाते जग में वे बाल,
बने जो विधिकी सृष्टि विशाल ।
उन्हीं पर है भविष्य का भार,
करेंगे कभी देश उद्धार ॥

(२)

हमारा भी कर्तव्य महान्,
बना दें उन्हें स्वस्थ बलवान् ।
नष्ट कर दें उनके सब रोग,
कला, प्रतिभाका कर उपयोग ॥

(३)

न होंगे जब तक वे गद-हीन,
रहेगी उनकी बुद्धि मलीन ।
सभी वैद्यों का अनुभव सार,
छाप पत्रों में करें प्रचार ॥

(४)

इसीसे जीवनसुधा-समाज,
सजाता है अपना नव-साज ।
साज सुविषय माला अर्थात्,
बनाया विपुल शिशुरोगाङ्क ॥



सम्पादकीय

जिस उत्साह और आनन्द के साथ "शिशु रोग विज्ञान विशेषांक" महान कार्य को उठाया गया था, यदि वह उसी प्रकार तथा उसी उत्साह से यह विशेषांक पूर्ण हुआ होता तो हमारे पाठक पाठिकाओं के लिए यह महान अङ्क एक अद्भुत रचना होती। किन्तु लिखते हुये महान दुःख होता है कि यह अङ्क जैसा चाहिए था वैसा न बन सका तो भी जितना हुआ वह देश के वैद्य समाज की अवस्था दृष्टि से क्षमणीय है।

इसके अनेक कारण हैं। आयुर्वेद साहित्य के विद्वान लेखक बहुत ही कम हैं। और जो योग्य विद्वान आयुर्वेद साहित्य में कुछ लिखना जानते हैं उन महानुभावों का इस ओर ध्यान ही [illegible] है। यहाँ एक प्रधान कारण है कि इस समय [illegible] लेखकों की बाढ़ सी आगई है। जिसे देखकर भगवान की दया से लिखने आते हैं वही आयुर्वेद का लेखक बन बैठता है और मनमानी होंका करता है।

आजकल के वैद्यक-पत्रों में से अधिकांश वैद्यक पत्रों का ध्येय केवल विज्ञापनबाजी ही है। वह कोई आयुर्वेद की ठोस सेवा न करके केवल व्यापार दृष्टि से ही अपने पत्रों को जन्म देते हैं। इस प्रकार के वैद्यक पत्र-पत्रिकाओं की सृष्टि आये दिन होती ही रहती है। ऐसे पत्रों की संख्या बहुत अधिक है। जब उनका लक्ष्य ही उनकी औषधियों की बिक्री बढ़ाने की ओर लगा रहता है तब किस प्रकार पत्र उत्तम और सर्वाङ्ग पूर्ण तथा सर्वप्रिय बन सकता है। सुयोग्य सज्जन स्वयं इस पर विचार कर सकते हैं।

इन्हीं बातों को विचार कर जीवन-सुधा के संचालकों ने **"जीवनसुधा"** का जन्म आयुर्वेद का प्रचार तथा जन साधारण की आरोग्य वृद्धि के लिए ही किया। यह पत्रिका आयुर्वेद जगत तथा जन साधारण की प्रारंभ से ही ठोस सेवा कई वर्षों से करती चली आ रही है और भविष्य में भी इससे ऐसी ही आशा है। **जीवन सुधा** ने आयुर्वेद के अभावों को यथाशक्ति दूर करने के लिए सतत प्रयत्न किया है। इसीलिये भी इसने [illegible] रोगों पर विशेषाङ्क [illegible] निकालना आरम्भ किये हैं जिनको देखकर जनता ने मुक्त कंठ से प्रशंसा की है [illegible] अखिल भारतवर्षीय २३वें हिन्दी साहित्य सम्मेलन (देहली में होने वाली प्रदर्शनी) से स्त्री रोग सम्बन्धी सर्व श्रेष्ठ अङ्क होने के कारण [illegible] पदक प्राप्त हुआ है। इसके अतिरिक्त [illegible] विशेषांक [illegible] रहे हैं। इनका परिणाम (फैसला) तो पाठक स्वयं [illegible] सकते हैं। किन्तु इस शिशु रोग विज्ञानाङ्क में जहाँ तक सफलता प्राप्त होना था एक हमारे लिये विचा-

रणीय विषय बना हुआ है। मैंने जिस दिन इस शिशु रोग विज्ञानाङ्क का सम्पादन भार अपने कन्धों पर लिया था मैं उस दिन यही समझता था कि यह अङ्क अन्य सब अङ्कों से बढ़ चढ़ कर सुन्दर और सुपाठ्य होगा, किन्तु लिखते हुये महान दुःख होता है कि जब भारी प्रयत्न करने पर भी हम इस विशेषांक को जैसा चाहिये था वैसा न बना सके तब हमें बहुत ही दुःख हुआ। आयुर्वेद में प्रायः लेखकों का अभाव सा हो है यह हम पहिले ही लिख आये हैं। हमें इस अङ्क के लिये जितने लेख मिल पाये हैं उनमें कुछ लेखकों को छोड़ कर बाकी के लेख ऐसे हैं जिन में भारी दोष भरे पड़े हैं। पाठक तथा पाठिकायें वा वैद्य महानुभाव सर्वदा नवीन विषयों की खोज तथा छानबीन के लिये ही पत्र मंगाते हैं, पर जब उन्हें इन आयुर्वेदीय पत्रों में कोई नवीनता दिखाई नहीं देती तो वह निराश होकर ऐसे पत्रों को रद्दी की टोकरी में फेंक देते हैं। उस समय उनके मन को जितना आघात व्यर्थ पैसे खर्च करने में पहुंचता है, उसका अनुमान हमसे लगाया जाना अति कठिन हो नहीं तो दुःसह अवश्य है। वैद्य महाशयों के लिये कैसे लेख चाहिये? इस विषय पर हमें काफी अनुभव है किन्तु हम क्या उन्हें वैसे ही लेख इस अङ्क द्वारा दे रहे हैं? यह बात भी हम पूर्णतया स्पष्ट नहीं कह सकते फिर भी हमने शिशु रोग विज्ञानाङ्क को सुन्दर बनाने में यथाशक्य भरसक प्रयत्न किया है। और लेखों पर कड़ी दृष्टि रखकर उनकी छानबीन में बहुत से दिन लगाये हैं, इतने पर यदि यह अङ्क पाठकों को रुचिकर प्रतीत न हो तो हमें इस विषय में दोषी न ठहराकर लेखकों के जिम्मे ही यह दोष मढ़ें।

यहां एक बात और भी मैं कह देना चाहता हूं कि लाखों वा हजारों वैद्यों के होते हुए भी लेख बहुत ही कम पहुंच पाये हैं। और जो लेख आये भी हैं उनमें कई एक किसी काम के न थे। इस बार मुझे देशके वैद्य समाज का बालरोग विज्ञान् सम्बन्धी ज्ञानाभाव देखकर महान आश्चर्य हुआ। देश की जिस चिकित्सक मण्डली के ऊपर देशवासी जन साधारण की अधिक श्रद्धा वा विश्वास निर्भर है, जिसकी चिकित्सा प्रणाली आधुनिक पाश्चात्य चिकित्सा प्रणाली से बहुत सस्ती और सुलभ है, उस चिकित्सा प्रणाली के प्रयोग करने वाले देश के वैद्य समाज का इस विषय के चिकित्सा विज्ञान का ज्ञानभाव होना आज बीसवीं शताब्दि की दृष्टि में क्षमणीय है। क्या वैद्यक शास्त्रों में बालरोग सम्बन्धी निर्णय विधान अपूर्ण है अथवा वैद्यों की शिक्षा प्रणाली का यह दोष है? वा उनके पास साधन की कमी है? अस्तु जो भी हो, दिन प्रतिदिन आधुनिक शिक्षा का विस्तार हो रहा है, जनता भी अब भांति समझने लगगई है, ऐसा नहीं कि वैद्यक चिकित्सा की कदर जाती रहे। आधुनिक चिकित्सा प्रणाली से शिक्षा ग्रहण करना हरेक वैद्य और हकीमों का कर्तव्य है। क्योंकि चिकित्सा व्यवसाय एक महान लोकहितकर धार्मिक सेवा कार्य है, वैद्य, हकीम, डाक्टर लोग दूसरे के जीवन के जिम्मेदार होते हैं। जीवन से बढ़कर दुनियां में कोई वस्तु अधिक मूल्यवान् नहीं होती है। इस बात को सर्वथा ध्यान में रखकर

चिकित्सा व्यवसाय अवलम्बन करना उचित है।

इस अङ्क के लिये हमें जितने लेखकों के लेख प्राप्त हुए हैं। उन में से कुछ को छोड़ कर शेष सभी अशुद्धियों से पूर्ण और पिष्टपेषण करने वाले ही मिले हैं। अधिकांश में लेखकों ने केवल अपना नाम प्रसिद्ध करने की इच्छा से ही पुस्तकों के आधार पर से ही लेख लिख कर भेजे हैं। कई लेखकों ने तो अपने मस्तिष्क को जरा भी कष्ट न देकर इधर उधर के मासिक पत्र अथवा भिन्न २ पुस्तकों के पृष्ठ पर पृष्ठ लिख मारने में किसी प्रकार का भी संकोच नहीं किया। ऐसे लेख क्या नवीन कहे जा सकते हैं ? ऐसे लेखों से वैद्यों का क्या कुछ लाभ होसकता है ? मैं अपने लेखक महोदयों से कर बद्ध विनय करता हूँ, कि यदि वह वास्तव में आयुर्वेद की ठोस सेवा के साथ ही साथ कुछ नवीन साहित्य ऐसा निर्माण करना चाहते हैं, जिस से भावी सन्तानों और वैद्यों को लाभ हो तो वह इस प्रकार के लेख लिखने से बाज आवें। अपनी बुद्धि से चाहे वह स्वल्प ही लिखें पर लिखें ऐसा कि जिस से भविष्य में ठोस साहित्य का निर्माण हो, और भारी अभाव दूर हो जाय। इधर उधर के लेखों से न आयुर्वेद के अभाव ही दूर हो सकते हैं और न कुछ ठोस सेवा ही आयुर्वेद की हो सकेगी। ऐसे लेखों से तो लेखक का उपहास ही होने की सम्भावना है। इसलिये उन्हें अवश्य मेरी प्रार्थना पर एकान्त में खूब गौर से विचार करना चाहिये। आशा है इस के लिये सहृदय लेखक महोदय मुझे स्पष्ट लिखने के कारण क्षमा करेंगे प्राचीन काल में भारतीय ललनायें विदुषी एवं वीरा होती थीं। वेदज्ञान तक का उपदेश दिया करती थीं। पतिप्राणा सीता, पार्वती, और कैकेयी आदि के चरित्रों की ओर दृष्टिपात कीजिये प्रहलाद को गर्भ ही में ज्ञानोपदेश मिला था। अष्टावक्र और राजा शान्तनु के सातों पुत्र अपनी माता ही के उपदेश से तत्वज्ञानी हुए थे। कणाद, कपिल, गौतम, भारद्वाज और वशिष्टादि सरीखे महा पुरुषों को उत्पन्न करने वाली मातायें इसी भारत भूमि पर उत्पन्न हुई थीं। यदि उन माताओं को आयुर्वेद का रहस्य भली भांति विदित न होता तो कदापि सम्भव नहीं था कि ऐसे विद्वान प्रतिभाशाली सन्तानों को उत्पन्न कर सकतीं।

पाठक एवं पाठिकाओ ! इस मानव सृष्टि का वास्तविक सुख वे भाग्यशाली परिवार ही अनुभव करते हैं, जिनके गृहों में सुन्दर बलिष्ट और निरोग सन्तानें खेलती हैं। जिनकी दृष्टि बाल शिशुओं के भोले भाले सौन्दर्य पूर्ण अर्ध विकसित पुष्प कलिका के समान खिले हुये मुखों पर नित्यप्रति पड़ती है। जिनके कर्ण कुहरों में उनकी तोतली वाणी में उच्चारित छोटे २ शब्द प्रतिध्वनित पड़ते हैं। जिनकी चंचलता से भरी हुई नाना क्रीड़ाओं को देख चिन्ता और अपार व्याधि की पीड़ा भी किंचित काल के लिये दूर हो जाती है। किन्तु खेद से कहना पड़ता है कि वर्तमान काल में ईश्वर का दिया हुआ यह अपूर्व सुख विरले परिवारों, एवं किसी २ युगल दम्पत्तियों को ही प्राप्त होता है। क्योंकि बालकों की उत्पत्ति वृद्धि और रक्षा का मुख्य भार माताओं के अधीन होता है। वर्तमान में हमारे देश की अधिकांश

स्त्रियों का धात्री शिक्षा से सर्वथा कोरी रहना ही उनकी सन्तान अधःपतन का मूल कारण हो रहा है। भारत की ललनायें अविद्या और अज्ञानता के कारण, न गर्भाधान की रीति, न गर्भ रक्षा की क्रिया, न प्रसूत समय के उपचार और न शिशु-रक्षा की विधि को ही जानती हैं। इसी कारण सैकड़ों बच्चे अल्पकाल में काल के कलेवा बन माता के हृदय और अन्यान्य परिवार को शोक-दग्ध कर जाते हैं, तो कहीं सन्तान मुख देखने का सौभाग्य प्राप्त नहीं होता, परन्तु फिर भी अज्ञानता की मारी कुल कामिनियें सुयोग्य वैद्यों की औषधियां सेवन करने के स्थान पर मूर्ख स्याने, ओझा, पुजारी, सन्त साधु और वैरागियों की थोथी बातों पर अधिक विश्वास करती हैं जिनसे धन धर्म खोने पर भी अभीष्ट की सिद्धि नहीं होती। साथ ही सन्तानोत्पत्ति के उचित समय को खोकर जीवन पर्यन्त पछताती रहती हैं और स्वयं भी असमय ही वायु में लटक कर शीघ्र चल जाती हैं। अनपढ़ स्त्रियां न तो बच्चों का भरण पोषण कर सकती हैं और न अपना ही स्वास्थ्य रक्षा का ज्ञान रखती हैं। इसी से उनकी सन्तान मेधावी तथा आयुष्मान नहीं होती, अतः अपनी सन्तान की भलाई के निमित्त भारतीय स्त्रियों का धात्री और बाल विज्ञान की शिक्षा से सुसम्पन्न होना अति आवश्यक है।

परन्तु इससे भी बढ़कर एक कारण है, वह यह कि भारत माता के लाल आज ब्रह्मचर्य पालन करना अपना मुख्य कर्तव्य नहीं समझते, आज इसी देश के निवासी इसके नाम और महत्त्व को बिल्कुल भूल गये, रात दिन विषय वासना में लिप्त रहने के कारण सन्तानोत्पत्ति के बीजांकुरों की शक्ति को कमजोर कर देते हैं। एवं गर्भावस्था में भी यही रफ्तार चालू रखकर निर्बल, निस्तेज, अङ्गों वाली कुरूप तथा हीनवीर्य और अल्पायु सन्तान उत्पन्न कर अपना और अपने देश का अनिष्ट करते चले जाते हैं। इसी प्रकार अनुचित आहार विहार खान पान रहन सहन होने से आज कल भारत रोगों का घर बना हुआ है।

भारतवर्ष में मातृ रक्षक केन्द्र और शिशु-रक्षक केन्द्रों की (Maternity Centres and Baby clinics) बड़ी भारी आवश्यकता है। भारत में कई वर्षों से रेडक्रास सोसाइटियां काम कर रही हैं। किन्तु उनको आज तक भी आशानुरूप सफलता प्राप्त नहीं हुई है। इसका प्रधान कारण है प्रबन्ध का ठीक २ न होना, निम्न कर्मचारियों की लापरवाही, हमारी भारतीय बहनों का इस विषय में शिक्षाभाव और वैदेशिक संस्थाओं के ऊपर श्रद्धा की हीनता, मैं सोचता हूँ कि क्या यह काम खाली सरकार या ईसाई मिशनरियों के ही करने योग्य है? देश के आर्य हिंदू मुसलमान जनता को अपने बच्चों तथा मातृ जाति के स्वास्थ्य की ओर ध्यान देना क्या अपराध है? स्वास्थ्य सम्पन्न सुमाताओं और बलवान सन्तानों की हमारे देश को क्या कोई आवश्यकता नहीं है? मेरे कथन का यह आशय नहीं है कि सिर्फ वैदेशिक प्रणाली से ही इन केन्द्रों को बनाया जाय। वैदेशिक प्रणाली के ढंगसे बने हुए होने के कारण ही तो जनसाधारण इन्हें नहीं अपनाते हैं। इसका प्रधान कारण यह है कि वैदेशिक चिकित्सा प्रणाली

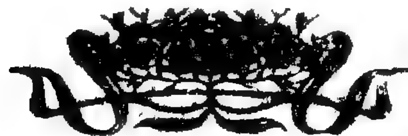
बहुत ही खरचीली होने से उससे जन साधारण लाभ नहीं उठा सकते। इसलिए मैं सादर प्रार्थना करता हूं कि सेठ साहूकार राजे महाराजे जन साधारण के लाभार्थ ऐसे मातृ मन्दिरों वा शिशु-मंदिरों (Maternity Houses And Baby Houses) की स्थापना करें जिसमें आयुर्वैदिक रीति से उपचार किया जाय।

आजकल प्रायः सभी सभ्य देशों में घरमें सन्तान प्रसव नहीं करवा कर प्रसूताओं को सुपरिचालित प्रसूतिमन्दिरों (Maternity House) में भेज दी जाती है। वहां प्रसव कार्य आसानी से बिना किसी आफत को झेल कर करने के लिए सब सान्त्वना और सहायता देने वाली नर्स (दाइयो) डाक्टरनियां हर समय उपस्थित रहती हैं। इसी से उन देशों में सन्तान प्रसव में मृत्यु संख्या दिन पर दिन इतनी घट गई है कि नाम मात्र ही होगी। बच्चों की देख भाल करने के लिए शिशु मन्दिरों का भी अच्छा प्रबन्ध उन देशों में हो गया है। गरीब अमीर सब के बच्चे जिस खूबी से वहां पलते हैं वह देखने लायक है। गांव २ में ऐसे केन्द्र होने के कारण साधारण मजदूरों तक के बच्चे उससे लाभ उठाते हैं दिनके समय नियत काल में बच्चों को दूध पिलाकर मां अपने काम में लग जाती है। रात्रि के नौ बजे आखिरी वक्त दूध देकर रात को देख भाल करने वाली दाई को सौंप कर रातको मजे से आराम की नींद लेती है। इससे अपनी और अपने बच्चों की सेहत भी ठीक रहती है जो घरों में भी बच्चा पालती हैं वह भी नियत समय के पहिले जब बच्चा जरा सा रोवे तब भी वह दूध नहीं पिलाती हैं। हमारे देश की माताओं की यह बड़ी बुरी आदत है कि वह बच्चे को खिलाने पिलाने का एक निर्दिष्ट समय की पाबन्द नहीं रहती हैं। वह अधिकतर प्यार से काम लेती हैं, बच्चा चाहे किसी कारण से भी रोने लग जाय तो वह उसे भूखा समझ कर दूध पिलाने में लग जाती हैं। कुसमय दूध पीकर बच्चे का हाजमा बिगड़ जाता है और वह दिन पर दिन सूख कर कांटा बन जाता है। (इसे मसान का रोग कहते हैं) मां का दूध न मिलने से और अखाद्य कुखाद्य भोजन से जैसे दो मास के बच्चे को बार्लीवाटर (विलायती जौकापानी) पिलाना, ताजादूध को छोड़कर पेटेन्ट डब्बे का दूध पिलाने से भी यह रोग होने का भय रहता है। इस से सैकड़ों बच्चे प्रति वर्ष मरते रहते हैं। मूर्ख मातायें अपनी गलती नहीं समझ कर इस का इलाज टोना, तावीज, मंत्र, यंत्र, स्थानों से झाड़ फूंक कराती रहती हैं। कोई माता तो और भी गलती से अपना दूध पिलाना भी बन्द कर देती हैं। बच्चे को हर तीसरे घण्टे से दूध पिलाना चाहिये, और नौबजे के पश्चात बिलकुल दूध न देकर बच्चा और उस की माता को सोजाना चाहिये। इससे बच्चों को प्रातःकाल तक सोनेकी आदत पड़ जाती है। बच्चों को आरम्भ से जो अभ्यास डाल दिया जावे वह उसी प्रकार से सीख जाते हैं। दूध को पाचन होने के लिये कुछ समय तो अवश्य चाहिये। बारम्बार पिलाने से पाचनशक्ति कहांतक ठीक रह सकती है, ६. ९. १२. ३. ६. ९. बजे के समय दूध पिलाना चाहिये, यही दूध

पिलाने का निर्धारित समय है। इस प्रकार करते रहने से बच्चों के पेट या जिगर की बीमारियां, बद्धकोष्ठता, अतिसारादि या कै होना यह प्रायः सब नहीं होते। दांत निकलने के समय बच्चों का खाना पीना बड़ी सावधानता पूर्वक रखना चाहिये। एक दो दान्त निकलने के पश्चात् उसे खालिस माता का दूध न पिलाकर खूब हल्का और पतला अन्न देना चाहिए। यथा साबूदाना साठी के चावल, वार्ली, जौ इन की खीर आदि दे सकते हैं। बाद अधिक दांत निकलने पर मूंग, मसूर की दाल, अरहर की दाल की खिचड़ी दलिया की खीर अथवा फलों का रस आदि दे सकते हैं। १।। वर्ष के बाद माता का दुग्ध बच्चों को छुड़ा देना चाहिये। प्रत्येक काम के लिये नियत समय का मूल्य समझना आज भी भारतवासियों के ध्यान में नहीं आया है। देश के शिक्षित समाजकी जब यही दशा है तो शिक्षा दीक्षा-हीन माता और धायों का क्या अपराध है? मातृ दुग्ध सन्तानके लिये अमृत तुल्य है, बड़े घर की स्त्रियें इस बात को भूल कर अपने पेट की सन्तान को नीच जाति की स्त्रियों को पालने के लिये दे देती हैं। जिस खून से बच्चा बनता है, उस बच्चे की बुद्धि भी वैसी ही बनती है, और उसी खून से बने हुए दूध में उसकी सेहत जैसी अच्छी रह सकती है पराई माता के दुग्ध में वैसी कभी नहीं हो सकती और वंश परम्परा के रोग, दोष, गुण, शील, स्वभाव सब बातों को जानकर तब अन्य स्त्री से अपनी सन्तान को स्तन्यपान कराना चाहिए। सन्तान की माता यदि रुग्ण हो तो जहां तक बन सके विशुद्ध गाय या बकरी का दुग्ध पिला कर बच्चे को पालना चाहिए।

अन्त में देशवासियों से सादर प्रार्थना है कि वह यदि अपनी सन्तान को स्वस्थ्य तथा दीर्घायु देखनी चाहते हैं तो उन्हें चाहिए कि प्रत्येक स्त्री को अन्य शिक्षाओं के साथ ही साथ गृहस्थ शिक्षा की पूर्ण शिक्षा दिलायें। ताकि भावी सन्तान बलवान और मेधावी तथा दीर्घायु उत्पन्न हो। इसी प्रकार बालिका शिक्षा संस्थाओं को भी गृहस्थ शिक्षा का समावेश अपने पाठ्यक्रम में रखना चाहिए। अन्त में मैं प्रभु से प्रार्थना करता हुआ इस विषय का उपसंहार करता हूं।

डा० वेदव्यासदत्त शर्मा
आयुर्वेदाचार्य, धन्वन्तरि






नवजात शिशु

(ले०--डा० शिवदत्त प्रसाद वाजपेयी वैद्यभूषण ए०एम० बी०)
पो० अजगैन, उन्नाव (यू० पी०)

सूतिका गृह



व जात शिशु सम्बन्धी विषय पर चर्चा करने से पहिले सूतिकागृह के सम्बन्ध में भी कुछ संक्षेप बातें लिख देना आवश्यक है। क्योंकि सूतिकागृह से ही नव जात शिशु के स्वास्थ्य की कार्यप्रणाली का आरम्भ होता है। प्राय: देखने में आता है कि सूतिकागृह बनाने का स्थान आजकल बड़ा ही विचित्र चुना जाता है। घर में जो स्थान सब से खराब और फालतू होता है उसी में लोग सूतिकागृह बनाते हैं। वह स्थान बिल्कुल गन्दा, मकड़ियों के जाले युक्त तथा प्रकाशहीन होता है और उस में शुद्ध वायु के प्रवेश होने का भी साधन नहीं होता है। इस पर मजा यह है कि यदि ऐसा बन्द स्थान कोई घर में न हुआ अथवा उस स्थान में दो एक झरोखे आदि हुवे भी तो वायु का प्रवेश रोकने के लिये लोग उन्हें भी बन्द कर देते हैं। उस सूतिकागृह में जच्चा के प्रवेश करते ही लकड़ियों के ठूंठ सुलगा दिये जाते हैं जो कि जलने के बजाय धीरे २ सुलगते रहते हैं। इस कारण वह सूतिकागृह चौबीस घंटा धुयें से परिपूर्ण रहता है।

दूसरी बात यह है कि जच्चा बच्चा के लिये कपड़ों का प्रबन्ध भी बहुत ही प्रशंसनीय किया जाता है। क्योंकि इसी कार्य के लिये वर्षों के संचित फटे पुराने और मैले कुचैले कपड़े ही काम में लाये जाते हैं। उन गंदे और मैले कपड़ों के धारण करने से स्त्री साक्षात भूतनी सी दृष्टिगोचर होने लगती है।

उपरोक्त गंदगी के कारण सूतिकागृह में एक प्रकार की भीषण बदबू फैल जाती है इस वजह से कोई भला मनुष्य उस स्थान में पांच मिनट भी बैठना पसंद नहीं करता। इन्हीं सब बातों के कारण प्रसूता के शरीर तथा कपड़ों से बदबू निकलने लगती है, और जिधर से प्रसूता निकलती है उधर बैठे हुये व्यक्ति नाक बन्द करने की चेष्टा करने लगते हैं। भला विचार करने की बात है कि ऐसी हालत में प्रसूता तथा नवजात बालक सौर में कैसे स्वस्थ रह सकता है और यही कारण है कि हमारे देश में अधिकांश बच्चे सौर में ही कराल काल के गाल में समा जाते हैं। इस कारण सबसे पहला कर्तव्य है कि उचित और योग्य सूतिकागृह निर्माण तथा जच्चा, बच्चा के प्रयोग में आने वाले कपड़ों का उचित प्रबन्ध हो।

सूतिकागृह के लिये उत्तम, साफ सुथरा और प्रकाश युक्त स्थान चुनना चाहिये, जिसमें शुद्ध वायु और सूर्य की किरणों के आने के लिये झरोखे तथा रोशनदान भी अवश्य होने चाहियें। ऐसा स्थान ठीक कर लेने के उपरान्त उसे लिपवा पुतवा कर साफ करा लेना चाहिये तथा उसमें जच्चा, बच्चा के काम में आने वाली सभी प्रयोजनीय वस्तुयें इकट्ठी करके रखवा देनी चाहियें ताकि आवश्यकता पड़ने पर किसी वस्तु का अभाव न हो तथा उसी समय मिल जावे। उसके बाद जच्चा को उस सूतिकागृह में प्रवेश करावे। सूतिकागृह में जच्चा बच्चा के काम में आने वाले कपड़े, रुई के पहल और फलालेन के टुकड़े इत्यादि साफ धुले हुये होने चाहियें और इतनी प्रचुर मात्रा में होने चाहियें कि जिससे फिर गन्दे मैले कुचैले कपड़ों के काम में लाने की आवश्यकता न पड़े।

नव जात शिशु

प्रसूता के पेट में पीड़ा उत्पन्न होने पर उसे सौरगृह में प्रवेश करावे, और होशियार दाई को बुलाकर जनन क्रिया आरम्भ करे। यदि बच्चा होने में विलम्ब हो और स्त्री को कष्ट अधिक हो तो 'अपामार्ग मूल' (लटजीरा) एक छटांक लेकर उसे स्वच्छ जल में पीस कर प्रसूता की दोनों रानों में प्रसवमुख के इर्द गिर्द चारों तरफ लेप करें। इस लेप के करने से एक घंटे में ही बच्चा उत्पन्न हो जायगा। परन्तु यह ध्यान रहे कि बच्चा पैदा हो जाने के बाद तुरन्त ही लेप को साफ करदें नहीं तो गर्भाशय तक निकल आने की सम्भावना है। यह प्रयोग केवल पुस्तकों का पाठ नहीं है बल्कि हमारा सैकड़ों बार का अनुभव किया हुआ प्रयोग है। अस्तु बिना किसी प्रकार की गड़बड़ी हुये नियमानुसार बालक उत्पन्न हो जाता है।

उत्पन्न होने के साथ ही बच्चा रोने लगता है जिससे उसके दोनों फुफ्फुसों में वायु प्रवेश हो जाता है और फुफ्फुस फैल जाते हैं। यदि बच्चा नहीं रोवे और न श्वास ले तो समझ लेना चाहिये कि उसकी श्वास नली में कफ भर गया है। इस समय बच्चे का शरीर नीला पड़ जाता है और लोग उसे मरा हुआ समझते हैं किन्तु ऐसा नहीं है। उस समय दाई का पहला कर्तव्य है कि सावधानी पूर्वक बच्चे के पैरों को पकड़ कर उल्टा टांगे और एक साफ मुलायम कपड़ा अपनी उंगली में लपेटकर उसी बच्चे के मुख और गले के अन्दर का भरा हुवा लिबरा (कफ) साफ कर ले, उस बालक के चूतड़ों पर सावधानी के साथ थप्पड़ मारे तथा चेहरे पर ठंडे जल के छींटे लगावे। उपरोक्त क्रिया से बालक श्वास लेने लगता है। यदि इससे भी श्वासावरोध हो तो पहले बच्चे के मुख को खोलकर चार, छः बार जोर से फूंक मारे ताकि गले में अटका हुआ कफ भी नीचे उतर जावे, उसके बाद कृत्रिम श्वास दे।

कृत्रिम श्वास देने की विधि

बालक को अपने दोनों हाथों पर चित्त लिटावे, एक हाथ चूतड़ के नीचे और दूसरा हाथ कन्धे के नीचे रख कर अपने हाथों को बार बार ऊपर नीचे करे किंतु दोनों हाथ एक साथ ही ऊपर नीचे न जांय जब एक हाथ ऊपर जाय तब दूसरा नीचे आवे इस प्रकार करने से श्वास जारी हो जाती है।

बालक का स्नान तथा नालच्छेदन

बच्चा उत्पन्न होने पर वह जरायु के विकार-युक्त मल और दूषित रक्तादि से ओतप्रोत होता है। इसलिये चाहिये कि पहले उसके मल को साफ करे और फिर कपड़छन की हुई कंडे की राख अथवा बेसन उसके शरीर में धीरे २ मल कर मैल छुड़ाले उसके बाद दशमूल, मेथी और अजवायन युक्त उबले हुये जल से भली प्रकार स्नान करादे। इस बात का ध्यान रहे कि शिर आदि कहीं भी किंचित मात्र मल न रहे नहीं तो बच्चे के शरीर में फुन्सियां सी निकल आयेंगी जिससे बालक को बहुत ही दुःख उठाना पड़ता है। स्नान कराने के बाद बच्चे को मुलायम तौलिया या कपड़े से भली प्रकार पोंछ दे ताकि जल का अंश ज़रा भी उसके शरीर में न रहे। उसके बाद बच्चे की नाल में नाभी की ओर तीन अंगुल के बाद गरम जल से भिगोये हुये धागा की एक गांठ लगा दे, उसके तीन इंच के आगे एक धागा और बांध दे तदनन्तर उन्हीं दोनों गांठों के मध्य में तेज़ अस्तुरे से नाल काट दे और उसी कटी हुई बच्चे की नाभी में चार रत्ती असली कस्तूरी अपनी उंगली से दबाकर पैवस्त करदे, तथा चार रत्ती कस्तूरी जल के साथ पीसकर बच्चे के बीसों नाखूनों में लेप करदे। -

नालच्छेदन के बाद साफ़ रूई अथवा फलालेन बिछा कर उसी पर बच्चे को लिटादे और ऊपर से भी उसी भांति मुलायम वस्त्र उढ़ादे ताकि बच्चे के शरीर में स्नानादि कराने का शीत दूर होकर गर्माहट आ जावे, मुख न ढकें।

शिशु स्वास्थ्य

(ले०--डा० हरवंशलाल सूरी एम० बी० बी० ऐस०पी० ग्रेजुवेट इन पैथोलोजी आनरेरी हाउस सर्जन सिविल होसपिटल दिल्ली

जनता इस बात को भली प्रकार अनुभव करने लगी है कि संतान के स्वास्थ्य का उत्तरदायित्व माता पिता पर ही है। साथ ही उनको इस प्रकार का ज्ञानभी होता चला जारहाहै कि शिशु स्वास्थ्य की कुशलता के लिए उनकी भली प्रकार रक्षा करना परमावश्यक है। उनसे यह भी छिपा नहीं है कि इस कार्य के लिए एक योग्य चिकित्सक की कितनी आवश्यकता है। प्रत्येक स्त्री पुरुष अपनी सन्तान के लिए अपनी सामर्थ्यानुसार पूर्णरूप से यह प्रयत्न करना है कि वे स्वस्थ रहें और पूर्णरूपेण वृद्धि को प्राप्त कर सकें। अतएव उपरोक्त बातों को ध्यान में रखते हुवे ही वे जन्म से पूर्व और जन्म के पश्चात शिशु के पालन और उसकी रोगक्षमता इत्यादि का सारा भार चिकित्सक पर ही छोड़ देते हैं। प्राचीन काल में जिन विधियों से हमारी वृद्ध मातायें और धात्रयां शिशु-पालन करती थीं वे अब शनैः शनैः दूर होने लगी हैं, और आधुनिक विज्ञान में शिशु पालन की प्रत्येक विधि का दिग्दर्शन भली प्रकार किया गया है।

नवजात शिशु की रक्षा

शिशु जन्म के पश्चात पहिले चौबीस घंटों में प्रायः मृत्यु संख्या अधिक देखने में आती है और जन्म के समय किसी प्रकार की चोट इत्यादि लग जाने से जो मृत्यु होती है उसकी संख्या और भी अधिक रहती है, यदि जन्म के पश्चात शिशु की ठीक-ठीक रक्षा की जाय तो मृत्यु संख्या अवश्यमेव कम हो सकती है।

जिस कमरे में कि शिशु जन्म होना हो वह गर्म होना चाहिए ताकि नवजात शिशु पर शीत प्रभाव न हो, जन्म के पश्चात शिशु की आर्द्र त्वचा पर तीव्र वाष्पीकरण होने से कम्पन आरंभ हो जाता है, अतएव शिशु को तुरन्त ही कपड़े में लपेट कर या तो पालने में लिटा दे अथवा माता के पास सुला देना चाहिए। बल्कि यह और भी उत्तम है कि नवजात शिशु को पहिले कुछ घंटों के लिए एक मुलायम से गर्म विस्तर पर लिटा दिया जाय और उसमें हौट वाटर बोतल (hot water botle) रखदी जावे, क्योंकि इससे कम्पन बिलकुल बंद होजाता है।

श्वास क्रिया

अधिकतर यह देखा गया है कि नवजात शिशु की श्वास क्रिया तुरन्त ही अपने आप ठीक हो जाती है। प्रसव के समय आक्सीजन गैस

अधिक मात्रा में खर्च होती है और कार्बन डाइ आक्सायड (Carbon dioxide) अधिक इकट्ठी हो जाती है जिससे कि श्वास केन्द्र विचलित हो जाते हैं। जन्म के पश्चात् शिशु का शिर तुरन्त नीचा कर देना चाहिए जिससे ऊर्ध्व श्वास मार्ग से श्लेष्मा और एक प्रकार का स्राव जिसे (Ammoniacal fluid) कहते हैं सुगमता से निकल जाए, क्योंकि यह प्राथमिक श्वास क्रिया में रुकावट पैदा करता है। आरम्भ में शिशु को साधारणतया लिटा देना चाहिये और इसे प्रकृति पर छोड़ देना चाहिये। यदि शिशु श्वास लेना आरंभ न करे तो कृत्रिम प्रकार से श्वास क्रिया कराए परन्तु यह क्रिया अत्यन्त ही सावधानी से होनी चाहिए। बच्चे के नितम्ब प्रदेश पर कभी आघात न करे। यदि शिशु ठीक समय के अन्दर २ न रोए तो प्रायः उसके तलवे (Soles of the feet) पर आहिस्ता आहिस्ता थपकने से वह रोना शुरू कर देता है।

श्वास क्रिया के उपाय

(१) श्वास मार्गों में श्लेष्मा इत्यादि साफ कर देनी चाहिये ताकि वायु अच्छी प्रकार अन्दर पहुंच सके। स्वरयंत्र पर धीमा सा दबाव डाल कर श्लेष्मा को कैथेटर (Catheter) द्वारा निकाल देना चाहिये।

(२) यदि जिह्वा अन्दर चली गई हो तो उसे बाहर की ओर खींच लेना चाहिए।

(३) बारी-बारी से बाहों को शिर से ऊंचा उठाने और फिर उनको छाती तक नीचा करने से श्वास क्रिया कृत्रिम प्रकार से ठीक हो सकती है क्योंकि इससे स्वरयंत्र बारम्बार फैलता और दबता है।

कमल नाल की रक्षा

इस में दो बातें अति ही आवश्यक हैं।

(अ) रक्त पात का न होने देना।

(ब) विकार इत्यादि से बचाव।

बाहरी ओर से पूर्णतया विपक्ष (Aseptic) रक्षा करनी चाहिये क्योंकि विकार प्रायः इसी ही स्थान पर होता है।

इस पर साधारणतया एक बन्ध बान्ध देना चाहिए, पहले इसे एक स्पंज से शुष्क करदे ताकि यदि कुछ स्राव हो तो पता लग जाए। बन्ध त्वचा से कोई तीन सेन्टीमीटर (3cm) परे होना चाहिए। यदि बहुत समीप बान्धना हो तो जिस नलिकासे कमलनाल निकली हो उसका एक बल डालदे। पश्चात् उसे Sterilised Gauze dressing से ढक कर उस पर Roller Bandage की पट्टी पेट के चारों ओर लपेट देनी चाहिए, पहले कुछ घन्टों में यह ध्यान रक्खे कि पट्टी पर कुछ रक्तपात के लक्षण तो नहीं है॥

"नेत्रों की रक्षा"

यदि माता को सूज़ाक इत्यादि रोग न भी हों तो भी शिशुको Gonorrhoel Opthalmia से बचाने के लिए जन्म के समय उसके नेत्रों की रक्षा सदैव आवश्यक है। उसके नेत्रों में एक या दो प्रतिशत मात्रा का सिलवर नाइट्रेट सौलयूशन एक बूंद डाल देना चाहिए और पश्चात उन्हें साल्ट सौलयूशन (Salt Solution) अथवा बोरिक लोशन (Boric lotion) से धो देना

चाहिए। जूंहि कि शिशु जन्म हो उसकी पल्कें धीमे से पूंछ दे ताकि उसके नेत्रों में किसी प्रकार का स्राव न लगा रहे। पल्कों को अलगर कर देना चाहिए जिससे कि औषधि अन्दर तक पहुंच सके यदि वे जरा भी प्रदाहित प्रतीत हों तो तुरन्त चिकित्सक की सहायता लेनी चाहिए।"

"प्रथम स्नान"

यदि शिशु समय से पूर्व उत्पन्न हुआ हो अथवा कमरा बहुत ठण्डा हो तो पहले स्नान में कभी शीघ्रता न करे। यहां तक कि जब तक श्वासक्रिया और रक्त भ्रमण बिलकुल ठीक २ न होने लगे पहला स्नान्न कभी न कराना चाहिए। उत्तम है कि प्रथम स्नान कराते समय डाक्टर भी उपस्थित हो। स्नान के पश्चात बच्चे के शरीर पर कुछ थोड़ा निवाया जैतून का तैल आहिस्ता से मलकर एक कोमल वस्त्र से पूंछ देना चाहिए। चड्ढों में त्वचा बहुत कोमल होती है और इन्हीं प्रदेशों में विकार होने की सम्भावना रहती है अतएव इनमें से तैल बहुत कोमलता और सावधानी से पूंछना चाहिए। शिशु को साबुन और जल से स्नान कराना आवश्यक नहीं है क्योंकि इससे शीत और कम्पन उत्पन्न होने का भय रहता है।

"शिशु के रहने का कमरा"

जहां तक हो सके शिशु का कमरा माता से पृथक होना चाहिए। ऐसा करना बच्चे के लिए स्वास्थ्यप्रद रहता है और माता को भी शान्ति और सोने में सुगमता रहती है। कमरा उपयुक्त प्रकार से बड़ा और हवादार होना चाहिए। पहले कुछ दिन तक उसमें शेड (Shade) इत्यादि लगा कर रोशनी हल्की रखनी चाहिए। वायु का आतनिर्यात ठीक २ होना भी अत्यन्त आवश्यक है। परन्तु शिशु के समीप वायु का झोंका सीधा न आना चाहिए। और वस्तुएं जिन पर कि रेत जमता है कमरे में न रखनी चाहियें। कमरा सदैव साफ सुथरा रहे। रेत इत्यादि को गीले कपड़े से पुंछवाते रहना चाहिए और खिड़कियां व द्वार इत्यादि कभी २ पानी से धुलवा देनी चाहिए।

"शिशु शय्या"

पहले अड़तालीस घन्टों तक शिशु की शय्या पांओं की ओर से ऊंची रखनी चाहिए ताकि मुख से श्लेष्मा इत्यादि सुगमता से निकल सके परन्तु यदि जन्म के समय मस्तिष्क अथवा खोपड़ी पर कुछ चोट इत्यादि लग गई हो तो ऐसा कदापि न करे। प्रारम्भ में शय्या छोटी और कुछ मास के पश्चात बड़ी होनी आवश्यक है। गद्दा बिल्कुल सपाट और कोमल होना चाहिए इसे गीला होने से बचाने के लिए उस पर मोमजामा बिछा दे फिर उस पर एक सफैद चादर फैला कर बच्चे का पोतड़ा रखदे जिससे कि वह आर्द्रता शोषण कर सके। पश्चात शिशु को लिटा कर उसे एक सफेद चादर और हल्के से कम्बल से ढक देना चाहिए।

"धातृ"

धातृ उस स्त्री को कहते हैं जो कि शिशु की जन्म के पश्चात कुछ समय तक रक्षा करती है। अतएव वास्तव में माता ही सब से उत्तम धातृ होती है। धातृ बिल्कुल

स्वस्थ, चतुर, शान्त स्वभाव और साफ़ सुथरी व नम्र होनी चाहिए। साथ ही साथ उसका सर्व-साधारण बातों में निपुण होना भी आवश्यक है। शिशुरक्षा कराने से पहले एक बार उसका चिकित्सक द्वारा निरीक्षण करा लेना चाहिए क्योंकि बच्चों को क्षयरोग और सुज़ाक प्रायः इन धात्रियों द्वारा ही होता है। नवशिशु को कुटुम्ब के और बालकों और अन्य सम्बन्धियों से भी दूर ही रखना उत्तम है।

बच्चे की पूर्णवृद्धि और स्वास्थ्य की उन्नति के लिये उसकी नियमपूर्वक रक्षा अत्यन्तावश्यक है। बच्चों के स्वभाव बड़ी शीघ्रता से बनते हैं। अतएव पहले ही से ऐसा यत्न करना चाहिए जिससे कि वे बुद्धिमत्ता पूर्ण उपयोगी नियम पालन कर सकें। उन्हें दूध इत्यादि भी नियम पूर्वक मिलना आवश्यक है। यदि बच्चा दूध पिलाने के समय सो रहा हो तो जगा लेना चाहिए, परन्तु यदि वह जागा हुआ हो और रो रहा हो तो उसके आंसू पूंछ कर शान्त करने का प्रयत्न करना चाहिये. यदि वह फिर भी रोता रहे और दूध पिलाने का समय न आया हो तो उसके रोने की परवाह न करें। स्नान और ध्यान भी नियमित समय पर होना चाहिये।

"दूध पिलाने की विधि"

चूंकि साधारणतया माता के स्थनों में दूध तीसरे दिन उतरता है। अतएव उस ही दिन से शिशु के दूध पिलाने का नियम बांध लेना चाहिए माताको लग-भग २० मिन्ट तक एक बार में दूध पिलाना चाहिए, और यह क्रिया दिन में प्रति तीन घन्टे के पश्चात और रात्रि को प्रति चार घन्टे के पश्चात कराते रहना चाहिए। दूध पिलाने के पश्चात थोड़ा सा स्वच्छ जल पिलायें जिसकी कि मात्रा पहले दिन सबसे अधिक हो ताकि

"तापक्रम और भार"

शिशु की ग्रहण शक्ति ठीक हो जाए प्रति दिन दोबार उसके शरीर का तापमान लें। यदि तापमान १०० फ़ारनहीट (Farenheit) से अधिक हो तो शिशु की देखभाल रखनी चाहिए। बच्चे का प्रतिदिन एक नियमित समय पर वस्त्र रहित भार लेना चाहिए। भार लेने का सबसे अच्छा अवसर स्नान से पहले होता है।

"स्नान"

बच्चे को स्नान भी सवेरे दूध पिलाने से पहले एक नियमित समय पर करना चाहिये। दूधपिलाने के पश्चात स्नान कराना हानिकारक है। प्रति दिन स्नान करना आवश्यक नहीं, परन्तु स्नान सूर्य उदय के पश्चात होना चाहिए और उस स्थान पर हवा न चलनी चाहिए। हवा को रोकने के लिये यदि और कोई अच्छा सा स्थान न मिल सके तो दो कुर्सियों को सीधी खड़ी कर उन पर एक चादर डाल कर काम निकालें। नाल टूटने के पश्चात यदि नाभि अच्छी हो जाए तो टब में स्नान कराना हानिकारक नहीं है। स्नान कराने और शरीर पूंछने के लिए मुलायम तौलिया प्रयोग में लाना चाहिए। प्रथम नेत्र और फिर मुख बग़ैर साबुन से धोकर एक कोमल वस्त्र से पूंछ देने चाहियें परन्तु मुख के अन्दर कभी स्नान कराते समय उंगली इत्यादि न डालें।

शिशु जल में दो या तीन मिनट से अधिक न रहना चाहिए, और स्नान के पश्चात शिशु की जननेंद्रिय एक स्वच्छ (Sterile) रुई के फोए से आहिस्ता से पूंछ कर फिर सारा शरीर बिल्कुल खुष्क करदेना चाहिए। पश्चात समस्त शरीर पर कुछ उत्तम टैलकम पाउडर (Talcum Powder) अथवा स्वच्छ जैतून का तेल(Sterile Olive oil) मल देना चाहिए।

"नवशिशु के वस्त्र"

नवशिशु के वस्त्र थोड़े और सुगमता से धुलने वाले होने चाहिए। रेशमी और ऊनी वस्त्रों से सूती अधिक अच्छे रहते हैं क्योंकि ऊनी तो प्रायः त्वचा छील देते हैं। और रेशमी न गर्म होते हैं और नहीं पानी शोषण कर सकते हैं। बल्कि सूती सस्ते के साथ साथ आसानी से धुल भी सकते हैं। पहले कुछ मास तक शिशु को वस्त्र व जुराबें इत्यादि पहननी आवश्यक नहीं, केवल उसके शरीर को स्वच्छ और शुष्क रखने का प्रयत्न करना चाहिए। यदि शिशु के नितम्ब प्रदेश की त्वचा छिल जाए तो उसे जल व साबुन इत्यादि से कभी न धोवे बल्कि थोड़ा जैतून का तैल मलदे। शुष्क और गर्म वायु के प्रभाव से नवशिशु शीघ्रता से उन्नति करता है"

"शिशु का दैनिक कार्यक्रम"

प्रातःकाल ६ बजे—दूध पिलाना और पश्चात शय्या पर सुलादेना।

प्रातःकाल ८½ बजे—वस्त्र उतार कर पहले शरीर का तापमान देखे और फिर उसका भार लेवे। स्नान के पहले बच्चे को कुछ मिनट के लिए खेलने और हाथ पैर चलाने देना चाहिए। कुछ सन्तरे अथवा टिमाटर का रस पिलावे और स्नान के पश्चात शरीर का भली प्रकार निरीक्षण कर शिशु को वस्त्र पहना देना चाहिए।

प्रातःकाल ९ बजे—दूध पिलाना

„ ९½ „—शय्या पर सुलादेवे और जब शिशु जागे तो कुछ स्वच्छ जल पिलाना और यदि ऋतु अच्छी हो तो कुछ समय के लिए बाहर खुली हवा में सैर करानी चाहिए।

प्रातःकाल १२ बजे—दूध पिलाना।

„ १२½ „—शय्या पर लिटाकर सुलादेना और जागने पर जल पिलाना चाहिए।

सायंकाल ३ बजे—दूध पिलाना।

„ ३½ „—शय्या पर सुलाना और जल पिलाना

सायंकाल ५½ बजे—कपड़े उतार कर रात्रि के वस्त्र पहनाने के पहले शिशु को कुछ समय के लिए अपनी शय्या पर खेलने और लातें इत्यादि चलाने दे, पश्चात कुछ अथवा सन्तरे का रस चटावे।

सायंकाल ६ बजे—दूध पिलाना

„ ६½ „—पालने में लिटा देना

रात्रि को १० बजे—दूध पिलाना

„ २ „—दूध पिलाना

"मलोत्सर्ग"

नव माता को यह बतला देना चाहिए कि बच्चे का प्रतिदिन मलोत्सर्ग होना आवश्यक नहीं है। यदि मल बहुत कड़ा न हो और शिशु व्याकुल न हो उठे तो हर तीसरे दिन मलोत्सर्ग होना

हानिकारक नहीं होता। प्राय: एक दिन में छ: से आठ बार मलोत्सर्ग होना भी अधिक नहीं। पीला और हरा व कुछ लेसदार मल निकलना अच्छा होता है परन्तु यदि शिशु माता के दूध पर न रहता हो तो उसके मल में कुछ दही की सी फुटकें और श्लेष्मा भी आती है।

शयन

नव जाति शिशु अपने जन्म के, पहले कुछ सप्ताह तक, लगभग प्रतिदिन चौबीस घन्टा में बीस या बाइस घन्टे सोता रहता है। निद्रा गहरी और शान्तिमय होती है। फिर १ वर्ष तक वह लग-भग चौदह से सोलह घन्टे तक सोता है प्रात:काल का दूध पिलाना जितनी जल्दी छूट सके छुड़ा देना चाहिए। जन्म से ही सोने का ठीक २ ढंग सिखाना चाहिए। हर समय शिशु धाय की गोदी में रहना, अथवा पालने का हर समय हिलाना अथवा किसी चुप करने वाली वस्तु के प्रयोग इत्यादि की आदत डाल देना शिशु के लिए न केवल अनावश्यक ही है बल्कि कुछ हद तक हानिकारक भी रहता है। बदहज़मी अथवा भूख ही बच्चे की निद्रा में बाधक होती है।

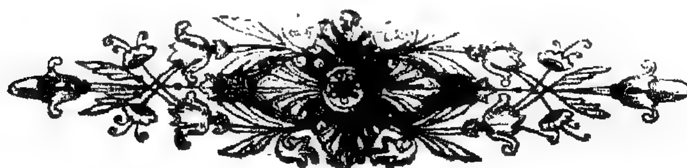
व्यायाम

व्यायाम छोटे बच्चे के लिए इतनाही आवश्यक है जितना कि एक बड़े मनुष्य के लिए। परन्तु इस छोटी अवस्था में व्यायाम केवल खुलकर रोने और हाथ पैर ज़ोर से चलाने में ही हो जाता है। साथ ही साथ बाहिर खुली हवा में सैर कराना भी उतनाही लाभदायक होता है। जितना कि व्यायाम।

सूर्य स्नान

यह अत्यन्त ही लाभदायक क्रिया है परन्तु सूर्यस्नान विचार पूर्वक और बहुत सावधानी से कराना चाहिए। शीतऋतु में केवल हाथ और मुख ही खुले रखने चाहिए और ग्रीष्म व बसन्त ऋतु में प्रत्येक अङ्ग व प्रदेश पर सूर्य का प्रभाव दो मिनट से अधिक न होना चाहिए। सूर्यस्नान की क्रिया का समय प्रति दिन एक-एक मिनट बढ़ा देना चाहिए परन्तु त्वचा का रंग गहरा भूरा (Deep Tan) होजाना अवश्यक नहीं।

यह लेख अंग्रेजी में लिखा गया था इसका अनुवाद मिस्टर रतनलाल बी. एस. सी. महोदय देहली ने किया है हम इसके लिये उनको धन्यवाद करते हैं।



शिशु पालन

ले०—कविराज पं० रामदास
वसिष्ठ आयुर्वेदाचार्य पीलीभीत

जिस देश के बालकों की मृत्यु संख्या वार्षिक लाखों में हो उस देश का अल्पकाल ही में सर्वनाश होने में क्या संशय है ? भारतवर्ष में १००० शिशुओं में से लगभग ५०० बालक एक वर्ष की आयु तक पहुंचने के पूर्व ही काल के गाल में पहुंच जाते हैं। क्या यह मृत्यु संख्या अन्य देशों में नहीं है ? कदापि नहीं, यदि भारत जैसी दशा अन्य देशों की भी होती तो भारत की इस दुःख कथा रोने से क्या अभिप्राय था। भारत में इङ्गलैण्ड की अपेक्षा अठगुने बच्चे काल के गाल में बिना सांसारिक एवं अबोधावस्था को गले लगाते हुये इस संसार के प्राणियों को जोकि नानाविध भ्रान्तियों कुरीतियों से जकड़े हुए हैं इनको दोष-पूर्ण दृष्टि से कुछ दिन या कुछ क्षण देखकर अपनी यह जीवन लीला समाप्त कर देते हैं। आजकल कहा जाता है कि बिना ईश्वरेच्छा पत्ता तक नहीं हिलता एवं जीवन-मरण किसी के हाथ में नहीं। भारतवासियो ! आपके इन्हीं विचारों ने आपकी दुर्गति की है यदि यही विचार पहले से चले आते तब आज इस भारत का नामोनिशान भी ढूंढे से न मिलता। जिस भारत को जगद्गुरु समझा तथा सम्पत्ति कला कौशलादिकों का भण्डार माना जाता रहा है क्या इन्हीं भ्रान्तियों पर ? जिस भारत ने प्राचीन मिश्र, यूनान, रोम, चीन आदि देशों को सभ्यता का पाठ पढ़ाया तथा सारे देशों का नेतृत्व किया वह भारत क्या इन्हीं भ्रमात्मक विचारों का शिकार था ? भारत की आयुर्वेदिक एवं वैदिक सभ्यता किसी इतिहासज्ञ से छिपी नहीं। प्राचीन भारत के शारीरिक एवं आध्यात्मिक विषयक उपाय अभी तक सभ्य कहलाने वाले मस्तिष्क को छू तक नहीं पाये हैं। प्राचीन रहन-सहन तथा वर्णाश्रम संगठन ही इस आधार पर था कि स्वास्थ्य बिगड़ने ही न पाता था, नई सभ्यता के धारा-प्रवाह में प्राचीन सभ्यता तथा आयुर्वेद के साधन ही समाप्त हो गये, मनुष्य विदेशीय सभ्यता एवं विधियों के गुलाम बन गये और पुरुषार्थहीन होकर सब बातों को ईश्वरेच्छा पर छोड़ दिया। किन्तु इस भयानक व्याधि का उत्पात बजाय शान्त होने के दिन प्रति-दिन अधिकाधिक होता गया जो हम लोगों के सामने मौजूद है। प्रत्येक उन्नति-शील देश की उन्नति भावी बालकों पर निर्भर होती है और इन शिशुओं द्वारा उन्नति का संचालन समाज तथा माताओं द्वारा होता है। किन्तु मातायें अपने कर्तव्य एवं उत्तरदायित्व को पालन नहीं करतीं, इसमें माताओं का दोष नहीं किन्तु समाज का ही है क्योंकि सन्तति जातीय सम्पत्ति है और इसके कल्याण ही में देश तथा जाति का कल्याण है। इस प्रकार समाज द्वारा साधित माता द्वारा

शिशुओं से देश का कल्याण हो सकता है और होता आया है।। सभी देशों में माता का स्थान उच्च माना जाता है अथवा विश्वेश्वर और विश्व के मध्य में ललित-स्नेह के सिंहासन पर मातेश्वरी बिराजती है।

माता का कर्तव्य

शिशु जनन ! शिशु पालन !! शिशु रक्षण !!!

यदि मातायें इन तीनों का पालन नहीं करतीं तो वे घोर अपराधिनी बन समाज को बलहीन निस्तेज एवं पंगु बनाती हैं !

बच्चों की अकाल मृत्यु के कारण

१. कुरीतियों का अत्यधिक प्रचार।

२. देश की भयंकर दरिद्रता।

३. धातृ शिक्षा का अभाव।

४. असमय में स्त्रियों का माता बन जाना।

५. अन्ध विश्वास बेमेल विवाहादि।

बच्चों की अकाल मृत्यु से क्या पता चलता है

१. जितनी मृत्युसंख्या बालकों की होगी उससे अधिक स्त्रियों की शोचनीय दशा होगी।

२. उस देश के सिद्धांत कार्यरूप में प्रचलित न होते होंगे।

३. वहां के निवास एवं निवासी दूषित होंगे।

४. जो शिशु किसी प्रकार बच भी जाते होंगे उनकी अधिक संख्या निस्तेज बलहीन अङ्ग भङ्ग अथवा Skeleton अर्थात् अस्थि चर्मावशेष ढांचों से बाजार की रौनक बढ़ रही होगी।

इसलिए सदैव Child is the Father of man अर्थात् शिशु ही मनुष्य का पिता है; का ध्यान रखकर समाज द्वारा उत्साहित माताओं से जनन रक्षणादि का पूर्णतया पालन कराना चाहिए।

माताओं का कर्तव्यकर्म

आर्य-माताओं को शिशुओं की शुश्रूषा सम्बन्धी ज्ञान एवं आरोग्यशास्त्र का पूर्ण ज्ञान होना चाहिए, ताकि उन्हें इस बात की कल्पना हो जावे कि किन-किन उपायों से शिशु निरोगी एवं बल-पूर्ण हो सकता है सबसे पूर्व:—

शरीर-विस्तार

साधारणतया नवजात शिशु १ मास के अन्दर काफी भार वृद्धि कर लेता है। पूरे नौ मास का उत्पन्न हुआ शिशु प्रायः ७ पौंड वजन और १८ इंच लम्बा होता है। इसके बाद पहिले ३-४ दिनों में उसका भार प्रायः १४-१५ तोला कम होजाता है किन्तु सम्यकतया दुग्ध का प्रबंध होने से इस कमी को पूर्ण कर लेता है। एक वर्ष पर्यन्त बच्चे के शरीर विस्तार का परिमाण ज्यादा बढ़ता रहता है, विशेषकर अस्थि, मांस, शिरा धमनी का विस्तार, गति अति तीव्र होती है। एक वर्ष पूर्ण होने तक भार प्रायः १८-२० पौंड तक होजाता है, या यूं कहिये कि जन्मकाल के भार से द्विगुण भार ६ मास तक और त्रिगुण एक साल में होजाता है। पूर्व दो वर्षों में जो विस्तार गति होती है उतनी अन्य वर्षों में नहीं होती। इसलिए इन दो वर्षों में शिशु के दूध एवं खाद्य पदार्थों की ओर विशेष ध्यान देना चाहिये। बालक के प्रथम वर्ष में यदि प्रति मास १ पौंड भार न बढ़े, तब समझना चाहिये कि पोषकद्रव्य संतोष

जनक नहीं पहुंच रहे हैं साधारणतया प्रथम वर्ष में वृद्धि निम्नोक्त प्रकार से होती है:--

अवस्था	वृद्धिक्रम	पूर्ण तो०
१ मास	१३ औंस	८ पौंड
२ मास	३० औंस	६ पौंड १४ औंस
३ ,,	२७ ,,	११ पौंड ६ औंस
४ ,,	२६ ,,	१३ पौंड ३ औंस
५ ,,	२१ ,,	१४ पौंड ८ औंस
६ ,,	२० ,,	१५ पौंड १२ ,,
७ ,,	१७ ,,	१६ पौंड ३ ,,
८ ,,	२३ ,,	१८ पौंड ४ ,,
९ ,,	२२ ,,	१९ पौंड १० ,,
१० ,,	२० ,,	२० पौंड १४ ,,
११ ,,	११ ,,	२१ पौंड ६ ,,
१२ ,,	७ ,,	२२ पौंड

उत्पन्न अवस्था में बच्चे की कोमल अस्थियां क्रमशः कठोर और मजबूत बन जाती हैं। मस्तिष्क, फुफ्फुस, अन्त्र, यकृत्प्लीहादि में आवश्यक वृद्धि होकर तत्परता आजाती है एवं विस्तृत होती रहती है। अतः इस समय में बालकों की ओर विशेष ध्यान देना जरूरी है, इस अवस्था में बालकों की Brain Activity मस्तिष्क में चापल्यकी मात्रा न्यून होती है सारा दिन रातसोने और दूध पीने में ही व्यतीत करते रहते हैं।

बालकों का आहार

प्रायः मातृदुग्ध ही माना जाता है और वस्तुतः वह है भी स्वाभाविक भोजन। यदि इस दुग्ध का पृथक्करण किया जावे तो इसमें निम्न वस्तुयें प्राप्त होंगी जल, शकर, वसा, क्षीर, क्षारादि यह पांचों द्रव्य बालक के स्वास्थ्य के लिए अत्यन्त लाभप्रद हैं।

मातृदुग्धवसा से लाभ

उक्त दुग्धवसा से बालक की Nerves को पुष्टि मिलती है, और बच्चों की देह जो हर समय उष्ण रहती है वह वसा के रासायनिक विश्लेषण के Brain Chemical Process द्वारा ही होती है!

दुग्ध शर्करा

इसके द्वारा भी शिशु में उष्णता की वृद्धि होती है।

क्षार

इससे अस्थियों में तीव्रता आती है ताकि मांस के धारण में उपयुक्त हों।

जल का उपयोग

जल उक्त पदार्थों का पाचन होने पर पाक रस को रक्त तक पहुंचाने का कार्य करता है। इसके अलावा दुग्ध में प्रोटीड Proteid के सीनोजन (Caseinogen) के रूप में प्राप्त होता है इसका उपयोग समस्त शरीर के अवयवों को बल कान्ति देना है। यदि किसी कारणवश यह उपयोगी द्रव्य नवीन शिशु के उदर में न पहुंचने पावे उस अवस्था में शिशु का जीवित रहना असंभव हो जावेगा और यदि Proteid कम मात्रा में शिशु के उदरस्थ होता है तब बालक कमजोर, चिड़चिड़ा, कान्तिहीन होजाता है। इसके अलावा शिशु के बलहीन होने के कारण किसी रोग के आक्रमण को रोकने की शक्ति नहीं

रह जाती, साधारण रोग शिशु को किसी भी समय रोगाक्रान्त कर सकते हैं।

उक्त पांचों द्रव्य कितने प्रमाण में पहुंचने चाहियें ? Water जल ८७'२ —९०'५८' दुग्धशर्करा Suger ३'१५' ९०१ वसा Fat ०'६७'—४'०३' Proteid प्रोटीड "पोषक द्रव्य" २'६१—'६२ क्षार Salt ०'१४'०२८' उपरोक्त तालिका से विदित होगा कि शिशु को-प्राण एवं स्वास्थ्य रक्षार्थ जिन-योग्य द्रव्यों की शरीर को आवश्यकता है वे सब माता के दुग्ध में विद्यमान हैं।

शिशु-- और दाया

प्रायः यहां भी दाया से दूध पिलाने की रीति प्रचलित हो रही हैं किन्तु यह प्रथा आयुर्वेद शास्त्र के विरुद्ध एवं हानिकारक हैं। इसके अनुसार चलने से प्रायः बच्चों को हानि ही होती है। शास्त्रों में धाय का विधान उस समय बताया गया है, जब कि माता रुग्ण हो जिससे भावी शिशु के जीवन पर संकट उपस्थित हो. धाय द्वारा दूध पिलाने मे पहले तो योग्य धाय का मिलना ही मुश्किल हो जाता है किन्तु जो धनाढ्य हैं वह प्रबन्ध कर भी सकते हैं पर निर्धन प्राणियों के लिये यह असम्भव ही प्रतीत होता है, गाय तथा बकरी का दुग्ध जबतक उसमे जल एवं औषध मिश्रण न किया जावे, तब तक ठीक प्रकार हज़म नहीं होता। प्रायः ग्वालिन दुग्ध से बच्चों को अतिसारादि की शिकायतें हो जाया करती हैं, दूध के बर्तन को सदैव स्वच्छ रखना पड़ता है, बच्चे को पिलाते समय दूध का उष्ण करना भी अनिवार्य है, यदि इन झंझटों में जरासी भी उपेक्षा की, मानों शिशु पर अन्याय करके रोग को स्वयं आह्वान किया। किंतु माता का दुग्ध यदि शुद्ध है तब इन झंझटों से बिलकुल अलग रहना पड़ता है क्योंकि माता का दुग्ध सीधा बच्चे के मुंह से जाकर उदरस्थ होजाने से किसी प्रकार का दोष नहीं आता, साथ में जबतक बच्चा दुग्धपान करता रहता है तबतक प्रायः मातायें दुबारा गर्भधारण के अयोग्य होती हैं इसलिये आजकल जो फैशनेबिल स्त्रियां स्वयं दूध पिलाने की प्रथा को घृणित समझती हैं वह कम से कम शिशु के दुग्ध पान काल तक पुनः गर्भधारण के भार से बची रहती हैं।

बच्चोंको जब चाहे तभी दूध पिला देना ठीक नहीं, दुग्ध नियमित समय पर ही पिलाना उपयुक्त होगा कमसे कम तीन या चार घन्टे बाद दूध पिलाना चाहिये इससे एक तो यह लाभ है कि शिशु नियमित समय पर ही भोजनेच्छुक होगा साथ मे दुग्धादि का अवकाश समय में सम्यकतया पाक भी होजावेगा और बच्चे को अच्छी तरह भूख भी लग जावेगी साथ में माता को भी आराम रहता है क्योंकि वह यह जानती है कि बच्चा अमुक समय मे दूध पीवेगा इस तरह गृहस्थी के कार्य संचालन में भी बाधा न होगी इसके अलावा जब बालक भूखा होता है तब दूध ज्यादा तादाद में पीकर क्षुधा मिटाने का यत्न करता है परिणाम स्वरूप स्तन्य भी समाप्त होकर कच्चा दूध उत्पन्न होता है।

जब शिशु ३ - ४ मास का हो जावे तब उसको दिन रात में ५—६ बार दूध देना चाहिये।

बालकों को दुग्ध पिलाने की तालिका नीचे दी जाती हैं:—

रात दिन में माता को कितनी बार दूध पिलाना चाहिये.

	सबल	निर्बल
अवस्था	दिन—रात	दिन—रात
पहिला दिन	३ बार १ बार	२—१
दूसरा दिन	५—१	३—२
३ दिन से २० दिन	७—३	६—२
३ रे सप्ताह से १२ सप्ताह तक	६—२	५—२
३ मास-५ मास तक	५—२	४—२
६ „ —१२ „ „	४—१	३—१

उपरोक्त तालिकानुसार दूध दिया जा सकता है किन्तु सबल बालक की इतनी मात्रा में तृप्ति न हो एवं निर्बल बालक इतनी मात्रा हज्म न कर सकता हो उस अवस्था में बुद्धिमती माता स्वयं न्यूनाधिकता कर सकती है कोई मुश्किल कार्य नहीं। दुग्धपान एक महत्व का कार्य है जिसका संचालन माताओं द्वारा ही होता है यदि यह संचालन कुपढ़ मूर्खा माताओं द्वारा होता है तब इससे बालक के स्वास्थ्य पर भीषण परिवर्तन हो जाते हैं। इसलिये माताओं का कर्तव्य है कि बच्चों के दुग्धपान में सावधानता से काम लें अन्यथा माताओं को शिशु दन्तोद्गमावस्था में अत्यन्त कष्ट उठाना पड़ता।

बालक और दन्तोद्गम

माता की परीक्षा का समय नवजात शिशु के दांत निकलने के वक्त देखा जाता है। यह समय नवजात शिशु के लिये अत्यन्त कष्टकर प्रतीत होता है। यदि माता इस वास्तविक परीक्षा में सफलाभूत हुई तब शिशु को नई जिन्दगी प्राप्त होती है। भारत में लाखों शिशु इस भयानक रोग के उपद्रवोंसे संतप्त हो अपनी ऐहिक जीवन लीला समाप्त कर देते हैं। खेद का विषय है कि अन्य देशों की भांति भारत में स्त्रियों को शारीरिक, व गृहस्थ सम्बन्धी एवं आरोग्य-वर्धक नियमों का साधारण भी ज्ञान नहीं और ना ही इसका राज्यकी ओर से प्रबन्ध किया जाता है और जो समाज या संस्था सेवाहितेच्छुक सामयिकपत्रिकाओं द्वारा प्रचार भी कर रहे हैं जनता में उसका कुछ मूल्य नहीं. वे समझते हैं कि इसकी आवश्यकता तो केवल वैद्योंको है जिनका कि पेशा ही यह है। एक इतिहास और भूगोल का विद्यार्थी अपनी अंगुलियां पर गिन कर यह तो बता सकता है फलां स्थानपर इतने नदी,नाले व नालियां या वह २ इतिहास हैं किन्तु अपनी मशीनरी जिससे कि रात दिन कार्य लेना पड़ता है उसकी चिन्ता नहीं। यदि इन लोगों से कहा भी जावे तो सीधा जवाब कि वैद्य डाक्टर किस लिये हैं यह है देश का दुर्भाग्य! अस्तु

बच्चों के दांत निकालने का समय

यह आवश्यक वा नियमित नहीं कि प्रत्येक शिशु के दांत एक समय या एक आयु पर निकलें। दन्तोद्गम बालक के स्वास्थ्य पर ज्यादा निर्भर होता है। भिन्न २ अवस्थावाले शिशुओंके भिन्न २ समय पर दांत निकला करते हैं बालकों में पहिला दांत प्रायः ५-६ मास तक निकलता है। स्वस्थ बालक के दांत ३ मास के अन्दर निकलते देखे गये हैं। परन्तु ३ मास के अन्दर बहुत कम निकलते हैं। कमजोर बच्चों के दांत बहुत

बिलम्ब से निकलते हैं, यहां तक कि पहिला दांत ग्यारहवें बारहवें मास में निकलना शुरू होता है।

प्राय: दूध के दांत २० की संख्या में २॥ वर्ष के भीतर निकल आते हैं। सामने के दो दांत छटे महीने में दो सूपे Lateral incisors or out side. cutting Teeth ८वें मास में मध्य के मसूड़े First molars. or Lateral Grinners १२ वें मास में २ मसूड़ camine Dog or eye Teeth १८ वें मास और अन्तिम दाढ़ Second molars or. Posterior Grinbers.दूसरे वर्ष निकलते हैं। अन्य दांतोंकी अपेक्षा अन्तिम दाढ़ों में जो दूसरे वर्ष निकलती हैं उनमें बालकों को बहुत कष्ट होता है।

उपरोक्त कुल दांत दूध के दांत कहलाते हैं असली दांत प्राय: छटे वर्ष से निकलना शुरू होते हैं।

बालकोंके दांत निकलते समयके विकार

दांत निकलने के समय बालक आमतौर पर हठील चिड़चिड़े हो जाते हैं। दूध ठीक तरह नहीं पीते, रात या दिन में ज्वर भी होजाया करता है। रङ्ग विरंग दस्त आने लगते हैं। और दांत निकलने के बाद स्वयं ही उपरोक्त लक्षण ठीक हो जाते हैं।

तथा प्रत्येक दांत निकलने के कुछ सप्ताह पूर्व लार टपकने लगती है आंखों से पानी बहने लगता है।

ज्वर कास तृषा अतिसार की शिकायत तो प्राय: हर बच्चों में कुछ न कुछ रहती है इसके अलावा वमन होने लगती है तथा कान में दर्द और चर्म सम्बन्धी विकार भी आमतौर से हो जाया करते हैं यह विकार प्राय: दांत निकलते समय हुआ करते हैं इनमें माताओं को घबड़ाना न चाहिये यदि किसी बालक को कोई विशेष शिकायत होकर प्राण संकटापन्नावस्था विद्यमानहो उससमय किसी योग्य चिकित्सक से सलाह करके वास्तविक चिकित्सा करानी चाहिये। दन्तोद्गम के समय शिशुओं के मुंह से बहुत लार टपका करती है इस लार के टपकने से दांत बहुत सुगमता से निकलते हैं इस लारको रोकने का प्रयत्न न करना चाहिये। प्रकृति की स्वभाविक क्रिया को रोकना शिशु पर अन्याय करके अन्य रोगों को निमन्त्रित करने के समान है। भेषज चिकित्सा के बजाय शिशु के रहन सहन वस्त्रादिकों पर विशेष ध्यान देना चाहिये। बच्चे को उष्ण जल से निर्वात स्थान में स्नान कराना भी लाभदायक होगा। फलरस यथा अंगूर, अनार, सेब वगैरह का रस भी १—२ चम्मच दे सकते हैं किंतु इस फलरस में मातृदुग्ध का सम्मिश्रण कर लिया जावे।

यदि दन्तोद्गम के समय बच्चे को दूध न पचता हो उस दशा में दूध में चूने का पानी एक चम्मच मिला कर दिन में १—२ बार पिला देना चाहिये।

और यदि किसी कारणवश बालक के दांत सुगमता से निकलें उस समय बालक के मसूड़ों को नश्तर से हल्का चिरा देना चाहिये।

दांत निकल आने पर साफ़ वस्त्र से दांतों व जीभ को साफ़ करते रहना चाहिये।

बालक और अफ़ीम

बहुत सी मूर्खा स्त्रियां बच्चों के रोने चिल्लाने से चिढ़कर उन को अफ़ीम का आदिबना देती

हैं। वे भोली मातायें क्षणिक सुख के लिये अपने शिशु को सदैव के लिये दुखी बना देती हैं।

भारत में सैंकड़ों स्त्रियां ऐसी हैं जो बालक १॥ मास के होने के बाद से अफीम का प्रयोग करना आरंभ कर देती हैं उनकी यह धारणा हो गई है कि अफीमसे बालकको सर्दी दांत एवं अन्य संक्रामक बीमारियां नहीं होने पातीं और रो २ कर माता को बालक अधिक कष्ट नहीं देता। किन्तु इनका यह समझना भयानक भूल एवं अशिक्षा का परिणाम है। आयुर्वेद शास्त्रानुसार आपको ज्ञान होना चाहिये कि अफीम बालक को खिलाना अपने हाथों उनको Poison विष देना है और यह हानि बच्चे के कुछ बड़ा होने पर माताओं पर सम्यक्तया विदित होजाती है।

अफीम एक सांघातिक भयंकर विष है, जिसमें मारफिन, कोडिन, पेरावेरिन, नारकोटिन थबिन, नारसीन, मेकोनिन सात भयंकर हलाहल विषों का मिश्रण है, और इस मिश्रण का ही नाम अफीम है अब जो मातायें बालक को इन सातों हलाहलों को खिलाती हैं वह शिशु के स्वास्थ्य एवं भविष्य जीवन केलिये कितना अनर्थ उत्पन्न कर देती हैं। बालकों को अफीम देने से वे सुस्त हो जाते हैं चूंकि मारफीन और नारकोटिन नामक जो विष इस के अन्दर विद्यमान हैं उनमें सुस्ती एवं कमजोरी लाने का विशेष अवगुण है, और सुस्ती के साथ २ मन्दाग्नि होना भी अनिवार्य है, और जब मन्दाग्नि होगई तब आहार रस का ठीक पाक न होकर रक्त-निर्माण भी ठीक न हो सकेगा, और जब रक्त निर्माण ही ठीक न हुआ तब शिशु की वृद्धि, तेज, चंचलतादि नष्ट हो जावेगी और दिन प्रतिदिन बालक का शरीर काला पड़ता जावेगा। इसके अलावा शिशु सदैव केलिये अफीमची बन जाता है। इसलिये माताओं को चाहिये कि अपने शिशुसमाज पर अन्याय न करके इस कुप्रथा को नष्ट करदें।

बच्चों के रोगों पर सरल योग

ज्वरातिसारे

बेलगिरी १ तोला, धाय के फूल १ तो०, मोचरस १ तो०, पठानी लोध १ तो०। कुरैया छाल १ तोला।

सब को महीन कूट छानकर रखलें मात्रा—१ मास के बालक को १ रत्ती बड़े बच्चे को आयु के अनुसार मात्रा बढ़ादें।

ज्वर कासे

अतीस १ तोला काकड़ासिंगी १ तो० नागर मोथा १ तोला। १ मात्रा-१,२ रत्ती अवस्थानुसार।

बच्चों के दाँतों में

जिन बच्चों के दांत कष्ट से निकलते हों उनको हरी मकोय के पंचांग का स्वरस और गुलरोगन दोनों को कुछ गरम कर मसूड़ों पर रोजाना मलना चाहिये।

बालकों की पसली चलने पर

घोड़े के अगले पैर के बीच के जोड़ के पास एक गांठ होती है। जैसे आदमियों के पैर की उङ्गली में पड़ने पर लोग नाईसे कटवा देते हैं, उस गांठ को चाकू से काटकर छः मासके शिशु को राई भर और इससे बड़े बच्चे को १॥ राई भर गांठ को मां के दूध में घिस कर पिलादो पसली चलना बन्द होगी।

बालकों के सूखा रोग पर

बिलकुल श्यामवर्ण की गौ का जिसके कोई दूसरे वर्ण का दाग न हो १ सेर गौ-मूत्र लेकर असली केशर १ तोला, पूर्व थोड़े गोमूत्र को खरल में डाल केशर को खूब खरल करे बाद में कुल गोमूत्र में केशर घोलकर वा छानकर स्वच्छ शीशी में रखलो।--

मात्रा ६ मास के बालक को ४ बूंद मातृ-दुग्ध से। ६ से ऊंचे बालकों को ८ बूंद मातृदुग्ध से। ३ दिन में लाभ मालूम होने लगेगा।

नोट- दवा ७ दिन तक पिलाना चाहिये प्रातः---मध्याह्न---सायं---३ समय

रङ्ग बिरंग दस्तों पर

वंशलोचन, पोदीना, जीरासफेद, छोटी इलायची, रूमीमस्तगी, २-२ तोला कूट छान मधु से चटाओ।

बालकों की हिचकी पर

कलौंजी १ मा० महीन चूर्ण कर मधु से दो।

गलरोग गलशुण्डि शोथशूल

१	आयोडीन	ग्रेन ५
२	पोटाश आयोडाईड्	,, १५
३	जल	२ ड्राम
४	पीपरमेंट	,, १०
५	आयल मेंथीपिप.	५ बिंदु
६	ग्लिसरीन	१ औंस

पूर्व क्रमशः दवाओं को नं० २ तक मेजर गिलास में डाल नं० ३ पानी डालो, घुल जाने पर शेष दवायें मिलाकर रखलो गले की तकलीफ में फुरैरी से लेप करो।

बालरोग एवं उनकी
सरल सुलभ-साध्य चिकित्सा

(ले०—आयुर्वेद सूरि कृष्णप्रसाद त्रिवेदी बी० ए० आयुर्वेदाचार्य चाँदा सी० पी०)



लक ही हमारे राष्ट्र के आधार हैं। किंतु खेद है कि आज इस आधारस्तम्भ में घुन लग गया है। यदि अभी भी इस स्तम्भ की मरम्मत न की जावेगी तो अचिरकाल में ही यह स्तंभ ढह पड़ेगा और हमारी चिराभिलषित राष्ट्रोद्धार की आशा-किरण तिरोहित हो जावेगी। अभी भी समय है कि हम जागृत होकर अपने आधार स्तंभ को शीघ्र ही सुधारें तथा घुन को निकाल बाहर करें।

हमारे पूर्वज, बालक रूपी राष्ट्र सम्पत्ति की रक्षा बड़ी ही सावधानी एवं दक्षता पूर्वक किया करते थे। और प्रत्येक गृहस्थ जानता था कि बालकों की रक्षा रोगरूपी शत्रु से कैसे की जावे। किंतु आज ऐसा विपरीत समय आगया है कि हमारे घर का बालक यदि किसी कारणवश जरा मुर्झा जाता है तो हम घबड़ा कर किंकर्त्तव्य विमूढ़ होकर जो जैसा कहता है वैसा ही अण्ट-सण्ट उपचार शीघ्रता से करके अपनी मूर्खता से उसे काल के हवाले करदेते हैं, और फिर रोते बैठते हैं। अस्तु, अब विशेष प्रस्तावना न करते हुये, हम यहां पर अधिकांश में बालकों को सतानेवाले एवं हमारे हरे भरे बालोद्यान को नष्ट करनेवाले तीन रोग राक्षसों, (त्रिशिरासुर) के नाशार्थ सरलास्त्रों की योजना किये देते हैं, जिन के प्रयोग से अवश्य ही सफलता प्राप्त होकर हमारे मनोरथों की सिद्धि होगी—

अन्तर्गत विकार

बालक को आन्तरिक विकार कौनसा है, यह जानना बड़ा कठिन काम है। तथापि उसके रोने से एवं अङ्गचेष्टा से कुशल वैद्य बहुत कुछ पता-लगालेता है। बालक रोते रोते शरीर के जिस स्थान पर अपना हाथ बार २ लगाता हो तथा दूसरे को उस स्थान पर हाथ नहीं लगाने देता हो या उस स्थान पर हाथ लगाने पर वह अधिक जोर से चिल्लाता हो तो समझना चाहिये कि उस स्थान के अन्दर आभ्यन्तरिक पीड़ा युक्तदाह (In flamation) अवश्य हो रही है। यदि बालक रोते-रोते अपनी आंखों को बार-बार मीचता हो तो जानना चाहिये कि उसके सिर में दर्द हो रहा है। यदि मल का अवरोध हो, वमन (कै) होती हो, दूध पीते २ स्तन को जोर से दबाता हो या काट खाता हो। पेट में गुरगुराहट हो, फुलावट हो, पीठ को झुकाता हो या पेट को जमीन पर से ऊपर को उठाता हो इत्यादि लक्षणों पर से जानना होगा कि बालक के कोष्ठ में शूल, वेदना या दाह हो रहा है। मूत्र में रुकावट हो, वह रह २ कर चौंकता

हो, दचकता हो और चारों ओर आंखें-फाड़ २ कर देखता हो तो समझना चाहिये कि उसकी वस्ति (नाभी के निम्न प्रदेश) में या गुह्य स्थान में पीड़ा हो रही है! बालक यदि अपनी जीभ को या होठों को दांतों से काटता हो तो समझना होगा कि उसके हृदय में पीड़ा हो रही है। दांतों को यदि पीसता हो तो समझना चाहिये कि उदरशूल होगा। यदि निद्रावस्था में वह दांत चाबता हो या जागृतावस्था में अपनी नाक को मसलता हो तो समझना होगा कि उसके पेट में कृमि विकार है। बार बार वमन होती हो, प्रलाप करता हो विशेषकर गिराता हो तो अजीर्ण विकार जानना चाहिये। यदि पेट की बांये ओर की या दाहिने ओर की अथवा दोनों ओर की पसलियां धोंकनी जैसी उछलती हों, श्वासोच्छ्वास में उसे कष्ट होता हो, कलेजे में धड़कन हो, पेट थंमा सा मालूम देता हो या ऊपर को फूला हुआ हो, और प्रायः कब्जी हो, दस्त न होते हों और ज्वर वेग तीव्र हो तो समझना चाहिये कि डिब्बा या पसली रोग है। ग्रहपीड़ा आदि अन्य अन्य रोगों के लक्षण शास्त्रों में विस्तार पूर्वक लिखे हैं। यहां विस्तार भय से नहीं लिखते।

अब बालकों के विशेष कष्टदायक ३ रोग और उनकी सरल चिकित्सा लिखते हैं।

(१) डब्बा या पसली चलना

यह रोग बच्चों का काल ही है। प्रायः ६ मास के उपरांत बालकों को यह विशेष देखा जाता है। यह रोग प्रायः सब का परिचित है।

उपचारः—

कड़ु इन्द्रायण के फल के बीजों को भून कर चूर्ण बना रक्खें, १ रत्ती की मात्रा में इसमें किंचित् हींग मिला, दूध या जल में घोट-कर पिला देने से तत्काल रोग शांति होती है। अथवा (२) काली तुलसी के पत्तों का रस दो से चार मासे तक, शहद ४ माशे एकत्र मिश्रण कर उसमें वीरबहूटी (इन्द्रवधूटी कीटक) दो नग और २ लौंग महीन पीस कर, दिन रात में ८ बार चटावे, दूसरे दिन पुनः इसी प्रकार तैयार कर चटावे, तीसरे दिन बालक रोग की चुंगुल से छूट जाता है। अथवा (३) करेले के पत्तों का रस मात्रा २ से ६ माशे तक दिन में ४ बार पिलाने से भी शीघ्र लाभ होता है।

ध्यान रहे उक्त प्रयोगों की मात्रा ६ माह के बालक से लेकर १॥ वर्ष तक के बालकों के लिये है, ज्यादा उमर के बालक को यथाबल और शक्ति देखकर मात्रा की योजना न्यूनाधिक की जा सकती है, और ये सब प्रयोग प्रायः रेचक हैं, कारण इस रोग में बगैर रेचन के शीघ्र लाभ प्राप्ति नहीं होती। उक्त प्रयोगों के सिवा निम्न-लिखित प्रयोग भी इस रोग में रामबाण सिद्ध हुवे हैं:—(४) सुहागा भुना हुआ १ रत्ती और लौंग भी भुनी हुई दो नग, तुलसी के रस में पीस कर मिला देने से पेट उठना, हंपनी, खांसी, ज्वरादि सब उपद्रव शीघ्र ही दूर हो जाते हैं। अथवा—(५) कंटेरी के फूलों का सूखा हुआ जीरा १ तो०, सज्जीखार १ तो०, करंज की

मींग १ तो०, एलुआ ६ माशे इनको महीन पीस कर बबूल छाल के रसमें घोट कर मूंग जैसी गोलियां बना रखना। मात्रा दो गोली से ४ गोली तक, मां के दूध में या गर्मजल में घोल कर पिलाना, तुरन्त लाभ होता है।

नोट:—बालक की अजीर्णावस्था में अज्ञानवश उसे बार २ दूध पिलाया जाता है, जिससे उसका कफदोष विकृत होकर उसे तीव्र ज्वर, मलावरोध, मूत्र की कमी या मूत्राघात, कास, श्वास इत्यादि विकार होकर उसका पेट जोर जोर से हिलता है, ऊपर को उठता है। यही विकार आगे बढ़कर कफविशिष्ट सन्निपात (निमोनियां) में परिणत होकर मृत्यु का कारण हो जाता है। ऐसी अवस्था विशेष में हमारे निम्न प्रयोग शतशः लाभकारी सिद्ध हुए हैं—

(१) पांडरफेटा बूटी (इसे लूबहा बूटी भी कहते हैं, यह शरद ऋतु में प्रायः सर्वत्र होती है) पंचाङ्ग सहित महीन चूर्ण करें, उसमें से दो से ३ मासा चूर्ण लेकर उसमें पीपल (अश्वत्थ) के ४ या ६ फलों का महीन चूर्ण मिला, माता के दूध के साथ ३ या ४ बार पिलाने से शीघ्र ही लाभ होता है। (एक दम मुंह से घर घर श्वास लेना, आंखें फाड़ देना या आंखों का टिमटिमाना बन्द होना ये असाध्य लक्षण हैं) पश्चात—गिलोय, नीम की छाल, मुलैठी, वायविडंग, सनाय, सौंफ और काकड़ासिंगी इन ७ द्रव्यों को प्रत्येक १—१ माशा लेकर जौकूट कर, २० तोले जल में पकावे, २॥ तोला जल शेष रहने पर, उसमें ६ माशे मिश्री मिलाकर आधा सवेरे और आधा शाम को पिलावे। १४ दिन तक इस क्वाथ का सेवनकरा देने से बालक पूर्ववत् हृष्टपुष्ट होकर फिर सहसा किसी भी रोग का आक्रमण उस पर नहीं होने पाता।

यदि उक्त कफ विशिष्ट सन्निपात (निमोनियां) होकर, फुफ्फुसों में सदाह शोफ होगया हो तो बालक की छाती को अलसी की पुल्टिश से सेंकते रहना चाहिए, तथा इस रोग में वैसी भी प्रारम्भ से ही छाती और पेट पर सेंकना और पुल्टिसें बांधना हितकारक है। निमोनिया की अवस्था में तीव्र रेचक औषधि कदापि नहीं देनी चाहिये। उक्त गिलोय आदि क्वाथ में त्रिभुवनकीर्ति रस की मात्रा चौथाई रत्ती से आधी रत्ती तक देना विशेष लाभप्रद है।



बालापस्मार:—

(कमेड़, आक्षेपक व्याधि विशेष) इसमें बालक का पेट फूलने लगता है, कंठ में घुर घुर शब्द होने लगता है और आक्षेपक (Convulsions) अर्थात शरीर के अङ्गों में खींचातानी होने लगती है, विकृत हो जाते हैं, आंखों की पुतलियां ऊपर को चढ़ी हुई दिखाई देती हैं, सर्वाङ्ग में कंप होता है। इस तरह बार २ रह २ कर बालक की दशा होती है। इसके बार २ दौरे हुआ करते हैं। जब रोग का दौरा होता है, तब बालक एकदम कांप कर, हाथों की मुट्ठियां भींच कर, हाथ पैर कड़े कर, कभी २ धनुषाकार तनता है, चेहरे का रंग एकदम बदल जाता है। बेहोश हो जाता है, दांत किटकिटाते हैं, वह कभी २ बड़े कष्ट से कराहता है। किसी २ के मुख से फेन निकलता है, किसी के नहीं भी निकलता

हैं। नाड़ी की गति एक दम मन्द सूक्ष्म होती है। ऐसी दशा में वह कभी २ मल मूत्र भी कर देता है, श्वास बड़े कष्ट से लेता है। कुछ मिनिटों बाद रोग का दौरा कम हो जाने पर उसे कुछ स्वस्थता सी प्राप्त होती है। यह व्याधि बड़ी जान-मारू है। इसमें बालक की शक्ति एकदम क्षीण होती चली जाती है। यदि योग्य औषधोपचार न किया जावे तो बालक शीघ्र काल कवलित होजाता है। इसी व्याधि को 'स्कन्दापस्मार' या स्कन्दग्रह' भी कहते हैं।

उपचार:—

यह रोग प्रायःबालक की माता या उसके पालकों की असावधानी से होता है। जिस बालक के खान पान में ठीक निगरानी नहीं रक्खी जाती उसे ही प्राय: यह मारक रोग कष्ट देता है। अतएव प्रथम रोगोत्पादक कारणों को दूर करना ही इसका क्या किसी भी व्याधि का मुख्य उपचार है। तदनन्तर रोगी बालक की मल शुद्धि करानी चाहिये।

यदि दूध पीने वाला बालक हो तो शीघ्र ही उसकी माता को, या जिसका वह दूध पीता हो दुग्धशुद्धि कर औषधियां सेवन कराना प्रथमावश्यक कार्य है। साथ ही साथ उस बालक को थोड़े से शुद्ध रंडी के तैल में शुद्ध (असली) शहद मिला ३ बार चाटना चाहिये, और थोड़ा सा रीठा का फेन गुदामार्ग में प्रवेश कराने से उसका दस्त खुल जाता है। यदि इससे भी मल शुद्धि ठीक २ न हो तो—

हरड़, बहेड़ा, अतिविषा, काकड़ासिंगी, वायविडङ्ग, कुड़ाछाल, और भारंगीमूल इनको अलग अलग सिल पर थोड़ा-थोड़ा घिस कर (जल या दूध के साथ घिस कर) पिला देवे, और पेट पर गरम पोटली से सेंकना चाहिये।

यदि ज्वर आदि कोई अन्य उपद्रव न हों, और एकदम रोग का दौरा हो जाय तो शीतल जल के छींटे मुख पर मारे, और होश में आने पर (या न आने पर भी) उसे प्याज काट कर सुंघावे। श्वेत या लाल कोई भी प्याज लेकर काटकर या पत्थर से कूट कर, बालक की नाक के पास ले जावे और दूर करले, इसी प्रकार बार-बार करें, और बीच २ में गुलाबजल या शीतल जल के छींटे मुख पर मारते रहें।

रोग का दौरा निकल जाने पर जब बालक होश में आवे तब उसे कुछ खिला पिला कर शांति के साथ सोने देवें या सुला देवें। फिरसे रोग का दौरा न होने पावे इसलिए यदि बालक छः मास के अन्दर का हो तो एक महीन कपड़े की आठ तहें कर, उसे रेंडी के तेल में भिगोकर (तेल टपकने न पावे इसलिए उसे थोड़ा निचोड़ कर) बालक के तालू पर बांध देवें, जबतक यह रेंडी के तेल से तर किया हुआ कपड़ा उसके तालु पर रहेगा रोग का दौरा न होने पाएगा। साथ ही साथ वच का महीन चूर्ण घी में मिला कर बालक के समस्त शरीर पर धीरे-धीरे मर्दन करना चाहिये।

उक्त क्रिया के साथ ही में बालक की माता को चाहिये कि थोड़ी सी अजवायन अपने मुख में चबाकर उसकी लार दूध में मिला कर बालक को पिलावे, ऐसा करने से बालक का पेट साफ होकर रोग का दौरा बन्द होजावेगा।

और गूगल, अगरु, राल और सरसों सम-भाग लेकर कुछ कूट कर इसका धूप करे, इससे हवा स्वच्छ होकर बालग्रह की शांति होती है! अथवा केवल बच की ही धूप देने से ही लाभ होता है।

ब्राह्मी का रस निकाल कर उसमें उत्तम शहद मिला बालक को थोड़ा २ दिन रात में कई बार चटाते रहना चाहिये।

यदि बालक की उमर छः मास के ऊपर हो तो इस अवस्था में प्रायः अपचन के कारण पेट में क्रिमि हो जाते हैं, और इस रोग का सम्बन्ध इन क्रिमियों से भी होजाता है। अतएव निम्न लिखित क्वाथ सेवन कराना लाभदायक है।

वायविडंग, अजवायन, नीमकी छाल प्रत्येक ४, २ तोला लेकर जवकुट कर, १ पाव जल मिला क्वाथ करें, और अष्टमांश काढ़ा तैयार कर छानकर उसमें डीकामाली (मिश्री) १ माशा मिला बालक को थोड़ा २ पिलावें। इसके सेवन कराने से कोठा क्रिमियों से साफ होकर, उसे फिर यह रोग कष्ट नहीं पहुंचा सकता।

साथ ही में बच का महीन चूर्ण १ या २ रत्ती शहद के साथ प्रातः सायं चटाना लाभ-प्रद है।

एक वर्ष के ऊपर के बालक को उपर्युक्त उपचार यथायोग्य प्रमाण से किया जाना चाहिए। इतना सब करने पर भी विशेष दोष-दृष्टि के कारण यदि रोग का जोर न घटे तो निम्नोक्त रीति से शंखभस्म का सेवन कराना आशु लाभप्रद है।

एक छोटा शंख लेकर उसे जस्ता (यशद) की डिब्बी में बन्द कर उस डिब्बी को चूल्हे की या भट्टी की धधकती हुई आग में रख देवे। जब डिब्बी खूब लाल होजाय, तब उसे बाहर निकाल स्वांग शीतल हो जाने पर अन्दर का शङ्ख निकाल महीन चूर्ण कर रक्खें। इसे १ या दो रत्ती की मात्रा में दुग्ध के साथ प्रातः सायं पिलाने से तत्काल लाभ होता है।

इस पर लांछन क्रिया (दागना) उत्तम लाभदायक है। हल्दी का एक लंबासा टुकड़ा लेकर उसका एक छोर आग पर रख जलावे, और मस्तक पर भौं के पास नस के ऊपर कुशलता पूर्वक दाग देवे। और ऊपर गो-घृत लगा देवे।

इत्यादि कई उपाचर हैं, किंतु हमने यहां मुख्य २ अपने स्वानुभूत प्रयोगों को लोकोपकारार्थ प्रकट कर दिया है। रोग के दौरे की बेहोशी की हालत में उसे होश में लाने के लिए।

१ सिरस के बीज और करंज के बीज सम-भाग, थोड़े से जल में घिस कर आंखों में अंजन कर देने से इस रोग का दौरा तुरंत दूर होकर बालक होश में आजाता है, अथवा—(२) रसौत मैनसिल और कबूतर की बीट इन तीनों को सम-भाग लेकर जल में घिस कर अन्जन करदेने से भी होश आजाता है। अथवा (३) आंब की जड़ को बकरी के दूध में घिस कर उसकी दो या चार बून्दें नथनों के अन्दर छोड़ देने से भी लाभ होता है।

इस रोग के प्रतीकारार्थ 'बालापस्मार हर गौघृत' निम्न प्रकार तैयार कर हमेशा सेवन कराते रहना उत्तम लाभदायक है—

गाय का दूध, गाय का दही और गाय के ही

गोबर का रस तीनों समभाग एक कर, उसमें चौगुना गाय का घृत (ताजा) मिला, मंदाग्नि पर पकावें, जब घृत मात्र शेष रहे, तब उसे छानकर शीशी में भर रक्खें। इस घृत को रोज दो या तीन बार प्रत्येक बार दो से तीन माशे तक दूध में मिला पिलावें।

यह रोग पुनः न होने पावे एतदर्थ निम्न बातों पर पूर्ण ध्यान देना आवश्यक है—

(१) जब तक बालक माता का दुग्ध पीता हो, तब तक माता को पूर्ण ब्रह्मचर्य का पालन करना चाहिए। इतना भी यदि न हो सके, तो प्रसूति के पश्चात पुनः ऋतु प्राप्त होने तक कदापि पुरुष संग नहीं करना चाहिये।

(२) बालक को अधिक रुदन नहीं करने देना चाहिये, उसके रुदन का कारण शोधकर तुरन्त ही उसका उपचार करना चाहिये। उसका पेट साफ है या नहीं इस बात की ओर अवश्य ही ध्यान देना चाहिए।

(३) बालक को विशुद्ध दूध पिलाना चाहिये तथा दूध की मात्रा परिमित होनी चाहिये।

(४) विशेष ध्यान में रखना चाहिये—कि रोग निवारणार्थ उपचार अनुभव युक्त तज्ञ वैद्य के ही द्वारा कराना चाहिए। **अपढ़, अनुभव हीन, कुशिक्षित, आचारहीन मनुष्य या स्त्री के द्वारा बालकों का इलाज कराना मानों उसे जान बूझकर काल के गाल में झोंक देना है।**

और भी **विशेष मार्के की बात, खतरे का घंटा**—इस रोग पर आधुनिक विज्ञापन बाजों की ऐसी कई औषधियां अपनी शान बतला रही हैं, जिनमें ब्रोमाइड या तत् सदृश ही मस्तिष्क शक्ति को निर्बल, सत्व हीन बनाने वाले एवं अनावश्यक सुस्ती या निद्रा लाने वाले द्रव्यों का मिश्रण हुवा करता है। इन औषधियों के सेवन कराने से रोग की जड़ दूर नहीं होती तथा आगे चलकर दुष्परिणाम यह होता है कि बालक निर्बुद्धि या पागल भी हो जाया करता है। अत-एव बहुत ही समझ बूझकर औषधोपचार करना या कराना चाहिए।

३ पारिगर्भिक विकार एवं बालशोष

गर्भवती माता का दूध पीने से बालक कृश हो जाता है, उसे बहुत क्षुधा लगती, हमेशा खाव खाव किया करता है। पेट सामने बढ़कर हाथ पैर सूखने लगते हैं। ध्यान रहे पेट में ४ मास का गर्भ होजाने पर माता को अपना दूध कदापि नहीं पिलाना चाहिये, अन्यथा उसे सूखा रोग बालक क्षय हो जाने की संभावना है।

माता के विकृत दूधके कारण, अथवा अपचन के कारण, अथवा माता पिता का उपदंश जन्य विकार बालकके शरीर में प्रविष्ट होजाने से, या जीर्ण ज्वर के कारण बालक्षय 'सूखा रोग' बालकों को होजाता है। उसकी त्वचा झुलसी हुई सी, झुर्रियां पड़ी हुई सी होकर वह कृश होता चला जाता है उसका चेहरा मात्र उग्र दिखाई देता है। वह सुस्त पड़ा रहता है। उसके कानों के लम्बकों की कर्णपाली को जोर से दबाने पर भी उसे किञ्चन्मात्रभी वेदना नहीं मालूम देती।

बालोपयोगी कृत्रिम भोजन, शिशुशयन, दन्तोद्गम इत्यादि

(लेखक—वैद्यरत्न पं० ओङ्कारप्रसाद शर्मा भिषक्शास्त्री आ० विशारद
प्रधान चिकित्सक—श्री मारवाड़ी औषधालय, देहली।)



बालक मनुष्य रूपी वृक्ष का मूल है जब मूल में ही दीमक (कीड़े) लग जाते हैं तब वृक्ष के फलने फूलने की आशा करना ही व्यर्थ है।

भारतवर्ष के अन्दर आज बालतन्त्र का पूर्ण ज्ञान न होने एवं माता पिताओं की असावधानी के कारण प्रतिवर्ष असंख्य बालक कुटिल काल के कवल (ग्रास) बन जाते हैं। जो यथाकथंचित दैवयोग से बच जाते हैं—वे बेचारे युवावस्था को प्राप्त होते ही अपने स्वास्थ्य बनने की चिन्ता में लगे हुए देखने में आते हैं।

खेद है आज वीरप्रसवा भारतभूमि दुर्बल-देहधारियों (रोगियों) का खज़ाना बनी हुई है। देश की उन्नति और अवनति बालकों पर ही निर्भर हुआ करती है, बालक ही आगे चलकर देश के कर्णधार (नेता) होते हैं, बालक देश की मौलिक सम्पत्ति होते हैं, बालक माता पिता को परमानन्द के देने वाले होते हैं। जिन घरों में स्वस्थ बालकों का इतस्ततः घूमना होता है उन

कुछ दिनों के बाद कफ के विकार कास आदि होकर ज्वर आने लगता है। तथा फिर क्षय के संपूर्ण लक्षण प्रकट होकर शीघ्र ही मृत्यु आजाती है।

उपचार—

प्रथमारंभ में अग्निदीपक औषधियां देनी चाहिये। द्राक्षासव, कर्जासव आदि अथवा संजीवनी गुटिका गोदुग्ध के साथ या शहद के साथ सेवन करना हितप्रद है। साथ ही साथ निम्न लिखित प्रयोग विशेष लाभदायक सिद्ध हुवे हैं।

(१) जहरमोहरा खताई को ग्वारपाठे के रस में घोटकर, शराव सम्पुट में रख गजपुट में भस्म करलेवे। मात्रा १ रत्ती, घी के साथ देवे, तथा इसी भस्म को घी में मिला शरीर पर मालिश करें, अथवा इस भस्म को लाक्षादि तैल में मिला बालकके सर्वाङ्ग पर मालिश करना उत्तम लाभकारी है। अथवा (२) अपामार्ग की पत्ती १ तोला में लौंग। अतीस, वंसलोचन प्रत्येक ४-४ रत्ती मिला, तथा खूब खरल कर मटर जैसी गोलियां बना रक्खें। प्रातः सायं एक दो गोली माता के दूध या शहद में मिला चटाना चाहिये।

घरों की शोभा स्वर्ग से किसी प्रकार कम नहीं कही जा सकती। अधिक क्या मानवीसृष्टि में जो कुछ हैं वे बालक ही हैं। जिस प्रकार मकान की मजबूती के लिये आरम्भिक भित्ति का पुष्ट होना आवश्यक है उसी प्रकार मानव शरीर की मजबूती के लिये बालक रूपी आरम्भिक भित्ति का पुष्ट होना अत्यन्त आवश्यक है।

बालोपयोगी कृत्रिम भोजन

यहां बालोपयोगी कृत्रिम भोजन से दुग्ध छुड़ाने के समय दिये जाने वाले अन्न से तात्पर्य है। बालक को यह कृत्रिम भोजन "अथैनं जातदशनं क्रमेणापनयेत्स्तनात्" इस आयुर्वेदोपदेश के अनुसार दांतों के निकल जाने पर देना चाहिये। बालक की जाठराग्नि दांत निकलने पर ही अन्न को पचाने में समर्थ होती है। प्रायः बालकों के कई दांत नौवें दशवें महीने में निकल जाते हैं, तभी से शनैः २ अन्न देना आरम्भ करना चाहिये। सहसा सात्म्य वस्तु का छुड़ाना और असात्म्य वस्तु का सेवन करना हानिकारक होता है। ऐसा करने से बच्चे कमजोर एवं रोगी होजाते हैं। इसलिये दूध के साथ २ हलका और स्वादिष्ट भोजन खाने को देना चाहिये जो आसानी से पच सके। साधारणतया यथाप्रकृति नीचे लिखी वस्तुएं देनी चाहियें:—

चावल, मूंग की दाल, खील का हलुवा, मीठा—फीका और नमकीन गेहूं का दलिया (तवे पर घृत में भूनकर बनाया हुआ) बाजरे और जवार की रोटियां, पत्तों (चौलाई वगैरा) का शाक, अंगूर सन्तरा आदि फल और उनका रस, बादाम किशमिश आदि दिमागी शक्ति और खून को बढ़ाने वाले मेवे। इसके अलावा कभी-कभी सत्तू और मिश्री मिला कर बनाये हुए लड्डू भी देने चाहियें। दुग्ध छुड़ाने के समय बालकों के लिए वाग्भट ने तीन प्रकार के मोदक लिखे हैं—

"प्रियालमज्जमधुकमधुलाजसितोपलैः। अपस्तन्यस्य संयोज्यः प्रीणनो मोदकः शिशोः। दीपनो बालबिल्वैलाशर्करालाज सक्तुभिः। संग्राही धातकीपुष्प शर्करालाजतर्पणैः॥" इनके सेवन करने से बालक प्रसन्न चित्त रहते हैं, और दूध छोड़ने पर भी उनके शरीर में कमजोरी नहीं होती है।

यदि बालक को अतिसार, वमन, बदहजमी, आदि बीमारी होजाय तो तत्तद्रोगहर औषधों का भोजन के साथ संमिश्रण कर देना चाहिए, जिस से बालक को अलग औषध लेने में तकलीफ न उठानी पड़े। यद्यपि आजकल बाजार में बालकों के खाने की बहुत सी वस्तुयें मिलती हैं, जैसे बिस्कुट, डबलरोटी, मेलिन्स साहब का बनाया हुआ बच्चों का खाना आदि, किन्तु ये वस्तुयें हमारे देश के बालकों के लिए इतनी उपयोगी नहीं जितनी हमारे देश में उत्पन्न हुई एवं रोजाना ताजा बनाई हुई वस्तुयें होती हैं।

शिशु पालन विधि

शिशु के गर्भस्थ होते ही उसका पालन करने की आवश्यकता होती है। गर्भस्थ शिशु का हिताहित माता के आधीन होता है, इसलिए माता को चाहिये कि गर्भस्थ बालक के हित को ध्यान में रखकर आहार विहार का आचरण करे।

इसी तरह माता के हित आहार विहार न करने से गर्भ में जो-जो दोष उत्पन्न होजाया

करते हैं उनका सविस्तार वर्णन चरक संहिता के शारीर स्थान की जातिसूत्रीय अध्याय में मिलता है।

१. गर्भिणी को अच्छी तरह भूख लगने पर नियत समय में नियमितरूप से हृद्य, द्रव्य, मधुर, स्निग्ध और अग्नि को दीपन करने वाला भोजन करना चाहिये।

२. भोज्यपदार्थों को अच्छी तरह चबाकर खाना चाहिए, जिससे रस अच्छा बनता है और गर्भ को ताक़त मिलती है।

३. भोजन करते ही किसी कार्य में न लगना चाहिये, किन्तु भोजन करने के अनंतर थोड़ी देर इधर उधर घूमना और विश्राम करना चाहिये।

४. कभी २ गर्भिणी को प्रातःकाल ही भूख लग जाया करती है, ऐसी हालत में थोड़ा हलका भोजन करना हितकर होता है। भूख को दबाना उचित नहीं।

५. गर्भिणी को उपवास न करना चाहिये, उपवास करने से गर्भ में दुर्बलता होती है।

६. प्रातःकाल उठते ही शिथिलता का अनुभव होने लगे तो थोड़ा धारोष्ण या गर्म दूध पीलेना चाहिए।

७. वस्त्र साफ और ढीले पहिनना चाहिए, वस्त्रों को कस कर पहिनने से बालक के अङ्ग प्रत्यङ्ग जितने सुडौल होने चाहिएं उतने सुन्दर नहीं होने पाते।

८. जबतक बच्चा पैदा न हो तबतक आदर्श स्त्री पुरुषों के जीवन चरित्र सुनने चाहिएं। खास-कर पहले दूसरे और तीसरे महीने में मधुर शीतल और द्रव भोजन सेवन करना चाहिए। चौथे महीने में दूध और मक्खन मिला हुआ भोजन खाना चाहिए। इस समय गर्भस्थ शिशु के अङ्ग प्रत्यङ्ग व्यक्त होते हैं, इसलिये स्त्री की द्विहृदया संज्ञा हो जाती है अतः इस महीने से स्त्री जिन २ वस्तुओं में अभिलाषा करे वे सब देना चाहिए। अभिलषित वस्तुओं के न मिलने से गर्भस्थ बालक के अङ्ग विकृत हो जाते हैं— "दौहृदविमाननात् कुब्जं कुणिं खंजं जडं वामनं विकृताक्षमनक्षं वा नारी सुतं जनयति।" पांचवें मास में दुग्ध घृत से मिला हुआ हलका भोजन खाना चाहिए। छटे महीने में दुग्ध घृत के साथ पौष्टिक पदार्थोंका सेवन करना चाहिए। इस समय सेवन की हुई बादाम मिश्री आदि वस्तुएं बालक की मस्तिष्क शक्ति को मजबूत बना देती हैं। सातवें और आठवें महीने में पांचवें तथा छठेमास की तरह उपचार करना चाहिए। विशेष कर इस समय चिकनी यवागू प्रभृति का सेवन करना उत्तम होता है। प्रसवपर्यन्त इसी प्रकार उपचार आवश्यक है। नौवें महीने में स्वच्छभूमि में यथा-विधि बने हुए सूतिकागृह में प्रवेश करना चाहिए। प्रसव के समय वृद्ध चतुर स्त्रियों का पास में होना अत्यन्त आवश्यक है, जिससे प्रसव के समय होने वाले आकस्मिक कष्टों से जच्चा और बच्चा दोनों को किसी प्रकार की हानि न पहुंचे।

उत्पन्न होते ही शिशु को अपरा से अलग करना चाहिये, कभी-कभी बालक थैली के अन्दर बन्द हुआ पैदा होता है यदि ऐसा हो तो चतुर दाई को सावधानी के साथ थैली को फाड़ डालना चाहिए। शिशु के मुख को सैंधा नमक मिले हुए घृत से साफ कर देना चाहिए। तदनन्तर अष्टांगुल

परिमाण नाप कर नाल को काट देना चाहिये, नाल काटते समय बहुत होशियारी रखनी चाहिए क्योंकि नाल के अधिक खिंचाव से नाभि का फूलना, पीड़ा होना, पकना ये विकार होजाया करते हैं। बालक के शिर (तालुस्थान) पर घृत में भीगा हुआ फोया रखना चाहिए, और हरिद्रा आदि मांगलिक वस्तुओं से मिला हुआ उद्वर्तन या चन्दनादि, लाक्षादि किसी तेल की मालिश कर फलालेन से पोंछ कर गुनगुने जल से स्नान कराना चाहिये। बालक कभी कभी भूमिष्ठ होते ही प्रसूति पीड़ा से पीड़ित होने के कारण मूर्छित होजाता है, वैसी अवस्था में शिशु के मुख पर शीतल अथवा गर्म जल के छींटे लगाना, हवा करना आदि उपचार करना चाहिए।

यदि उत्पन्न हुए बालक के अङ्ग प्रत्यंग जुड़े हुए हों या उनमें और किसी प्रकार की विकृति हो तो सुयोग्य चिकित्सक के द्वारा शीघ्र उपचार करवाना चाहिए।

सुश्रुत में लिखा है--"धमनीनां हृदिस्थानां विवृतत्वादनन्तरम् । चतुरात्रात्त्रिरात्राद्वा स्त्रीणां स्तन्यं प्रवर्तते। तस्मात्प्रथमेऽह्नि मधुसर्पिरनन्तामिश्रं मन्त्रपूतं त्रिकालं पाययेत्, द्वितीये लक्ष्मणासिद्धं सर्पिः, तृतीयेच।" संभवतः प्राचीन समय में तीसरे या चौथे दिन दुग्ध प्रवृत होता हो, किंतु वर्तमान समय में प्रथम दिन ही स्तनों में दूध आने लग जाता है, अतः सर्व प्रथम जो दुग्ध स्तनों में आवे उसे निकाल देना चाहिए फिर स्तनों को स्वच्छ जल से धोकर बालक को दूध पिलाना चाहिए। अन्यथा शिशु को कास श्वास वमन होने का भय रहता है।

बालक को लेटकर कभी दूध नहीं पिलाना चाहिये क्योंकि लेटकर दूध पिलाने से शिशु के कर्णस्राव होने का भय रहता है, इसलिये बालक को गोद में लेकर एक हाथ उसके शिर के नीचे उपधान की तरह लगाकर बैठे २ दूध पिलाना अच्छा रहता है। दूध पिलाते वक्त पहले दाहिना और फिर बायां स्तन बच्चे को देना चाहिए। बहुत सी माताएं कभी जल्दी और कभी विलम्ब से बच्चों को दूध पिलाया करती हैं, जल्दी पिलाया हुआ दूध ठीक नहीं पचता और विलम्ब से पिलाया हुआ भूख और पाचनशक्ति को नष्ट कर देता है। इसलिये दूध पिलाने के लिये समय का नियत होना परमावश्यक है--

पहिले महीने में १—१ घंटे के फासले से, दूसरे महीने में २-२ घंटे के अन्तर से, तीसरे मास से छठे मास तक तीन २ घंटे के विलम्ब से, सातवें महीने से नौवें या दशवें महीने तक ४-४ घंटे से दूध पिलाना चाहिये। यद्यपि बालकों की देह वृद्धि के लिये माता का दूध ही अधिक उपयोगी होता है तथापि किसी कारणवश माता के दूध न उतरता हो अथवा माता के कोई रोग होगया हो तो धाय का या बकरी और गाय का दूध देना चाहिये।

यदि बच्चे को धाय का दूध पिलाया जाय तो उसके अन्दर नीचे लिखे लक्षणों का होना आवश्यक है—

धाय समान जाति और कुल की हो, स्वभाव से शांत और बच्चे से प्रेम रखने वाली हो, जीते बच्चे की मां हो, मध्य ऊमर की हो, नीरोग हो, शरीर से स्थूल या कृश न हो, हित आहार

कनीयसी ।।" युवावस्था वालों के लिए जिस औषधी की मात्रा ८ रत्ती हो तो १-मास से ३ मास तक के बच्चों के लिए उस औषधी की ¦ रत्ती की मात्रा पर्याप्त होती है। मात्रा के विषय में यह केवल दिग्दर्शन मात्र है, क्योंकि मात्रा का कोई निश्चित परिमाण नहीं होता। लिखा है--"मात्राया नास्त्यवस्थानं दोष मग्निबलं वयः। व्याधि द्रव्यंच कोष्ठंच वीक्ष्य मात्रां प्रयोजयेत ।।" इसलिये दोष वगैरह को देखकर बालकों के लिए औषधी की मात्रा का निश्चय वैद्य को स्वयं करना चाहिए। इस प्रकार आयुर्वेदीय पद्धति के अनुसार शिशुपालन होने से बालक हृष्ट पुष्ट बल और बुद्धि से युक्त होते हैं, तथा सदा नीरोग रहते हैं।

शिशुशयन

बालकों के सोने के लिये १०-१२ घण्टे का समय अवश्य होना चाहिये। प्रायः बच्चों का विश्राम सोने में ही सम्मिलित होता है। बालकों को नंगे शरीर कभी न सुलाना चाहिये। दूध पीने और भोजन करने के बाद तत्काल बच्चों को सुलाने से दुग्ध व भोजन का पाचन ठीक नहीं होता, इसलिए थोड़ी देर ठहरकर सुलाना चाहिए। बालक को औंधा या एकदम सीधा कभी न सुलाना चाहिए। बालक को सहसा जगाना न चाहिए - सहसा जगाने से बालक भयभीत हो जाता है। सुलाने के लिये बच्चों को कंधे या जंघा लगाकर हिलाना न चाहिए, ऐसा करने से सदा बच्चों को वैसे ही सोने की आदत पड़ जाती है। बहुतसी स्त्रियां बच्चों के रोने से तंग आकर अफीम देकर बच्चों को सुला देती हैं, बच्चों को नशे की वस्तु खिलाना बहुत खतरनाक होता है' ऐसा करने से बालक चिड़चिड़े स्वभाव के हो जाते हैं। और उनके मस्तिष्क तथा हृदय पर बहुत खराब प्रभाव पड़ता है। सोते हुए बालक को अकेला छोड़ कर कहीं न जाना चाहिए। अभी थोड़े दिनों की बात है कि एक मालिन अपनी एक वर्ष की छोटी बच्ची को आंगन में सोती हुई छोड़कर कहीं बाहर चली गई थी, पीछे से एक पागल कुत्ता घर में घुस गया जिसने उस अबोध बालिका को कई जगह जख्मी कर दिया। रात को सोते हुए बच्चों को तीन चार दफे अवश्य संभाल लेना चाहिए, क्योंकि सोते हुए बच्चों के ओढ़ने का वस्त्र अलग होजाने से ठंडक लगकर जुखाम खांसी आदि बीमारियां होजाया करती हैं।

बालकों के वस्त्र

बालकों के ओढ़ने, बिछाने और शरीर में पहिनने के कपड़े सदा वजन में हलके मृदु, साफ और सुगन्धयुक्त होने चाहिएं। बालकों के वस्त्रों के विषय में चरक संहिता में लिखा है---"शयनासनास्तरणप्रावरणानिकुमारस्यमृदुलघुशुचिसुगन्धीनिस्युः, स्वेदमलजन्तुमन्ति मूत्रपुरीषोपसृष्टानि च वर्ज्यानि स्युः, असति संभवे तेषां तान्येव च सुप्रक्षालितोपधानानि सुधूपितानि शुद्धशुष्काण्युपयोगं गच्छेयुः।" मैले मल मूत्र लगे हुए कपड़ों को उपयोग न लाना चाहिए, अगर नये कपड़े न मिलें तो रोजाना उन्हीं कपड़ों को अच्छी तरह साबुन से धोकर सुखा करके उपयोग में लाना चाहिए। बालकों के पहिनने के लिए शीतकालमें ऊनी गरम

कपड़े, और गर्मी के दिनों में इकहरे सफेद खद्दर के कपड़े अच्छे रहते हैं। बालकों को कभी चुस्त कपड़े न पहिनाने चाहियें, चुस्त कपड़ों के पहिनने से बालकों को श्वास लेने में कष्ट होता है, और उनके हृदय तथा फुफ्फुसों को बहुत हानि पहुंचती है। जिससे शरीर के अन्दर रक्त का परिभ्रमण ठीक नहीं होता है। इसी प्रकार अधिक ढीले कपड़े भी पहिनाना ठीक नहीं, क्योंकि ढीले कपड़ों में बालकों के हाथ पांव उलझ कर गिरने का भय रहता है। बालकों की खटिया पर बिछाने के लिए ऊनी कम्बल और ओढ़ने के लिए हलकी रजाई होनी चाहिए। अधिक वजनदार कपड़ों का उढ़ाना अच्छा नहीं क्योंकि वजनदार कपड़ों से बालक दब जाते हैं और उन्हें श्वास लेने तथा करवट बदलने में बहुत तकलीफ होती है। बालक के ओढ़ने बिछाने और पहिनने के कपड़ों को सदा धूपित करना चाहिए। जिससे कपड़ों में लगे हुए खराब कीटाणु नष्ट हो जाते हैं। धूप किन वस्तुओं से लगाना चाहिए इस विषय में चरक लिखता है—"धूपनानि पुनर्वाससां शयनासनास्तरणप्रावरणानाञ्च यवसर्षपातसीहिंगु गुग्गुलुवचाचोरकवयःस्थागोलोमीजटिलापलङ्कषाशोकरोहिणी सर्पनिर्मोकाणि घृतयुक्तानिस्युः॥"

आभूषण

आजकल कम उम्र के बालकों को सोने चांदी के आभूषण पहिनाकर उनके हाथ पांव कस दिए जाते हैं, जिससे पुष्ट होने वाले उनके अंग सदा के लिये दुबले पतले रह जाते हैं। कभी २ इन गहनों के लोभ से बदमाश लोग बालकों को उड़ा कर ले जाया करते हैं और गहने उतार कर उनको मार डालते हैं। इसलिए सुख सम्पत्ति विनाशक ऐसे आभूषण बालकोंको कभी न पहिनाने चाहियें। चरक लिखता है—

"मणयश्च धारणीयाः कुमारस्य खड्गरुरुगवयवृषभाणां जीवतामेव दक्षिणेभ्यो विषाणेभ्योऽग्राणि गृहीतानिस्युः, ऐन्द्रयाद्याश्चौषधयो जीवकर्षभकौ च, यानि चान्यान्यपि ब्राह्मणाः प्रशंसेयुरथर्ववेदविदः।" इससे स्पष्ट ज्ञात होता है कि प्राचीन समय में गहने बालकों को स्वास्थ्य वृद्धि के लिए पहिनाये जाते थे न कि आजकल की तरह केवल शारीरिक शोभा के लिए। जिन वस्तुओं का गहनों के लिए उल्लेख है वे सब गले में माला की तरह पहिनाई जाती थीं। इस प्रकार के आभूषणों से न तो बालकों को किसी प्रकार का कष्ट होता था और न अङ्गों के दुबले पतले होने का भय ही रहता था। यह ही नहीं मणियां सूर्यादिग्रहों की पीड़ा निवारण करने वाली होने के कारण बालकों को ग्रहपीड़ा नहीं होती थी (आजकल भी बहुत से मनुष्य सूर्यादिग्रहों का दोष निवारण करने के लिए अंगूठियों में मणियां जड़वा कर पहिना करते हैं) ऐन्द्री आदि दश औषधियां बल्यगण की और जीवक ऋषभक जीवनीयगण की होने के कारण इनसे भी बालकों के स्वास्थ्य पर अच्छा प्रभाव पड़ता था। इसी प्रकार खड्ग आदि पशुओं के शृंगाग्रों से भी लाभ ही होता था। क्योंकि बिना किसी खास मतलब के आचार्य यह कभी नहीं लिखता कि शृंगों के अग्रभाग जीवित पशुओं के और दाहिने शृंगों के ही होने चाहियें।

यदि वर्तमान समय में बहुमूल्य मणियों को छोड़कर इन्हीं आभूषणों का व्यवहार किया जाय तो बालकों का बहुत कुछ उपकार हो सकता है।

वास स्थान

बालकों का वासस्थान अत्यन्त रमणीक मजबूत साफ़ और हवादार होना चाहिये। जिसमें सूर्य का प्रकाश अच्छी तरह आसके, अन्धकार न रहे। जिसके भीतर पशु, कुत्ते, बिल्लियां, चूहे, सांप आदि घातक जानवर न घुसने पावें। वास स्थान में जहां बालक का अधिक आवागमन हो वहां दरी या और कोई मोटा वस्त्र बिछा हुआ रहना चाहिए, जिससे किसी कारणवश गिरने पर भी बालक को अधिक आघात न पहुंचे। वासस्थान में ऋतु के अनुकूल ओढ़ने बिछाने और पहिनने के कपड़े अवश्य रहने चाहियें। कुमारागार के अन्दर एक तरफ़ जलस्थान, स्नानघर, पेशाबघर, और टट्टीघर अवश्य बने हुये होने चाहियें। वासस्थान में बालरक्षा के निमित्त सरसों आदि मांगलिक वस्तुयें अवश्य रहनी चाहियें। और कुमारागार के अन्दर पवित्र मनुष्यों, वृद्ध वैद्यों और आत्मीयजनों के सिवाय किसी को न आने देना चाहिये। मकान को नित्यप्रति धूपित करना परम आवश्यक है। धूप की औषधियां पीछे "बालकों के वस्त्र" इस शीर्षक में लिखी गई हैं। इस प्रकार के यथाविधि बने हुये वासस्थान में बालकों का स्वास्थ्य अच्छा रहता है, और बल-वर्ण और बुद्धि की वृद्धि होती है।

बालकों के दांतों का निकलना

जब बालकों के दांत निकलने आरम्भ होते हैं, तब उनको नाना प्रकार की व्याधियां हुआ करती हैं। बालक क्षीणकाय होजाते हैं। बहुत से बालकों को तो इतना भयंकर कष्ट होता है कि उनके देह में केवल हड्डियां ही अवशिष्ट रहती हैं। इसलिए आयुर्वेद में लिखा है—

"पृष्टभंग विडालानां बर्हिणाञ्च शिखोद्गमे।
दन्तोद्भेदे च बालानां नहिकिंञ्चिन्न दूयते॥"

बालकों के दांत निकलने का समय एक जैसा नहीं होता है, किंतु अधिकतर बालकों के दांत पांचवें या छटे महीने में निकलने आरंभ होते हैं। दांत निकलने के समय मसूड़ों में जलन होना, मसूड़ों का फूलना और लालरंग हो जाना, मुख से लार टपकना, आंखों से पानी बहना, साधारण ज्वर का होना, हरे पीले और फटे हुए दस्तों का लगना, वमन होना, [illegible] आना, उदर में पीड़ा होना आदि लक्षण हैं. मसूड़ों में खाज होने लगती है जिससे बच्चे [illegible] पीते समय माता के स्तनों को मसूड़ों से दबाया करते हैं। और मिट्टी कंकर आदि जो वस्तु हाथ लग जाती है उसे मसूड़ों से पपोलने लगते हैं। इस समय माता पिता को बच्चे की देख रेख बहुत सावधानी से करनी चाहिये। कभी २ निर्बल होने के कारण बच्चों को अन्य सांघातिक व्याधियां हो जाती हैं, और माता पिता दांत निकलने की वजह से समझ कर उपेक्षा कर देते हैं, जिस से बच्चों का बचना कठिन हो जाता है। इस लिए दांत निकलने की वजह से होने वाली व्या-

धियों का योग्य वैद्य के द्वारा निर्णय और उपचार कराना चाहिए। यद्यपि लिखा है—

"दन्तोद्भेदोत्थरोगेषु न बालमति यन्त्रयेत्।
स्वयमप्युपशाम्यन्ति जातदन्तस्य ते गदाः ॥"

तथापि चिकित्सा कराने से कष्ट कम होता है, और दांत बहुत सुगमता से निकलते हैं। इस लिए दांतों के निकलने के समय होने वाले रोगों के निवारणार्थ नीचे कुछ योग लिखे जाते हैं—

(१) दांतों के शीघ्र निकलने के लिए दन्तपाली को शहद मिले हुए पीपल के चूर्ण से अथवा धाय के फूल, आंवलों के चूर्ण से घर्षण करनाचाहिए।

(२) पीपल, धाय के फूल, आंवला, कसेरू, बच, मूर्वा, गिलोय, पाठ, कुटकी, अतीस जीवनीयगण की औषधियां इन सबसे कल्क साध्य घृत बना कर गर्म दूध के साथ बालक को पिलाना चाहिए। इससे दांतों के निकलने में सुगमता होती है।

(३) मंजीठ, धाय के फूल, लोध, नागरमोथा, खरैटी, दोनों कंटाई, छोटे बेल के कच्चे फल, कपास के फल इन सब औषधियों का क्वाथ, दही का पानी और दूध इन सबसे यथाविधि घृत सिद्ध कर बालकों को दांतों के निकलने से होने वाले रोगों के निवारणार्थ देना चाहिए।

(४) पीपल, पीपलामूल, चव्य, चित्रक, सौंठ, अजवायन, अजमोद, हल्दी, मुलैठी, दारुहल्दी, देवदारु, बायबिड़ङ्ग, छोटी इलायची, नागकेशर, नागरमोथा, कचूर, काकड़ासिंगी, बिडनमक, अभ्रकभस्म, शंखभस्म, लोहभस्म स्वर्णमाक्षिकभस्म, इन सब औषधियों को समान भाग लेकर दूध में घोट कर एक रत्ती प्रमाण गोलियां बना लेना चाहिये। इन गोलियों से दंत पाली को घिसने से तथा अवस्थानुसार मात्रा में खिलाने से बालकों के दांत बहुत जल्दी निकल आते हैं और दांत निकलने के कारण से उत्पन्न हुए ज्वर, अतिसार आदि रोग अवश्य निवृत्त होजाते हैं। यह दन्तोद्भेद गदान्तक नाम का रस है।

(५) अतिविषा, काकड़ासिंगी, पीपल इनका चूर्ण शहद के साथ चटाने से खांसी, ज्वर, वमन में फायदा होता है।

बहुत से बालक दांतों के साथ ही पैदा हुआ करते हैं, और बहुत से बालकों के ऊपर के दांत पहले निकला करते हैं, ऐसा होना अशुभ माना गया है। यदि ऐसा बच्चा पैदा होतो शांतिकर्म कराना लिखा है।

बच्चों की खराब आदतें मिट्टी खाना वगैरह

दांत निकलने के समय जब बालकों के मसूड़ों में खाज आने लगती है उस समय बच्चे मिट्टी या कंकर जो हाथ लगता है, उसे खाने लगते हैं। इस समय बच्चों की निगाह न रखने से शनैः २ उनमें मिट्टी खाने की आदत पड़जाती है, जो छुड़ाने पर भी नहीं छूटती है। उदर में पहुंची हुई मिट्टी पांडु आदि रोग उत्पन्न कर देती है। इसलिए दांत निकलने के टाइम पर बच्चों को मिट्टी खाने से बचाने का पूर्ण प्रयत्न करना चाहिये। जब मिट्टी के पास जाते या मिट्टी को

हाथ में लेते देखें उसी वक्त मिट्टी हाथ से छुड़ादें और बालक को वहां से अलग करदें। खासकर कुमारागार बनाने की आवश्यकता इसीलिए होती है कि बालक ऐसी खराब वस्तुओं से अलग रहे। यदि बालक को मिट्टी खाने की आदत पड़ गई हो, तो उसे छुड़ाने का उपाय करना चाहिए। इस आदत को छुड़ाने के लिए शहद के साथ मण्डूर खिलाना चाहिए। और मृत्तिका खाने से उत्पन्न हुए रोगों में वाग्भट में कहा हुआ पाठादिघृत देना चाहिए!

कुछ बालकों में बिस्तरे पर टट्टी पेशाब करने की खराब आदत पड़ जाया करती है, यह आदत माता की असावधानी से पड़ती है, अगर माता रात को एक या दो बार बच्चे को उठाकर पेशाब करा देवे और प्रातः सायं नियत समय पर शौच करा देवे तो ऐसी आदत नहीं पड़ती है। यदि ऐसी आदत पड़ जाय तो बच्चे को खाने के लिए दी जाने वाली वस्तुएं परिमाण में देनी चाहिएं। दस्तावर और पतली वस्तुएं न देना चाहिए। जहां तक हो सके खिचड़ी बाजरे की रोटी और मट्ठा देना चाहिए।

अधिकतर बच्चे देखादेखी बीड़ी, सिगरेट तम्बाकू, भांग आदि मादक वस्तुओं का व्यवहार करने लग जाते हैं, इससे उनके फेफड़ों और हृदय पर खराब प्रभाव पड़ता है। मुख से दुर्गन्ध आने लगती है, दांत पीले और काले हो जाते हैं। इसलिए ऐसी खराब चीजों से बच्चों को बचाये रखना चाहिए।

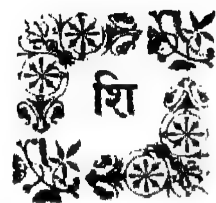
प्रायः बालक अपने घरवालों को जैसा करते देखते हैं, स्वयं भी वैसा करने लग जाया करते हैं। इसलिए बालकों के सामने किसी से झगड़ा करना, गाली देना, किसी पर क्रोध करना अच्छा नहीं, बालकों के सामने जहां तक हो सके अच्छे शब्दों का ही प्रयोग करना चाहिये। आरंभ से ही बालको को जैसे सांचे में ढालने का उपाय किया जाता है वे वैसे ही हो जाते हैं।

प्राचीन समय में भारतवर्ष के अन्दर बहुत से वैद्य बालतन्त्र के विशेषज्ञ होते थे बालक के गर्भस्थ होते ही गर्भ पुष्टि का प्रयत्न करना, गर्भिणी के आहार विहार की देख रेख करना बालक के उत्पन्न होते ही उसका सावधानी से पालन पोषण करवाना, माता व गाय के दूध की परीक्षा करना, दूध में किसी प्रकार का विकार होने पर उसको शुद्ध करना, बाल-रोगों की चिकित्सा करना आदि उन उन भिषग्वरों का प्रधान कार्य होता था।

आज इस विषय की कोई प्राचीन संहिता उपलब्ध न होने से तथा उपलब्ध संहिताओं में प्रकरणवश लिखे हुए इस विषय का सर्वाङ्ग पृथक्संग्रह न होने से एतद्विषयक पर्याप्त ज्ञान का अभाव दिखाई देता है। इसी अभाव को दूर करने के सद्विचार से प्रेरित होकर जीवन-सुधा के संचालकों ने जो बालरोग विज्ञान विशेषांक निकालने का सदुद्योग किया है वह सर्वथा प्रशंसनीय है। ऐसे विशेषांकों से वैद्य समुदाय तो लाभ उठाता ही है किन्तु सर्वसाधारण का भी बहुत कुछ उपकार होता है। आशा है इस पत्रिका के संचालक इसी तरह भविष्य में भी ऐसे विशेषांक निकाल कर आयुर्वेद की उन्नति करने में सहायक होंगे।

शिशु स्वास्थ्य

(ले०—प्रो० जगदीश मित्र जी वैद्य शिरोमणि सम्मोहिनी विद्या विशारद, योग चिकित्सक सम्मोहिनी आश्रम देहली)



शिशु जन्म काल से ही अत्यन्त कोमल अङ्गों का होता है। गर्भावस्था में उसकी रक्षा का परमात्मा ने विशेष प्रबंध किया होता है, भोजन पहुंचाने के विशेष प्रबन्ध के अतिरिक्त शिशु को बाहर की ठोकर और चोट से बचाने का यह प्रबंध होता है, कि उस के शरीर के इर्द गिर्द चारों ओर थैली में पानी भरा रहता है और वह पानी उत्पत्ति काल में योनि को चिकना और तर करके बच्चे को बाहर आने में आसानी पैदा करता है, जहां वह माता के प्रसव के कष्ट को कम करता है वहां गर्भ में शिशु की बाह्य आघातों से भी पूरी रक्षा करता है अर्थात् गर्भावस्था में शिशु पानी के कोमल बिस्तरे में आराम करता है और पानी का यह गिलाफ़ उसको चारों ओर से लपेटे रहता है।

जिस प्रकार क्षीर सागर में विष्णु भगवान् अपनी शक्ति लक्ष्मी और सरस्वती को लिए शेष नाग पर प्रलय काल में आराम करते हैं और उत्पत्ति काल आने पर उनकी नाभि से कमल नाल की भांति एक नाल निकलती है और उस क्षीर सागर पर एक कमल प्रगट होता है। और कमल से संसार उत्पन्न करने वाली शक्ति ब्रह्मा के रूप में उत्पन्न होती है और संसार का फिर से प्रादुर्भाव होता है। ठीक इसी तरह जब रज, वीर्य गर्भाशय में इकट्ठे होते हैं तो कुछ कैमिकल परिवर्तन के पश्चात उस जल पिंड में एक शिशु की काया बनती है और उस काया की नाभि से कमलनाल की भांति एक नाड़ी पैदा होती है, जो माता के गर्भाशय के पर्दे में ऐसी जगह चिपटती है जहां से रुधिर और गिज़ा लाकर उस जलपिंड को पूरा बालक बनाने का कारण होती है अर्थात सृष्टि उत्पत्ति जैसी घटना बालक उत्पत्ति के लिये होती है।

शिशु जब बाहर आता है उसके आने से पहिले परमात्मा उसके पालन पोषण का पूरा प्रबन्ध करता है, दुःख से जाये उस बालक के लिये 'मां' के हृदय में असीम प्रेम उत्पन्न होता है और छातियां दूध से भर जाती हैं और प्रेम के वेग से दूध बहने लगता है जिसको बच्चा पीकर स्वस्थ रहता है।

शिशु स्वास्थ्य के लिये माता का स्वास्थ्य ठीक होना आवश्यक है, मैंने बच्चों के इलाज में जितना अनुभव किया है उससे मैं इस परिणाम पर पहुंचा हूं कि बच्चों की बहुधा बीमारियां बदहज़मी के कारण होती हैं और बदहज़मी माता के दूध की खराबी के कारण होती है साधा-

रण दूध फैंकने अर्थात् कै करने के रोग से लेकर सूखिया मसान या बच्चों का दिक़ तक रोग माता की ओर से बच्चे में आते हैं। अतः जब बच्चा रोगी हो तो उसकी माता अथवा दूध पिलाने वाली का खान पान और दिनचर्या देखनी चाहिये और उसका खान पान और दिन चर्या ठीक करनी चाहिये, क्योंकि दूध के द्वारा ही रोग बच्चे के शरीर में उत्पन्न होते हैं माता की खूराक और माता के भावों का बच्चे पर गहरा असर पड़ता है। माता को जहां अपना आहार सात्विक और शुद्ध रखना चाहिये वहां कामोत्पादक चित्रों और वार्तालाप से पूरा परहेज रखना चाहिये, तीव्र काम मनोवृत्ति और काम-चेष्टा दूध को गदला और भारी कर देती है, बच्चे की मां को विषयभोग नहीं करना चाहिये, यदि यह असम्भव हो तो उसके तत्काल पश्चात बच्चे को दूध नहीं पिलाना चाहिये, और जब मस्तक में काम विचारों की घनघोर घटा छा रही हो और काम इच्छा अपने पूरे वेग में हो तो भी बच्चे को दूध नहीं पिलाना चाहिए, इसी प्रकार जब बहुत क्रोध हो और दिमाग में बड़ी तीव्रता और मनमें अत्यन्त अनुताप हो तो भी दूध नहीं पिलाना चाहिए।

यदि कोई माता अपने बच्चे को स्वस्थ रखना चाहती है तो अपने बच्चे को दूध पिलाने का समय नियत करे और नियत समयके अलावा दूध न पिलावे यदि बच्चा रोये तो उसके रोने का कारण समझने का यत्न करना चाहिए। चुप करने के लिए बे समय दूध नहीं पिलाना चाहिये, और दूध पिलाते समय मनमें शांति और धैर्य होना चाहिये, घबराहट, काम और क्रोध बिलकुल न हो जो माता संयम में रहती है और अपनी गिज़ा देने के लिए समय नियत करती है उसे बच्चे के रोगी होने का कभी कष्ट उठाना नहीं पड़ेगा। बच्चे को स्वस्थ रखने के लिए और बच्चे को रोग मुक्त करने के लिए औषधियां इतना लाभ नहीं पहुंचाती जितना माता का संयम, जो वैद्यराज शिशु रोगों में केवल शिशु को ही औषधि देते हैं, वह शीघ्र रोगी को रोग मुक्त नहीं कर सकते, कारण के नाश से कार्य का नाश स्वयं होजाता है, दूध की खराबी से तो बच्चा रोगी हुआ। दूध का सुधार न करके बच्चे का इलाज करते जाना ठीक नहीं, माता का हाजमा ठीक न होने से बच्चे का हाजमा बिगड़ जाता है, भारी गिज़ा माता खाजावे तो बच्चे के पेट में दर्द होने लगता है, अतः बच्चे के रोग में माता किसी न किसी अंश में कारण अवश्य होती है, अतः बच्चे को औषधि देते हुए माता का इलाज भी अवश्य करना चाहिये, यदि औषधि माता को खिलाना मुनासिब न समझा जाये तो उसकी दिनचर्या उसकी खुराक और उसकी मानसिक अवस्था अवश्य सुधरनी चाहिए ताकि शीघ्र बच्चा अच्छा हो जावे।

कठिन और दुःसाध्य रोगों में मां की कड़ी निगरानी करनी चाहिये, क्योंकि कई बार माता की ओर ध्यान न देने के कारण दुरुस्त [illegible] करते हुए भी बच्चे का रोग मुक्त नहीं किया जा सकता, अब कुछ शिशुरोग के विषय में लिखा जाता है।

शिशु चूंकि बहुत कोमल होता है, वह [illegible]

निम्नलिखित प्रकार से रोगी होता है—अधिक सर्दी लग जाने से जो कि बहुधा ठंडी हवा लगने और कपड़े काफी न होने अथवा हवा में यकायक कपड़े उतार देने से या रात में असावधानी से, इससे शिशु को जुकाम, खांसी, निमोनिया दर्द पसली आदि हो जाता है।

अथवा गर्मियों में गर्म हवा लगजाने से, बच्चे को ज्वर हो जाता है, दस्त आने लगते हैं या कमेड़ा हो जाता है, या किसी दूसरे रोगी बच्चे के साथ खेलने से काली खांसी खसरा और दूसरी छूत की बीमारियां लगजाती हैं, अथवा मां की बदपरहेजी से, उसका छाती का दूध खराब हो जाने से इससे अधिक भयंकर रोग हो जाते हैं, जो बहुधा बदहजमी से प्रारम्भ होते हैं, बच्चा दूध डालने लग जाता है, उसको कभी कब्ज के साथ ज्वर हो जाता है, कभी बिना ज्वर कब्ज हो जाता है, और बहुधा दस्त आने लगते हैं, जो कभी श्वेत होते हैं, और कभी कभी हरे, पीले दस्त आते हैं।

बच्चों को स्वस्थ रखने के लिये यह आवश्यक है कि उन कारणों से बच्चों की रक्षा की जावे, जिनसे बच्चा रोगी हो जाता है, सर्दियों में बच्चे को सर्दी से—खासकर प्रातः और सायं बचाया जावे, हर रोज बच्चों को धूप में सर्दियों में खेलने दिया जावे, बवा के दिनों में टीके लगवाये जावें, और गली में रोगी बच्चों से खेलने न दिया जावे, गर्मियों में लू से और गर्मी से बचाया जावे, ठंडे पानी से दो तीन बार नहलाया जावे, आदि।

बदहजमी में यदि कब्ज हो तो एक चम्मच कैस्टरायल अर्थात शुद्ध अरिंडी का तेल अथवा रेवंद चीनी, हरड़ थोड़े पानी में घिसें और थोड़ी सौंठ को घिसकर एक छोटा चम्मच पानी बनाकर दिन में एक दो बार पिला दिया जावे, तो कब्ज दूर हो जाती है, बदहजमी जाती रहती है और बच्चा स्वस्थ हो जाता है, यदि पेट दर्द करे तो पेट को सेकें और सौंफ का अर्क थोड़ा २ दें आराम होगा, यदि दस्त आवें तो पहिले ही बन्द न करें, किंतु ऊपर का नुस्खा देवें, और यदि आराम न हो तो हल्की ग्राही औषधि दें, यदि दस्त सफेद हों तो गर्म काबिज दें, यदि दस्त सब्ज या पीले हों तो सरद काबिज दवायें दें, और दूध देने में विलम्ब डालकर दें, और माता भी गिजा हल्की और काबज जैसे मूंग की दाल चावल सेवन करे।

बच्चे को यदि दस्त अधिक आवें तो बहुधा उस समय ज्वर भी हो जाता है, और आंखें अन्दर धंस जाती हैं बच्चा बहुत निढ़ाल हो जाता है, दस्तों में पानी और फुटकड़ी जुदी २ होती हैं, पहिले तो तुर्श बू आती है, फिर बदबू आने लगती है, प्यास ज्यादा लगती है, और बच्चा बहुत बेचैन होता है, और बच्चे की हालत बड़ी चिंताजनक हो जाती है और कई बार यह रोग गर्मी की अधिकता के कारण विसूचिका में तबदील हो जाता है, जब इस रोग का हमला अधिक भयंकर हो तो बच्चे को १०२ दर्जे का ज्वर भी होता है, मुंह में छाले निकल आते हैं, भूख कम हो जाती है, और हररोज बच्चा सूखने लगता है, बालकों को कमेड़े का दौरा होने लगता है, कै बार २ आती है जो दवा या पानी दिया

जावे वह निकल आता है, और प्यास बहुत सताती है, पेट फूल आता है, कई बार उसमें मरोड़ की तरह दस्त आने लगते हैं, अब मैं दोनों प्रकार के दस्तों का इलाज लिखता हूं —

सफेद दस्तों के लिये।

(१) लोधपठानी, गुलेधावा, बेलगिरी, जीरा सफेद, हींग थोड़ा भुना हुआ बराबर वज़न लेकर कूट छान कर रक्खे और ४ रत्ती से एक मासा तक मां के दूध में हल करके दिन में तीन बार दें।

(२) खाक साफ़ ४ मासे, लौंग २ मासे, जायफल १ मासे, दारचीनी ३ मासे सौंफ २ मासे, जीरा सफेद २ मासे, कालीमिर्च २ मासे, खांड १३ मासे कूट कर बारीक सफूफ बनालें और जब आवाज़ के साथ सफेद दस्त आवें तो इसमें से १ रत्ती से ५ रत्ती तक बच्चे की आयु अनुसार दें।

प्यास के लिए थोड़ा २ अर्क सौंफ दें यह प्रयोग सफेद दस्तों का सिद्ध और अचूक इलाज है।

हरे पीले दस्त आने की बीमारी बहुत भयंकर होती है और असाध्य होने की तरफ़ ज्यादा झुकाव रखती है अधिकतया यह रोग गर्मी के मौसिम में और दांत निकालने के समय होता है इसके लिये अनुभव सिद्ध दो नुसखे नीचे लिखता हूं।

(१) कहरुवा ३ मासे, गोंद कीकर का ४ मासे, अनार का फूल ३ मासे, चाकसू ६ रत्ती, रसौंत ६ रत्ती, नरकचूर २ रत्ती, जहर मोहरा २ रत्ती पीस कर ईसबगोल के लुआब में खरल कर के २ रत्ती की गोलियां बनावें दिनमें दो या तीन बार गौ के दूध में घिस एक २ गोली दें। प्यास दूर करने के लिये पानी जोश देकर और ठंडा करके दें या अर्क गाओजबान, वेदमुश्क, अर्क केवड़ा बाहम मिला कर दें।

अनार के पत्ते पीस कर तालू पर रक्खें और उस पर गीला कपड़ा ठंडे पानी से तर करके रक्खें और कपड़े को तर रक्खें।

(२) गुलेधावा ६ मासे, कमलगट्टा की गिरी ६ मासे, जीरा सफेद ३ मासे, तबाशीर ३ मासे, छोटी इलायची ३ मासे, बेलगिरी ६ मासे, कपूर १ मासा इन्द्र जौ ६ मासे पीस कर सफूफ बनावें और तीन रत्ती से १ मासे तक दही के पानी में हल करके दिन में तीन बार दें।

बच्चे के पेट पर नाभी के इर्द गिर्द रसौंत, ३ मासे फिटकरी २ मासे और अनार के हरे पत्ते ६ मासे रगड़ कर लेप लगावें ताकि अन्तड़ियों की खराश और सोज़िश शीघ्र चली जावे।

गिज़ा = माता का दूध पीना हो तो देर २ के बाद वही दूध पिलावें, यदि गाय आदि का दूध पीना हो तो पहिले तो चार पांच घन्टे भूखा व्रत करावें फिर दूध फाड़ कर केवल दूध का पानी दें या आश जौ दें।

हमारे डाक्टर भाई इस रोग में बिसमिथ सैलीसिलस १ ग्रेन, सोडा बाईकार्ब २ ग्रेन, सैलौल आधा ग्रेन आदि शर्बत में मिला कर दिया करते हैं, परन्तु मेरे अनुभव में ऊपर के नुसखे इनसे बहुत शीघ्र लाभ करने वाले हैं।

जहां तक बन पड़े अफीम का सेवन न करावें और बहुत तेज़ कावज़ात न दें यदि देने की आव-

श्यकता समझें तो एहतयात से थोड़ी मिकदार में दें, गो डाक्टर भाई भी कभी २ कम्पौंड टिंकचर आफ् कैम्फर देते हैं, परन्तु जहां तक हो ऐसी औषधी से बचना ही चाहिए जिसमें अफ्यून पड़ी हो ऊपर के दोनों नुसखे बहुत बढ़िया हैं वही निरोगता देने में काफी हैं इस रोग में माता को हलकी गिज़ा खानी चाहिए और काम क्रीड़ा से बिलकुल परहेज़ रखना चाहिए।

नीचे लिखी बातों का पूरा ध्यान रखो

(१) यदि बच्चे के शरीर पर फुन्सियां, सुर्ख धब्बे (Roshes) आदि निकलें तो फौरन उनकी तरफ् ध्यान दो और बच्चे की टैम्प्रेचर लो।

(२) यदि ज्वर हो जावे तो घबराओ नहीं, परन्तु बच्चे को दूसरे तन्दुरुस्त बच्चों से जुदा करके आराम दो, यदि कब्ज़ हो तो कब्ज़ दूर कर दो और कोई साधारणसी ज्वरनाशक औषधि दो।

(३) जिस कमरे में बीमार बच्चे को रक्खो वह अच्छा हवादार हो परन्तु किसी दरवाजे के आगे बच्चे का बिस्तर न लगावो जिससे सीधी हवा बच्चे को आकर लगे, सीधी हवा के झोंकों से बच्चे को बचाना चाहिए।

(४) जब बच्चा सो रहा हो तो उसको मत जगावो चाहे वह समय उसको दूधदेने का या दवा देने का भी क्यों न हो उसके बेदार होने पर उसे जो देना चाहते हो दो।

(५) जब बच्चे को जुकाम हो जावे, तो लापरवाही मत करो। लापरवाही करने से कई भयानक रोग खांसी, निमोनिया ज्वर आदि पैदा हो जाते हैं।

(६) जब बच्चे का गला खराब हो तो भी ला परवाही न करो क्योंकि इससे काली खांसी और खुनाक (Diptcheris) और म्यादी ज्वर होजाने का भय होता है।

(७) रोगी बच्चे की सेवा करते समय यह कभी मत सोचो कि तुम भी शायद रोग ग्रस्त न होजावो, इस प्रकार के वहम को अपने पास भी न फटकने दो।

(८) कच्चा दूध बच्चे को गाय या भैंस का कभी मत दो बल्कि जब गाय का दूध देना हो तो तीन हिस्से दूध में एक हिस्सा पानी मिलावो और उसको गर्म करो एक जोश आ जावे तो छानकर थोड़ी मिसरी मिला कर ठंडा करके दो, फिर भी मां के ताजे दूध जैसी उष्णता उसमें होनी चाहिये।

(९) जब साधारण उपचार से लाभ न हो तो फौरन बच्चे को योग्य वैद्य डाक्टर या हकीम दिखावो।

(१०) यदि आप बच्चों को तन्दुरुस्त देखना चाहते हैं तो बच्चे को कभी मैला न रहने दो, खास कर कपड़े मैले न रहने दो छोटे बच्चे को खुली ताजी हवा हल्की धूप और साफ मिट्टी में खेलना बड़ा स्वास्थकर है परन्तु मिट्टी में खिलाने के पश्चात् बच्चों को निहला धुला कर साफ् कपड़े पहनाने चाहिये।

(११) बच्चा यदि राल ज्यादा टपकावे तो थोड़ी फिटकड़ी पानी नीम गर्म में हल करके उसके मुंह को अन्दर से साफ रुई से दिन में दो तीन बार साफ कर दो, और यदि मुंह पकने के कारण राल बहती हो तो इस तरह मुंह साफ् करने के

बाल रोग

ले० — आयुर्वेदार्णव, आयुर्वेदमार्तण्ड पं० रामगोपालमिश्र राजवैद्य आयुर्वेदाचार्य — गोंदिया, (सी.पी.)

बाल जन्म

बालक के भूमिष्ठ होते ही सबसे पहिले यह देखना चाहिये कि बालक सजीव है अथवा निर्जीव सजीव बालक शीघ्र ही रोना आरम्भ करता है पर फिर भी कई बालक सजीव होकर भी रुदन नहीं करते ! ऐसे समय घबराने की आवश्यकता नहीं प्रत्युत उस समय शीघ्रता से यह देखने की आवश्यकता है कि उसकी गर्दन से नाल का लपेटा तो नहीं लगा है। यदि लगा है तो तुरन्त उसे हटाने का प्रबन्ध करे अन्यथा प्राण जाने का भय है। और ऐसा नहीं है तो फिर धैर्य रखकर उसके शरीर के क्लेद को मृदु वस्त्र से पोंछ कर बलाद्य तैल उसके शरीर से लगावे और उसके कान के पास मंद-मंद कांसे के बर्तन में शब्द करे। ऐसा करने से प्रसव वेदना के कारण मूर्छित बालक में स्फूर्ति आकर वह रुदन करने लगेगा। कभी इन उपायों से वह रुदन न करे तो जानना चाहिये कि इसके गलेमें क्लेद चिपका हुआ है और इसीलिये इसकी मूर्छा के साथ श्वासोच्छ्वास क्रिया बन्द है। निराश न होकर उसके गले में उंगली धीरे से देकर उसके गले के कफ को निकाले और मुख पर हलका छींटा ठंडे जल का देवे और पीठ और पेट को हलका थपथपाय कानों में जोरों की फूंक लगावें इतने पर भी रुदन न करे तो एक बर्तन में ताजा जल, और दूसरे में मंदोष्ण जल भरकर उस बालक को प्रथमतः ताजे जल वाले पात्र में गरदन तक डुबोकर बाद मन्दोष्ण जल में उसी प्रकार गरदन तक बैठा हुआ डुबोवे इस प्रकार एक-एक मिनट क्रमसे चार पांच बार करे। और साथ ही बार २ छाती को आहिस्ता मलें यह सब विधि करने पर भी यदि वह रुदन न करे तो फिर जान लेवे कि यह जन्मते ही मरा उत्पन्न हुआ है। जन्म से बालक के न रोने में मुख्यतः गर्भाशय द्वार में बहुत काल तक बालक का शिर फंसा रहना,

---

पश्चात् सुहागा २ मासे शहद खालिस १ तोला में मिला कर रक्खो और फुरेरी से उस की जबान, मसूढ़ों और हल्क में दिन में दो तीन बार लगाया करो, राल बहना और मुंह पकना बन्द हो जावेगा।

यदि इन नियमों का ध्यान रक्खोगे तो आपका प्यारा बच्चा सदा स्वस्थ रहेगा और यदि कोई रोग कभी आभी जावेगा तो शीघ्र नाश हो जावेगा और आप को कभी चिन्ता और खेद के अथाह सागर में निमग्न नहीं होना पड़ेगा।

अथवा बालक का अशक्त होना, या गर्भोत्सर्जन के पूर्व माता की कटि अस्थि (कटयस्थि) और बालक का शिर इनके मध्य में नाल का दब जाना, अथवा हाथ के या शस्त्र के सहारे बालक को निकालते समय उसकी छाती और मस्तक पर दबाव पड़ना आदि अनेक कारण हुआ करते हैं और इन्हीं कारणों से बालक में श्वास लेने की शक्ति नहीं रहती इसलिये उसका श्वासवरोध हुआ रहता है, उसके सम्पूर्ण गात्र शिथिल, त्वचा रक्त-हीन फीकी, मुंह फैला हुआ होता है, बालक की नाड़ी की गति मन्द होती है, बालक अपनी अशक्तितावश मृतवत भूमिष्ठ होता है।

नालच्छेदन

बालक के जन्मते ही उपर्युक्त प्रकार की जांच करनेके बाद अर्थात बालकके रुदन सुनने के पीछे बच्चे की नाल को अंगुलियों की चिमटी में लेकर जब तक उसमें रक्त की गति का बोध होता हो नालच्छेदन में शीघ्रता न करे। कारण, उस काल में बालक की नाल से बालक को दो तीन दिन पर्यन्त होने लायक रक्त उसके शरीर में पोषणीय कार्य के लिए जाता है और यही कारण उसे दो-तीन दिन तक जन्म के बाद कुछ न देने पर भी उसका पोषणीय कार्य चल सकता है। कथित नाल के रक्त की गति को बंद होने में तीन-चार मिनट लगता है। और उसके बन्द होने पर ही बच्चे की नाल को बच्चे की नाभी से ३-४ अंगुल छोड़कर स्वच्छ और मजबूत रेशमीधागे से कसकर बांधे और बाद में तेज साफ छुरी या कैंची से काटें। नालच्छेदन करने वाली दाई के हाथ, नख सहित स्वच्छ धोये हुए होने चाहियें। उसी प्रकार उसके हथियार भी साफ धोये हुये होने चाहियें, निंबपत्र के उष्ण जल से हाथ और नालच्छेदन की छुरी को धोलेना उत्तम होता है। नालच्छेदन के बाद नाभी से लगे नाल के कटे भाग पर तैल न लगावे, छनीं राख गोबरी की लगाकर कपड़ा लपेट देना चाहिये, जिससे नाभी नहीं पके और नाल फिर छै दिन में सूख-कर गिर जायगी। किसी समय यदि नाल को झटका आने या किसी गल्ती से नाभी में शोथ हो कर वह पक जाय और उसमें राध आने लगे अथवा उसमें व्रत पड़ जायं तो नाभी से रक्त-स्राव होने लगता है ऐसे समय में नाभी शोथ होने हो उसे कपास के फोये से हलका सेकें, राध पड़ने पर सुबह नीम के मंदोष्ण जल से धोकर उस पर कंघी के पत्तों के कल्क, सप्तपर्ण बीज के स्वरस द्वारा सिद्ध किये तैल का फोया धरें, या त्रिफला जलाकर उसकी राख बुरकावें या पीपल की छाल या इमली की छाल का कपड़छान किया चूर्ण तैल लगाकर बुरकावें। शीघ्र ही व्रण पूर्ण होगा, बालक के नेत्रों को जन्मते ही स्वच्छ करना चाहिये और स्नान कराते समय मंदोष्ण जल से साफ धो देना चाहिये।

शिशु स्नान

बालक के जन्मते ही उसके शरीर पर एक प्रकार का श्वेत क्लेद होता है उसे पोंछकर मंदोष्ण जल से साफ धोकर मुलायम कपड़े से उसके अङ्गों को साफ पोंछ देना चाहिये। बाद मंदोष्ण तैल मर्दन करके चने के बेसन से रगड़ कर उसके शरीर को स्वच्छ कर देना चाहिये। बालक को स्नान कराने के बाद शरीर स्वच्छ करके

उसके सिर के तालूभाग पर रेंडी का तेल मंदोष्ण कर लगाकर उसी तैल का फोया धर देना उत्तम होता है अथवा शीत काल हो तो यत्किंचित् कायफल बुरका देना हितावह होता है। इसी समय एक अंगुली रेंडी का तैल उसके हलक में चटा देना या मधु चटाना चाहिये। ऐसा करने से उसे दस्त साफ आकर कोष्ठगत दोष नष्ट हो जाते हैं कोई २ घृत, मधु या मक्खन मधु विषम भाग में मिलाकर चटाते हैं, उदरगत गर्भोदक यदि गिराना बालक के मुख से उत्तम समझा जाय तो सैंधव और घृत मिश्रित करके चटाने से वमन द्वारा वह भी गिर जाता है। वर्तमान में इसे कोई नहीं करते। स्नान विधि आदि उपरोक्त विधियों को करके बालक को स्वच्छ वस्त्र में लपेट मुख खुला रखकर लिटा देवें और सूतिकागार में अङ्गीठी से उष्णता कायम रखे। छोटे बच्चों को बड़े मनुष्यों के समान ठंडे जल से या अधिक उष्ण जल से स्नान न करावें, अथवा साबुन से स्नान न करावें, कारण ठंडे जल को बालक का रक्त सहन करने योग्य न रहने से उसे सर्दी होना संभव है। अधिक गर्म जल से स्नान कराना भी चर्म की कोमलता में हानि प्रद है। और सोड़ा मिश्रित रहने से साबुन से स्नान कराना भी नुकसान करने और उसे कष्ट पहुंचाने वाला है, इसलिए मंदोष्ण जल से स्नान कराना उत्कृष्ट होता है।

दुग्ध पान

बालक के जन्म के बाद माता को दूध दूसरे तीसरे या चौथे दिन आता है यह बात प्रथम प्रसूता स्त्री के लिए प्राय: लागू है। अत: स्नान के बाद तीन चार बार की प्रसूता स्त्री के बालक को और प्रथमत: प्रसूता होने वाली के बच्चे को जब उसकी माता के स्तन में दूध न आवे तब तक समान जलयुक्त गर्मी दिया दूध मोटे शुद्ध कपड़े में छान कर किंचित ही उष्ण रहे फोये से देना चाहिये अथवा सारिवा मूल, गो घृत और मधु में घिस कर चटाना चाहिये। गुड़ का पानी अथवा केवल शहद देना चाहिए। शिशु के मल मूत्र करने के बाद और माता के स्वस्थ होजाने के बाद उसके स्तन में दूध आने पर स्तनपान कराना चाहिए।

बच्चे को सुलाना

बच्चे को दूध पिला कर दाहिनी करवट पर सुलाना चाहिए। बांई करवट पर भूल कर सुलाना नहीं क्योंकि ऐसा करने से बच्चों का यकृत जो कि शैशव काल में उसके अन्यान्य अवयवों से बड़ा होता है। उसका भार जठर पर पड़ने से उस बालक के लिये कष्ट का कारण हो जाता है। यही नहीं प्रत्युत ऐसी आदत रखने से कभी कभी बालक का यकृत बढ़ जाता है धनुष्टंकारादि अन्यान्य व्याधियें पैदा हो जाती हैं। अतएव बालक को दाहिनी करवट ही सुलाना हितकर है इसे स्मरण रखना चाहिए। शिशु की स्वास्थ्य रक्षा और शरीर वृद्धि की दृष्टि से शिशु को निद्रा की पूर्ण आवश्यकता है और यही कारण है कि जन्म के बाद शिशु कुछ दिनों तक खूब सोता है। इस अवस्था में बालक जब सोवे तब ही उसके पैरों को वस्त्र से ढक देना चाहिए। ठंड काल में खालिस सरसों या रेंडी का तेल उसके शरीर से मल कर धूप में सुलाना अच्छा है। वर्षा में तैल

मर्दन के बाद कोयलों की आग पर अजवाईन और लहसुन के छिलके छोड़ कर दोनों हथेली पर बालक को चित्त लेकर ऊंचे से धुंआ देना और गर्मा देना उत्तम है लेकिन यह काम चतुराई से फुर्ती के साथ करें, इसमें एक बार चित और एक बार पट करके धुंआ दिया जाता है इस कृति से बालक को कोई रोग नहीं होता, बालक के नाक, मुंहमें अधिक धुआं न भरजाय या गहरा सेक न लगे इस बात-की सावधानी रखना जरूरी है। जाड़े में भी इस विधि को कर सक्ते हैं उष्ण काल में केवल तिल्ली का तेल ही मर्दन करना चाहिये। बालकको जहांतक हो पालनेमें झुलाना चाहिये क्योंकि पालने में मृदुल बिस्तर पर सुलाकर झुलाने से मंदमंद वायु लगकर उसे सुखद नींद आती है।

बालक के निवासस्थान का दीप

बालक के निवासस्थान में अलसी, सरसों या तिल्ली के तेलका दीपक रखना चाहिये। बालक की आदत होती है कि वह प्रकाश को एक टक लगाकर देखता है उसे इसी में आनन्द आता है दीप, तेज प्रकाश वाला न रक्खा जाये, मंदप्रकाश वाला दीप ही उसके लिये हितावह है, कारण तेज प्रकाश से उसकी कोमल आंखों को त्रास होकर दृष्टि मन्द होती है। मिट्टी का तेल या गैस अथवा बिजली के दीप से उसे रक्षित रखें।

सशक्त, निरोगी, वजनदार, बालक होने में कारण

शिशु पालन में दक्षता से काम लेने पर उत्तम शुद्ध पौष्टिक गुणयुक्त दुग्ध ही बालकमें शर्तिया निरोगता और वजनकी ठीक मिकदार को उत्पन्न करता है। पर फिर भी साधारणतया १२-१४ वर्ष वाली स्त्री का बालक अशक्त, रोगी, हलके वजनवाला,अल्पायु होना निश्चित है कारण कि थोड़ी अवस्था वाली माता का गर्भाशय पूर्णत: वृद्धि को प्राप्त नहीं होता। गर्भाशय छोटा होनेसे उसमें बालक की वृद्धि होने में हानि होती है। कभी कभी सात मास में जिन माताओं को बालक हो जाते हैं वे यद्यपि जीते हैं दीर्घायुषी भी होते हैं पर सप्तधातुओं की पूर्ण वृद्धि ही हुये बिना उनके पैदा होजाने से वे निर्बल तो अवश्य ही होते हैं। जिन माताओं के सोलह अठारह और बीस वर्ष की अवस्था में बालक होते हैं वे निरोगी सशक्त और वजनदार होते हैं एवम् प्रथम बार के बालक से दूसरी और तीसरी बार के तो और अधिक निरोगी सशक्त दीर्घायुषी तथा बुद्धि में भी निपुण होते हैं।

बच्चों के रोग निदान और चिकित्सा

शिशु को रोग होने पर उसकी बड़ी सावधानी से जांच करना चाहिये, क्योंकि वह स्वयं तो बता कुछ नहीं सक्ता एवम् नाड़ी से भी पूर्ण ज्ञान होना कठिन रहता है अतएव बाह्य दिखाई देनेवाले लक्षणों के साथ साथ बालक के मल मूत्र की भी जांच करना चाहिये, सिरपर हाथ रखकर उष्ण है या ठंडा, पेटको अंगुली के प्रतिघात से देखे वायु से पेट फूलता है अथवा जोरों से पेट उछलता है या नहीं, मंडल के पास ऊंचा हो रहा है आदि और छाती को आंखों से देखने पर तथा कफादि

की आवाज कानों से सुनने के बाद अंगुली से छाती पर हलका प्रतिघात करके देखे, मुंह में छाले तो नहीं पड़े हैं। जीभ में मल का जमाव तो अधिक नहीं है, अथवा जीभ लाल तो नहीं है। जीभ फटीसी तो नहीं है, कान में से पीव तो नहीं बहता है। गुदा में गुदापाक तो नहीं है। दांत तो नहीं निकल रहे हैं। यदि निकल रहे हैं तो मसूड़ों पर शोथ आ रही है क्या, बालक मुंह चपचपाता है क्या ? मुंह में अंगुली देने पर अंगुली को जोरों से दबाता है क्या ? बालक नाक खुजलाता है क्या ? गुदद्वार को खुजलाने का प्रयत्न करता है ? दस्त में मूत्रमकिसी तो नहीं है ? ज्वर की हालत में कान और नृतड़ ठंडे हैं क्या? बच्चा दांत पीसता है क्या ? आदि अनेकहों प्रकार से देख व पूछ और समझ कर निदान का निश्चय करना चाहिए तब कहीं बालक के रोग का पता वैद्य को मिल सकता है।

बालक की औषधि व्यवस्था

बालक को जो भी औषधि कराने का निश्चय किया जाय उसमें उसके सेवन की सुविधा का अवश्य ध्यान रखा जाय क्योंकि कोमलाङ्ग शिशु तीक्ष्ण कटु और क्षार पूर्ण औषधियों के सेवन में असमर्थ होता है। उसे ऐसे अनुपान वाली औषधियों का देना महान कष्ट का कारण होता है। इसलिए उसकी प्रत्येक औषधि में या उनके अनुपान सूक्ष्म प्रमाण में होना चाहिए उसी के साथ बटी, गुटी, चूर्ण आदि जो भी देना हो उसे उसकी माता के दुग्ध में इस प्रकार तर कर देना चाहिए कि उसमें गाढ़ापन बिलकुल न रह जाय और फिर उसमें कुछ मधु मिलाके उसे सावधानी से सीप या चमचे में पिलाना चाहिए। शिशु की रोगाक्रान्त दशा में जहां तक हो उसकी माता को ही औषधि सेवन कराना चाहिये। आवश्यक्ता समझ कर बालक को सेवन कराना उपयुक्त होता है।

बालक का स्तन शोथ

बालक के जन्म के बाद दूसरे अथवा तीसरे दिन किसी किसी बालक के स्तनों में शोथ आ जाता है हाथ से देखने पर गलेमें गांठें प्रतीत होती हैं। यद्यपि यह शोथ अपने आप कुछ दिन में दूर हो जाता है और इसलिए उसकी चिकित्सा करना कोई महत्वपूर्ण विषय नहीं माना जाता है, पर कभी २ उस शोथ से बालक को ज्वर हो जाता है, उस समय यह दूध पीना तक नहीं उपयुक्त समझता इतना ही नहीं इसी शैशव काल में स्तन शोथ होने वाले बालक को क्या कुछ अवस्था बीतने पर उन स्तन ग्रन्थियों के कष्ट और भद्दे पन का अनुभव करना पड़ता है, जो जवानी के आरंभ काल में लड़कों के स्तनों में उठी हुई गांठें प्रायः देखने में आती हैं। कभी २ इन गांठों में अत्यधिक पीड़ा देखने में आती है, क्वचित् स्थल पर इन्हीं गांठों के कारण छोटे लड़कों के स्तन जवान लड़की के समान उठे हुए देखने में आते हैं, अतएव बालक के स्तन शोथ न हो इस लिए उसका प्रतिषेधक उपाय करना ही ठीक है, वह यह है कि दूसरे या तीसरे दिन शोथ होने के पूर्व तैल आदि मर्दन करने के समय बालक के स्तन को हलकासा दाबे ऐसा करने से आरम्भिक काल के माता के दुग्धपान से एकत्र हुए स्तन विकार का द्रवांश बालक के स्तन से बड़ी सरलता



कविराज डा. वेदव्यासदत्त शर्मा शास्त्री एम.बी. ( )
एम. डी. आयुर्वेदाचार्य, वेद वानप्रस्थ आयुर्वेद मणि
धन्वन्तरि के ... भवन जालन्धर आप जीवनसुधा के
स्थायी आजीवन लेखक हैं और इस अंक के सम्पादक हैं।

पापुलर प्रेस देहली

बालरोग विज्ञान

(ले०—डाक्टर वेदव्यासदत्त शर्मा शास्त्री, वैद्य वाचस्पति एम० बी० एम० डी०
इस अङ्क के सम्पादक

शिशु पालन



लक की नाड़ी (नाल) काटने और स्नान कराने के कुछ समय पश्चात बालक को कुछ उष्णदुग्ध जो समपरिमाण जल के साथ जरा जरा गर्म किया गया हो पिलाना चाहिये। इसके पश्चात् बालक के मलमूत्र त्याग कर लेने और शिशु की माता के कुछ स्वस्थ होजाने पर शिशु को स्तन पान कराना चाहिये। "नाड़ी काटना और प्रसवान्त की स्तन पीड़ा की बातों को एक नजर देख लेना चाहिये। बालक के भूमिष्ठ होने के बाद से इक्कीस दिन तक शिशु को कभी चित्त न सुलाया जावे। डाक्टर फिशर का कथन है कि बालक के उत्पन्न होने के बाद शिशु को प्रथम दो तीन सप्ताह अधिकांश समय बायें करवट की अपेक्षा दाहिने करवट सुलाना चाहिए। ऐसा न होने से धनुष्टङ्कारादि रोग हो सकते हैं।

बालक का शरीर बढ़ने के लिए बालक को नींद की आवश्यकता होती है, अतः जन्म के बाद कुछ दिनों तक बच्चा सोता है। ऐसी अवस्था में शिशु जब सोए तब उसके पावों को वस्त्र से ढंक देना चाहिए। शुद्ध कच्चीघानी का सरसों का तेल मलकर शिशु को शरद ऋतु की धूप में सुला रखना अच्छा है। फिर भी प्रत्येक ऋतु में तेज वायु या लू आदि से बच्चों का शरीर बचाना चाहिये, पहले कुछ उष्ण जल में शिशु के सबल हो जाने के बाद उसको ठंड जल में स्नान कराने का अभ्यास कराना चाहिये। ऐसा होने से सर्दी खांसी की उतनी आशंका नहीं रहती। हमारे यहां का प्राचीन नियम है कि स्नान के समय प्रथम शिर पर कुछ जल डालकर पीछे शरीर भिगोया जाता है। यह नियम बहुत ही अच्छा है। डाक्टर फिशर ने इसका अनुमोदन किया है।

जब तक बच्चा दुग्ध पीता हो तबतक माता को रात्रि जागरण करना चाहिये। समय बिताकर तिलहाना, खाना, अधिक खट्टा, मीठा, खाना अधिक क्रोध, शोक, प्रभृति करना न चाहिये, नहीं तो बालक का रोग बढ़ सकता है।

यदि बच्चे की माता को कोई रोग हो या माता

से छोटी बूंद के प्रमाण में निकल आता है, और बालक को किसी प्रकार का कष्ट नहीं होता है। और स्तन शोथ भी नहीं होता यदि इस चिकित्सा के न करने। पर किसी बालक को स्थन शोथ हो भी जाय तो उसे पुराने कपास के फोये से मन्द मन्द २-४ दिन सेंक देना चाहिये जिससे भावी सङ्कट टल जाता है।



के स्तन में यथेष्ट दूध न हो तो शिशु को गदही या गाय का दूध पिलाना चाहिये। गाय का दूध यदि गाढ़ा हो तो उसके साथ समभाग जल और दुग्ध शर्करा (Sugor of milk) मिला गर्म-कर शिशु को पिलाना चाहिये। अधिक दूध पिलाना या अधिक रात्रि को पिलाना या सोते से उठाकर दूध पिलाना अहितकर है। और जब तक बच्चे को भूख न लगे तब तक कुछ भी देना उचित नहीं। साधारणतः बच्चे का उदर (पेट) नर्म देख उसकी भूख का हाल समझना चाहिये। एक वर्ष या १॥ वर्ष तक शिशु को दूध पिलाया जा सकता है।

शिशु आठ-दस मास में हाथ पैर से और एक दो वर्ष की आयु में पैरों से चलने लगता है। किन्तु वह यदि १८ मास के पश्चात भी चल न सके, तो उसे उपयुक्त आहार और चिकित्सा की व्यवस्था करना चाहिये। शिशु को सम्पूर्ण दांत निकल आने पर उसे पुराने चावल का मूड़ गर्म भात खिलाने का अभ्यास कराना चाहिये। शिशु की औषधी जलमें न मिला उसे वटिका(Pilules) या अणुवटिका (Globules) में मिला सेवन कराना सुविधाजनक है।

मृतवत् भूमिष्ट शिशु

दीर्घकाल की प्रसव वेदना के बाद या प्रसूति के जरायु में दोष रहने से शिशु मृतवत भूमिष्ट होता है। रक्त संचालन-यंत्र की क्रिया रुक जाने से श्वास प्रश्वास लोप हो जाता और शिशु रो नहीं सकता।

इस अवस्था में निम्न लिखित प्रणाली अव-लम्बन करना चाहियेः—शिशु के भूमिष्ट होते ही उसकी नाभिनाड़ी न काट उसके मुख और गले का श्लेष्मा और क्लेद शीघ्र ही साफकर देना चाहिये। इसके पश्चात उंगलियों से बच्चे की नाक दबा उसके मुख में इस प्रकार फूंक मारना चाहिये, जिससे वह शिशु की छाती तक पहुंचे और उसकी पसुली धीरे २ इस प्रकार से दबायें जिससे वह फूंक उसकी छाती से बाहर निकल आये। प्रति मिनट में १४, १५ बार इस तरह वायु प्रवेश कराने और निकालने से १० मिनट के अन्दर बच्चे की श्वास प्रश्वास क्रिया आरम्भ हो सकती है यदि १० मिनट में कोई उपकार न हो, तो शिशु के मुख या छाती हर एक बार किंचित उष्णजल, इसके पश्चात ठण्डे जल के छींटे बार-बार देना चाहिये। साथ २ सूखे हाथ से शिशु के हाथ पैर और पीठ को मलना चाहिये। शिशु के मुख पर हवा लगने में किसी प्रकार की रुकावट न हो।

बालरोग परीक्षा

छोटी से छोटी पीड़ा को बालक सहन नहीं करसकता उस के रोने और पीड़ित स्थान में बार-बार हाथ लगाने से तथा बहुत विचार से बच्चों के रोगों की परीक्षा करनी चाहिये।

(१) सिर में शूल होने से बच्चा अपने सिरपर हाथ रक्खा करता है और कान खेंचता है। उसके माथे का चमड़ा सिकुड़ जाया करता है तथा बालक शीघ्र आंख मींचता है।

(२) गले में दर्द होनेसे बालक गले में हाथ लगाता है।

(३) उदर में दर्द होने से बालक बारम्बार अपने अङ्गों को पेटकी ओर सिकोड़ता है पेटको दबाने से रोता है।

४) यदि गुदा में दर्द होता है तो बालक को प्यास अधिक लगती है, मूर्छित होजाता है, मुखमलीनसा रहता है आंतें बोलने लगती हैं और सांस अधिक चलता तथा मलमूत्र नहीं होता।

(५. अच्छा भला बालक अधिक रोने लगे तो उदरशूल समझना चाहिये।

(६) दूध पीनेवाला बच्चा जिह्वा बाहर निकाले तो प्यास जानना।

(७) सर्दी होकर नाक बन्द होने से बालक दूध पीते समय दूध छोड़ कर मुख से सांस लेता हैं तो सर्दी गर्मी समझना।

(८) चार मास तक बालक के रोने में आंसू नहीं निकलते यदि पांचवें मास में आंसू न निकलें तो उस बालक को रोगी जानना।

(९) यदि बालक बराबर रोता ही रहे और चुप न होता हो तो उसके सम्पूर्ण शरीर में दर्द समझना।

(१०) दर्द पहचानने की यह भी रीति है कि जहां दर्द हो बालक उस स्थान को बार २ छूता है तथा दूसरे किसी व्यक्ति का हाथ वहां पर लगजाय तो बहुत रोने लग जाता है।

(११) यदि बालक सोता उठता ही रोवे, जीभ निकाले और इधर उधर मस्तक हिलावे तो जानना चाहिए कि बालक भूखा है दूध पिलाने से बालक चुप हो जाता है।

(१२) जूं, चींटी, मच्छर के काटने, किसी वस्तु के चुभने और बहुत देर तक एक ही करवट से सोते रहने से भी बालक रोता है।

(१३) बालक का पेट स्वभाविक मोटा होता है यदि पसली के नीचे दोनों ओर फूलता हो तो तिल्ली और जिगर बढ़ा हुवा समझना और पेट में कब्ज जानना चाहिए।

(१४) यदि बालक के सिर में दर्द होवे और वह बोलकर नहीं बतला सके तब वह बालक आंखों को मींचकर सिर को इधर उधर धुनता रहता है।

(१५) जब बालक का पेशाब रुक जाता है, और बिल्कुल ही नहीं आता तब पेडू में या नाभि में दर्द या रोग समझना चाहिए। वा मूत्र में कष्ट हो जाने पर बालक का मुख लाल हो जाता है और पेट फूल जाता है इसकी गर्मी से प्यास अधिक लगा करती है, बालक बेहोश भी हो जाया करता है।

(१६) जब बच्चे का पाखाना और मूत्र दोनों ही एक साथ रुक जावें, तब बच्चे का चेहरा पीलापन लिये उतरा सा हो जायेगा और पेट के छूने से अफारा सा जान पड़ेगा।

(१७) यदि बच्चे को पेट का रोग हो तो उसमें उसके पेट की रगें बोलती रहेंगी। कभी २ अफारा (पेट ऊपर को उठा सा दीखे और मल मूत्र के रुक जाने के कारण से भी होने लगती है।

(१८) यदि बालक के हृदय में पीड़ा हो तो बालक अपनी जीभ को दांतों के नीचे बार २ दबावेगा। होठ और दांत खूब चबावेगा और हाथों की मुट्ठी भींच कर बड़े जोर से ऊंचा सांस छोड़ेगा।

(१९) यदि बच्चे के पेट में क्रिमि (चूरने-अर्थात कीड़े) या जूं होवें तो बालक अपनी माता की या धाय की चूची को दांतों से काटेगा।

(२०) यदि बालक के गुदामें अथवा कान

नाक आदि स्थानों में कोई रोग होगा तो प्राय: बालक को कब्जी होगी और बालक चौकन्ना सा होकर चारों तरफ देखेगा। ऐसी दशा में नर्स का काम है कि वह बालक के हाथ, पांव, मुख, कान, आंख, जोड़, गर्दन, सिर, कमर, गुदा, आदि सभी छोटे बड़े अङ्गों को एक २ करके देखे और अनुभव से बालक के रोग का निश्चय करे तथा समीप रहने वाली माता आदि सब स्त्रियों से उसके विषय की पूछ ताछ करे।

(२१) नीरोग बालकों का पाखाना पतला पीला और कुछ हरा होता है और दुर्गन्धि आती है यदि इसमें कुछ उलट पुलट हो तो रोगी समझ शीघ्र ही चतुर वैद्य, हकीम, डाक्टर का इलाज करना चाहिये।

नाड़ी सम्बन्धी साधारण ज्ञान

(क) निरोग बालक की नाड़ी १ मिनट में ६० से ६५ बार चलती है।

(ख) किसी की ५० और अधिक से अधिक ६० तक चलती है।

(ग) भूमि में जन्मते ही बड़े बालक की नाड़ी की गति १३० से १४० बार चलती है। एक वर्ष के आयु वाले बालकों की नाड़ी की गति ११५ से १४० बार तक चलती है। दो वर्ष के आयु वाले बालकों की नाड़ी की गति १०० से ११५ तक चलती है। तीन वर्ष की आयु वाले बालकों की नाड़ी की गति ६६ से १०० तक, चार से सात वर्ष तक ६० से ६५ तक। ८ से १४ वर्ष तक ८० से ८५ तक चलती है। युवावस्था में एक मिनट में ८० बार तथा वृद्धावस्था में ५० से ६५ तक एक मिनट में नाड़ी की गति होती है। जिस रोग में नाड़ी की गति १२० से १५० बार एक मिनट में हो तो उसकी मृत्यु निकट समझना। इस क्रम से नाड़ी आदि की परीक्षा कर लेना उचित है।

(नोट) यह भी स्मरण रहे कि बालकों को जो रोग होते हैं वह कुछ जन्मज, कुछ स्वाभाविक, कुछ आहार परिणाम और कुछ बुद्धि के अपराध यानी माता पिता की मूर्खता से होते हैं इस लिये सब बातों का ध्यान में रख कर चिकित्सा करना चाहिये।

बालोपयोगी नियम

(१) बालक को अत्यन्त हलके हाथ से उठाना और लिटाना चाहिये जिससे उसके कोमल शरीर पर थोड़ा भी आघात न पहुंचने पावे।

(२) सोते हुए बालक को सहसा न जगाना चाहिए। क्योंकि इससे भयभीत होकर वह रोग-ग्रस्त हो सकता है।

(३) प्यार करते समय बालक को नीचे ऊंचे न उछालना चाहिए और सिर नीचे करके पांव पकड़ कर कदापि न उठावें, इससे बालक डर जाता है तथा वायु का प्रकोप हो जाता है।

(४) छोटे बालक को जबतक उसमें बैठने की शक्ति न आ जाय तबतक उसको कदापि बैठाने का प्रयत्न न करना चाहिए, इससे कुबड़ा-पन होने का डर है।

(५) छोटे २ खिलौनों को पाकर अथवा जो वस्तु बालक के हाथ में आती है, स्वभावतः उसको वह मुख में डालता है, इसलिए उसके में हाथ

कोई ऐसी छोटी वस्तु न देनी चाहिए, जो गले के भीतर जा सके, इससे प्राण संकट उपस्थित होने का डर रहता है।

(६) बालक को मधुर वचनों से सदा प्यार करना और प्रिय वस्तु खिलौने आदि से प्रसन्न रखना चाहिये।

(७) बालक को निर्जन स्थान, ऊंची नीची जगह में, कुंआ, गड्ढा, तालाब, नदी के समीप सूने घर में, लता वृक्ष के नीचे न छोड़ना चाहिए। तीक्ष्ण वायु, घाम, बिजली, की चमक, अग्नि, पानी, धुआं, शीत और लू आदि से बचाना चाहिए।

(८) पलङ्ग वा गोदी जहां रहने से बालक को प्रसन्नता हो उसको उसी प्रकार रखना चाहिये, किन्तु जहां तक सम्भव हो पलङ्ग पर रखना श्रेष्ठ है, क्योंकि गोदी में अधिक रखने से बालक का उदर संकुचित होता है।

(९) हाथ पांव हिलाते रहने से बालक प्रसन्न रहता है और उसकी पाचन-शक्ति बढ़ती है। उसको पालने में लिटाकर हिलाते रहने से वह प्रसन्नता पूर्वक हाथ पैर चलाता हुआ राजी रहता है।

(१०) बालकों का श्रेष्ठ आहार माता का दूध है, यदि माता के स्तनों में दूध की न्यूनता हो तो दिन में कई बार थोड़ा २ गाय या बकरी का दूध पिलाना उत्तम है,

(११) यदि रबड़दार शीशी द्वारा बालक को दूध पिलाया जाये तो दूध पिलाने के अनन्तर हर बार शीशी को गरम जल से अच्छी तरह धो डालना चाहिये। शीशी गन्दी रहने से अनेक प्रकार के रोग उत्पन्न होजाते हैं।

(१२) यदि दूध पीनेवाला बालक ऐसे रोग में ग्रसित हो जाय, जिसमें उपवास करना अनिवार्य हो तो भी उसको लन्घन न करावे वरन धाय को हलका भोजन देकर पथ्य से रखना चाहिये।

(१३) दूध पीने वाले बालक के रोगी होने पर उसकी माता के स्तनों पर औषधियों का लेप करा कर सूख जाने पर धो डाले, फिर बालक को दुग्ध पान कराना चाहिये।

(१४) प्रायः स्त्रियां बालकों को चुप कराने के लिये भयानक जन्तुओं का नाम लेकर अथवा परछाहीं आदि दिखा कर डराती हैं। इससे बालक के डरपोक और रोगी होने का अन्देशा रहता है।

(१५) गृहकार्य के सुभीते के लिये कितनीही स्त्रियां बालकों को सुलाने के लिए अफीम का सेवन कराती हैं, जिससे वह नशे में सोया रहे, किन्तु उन की इस मूर्खता का बालक के स्वास्थ पर बहुत बुरा प्रभाव पड़ता है। मस्तिष्क बिगड़ जाता है। और अफारादि रोग घेर लेते हैं, जिससे उसका जीवन संकटमय हो जाता है।

बालक का वजन व आकार

उत्पन्न होते ही बालक की तौल ३ सेर से ३॥ सेर वा लम्बाई २५से ३० इंच तक होती है।

शिशु चर्या

इसके उपरान्त बालकों की शिशुचर्या के लिये यह बात याद रखनी चाहिये कि बालकों के सोने का कमरा साफ़ हवादार लम्बा चौड़ा होना चाहिए वर्षा ऋतु और सर्दी के मौसम में घर के दरवाजे

बन्द रखना चाहिए जिससे बच्चों को ठंड न लग जाय। जब तक बच्चे को बैठने और चलने की शक्ति न हो जाय तब तक उसको बैठालने और चलाने की कोशिश न करे।

बच्चों को औषधि देने के नियम

(क) जो बालक दूध पीता है उसकी दूध पिलाने वाली की दवा करें।

(ख) जो दूध भी पीता हो और अन्न भी खाता हो तो बालक और दूध पिलाने वाली दोनों को दवा देना चाहिए।

(ग) जो सिर्फ अन्न खाता हो तो केवल बालक को ही दवा देवें।

(घ) बालक को दवा की मात्रा खूब सोच समझ कर देनी चाहिए।

(ङ) जन्म से लेकर १ मास तक १ रत्ती, २ मास तक २ रत्ती, ३ माह तक ३ रत्ती, अर्थात १ वर्ष तक १२ रत्ती, १ वर्ष से ऊपर को १ माशे तक औषधि देने का नियम है। इस पर भी वैद्यों को बालक का बलाबल देख भाल कर औषधि की मात्रा देनी योग्य है, यदि रसादिक औषधियां देनी पड़ें तो उनकी मात्रा बहुत ही न्यून हो और बालक जिस अनुपान में खा सके उसी में दवा देना उचित है। यदि शास्त्रोक्त अनुपानों में न खा सके तो माता के दूध में देना अथवा उन औषधियों का लेप उचित मात्रा से माता के स्तनों पर करवा दें, इससे बालक औषधि आसानी से खा सकेंगे।

माता के दूधदेनेका समय और परिमाण तथा रीति

प्रथम दिन से लेकर तीन दिन तक पेऊआ (इसके बनाने की यह रीति है कि एक छोटे मिट्टी के बर्तन में अजवायन १ मासा, नीम के पत्ता १ नग, गुड़ एक तो० जल ४ तोला में गरम करें, जब ३॥ तोला जल शेष रह जाय तब उतार छानकर बच्चे को थोड़ा २ पिलावें।

कहीं २ उत्पन्न होते ही बालक को दूध देना प्रारम्भ कर देते हैं। यद्यपि ऊपर की रीति से बहुत लाभ होते देखा गया है, और दो तीन दिन के पश्चात जब माता को दूध उतर आवे, तबवह दूध ही देना चाहिये यदि प्रारम्भ से दूध ही देना पड़े तो गाय या बकरी का दूध लें बकरी के दूध में चौथाई, और गाय के दूध में आधा जल मिलाकर उसे अग्नि पर चढ़ादें जब जल जलजाय तब थोड़ी मिश्री मिलाकर निम्न लिखित रीति से पिलावें।

१—एक तोला दूध में १० बूंद चूना का निथरा हुवा जल मिलाकर दें।

२—यदि बच्चे का पेट फूला हुवा हो तो एक तोला सोंफ को दो छटांक पानी में औटावे और जब ३ तोला शेष रह जाय तब उतार छान इस क्वाथ की २० बूंद १ तोला दूध में डालकर पिलावें।

इस रीति से दूध पाचन भी हो जायेगा और बल भी करेगा। विशेषकर नीचे के कोष्ट के हिसाब से दूध देना चाहिये।

बच्चों को दूध पिलाने के समय-विभाग की तालिका

बालक की आयु	दूध देने का समय	१ बार की दूध की मात्रा	१ दिन की दूध की मात्रा
प्रथम सप्ताह	दो २ घंटे में	आधी छटांक	पांच छटांक
२ से ६ सप्ताह तक	अढ़ाई २ घंटे में	एक छटांक	६ से ८ छटांक तक
७ स० से ६ मास तक	तीन २ घंटे में	डेढ़ से दो छटांक तक	९ से १२ छटांक तक
६ से १० मास तक	साढ़े तीन २ घंटे में	२ से २॥ छटांक तक	१३ से २० छटांक तक
११ से १५ मास तक	चार २ घंटे में	२॥ से ३ छटांक तक	१४ से २२ छटांक तक

जो बच्चे वर्ष १॥ वर्ष के सवासेर वा १॥सेर तक दूध पीते हैं वह बड़े हृष्ट पुष्ट होते हैं। ऐसे बच्चों को दो वर्ष तक दूध ही पिलाना चाहिये। दूध आधा पानी डाल कर हल्का कर लेना चाहिए। यदि दूध से [illegible] होकर रोग उत्पन्न हो जाते हैं। ([illegible] गुनगुना [illegible]) देना चाहिए ठण्डा कभी नहीं पिलाना चाहिए और थोड़ा मीठा भी मिला लेना, बिना मीठे के दूध हजम नहीं होता। यदि शीशी से दूध पिलावे तो हर बार शीशी को गरम जल से धो लेना उचित है। बालक को जब रोवे तब ही दूध पिलाना ठीक नहीं क्योंकि अनियम से दूध पिलाने से बच्चों को कब्ज हो जाता है इसलिये बालक रुचि से जितना दूध पिये उतना ही नियम से पिलाना चाहिये।

जब बालक के चार २ दांत निकल आवें तब साबूदाना तथा अखरोट जल में पका कर या अखरोट का बिस्कुट देवें, यह केवल दो बार देना चाहिये बाकी समय में दूध ही पिलाना। जब छः या आठ दांत निकल आवें तब एक समय खिचड़ी या दाल चावल खिलाना और जब यह भली प्रकार पाचन हो जाय तब थोड़ी २ रोटी भी देना शुरू कर दें। निरे अन्न पर बच्चों को कभी न रक्खें, थोड़ा बहुत दूध ६ वर्ष की अवस्था तक अवश्य पिलाना चाहिए।

चार वर्ष से अधिक आयु वाले बालकों को दूध पीने का समय

प्रातःकाल दूध पीने से बल और अग्नि की वृद्धि होती है अतः प्रातःकाल जितना मिल सके बलाबल के अनुसार दूध अवश्य बालक को पिलाना।

तीसरे पहर चार बजे दूध पीने से भी बल और अग्नि की वृद्धि होती है। रात्रि को भोजन के [illegible] दूध पीने से अत्यन्त बल, आयु और बुद्धि की वृद्धि होती है।

नोट: यह नियम चार वर्ष की आयु से लेकर बाल, युवा और वृद्धों तक के लिये है। चार वर्ष से कम की आयु वालों को पीछे लिखे नियमानुसार दूध देना चाहिये।

तालु कण्टक (सूखिया मसान) रोग और उसकी अनुभूत चिकित्सा

(ले०—डा० व्यासदत्त शर्मा)

पर्याय—तालुकण्टक, सूखियामसान, मगरखी मुघण्टी, सुखवा, मिठवा, Marasmus सूखादि रोग कहते हैं।

तालुकण्टक रोग

तालुमांसे कफः क्रुद्धः कुरुते तालुकण्टकम्।
तेन तालु प्रदेशस्य निम्नता मूर्ध्नि जायते॥

तालु पाते स्तन द्वेषः कृच्छ्रात्पानं शकृद्द्रवम्।
तृषास्य कण्ठवक्त्रिकजा ग्रीवा दुर्धरतावमिः॥

विरुद्ध आहारादि और दूषित दूध के पीने से कफ कुपित होकर बालकों के तालु (खोपड़ी के नीचे का भाग दिमाग) में तालु कण्टक रोग उत्पन्न होता है। इससे तालु प्रदेश में नीचा गढ्ढा उत्पन्न होता है, स्तनपान से द्वेष अर्थात कठिनता से थोड़ा दूध पीता है। शरीर से रक्त मांस सूख कर केवल अस्थि-पिंजर रह जाता है, हरा, पीला तथा खुजरीदार दस्त आता है। प्यास बढ़ जाती है, मुख में खुजली वा निनवां होकर लाल हो जाता है और वमन होती है। आंख कण्ठ और मुख में दर्द और दूध की कै करना, और गरदन गिर पड़ना आदि लक्षण प्रकाशित होते हैं। इसको सूखिया-मसान वा मुघण्टी मुखवा और मिठवा सूखादि कहते हैं।

सुखवा (मुघण्टी रोग) की सरल परीक्षा

मगरखी वा मुघन्टी रोग की परीक्षा के लिये बालकों को प्रायः उनकी मातायें मक्खी मारकर खिलाती हैं, क्योंकि इस रोग में मक्खी खिलाने से वमन नहीं होता और अन्यथा वमन होकर वे तुरन्त बाहर निकल आती है। परन्तु इस घृणित परीक्षा से हानि की सम्भावना रहती है। उसकी परीक्षा का सरल उपाय यह है, कि रोगी बालक के तालु के गड्ढे में डेढ़ दो मासे गुड़ का एक टुकड़ा रख कर इसको गेहूं के आटे की टिकरी से दबा कर वस्त्र से बांध दे और तीन चार घंटे के बाद खोल कर देखने से साफ पता चल जाता है कि इसको तालुकण्टक रोग है या नहीं! यदि रोग होगा तो गुड़ उड़ जायेगा और यदि रोग न होगा तो गुड़ ज्यों का त्यों बना रहेगा। दूसरी परीक्षा इस प्रकार से करनी चाहिए कि मुरगी के अन्डे का पानी एक कढ़ाईनुमा छिछली पियाली में डाल उस पर बालक को बैठा दें, यदि सुखवा रोग होगा तो गुदा मार्ग से वह अन्डे का पानी खिंच कर शिशु के पेट में चला जायगा, यदि रोग न होगा तो पानी ज्यों का त्यों बना रहेगा।

यह सुघण्टी रोग की उत्तम औषधि है। जब तक शरीर में रोग का अंश शेष रहेगा तबतक प्रति दिन अण्डे का पानी सूखता जायेगा और रोग मुक्त होने पर पानी का सूखना बन्द हो जायेगा। प्रत्येक दिन प्रातःकाल एक वा दो अण्डे का पानी सुखाना यथेष्ट है।

सूखा रोग की चिकित्सा

१—सुच्चे मोती, वंश लोचन, कछुए की सूखी खोपड़ी, सफेद इलायची के दाने एक २ माशा ले दो तोला गुलाब के अर्क में पीस मूंग की बराबर गोली बना एक एक गोली चार चार घंटे में ताजे जल से दें।

२—लेप—कछुए की खोपड़ी ३ माशा, केशर, अफीम एक २ माशा ले २॥ तोला तिल्ली के तैल में आग पर जलावें फिर छान कर सब शरीर पर मलें।

३—बच्चों के सूखा मसान आदि सब रोगों पर कब्ज और बदहजमी को दूर करने वाली महौषिः—

सुच्चे मोती चार रत्ती, जहरमोहरा असली ६ मा०, पत्थर वेर ६ माशा, दरियाई नारियल ६ मा०, काबुली पीलीहड़ ६ मा०, मगज कमल गट्टा ६ मा०, वंशलोचन ६ मा०, छोटी इलायची के दाने ६ मा०, जदरू ६ मा० कपड़ छान कर अर्क गुलाब में खरल करके मूंग समान गोली बनाकर एक गोली प्रातः सायं मां के दूध या अर्क गुलाब में दें। यह अनुभूत योग है।

४—बच्चों के ज्वर सूखादि सब रोगों पर:—

कटैया के फूल की केशर, असगंध, जायफल, केशर, लौंग, बड़ी पीपल, मदार की जड़, प्रत्येक एक २ आना भर हरबक की जड़ ११ रुपया भर अदरक चार। रुपया भर, सैंजने की छाल आठ आना भर, गूदा खंभार सफेद दो आना भर तीनों नमक तीन तोला, इन सब औषधियों को कूट छान कर अदरक के रस में घोट गोला बना ६ बंगला पान में लपेट ऊपर से भीगा कपड़ा या मिट्टी चढ़ाकर मन्द अग्नि में पका कर मूंग बराबर गोली बनाकर प्रातः सायं १-१ गोली देने से बच्चों के ज्वर सूखा आदि रोग अच्छे होते हैं।

५—शास्त्रोक्त महामारिचादि तैल सुघंटी (सूखा रोग पर:—

यह रामबाण सिद्ध हुवा है. इस तैल के १५ दिन मालिश करने से सूखा रोग में आशाजनक लाभ होते देखा गया है इसकी मालिश एक मास पर्यन्त करनी चाहिये। महा मारिचादि तैल का योगभाव प्रकाशादि में देख कर बनालें।

सूखा रोग के अन्यान्य योग

(६) हींग एक सरसों के दाने बराबर अदरक का रस, तुलसी पत्र का रस, भैंस के गोबर का रस, और मधु चार २ बूंद प्रति दिन प्रातः सायं काल एक मास पर्यन्त चटाने से निस्सन्देह सूखा रोग का नाश हो जाता है। यह योग अनुभूत है इसके साथ निम्नस्थ "बालमृत-वटी" का भी सेवन कराने से सूखा रोग से ग्रस्त मरणासन्न सैकड़ों बालकों ने आरोग्य लाभ प्राप्त किया है।

(७) बालामृतवटी—कपूर, केशर, छोटी इलायची का दाना, और जावित्री तीन २ माशे। इन्द्रयव, कुरैया की छाल, खस, जहरमोहरा खताई जायफल, पीपल, मुलहठी और रूमीमस्तगी छः छः माशे। अतीस, अनार की कली, काकड़ासिंगी धनियां, नागर मोथा, बबूर का गोंद, बेलगिरी, बंशलोचन, सुगन्धवाला और सौंठ एक २ तोला। सब का चूर्ण करके एक घड़ी अर्क गुलाब के साथ खरल में घोट कर उड़द बराबर गोली बना छाया में सुखालें। यह बटी अनुपान भेद से सेवन कराने से बालकों का ज्वर, खांसी श्वास, वमन और ग्रहणी आराम होते हैं।

इस रोग में नारायण तैल बालक के सर्वाङ्ग में मर्दन करना लाभकारी है। सरसों का उबटना न करावें, केवल तैल का मलना श्रेष्ठ है। सुघण्टी रोग विलम्ब से छूटता है इसलिये दो चार दिन औषधि खिलाने से कोई विशेष लाभ नहीं प्रगट होता। इक्कीस दिन के उपरान्त आरोग्य होने तक औषधियों का सेवन कराना आवश्यक है। अधिक बढ़े हुए रोग में तैलाभ्यंग, प्रलेप और खाने की औषधियों का साथ ही प्रयोग करना चाहिये। रोग की आरम्भिक अवस्था में किसी भी खाने वाली औषधियों के सेवन कराने से पूर्ण लाभ होता है।

सिंह शिशु

(ले० श्री इन्दिरा देवी जी शास्त्रिणी वैद्या, आयुर्वेदमणि, लखनऊ।)

हम वीर पत्नी, वीर माता, वीरता की खान थीं।
वीर प्रसू हम मातृ भू की, इक अनोखी शान थीं॥
सिंह शावक संग में, शिशु थे हमारे खेलते।
वे वीरवर वीरव्रती थे, मृत्यु को भी ठेलते॥ १॥

* * * *

स्वातन्त्र्य के सौभाग्य का था सूर्य मस्तक पर चढ़ा।
था विश्व विजयी भव्यभारत विश्व में सब से बड़ा॥
हम शक्तियों का शक्ति का, अब वह खजाना है कहां।
वे सिंह शिशु सोये कहां, वह वह वीरबाना है कहां॥२॥

[illegible] शास्त्री,
[illegible] आयुर्वेदिक
[illegible]

वैद्यरत्न पं० ओंकारप्रसाद शर्मा भिषक् शास्त्री आयुर्वेद विशारद, प्रधान चिकित्सक, श्री मारवाड़ी औषधालय देहली

मातृदुग्ध और शिशु स्वास्थ्य

(लेखक—पं० भगवद्देव शर्मा आयुर्वेदाचार्य, सम्पादक)

प्रकृति देवी ने मनुष्यको उत्पन्न करने के साथ ही उसके भोजन दुग्ध को भी उत्पन्न किया है। इससे यह सिद्ध है कि बच्चों की सर्व श्रेष्ठ प्रधान खूराक मातृ दुग्ध है। हमारे प्राचीन आचार्यों ने इस बात को बड़े जोरदार शब्दों में कहा है कि—**मातुरेव पिबेत्स्तन्यं तत्परं देहवृद्धये।** अर्थात माता का दूध ही बच्चों की पुष्टि के लिये सर्वश्रेष्ठ अनुपम खूराक है, जगन्नियन्ता परमात्माने बच्चे के पालन पोषण का प्रधान आधार उसकी माता के ऊपर ही पैदा किया है अर्थात उन की माताओं के स्तन में अमृतरूप दुग्ध का झरना रक्खा है, जब तक यह कुदरती झरना चलता रहता है, तब तक उसे छोड़कर किसी भी कृत्रिम पदार्थ की शिशु के लिये आवश्यकता नहीं रहती। परन्तु बाहरी सभ्यता तेरी भी विचित्र लीला है जहां जीवन के अन्यसाधनों में फैशन की बाढ़ आई वहां बेचारे इन अबोध पराधीन शिशुओं को भी तूने नहीं छोड़ा, उनको उनकी प्रकृतिदत्त गिजा मातृ दूध से छुड़ाकर अनेक प्रकृति विरुद्ध बनावटी भोजनों से सदा के लिये उनको कमजोर कर दिया। आजकल प्रायः प्रथम तो प्रसूताओं की छाती में दूध ही नहीं रहता, जिनके होता है वे मुंह में स्तन देना भी सभ्यता के विरुद्ध समझती हैं। ये अपने बच्चों को गाय, बकरी अथवा विलायती दूध देकर पालती हैं। प्रत्येक समझदार माता पिता जान सकते हैं कि कृत्रिम खूराक पर बच्चों का पालन करना किस प्रकार विष देने के समान है, क्योंकि जितने बच्चे मरते हैं उनमें से अधिक प्रायः आहार के दोष से ही मरते हैं। इसलिये यदि मातायें यह जानलें कि बच्चों का पालन किस प्रकार करना चाहिये, वे स्वस्थ किस तरह रह सकते हैं, तथा उनको छाती में दूध किस तरह यथेष्ट पैदा हो सकता है, और इन कृत्रिम खूराकों से क्या २ हानि होती है, तो अवश्य ही हमारे देश के बच्चों की मृत्युसंख्यामें भारी कमी होकर देश में सुख शांति विराजमान हो सकती है।

ऐसी कौनसी माता होगी जोकि अपने बच्चे को स्वस्थ, सबल और बुद्धिमान् देखने की कामना न करती हो परन्तु केवल कामना करने से ही क्या होता है जब तक कि उसके लिये उचित प्रबन्ध न किया जाये। बालक का जैसा पालन पोषण होगा वह वैसा ही बनेगा, बीज या पौदा जिस प्रकार से सींचा जायेगा उसका वैसा ही वृक्ष तैयार होगा। क्या हम ईश्वर प्रदत्त आहार न कराकर बालक को स्वस्थ व सुखी बना सकते हैं? यदि हम ऐसा समझते हैं तो हमारा भारी भ्रम है। निर्बल व रोगी बच्चोंको जन्म देकर क्या मातापिता उनसे सुख की आशा कर सकते हैं? कभी नहीं। जब हम अपने देश के बच्चों की दशा देखते हैं तो हृदय कांप उठता है। भावष्य भयानक दीख-

पड़ता है। क्योंकि बाल्यकाल में ही उचित आहार न मिलने से मनुष्य निर्बल और दुबले पतले दीख पड़ते हैं। भोजन मे जो हड्डियों को बलवान् पुष्ट और बढ़ानेवाले उपादान होने चाहियें, उनके न होने से ही वे निर्बल और बेकार होकर बढ़ती हैं और शरीर का बोझ ठीक न संभाल सकने के कारण वे टेढ़ीमेढ़ी हो जाती हैं। जिसके फलस्वरूप बच्चों में अस्थि विकृति तथा अन्यान्य घोर व्याधियां पैदा हो जाती हैं। यह बात ध्यान में रखनी चाहिए कि प्राणी मात्र के भिन्न २ शरीरों में उनकी प्रकृति के अनुसार एक प्रकार की अलग२ विशेषता देखने मे आती है इस लिये भिन्न २ बालकों के लिए स्वाभाविक आहार भी भिन्न २ ही होने चाहियें। जैसे एक प्रकार की भूमि के वृक्ष दूसरे प्रकार की भूमि में जैसे होने चाहियें वैसे उत्तम नहीं पैदा होते। इसी प्रकार शिशु के लिये जितना उसकी माता का दूध प्रकृति के अनुकूल हो सकता है, उतनी ये बनावटी गिजायें नहीं हो सकतीं।

सम्भव है कि बालक को ये कृत्रिम दूध जैसे कन डैस्ड मिल्क (Condensedmilk) अथवा Dried milk ड्राइड मिल्क अथवा अनेक प्रकार के विलायती दुग्ध जो कि बच्चों को दिए जाते है, उनसे प्रारम्भ में कोई खराबी दिखलाई न देवे, परन्तु कुछ दिनों के बाद इनसे पोषित बच्चों मे बदहजमी तथा एक प्रकार की खाज स्कर्वी Scervey और भी अनेक बीमारियां पैदा होजाती हैं। इस विषय में डाक्टर चिड्ले का कहना है कि मैनचिस्टर नगर में बालकों की प्रदर्शनी हुई थी इसमें जिस बालक को सब से मोटा, ताजा और तोल मे भारी होने के कारण इनाम मिला था वही बच्चा मेरे पास ग्रेट आमन्डस्ट्रीट के औषधालय मे हाथ पैरों की बक्रता (अस्थि विकृति) का चिकित्सा कराने आया, इसकी मांस पेशियां भी दुर्बल थीं। यह बच्चा केवल कनडैस्ट मिल्क व कार्न फ्लावर नाम की बनी हुई बाजारू चीजों से पला था। बच्चों की प्रकृति के अनुकूल आहार की मात्रा जानने के लिये यह भी देखना जरूरी है, कि उसका शरीर अच्छी तरह पुष्ट होता है या नहीं, साथ २ उसकी पाचन शक्ति भी बढ़ती है या नहीं। इन सब बातों के लिये माता का ही दूध सब से अच्छा हो सकता है, मा की छाती मे बच्चे के जन्म के साथ २ दूध आजाता है, फिर ज्यों २ बच्चा बढ़ता चला जाता है, उसी प्रकार माता के दूध मे भी परिवर्तन होता जाता है। इस परिवर्तन के साथ २ धीरे २ बच्चे की पाचनशक्ति भी बढ़ती जाती है। पैदा होते ही बच्चे के लिये उसके अनुकूल भोजन देना बहुत कठिन काम है, क्योंकि प्रारम्भ के तीन दिनों मे माता के स्तनों में दूध नहीं उतरता, ऐसी अवस्था मे अनेक बार प्रसूताएं व दाइयां बच्चों को अज्ञानतावश साधारण दूध पिला देती हैं जिनसे बच्चों को बहुत कष्ट भोगना पड़ता है, ऐसी अवस्था मे थोड़ा थोड़ा शहद और घी मिलाकर दिन में तीन बार दे सकते हैं, अथवा उबला हुआ शुद्ध जल ठंडा करके थोड़ी सी चीनी के साथ १-१ चम्चा दिन में तीन ४ बार दे सकते हैं इसके बाद बच्चे को दूध पिलाना अत्यन्त आवश्यक है, इससे माता की छाती में उत्तेजना होती है जिससे गर्भाशय

सिकुड़ता है, और बच्चे को इस थोड़े से पेवस दूध के मिलने से उसकी आंतों के आकुंचन प्रसारण में वृद्धि होती है जिससे कि ४ या ५ विरेचन होकर आंतोंकी शुद्धि होजाती है। बालक की पुष्टि और स्वास्थ्य के लिये जो पदार्थ जरूरी हैं वे सब माता के दूध में होते हैं।

माता का दूध और उसके अवयव

मातृ दुग्ध में इन द्रव्यों की इतनी आवश्यकता है कि यदि इनमें से कोई एक भी कम होजावे तो बच्चे की प्रकृति बिगड़ जाती है। इनमें सब से ज्यादह आमिष जातीय (मांस जातीय) भोजन ही सब से अधिक आवश्यक है, उससे कम स्नेह जातीय और उससे कम शर्करा, उससे कम लवण जातीय फिर अन्य अनेक चीजें होनी आवश्यक हैं। शरीर तत्त्व विद्या के अनुसार बच्चों को आहार देते समय याद रक्खें कि उसमें सब वस्तुएं उसी परिमाण में मौजूद हैं या नहीं जितनी कि होनी चाहियें। यदि उस परिमाण में अन्तर हो जावेगा तो उसका परिणाम बहुत बुरा होगा क्योंकि माता के दूध में उपरोक्त सब उपादानों के ठीक २ मात्रा में मौजूद होने से ही बच्चों की पुष्टि और वृद्धि उत्तम हो सकती है।

मातृ दुग्ध पान

मनुष्य के अतिरिक्त अन्य प्राणियों में विवेक बुद्धि न होने पर भी वे अपनी स्वाभाविक इच्छा तथा प्रेम से ही अपनी सन्तान का पालन भली प्रकार करते हैं, परन्तु नवीन सभ्यता, स्नेह, ममता आदि से स्त्रियों की स्वाभाविक इच्छायें बदल गई हैं जिसके कारण अनेक मातायें अपने बच्चों को लाभ के बदले अपनी अज्ञानता से हानि पहुंचा देती हैं। अनेक प्रसूतायें अपने बच्चे को मनमाने तौर पर दूध पिला देती हैं जहां उन्होंने देखा कि बच्चा रोया झट उन्होंने उसके मुंह में स्तन लगा दिया। बालक भूख से रो रहा है या उसे कोई तकलीफ है इस बात पर वे जरा भी ध्यान नहीं करतीं। बालक को बिना क्रम या जब जब वह रोवे झट दुग्ध पिला देना बड़ी भारी नादानी है, क्योंकि नवजात शिशु का पक्वाशय इस योग्य नहीं होता कि वह इतनी जल्दी दुग्ध हजम कर सके इसलिये वे दुग्ध गेरने लगते हैं, मन्दाग्नि होकर हरे, पीले दस्त आने लगते हैं, जिगर बढ़ जाता है जिससे बच्चा दुर्बल और कमजोर हो जाता है।

दुग्धपान का नियत समय

माता को चाहिये कि बच्चे को नियमपूर्वक दूध पिलाने की आदत डाले अगर ठीक २ समय के अन्तर से दूध पिलाया जावे तो हाजमा बहुत ही अच्छा हो जाता है और बच्चा भी ठीक उसी समय में दूध के लिये रोवेगा, फिर दूध पीने के बाद वह आनन्दपूर्वक खेलता रहेगा जिससे माता अपने अन्य गृहकार्यों को भी अच्छी प्रकार कर सकेगी और बच्चे का शरीर भी स्वस्थ रहसकेगा, दूध पिलाने की ही खराबी से प्रति वर्ष कितने ही बालक मौत के मुंह में चले जाते हैं। और अनेकों को बदहजमी तथा पेट के अन्य रोग भी हो जाते हैं, जब २ बालक रोये तब २ उसे दूध पिलाने की रीति अच्छी नहीं क्योंकि इससे बालक की आदत भी बिगड़ती है। जल्दी जल्दी दूध पिलाने से दूधमें आमिष जातीय पदार्थ की अधि-

कता हो जाती है जिससे बच्चे के पेट में खराबी हो जाती है, छाती का दूध बच्चे के पाकाशय में १॥ घण्टे में हज़म होता है और आध घण्टे पाकस्थली को आराम भी देना चाहिये, इस तरह पर दो घण्टे के बाद बच्चे को दूध पिलाना उचित है फिर धीरे २ बच्चे की अवस्था बढ़ने के साथ २ आहार का परिमाण भी बढ़ता जाता है इसलिये ज्यों २ उमर बढ़े वैसे २ अधिक समय का अन्तर देकर दूध पिलाना चाहिये क्योंकि फिर एक बार ही बच्चा पर्याप्त मात्रा में दूध पीलेता है, इसलिये एक बार दूध पिलाकर फिर एक घण्टे बाद जब और बड़ा होवे तब अढ़ाई घंटे बाद फिर तीन घंटे बाद इस तरह दुग्ध पिलाना चाहिये। एक बार कितना दुग्ध बच्चे कोपीना चाहिये इसकी निश्चित मात्रा नहीं बताई जासकती। बस इतना ही समझना चाहिये कि बच्चा पर्याप्त मात्रा में दूध पीने के बाद स्तन को स्वयं ही छोड़ देता है, यदि वह अधिक दूध पी जावे तो डाल भी देगा। स्तन से भी एक छटांक दूध खींचने में सब बच्चों को बराबर समय नहीं लगता। कोई २ जल्दी खींचलेता है और कोई देर में, ज्यों २ बच्चे की आयु बढ़ती है वैसे २ उसकीदूध खींचने की शक्ति भी बढ़ती है, यदि दूध बालक को कम मिलता हो स्तन ठीक न खिंचता हो तो चाहिए, कि दूध पिलाने के पहले छाती को कुछ दबा कर मुलायम करले और दूध पिलाते समय भी स्तन को माता दाबती रहे तो दुग्ध ठीक निकलता रहेगा। अनेक वैज्ञानिकों और ग्रन्थकारों ने इसबात का परिमाण नियत किया है कि किस उम्र का बालक स्तनमें से कितना दुग्ध खींच सकता है। इन लोगों ने दुग्ध पिलाने से पहले और पीछे बच्चे का सही वज़न करके यह निम्नलिखित परिमाण स्थिर किया है।

अवस्थानुसार बच्चों को कितनी बार और कितना दूध देना चाहिये।

बालक की उमर	प्रथम दिन	दूसरा दिन	तीसरे दिन से १४ दिन तक	१५ दिन से ३० दिन तक	दूसरा मास	तीसरा मास	चौथे मास से छठे मास तक	छठे से नवें मास तक
एक बार की मात्रा	¼-½ औंस	½-¾ औंस	¾-1 औंस	1-1¾ औंस	2-3 औंस	3-3½ औंस	4-5 औंस	5-6 औंस
कितने बार दूध पिलाना चाहिये	10	10	10	10	8	8	7	6
दिन रात में दूध पीने का मोटा परिणाम	2½-5 औंस	5-7½ औंस	7½-10 औंस	10-17½ औंस	16-24 औंस	24-30 औंस	28-35 औंस	30-37 औंस

सामान्यतया ऊपर लिखित तालिका के अनुसार बच्चों को दूध पिलाने से वे स्वस्थ मोटे ताज़े रहते हैं, परन्तु सम्भव है किन्हीं कमजोर व अधिक सबल शिशुओं पर यह नियम न लग सके परन्तु फिर भी ऊपर लिखी तालिका का पालन कराना शिशुओं के लिये अत्यन्त लाभप्रद सिद्ध होगा।

स्तन पान कराने की विधि

वास्तव में माता के स्तन पान बिना शिशु का ठीक ठीक पालन पोषण नहीं हो सकता, जिस समय शिशु अपने हाथों से स्तन पकड़ कर दूध पीता है तो मानो वह समझता है कि भगवान ने यह स्तन रूपी अमृतकलश तेरे लिये प्रदान किये हैं। और यही तुम्हारी प्राण रक्षा के लिए अनन्य साधन है।



Taken from "Swasthya and Rog" By the Kind Permission of Dr. Trilokinath Varma Civil Surgeon.

यदि माता की तन्दुरुस्ती इस योग्य हो कि वह बच्चे को स्तनपान करा सके तो धाय या अन्य ऊपर के दूध को कभी नहीं पिलाना चाहिए। परन्तु कभी २ ऐसा भी देखा गया है कि बच्चे माता और धाय दोनों के दूध को पीते हैं। यह बहुत बड़ी ग़लती है इससे बच्चे की प्रकृति ठीक नहीं रहती।

माता को चाहिये कि वह बच्चे को गोद में लेकर दूध पिलावे, उस के मुंह के ऊपर एक दम स्तनों को न छोड़ कर अपने हाथ से संभाल कर धीरे २ होशियारी से बालक को दूध पिलावें, क्योंकि यदि बिना अपने हाथ से संभाले बच्चे को दूध पिलाया जावे तो रुका हुआ दूध माता की छाती में एक दम उत्तेजना पैदा करके बाहर निकल पड़ता है इस से कभी २ बालक का मुंह दूध से भर कर उस के नथनों में चला जाता है जिस से कि उसका श्वास रुक कर वह घबरा जायेगा। एकदम स्तनों को बच्चे के ऊपर लादने से दूसरी यह भी ख़राबी हो जाती है कि बच्चे की नाक पर दबाव पड़ता है इस अवस्था में सब अङ्ग प्रत्यंगों के कोमल होने से उसकी नाक के चपटी हो जाने का डर है। यदि माता एक ही स्तन से बच्चे को दूध पिलाया करे तो दूसरे स्तन में अधिक दूध आकर वह तना करेगा जिस से स्तनों में पीड़ा हो जाती है, और बच्चा भी एक ही करवट देर तक पड़ा रहने से दुःखी होजाता है। एक बड़ी ख़राबी यह होगी कि एक तरफ का स्तन पीते रहने से वह उसी तरफ देखता रहेगा जिस से की आंखें टेढ़ी हो जायेंगी और वह भैंडा हो जायेगा एक बार में बच्चा लगभग १५ मिन्ट तक दूध पीता है इतने

ा हो जाती है

समय में वह इतना दूध पी लेता है जो कि उसकी उदरपूर्ति के लिये काफ़ी होता है यदि इस से अधिक देर तक वह दूध पीता रहे तो समझना चाहिये कि माता के दूध में पौष्टिक द्रव्यों की न्यूनता है। बच्चे को जब दाहिने स्तन से दूध पिलावे तब दाहिनी करवट और जब बायें स्तनसे दूध पिलावे तब बाईं करवट माता को लेटना चाहिये अर्थात बच्चे का सिर माता की उसी बाजू पर रहना चाहिये जिस करवट वह सोती हुई हो और फिर आहिस्ते से दूसरे हाथ से स्तन को पकड़ कर बच्चे के मुंह में देवे जिस से उसका बोझ बच्चे के मुंह और नाक पर न पड़े। यदि बालक दूध पीते २ सो जावे तो उसे उठाने की आवश्यकता नहीं इसे सोने देना चाहिये और कुछ देर बाद स्तन को धीरे से हटा लेने पर उसके जागने का डर नहीं रहता, नहीं तो एकदम स्तन हटाने से बच्चा जाग कर फिर दूध पीने लगता है. दूध पीने के बाद बच्चे को प्यार न करें क्यों कि प्राय: वह सो जाता है फिर दूसरी बार दूध पीने के समय ही वह जागता है यदि पहिले जाग भी उठे तो वह रोता नहीं बल्कि चुप चाप पड़ा रहता है. ठीक समय पर दूध पिलाने से माता और बच्चा दोनों ही झंझट से बचजाते हैं ऐसी आदत डालना शिशु और माता दोनों के लिये ही हितकर है कभी २ बच्चा दूध पीने के एक घन्टा बाद रोने लगता है, उस समय माताएं समझती हैं कि वह भूख से रोता है इसलिए उसे जैसे तैसे दूध पिलाने की व्यर्थ चेष्टा करती हैं। बच्चों का कुसमय एकदम रोना उनके भूखे होने का लक्षण नहीं है, इस का कारण बच्चे के पेट में दर्द का होना है. और उस दर्द का कारण विकृत दूध का पीना है। स्नायविक (Nervous-नर्वस) थकावट मानसिक उत्तेजना, क्रोध, चिड़चिड़ाहट इत्यादि से माता का दूध विकृत हो जाता है, इसी प्रकार यदि माता के दूध में केसिन या मक्खन की मात्रा अधिक हो जाये तो बच्चे के पेट में दर्द होना संभव है, दर्द के बाद सरसों का तेल गर्म करके पेट पर मल देने से बड़ा लाभ पहुंचता है। अनियमित समय में बार २ दूध पिलाने से भी माता का दूध गाढ़ा हो कर बच्चे की पाचनशक्ति बहुत खराब हो जाती है। दूध पिलाने के साधन यद्यपि अनेक हैं परन्तु साधारणतया आज कल रबड़दार नाली वाली कांच की शीशी, स्तन द्वारा रुई या फोहे द्वारा दूध पिलाते हैं। इन में स्तन-पान सर्व श्रेष्ठ है, परन्तु ऊपर का दूध पिलाने के लिये कांच की शीशी का इस्तेमाल भी बहुत अच्छा है, क्योंकि एक तो उससे दूध पीते समय बच्चा यह ही समझता है, कि मैं माता के स्तन से ही दूध पी रहा हूं, दूसरे अपनी इच्छानुसार आसानी से जितना चाहता है दूध पीलेता है वह रोता भी नहीं है, परन्तु दूध पिलाने के बाद उसे गरम जल से खूब अच्छी तरह साफ़ करलेना चाहिये। यदि यह साफ़ न की जावे तो इस साधारणसी बात से बड़ा भारी नुकसान पहुंचता है। कटोरी या रुई के फोहे द्वारा दूध पिलाने का तरीका अच्छा नहीं है, क्योंकि इससे शिशु दूसरे के हाथ से दूध पीने के कारण या तो वह भूखा रह जायगा या ज्यादह दूध पीजावेगा, और यदि दूध सावधानी पूर्वकन पिलाया जावे तो बच्चे के नाक में भी गिर कर उसे धसका आ सकता है।

स्वच्छता

जिस प्रकार बड़े आदमी के लिये बिना हाथ मुंह धोये भोजन करना अत्यन्त हानिकारक है, वैसे ही बिना स्तन धोये बच्चे को दूध पिलाना अत्यन्त आपत्तिजनक है। शिशु को दूध पिलाने के पीछे और पहले दोनों बार स्तनों को शुद्ध जल से अच्छी प्रकार धो डालना चाहिये। अज्ञान माताओं के इस क्रिया की उपयोगिता को न समझने के कारण शिशु को बहुत से भयंकर रोगों का सामना करना पड़ता है। ऐसी बहुत कम स्त्रियां हैं जिनको यह मालूम होगा कि वायु में अनेक प्रकार के छोटे २ असंख्य कीड़े मौजूद हैं, जिनको हम अपने इन नेत्रों से तो क्या अणुवीक्षण यंत्र की सहायता से भी बहुतों को नहीं देख सकते, उनमें से कुछ अच्छे और कुछ बुरे भी होते हैं। वे हर समय हमारे खाद्यपदार्थों को खराब करने की घात में लगे रहते हैं, दूध को खट्टा करना ताड़ी को मद्य के रूप में परिणत कर देना, ईख के रस या गुड़ को सिरके का रूप दे देना, पके हुए फल तथा मृत पशुओं को सड़ाना यह इन्हीं कीड़ों का कार्य है। बच्चे के स्तनपान करने के बाद माता के स्तन पर दूध का कुछ उच्छिष्ट भाग तथा बच्चे के मुंह की लार लगी रह जाती है, फिर वायु में घूमने वाले कीड़े बैठकर माता के स्तनको विषाक्त कर देते हैं, यदि स्तन धो नहीं दिया जाय तो कीड़ों का वह विष स्तनों में लगा रहेगा, और जब बच्चा दूध पीयेगा तब पहली घूंट वह इन विषैले द्रव्यों को दूध के साथ पी जाता है। इसके अलावा बच्चे की लार से स्तनों के भीगने से फिर उस पर कपड़ों के स्पर्श से प्रति दिन थोड़ा २ मल इकट्ठा होता रहता है जो कि दूध पीने के साथ २ शिशुओं के पेट में उतर कर अनेक रोगों को उत्पन्न करता है। परन्तु अज्ञानवश मातायें इन बातों पर ध्यान नहीं देती, इसीलिये बच्चों को दूध पिलाने के पहले स्तनों का धोना अत्यन्त ही जरूरी है। कोई २ डाक्टर कहते हैं कि बोरिक लोशन (Boriclotion) से भी स्तनों को धोते रहना चाहिये। दूध पिलाने के बाद बच्चे का मुंह भी पानी से अच्छी तरह साफ कर देना चाहिये यदि उसका मुंह दूध से भीगा हुवा ही छोड़ दिया जावेगा तो भी मक्खियां बैठ कर वहां पर विष पैदा कर देती हैं। चींटी भी लग सकती हैं। कभी कभी तो बिल्ली, कुत्ता वगैरह भी बच्चे का मुंह चाट जाते हैं। माता को चाहिये कि रोते हुए बच्चे को दूध कभी न पिलावे क्योंकि बोलते समय और रोते समय श्वास नली का मार्ग जोकि अन्न प्रणाली से बिल्कुल मिला हुवा होता है खुल जाता है ऐसी अवस्था में दूध श्वास नली में पहुंच कर बच्चे के दम घुटने का अन्देशा रहता है।

स्तनपान न कराने से माता को हानि

जो माता जान बूझकर अपनी प्यारी सन्तान को हृदय से लगा कर दूध नहीं पिलाती वह वास्तव में जननी नहीं घातिनी है। बच्चे का पालन पोषण जिस प्यार से माता कर सकती है उस तरह और कोई संसार में नहीं कर सकता। माता साक्षात् स्नेह की देवता अनन्त प्रेम और अनुपम उपकार की मूर्त्ति है उसके दूध के बिना

सन्तान की शारीरिक मानसिक उन्नति हो ही नहीं सकती। आजकल अनेक स्त्रियां नूतन सभ्यता में पड़ कर केवल फ़ैशन के कारण ही अपने बच्चों को दूध नहीं पिलाती। वे यह समझती हैं कि दूध पिलाने से हमारा स्वास्थ्य खराब हो जायेगा। और स्तन ढीले पड़ कर कुरूपता आजायेगी, परन्तु इन फैशन पसंद स्त्रियों को यह बात अच्छी तरह याद रखनी चाहिये कि जिस प्रकार दूध न पिलाने का दुष्परिणाम बच्चे को भोगना पड़ता है, उसी प्रकार मातायें भी उस हानि से बच नहीं सकतीं। यदि प्रसूता अपने स्तनों का दूध बच्चे को नहीं पिलाती तो उसके फिर से गर्भवती होने की आशंका रहती है, इस प्रकार जल्दी २ गर्भवती होने से वह कमजोर हो जायेगी, और गर्भस्थ शिशु के पालन पोषण के लिये जितना बल उसके शरीर में होना चाहिये उतना नहीं रहने से सन्तान भी दुर्बल पैदा होगी, इसलिये वह शीघ्र पुनः पुनः बच्चा जनने के कष्ट से भी बच जाती है। इसी प्रकार बच्चे को माता के दूध न पिलाने से माता का उस पर प्यार कम होजाता है ऐसी हालत में बच्चे का भी माता पर कम प्यार होना स्वभाविक है। जिस घर में माता का प्रेम सन्तान पर और सन्तान की भक्ति माता पर कम हो जावे उस घर में सुख शांति नहीं रह सकती। सन्तान को दूध पिलाने से प्रथम तो माता अपने बच्चे को दिन प्रतिदिन मोटा ताजा होते देखकर प्रसन्न होती रहती है, इस पवित्र प्रेम और प्रसन्नता के कारण माता का दूध बच्चे की पुष्टि में अत्यन्त सहायवान होता है। वास्तव में बच्चे को दूध पिलाने से माता का शरीर दुर्बल नहीं होता बल्कि मजबूत होता है। इसमें उनको भविष्य में छाती की बीमारी भी नहीं होगी। जो मातायें प्रकृति के इस नियम का उल्लंघन करती हैं उनके स्तन फूल जाते हैं उनमें पीड़ा होने लगती है।

शुद्ध दुग्ध परीक्षा

प्राचीन आचार्यों ने शुद्ध निर्विकार, बच्चे की प्रकृति के अनुकूल मातृदुग्ध के विषय में लिखा है:—

नीरेस्तन्यं यदेक्षीस्यादविवर्णमतन्तुमत्।
पाण्डुरं तनु शीतंच तद्दुग्धं शुद्धमादिशेत्॥

अर्थात्—माता का दुग्ध यदि पानी में डालने से उसमें मिल जावे, तार न छोड़े और किसी प्रकार का रंग न देवे, पतला, शीतल हो तो उसे अच्छा दूध समझना चाहिये।

साधारणतया दूध लेने के बाद बच्चे को तृप्ति हो जावे दूध को न उल्टे, उसे किसी प्रकार की अशान्ति या बेचैनी, पेट में दर्द, अफारा वगैरा न हो, पखाना साफ हो इन लक्षणों से हम कह सकते हैं कि वह दूध माता का बच्चे के लिये हितकारी है।

दूध के दूषित होने के कारण

विरुद्धाहार भुक्तायाः क्षुधितायाः विचेतसः।
प्रदुष्टधातोः गर्भिण्या स्तन्यंरोगकरं शिशोः॥

अर्थात् विरुद्ध भोजन करने वाली, भूख से पीड़ित, खराब चित्त वाली, दूषित धातु वाली, और गर्भिणी स्त्री के दूध पीने से शिशु के रोग पैदा हो जाते हैं॥ वास्तव में माता के भोजन, रहन सहन, मानसिक विचारों का प्रभाव शिशु पर काफी पड़ता है, अनेक बार देखा गया है कि माता ने जहां कोई

[illegible] यिज चीज खाई कि बच्चे को तुरन्त ही कब्ज होगया, थोड़े से गुरु पदार्थ के खाने से बच्चे को दस्त शुरु होजाते हैं। इसलिये अनेक बार बच्चे को रोग होने पर माता को ही औषध दी जाती है और उस से फायदा हो जाता है। इसलिये माता जबतक बच्चेको दूधपिलाती रहे तबतक उसे हल्का शीघ्र पचाने वाला ही भोजन देना जरूरी है। यह बहुत ही बुरी प्रथा है कि जच्चा को अनेक प्रकार के मेवे जात, पौष्टिक गुरु पदार्थ दिये जाते हैं, इस से कभी २ प्रसूता को मन्दाग्नि, अतीसार, बदहजमी वगैरा हो जाती है। जब तक माता बच्चे को दूध पिलाती रहे तब तक उसे प्याज, लहसुन, गरम मसाले, शराब वगैरा आदि उत्तेजक पदार्थ न खाने देवें, क्योंकि उन चीजों के खाने से उन की गन्ध माता के दूध में आजाती है, जिसेकि बच्चे पसन्द नहीं करते और इन चीजों से पित्त बढ़ कर शिशु के स्वास्थ्य को हानि भी पहुंचती है।

मातृ दुग्ध के अभाव में

हमने अभी तक जो लिखा वह सब संक्षेप से माता के दूध की उपयोगिता के विषय में ही लिखा है। इसमें शक नहीं कि माता के दूध से ही बच्चे पूर्ण आरोग्य और हृष्ट पुष्ट होते हैं, अन्य ऊपर के गौ, बकरी, भैंस इत्यादि अथवा धाय के दूध इस की समता नहीं कर सकते। अनेक विद्वान पुरुषों ने इस बात की परीक्षा कर यह निश्चित सिद्धान्त निकाला है कि जिन बच्चों को कृत्रिम खूराक पर ही रक्खा जाता है उनमें ८० प्रतिशत शिशुओं को पाचनशक्ति की बीमारी होती है और उनके दांत तथा अस्थियां दुर्बल होजाती है। और जो कुदरती (माता का दूध) गिजा और कृत्रिम गिजा दोनों के सहारे पालन किये जाते हैं उनमें ५४ प्रतिशत, और केवल माता के दूधपर पलने वाले शिशु सिर्फ २५ प्रतिशत ही बीमार देखे जाते हैं। परन्तु जब माता बीमार हो, दुर्बल हो या मरगई हो या उस के दूध में पौष्टिक पदार्थों की कमी हो। अथवा दूध बहुत जल्दी सूख जावे या हो तो इतना कम हो जिससे कि बच्चे का पेट न भर सके, अथवा माता के स्तन में फोड़ा, या सूजन हो या अन्य कोई क्षय, मृगी, हिस्टीरिया, उपदंश, जीर्ण ज्वर वगैरा बीमारी हो तो ऐसी हालत में मां को बच्चे का दूध नहीं देना चाहिये ऐसी अवस्था में बालकों की जीवनरक्षा के लिये अन्य कृत्रिम खूराकों की शोध अवश्य करनी ही पड़ती है। तब अन्य तीन ही प्रकार के ऐसे साधन शेष रह जाते हैं कि जिनके ऊपर शिशु का जीवन निर्भर है। (१) धातृदुग्ध, (२) गाय या बकरी का दूध, (३) कृत्रिम दूध

धाय का दूध

भारत में अति प्राचीन काल से धाय को रखने का प्रथा चली आती है, क्षत्रिय कुल की मानमर्यादा तथा हिंदु जाति के प्राण, महाराणा प्रताप के नाम को आज कौन नहीं जानता, जिन-की अद्‌भुत वीरता, स्वदेश प्रेम से इतिहास के पृष्ठ रंगे पड़े हैं, उन्हीं आर्यकुल भूषण महाराणा प्रताप के पिता महाराणा उदयसिंह के बुझते हुवे जीवन दीपक को अपने हृदय के धन प्राणप्यारे शिशु की बलि, निर्दयी हत्यारे बनवीरसिंह को देकर बचाने की आश्चर्यजनक कथा का आज भी इतिहास साक्षी है।

यदि इस भयंकर परिस्थिति में धाय ने अपने कर्त्तव्य का पालन न किया होता तो आज भारत के इतिहास की काया पलट हो गई होती और अकबर जैसे कूटनीतिज्ञ सम्राट ने क्षत्रियों की कुल परम्परागत मानमर्यादा को सम्पूर्णतया खरीद लिया होता,* परन्तु ऐसा होना नहीं था जो कुछ हुवा वह एक सुयोग्य धाय के अनुपम उपकार का ही फल है। वास्तव में माता के बाद दूसरा दर्जा धाय का ही है इन्हीं वात्सल्य, दया, अनुपम प्रेमादि सद्गुणों से धाय को उपमाता या सन्तान-पालिका कहते हैं। इसीलिये धाय के रखने के पूर्व उसमें इन गुणों का होना आवश्यक है

धाय अंगहीन या बदशकल न हो, ब्रह्मचारिणी अर्थात मैथुन से रहित हो, बच्चे के समान जाति वाली और उसके समान प्रकृतिवाली हो, नीरोग हो अर्थात उसे आतशक, सुजाक, क्षय, कुष्ठ वगैरा रोग न हो, जिसके बच्चे जिंदे रहते हों, लोभ न करने वाली हो, अधेड़ उमर वाली हो, और वह हमेशा शांत स्वभाव, स्वभाविक प्रेम वाला, सन्तान पालन में होशियार हो, उसका दूध शुद्ध रहे, हित आहार बिहार वाली हो। धायको नियुक्त करने के बाद उसकी निगरानी की बड़ी आवश्यकता है, यदि हो सके तो उसे अपने पास ही रखना चाहिये और उसके भोजन पर विशेष ध्यान दिया जावे, वह जैसा भोजन करेगी वैसा ही दूध शुद्ध बनेगा, जैसा दूध होगा वैसा ही बच्चेका पालन पोषण होगा, दूध का मस्तिष्क पर बड़ा अद्भुत प्रभाव पड़ता है, चरित्र निर्माण के साथ उसका गहरा सम्बन्ध है इस बात को ध्यान में रखते हुवे धाय को हल्का, पौष्टिक, सात्त्विक आहार दूध, फल, सबजी वगैरा ही देना चाहिये। यह समझना चाहिये कि इसे जो कुछ खिलाते हैं वह सब एक प्रकार से बच्चे को ही खिला रहे हैं, इसीलिये उसके खाने पीने में किसी प्रकार की कमी या अव्यवस्था नहीं होनी चाहिये। भोजन के बाद उसके और शरीर की सफाई पर विशेष ध्यान देना चाहिये, साथ ही उसके स्नान, शयन, दूध पिलाना इत्यादि काम नियम पूर्वक समय पर होने चाहिये जिससे कि बच्चे को वैसी ही आदत पड़े, यदि धाय आलसी, विलासप्रिय हो जावेगी तो बच्चा भी वैसा ही होगा। धाय को सदा प्रसन्न-चित्त, सन्तुष्ट मनवाली होना चाहिये, ज्यादह खाने पीने में लोलुप न होना चाहिये। धाय को बच्चा सौंपकर माता को निश्चित न होना चाहिये समय २ पर पास बैठकर उसकी शारीरिक उन्नति तथा स्वास्थ्य पर पूरा ध्यान करते रहना चाहिये, हर दसवें दिन ठीक उसी समय पर कपड़े उतरवा-कर बच्चे का वजन करते रहना चाहिये, और कभी २ अपने हाथों से उसे खिलौने देकर पुच-कारना, खिलाना, शिक्षा देनी चाहिये, ऐसा न करनेसे बच्चे का माता पर प्रेम कम हो जाता है।

गाय या बकरी का दूध

परन्तु धाय के रखने में बड़ी २ कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है, प्रथम तो आजकल प्राचीन जैसी न धाय हैं और न उनके रखने वाले परिवार ही हैं। पहले तो योग्य धाय का मिलना ही मुश्किल है, मिलने पर उसके लिये उचित प्रबन्ध करने में धन की बड़ी आवश्यकता है जो कि साधारण जनता की शक्ति से बाहर की बात

है। इस लिये भारत में धीरे धीरे इस का रिवाज भी कम हो रहा है। अतएव धाय के न मिलने पर बच्चों की जिन्दगी का आधार गाय, भैंस, बकरी, अथवा गधी का दूध या कृत्रिम दूध ही है। वाग्भटाचार्य ने लिखा है

स्तन्या भावे पयश्छागं गव्यं वातद्गुणंपिबेत्,
ह्रस्वेन पंचमूलेन स्थिरया वा सितायुतम् ॥

अर्थात माता या धायके दूधके प्राप्त न होने पर बकरी अथवा गौ के दूध को लघु पञ्चमूल (शालपर्णी, पृष्ठपर्णी, छोटी,बड़ी दोनों कटेली, गोखरू) से या केवल शालपर्णी से पकाया हुवा दूध मिश्री मिला कर बच्चे को देना चाहिये।

दूध पकाने की विधि

शालपर्णी आदि औषध १ तोले, दूध ८ आठ तोले, जल ३२ तोले पकाने २ दूध मात्र जबर शेष रह जावे तब उसे उतार छान मिश्री मिला कर पिलावें इसमें दवाई की पोटली बांध कर डालना ही उत्तम है। गौ या बकरी का दूध स्त्री के दूध जैसा नहीं होता इस लिये उसे जल मिला कर हल्का कर के शिशु के पचाने योग्य बनाना चाहिये। नवजात शिशु के लिये १ छटांक दूध में २ छटांक जल मिला कर खूब खौला कर थोड़ी मिश्री मिला कर पीने को देवें। हमेशा यह ध्यान रहे कि दूध गौ का या बकरी का सामने का निकाला हुवा होवे, बाजार का निकला हुवा दूध अशुद्ध और बासी पानी से मिला हुवा ग्वालों के मैले कुचैले बर्तन में भर कर आता है जोकि शिशु की पाचनशक्ति के अत्यन्त प्रतिकूल होने के कारण भयंकर रोगों को जन्म देता है। दूध पकते समय भी बहुत सावधानी की आवश्यकता है, जिस बर्तन में वह औटाया जावे उसे गरम जल से साफ कर लेने के बाद उस में दूध और जल डाल कर किसी दूसरे बर्तन से ढक कर उबालना चाहिये क्योंकि उसका मुंह खुला रखने से दूध में से गैस उड़ कर पुष्टि प्रद तत्व भारी हो जाते हैं। दूध जितना ज्यादह औटकर गाढ़ा हो जायेगा वह उतना ही बालक के प्रतिकूल होगा, इसीलिये दूध को १५ मिनट तक उबालना जब उसमें उफान आने लगे काफी है। दूध में पानी मिलाने की मात्रा शिशु की पाचनशक्तिपर ही निर्भर है, जब बच्चा तीन मास का होजावे तो गौ के दूध में या बकरी के दूध में बराबर का जल मिला कर देना चाहिये इसके बाद ६ मास के बच्चे को तीन भाग दूध १ भाग पानी मिलाकर १ साल तक दे सकते है। पानी का मिलाना एकदम बिलकुल बन्द न करदेना चाहिये, ऐसा करने से बालक को बिलकुल अपच होने की आशंका रहती है।

बकरी का दूध गौ के दूध से हल्का होता है और भैंस का दूध गौ के दूध से भी भारी होता है इसलिये उसे बच्चे के उपयोग में लाना नहीं चाहिये। कोई २ मनुष्य गधी का दूध भी पीते हैं, यह दूध बहुत हल्का गुण में माता के दूध के समान होता है, इसको उबालने की आवश्यकता नहीं होती। चौड़े मुंह वाली १ शीशी या बोतल में भरकर मजबूत कार्क लगाकर रखदेवें जब पिलाना हो तब एक बर्तन में गरम जल करके उसमें इसे डुबोकर खोलकर फिर शीशी में से निकाल कर पिलाना चाहिये।

अगर बच्चा ज्यादह कमजोर हो और उसे

दूध किसी प्रकार हजम नहीं होता हो तो उसे तैयार की हुई गिजायें अथवा डिब्बे का दूध जो किसी अच्छे कारखाने का बना हो दे देना चाहिये, परन्तु इन बनावटी दूधों ही के सहारे किसी बच्चे की परवरिश अच्छी प्रकार नहीं हो सकती उसे बीच २ में ताजा गौ या बकरी का दूध अवश्य देना चाहिये नहीउ तो सकी हड्डियां और दांत कमजोर हो जायेंगे।

खराब दूध से होने वाले रोग

इस जगत् में उत्पन्न हुवे पदार्थों में दूध ही ही सब से उत्तम, अमृतरूप एकपेय पदार्थ है, जोकि वनस्पति भोजी, मांस भोजी दोनों प्रकार के प्राणिवर्ग को अत्यन्त प्रिय है इसीलिये आयुर्वेद में इसका गुण वर्णन करते हुवे " सर्वप्राणभृतां सात्म्यम् "—अर्थात् यह सब प्रकार के प्राणियों के लिये हितकारक वस्तु है इस प्रकार गुण वर्णन किया है। फिर विशेषकर गौ के दूध का तो प्राकृतिक रूप से ही इस प्रकार का रासायनिक संगठन है कि वह जन्म से लेकर मरण पर्यन्त मनुष्य को स्वस्थ एवं हृष्टपुष्ट रखता है, गौ के ही दूध में वे सब पौष्टिक अवयव ठीक २ मात्रा में संगठित होते हैं जिनकी इस मनुष्य शरीर को जितनी मात्रामें आवश्यकता है। इसीलिये दूध के अन्य जानवरों में सिर्फ गौ को ही माता का नाम दिया जाता है क्योंकि इससे बहुत समय तक परिवार के बच्चों का पालन पोषण होता रहता है। दूध इतना उपयोगी होते हुवे भी यदि उसके इस्तेमाल में सावधानी, स्वच्छता, अथवा नियम न रक्खा जावे तो वह शीघ्र ही भयंकर रोगों को जन्म देने में सहायक होता है। ताजादूध निकलने के आधा घंटा बाद तक यदि वह बिना उबाले रक्खा रहे तो उसमें जीव पैदा होने लगते हैं, और थोड़े ही समय में वे उसमें बढ़जाते हैं। इसीलिये इसका सब से अच्छा उपाय यही है कि दूध उबाल कर ही काम में लाया जावे, बालकों के रोग अधिकतर अपवित्र दूध के कारण ही होते हैं, क्योंकि आजकल अनेक मातायें नवीन सभ्यता में पड़कर अपनी प्रिय सन्तान को स्तन पान न करा कर ऊपर के अप्राकृतिक दूषित दूध को देकर अपने प्यारे बच्चों को अनेक रोगों का शिकार बना देती हैं।

डाक्टर जोनस्टाक ने अपने अनुभवसे वहां के स्वास्थ्य विभाग को सूचना देकर यह बताया कि दूषित कीटाविष्ट दूध के कारण ३१७ टाइफोइड (Typhoid) के केस, १२५ स्कार लेट फीवर (Scarlet fever) केकेस तथा २५ डिपाथेरिया (Dyptheria) के केस एक समय में उन के देखने में आये। पहले टाइफाइड का कारण मैला पानी समझा जाता है परन्तु अब अपवित्र दूध की तरफ इसका कारण ध्यान आकर्षित हुवा इसी प्रकार डा० हेन्टिन ने १८ टाइफाइडके केसों में १४ को अस्वच्छ दूधके कारण ही बताया। सन् १८१७ में इंगलैंड से अशुद्ध दूध के कारण ही डिपथरिया का बवा फैली थी। सन् १८६८ में फिलेडेलिफया में भिन्न भिन्न घरों में रहने वाले मनुष्यों तथा बच्चों को भी यही रोग हुवा जिसका कारण बड़ी बड़ी खोज के बाद अशुद्ध दूधनिकला बल्कि एक बात यह खास देखने में आई कि एक कुटुम्ब दूध उबाल कर काम में लाता था और दूसरा बिना गर्म किये ही। अन्त में बिना



CAPT. MOOL SINGH BAZAZ
[illegible]
[illegible]
NAI SARAK DELHI



[illegible] विश्वनाथ जी शास्त्री आयुर्वेदाचार्य
[illegible] हरि कालेज
[illegible]



वैद्य चक्रवर्ती काशीनाथ शर्मा कविराज आयुर्वेदाचार्य
चिकित्सक बाबा काली कमली वाले मालीवाड़ा देहली



पं० रामनारायण जी मिश्र [illegible] आयुर्वेदाचार्य
(रायपुर) सी. पी.

दुग्धपान सम्बन्धी विचार

(ले०—विश्वनाथ द्विवेदी शास्त्री, प्रिन्सिपल ललितहरि कालिज पीलीभीत)

जिस समय बच्चा जन्म लेने योग्य होने लगता है उस काल से ही प्रकृति आहार की योजना करना प्रारम्भ कर देती है। जिससे जन्म ले लेने के बाद वह अपने पोषण सामग्री को प्राप्त करके एक नियमित रूप से अपनी वृद्धि पथ में अग्रसर हो सके।

एतदर्थ माता के स्तनों में दुग्ध ग्रन्थियां परिवर्द्धित होना प्रारम्भ करती हैं और प्रसवकाल के समीप उनका आकार व परिणाम पूर्वापेक्षा बड़ा हो जाता है। वह देखने में पीन उन्नत व कठोर मालूम होने लगते हैं। इस समय स्तन चूचुक दृढ़ व कृष्ण घेरे में आवृत्त हो जाता है और स्तन वृन्त कृष्ण व उन्नत हो जाते हैं। इसमें का द्रव ईषद् पीत श्वेत वर्ण का होता है।

प्रसव होने के बाद इसमें एक प्रकार का रस निकलने लगता है। जो अमृत की तरह मधुर व बालक के शरीर वृद्धिकर पदार्थों से युक्त होता है। केवल इसे ही पीकर नव शिशु अपनी जीवन यात्रा को अविचल रूप से धारण करता हुआ बढ़ता है। इस रस को ही जो स्तनों से निकलता है दुग्ध के नाम से पुकारते हैं।

स्वस्थ दुग्ध

शिशु का स्वास्थ्य माता के शुद्ध व स्वस्थ दूध के ऊपर ही निर्भर है। अतः जब दुग्ध शुद्ध नहीं होता बच्चा कौरन रोगों का शिकार बन जाता है। अतः दुग्ध की विशुद्धता की तरफ विशेष ध्यान देना उचित है।

पहिचान

जिस दुग्ध में शरीर पोषक हर प्रकार के पदार्थ, प्रोटीन, वसा, कर्बोज, लवण, जल इत्यादि उचित मात्रा में हों वह ही शुद्ध दुग्ध कहला सकता है। प्राचीन चिकित्सक शुद्ध दुग्ध उसे कहते हैं जो देखने में श्वेत, मन को प्रसन्न करने वाला, जल में डालने पर बिखरे न हो, पानी में मिल जाय।

अशुद्ध दुग्ध

जो जल में डालने पर नीचे बैठ जाय, वर्ण नीला, पीला धूम्र वर्ण का प्रकट करे, देखने में घृणित मालूम हो वह अशुद्ध दुग्ध है जिसके

उबाल कर पीने वाले परिवार को ही डिफ्थीरिया मालूम हुआ। इसलिये यह ध्यान रखना चाहिये कि यदि अपने बच्चों को आप बिना ही गर्म किया हुआ दूध देते हो तो उन्हें अनेक भयंकर रोगों का शिकार बनाते हो। दूध के विषय में यह संक्षिप्त विवरण पाठकों के सामने रखकर अब हम लेख को समाप्त करते हैं यदि इसके विषय में विस्तार पूर्वक लिखा जाय तो एक बड़ा ग्रन्थ बन सकता है। आशा है विद्वान पाठक इतने ही लेख से विषय को अच्छी प्रकार समझ कर मेरे इस परिश्रम को सफल करेंगे।

—:०:—

पीते ही बालक अरोचक, मंदाग्नि अतीसारादि रोगों का शिकार बन जावे।

दुग्ध विकृत होने के कारण

जब माताएं बच्चों की अवस्था का ध्यान न देकर हर प्रकार के इच्छानुकूल आहार द्रव्य, अम्ल लवण, कड़वा व क्षार युक्त भोजन करती हैं, मिथ्या विहार जैसे बार बार भोजन, अधिक मद्य-पान, दिन में सोना, मल-मूत्र के वेग को रोकना, दही, तिल, पिट्ठी इत्यादि के बने गरिष्ठ आहारों को करती हैं, व्यायाम इत्यादि से घृणा करती हैं तो उपर्युक्त कारणों से वात, पित्त, कफ दुष्ट व वृद्ध होकर क्षीरवाही स्रोतसों में पहुंच कर उन्हें दुष्ट कर वैसे ही लक्षण पैदा कर देते हैं इन दुष्ट दुग्धों को पीकर बालक अस्वस्थ हो जाता है और उसकी देव तुल्य आभा नष्ट होकर दुःख व कातरता के चिन्हों को धारण करती है।

यदि दुग्ध स्वस्थ है तो दूध पिलाने की रीतियों को न जानकर कितनी ही मातायें अपने शिशुओं को रुग्ण बना देती हैं।

दुग्ध पिलाने की रीतियां

प्रकृति के अन्दर जितने भी दुग्धपान करने वाले जीव हैं सभी के बच्चे जन्म से ही दुग्ध पान की चेष्टा करते हैं। गाय, भैंस का बच्चा पैदा होते ही खड़े होकर दूध पीने के निमित्त मां के थनों के पास खड़ा होकर दूध पीना प्रारम्भ करता है किन्तु दुनियां की सब से सभ्य कहलाने वाली जाति मनुष्य जाति का बच्चा पैदा होने पर बिल्कुल निरीह होता है उसे दूध पिलाने के निमित्त मां के स्तनों के पास लगाना पड़ता है। उसके मुख में स्तनों को स्पर्श कराया जाता है तब वह पीने की चेष्टा करता है अतः दूध पिलाने की विधि न जानकर कितनी अबोध मातायें अपने स्नेह की मूर्ति को बार बार अधिक दूध पिलाकर रुग्ण कर देती हैं। उन्हें हमेशा ध्यान रखना चाहिये कि उन्हें संतोष व धैर्य के साथ काम लेना होगा।

१—चौबीस (प्रथम चौबीस घंटे) घंटे में उसे प्रथम दिन २॥ तोला दूध केवल पिलाना चाहिए। क्योंकि प्रारम्भिक ३ दिनों का माता का दुग्ध रेचक होता है। इसमें पोषक पदार्थों की सामर्थ्य कम होती है। बच्चा भी प्रारम्भ में इससे अधिक नहीं चूस सकता। उसके आमाशय की समाई भी इतनी होती है। दूध पीने के कुछ घंटे के बाद इस दूध के पीने से एक या कभी कभी दो भी दस्त आते हैं और बच्चे के आंतों का मल जो गर्भावस्था में जमा था वह निकल कर आंतें साफ हो जाती हैं। इन्हें गर्भ मल के नाम से पुकारते हैं।

२—दूसरे व तीसरे चौबीस घंटों में इसकी मात्रा कुछ (करीब १ तोले तक) और बढ़ाई जा सकती है। इन दो दिनों के दूध में भी रेचन शक्ति होती है किन्तु प्रथम दिनापेक्षा कम होता है।

३—अब बच्चे को थोड़ा थोड़ा दूध ३ घंटे के अन्तर से पिलाना आवश्यक है। बहुधा बच्चे अपनी इच्छा पूर्ति करने पर स्वयमेव दूध पीना बंद कर देते हैं किन्तु इससे माताओं को प्रेम के आवेश में आकर पुनः दूध पिलाना हितकर नहीं है। साथ ही प्रथम तीन दिनों में पर्याप्त दूध होता ही नहीं जिसको वे अधिक पान करें। चौथे दिन से दूध अधिक बनना प्रारंभ होता है। प्रारंभिक दिनों में प्रसवावस्था के कष्ट व अधिक रक्तादि

वलिगेत होने के कारण दुग्ध कम बनता है।

४—जब प्रसूता जिस ने प्रथम बार ही प्रसव किया है उसे स्तन पान कराते समय जब कि बच्चा स्तन चूसता है एक प्रकार की बेचैनी व गुद गुदी मालूम होती है अतः वे शीघ्र ही बच्चों को दुग्ध पिलाना बंदकर देती हैं। इसमय इस क्रिया के होने से बच्चे कमजोर व चिड़चिड़े तथा रोने वाले होजाते हैं। और अन्त में रोगी होजाते हैं।

प्रतीकार ऐसी माता बनने वालियों को प्रसूता बनने से पूर्वही स्तन मंडल के ऊपर टेक्चिराइड स्प्रिट या मृतसंजीवनी सुरा की एक फुरैरी प्रातः सायं लगा देना चाहिए इस से उस में स्पर्शासहित्व नष्ट होकर दृढ़ता आती है और दूध पिलाते वक्त बेचैनी या गुद गुदी नहीं मचती।

५—बड़े स्तन वाली माताओं को हमेशा ध्यान रखना चाहिए कि दूध पिलाते वक्त वे स्तन को अपने हाथों द्वारा पकड़ कर बच्चे के मुंह में रखें। अन्यथा स्तन मुंह व नाक पर पड़ कर श्वासावरोध करके बच्चे की मृत्यु का कारण बनेगा।

६—बार बार दूध न पिलाकर थोड़ा थोड़ा दूध निश्चत समय पर पिलाना चाहिए जिससे उसका पाचन ठीक हो सके।

७—दूध पान कराने के काल में माता को हमेशा सात्विक आहार जो शीघ्र पचने वाला व पौष्टिक हो सेवन करना चाहिए।

अजीर्ण व अध्यशन करना उचित नहीं है।

८—अधिक दूध पिलाने से बच्चों को अजीर्ण हो जाता है या वे उल्टी कर देते हैं। अतः अधिक दूध बार बार नहीं पिलाना चाहिए।

माता का रहन सहन व पथ्यापथ्य

पहले बतलाया जा चुका है कि माता का दुग्ध ही बच्चे का जीवन है अतः जो माताएं दुग्धपान काल में मिथ्याआहार, अम्ललवण कड़वा तीखा पदार्थ, मद्य, बासी, अभिष्यंदी व दुर्जर भोजन करती हैं वे अपने शिशु के लिए मौत को बुलाती हैं क्योंकि इन कर्मों से दुग्ध दूषित हो जाता है और वह दूषित दुग्ध बच्चे को रोगी बनाता है। इस समय मानसिक स्थितियों को संभाल कर रखने से मैथुनादि अपकृत्यों से दूर रहने में ही कल्याण है। पथ्य भोजन जो पाचक पौष्टिक व रक्त तथा दुग्ध वर्द्धक हो खाना चाहिए। अपथ्य पदार्थों का परित्याग करना ही श्रेयस्कर है। इस विषय पर बहुत से विज्ञ लेखकों ने लेख दिये होंगे अतः इसके ऊपर विशेष विचार न करके हम आगे बढ़ते हैं।

दूध पिलाने से फायदा

१—दूध का पीना जितना ही बालक के पक्ष में हितकर है उतना माता के पक्ष में भी। इस के पीने से बच्चे की वृद्धि होती है। साथ ही बच्चे के स्तन चूसने से गर्भाशय धीरे धीरे संकुचित होने लगता है। इसका कारण दुग्ध चूसने से उत्पन्न हुई एक शारीरिक प्रतिक्रिया है

२—दूध जैसा प्राकृतिक और पौष्टिक आहार बच्चे के लिए दूसरा नहीं है। यह उसके प्रत्यंग बर्धन के लिए उपयुक्त है अन्य आहार उसे न तो पच ही सकते हैं न इतने पोषक ही हो सकते हैं।

३—दुग्ध वृद्धि के लिए अत्युत्तम वस्तु है।

इसमें हर एक पदार्थों के भाग इतने सूक्ष्म कणों में प्रविभक्त होते हैं कि बच्चे का नया आमाशय उन्हें शीघ्र ही पचा सकता है।

४—दूध न पिलाने पर स्तन की दुग्ध बनाने वाली ग्रंथियां शुष्क हो जाती हैं। माताऐं रुग्णा हो जाती हैं। स्तन शोथ व व्रणयुक्त होता है। व छोटा तथा ढीला व शुष्क हो जाता है। जो अस्वास्थ्य का प्रथम लक्षण है।

५—दूध का पिलाना गर्भाशय, गर्भनालिका व डिम्ब ग्रन्थियों को निरोग रखने वाला है।

६—जो स्त्रियां अपने बच्चों को दूध नहीं पिलातीं वह स्तन के सौंदर्य और दाढ्र्य की भले ही रक्षा कर सकें किन्तु रोगी बन जाती हैं। नलों का दर्द, कमर का दर्द, रजस्राव की कठिनता इत्यादि कई रोगों की शिकार बन जाती हैं। उनकी सुकुमारता नष्ट होकर उग्रता पैदा हो जाती है।

७—दुग्ध गर्भाशय से सम्बन्ध रखने वाली उन प्रणालियों का जो स्तन तक जाती हैं एक उत्तम रस व बच्चों का खाद्य है। जो मुंह में रखकर पिलाने से दूषित नहीं होता व सद्यः रक्त प्रक्षेप की तरह बलवर्द्धक व शक्तिप्रद होता है।

अधिक दूध पिलाने से जच्चा बच्चा की दशा

बच्चा पैदा होने के बाद अपने पालन पोषण का कुल भार अपनी माता पर डालता है। जब ६ महीने बीतने लगते हैं तो बच्चे के दांत निकलना प्रारम्भ होते हैं और दो वर्ष तक कुल दांत निकल आते हैं। दन्तोद्गम के अर्थ हैं कि बच्चा अब अन्न खाने योग्य होता जा रहा है और इसके अङ्ग अब अन्न के ऊपर अपनी क्रिया पूर्ण रूप से कर सकते हैं।। इस काल में बच्चा क्षीर और अन्न दोनों खाने योग्य हो जाता है। द्वितीय वर्षान्त काल में वह अधिकतर अन्न के ऊपर ही निर्भर करना प्रारम्भ कर देता है और इसके पश्चात काल में वह अन्नभुक् हो जाता है। प्रकृति के इस नियम के अनुसार दो वर्ष तक दूध पिलाना उचित है।

१॥ वर्ष तक का कालही उपयुक्तकाल है क्यों कि प्रसव काल से ही माता की शारीरिक अवस्था बहुत ही दयनीय हो जाती है। पश्चात काल उसका दुग्ध पान काल के नाम से पुकारा जा सकता है, यह दुग्ध जिसे बच्चा पीता है माता के भुक्तांश अन्न से उत्पन्न रस का सार भाग है जो रक्त न बनकर दूध के रूप में परिणत होता और बच्चे का स्वाभाविक सात्विक भोजन है। अत: यह निश्चित है कि जब बच्चा अधिक दिनों का है तो दूध की आवश्यकता अधिक उसके लिये होती है और वह सब माता से ही ग्रहण करता है। अत: बहुत सा पोषक अंश माता के शरीर में न लीन होकर बच्चे के निमित्त जाता है अत: उसका उचित पोषण नहीं हो पाता। वे माताएं जो दुग्धपान काल में उपयुक्त पौष्टिक आहार नहीं प्राप्त करतीं बहुत ही दुर्बल व कमजोर हो जाती हैं उनकी मांसपेशियां शिथिल व ढीली पड़ जाती हैं यौवनावस्था के स्थान पर जराअवस्था के लक्षण दृष्टिगोचर होते हैं। ऐसी माताएं शीघ्र ही एक दो प्रसव के बाद वृद्धा की तरह जान पड़ने लगती हैं। उनके मुंह के ऊपर की वह मन मोहक हास्य व मुसकान,

जो स्वाभाविक थी जो कपोल अरुण राग रंजित थे एक दम दूर होजाते हैं वहां पर विषाद के चिह्न व पाण्डु वर्ण ही अवशेष रह जाता है। कपोल गर्तयुक्त दिखलाई पड़ते हैं। अब अधिक काल तक दुग्ध पिलाना उनके पक्ष में हानि का और शरीर नाश व क्षय के रास्ते में ले जाने वाला है। अधिक स्त्रियों को क्षय हो जाता है। बहुतों को गर्भाशय के रोग होते हैं। अस्थियों के पोषक व वर्द्धक पदार्थ अधिकतर दूध के साथ निकल जाने से वे निर्बल व क्लान्त हो जाती हैं। अस्थियां कमज़ोर होने लगती हैं और तो और स्त्रियों के सौंदर्य का विशालश्रृंग मदन का क्रीड़ा कंदुक उरोजद्वय ढीले व बड़े हो जाते हैं अतः अधिक काल तक दुग्धपान कराना स्त्री के पक्ष में बहुत ही हानि कर है।

इन प्रसूताओं को यदि कोई बड़ा रोग होजाय और उनमें कास ज्वर इत्यादि उपसर्ग प्राप्त हो जावें तो उनके लिये सीधा यमालय ही स्थान होता है।

जो बच्चे अधिक दिनों तक दूध पीते रह जाते हैं उनके पोषक व पाचक अंगों का विकास बहुत ही अल्प होता है वह निशास्ता (Starch) इत्यादि वस्तुओं को पचाने की बहुत ही कम शक्ति रखते हैं अतः उनकी बाढ़ के अनुकूल जितना पोषक सामान क्षीर और अन्न दोनों से प्राप्त हो सकता था उतना प्राप्त नहीं हो पाता अतः उनकी वृद्धि ठीक नहीं होती वे हृष्ट पुष्ट बलिष्ठ न होकर कमज़ोर, मुलायमअस्थि वाले व मृदुप्रकृति के हो जाते हैं। उनकी बाढ़ रुक जाती है। पाचक संस्थान संबन्धी रोग(अजीर्ण, अतीसार,कब्जियत, विबंध) इत्यादि से अपने पोषणोत्तर काल में हमेशा पीड़ित रहते हैं, ऐसे बालक अधिकतर कुबड़े हुवा करते हैं अतः दूध का अधिक कालतक पिलाना माता के पक्ष में तो बहुत हानिकर है। उनके शरीर के पोषण के लिये अवकाश देना भी आवश्यक है अतः दुग्धकाल १।। वर्ष का ही अत्युत्तम है, इसके उपरान्त जच्चा बच्चा दोनों को हानिकार है।

दुग्धवर्धक उपाय

बहुत सी अवस्थाओं में माता का दुग्ध कम होता है अतः उन्हें बाह्य उपायों द्वारा बढ़ाकर बच्चे के पोषणार्थ प्रयोग करते हैं।

शास्त्रों में बहुत से दुग्ध वर्धक उपाय हैं। किन्तु उनका उल्लेख करना लेख कलेवर को बढ़ाना होगा। अतः प्रधान व अनुभूत प्रयोगों का उल्लेख किया जा रहा है।

१—पंचजीरक पाक के सेवन से दुग्ध बढ़ता है।

२—शतावरी घृत, शतावरी क्वाथ को दूध के साथ सेवन करना दुग्ध वर्धक है।

३—आमला और जीरे के चूर्ण में बराबर की शक्कर मिलाकर २ पैसे भर का नित्य सेवन दूध बढ़ाता है।

४—बला क्वाथ-(खरैंटी) दुग्ध के साथ दुग्ध-वर्धक है।

५—हर प्रकार के पौष्टिक मधुर अन्न दुग्ध-वर्धक हैं।

६—मूंग या मसूर की दालका सेवन दुग्ध वर्धक है

७—जौ के सत्तू या परमल (धान के खीलों)के सत्तू का घोल बनाकर पीना दुग्ध वर्धक है।

८—केवल दुग्ध को शक्कर के साथ सेवन करना दुग्ध वर्धक है।

९—मन प्रसन्न करने वाले आहारों से दुग्ध स्वयमेव बढ़ता है।

किस अवस्था में माता को दूध नहीं पिलाना चाहिए

१—माता का यक्ष्मा से पीड़ित होना।

२—कंप वात (Chorea) में।

३—प्रसव के बाद जब उसको भयानक उपद्रव जैसे रक्तपात (Haemorrhagia) प्रसूत-ज्वर, प्रसूतोन्माद, विषाद ज्वर इत्यादि होने पर।

४—रोगानुपस्थिति।

५—दुग्ध प्रदान काल में गर्भ स्थिति।

६—किसी प्रकार के संक्रामक व छूतवाली बीमारी होने पर।

७—दुग्ध प्रदान काल में किसी प्रकार के उग्र व्याधि की उपस्थिति में।

८—दुग्ध विकृत हो जाने पर।

शिशु की अवस्था जिसमें दुग्धपान अनुचित है

१—दुग्ध बराबर पीते रहने पर भी बच्चे के वजन की वृद्धि कम होते जाना या दुर्बल होना।

२—अजीर्ण इत्यादि उदर सम्बन्धी रोगों की उपस्थिति में भी दुग्धपान कराना हानिकर है। ऐसे अवसरों पर अन्य धातृ या बाहरी दुग्धों को ही पिलाना ठीक है।

३—माता के दुग्ध के हजम न होने पर। इत्यादि

दुग्ध कल्पना

जब कि ऊपर लिखे कोई दोष माता में उपस्थित होते हैं तब उसका दूध बच्चे को न दिया जाकर धाय, गौ, बकरी, भैंस, गर्दभी या ऊंटनी के दूध का विधान किया जाता है।

धाय के दूध

माता के दूध के अभाव में दूध पिलाने के लिये जो धाय रखी जावे वह उच्च वर्ण की रोग रहित, माता के आयु की, स्नेह वत्सल, प्रेम करने वाली व अनुन्नत पयोधर वाली, हंस मुख, प्रिय भाषण करने वाली व बच्चे पर अपने पुत्र की तरह प्रेम करने वाली हो। इसके विपरीत लक्षणों वाली धाय अयोग्य होती है और बच्चे का पोषण उससे नहीं होता।

दुग्ध-पान कराने से पूर्व उसके स्तनों का शोधन औषधियों के लेपन व धावन द्वारा करके तब बच्चे के पीने के निमित्त प्रयुक्त करना चाहिए। जिससे बच्चा किसी रोग का शिकार न बने। धाय हर एक मनुष्यों को सुलभ नहीं हो सकती। अतः अभाव में गो दुग्ध या बकरी के दुग्ध का प्रयोग हितकर व सुलभ होता है।

भारतवर्ष में दुग्धाभाव से हमेशा गो दुग्ध का ही प्रयोग अधिक होता आया है। यद्यपि माता के दुग्ध की समता गधी व घोड़ी के दूध करते हैं उनमें जलादि सम्मिश्रण की आवश्यकता नहीं पड़ती, किन्तु आध्यात्मिक दृष्टि से प्राचीन चिकित्सक इनके दुग्ध का प्रयोग बच्चे को मन्द बुद्धि करने वाला बतलाते हैं। अतः विशेष पार्थक्य होते हुवे भी गो दुग्ध ही प्रयोग में अधिक लाया

जाता है इससे उपयुक्त दोष नहीं होते। दुग्धों के मिश्रण के ज्ञान के लिये एक सरणि नीचे दी जाती है।

नाम दूध	प्रोटीन	वसा	करोज या शर्करा	लवण	जल	विशेषता
स्त्री दुग्ध	१·५	३·८०	५·६०	०·२५	८९·९१	
गो दुग्ध	३·५	४·०	४·५	०·७५	८७·२५	प्राय: प्रोटीन व शक्कर में अन्तर है।
घोड़ी ,,	२·०	१·२०	५·६५	०·३६	९०·७९	वसा कम है
गधी ,,	२·२५	१·६५	६·००	०·५०	८९·६०	बहुत मिलता है
बकरी ,,	४·३	४·६८	४·४३	०·७६	८५·७१	प्रोटीन अधिक है
भैंस ,,	६·११	७·४५	४·१७	०·८७	८१·४०	प्रोटीन वसा बहुत अधिक है।

ऊपर की सरणि से स्पष्ट है कि गधी और घोड़ी का दूध मां के दूध से समता रखता है।

गो दुग्ध में माता के दूध से कुछ अन्तर है। स्त्री दुग्ध में प्रोटीन कम व शर्करा अधिक है। तथा गो दुग्ध में प्रोटीन अधिक और शर्करा कम है इन दोनों में एक ऐसा पदार्थ पाया जाता है जो आमाशय में जाकर दही की तरह रूप धारण करता है। दूसरा पदार्थ श्वेतक (Lactael albumen) पाया जाता है जो तरलावस्था में ही रहता है। अत: शीघ्र पच जाता है अन्य दुग्धों में यह कम अपूर्ण होता है। साथ ही ये दुष्पाच्य भी है। अत: मातृदुग्धाभाव में गोदुग्ध का प्रयोग ही शास्त्र सम्मत है।

गोदुग्ध में एक भाग दुग्धश्वेतक (Lacted albumen) और ३ भाग अन्य पदार्थ का होता है। स्तन क्षीर में आधे से अधिक भाग दुग्धश्वेतक का होता है अतएव गोदुग्ध पिलाने के पूर्व ही उसे स्तन क्षीरवत पतला करना आवश्यक है।

अब यदि जल मिश्रण कर उसे पतला करते हैं तो वह पतला तो हो जाता है किन्तु उसमें की शर्करा जल के परिमाण अधिक होने से कम हो जाती है और वसा भी तदपेक्षा कम ही हो जायगी अत: उसकी मधुरता को कायम रखने के लिये उसमें मलाई व शक्कर का प्रक्षेप डालना आवश्यक होता है।

गो दुग्ध में जो जल मिश्रित करना है वह उबाला हुआ परिष्कार होना चाहिए। प्रारम्भिक ३ दिनों का माता का दूध उपयुक्त मिश्रण का नहीं होता। अत: उष्ण जल में थोड़ी सी दुग्ध शर्करा का (Sugar of milk) प्रक्षेप डालकर ही काम में लाया जाना चाहिए। तीसरे दिन से एक व दश के हिसाब से मिला हुआ गो दुग्ध व जल में २ चम्मच छोटे चाय के चम्मच से दुग्ध शर्करा मिला देनी चाहिए। अब से यह दूध का प्रबन्ध नियमित व समय के आधार पर देना चाहिए।

मात्रा—साधारण स्थिति में रहने वाले स्वस्थ शिशु के लिये प्रथम २४ घंटे में २॥ तोले दूध से अधिक नहीं होना चाहिए। इसको ही धीरे २ बढ़ाकर प्रथम मास के अन्त में १ छटांक व दूसरे मास के अन्त पर १॥ छटांक देना चाहिए। अधिक दूध पिलाने से स्वस्थ शिशु भी वमन कर देगा। उदाहरणार्थ कुछ मिश्रण दिए जाते हैं।

तीसरे से पांचवे दिन तक के दिए जाने वाले मिश्रणः—

१—दुग्ध ६ से ८ मासे।
दुग्ध शर्करा १ माशे।
जल २ तोले

विधि—दुग्ध शर्करा को पहले पानी में मिलाओ। अब इसे दुग्ध में मिला दो।

समय—इसे दिन के प्रत्येक दो घंटे के बाद और रात में केवल दो बार ही देना चाहिए। प्रत्येक तीसरे दिन इसकी मात्रा बढ़ाते जाना चाहिए,इस प्रकार बढ़ाते हुवे दसवें दिन यह नुसखा आ पहुँचेगा। जो मात्रानुकूल शिशु के पक्ष में हितकर होगा।

२—दूध १ तो० १० माशे
दूध शर्करा २ माशे
जल २ तोले
मलाई २ माशे

विधि—दुग्ध शर्करा को पानी में मिलाकर मलाई मिला दूध में मिला दो। इसी प्रकार प्रत्येक वस्तु धीरे २ बढ़ाना चाहिए और इस तरह के नुसखे काम में लाने पर बालक के स्वास्थ्य के अनुकूल रहना है।

दूसरे मास में दिया जाने वाला मिश्रणः—

३—दुग्ध १२ तोले	४—तीसरे मास में।
दुग्ध शर्करा ३ मासे	दूध १३-१४ तोले
मलाई ४ माशे	दु० शर्करा ३ माशे
जल ८ तोले	मलाई ६ माशे
	जल ४ तो०

विधि पूर्ववत है।

जैसे जैसे मिश्रण बढ़ता जायगा समय भी २ घंटे के बदले २॥ और ३ इस क्रम से बढ़ता जायेगा और रात्रि में एक बार ही केवल देना होगा। हरएक मिश्रण के लिए तापक्रम १०० डिग्री फा० का होना चाहिए। बहुत से चिकित्सक डेढ़ मास के बाद ही जल रहित दुग्ध देने की सम्मति देते हैं ऐसी हालत में दिन में २ या १ बार अर्क गाजवाँ या बेदमुश्क देना उचित है। अन्यथा यकृत वसा का पाचन न कर सकने के कारण खराब हो जाता है और बच्चा रोगी हो सकता है। इन मिश्रणों के अतिरिक्त चूर्णोदक (Lime water) या वार्ली (Barley water) इत्यादि का भी उपयोग करना हितकर है।

किन्तु इस समय निशास्ता मिश्रित वस्तुओं को देने के लिये बहुत से चिकित्सक अपनी सम्मति नहीं देते। क्योंकि आंतों के अन्दर निशास्ता (Starch) के पचाने की शक्ति बिल्कुल ही कम होती है।

कृत्रिम आहार

आजकल बाजारों में कई किस्म के कृत्रिम दुग्ध पाये जाते हैं। विज्ञान की दृष्टि से ये उचित शरीर पोषक नहीं हैं। साथ ही केवल दुग्धकाल में व्यवहृत होते हैं। इन के सेवन से बहुत से अदूर-

संस्थान संबंधी रोग बच्चों को हो जाते हैं। इन में प्रसिद्ध हार्लिक्स मेल्टेड मिल्क- मैलन्ज मिल्क, बेबिजफुड, ल्यूजफुड, ग्लेक्सो इत्यादि हैं दुग्धा भाव में हानिकार होने पर भी धाय न रख सकने वालों को इन दुग्धों का प्रयोग किसी हद तक उचित है। यद्यपि इन के लाभ पूर्व वर्णित ताजे गोदुग्ध की तरह नहीं होते। इनमें भी कर्वोज व शर्करा की मात्रा अधिक होती है और पोषक वस्तु (Vitamines) नहीं के बराबर होते हैं अतः ३ मास से कम उम्र के बच्चों को खिलाने से अजीर्ण, मंदाग्नि, अतिसार व विबंध पैदा करते हैं। इन कृत्रिम आहारों के डिब्बों में उनके बनाने की विधि लिखी होती है अतः उन्हें यहां नहीं लिखा है

दुग्धपान की विधि—

नवजात शिशु कभी भी इस प्रकार के दुग्धों को या बाह्य दुग्धों को अपने आप नहीं पी सकते अतः उनके लिए प्रबंध करना पड़ता है। आजकल बाजारों में दूध चूसने की बोतलें बनी बनाई मिलती हैं। कोई शीशे की, कोई बिल्लौर की, कोई लम्बी कोई किश्तीनुमा इत्यादि। इनमें किश्ती-नुमा सब से उत्तम है उस पर नम्बर भी खुदे होते हैं जिस से दूध के खर्च होने का अंदाजा मिलता जुलता रहता है। इस में चुसनी रबर की लगी होती है यह क़ीमती होनी चाहिए। सस्ती चूसनी से चूसते समय कुछ हिस्से चले जानेसे रोगोत्पादक हो जाती है। यह पौन इंच लम्बी होनी चाहिए। लम्बाई अधिक होने पर बच्चे को चूसने के उपरान्त तालु कण्टक इत्यादि रोग पैदा हो सकते हैं। इस चूसनी में एक ही छिद्र होता है। इस से बच्चा बहुत कम दूध चूसते चूसते घबरा जाता है। अतः इसमें २ या ३ छिद्र सूई से और बना देना चाहिए। क्योंकि माता के स्तन वृन्त में ७ छिद्र होते हैं उनसे वह दूध सरलता से चूसता है।

विशुद्धता

१—हर बार पिलाने के पश्चात् बोतल को उबलते हुवे या गर्म पानी से धोलना चाहिए। सूत्र ब्रुशसे साफ कर तब काम में लाना चाहिए। साबुन या सौभाग्यद्रव (२ तो० सुहागा व १ सेर पानी में डाल कर) से धोना भी ठीक है।

२—एक बार दूध पिलाने के बाद का बचा हुवा दूध फेंक कर पुनः नया दूध पिलाने के लिये प्रयोग किया जावे।

३—हर बार प्रयोग करने के बाद बोतल व चूसना साफ करना चाहिए।

४—ताजा दुग्ध का मिश्रण प्रयोग करने वक्त उसका तापमान शरीर के तापमान ९८० फा० का होना उचित है।

५—दूध को पात्र में डाल कर उबलने दो। दो मिनट तक उबल जाने के बाद उतार कर ठंडा करलो। और छान कर मिश्रण के काम में लावो। अन्यथा अधिक उबालने पर पोषक द्रव्य (Vitamines) नष्ट हो जाते हैं।



बालातिसार

(ले०—आयुर्वेदाचार्य श्री हरदयाल वैद्य वाचस्पति, प्रो० डी० ए० वी० आयुर्वेदिक कालिज लाहौर)

प्रायः दुग्धाशी और कभी २ क्षीरान्नभोजी बच्चों को यह रोग होता है।

पर्याय नाम पित्तातिसार, खूनदार दस्त, गर्मी के दस्त, इन्फेकशस डायरिया, समर डायरिया इन नामों से यह रोग प्रख्यात है।

इसके भेद साधारण और तीव्र भेद से यह दो प्रकार का होता है। दोनों प्रकार के रोग के लक्षण भिन्न २ हैं। अवस्था, अवधि, परिणाम और चिकित्सा भिन्न २ हुआ करती हैं।

कारण—मलिन आहार, बाजारी दूध, गाढ़ा दूध, माता का अत्युष्ण पदार्थों का सेवन करना, आवश्यकता से अधिक भोजन देना, दुर्गन्धित वायु सेवन, अशुद्ध वायुपूर्ण गृह में निवास, गुरुपाकी द्रव्यों का भोजन, बच्चों को मलिन रखना, ग्रीष्म ऋतु और ऊष्मा की अत्यधिक वृद्धि प्राय: इस रोग का कारण होते हैं। पाश्चात्य चिकित्सक इस रोग को उत्पन्न करने वाले कीट विशेष मानते हैं।

सम्प्राप्ति

उपर्युक्त कारणों से अन्तड़ियों की श्लैष्मिक कला में पित्ताधिक्य के कारण धारणा शक्ति दुर्बल हो जाती है। जिसके कारण बार २ विरेचन होते हैं। रोग के साधारण कोप में यही दशा रहती है। विशेष प्रकोप में अन्तड़ियों की श्लैष्मिक कला में शोथ आ जाता है। ऐसी अवस्था में उचित चिकित्सा से दशा सुधर जाती है। अनुचित उपायों के कारण भीतर से आंतें पक जाती हैं और परिणाम भयंकर हो जाता है।

लक्षण—कभी २ यह रोग मन्द गति से आरम्भ होता है। इस अवस्था में मल का वर्ण पीत प्रभ होता है। साधारणावस्था से कुछ पतला होता है। एक दो दिन यह दशा रहने के पश्चात् पतले और पीले दस्त आने लगते हैं। दस्तों की संख्या दिन रात में ८, १० से अधिक नहीं होती। इसके साथ ही ज्वर भी हो जाता है। बेचैनी बढ़ जाती है। निद्रावस्था में अचेत पड़ा हुआ बालक सहसा चौंक पड़ता है। यदि ज्वर बढ़ जाय तो वमन भी आरम्भ हो जाती है। मल अम्ल गन्ध से युक्त तथा फुटकीदार हो जाता है। दो तीन दिन मल की यह दशा रह कर प्रकृत गन्ध पर आ जाती है। इस दशा में भूख नष्ट हो जाती है। दूध आदि किसी पदार्थ के खाने की इच्छा उसको नहीं होती। बालक की जिह्वा पर श्वेत पपड़ी सी जम जाती है। जिह्वा के किनारों और मुख में छाले पड़ जाते हैं। बालक का वर्ण पीत हो जाता है। अत्यन्त दुर्बलता दिन प्रति दिन बढ़ती जाती है। ८, १० दिन यह दशा रहने के पश्चात् यदि प्रकृति सहायक हो तो शनैः २ दस्त घटने लग जाते हैं। उपर्युक्त सब लक्षण क्रमशः अल्प बल होकर मिटने लग जाते हैं। बालक की बेचैनी कम हो जाती है। क्षुधा की ओर प्रवृत्ति होने

लगती है। खाया हुआ भोजन आमाशय में टिकने लग जाता है। ज्वर विच्छेदावस्था में परिणत हो जाता है। यदि प्रकृति सहायक न हो तो रोग के सब लक्षण स्थिरता कर लेते हैं। यही दशा शीतकाल के आरम्भ तक बनी रहती है। विशेष प्रकोपारम्भ में ज्वर का तापमान १०२ तक हो जाता है। बेचैनी बढ़ जाती है। बालक का स्वभाव चिड़चिड़ा हो जाता है। प्रायः अङ्गमर्द का लक्षण उत्पन्न हो जाता है। हाथ पांव ऐंठने लग जाते हैं। अत्यन्त दौर्बल्य के साथ साथ तन्द्रा में पड़े रहने की दशा उत्पन्न हो जाती है। वमन का उपद्रव बढ़ जाता है। वमन की वृद्धिगतावस्था में प्रथम तो फटा हुआ दूध निकलता है, तदनु लगातार पतला पानी और कभी २ पित्त मिश्रित तरल भी आता है। दुग्धेतर अन्य पदार्थ जो आमाशय में पहुंचाया जावे फौरन वापिस आजाता है। भूख बिलकुल नष्ट होजाती है। तृषा की अत्यंत वृद्धि होजाती है। इस विशेष प्रकोपावस्था के प्रारम्भ में गुदनिःसृत मलका वर्णादि साधारण प्रकोपावस्था जैसा ही रहता है, परन्तु बाद में मलका वर्ण हरित, दुर्गन्धियुक्त तथा पतला होजाता है। अन्त्रस्थ श्लैष्मिक कला के खण्ड (छिछड़े) भी मल में पाए जाते हैं (खण्ड देखने के लिए बच्चे के मल को स्वच्छ पात्र में डालकर स्वच्छ जलसे धो कर देखना चाहिए) दस्तों के निरंतर आने पर भी पेट फूल जाता है। पेट में साधारण अथवा मरोड़ों की तरह का दर्द उठता है। वमन विरेचनों की संख्या २४ घंटा में ३०—३५ तक पहुंच जाती। मल मात्रामें अल्प होता है। यदि जीवन शेष हो तो यह दशा ४-५ दिन रह कर प्रतिक्रियावस्था को उत्पन्न करती है। प्रतिक्रियावस्था में उपर्युक्त सब लक्षणों की भयंकरता मृदुता में परिणत होने लगती है। इस समय उचित चिकित्सा आदि की सहायता से रोगी रोगमुक्त हो जाता है। अन्यथा संसार से मुक्त हो जाता है।

परिणाम

इस रोग के आक्रमण से पूर्व यदि बालक स्वस्थ और बलवान हो एवं चिकित्सा और पथ्य अपथ्य पर पूर्ण ध्यान दिया जावे तो परिणाम शुभ होता है।

यदि बालक पूर्व ही रोगी, मन्दाग्नि पीड़ित हो और चिकित्सा के पाद चतुष्टय का अभाव अथवा वैषम्य हो तो परिणाम अशुभ होता है।

रोग निदान करते हुए चिकित्सक को रोग के समस्त लक्षणों को भली प्रकार ध्यान में रखते हुए, यह निर्णय करके चिकित्सा में प्रवृत्त होना चाहिये कि रोग साधारण है या विशेष।

चिकित्सा

चिकित्सा आरम्भ करने से पूर्व वैद्य को दो चार बातें ध्यान में रखनी चाहियें। प्रथम यह कि बच्चों के रोगों का मार्मिक बुद्धि से निर्णय करना चाहिए। क्योंकि बालक अपने मुख से अपने कष्ट का वर्णन नहीं कर सकता, अतः वैद्य को अपने अनुभव से ही उसके साधारण और विशेष कष्ट का ज्ञान करना होता है। बच्चे की माता धाय अथवा अन्य परिचारक रोग वृत्त करते हुए, उस कष्ट का विशेष वर्णन करते हैं जिसके द्वारा उनको अधिक परेशानी होती है।

ये लोग जिस कष्ट पर जोर देते हैं वह भले ही मूल व्याधि न हो। परन्तु उन्हें उस लक्षण से विशेष कष्ट होता है। अनुभवी वैद्य को परिचारकों द्वारा बताए हुए कष्ट पर सोलह आने निर्भर रह कर अपने अनुभवजन्य निर्णय को तिलाञ्जलि न दे देनी चाहिए।

उचित निर्णय कर लेने के पीछे औषध व्यवस्था का समय आता है। रोगी के घर वालों की इस समय यह चीख पुकार रहती है कि इसे कोई बढ़िया और तत्काल दस्त बन्द करने की औषध दी जावे। अनुभवी चिकित्सक परिचारकों की इस चीत्कार का न बुरा मानते हैं और न उस पर क्रियाशील ही होते हैं। वे अपने नियम के अनुकूल बालक के रोग को दूर करने में प्रयत्नशील होते हैं। परन्तु नए २ चिकित्सक प्रायः ही रोगी के परिचारकों की इच्छा के अनुसार चिकित्सा करने पर उद्यत हो जाते हैं। ऐसी दशा में कभी २ तीव्र संग्राहक औषधादि के प्रयोग से अल्पकाल के लिए मल रुक तो जाता है, परन्तु साथ में बच्चे का पेट फूल जाता है। दस्तों में पेट फूलने का लक्षण भयावह होता है।

औषध

अल्पवयस्क बच्चों के लिए प्रायः ऐसी ही औषधें चुननी चाहियें जो तीक्ष्ण न हों, अधिक उष्ण न हों, विषयुक्त न हों तथा जिस योग में बहुतसी औषधों का संग्रह न हो। कारण कि बच्चे के शारीरिक यन्त्र एवं मन अत्यन्त कोमल होते हैं। तीक्ष्ण और विपाक औषधें तुरन्त बुरा असर करती हैं।*

*रोग के साधारण प्रकोप में निम्नलिखित औषधों को इसी विधि से सैकड़ों बार हमने स्वयं प्रयोग किया है। सब से प्रथम बच्चे को एरण्ड तैल का विरेचन देना चाहिए। एरण्ड तैल अत्युच्चकोटिका हो। साधारण एरण्डतैल हानिकर होता है। एरण्डतैल की मात्रा—३-६ माशा हो, खाण्ड के साथ अथवा दूध के साथ देना चाहिये। परन्तु ध्यान रहे कि विरेचनार्थ उन्हीं बच्चों को एरण्डतैल देना चाहिए जिनको अत्यन्त तृषावृद्धि न हो और मुख तथा शरीर का वर्ण अत्यधिक पीत न हो गया हो। यदि ऊपर की दशा उत्पन्न हो तो—(१) अमलतास का गूदा ६ माशा, अर्क गुलाब ५ तोला, में भिगोकर मसल कर छान लेवे और मिश्री मिलाकर रख लेवे। इसी का एक २ चिमचा चार २ देने से विरेचन कार्य भली भांति होता है। (२) सौंफ, मुनक्का, गुलबनफशा, फूल गुलाब विलोरी प्रत्येक ४—४ माशा, पाकार्थजल १६ तोले, अवशिष्ट क्वाथ—४ तोले। इसको भः चिमचा २ भर की मात्रा से प्रयोग करे। ३—हरड़, बहेड़ा, आमला, धनियां, प्रत्येक द्रव्य का चूर्ण ३—३ माशा, फाण्ट विधि से ८ तोला जल में फाण्ट बना कर रख लेवे। तृषा की अधिकता पर इस फाण्ट में मिश्री मिलाकर देवे। यदि उदर में पीड़ा की अधिकता हो तो समग्र फाण्ट में ३ माशा सौवर्चल लवण पीस कर मिला कर रख लेवे। एक २ चिमचा देने से इच्छित लाभ होता है। इन तीनों योगों से इस रोग में विरेचन कार्य करने से संशय रहित विजय प्राप्त होती है। इस आरम्भिक कार्य के पश्चात् अन्तड़ियों की दशा

सुधारने के लिए—सिद्ध प्राणेश्वररस * अथवा महागंधक† को उचित मात्रा—½ से १ रत्ती, अनुपान माता का दूध, यदि बालक बड़ा हो तो—बेलगिरी, इन्द्रजौ, इनके क्वाथ से देने चाहियें।

विशेष प्रकोपावस्था की चिकित्सा

इस अवस्था में रोगी को अनेक कष्ट होते हैं। अनुभवी चिकित्सक का सर्व प्रथम कर्त्तव्यकर्म यह होना चाहिए कि जिस लक्षण या उपद्रव से रोगी अधिक क्लेश पा रहा हो उस की चिकित्सा प्रथम आरम्भ करे। रोग की इस दशा को निवारण करने के लिए नीचे कुछ योग लिखे जाते हैं। इन्हीं योगों को पृथक २ अदल बदल कर अथवा मिश्रित करके प्रयोग किया जाता है। ईश्वरानुग्रह से इसी चिकित्सा सरणी से लाभ हो जाता है। नीचे लिखी मात्रा १-३ वर्ष तक आयु की जाननी चाहिए।

१—स्योनाकत्वक चूर्ण १-२ माशा, तण्डुलोदक २ तोला, उत्तम मधु ६ माशा। सब को शीशी में डाल कर मिला लेवें। मात्रा २-३ माशा यह योग उस समय अधिक लाभ करता है जब मलका वर्ण अति पीत और पतला हो। इससे शनैः २ दस्तों की संख्या घटती है ज्वर और प्यास दोनों का ह्रास होता है।

२—मरोड़ उठने कीसी पीड़ा अथवा पेट में अफारा हो तो—सोंठ, पीपल, धनियां, इन्द्रजौ, बेलगिरी समभाग। सौवर्चललवण सब से आधा। मिला कर रख लेवें। मात्रा—४ रत्ती अनुपान—उष्णोदक। एक दिन में ४-६ मात्रा देने से ही उक्त दोनों उपद्रव शांत होते हैं।

३—यदि मल के साथ रक्त आता हो तो मुरब्बा हरड़, मुरब्बा आमला, मुरब्बा बीह और मुरब्बा सेब-१-१ तोला लेकर स्वच्छ खरल में पीस लेवे। बच्चों को मिठाई की तरह थोड़ा २ इसे लेह के रूप में ही देना चाहिए। और पानी के साथ घोल कर भी १-३ माशा की मात्रा से दिन रात में ५-६ बार प्रयोग कराने से आशातीत लाभ होता है। यह एक अद्भुत गुण कारक योग है।

४—सूक्ष्म पिष्ट दुग्धपाषाण (सेलखड़ी) २-४ रत्ती, बेलगिरी के हिम अथवा शर्बत अञ्जबार के साथ देवे।

५—सेलखड़ी (चाक) के चूर्ण को २। २ रत्ती की मात्रा जल से दी हुई लाभ करती है।

यदि दस्तों के साथ २ के की अधिकता हो तो दरयाई नारियल और कमलडोडे की गिरी को अर्कगुलाब के साथ घिस कर बार २ पिलावें। इस से वमन का उपद्रव दूर होता है।

७—अथवा बहेड़े की मज्जा को अर्कगुलाब में घिस कर देने से भी वमन की अधिकता नष्ट होती है।

८—आमलकी चूर्ण को अर्क गुलाब में मिला कर मिश्री से मीठा कर के पिलाने से भी कै का आना तुरन्त बन्द हो जाता है।

९—मीठे अनार के साथ फिटकड़ी की भस्म १ रत्ती देने से भी बार २ कै का आना रुक जाता है।

* १—रसेन्द्रसार ज्वरातिसाराधिकार।

† २—अतिसाराधिकारोक्त।

१०—अथवा दक्षिणी सुपारी का वस्त्रपूत चूर्ण १ तोला, हलदी का वस्त्रपूत चूर्ण १ तोला, शंख-भस्म १ तोला। सबको मिला कर रखलेवे। **मात्रा**–१–२ रत्ती, **अनुपान** जल। इस उत्तम योग से कभी २ आशातीत लाभ होता है। बड़ों के लिए इसकी मात्रा—१ माशा होगी।

११—इनके अतिरिक्त जब रोगीको उपद्रवादि का कष्ट न हो तो रसेन्द्र चूर्ण(भैषज्य रत्ना०), अभ्रवटिका, लघुसिद्धाभ्रक, महागंधक, सर्वाङ्गसुंदर, सिद्धप्राणेश्वर, पीयूषवल्ली, नृपतिवल्लभ आदि रस भी आवश्यकतानुसार उचित मात्रा में प्रयोग कराए जा सकते हैं।

१२—अनेक बार इस रोग में यह भी देखना पड़ा है कि स्थान परिवर्तन से तुरन्त लाभ होता है। १६३४ का वृत्त है कि एक रोगी बालक हमे दिखाया गया जो निरन्तर दो मास रोग के आक्रमणों द्वारा प्रतिक्रियावस्था से पूर्व की अवस्था तक पहुंच चुका था। अनेक औषधे दी गयीं परन्तु कुछ लाभ नहीं हुवा। उधर जून का महीना था, इस मास में लाहौर मे कितनी अग्निवर्षा होती है यह वही जान सकता है, जिसे जून मास में लाहौर आने का सौभाग्य या (दौर्भाग्य) प्राप्त हो, तीव्र अग्निवर्षा के कारण औषधों से इच्छित लाभ न हुआ। तदनु रोगी के पिता को यह सलाह दी गई कि वह इस बालक को हरिद्वार ले जावे। इस बच्चे की आयु तीन वर्ष से कम ही थी, कुछ औषधें साथ देदी गयीं। परन्तु हरिद्वार पहुंचने पर प्रथम दिन औषध का कोई प्रयोग नहीं हुआ। प्रदर्शित विधि से बालक को गंगा प्रवाह में स्नान कराया गया और गंगा जल का ही पान उस दिन होता रहा। दूसरे दिन बालक के पिता ने जो समाचार पत्र द्वारा भेजा उसका आशय इस प्रकार है—'प्रातः हरिद्वार पहुंचते ही हम सीधे कपूरथला वालों की धर्मशाला पहुंचे और उसी धर्मशाला के अत्यंत रम्य घाट पर बैठ कर बच्चे को गंगा जल से भीगे वस्त्र से ढक दिया। थोड़ी देर के पश्चात गंगाजल से उसके समस्त अङ्ग धो दिए गए। थोड़ा २ जल ही आपकी आज्ञानुसार देते रहे। इसका परिणाम यह हुवा कि लाहौर की अपेक्षा उनसे दस्त भी कम आए और एक विशेष बात यह हुई कि दो मास के पश्चात बच्चे ने यहां आकर निरन्तर ४ घंटे की गहरी नींद ली है। निद्रा के पश्चात् बेचैनी बहुत कम थी, ज्वर का नाम निशान न था। इसी दिन सायंकाल उसे एक तोला के करीब मट्ठा चटाया गया। पाठक गण! यह वृत्त पढ़ने का कष्ट इस लिए आपको दिया गया है कि कभी २ जब औषधादि का प्रभाव ऋतु अथवा परिस्थिति अनुकूल न होने से नहीं होता तब ऐसे रोगियों को केवल स्थान परिवर्तन से ही लाभ होजाता है यह बालक ईश्वर कृपा से स्वस्थ है। सब चिकित्सक इसके जीवन से निराश हो चुके थे।

१३—**भोजन**—ऐसे रोगी को दूध और शीतल भोजन हितकर होता है। ज्वर कम हो तो मूंग की दाल पतली सी देनी चाहिए। अन्यथा—मांस रस, छाछ, मसूर यूष, संतरे का रस, अनार का रस, ग्लूकोज, मधु, 'भक्तकल्पार्णव' और 'पथ्यकल्पद्रु-छिन्न', साबूदाना, आदि २।

१४ **परिचर्या**—रोगी का बिस्तरा प्रति दिन बदल देना चाहिए। बिस्तरे पर पुष्पादि रखने

बालशोषरोग

(प्रो० बालकराम शुक्ल शास्त्री, शास्त्राचार्य, आयुर्वेदाचार्य, आयुर्विज्ञानाचार्य, एम० डी० एल०
आयुर्वेद विद्यालय हृषीकेश।)

पर्याय—सूखा रोग, सुखन्ना, तालुकण्टक, अस्थिकोमलता।

विवरण

जो बालक कफ से दूषित माता का दूध पीते हैं और मात्रा से अधिक प्रति दिन सोते हैं। गुरु, मधुर, अति स्निग्ध, द्रव, शीतल जलादि पदार्थ सेवन करते हैं। और विशुद्ध वीर्य वाले पदार्थों का सेवन करते हैं। उन बालकों के शरीर में कफ कुपित होकर रसवाही स्रोतों का अवरोध कर देता है। अतः रस से उत्पन्न होने वाली रक्तादि धातुओं की विधि पूर्वक उत्पत्ति नहीं होती है। इससे शरीर क्षीण हो जाता है। और अरुचि प्रतिश्याय, ज्वर, कासादि रोग पैदा हो जाते हैं। इससे बालक सूख जाता है। केवल उसका चिकना सफेद मुख मालूम होता है। और नेत्र सफेद स्निग्ध दिखलाई पड़ते हैं। कोमल तालु में गढ़ा पड़ जाता है। इससे इसको तालुकण्टक, भी कहते हैं। तालु में गढ़ा पड़ जाने से तालु कुछ २ बाहर निकल आता है। इससे बालक को दूध पीने में बहुत कठिनता पड़ती है। अथवा, कभी २ दूध पीता भी नहीं है। दूध न पीने से और भी किसी प्रकार का आहार सेवन करने में असमर्थ हो जाने पर शरीर के पोषण न होने पर शरीर केवल अस्थि कंकाल मात्र ही दीख पड़ता है। इससे इसको बाल शोष कहते हैं।

यथोक्तम सुश्रुते—

शोषणात् रसादीनां धातूनां शोषइत्यभिधीयते।

अष्टाङ्गसंग्रहे बालशोषस्य लक्षणं प्रोक्तम्—

अत्याहः स्वप्न शीताम्बु श्लैष्मिकन्न न्य सेविनः।
शिशोः कफेन रुद्धेषु स्रोतःसु रसवाहिषु॥
अरोचकः प्रतिश्यायो ज्वरः कासश्च जायते।
कुमारः शुष्यति ततः स्निग्ध शुक्ल मुखेक्षणः॥
(अ० स० ३)

तालुकण्ट लक्षणम्

तालु मांसे कफः क्रुद्धः कुरुते तालुकण्टकम्।
तेन तालु प्रदेशस्य निम्नता मूर्ध्नि जायते॥
तालुपातः स्तनद्वेषः कृच्छ्रात्पानं शकृद्द्रवम्।
तृड्‌क्षि कण्ठास्य रुजा ग्रीवादुर्धरता वमिः।

साम्यभाव

बाल शोष का साम्यभाव पाश्चात्य चिकित्सा पद्धति के रिकेटस (Rickets) के साथ ही सकता

चाहिए बालक के शरीर को शीतल जल से भीगे वस्त्र द्वारा पोंछना चाहिये। उसकी पिपासा पर पूर्ण ध्यान रखना चाहिए। कमरा स्वच्छ और हवादार हो। इस प्रकार आचरण करने से यह दुष्ट रोग अवश्य दूर हो जाता है।

—:०:—

है। यद्यपि बहुत लक्षण भिन्न हैं, किन्तु कुछ साम्यभाव मिलता है। इसका मुख्य कारण यह है कि बालकके भोज्य पदार्थमें खाद्योज (Vitamin) डी, और, खाद्योज, ए, का अभाव मानते हैं। यहरोग अयोग्य आहार यथा—शैशव काल में श्वेत सार की अधिकता, घृत दुग्ध मक्खन का अभाव। गर्भावस्था में जननी की दुर्बलता, इससे बालक दूध पिलाने में असमर्थता, अशुद्ध जलवायु का सेवन, अशन, वसन, वास स्थानादि का दोष, विशुद्ध वायु का अभाव, पवित्रता, शुद्धता का अभाव, ये इस रोग के प्रवर्तक कारण है। और यदि माता पिता को क्षय (ट्यूबक्यू लोसिस्) है। अथवा उपदंश (सिफलिस) का रोग है तो उसकी सन्तान के अवश्य ही यह रोग होता है।

सम्प्राप्ति

अस्थियों के आभ्यन्तर में समुचित मात्रा मे खटिक, फासफोरस लवण नहीं स्थिर होते हैं। अस्थिके विकास की जगह मे विकृत रूप से कार्ले (सेल्स) पड़ रहते है। खटिक लवण अस्थियों के अन्दर ६० (साठ) प्रतिशत के स्थान पर ३० प्रतिशत ही रह जाता है। और अस्थियों के सिरा चिरकाल तक संयुक्त न हो करके पृथक पृथक रहते हैं। शिर में चिरकाल तक ब्रह्म रन्ध्र (पुर कपालास्थि के मध्य भाग में) और शुक्ररन्ध्र स्थिर रहते हैं। जिस से ब्रह्म रन्ध्र के स्थान गम्भीर गर्त प्रतीत हुवा करता है। और कर्णास्थिमटल की अस्थियां सपाट होने से चपटा शिर मालूम होता है। इस समय बालक के चलने फिरने से अस्थियां मृदु होने के कारण [illegible] हो जाती हैं। यकृत्, प्लीहा बढ़ जाती है। लसीकाग्रन्थियां वृद्धि को प्राप्त हो जाती है। शोणिताल्पता (एनीमिया) उपस्थित हो जाती है।

लक्षण

डेढ़ और अढ़ाई वर्ष के मध्य में प्राय: यह रोग बालक को होता है। यह रोग गुप्त रूप से शुरू होता है। कई महीने तक तो इसका ज्ञान भी नहीं होता है। प्रथम लक्षणों के मध्य में बालक के ललाट में और ऊपर के अङ्ग में स्वेद निकलता है। सदा बालक विह्वल रहता है, रोता रहता है। और शान्ति पाने के लिये शीत अथवा उष्ण ऋतु होवे, प्रत्येक ऋतु में ओढ़े हुवे कपड़ों को फेंकता रहता है। उसका शरीर अत्यन्त कोमल हो जाता है। उसको हिलावे, डुलावे तब भी वह चुपचाप रहता है। कभी कभी उसके मूत्र में अधिक मात्रा से फास्फेट चूर्ण पाया जाता है। उसका पेट फूला रहता है। उसमें आध्मान के लक्षण मिलते हैं। सम्पूर्ण अस्थियों का प्रान्त भाग विशेष करके बहि: प्रकोष्ठास्थि का नीचे का भाग, और जंघास्थिका भी नीचे का भाग फूल जाता है। सब पसलियां टेढ़ी पड़ जाती हैं। पृष्ठवंश, आगे अथवा पीछे की ओर, कभी, दाहिनी, बाईं तरफ टेढ़ी होजाती है। शिरकी कपालास्थियों के सीवन मोटे होजाते हैं। उसके बाद अन्यान्य अस्थियां भी टेढ़ी होजाती हैं। वक्ष:स्थल की अस्थियां, कबूतर के वक्ष के आकार के समान होजाती हैं। वस्ति चौड़ी होने से चपटी होजाती है। शिर चपटा, चतुष्कोण होजाता है। सम्पूर्णरन्ध्र (फन्टीनेली) विलम्ब से मिलते हुवे देखे जाते हैं। शिर की अस्थियां स्थूल हो जाती हैं। उन पर



साहित्याचार्य वैद्यवर पं० रामानन्द जी पन्त विद्यावारिधिः बाजार सीताराम (देहली)



कविराज पं० [illegible] शास्त्री व्याकरणतीर्थ आयुर्वेदाचार्य धन्वन्तरि फिजीशियन [illegible] [illegible] देहली



पं० चन्द्रशेखर पाण्डेय 'चन्द्रमणि' काव्यतीर्थ, बछरावां [illegible] (रायबरेली)



पं० [illegible] जी आयुर्वेदाचार्य [illegible] शास्त्री-मन्दिर [illegible] लाहौर।

पापुलर प्रेस, देहली।

ग्रन्थियां बन जाती हैं। बालक के दांत देर में निकलते हैं। और दांत बाहर निकलने पर अधिकतर वे क्षय हो करके नष्ट हो जाते हैं।

उपद्रव

श्वास, कास, हरे, पीलेदस्त न्यूमोनिया (फुफ्फुसप्रदाह) धनुस्तम्भ (टिटैनस) आक्षेप, शिरस्तोय (Hydrocensptralo Phalus) आदि अनेक उपद्रव देखे जाते हैं।

रक्तपैत्तिक कोमलास्थि (स्कार्वीरिकेटस)

बालकों के जब यह रोग तरुण अवस्था में प्रकट होता है। तब इसको तरुणास्थि कोमलत्व कहते हैं। और उसमें जब रक्तपित्त के लक्षण उत्पन्न हो जाते हैं। उस समय सब लक्षण पूर्व के तुल्य होते हैं। इसके आक्रमण में कभी २ उर्वस्थि फूल जाती है। और अस्थिधरा कला के अन्दर रक्त के पहुंच जाने से वह भी फूल जाती है। इसमें अधि कोमलता, शोथ, दांत के मसूड़ों का सूजना विशेष करके देखा जाता है।

चिकित्सा

बालक का आहार विहार बिलकुल शुद्ध परिमित होना आवश्यक है। और पीने के लिये शुद्ध दूध बालक के लिये देवे। बालक के मल को शुद्ध रक्खे। शुद्ध एरण्डतेल कभी कभी प्रयोग करे। इससे पाखाना शुद्ध होता रहता है। जहां पर खुली साफ़ वायु आती होवे उस मकान में बालक को रक्खें। सूर्य प्रकाश भी शरीर में लगना चाहिये। बालक को संतरा, अनार, पपीता, अंगूर आदि फलों का रस देवे। मक्खन, घृत, आदि पौष्टिक पदार्थ देवें। अर्थात् जिस चीज़ में विटामिन ए, और, विटामिन डी, होवें वह चीज़ें बालक के लिये अति उपयुक्त हैं। यदि माता का दूध बच्चा पीता है, उस माता को, खाद्योज (विटामिन) ए०, डी०, उचित मात्रा में सेवन करावे। जो मातायें गर्भिणी दशा में खाद्योज, ए०, डी०, का उचित मात्रा में सेवन करती हैं उनके बालकों को यह रोग नहीं होता है। जो बच्चे धूप में खेलते रहते हैं। उनको भी यह रोग कम होता है।

अन्यपरीक्षा—कभी २ मूर्ख स्त्रियां मक्खी मार कर भी बच्चे को रोग की परीक्षा के लिये खिलाती हैं। यदि रोग होगा तो वमन नहीं होगा, अन्यथा वमन होगा। यह परीक्षा भी हानिकारक है।

गुड़ीय परीक्षा

बालक के तालु के ऊपर जो गर्त है। उसमें दो माषे गुड़ रखकर गेहूं के आटे की लोई बनाकर रख देवे। ऊपर से पट्टी बांध देवे। चार घंटे के बाद पट्टी खोलने पर रोग का निश्चय हो जायगा यदि रोग होगा, तो गुड़ गायब हो जावेगा। और रोग के न होने पर गुड़ ज्यों का त्यों उसी स्थान पर रहेगा।

तालुवृद्धि चिकित्सा

यदि बालक का तालु बढ़ गया होवे तो उसको ऊपर दबा देवे। और जवाखार, मधु, मिला कर रगड़ना चाहिये। अथवा, पीपल, सोंठ, गोबर का रस, सैन्धा लवण, इन सब को मिला कर रगड़ें। तालु के गढ़े में मलना चाहिये।

यथोक्तं वाग्भट्टे—

तत्रोत्क्षिप्य यवक्षारसैन्धवाभ्यां प्रतिसारयेत ।
तालुतद्वत्कणाशुंठी गोशकृद्रस सैंधवै ।

शृंगवेरादिप्रयोग:

आर्द्रक, हल्दी, भंगरा, इनको समान भाग में ले करके कल्क बना कर गोला बना लेवे। उसके ऊपर बट के पत्ते लपेट कर धागा बांध देवे फिर उसके ऊपर गोबर का लेप कर देवे। कण्डों की अग्नि में पकावे। जब गोबर सूख कर जलने लगे। उसी समय निकाल लेवे। फिर उसको कपड़े पर रख कर उसका रस निचोड़ लेवे वह रस तालु, मुख पर लेप करे। नेत्रों पर भी सिञ्चन करे। इसका ४० दिन तक प्रयोग करे। इससे पूर्ण लाभ होता है।

यथोक्तं वाग्भट्टे—

शृंगवेरनिशाभृंगं कल्कितं वट पल्लवैः ।
बध्वागोशकृता लिप्तं कुकूले स्वेदयेन्नरः ।
रसेनलिम्पेत्तालु आस्यं नेत्रं च परिषेचयेत ।

[illegible]

हरीतकी, जीरा, वच, कूठ, इनको समान भाग में ले करके कल्क बना लेवे। उसमें मधु मिला कर माता के दूध के साथ चटावे इससे तालुपात अच्छा हो जाता है। एक वर्ष के बालक के वास्ते कल्क की मात्रा चौथाई रत्ती है।

यथोक्तं भैषज्यरत्नावल्याम्—

हरीतकी वचाकुष्ठकल्कं माक्षिकसंयुतम् ।
पीत्वाकुमारः स्तन्येन मुच्यतेतालुपाततान ।

शंखकीट प्रयोगः

शंख जो बजाने के लिए व्यवहार किया जाता है। बिहार, कलकत्ता आदि शहरों में अधिक मिलता है। उसका कीड़ा लेकर सुखा लेवे, फिर उसका सूक्ष्म चूर्ण कर लेवे। एक रत्ती की मात्रा से मधु के साथ दिन में दो बार व्यवहार करे। इससे रोग समूल नष्ट हो जाता है।

जहरमोहरा खताई की भस्म

जहरमोहरा खताई को लेकर घृतकुमारी के स्वरस में घोट कर टिकिया बना कर सुखा देवे। फिर उसको सकोरों में बन्द करके कपड़ मिट्टी करके सुखा देवे। और ५ सेर उपलों की अग्नि में भस्म कर देवे। मात्रा १–२ र० तक शर्बत अनार के साथ देवे और लाक्षादि तेल की मालिश करके बच्चे को धूप में एक घंटे खेलने दें। इससे पूर्ण लाभ होता है।

हिंगु-प्रयोग

कुछ थोड़ा सा घी तवे पर डाल कर अग्नि पर रक्खे। जब तवा गरम हो जावे, तो उस पर हींग डाल देवे। करछुली से चलाता जावे, जब हींग का फूला हो जावे, तब उतार लेवे। फिर शीशी में रख लेवे। मात्रा १ रत्ती ले करके उसमें अदरक का रस ४ बूंद, तुलसी की पत्तियों का स्वरस ४ बूंद, भैंस के ताजे गोबर का स्वरस ४ बूंद, शहद ८ बूंद मिलाकर सुबह शाम चटावे। और मरिचादि तेल की मालिश करे। तेल का मालिश ४० दिन तक बराबर करना चाहिए, तब पूरा लाभ होता है।

महागन्धक योग—

(भैषज्य रत्नावली प्रोक्त) से भी पूर्ण लाभ होता है। (इति शम्)

बच्चों का हैज़ा और गर्मी के दस्त

(लेखक—श्री कैपटन डाक्टर मूलसिंह बजाज देहली।)

CAPT. MOOL SINGH BAZAZ. B. SC. M. B. B. S.

(Late I. M. S., & P. C. M. S.)

इसको मेदे और अन्तड़ियों की सोज़िश भी कहते हैं, यह मर्ज़ अन्तड़ियों में गड़बड़ पैदा करता है और खास तौर पर मेदे पर भी अपना असर डालता है। जो बच्चे खास तौर से ऊपर का दूध पीते हैं, उनको यह रोग अकसर हो जाया करता है। मगर मां का दूध पीने वाले भी बच्चे इससे बचे नहीं हैं। गर्मियों और गर्मियों के प्रारम्भ में अकसर पैदा हो जाता है इस रोग के रोगी प्रत्येक मौसिम में मिल सकते हैं। बड़े शहरों में तो इस क़दर फैला हुआ होता है कि अगर एक साल से पहले मरने वाले बच्चों की गिनती की जावे तो कम से कम आधे इस मर्ज़ के शिकार हुये होंगे। अगर उन तमाम बच्चों की गिनती की जावे जो कि इस रोग से मरे हैं, तो कम से कम ६० प्रतिशत ऊपर का दूध पीने वाले बच्चे होंगे। इस मृत्यु संख्या का यदि पूर्ण ध्यान रक्खा जावे तो इस रोग के कारण भी वे अच्छी तरह जान सकेंगे। उन जरासीमों को जो कि इस रोग का कारण होते हैं उनको छोड़ कर उन कारणों की तरफ आपका ध्यान दिलाना चाहता हूं जो कि इस बीमारी के पैदा करने में मददगार होते हैं या इसकी पैदायश के ज़िम्मेवार

२—संक्षेप से देखने पर मालूम होगा कि अयोग्य भोजन या उसकी बेपर्वाही होना इस रोग में विशेष कारण हैं। अथवा दूध जो बच्चों को दिया जाता है, उसकी असलियत ही ठीक नहीं है या उसे सावधानी पूर्वक नहीं रक्खा गया, और हाथों तथा बर्तनों की सफाई अच्छी तरह से नहीं की गई। जिससे उसकी माहियत में भी फ़र्क़ आ गया होगा और किसी तरह के जरासीम भी दाखिल हो गये होंगे। बच्चों की मातायें अकसर इन बातों के समझने में अनभिज्ञ रही हैं कि बच्चों के लिये जो दूध देवें वह निहायत ही तन्दुरुस्त गायों से निकाला जावे, और निकालने के लिये हाथ और बर्तनों का उतना साफ होना ज़रूरी है जैसे डाक्टर लोग ऑपरेशन करते समय किया करते हैं, क्यों बच्चों की नाज़ुक और नन्हीं २ अन्तड़ियों में वहां दाखिल होकर दूध की शक्ल को ही बदल दिया करती है, आम-तौर पर गाय का दूध जबकि वह बच्चे के पेट में जाकर जमता है। मां के दूध की निसबत बड़ा जमाव पैदा करता है। लेकिन जब इस दूध को बेएहतियाती से रक्खा जावे और मक्खियां और गर्दोगुबार की उस तक पहुंच हुई हो, या गर्मी के मौसम में उसको ठण्डी जगह में न रक्खा गया

हो और वह अध फटे की हालत को पहुंच चुका हो और बच्चों को दिया जावे तो इसका नतीजा यह होता है कि दूध का बड़ा मोटा फंकड़ा बनकर बच्चे की कुव्वते हाज़मे को आयल करके इसके मेदे और अन्तड़ियों को खराब करके उनकी बा-कायदा कारवाई में तबदीली पैदा कर देगा।

अलामात—यह तबदीली जो अलामात पैदा करती है वह निम्न लिखित हैं:—

प्रारम्भ में बच्चे को बेआरामी महसूस होनी शुरू होती है। मातायें आम शिकायत करती हैं कि बच्चा रोता है और किसी हालत में ठहरता नहीं है। मुमकिन है इस हालत में थोड़ी सी हरारत भी महसूस हो। कुछ अर्से के बाद बच्चा क़य करता है जिसमें मोटे २ फंकड़े दूध के जिनमें खटाई की बदबू आती है दिखाई देते हैं। बच्चा दूध पीने से इन्कार करता है और यदि जबरन दिया जावे तो क़य कर डालता है। शुरू में तो पाखाना मामूली होता है मगर वह भी घंटों बाद पतला फटा हुआ, बदबूदार लाल रंग का या सफेद रंग का या पारे के रंग का होता है। तादाद में पाखाना तीन चार बार ही हो या छः, आठ, दस तक पहुंच जावे तो मुमकिन है कि बुखार बढ़कर १०२ डिग्री या १०३ तक पहुंच जावे और बच्चा किसी क़दर निढाल होना शुरू हो जावे। अगर बच्चे का दूध पीना बन्द नहीं किया गया तो क़य और दस्त की तादाद बढ़ जाती है और बच्चे की निढाली भी बढ़ती जाती है और उस का रंग पीला पड़ जाता है। वज़न बड़ी जल्दी कम होजाता है, और नब्ज़ की रफ्तार धीमी यानी कमज़ोर पड़ जाती है। दस्तों की तादाद भी बढ़ जाती है और उनके साथ आंव (Mucus) व खून भी नमूदार हो जाता है, मिक़दार में दस्त छोटे होजाते हैं। और दस्त फिरते वक़्त बच्चे को तकलीफ़ होती है, पेशाब की मिक़दार भी बहुत कम हो जाती है, मुमकिन है कि इसमें चरबी वग़ैरह भी नमूदार हो जावे। सख्त किस्म की बीमारी में यह तमाम अलामात इन्तहा दरजे तक पहुंच जाती हैं। बच्चे की हालत ख़राब हो जाती है। पाखाना बेख़बरी में निकल जाता है, चेहरे पर झुरियां पड़ जाती हैं। आंखें अन्दर धस जाती हैं और बच्चा आखिर इस हालत में ज़ाया हो जाता है।

बीमारी का अन्जाम—हर एक Case में Prognosis खतरनाक होता है इसलिये इसका इलाज बहुत जल्दी और बड़ी अहतयात से करना चाहिये वरना जान का खतरा है।

इलाज—इलाज में सबसे पहले और ज़रूरी बात यह है कि ज्योंही बच्चे में इस बीमारी का शुबा हो उसको दूध देना बिलकुल बन्द कर दिया जावे और २४ घण्टे तक ज़रूर बन्द रक्खा जावे। Castoroil वग़ैरह से उसकी अन्तड़ियां साफ़ करदी जावें और २४ घण्टे तक उसे Glucose का पानी देना चाहिये। चीनी बिलकुल नहीं देनी चाहिये। अगर शुरू में ही अहतयात की जावे। यानी दूध देना बन्द कर दिया जावे तो यह खतरनाक बीमारी जल्दी ही क़ाबू में आजाती है, लेकिन कई बार सिर्फ़ दूध का रोकना, और मेदे और अंतड़ियों का साफ़ करना ही काफ़ी नहीं होता, ऐसी हालत में डाक्टरों का मशवरा लेना ज़रूरी



बालरोगाः



(लेखक—आयुर्वेदाचार्य कविराज, नानकचन्द वैद्य शास्त्री, आयुर्वेदधुरीण, आयुर्वेदरत्न, लाहौर)

यह सर्व साधारण को विदित है कि "बाल" तीन प्रकार के होते हैं यथा

"त्रिविधः कथितो बालः क्षीरान्नोभय वर्त्तनः। इति

अर्थात् तीन प्रकार के बालक कहे हैं १. केवल दुग्ध पान करने वाला यह अवस्था बालक की तब तक रहती है जब तक उसके दान्त नहीं निकलते। प्रायः हर एक शिशु को ६ मास के अनन्तर दान्त निकलने लग जाते हैं। इस समय बालक को "अन्न प्राशन" का विधान

अन्नप्राशनम्—शास्त्रों में वर्णन किया है। यथा चोक्तं गृह्य सूत्रे—

"षष्ठे मासेऽन्नप्राशनम्" अर्थात् जन्म से लेके छटे मास में कुमार को अन्नप्राशन कराना चाहिए। वेदोक्त विधि से हवनादि कर्म करके मधुरादिषट् रसयुक्त द्रव्यों को एक उत्तम पात्र में रखकर कुमार को जिसने स्नानादि कर लिया हो पवित्र वस्त्रालंकार से सज्जित कर एक बार अन्न खिलावें तदनन्तर उस बालक को भूमि पर बैठाकर उसके आगे हिन्दी, अंग्रेजी उर्दू आदि की पुस्तकें तथा शस्त्र, वस्त्रादि उसके सन्मुख रख दें तब वह बालक जिस पदार्थ को पकड़ ले वही उसकी जीवन वृत्ति का हेतु होजायगा अर्थात् उसी विद्या को वह पढ़कर वा शस्त्रादि कर्म द्वारा अपनी वृत्ति कमाकर निर्वाह जीवन भर करेगा ऐसा निश्चय है। इस प्रकार विधिवत् संस्कृत शिशु दीर्घायु तथा निरोग होता है। दो वर्ष तक बालक को दूध तथा अन्न का अभ्यास कराना पीछे केवल अन्न ही दिया जावे तो लाभकारी होता है फिर इसे दूध भी पिलाया जाये तो अन्न के बिना नहीं रह सकता।

प्रायः बालकों की माता के दुग्ध की विकृति से अनेक रोग उत्पन्न हो जाते हैं तथा बच्चों के दान्त निकलना भी रोग की उत्पत्ति का कारण होता है। दांतों के निकलने के समय बालकों को विशेष करके ज्वर, विड्भेद, कास, छर्दि, शिरोव्यथा, अभिष्यन्द (नेत्र रोग) शोथ तथा विसर्प आदि रोग होजाते हैं। इनके उपाय चिकित्सा में वर्णन किए जायेंगे।

होता है, ताकि यह खतरनाक बीमारी बढ़ न जावे।

अहतियात—इस बीमारी से बच्चों को बचाने के लिये यह ज़रूरी है, कि गर्मी में खास कर उसके दूध और दूध वाले जानवरों की खास अहतियात रक्खी जावे, दूध अच्छी गाय का लिया जावे, और एक दफ़ा उबालने के बाद ठंडी जगह में या बर्फ में रक्खा जावे। बोतल और रबड़ की टूंटी को दो बार साफ पानी से धो देना चाहिये और एक या दो बार सोडाबाई कार्ब से भी साफ कर लेना चाहिये। मक्खी वग़ैरह से अहतियात रखनी चाहिये। वैद्य की सलाह से अगर गाय का दूध मुवाफ़िक न हो तो उसका और इन्तज़ाम कर देना चाहियें।

दूषित स्तन्य के लक्षण

वातदुष्ट स्तन्यपान से बालक को वात व्याधियें तथा बालक क्षीण स्वर, अंगों का कृश होना, मल तथा मूत्र का बद्ध हो जाना होता है।

पित्त दुष्टस्तन्य से—स्वेद, मल भेद, कामला रोग, तृषा का होना तथा सर्वाङ्ग उष्ण रहे और अन्य पैत्तिक रोग हो जायें।

कफ दुष्ट स्तन्य से—लार का अधिक गिरना, कफ के रोग अर्थात दुग्धपान में अरुचि, शिर का भारीपन, निद्रा से पीड़ित, क्रियाशून्य (जड़) शूलयुक्त, श्वेत नेत्र, तथा वमन होना आदि हों। दो दोषों के मिश्रण से वा सर्व दोष जनित स्तन्य में दोषानुकूल लक्षण जान लेना चाहिए। शिशु की तीव्र वा अल्प पीड़ा को बच्चे के अधिक वा अल्प रोने से जानना चाहिए। ज्वरादि व्याधियें जो बड़ों को कही हैं वही बच्चों में हो जाती हैं। इस लिए देश काल बल आदि को जानकर उनका प्रतीकार करना चाहिए।

बालकों की औषध मात्रा यथा—सद्योत्पन्न शिशु के लिए वायविडङ्ग के दाने के समान औषध देना इसके पश्चात दो मास के अनन्तर एक विडङ्ग की वृद्धि करते जाना अर्थात एक वर्ष से ऊपर के बालक को बेर की गिरी के समान औषध दें, अर्थात जो बालक दूध तथा अन्न खाता है, उसे छोटे बेर के समान और अन्न खाने वाले को बड़े बेर के समान औषध देना चाहिये। जो बालक केवल दुग्ध ही पीता हो उस-की रोग शान्ति के लिये धात्रीको औषधि पिलाना चाहिये, तथा जो दुग्धान्न खाता है तो धात्री तथा बालक दोनों को औषधि देना चाहिये। केवल अन्न खाने वाले को ही औषध देना युक्त होता है। छोटे बच्चे को यदि रोग उत्पन्न हो जाये तो धात्री के स्तनों पर यथा दोष हर औषधी का लेपकर शिशु को पिलाना चाहिये। लंघन धात्री को ही कराना चाहिये बालक को लंघन नहीं किया जाता। "बालक को रोगानुसार हर एक द्रव्य का निषेध हो सकता है परन्तु स्तन्य का वर्जन नहीं होता"। यदि स्तन्य का अभाव हो तो बकरी या गौ का दुग्ध जो हित हो वह देना चाहिये।

नाभिशोथ—होजाने पर बालक को मृत-पिण्ड आग से गर्म करके उसके ऊपर दुग्ध डाल कर उससे स्वेदन करने से शोथ शीघ्र शान्त हो जाता है।

नाभिपाक—होजाने पर बकरी के मलको जलाकर उसपर लगाने से शान्ति होती है। अथवा क्षीरी वृक्षों की त्वचा का चूर्ण तथा चन्दन चूर्ण का चूर्ण मिलाकर लगाने से भी शान्ति होती है। अथवा हरिद्रा, लोध्र, प्रियंगु, मुलहैठी, इनके क्वाथ से तैल का पाक करके प्रयुक्त करें अथवा इन्हीं औषधियों को पीसकर तैल लगाकर ऊपर बुरकी देने से नाभिपाक शान्त होता है।

जो बालक देर से उत्पन्न हुआ हो परन्तु दुग्ध न पीवे तो उसकी जिह्वा को सैन्धवलवण, आमला, हरड़ का चूर्ण कर मधु तथा घृत में मिला रगड़े इसके सेवनसे बालक दूध पीने लगजाता है।

स्तन्यदोष—की शान्ति के लिये कूठ, हरड़, वच, ब्राह्मी, स्वर्ण भस्म, मधु तथा घृत के साथ और पाठा शहद के साथ चटावें। अथवा प्रियंगु,

सज्जीखार, लवण, मधुके साथ देने से स्तन्यदोष जनित शूलादि शान्त होते हैं यदि उदर में बच्चे के कृमि हों तो इन्हीं औषधियों में विडंग का चूर्ण मिलाकर देने से लाभ हो जाता है।

जो बालक दुग्ध पीकर वमन करदे उसे शहद, घृत, दोनों कटेली के फल का रस तथा पञ्चकोल चूर्ण मिला कर देवें फिर वमन नहीं होता।

स्तन्य दोष से यदि ज्वर हो गया हो तो उस बालक को धानी, और शहद के साथ कुटकी का चूर्ण चटावें ज्वर शान्त हो जाता है। अथवा नागरमोथा, हरीतकी, निम्बपत्र, परवलपत्र, मुलैठी इनका क्वाथ करके कुछ गरम ही देने से बच्चों के सब ज्वरों को नष्ट करता है। यह जितने प्रयोग दिये गये हैं अनेक बार अनुभव किये जा चुके हैं।

ज्वरनाशक धूप -

गुगल, वच, कूठ, हाथी का चर्म, भेड़ का चर्म, निम्बपत्र, मधु घृत इन सब को यथा लाभ लेकर कूट छान धूप देना ला, इस से ज्वर शीघ्र नष्ट हो जाता है।

कुक्षिरोग—

सौंठ, अतीस, नागरमोथा, नेत्रबाला, इन्द्र जौ इनसे किया क्वाथ बालकों के कुक्षिरोग को शान्त करता है।

आमातिसार में—

परवल का मूल, सौंठ, वच, विडंग, अजमोद पिप्पली इन सब औषधियों का क्वाथ करके देने से शीघ्र लाभ होता है।

अन्यच्च—

कोष्ठभेद में—आम की गुठली का कल्क बना कर उसका स्वरस मधु मिश्रित करके देने से शीघ्र आराम होता है।

अथवा—

बिल्वमूल के क्वाथ में लाजा तथा चीनी को मिला कर देने से बच्चों के वमन अतिसार शान्त होते हैं।

शुष्क खांसी—

क्षीर सेवन करने वाले बालक को यदि शुष्क कास (Whooping Cough) हो जाये तो उड़द का क्वाथ करके तथा घृत से छौंक देकर धात्री को पिलाने से शीघ्र लाभ करता है।

खांसी में—

मुनक्का, पिप्पली, शुण्ठी, इनका चूर्ण करके मधु के साथ चटाने से पांच प्रकार की खांसी को लाभ

श्वास—

पिपली, अजवायन, मुनक्का, काकड़ासिंगी, तवाशीर इनका चूर्ण मधु घृत के साथ चटाने से बच्चों के श्वास कास तथा ज्वर को दूर करता है। यह सब प्रयोग दांतों के निकलने से जो रोग उत्पन्न होते हैं उस समय देने से लाभकारी सिद्ध हुए हैं।

विसर्प रोग

विसर्पस्तु शिशोः प्राणनाशनो वस्तिशीर्षजः
पद्मवर्णो महापद्मः रोगो दोषत्रयोद्भवः॥
शंखाभ्यां हृदयं याति हृदयाच्च गुदं व्रजेत्॥

अर्थात् यह महापद्म नामक रोग तीनों दोषों

से उत्पन्न होकर बच्चों का प्राण नाशक होता है, यह एक प्रकार का विसर्प, वस्ति तथा शिर पर होता है अर्थात शंख से हृदय तक हो जाता है पुनः हृदय से गुदा तक पहुँच जाता है।

चिकित्सा—

परवल के पत्ते, त्रिफला, निम्ब, हल्दी, अनन्तमूल इनका क्वाथ शहद मिला कर पिलाने से क्षत, विस्फोट, विसर्प तथा ज्वर को नष्ट करता है।

लेप—

अनन्तमूल, कमल, चन्दन, मुस्तक, रक्त चन्दन, पुण्डरीक मजीठ, मुलैठी, सरसों इन्हें पीस पानी से लेप करने से विसर्प शान्त होता है।

कुकूणक माह

कुकूणकः क्षीर दोषाच्छिशूनामेव वर्त्मनि।
जायते तेन तन्नेत्रं कण्डूरञ्च स्रवेन्मुहुः,
शिशोः कुर्याल्ललाटाक्षिकूट नासावघर्षणम् ॥
न शक्नोत्यर्क प्रभां द्रष्टुं न वर्त्मोन्मीलनक्षमः ॥

अर्थात् दुग्ध दोष से बच्चों के नेत्र मार्ग में कुकूणक रोग उत्पन्न होता है जिससे नेत्रों में कण्डू और स्राव होने लगता है और बालक अपने मस्तक तथा अक्षिकूट नासा आदि को हाथों से रगड़ता है और वह न तो सूर्य की धूप को देख सकता है और न नेत्र बन्द करने की समर्थ रखता है।

चिकित्सा—

गोवर में मातृस्तन्य (दूध), कटु तेल और कांजी मिला करके कपड़े में बांध कर गरम २ स्वेदन करने से यह रोग शांत हो जाता है।

कुकूणकहर वर्ति—

दोनों हल्दी, लोध, मुलैठी, कटुरोहिणी, निम्बपत्र, ताम्ररज मिलाकर वर्ति बना कर अंजन करने से लाभदायक सिद्ध हुई है।

आलेप—

त्रिफला, लोध, दोनों सांठी, सोंठ, दोनों कटेरी इनका लेप गर्म करके नेत्रों पर लगाने से हितकर होता है। अथवा—

आश्चोतनं—

विधारे का वल्म मधु में मिला कर आश्चोतन करने से लाभदायक होता है।

पारिगर्भिक निदानं

"मातुः कुमारो गर्भिण्याः स्तन्यं प्रायः पिबन्नपि।
कासाग्निसाद वमथुस्तन्द्रा कार्श्याऽरुचि भ्रमैः ॥
युज्यते कोष्ठवृद्धया च तमाहुः पारिगर्भिकम् ॥

अर्थात् गर्भिणी माता के स्तनपान करने से बालक को पारिगर्भिक रोग होता है उसमें कास, अग्निमान्द्य, वमन, तन्द्रा, कृशता, अरुचि भ्रमादि रोग होते हैं। इस रोग में प्रायः अग्निवर्द्धक औषध लाभदायक होती है।

चिकित्सा—

मुलैठी, त्रिफला, अजमोद, सोंठ, पिपली, सौंफ, इनका क्वाथ कर बच्चे को पिलाने से लाभ होता है, अथवा अग्नितुण्डी वटी को मात्रा ½ आधी रत्ती उष्ण जल से दिन में दो बार देने से शीघ्र लाभ होता है।

तालुकण्टक

तालुमध्ये कफः क्रुद्धः कुरुते तालुकण्टकम्'
तेन तालु प्रदेशस्य निम्नता मूर्ध्नि जायते ॥

तालुपातः स्तनद्वेषः कृच्छ्रात्पानं शकृद्द्रवम् ॥
तृड्क्षि कण्ठास्य रुजा ग्रीवा दुर्धरता वमिः ॥

अर्थात् कफ कुपित होकर तालुके मध्य भागको निम्न करदेता है, जिससे तालुपात होना, स्तन द्वेष बच्चा दूध कठिनतासे पीता है, मल पतला, तृष्णा नेत्र कंठ तथा मुख में पीड़ा और वमन होता है।

चिकित्सा— हरड़, वच, कूठ इनका कल्क मधु मिलाकर स्तन्य के साथ पीने से लाभ होता है। अथवा अनन्त मूल, तिल, लोध, मुलैठी इन का क्वाथ करके मुख स्राव हो तो मुख को उक्त क्वाथ से धोयें।

मुखपाक में अश्वत्थवृक्ष की छाल तथा पत्रों में मधु मिला कर लेप करें तो लाभदायक होता है।

गुदापाक में रसौत से गुदा को लेप करें या रसांजन पिलायें वाअन्य पित्तघ्नी क्रिया हित होती है।

परवात्तक रोगमाह—

"दुष्टं मलादिभिर्मातुः स्तन्यं संपिबतः शिशोः।
यदाहि कुपितं पित्तं गुदं समभिधावति ॥
तदा सञ्जायते तत्र जलौकोदर सन्निभः।
व्रणः सदाह आरक्तो ज्वर कासकरः परः ॥
करोति पीतकच्चापि वर्चस्तन्यं भवेदपि !
व्रणः पश्चात्तकं नाम व्याधि परम दारुणः ॥

अर्थात् दोषों से दूषित स्तन्य के पीने से बालक को यदि पित्त कुपित हो कर गुदा में प्राप्त हो जाये तो जोंक के उदर के समान व्रण दाह-युक्त तथा अत्यन्त रक्तवर्ण और ज्वर कास सहित हो जाते हैं और देह को पीला करके मलस्तम्भ कर देते हैं, इस रोग को पश्चात्तक कहते हैं जो भयंकर होता है।

चिकित्सा—यहां सर्व प्रथम जौंक लगवा देनी चाहियें तथा क्षीर वृक्षों की छाल के क्वाथ से धोना चाहिये। और रक्त चन्दन, दोनों सारिवा शंखनाभि इन को पीस कर इनका लेप लगावें और इन्हीं द्रव्यों को पीस कर मधु में चटा दे तो पश्चात्तक रोग शान्त हो जाता है।

असन (विजयसार) वृक्ष के पुष्पों की गोली बनाकर चावलों के जल से दें तो शीघ्र लाभ होता है।

दांतोंके न उत्पन्न होनेका हेतु—

"दन्तमूलाश्रितो वायुर्दन्तवेष्टान्विशोषयन्।
यदा शिशोः प्रकुपितो नोत्तिष्ठन्ति तदा द्विजाः ॥

अर्थात दन्तमूल में रहने वाला वायु जब कुपित होकर दन्त वेष्ट मांस को सुखा देता है तब दन्त उत्पन्न नहीं होते।

चिकित्सा—धव के पुष्प, पिपली इनका चूर्ण कर मधु के साथ दन्तपाली को घर्षण करें अथवा आमले के रस के साथ उक्त औषधियें मिलाकर प्रयोग करें।

अकाल दन्तोत्पात लक्षणमाह—

"सद्यो जातस्य दृश्येत यस्यदन्तस्य सम्भवः।
तं बालं राक्षसं विद्यात्सर्वलोक भयावहम् ॥,,

अर्थात् जो बालक उत्पन्न होते ही दान्तयुक्त हो तो उस बालक को राक्षस जानना चाहिये बालक शीघ्र ही माता का घातक होता है। इसी

प्रकार जिस बालक के दांत प्रथम, द्वितीय, तथा तृतीय मास में निकलें वह पिता का घातक होता है। चतुर्थ मास में दांत दिखाई दें तो भाई को मारता है और यदि पांचवें में दिखाई दें तो माता मर जाती है। और यदि छटे मास में दांत दिखाई दें तो माता पिता का धन नष्ट हो जाता है इसी प्रकार सप्तम मास में भी दांतों की उत्पत्ति अच्छी नहीं मानते, और अष्टममाससे चतुर्दशमास पर्यंत दोनों का उत्पन्न होना ऋषियों ने शुभकारक कहा है।

दांत पीसना—

रूक्षाशिनोहि बालस्य चालयत्यनिलः शिराः।
हन्वाः शय्या प्रसुप्तस्य दन्तैः शब्दं करोत्यतः॥

अर्थात रूक्ष द्रव्य खाने वाले बालक का वायु हनुस्थित शिराओं को चालन करता है इसलिये दांतों में सोये हुए के कट २ शब्द होता है जिसको प्रायः लोग दांत कीचना कहते हैं, यह वात जनित रोग है

चिकित्सा—कर्कट (ककोड़ा) शाक को पकाकर बच्चे के पैरों पर लेप करने से दांतों का कटकटाना शीघ्र बंद हो जाता है यह कई बार देखा गया है।

बालशोष रोगमाह—

मन्दाग्निर्बहु विण्मूत्रो दृश्यमानास्थि पंजरः।
शुष्कः स्थिर महद्रोगः शोष इत्यभिधीयते॥

अर्थात जिस बालक को मन्दाग्नि हो जाये और मल मूत्र अधिक आने लगे और उसका अस्थि पंजर ही दिखाई दे तथा सूखता चला जाये तो यह महान रोग शोष कहाता है" एतादृश शिशु को कई एक लोग सायेवाला कहते हैं वास्तव में इस रोग का कारण मन्दाग्नि होता है परंच ध्यान न देने पर तथा मल मूत्र अधिक आने से भली प्रकार इसका रस नहीं बनता अतः यह सूखता चला जाता है।

चिकित्सा—ऐसे बालक को देखकर स्नेह वस्ति का प्रयोग कराना चाहिये, तदनन्तर घृत से चतुर्थांश अश्वगंधा का कल्क लेकर दशगुणा दुग्धमें पाक करें, बालकको दुग्धमें आठ बिन्दुसे २० बिन्दु तक दोनों समय मिलायें। और प्रातः सायें घृत, चीनी, छोटी इलायची के अनुपान से प्रवाल आधी रत्ती की मात्रा चटायें। इस उपचार से कई एक बालक निरोग होगये हैं। तथा चतुष्पाद जीवों के नख लेकर इसका धूप दें यह भी लाभदायक सिद्ध हुआ है। अन्य भी रास्नादि, गौर्य्यादि घृतों का सेवन भी कहा है। परञ्च ऊपर का प्रयोग सिद्ध है। लेख को अधिक न बढ़ाकर कुछ अन्य अनुभूत प्रयोग देकर समाप्त करता हूं। यथाः—

वच, दोनों कटेरी, पाठा, कुटकी, अतीस, मुस्तक, मुनक्का, खजूर आदि द्रव्य लेकर घृत सिद्ध कर दांतों की उत्पत्ति के समय बालक को पिलाने से दन्तोत्पत्ति जनित दोषों को दूर कर देता है,

घृतादि यथा—अथवा शुण्ठी, सम्भालु, भार्गी, समुद्रफेन इन औषधियों का एक२ कर्ष लेकर द्विगुण जल के साथ ३२ तोले घृतपाक करें पुनः आहार जीर्ण होने पर उस बालक को पिलावें यह कास श्वास को लाभ करता है और हिस्टेरिया के वेग में अत्यन्त लाभ करता है।

अथवा अजा तथा गोदुग्ध, देवदार, शुण्ठी, जीरक, अजवायन पिपलामूल, पिपली, कुटकी,

इन द्रव्यों को समान भाग लेकर सौवीर, दधि, मद्य इनसे घृतपाक करे यह घृत पारिगर्भिक रोग को नष्ट करता है।

तैलम—बहेड़ा, वच, कूठ, हरिताल, मैनसिल इनके कल्क से तैलपाक किया हुआ बच्चों को पूतिकर्ण रोग से रक्षा करता है।

अन्यच्च—लाक्षारस के समान तिल तैल चतुर्गुण मस्तु (तोड़) से निम्न औषध डालकर सिद्धकरें, रास्ना, रक्तचन्दन, कूठ, मुस्तक, असगंध, हरिद्रा, सौंफ, देवदारु, मूर्वा, कुटकी, सम्हालू के बीज आदि से बनाया तेल बालकों के ज्वर, भूत बाधा, आदि को मालिश करने से दूर करता है और बल वर्ण को करता है।

यथामति यह बालरोग चिकित्सा सहित वर्णन किए हैं इसमें बालग्रह नहीं वर्णन किए क्योंकि वह पहले अश्विनी कुमार पत्र में प्रकाशित हो चुके हैं। जो वैद्य इन रोगों को भली प्रकार जानकर चिकित्सा में प्रवृत्त होंगे वह अवश्य इन प्रयोगों द्वारा यश प्राप्त करेंगे। इति शम्

शिशु-सप्तक

(काव्यसूरि पं० चन्द्रशेखर पाण्डेय 'चन्द्रमणि')



(१)

निज देश के भूरि भविष्य तुम्हीं, प्रतिजातियों के अभिमान तुम्हीं।
प्रतिमा प्रिय प्रेम की होते हुए, मणियों से भरी हुई खान तुम्हीं ॥
उर गोद में मोद मनाते हुए, कुल देवता का वरदान तुम्हीं।
इक प्राण हैं, प्राण की प्राणता में, बने बाहर के प्रिय प्राण तुम्हीं ॥

(२)

कुल कीर्ति, अखंड धनाढ्यता का, जितना सुख सारे जहान में है।
वह एक तुम्हारी मनोहरता-भरी, मोहमयी मुसकान में है ॥
स्वर ताल-तरंगित मूर्च्छना का, सुख नित्य के अस्फुट गान में है।
कमलावलियों से हजार गुना, छवि स्वर्णिम आभा-प्रदान में है ॥

(३)

किस दूर अलक्षित देशसे आकर, स्वादु-सुधा बरसाते यहां।
किस नेह का नाता लगा करके, स्वजनों को सदा हरसाते यहां ॥
युग नैन की प्यालियों से ये, अलौकिक मादकता छलकाते यहां।
मुसकानि या चन्द्रिका है विधुकी, अथवा तुम मोती लुटाते यहां ॥

(४)

मितदंत हैं स्नेह की शृंखला, या युग नाग में मोती पिरोये हुए।
अथवा नभ-तारक आ छिपे हैं, किसी हेतु निजी गति खोये हुए ॥
मुख-मानस में बसे बाल मराल या ओस के बिन्दु बिलोये हुए।
टुकड़े यह रौप्य के हैं या, सरोरुह क्षीर-समुद्र में धोये हुए ॥

(५)

लालिमा लोहित पूर्ण हिमांशु से सम्मित आनन की छवि न्यारी।
पाया कहां यह सौम्य स्वभाव ये, मानापमान-समानता धारी
नित्य प्रसन्नता के पुतले बने, सत्य समानता के व्यवहारी ;
चित्र बनाकर चित्र ही में छिपे, कैसे विचित्र हैं चित्रकारी ॥

(६)

चिन्तना-शाकिनी-संकुल में फंसे, मानस में कलधाम तुम्हीं हो।
जर्जर जीर्ण कलेवर में पड़ी जीवनदायिनी श्वास तुम्हीं हो ॥
टूटे, फंसे दिलकी उलझी हुई आशा और अभिलाष तुम्हीं हो।
कल्पना-कानन में ठगी सा, उजड़ी कुटिया के प्रकाश तुम्हीं हो ॥

(७)

कोष कुबेर का सारा लुटाकर भी, हम आज तुम्हें नहीं पाते।
कौनसा पुण्य-प्रसाद बने हुए, मंजुल गोद में मोद मनाते ॥
नश्वर विश्व में सार से होकर, सृष्टि का कार्य सदैव चलाते।
आओ, तुम्हारा सदैव है स्वागत ! स्वागत !! स्वागत-गान हैं गाते ॥

दाँत निकलना

(लेखक—श्री० डा० युद्धवीरसिंह जी एच० एम० डी. कूचा बृजनाथ देहली)

जब तक बच्चे के दांत नहीं निकलते हैं तब तक उसके जीवन की आशंका ही रहती है। बच्चा बहुत कोमल होता है, और उसकी जरासी भी खराबी से, या असावधानी से भयंकर रोग पैदा हो जाने की सम्भावना रहती है, दांत निकलने का समय भिन्न २ बालकों में भिन्न २ होता है, यों तो किसी२ बालकके जन्म से ही दांत निकल आते हैं, या किसी २ के एक या दो दांत या सब दांत निकलते ही नहीं या बहुत देरमें निकलते हैं, ऐसा बहुत कम होता है, साधारणतया बालक तन्दरुस्त हो तो छठे मास के लगभग मसूड़े फूलने शुरू होते हैं, सातवें मास में दांत निकलने लगते हैं, २॥ ढाई या तीन वर्ष के बीच में बच्चे के सब दांत निकल आते हैं, ये दांत कुल २० होते हैं और दूध के दांत कहलाते हैं, ५ -६ वर्ष के बाद ये दांत गिरने शुरू हो जाते हैं और इनकी जगह दूसरे दांत निकल आते हैं, १० ११ वर्ष तक सब दांत निकल आते हैं, २० बीस वर्ष के लगभग आखिरी दाढ़ें निकल आती हैं, जिनको अक्कल दाढ़ (विजडमटूथ— [illegible]) कहते हैं।

(१)बच्चों के दांत इस प्रकार निकलते हैं— ५ से ८ मास के बीच में किसी समय अधिकतर ६—७ मास में सामने के नीचे के दो दांत साथ २ निकल आते हैं

(२) इसके निकलने के दो तीन सप्ताह बाद आठ दस मास के बीच में पहले ऊपर के सामने के दो दांत फिर उनके तथा नीचे वालों के इधर उधर एक २ दांत निकलता है, इस प्रकार साल-भर के पहिले ही चार ऊपर के चार नीचे के कुल आठ दांत निकल आते हैं इनको छेदन (इन-साईजर) कहते हैं

(३) फिर साल सवा साल के अन्दर २ बीच में एक २ दांत की जगह छोड़ कर दोनों ओर ऊपर नीचे एक २ दाढ़ कुल ४ दाढ़ें निकल आती हैं। इनके निकलने के चार पांच मास बाद—

(४) डेढ़ और दो साल के बीच में मृग अर्थात जो जगह खाली रह गई है उस जगह तेज नोकवाले ऊपर नीचे दोनों ओर चार दांत निकल आते हैं, इनके निकलने में बालक को थोड़ा बहुत कष्ट होता है, प्रायः आंखें दुखना आजाती हैं, इसलिये इनको आंखों वाले दांत भी कह दिया करते हैं, इनके निकलने के पांच छै मास बाद।

(५) ढाई तीन वर्ष के भीतर सब से आखिर में दोनों ओर ऊपर नीचे दाढ़ें निकल आती हैं, इस प्रकार ये बीस दूध के दांत होते हैं।

साधारणतया मातायें समझती हैं कि दांत निकलने के समय बालक को दस्त, बुखार, खांसी आदि कष्ट हुआ ही करते हैं इसलिये वे उनकी कुछ परवाह नहीं करतीं फल यह होता है कि रोग उग्ररूप धारण करके बालक के लिये कष्टकर अथवा घातक तक हो जाता है।

बात यह है कि बच्चा अगर स्वस्थ हो और उसके मसूड़े किसी विशेष कारण से सख्त न हों तो बहुधा दांत निकालने में कोई कष्ट नहीं होता है, यदि हो भी तो मसूड़ों के फूलने से ज्वरांश या बेचैनी हो जाती है, परन्तु दांत निकलने के समय सर्दी, खांसी, दस्त, फुन्सियां आदि सभी के कारण दांत नहीं होते। बात यह होती है कि ६ मास के बालक प्रायः हरएक चीज को चूसना व खाना चाहते हैं, पर न वह चबा सकता है, और न साल भर पहले उस में दूध के अतिरिक्त किसी चीज को पचाने की शक्ति ही होती है। लेकिन मातायें प्रायः मिठाई आदि चीजें ऐसे समय बालक को दे देती हैं। जिससे उनके पेट में विकार होकर नाना प्रकार के रोग होजाते हैं। जो सब दांतों के सिर मंढ़ जाते हैं, इसलिये ऐसे समय जो रोग हों उनकी उसी प्रकार चिकित्सा करानी चाहिये जैसे वे प्रधानतया होते हों। दांत सुगमता से निकलने के लिये यह जरूरी है कि बच्चे को अन्नादि बिलकुल न दिया जावे जिस से वह बीमार न पड़ कर और स्वस्थ अवस्था में दांत निकालेगा।

रबर के छल्ले जो बाजार में बिकते हैं वह बालक के गले में बांध देने चाहियें। उन को बालक चूसता है। उस से मसूड़े फूटने तथा दांत निकलने में आसानी रहती है। छल्ले को साफ रखना चाहिये। धूल मिट्टी से बचाये रखना चाहिये, यदि बालक का मसूढ़ा फूला हो तो डाक्टर से नश्तर से चिरवा देना चाहिये। सुहागा आंच पर फुलाकर उस में शहद मिला कर उंगुली में मुलायम मलमल का कपड़ा लपेट शहद में तर करके मसूड़े पर धीरे २ मलने से दांत जल्दी निकल आते हैं। यदि बच्चे का स्वास्थ्य अच्छा होगा और माता उसका ध्यान रक्खेगी तथा उसे अन्ट सन्ट खाने को नहीं देगी तो दांत निकलने में बिलकुल कष्ट न होगा या बिलकुल थोड़ा होगा।

कभी कभी जब मसूढ़ा बहुत ही सख्त होता है और दांत कठिनाई से निकलता है तो बालकों को मसूढ़ा सूजने से ही तेज बुखार, दस्त गशी, (दौरा) आदि हो जाते हैं। दौरा आदि हों तो घबराना नहीं चाहिये। बालक को आराम से लिटा कर सिर पर गीला कपड़ा रक्खें, ठंडे पानी के छींटे मुंह पर देवें। या गर्म जल से बच्चे को स्नान करायें, और तुरन्त डाक्टर को बुला कर दिखाना चाहिये।

दौरा, बुखार की तेजी वगैरा प्रायः तब ही होते हैं, जब बच्चे को कब्ज होता है, इसलिये दांत निकलने के दिनों में कब्ज़ नहीं होने देना चाहिये दौरे से जब होश आये तो पखाने की जगह पिचकारी लगा कर दस्त करा देना चाहिये।

जब बच्चे के सब दांत निकल आवें तो उन को मंजन वगैरा से साफ़ करते रहना चाहिये, नहीं तो अकसर दूध के दांतों में ही कीड़ा लग जाता है जिसका असर आगे निकलने वाले दांतों पर भी पड़ता है।

५-६ वर्ष की आयु के बाद यह सब दांत गिरने लगते हैं और नये दांत उनकी जगह आ जाते हैं वे सब दूर होते हैं। इन दांतों के निकलने के समय बालक बड़ा होजाता है, और कोई कष्ट नहीं होता।

२०-२५ वर्ष की आयु में जब अकल दाढ़ निकलती है तब थोड़ा कष्ट अवश्य होता है।



यकृत (जिगर)



(लेखक--श्री० डा० युद्धवीरसिंह एच० एम० डी०)

बच्चों के लिये जिगर की बीमारी बड़ी भयङ्कर है। जिगर बढ़ जाता है या सुकड़ जाता है या इसके अन्दर सूजन हो जाती है यद्यपि इस रोग में बच्चों की मृत्यु तुरन्त नहीं होती और महीनों रोग सताता है। परन्तु कुछ किये नहीं बनता और रोग बढ़ता ही जाता है। इसलिये जिगर के रोग का जरा भी सन्देह होने पर तुरन्त अच्छे डाक्टर से इलाज कराना चाहिये। बिलकुल उपेक्षा नहीं करनी चाहिये। प्रारम्भ में साधारण बदहज़मी के लक्षण उत्पन्न हो कर एक [illegible] अधिक मात्रा में [illegible] हो जाता है। भूक अधिक लगती या बिलकुल न लगना और हलका बुखार रहना ये इसके प्रारम्भिक चिन्ह हैं बढ़े हुये जिगर में बुखार तेज, दस्त अधिक होते हैं। भूक अधिक लगने लगती है। दाहिनी पसलियों के नीचे बढ़ा हुआ जिगर कड़ा मालूम होने लगता है। जिससे भयङ्कर पीलिया हो जाता है। पेटका फूलना आंखों के पपोटे भारी होने, हाथ पांव तथा पेट पर सूजन होनी ये इसके खास लक्षण हैं। और अन्त में पेट में पानी भर कर दस्त में खून इत्यादि आकर या जोर का पीलिया हो कर बच्चे की मृत्यु हो जाती है। जो दवायें इस रोग में लाभदायक साबित हुई हैं उनमें से मुख्य २ के नाम हम नीचे देते हैं, परन्तु कौनसी दवा कब दी जावें यह अच्छे चिकित्सक की सलाह के बिना नहीं देनी चाहिये।



Anaemia. (एनीमिया) रक्ताल्पता।

काडेम, काल्मेक, फास-फोरस, कल्केरिया आर्स, चेलिडोनियम, हाइड्रेस्टिस, पोडोफाइलम, आयोडियम, मार्कसोल, चाइना, ब्रायोनिया, आर्सेनिक, कल्केरिया-कार्ब, लाईकोपोडियम, नक्सवोमिका, लेप्टेंड्रा, नेट्रमम्यूर, नेट्रमसल्फ, इत्यादि लक्षण के अनुसार दें।

बाल कामला

लेखक—आयुर्वेदार्णव, आयुर्वेदमार्तण्ड पं० रामगोपाल मिश्र राजवैद्य, आयुर्वेदाचार्य गोंदिया (सी०पी)

जन्म के बाद १०—१५ दिन में प्रायः किसी किसी बालक को कामला रोग के समान उपद्रव प्रकट होते हैं, बालक का शरीर और उसके नेत्र-गोलक का श्वेतांश पीला दिखाई देता है यह रोग गर्भ के पूर्ण दिवस में न जन्मने वाले बालक को या सगर्भा दशा में ज्वराक्रान्त रहने वाली माता के गर्भ से जन्म लेने वाले बालक को अथवा निर्बल शरीरी जन्मे हुवे बालक को अथवा गर्भ की अवस्था में अपथ्य सेवन करने वाली माता के बालक को होता है। इसके लिए—रेंडी का तेल अंदाज तीन चार मासे एक दो दिन का अन्तर देकर पांच सात बार चटाने से दस्त साफ होकर बालक रोगमुक्त हो जाता है। यह उत्तम सरलोपाय है !! बड़े बच्चे को अमृताष्टक क्वाथ ६ मासे सुबह और शाम! मधुयुक्त करके देना चाहिए भोजनोत्तर द्राक्षारिष्ट ३—६ मासे प्रमाण में देना उत्तम होता है। इन सरलोपचार विधि से बालक के शरीर में रहने वाला मन्द ज्वरांश भी दूर होजाता है।

बालक की नाभि बहुत बढ़ जाने पर—

जिस समय नालच्छेदन करने में गलती से नाल को झटका लगजाता है उस समय ही नाभी-पाक आदि उत्पन्न होते हैं यदि न भी पके तो भी नाभि का भाग ऊंचा उठ आता है। इसलिए उठी हुई नाभी को बैठाने का प्रयत्न करना चाहिए। एक मिट्टी के ढ़ेले कोगर्म करके उस पर गाय का दूध सींचे और उसमें से जो बाफ निकले उससे बच्चे की नाभी को दूर से सेंके। ऐसा करने से नाभी का शोथ और बढ़ी हुई नाभी अपनी योग्य स्थिति में आजाती है। नाभीपाक के विषय में नालच्छेदन में वर्णन कर दिया गया है।

नेत्र रोग

शिशुको जन्मके १-२ दिन बाद कभी कभी नेत्र-पीड़ा से आक्रान्त होना पड़ता है यह रोग सगर्भा दशा में माता के अधिक दधि आदि सेवन से अथवा उपदंश जनित विकार के कारण बालकको होता है। इस की शीघ्र चिकित्सा न करने पर बालक को अंधा होने का भय उपस्थित होता है!

उपचार—जायफल, अफीम, फिटकरी, पठानी लोध इनको पानी में घिसकर किंचित उष्ण करे और पलकों पर सावधानी से लेप करे जिससे औषधि शिशु के नेत्रों में न चली जाय!

दन्तोद्गम

बच्चों के दांत निकलने का साधारणतया आयुष्यमान ६—८—१० मास के अन्दर ही है। पहिले सामने नीचे के दो, बाद ऊपर के दो, इस क्रम से ३ वर्ष में बीस दांत दूध के पूर्ण होते हैं क्वचित किसी बालक को जन्मते ही दांत देखने में आते हैं। दूध के दांत किसी किसी बालक को उसके अस्थिरोग के कारण एक डेढ़ साल तक भी नहीं आते। सातवें वर्ष में दूध के दांत गिरना

आरम्भ हो कर पक्के दांत आना प्रारम्भ होते हैं बुद्धि दाढ़ को छोड़कर सम्पूर्ण पक्के दांत १४-१६-१८ वर्ष के भीतर आजाते हैं और इसी समय में ८ दांत और भी अधिक आकर २८ दांत पूर्ण होते हैं इन के अतिरिक्त केवल बुद्धि दाढ़ अवशिष्ट रहती हैं वे २० से २४ वर्ष के भीतर आकर ३२ दांत पूर्ण हो जाते हैं । छोटे बालक को आरम्भिक दन्तोद्भव काल में नाना रोगों का सामना करना पड़ता है । जिस में मुख्यतः सिर-दर्द, वमन, खांसी, ज्वर, नेत्रपीड़ा, पलकों में कुथर २ होना, पतले फटेकटे हरे, पीले दस्त, शक्ति घटना, मुख से राल का स्राव, मसूड़ों में सूजन निद्रानाश, निद्रितावस्था में चमकना, नेत्रों को प्रकाश का असह्य होना, पाचन क्रिया में गड़बड़ी, नाड़ी की अनियमित मन्दगति, मसूड़ों में सुरसुराहट होना, मुंह चपचपाना, कोष्ठबद्धता, आक्षेप आदि होते हैं और दांत बाहर आते ही ये लक्षण अपने आप शमन हो जाते हैं लेकिन ऐसे काल में यदि इन उपद्रवों पर उपेक्षा की दृष्टि डाली जाय तो महान हानि हो सकती है । अतएव इन उपद्रवों की शांति के लिये सरलोपचार करना हित कर होता है । दन्तोद्भव काल की पीड़ा ठंड काल की अपेक्षा ग्रीष्म में कम कष्टदायक होती है, शहरों की अपेक्षा ग्रामों में कष्ट कम होता है, अशक्त की अपेक्षा सशक्त बालक को कम पीड़ा होती है । दन्तोद्भव काल में माता या दाई को पच कर शीघ्र पचने वाले अन्न का सेवन करना चाहिये । दन्तोद्भव काल में जो जो रोग और उपद्रव हों उनके अनुसार विचार कर औषधोपचार करना चाहिये लेकिन फिर भी पाचन क्रिया का ध्यान रखते हुए बालक को पाचन चूर्ण, घूटी आदि अवश्य देते रहना चाहिये, मसूढ़े फूले हों तो उनका छेदन करावें अथवा धवपुष्प, पीपल, आमला इनका चूर्ण मधु में मिलाकर मसूढ़ों में थोड़ासा मल देवें । और इस तरह कई बार मलें ।

सफेद अपराजिता की जड़ को रेशम के धागे में बांध कर बालक के गले में पहरावें अथवा जस्त और तांबे के तार को एक में ऐंठ ऊनी कपड़े में सीकर बालक के गले में बांधे, दांत बिना पीड़ा के सरलता से निकलेंगे । बालक को कब्ज़ी हो तो बड़ी हरड़, काला नमक, भुना सुहागा और पुटपाक से निकाला हुआ एरंड पुष्प का स्वरस सब की घूटी बना कर प्रमाण से देवें । या रेंडी का तेल चटाकर दस्त करावें । पतले दस्त होते हों तो धीरे २ रोकें एकदम बंद न करें । दस्त होते हुवे अथवा कब्ज़ी होने पर यदि पेट में आध्मान हो तो पाचन औषधि युक्त दस्त रोकने का अथवा पाचन औषधि युक्त दस्त कराने का प्रबंध करें । दन्तोद्भव काल में सम्पूर्ण उपद्रव शमन के लिये शंखवटी १ रत्ती प्रमाण उसके माता के दूध में देवें, अन्न खाने वाले बालक को उष्ण जल से देवें । लवण भास्कर या हिंग्वष्टक २-३ रत्ती प्रमाण लेकर १ तंदुल प्रमाण यवक्षार युक्त करके उस की माता के दूध से देवें अन्न खाने वाले को किंचित बढ़ा कर मात्रा मंदोष्ण जल से देवें । हरड़, बच, मुलैठी, लवंग, पपीता, कालानमक हींग भुना इनको माता के दूध में घिस कर प्रमाण पूर्वक देवें । हरड़, अतीस, कुलीजन, बेल-गिरी, काला नमक, इनको घिस कर प्रमाण युक्त देवें । अतीस काकड़ासिंगी, पीपल, बच, इनकी

घूटी प्रमाण पूर्ण देवें। इन घूटियों में हींग मूंग प्रमाण लेवें। काला नमक भी उतना ही लेवें शेष औषधियों का १-१ रत्ती प्रमाण पिसा हुआ द्रव्य लेवें, ऊपर लिखी घूटी ज्वरनाशक, कासनाशक पाचक है। दूसरी घूटी मलरोधक, पाचक, कफ निःसारक है। तीसरी घूटी कफनाशक ज्वरनाशक है। मसूढ़ों की सूजन पर बड़ी हरड़ शहद या दूध में घिसकर लगावें। पेट फूला हो तो हथेली में अरंडी का तेल लगाकर उसके द्वारा बालक का पेट सेंके। कफ की प्रबलता हो तो छातीको हथेली से अरंडी का तेल लगा कर सेंके, आवश्यकता समझ कर अरंडी के पत्तों से अरंडी का तेल लगा किंचित उष्ण कर बालक के पेट पर बांधें।

बालक का उदरशूल

क्रिमि से अथवा सर्दी से अथवा माता के दूध विकृति से बालक के पेट में शूल होता है, दस्त कब्ज होजाता है। बालक पेट का छूने देता नहीं, माता के स्तन दाबता है दांत रहने पर काट खाता है।

उपचार—शिशु के पेट को हाथ की हथेली में रेंडी का तेल लगा कर सेंकना, बड़े बच्चे का पेट कपास के फोहे से या रेती की पोटली या नमक की पोटली से सेंकना। क्रिमि से दर्द हो तो सनाय के पत्तों का रस अजवाईन, डीकामाली, हींग, कालानमक युक्त करके मां के दूध और मधु से देना। पान के बीड़े में अजवाईन डाल कूट कर रस निकालना और पिलाना। पेट में वायु के कारण दर्द हो तो शंखवटी १ रत्ती प्रमाण मां के दूध से देना या लवणभास्कर या हिंग्वष्टक २—४ रत्ती प्रमाण लेकर ४ सरसों प्रमाण या एक चावल प्रमाण वज्रक्षार युक्त करके मांके दूधसे देना या रेंडी तेलमें सोंठका चूर्ण और सौंचलनमक युक्त करके पिलाना। अजीर्ण से दर्द हो तो शंखवटी देना या सोंठ, हरड़, काला-नमक घिसकर देना। पेट पर रेंडी के पत्ते रेंडी का तेल लगाकर कुछ उष्ण करके बांधना या नागरपान बांधना।

बालक का अतिसार

बालक को दस्त लगने पर किस रोग के उपद्रव स्वरूप ये हैं इसकी भली प्रकार जांच कर लेने पर ही औषधि देने का निश्चय करना उत्तम होगा अन्यथा लाभ की संभावना नहीं रहती। इसलिए अजीर्ण, दंतोद्भव पीड़ा, आंत में अपक्व अन्न का अंश रहना, क्रिमिदोष, ऋतुपरिवर्तन आदिकों में से किस कारण के सम्बन्ध को लेकर दस्त होते हैं इसे भली प्रकार समझ लेना आवश्यक है।

अजीर्ण से दस्त होने पर लवणभास्कर २ या ४ या उम्र के मान को देखकर १ या १॥ मासा और वज्रक्षार १ या २ चावल प्रमाण, वय मानानुसार देखकर मां के दूध या उष्ण जल से दिन में तीन बार देवें, हिंग्वष्टक अथवा पूर्व में कही गई घूटी या इस ही प्रमाण में शंखवटी भी दे सकते हैं। दंतोद्भव समय के अतिसार में और शीत के कारण होने वाले ज्वरातिसार में भी कथित औषधियों को देने से ठीक पाचन होकर दस्त अच्छे होजाते हैं पेट भी नहीं फूलता। यदि दस्त के साथ पेट फूला हो तो भी ये ही कथित औषधियें हितकर होती हैं। दस्त होते हों, पेट फूला हो और वमन या वमनेच्छा साथ ही हो तो

भी उपयुक्त योग हित करते हैं। खट्टी गंध वाला, लसीका, फेनदार मल और साथ में मरोड़ भी हों तो आम की गुठली या आम की छाल को मां के दूध में घिस कर अथवा जल में घिस कर उपयुक्त किसी भी एक औषधि को मिश्रित कर के देने से आशु लाभ होगा। कीचड़ समान मल और अधिक तृषा रहने पर पपीता या मुलहठी को मां के दूध या जल में घिसकर उसमें उपयुक्त कथित किसी एक योग को मिला कर देवें। आम युक्त मल और उसके साथ रक्त रहने पर बिल्व का गूदा मां के दूध या मंदोष्ण जल में घिसकर उपयुक्त किसी एक योग को देवें। चावल के धोवन जैसा अथवा फटे दूध जैसा सफेद मल या कफ मिश्रित मल वाला दस्त होने पर भी उपयुक्त कोई एक योग देवें। साधारण दस्त हों तो माजूफल या पपीता दूध में घिसकर देवें अथवा जायफल घिसकर दो सरसों प्रमाण देवें। अथवा आम की सूखी गुठली बेलगिरी रक्त चंदन, कुड़े की छाल इनको घिसकर मधु दूध युक्त कर के देवें। रक्तयुक्त होते हों तो आम की छाल घिसकर अथवा अनार के भीतर की छाल घिसकर मधुयुक्त करके देवें या रक्त चन्दन आम की गुठली, बेलगिरी, पपीता घिसकर देवें या अनार के रस में मिला चाशनी बना चटावें।

कृमि दोष जन्यदस्त हों तो सहतूत की छाल को घिस कर मधु युक्त कर देवें अथवा पूर्व कथित किसी एक योग के साथ डिकामाली घिस कर देवे या उन किसी योग के साथ कीटभद्र रस २ चावल प्रमाण लेकर वायविडंगयुक्त घिसें और देवें। दुर्गंधयुक्तमल होने पर अजवाइन के क्वाथ में रेन्डी का तेल मिलाकर देवें। आमातिसार हो तो जामुन, आम, औदुम्बर की छाल को दूध या पानी में घिसकर उसमें थोड़ा प्रमाण चूने का निथरा जल मिलाकर देवें। बेलफल को घिसकर उसमें थोड़ा अर्क सौंफ मिलाकर देवें। कुड़े की छाल, अतीस, इन्द्रजव, सोंठ, बेलगिरी, रक्तचंदन अनार की छाल को घिसकर देवें। मरोड़ के साथ दस्त हो तो सरोरफली को और सोंठ को भूनकर पानी या दूध में घिसकर देवे। रक्तातिसार हो तो कोमल अनार का रस चन्द बूंद शर्करा युक्त करके या मधु युक्त करके देवें। आम की छाल को चूने के नितरे पानी के साथ घिस कर देवें। पर्णबीज के पत्तों का रस मधु या मिश्री युक्त करके देवे। अुद्रालिनिड़ीक की छाल को घिसकर मधुयुक्त कर देवें। बिल्वपत्र का रस मधु दूधयुक्त करके देवें। जामुन की छाल घिसकर मधुयुक्त करके देवें। सूखे आंवलों को दूध में घिसकर देवें। ज्वरातिसार हो तो नागरमोथा, पीपल, अतीस, काकड़ासिंगी का वस्त्रपूत चूर्ण १-२ रत्ती लेकर मां के दूध से देवें। अथवा लोध, इन्द्रजव, जायफल, बेलगिरी, इनको मां के दूध में घिसकर देवें।

बालक की संग्रहणी।

लक्षण बड़े मनुष्य के ही समान समझें। माजूफल और सोंठ दूध में घिसकर देवें। पूर्व कथित अग्निमांद्य में जिन पाचन योगों को कहा है उनमें से कोई एक देवें। लहसन की एक जवाई में तिल प्रमाण अफीम रख भूनलें और उसे घोट कर दूध में मिला करके देवें। लवण भास्कर को

बेलफल के धासे के साथ या उष्ण जल से देवें।

निद्रा में दांत खाना

यह बालक की पाचन क्रिया में व्यत्यय आकर या मस्तिष्क में रक्त का दबाव पड़ने वाले कारणों से अथवा मलावष्टंभ से आरम्भ होता है बाद में एक आदत पड़ जाती है अतएव इसमें अरंडीके तैल का हलका रेचन देकर पूर्वोक्त कथित पाचक योगों में से किसी एक को देना आरम्भ करें।

दुग्धगोट

गायके दूध पर पाले जाने वाले बच्चों को विधियुत दूध न पिलाने से उनके पेट में छोटी मछली के आकार वाली गोटें लम्बी लम्बी जम जाती हैं। पेट बढ़ जाता है, फूलता है मल मूत्र, रुक जाता है, डब्बे के समान लक्षण दिखाई देते हैं।

उपचारः—अरंडी का तेल मंदोष्ण दूध से या त्रिफला जल में घिसके देना। अथवा त्रिफला क्वाथ बना कर प्रमाण से उम्र का मान देखकर देना। या गिलोय मूल के क्वाथ में १-२ रत्ती पापड़ खार युक्त करके देना। अथवा १-२ रत्ती पापड़खार चणक प्रमाण गुड़ और माता का दूध मिश्रित करके देना। छोटे करेले के पत्तों के रस में टंकण १-२ रत्ती फुलाया हुआ मिलाकर देना, गोमूत्र में हरड़ और हल्दी को घिसकर देना। इस रोग को मरारा, मावरा भी कहते हैं। इसमें पूर्व कथित दूध की गोट के अतिरिक्त पेटमें जाला सा जम जाता है।

शिशुके यकृत औरप्लीहाकी वृद्धि

बालक को बाल्य काल में बाईं करवट सुलाने की आदत डालने से उसके यकृत का बोझ जठर पर पड़ने से उसके पाचनमें व्यत्यय आकर प्लीहा वृद्धिहोती है और कभी यकृत् अधिक लटक जाता है याने बढ़ जाता है कभी ज्वरांश आदि कारणोंके रहने पर भी प्लीहा और यकृत वृद्धि होती है, कभी कभी दूषित दुग्ध के कारण भी ऐसा होता है कभी बालक को हमेशा गोद में ही टांगे रहने से यह होता है क्वचित दूषित या कृत्रिम दूध पान के कारण प्लीहा की समान बालक के पेट में दूधकी चीप जमकर भी प्लीहावृद्धि का भास होने लगता है।

उपचारः—सरफोंका की जड़को माता के दूध या जल में घिसकर शंखवटी १ चावल प्रमाण देना अथवा लवणभास्कर २-३ रत्ती, यवक्षार १-चावल प्रमाण दूध या मंदोष्ण जल से देना।

कोष्ठबद्धता और आध्मान

मातृदुग्ध के न पचने से, वायु से, माता के अनुचित व्यवहार से, गौ दुग्ध के न पचने से, यकृत की खराबी से, कोष्ठबद्धता होकर वायु भरता मल रुक जाता है और आध्मान होता है (पेट फूल जाता है)।

उपचारः—बड़ी हरड़, कालानमक, सोंठ, वच, हींग भुनी और फुलाया हुआ सुहागा गोमूत्रमें घिसकर देना। अथवा शंखवटी गोमूत्र से देना अथवा लवण भास्कर और यवक्षार प्रमाण युक्त मंदोष्ण जल या दूध से देना। अथवा मालकांगनी, वच, पानी में घिसकर नाभी के चारों ओर मण्डलाकार लेप देना दस्त होकर पेट साफ होगा। सोयाबीज, सोंठ इनका क्वाथ शर्करायुक्त कर के देना।

पसली चलना

खवे और फुफ्फुस तथा पसलियों के भीतरी भाग में एक पतली जलस्रावी त्वचा है उस त्वचा से हुवा जलस्राव फुफ्फुस और पसली के घर्षण काल में फुफ्फुस की रक्षा करता है, लेकिन त्वचा पर शीत का प्रभाव पड़ कर कभी कभी वह अधिक मिकदार में स्रवने लगता है उस समय में फुफ्फुस की क्रियामें व्यत्यय खड़ा होकर श्वासोच्छ्वास को रुकावट करता है। ऐसी दशा में पेट के बल से बालक को श्वास लेना पड़ता है और इसी से पेट जोरों से धमन करता हुआ बार बार पसलियों को ऊंचा उठाता है। इसी रोग को पसली चलना कहते हैं। इस में श्वास बढ़ता है पेट बार बार चलायमान होता है, फूला रहता है पसलियें बार बार ऊपर चढ़ती हैं, नाक सूखता है अथवा बहता है मल मूत्रका अवरोध होता है।

उपचार—पान का बीड़ा बालक के योग्य हल्का सा बनावें उसमें १०-१५ दाने अजवाईन, २ चावल प्रमाण सोंठ डाल कर कूटे और नीचोड़ कर रस निकाले उस रस में उलटे के पुष्पों का पुटपाक द्वारा निकाला रस १० बूंद, भुना सुहागा २ रत्ती डाल कर मधु और मां का दूध मिला कर बालक को पिलावे। स्वर्णक्षीरी के पत्र का कल्क दूध में मिलावे और छान कर पिलावे।

अपामार्ग पंचांग, पारस पीपल की छाल, नीम की छाल सब को जलाकर राख करे और क्षार विधि से क्षार निकाले। समय पर १ चावल भर प्रमाण में उष्ण जल से देवे। वच्छ क्षार भी देना उत्तम है। माजूफल, मरोड़फली, छोटी हरड़, कालाबोल, समभाग का चूर्ण कर, २ रत्ती प्रमाण दूध में देवे।

गोमूत्र में मिला कर पूर्व में कही घूटी देवे। अरंडी का तेल चटावें। कभी २ माता के अपथ्य सेवन से बालक के पेट में कफ के जाले से पड़ जाते हैं जिससे वायु की गति का अवरोध हो कर श्वसन क्रिया में व्यत्यय खड़ा हो कर भी यह रोग होता है, इसे प्रायः समनी कहा जाता है, और सब लक्षण पसली चलने के समान ही होते हैं पर यह घातक होता है। इस पर उपर्युक्त कथित उपचारों के अतिरिक्त इनको भी काम में ला सकते हैं। गोमूत्र को छान कर उसमें कुछ थोड़ा हल्दी घिसे और भुना टंकण २ रत्ती डाल कलकुली की हांडी तपाकर और बुझाकर ठंडाकर पिलावे। पेट को सेंके पेट पर अरंडी के पत्ते में अरंडी का तेल लगा कुछ गरम कर पेट पर बांधे करेला की जड़ गोमूत्र में घिसकर देवे। करेले के पत्तों का या छोटे करेलों का स्वरस १०-१५ बूंद प्रमाण में हल्दी सैंधव युक्त करके देवे। नवसादर को मां के दूध में घिस कर देवे। भांगरे का रस हींग युक्त करके देवे।

बालविषूचिका (हैज़ा)

माता या बालक के अजीर्ण से यह रोग होता है दस्त क्रय दोनों होते हैं मल मूत्र में बदबू आती है हाथ पांव ऐंठने हैं। शंखवटी देना, अदरकका रस और प्याजका रस, कपास फलकेरस में युक्त करके देना। केशर आधी रत्ती नीम्बू के रस में घोट लवणभास्कर युक्त करके देना। प्याज के रस में हींग डाल कर देना। शेष उपचार अतिसार आदि के समान ही करना।

उत्फुल्लिका (डब्बा-पसली) रोग का निदान तथा चिकित्सा

(लेखक—आयुर्वेदाचार्य पं० रामनारायण हर्षुल मिश्र आयुर्वेदरत्न रायपुर C. P.)

(आयुर्वेदोक्त–संक्षिप्त–परिभाषा)

घनाध्मानं निरोधश्च श्वास कासादि संभवः।
उत्फुल्ल कुक्षिर्भवति घन क्षीरस्य सेवनात ॥

यह रोग अन्य देशीय बालकों की अपेक्षा भारतीय बालकों में विशेष रूप से पाया जाता है और उसका प्रधान कारण भारतीय माताओं का अन्ध विश्वास तथा अशिक्षा है। बहुधा मातायें बालकों के रोने का एक मात्र कारण भूक को मानती हैं। जहां बालक रोने लगते हैं तहां उन्हें भूका समझ दूध पिलाने लगती हैं। कोई कोई माता तो बालक की इच्छा न होते हुवे भी प्रेमावेग में दूध पिलाने लगती हैं। इस प्रकार अनिर्यमित रूप से बालकों को दूध पिलाने से उनकी आदत बिगड़ जाती है, और वे माता को देखते ही दूध मांगने लगते हैं। ऐसे बालक बड़े होने पर भी बार २ दूध पिलाने के लिए तंग किया करते हैं। अधिकांश मातायें गर्भवती होने पर भी बालक के रोने के भय से दूध पिलाना बन्द नहीं करतीं और बच्चे भी थोड़े बड़े होने पर सरलता पूर्वक मां का दूध पीना बन्द नहीं करते, यहां तक कि पेट भर अन्न खाने वाले बच्चे भी मां का दूध चूसते रहते हैं। इस प्रकार अनियमित रूप के दूध पीने तथा पिलाने का परिणाम

गुदभ्रंश–काँच निकलना

यह रोग मिट्टी खानेवाले बच्चों को या आंव मरोड़ वाले बच्चों को अथवा अतिसार पीड़ित बालक को, माता से दुर्बल हुये बच्चों को होता है इसमें किचने पर गुदा बाहर आती है, रक्त गिरता है, क्वचित् बड़ी उम्र के मनुष्य को भी यह देखने में आता है। कासीस के जल से गुदा धोना, माजूफल और फिटकरी को पानी में घोल कर गुदा धोना। सहदेवी के रस को हाथ में लगा गुदा दाबना। आम्रातक के पत्तों का रस पिलाना। हरड़, बच, कुष्ठ, हल्दी, अजवाइन दूध में घिसकर देना। गाय के गोबर की पोटली बना सेंकना. कटेली की जड़ को दूध में घिसकर देना। संकासुर जिसके झाड़ की फली चपटी बड़ी लांबी, फूल लाल, पत्ते इमली के समान होते हैं स्टेशनों पर प्रायः लगाये जाते हैं उसके बीज का चूर्ण बुरका कर गुदा दबाना। बबूल की फली धव पुष्प के क्वाथ में बालक को बैठाना। जामुन, आमला इनके पत्तों के क्वाथ में बालक को बैठाना, कोमल कमल पत्र का रस देना।

यह होता है, कि बालक बार बार उत्फुल्लिका रोग से पीड़ित होते हैं।

बच्चों के दांत निकलते समय दूध अधिक पीने से तथा अपचन से उत्फुल्लिका रोग उत्पन्न हो जाता है। दांत निकलते समय कमजोर बच्चों को खांसी, बुखार और अतिसार क्रमशः अथवा एक साथ होता रहता है, जिसमें बच्चे निर्बल हो जाते हैं, ऐसी अवस्था में यदि दोषों की सान्निपातिक अवस्था उत्पन्न हो जाय तो उत्फुल्लिका हो जाने की अधिक सम्भावना रहती है।

माता के मिथ्या आहार विहार भी बच्चों के एकमात्रखाद्य दूध को दूषित कर उत्फुल्लिका रोग उत्पन्न करने में सहायता पहुंचाते हैं। बहुत से बच्चे जन्म से ही उत्फुल्लिका के शिकार बन जाते हैं। डाक्टर लोग इसे निमोनिया कहते हैं; किन्तु आयुर्वेद में इसे बालकों को होने वाला पृथक् रोग माना गया है। यद्यपि इस रोग के बहुत से लक्षण निमोनिया से मिलते जुलते हैं, तथापि यह बड़े मनुष्य तथा स्त्री को होने वाले निमोनिया से कुछ भिन्न प्रतीत होता है। इस लिए इसे यदि निमोनिया ही कहा जाय तो इसे बच्चों का निमोनिया कहना अधिक अच्छा होगा।

यह रोग बालकों को होने वाले द्वन्द्वज ज्वरों की सान्निपातिक अवस्था का है। इस अवस्था के प्रारम्भ काल में ही उचित उपचार होजाने से धीरे २ एक सप्ताह में रोगी आराम हो जाता है किन्तु किंचित असावधानी होते ही रोग भीषण रूप धारण कर देता है और ७२ घण्टे के अन्दर ही रोगी के प्राण ले लेता है।

सम्प्राप्ति

जब बालक भारी दुग्ध का पान करता है, तब उसकी जठराग्नि उसे (दुग्ध को) पचाने में असमर्थ हो जाती है। दुग्ध का परिपाक ठीक न होने पर, उससे बना हुआ रस कफयुक्त और दूषित हो जाता है। यह कफ दूषित रस का मल है। जब प्रकृति द्वारा रस संशोधन कार्य प्रारम्भ होता है, तब वह (कफ) वक्षस्थलस्थित अवयवों में आकर जमने लगता है, इस प्रकार फुफ्फुस, श्वास नली आदि कफ से लिप्त हो जाती हैं।

दूषित दुग्ध पान करने वाले बालक की पाचन क्रिया विलम्ब से होते रहने के कारण यकृत कमजोर हो जाता है, उसके निर्बल होते ही जठराग्नि (पित्त) भी न्यून होजाता है, अतः यकृत अन्न का पाचन, रस का रंजन और रक्त का शोधन उचित मात्रा में नहीं कर पाता। वृक्क भी दूषित रस से बने हुए रक्त को छानने में असमर्थ सिद्ध होने लगता है। परिणाम यह होता है कि मल के बिना छने ही रक्त को हृदय के पास पहुंचना पड़ता है, अशुद्ध रक्त को पाकर फुफ्फुस और हृदय जोरों से शोधन कार्य आरम्भ करते हैं शरीर में रक्त का संचालन क्रिया जोरों से होने लगती है, जिससे एक प्रकार की अस्वभाविक ऊष्मा उत्पन्न होकर रक्त स्थित दोषों को दग्ध करना प्रारम्भ करती है। इस प्रकार रस और रक्त दोनों एक साथ कुपित होकर भयंकर उत्फुल्लिका ज्वर उत्पन्न करते हैं।

मिथ्या आहार विहार से नाभि के निचले प्रदेश में रहने वाली समान तथा अपान वायु

कुपित होकर जब प्रतिलोम गति को प्राप्त होती है, तब कफ और पित्त को बिगाड़कर उनकी प्रधानता में क्रमशः उपरोक्त रस और रक्त को दूषित करती है। यही कारण है कि इस रोग में वायु की प्रबलता विशेष रूप से मालूम होती है।

इस रोगकी प्रायः दो अवस्था देखी जाती है:—

(१) इसमें वात मध्य रहता है किन्तु पित्त और कफ क्रमशः उल्बण (प्रधान) होते रहते हैं।

लक्षण—ज्वर का वेग १०४° से १०५° तक रहता है। कभी ज्वर १०६ तक पहुंच जाता है और कभी एकदम न्यून हो जाता है। नाड़ी कमजोर हो जाती है, गला घड़घड़ाने लगता है। निद्रानाश, तृष्णा और हृदय में पीड़ा होती है। मल और मूत्र बहुत देर में और अल्पमात्रा में होता है। पसलियां जोर से चलने लगती हैं, श्वास प्रश्वास में कठिनता और उग्रता मालूम होती है। ज्वर के वेग से कफ सूखने लगता और फुसफुस और श्वास नली में प्रदाह उत्पन्न हो जाता है, खांसी आती है नाभीस्थान उठा हुआ रहता है और पसली के नीचे के भाग में गढ्ढा पड़ने लगता है। विरेचन देने से काला, पीला लाल हरा कई रंग का बदबूदार कफयुक्त और दाहयुक्त मल होता है। मल निकलते समय शब्द युक्त वायु भी बाहर निकलती है। वायु के अनुलोम होते ही पेशाब होता है और बालक की घबराहट और बेचैनी बहुत कुछ कम होजाती है।

(२) अवस्था—इसमें वात अधिक, पित्त मध्य और कफ अल्प होता है। बालक थका हुआ-सा मालूम होता है। चेहरे का रंग फीका हो जाता है, श्वांस लेने में अत्यन्त कष्ट होता है। ज्वर का वेग १०३° से १०४° तक रहता हैं, दोनों पसलियों के नीचे गढ़े पड़ने लगते हैं। पेट वायु से भरा रहता है, छूने से कठोर मालूम होता है। सूखी खांसी आने लगती है, रूक्षता बढ़जाती है। रूक्षता के कारण फुस २ प्रदाहयुक्त होकर सूज जाते हैं। नाक सूख जाती है, बालक मुख से श्वांस लेने लगता है, मूत्र का विसर्जन अति विलम्ब में होता है।

चिकित्सा

इस रोग में कुपित दोषों के अंशों की कल्पना सरलता पूर्वक नहीं की जा सकती। इसमें कभी पित्त बढ़ा हुआ मालूम होता है तो कभी कफ और कभी दोनों। कभी कफ को शमन करने से पित्त बढ़ने लगता है और कभी पित्त के शमन होने से कफ की वृद्धि होने लगती है। इसलिए उल्फुल्लिका में वात पित्त को शमन करने वाली मध्यवर्ती चिकित्सा करना चाहिए। इसमें वमन और विरेचन दोनों हितकारी हैं। अनुवासन वस्ति द्वारा वायु को अनुलोम करने से दोनों दोष सरलता पूर्वक शमन हो सकते हैं। चिकित्सक सर्व प्रथम वायु को अनुलोम और शमन करने का उपाय करे। वायु के शांत होते ही अन्य दोष आप ही आप शांत होजावेंगे। वायु के अनुलोम होते ही दूषित कफ और पित्त स्वयं शरीर से बाहर निकलने लगते हैं। यदि केवल वायु ही अपनी प्रधानता से बिगड़ा हो तो वह भी अनुलोम होते ही शांत होजावेगा, इसलिए इस रोग में वायु को शीघ्र अनुलोम करने वाली औषधियों का प्रथम प्रयोग करना चाहिए।

(१) उत्फुल्लिकांतक वटि

(स्वकृतयोग)

गोरोचन ½ तोला, उशारे रेवंद १ तो०, शुद्ध सुहागा २ तो०, मुलैठी ३ तो०, नाभी शंख की भस्म २ तो०, गोदन्ती हरताल भस्म २ तो०।

विधि—सब को पत्थर के खरल में डालकर पान के रस में ३२ घण्टे घोटें। एक रत्ती की गोलियां बनाकर छाया में सुखावें। मात्रा एक गोली से २ गोली तक। अनुपान—शहद पान का रस, मां का दूध, दशमूल का क्वाथ। गुण—उपरोक्त कथित समस्त लक्षणों सहित रोग को नाश करता है।

२—उत्फुल्लिकारि

गोरखमुंडी १ तो०, शुद्ध चौकिया सोहागा १ तो०, उशारे रेवंद एक तोला, सुवर्णमाक्षिक एक तो०, नाभि शंख भस्म १ तो०, सितोपलादि ४ तोला। विधि—सबको २४ घंटे तक खूब मर्दन कर शीशी में भर कर रखें। अनुपान—मां का दूध दशमूल का क्वाथ। समय—रोग के लक्षणानुसार दिन में तीन चार बार। मात्रा—१ रत्ती से २ रत्ती तक।

३—व्याधिमोचन रस

चौकिया सुहागा फूला ४ तो०, उशारे रेवंद २ तोला, गोरोचन ½ तो०, शुद्ध हरताल वर्की ३ मा०, कस्तूरी १ मासा।

विधि—समस्त औषधियों को खरल में डाल कर कंटकारी, भृंगराज, और करेले के पत्तों के रस में क्रमशः आठ २ घंटे की भावना देकर आधी रत्ती से १ रत्ती तक की गोली बनावें।

अनुपान—मां का दूध तथा बंगला पान का रस।

गुण—सर्व लक्षणोंयुक्त डब्बा रोग को समूल नाश करेगा। इसमें वायु को अनुलोम करने की अद्भुत शक्ति है।

समयानुकूल तत्कालिक सरल चिकित्सा

(१) नाक सूखने पर गाय का शुद्ध घी एक दो बूंद नाक में डालना चाहिये।

(२) फुफ्फुस के आक्रान्त होने पर एन्टीफ्लोजिस्टिन का लेप करना चाहिये। बच्चे के वक्षस्थल और पसलियों पर एक पतला कपड़ा लपेट कर उस कपड़े पर अलसी और सरसों का गर्म लेप करना चाहिये। निमोनिया की हालत में वक्षस्थल को गरम रखना उत्तम है।

(३) पेट फूलने पर पेट को एरण्ड के पत्ते से सेंकना चाहिये। हींग, सेंधा नमक और अजवाइन का कुनकुना लेप पेट पर कराना चाहिये। शंख वटी, अग्निकुमार रस आदि आधी रत्ती की मात्रा में प्रयोग करना चाहिये।

(४) मलावरोध में अनुवासन बस्ति के द्वारा नित्य प्रातःकाल पेट के मल को शीघ्र बाहर निकाल देना चाहिये। साम अवस्था में, वमन विरेचन द्वारा दोषों को बाहर निकाल कर दोषों की शक्ति को कम करना बुद्धिमानी और दूरदर्शिता प्रदर्शित करने वाला कार्य है।

(५) पेशाब न होने पर पत्थर बेर को घिस कर नाभि पर लेप करना चाहिये।

(६) अत्यन्त कमजोर बालक को संशोधन

औषधि न देकर पाचन और शमन करने वाली औषधि देना चाहिये । आदित्यरस, शंख वटी, व्याधिमोचन रस (अल्प मात्रा में) सुवर्ण वसंत मालती, शंख भस्म, फुलाया हुआ सोहागा आदि । दोषों को पाचन और शमन करने वाली औषधियां हैं, इनमें से किसी एक का प्रयोग करना चाहिये । अनुवासन वस्ति लगाकर मलाशय को शुद्ध कर देना चाहिये । अनुवासन वस्ति न प्राप्त हो सके तो साबुनकी बत्ती गुदा में प्रवेश कर मल निकाल देना चाहिये । न्यून मल वाले निर्बल बालक के मलाशय की शुद्धि आवश्यक नहीं, उसके रोग को शमन और पाचन औषधियों के द्वारा ही जीतने का प्रयत्न करना चाहिये ।

(७) बालकों की चिकित्सा में वैद्य को धीरज बुद्धिमत्ता से काम लेना चाहिये । कोई भी औषधिकी मात्रा कुपित दोषों के अंशों को बिना जाने न निश्चित करना चाहिये । एकदम शीतल और उष्ण उपचार करना हानिप्रद है । वैद्य के साथ २ घरवालों का भी कर्त्तव्य है कि वे वैद्य के आदेशों का अक्षरशः पालन करें । जबतक बालक सन्निपातिक अवस्था से परे न हो जाय तबतक दूध नहीं पिलाना चाहिये । दशमूल का अर्धावशेष क्वाथ पन्द्रह २ मिनिट में चम्मच से पिलाते रहने से कुपित दोषों का क्रमशः शमन और पाचन होने लगता है । पकता हुआ निष्फेन वेग रहित और दोषघ्न जल बालक को पीने देना चाहिये । द्राक्षा, दाड़िम आदि का तर्पण अल्प मात्रा में बार २ देते रहने से बालक के बल की हानि नहीं होती ।

(८) अत्यन्त दाह में बकरी के दूध का लेप हाथ पैर या तलुओं में करना चाहिये । मस्तक पर भी इसका फोया रखना हितकारी है । निद्रानाश में बकरी का दूध आंख में बार बार डालते रहने से बालक को थोड़ी नींद आने लगती है ।

सूतिका आक्षेप Puerperal Manir

(ले०—डा० भवानीप्रसाद गुप्ता (उत्साही) आयुर्वेद शास्त्री एम० बी० प्रोप्राईटर दि लक्ष्मण मैडिकल हाल रसरा यू० पी०, ब्रांच महेन्द्र, पो० पटना)

किसी २ प्रसूता को प्रसव के पूर्व या पश्चात एक प्रकार का आक्षेप देखा जाता है जो निम्न प्रकार है:—

अचानक आक्षेप होकर प्रसूता संज्ञाहीन होकर धराशायी हो जाती है. शिरा और स्नायुओं में तनाव होती है और मुख की आकृति विकृत हो जाती है, आंखें घूमने लगती हैं, रसना बाहर आ जाती है मुख द्वार से रक्त मिश्रित झाग उठने लगता है। ऐसी अवस्था १५-२० मिनटों तक रह कर स्वास्थ्य लाभ करती है यह दशा बार २ हो सकती है।

सूतिकोन्माद

प्रसव के बाद दुग्ध पिलाने की अवस्था तक ये रोग होता है। इसका कारण भय चिन्ता निर्बलता और शक्ति से अधिक समय तक दुग्धपान कारण है, रोगिणी की आकृति पागल की तरह होती रहती है। अचानक दुग्ध और मूत्र बन्द हो जाता है।

शीघ्रोत्पन्न शिशु का स्वास्थ्य

यह जानने के लिये कि पैदा हुवा शिशु स्वस्थ है अथवा अस्वस्थ यह जानने के लिये अनेक साधनों की आवश्यकता है किन्तु वह हमारे गृहस्थों के लिये असम्भव सा जान पड़ता है। ऐसी सूरत में शिशु की छाती और पेट माप कर उसी के अनुसार वजन जान कर फिर हृदय स्पन्दन नाड़ी को फड़क और फुफ्फुस इत्यादि की परीक्षा करनी पड़ती है। देखिए धात्रीविद्या (Nursery या Midwifery) एक सुयोग्य चिकित्सक केवल आंखों से देख कर ही स्वास्थ्य निश्चित कर सकता है यह कोई बड़ी बात नहीं है। साधारणतया शिशु जब योनि द्वार से बाहर होता है तो उसी समय जोर से चिल्लाता या रोता है यही स्वस्थता की निशानी है. जब शिशु योनि द्वार से बाहर होते ही न रोवे तो उसे अस्वस्थ जान रुलाने की चेष्टा करनी चाहिये इस समय के रुदन से फेफड़े में वायु प्रवेश कर उसे फैला देती है जिसके द्वारा श्वास प्रश्वासकी क्रिया होने लगती है। जिस समय शिशु योनि द्वार से बाहर हो उसी समय उसे साफ कपड़ों अथवा जल द्वारा साफ कर देना चाहिये। यदि मुख, नाक, आंख, कान इत्यादि इन्द्रियां मेद से भरे हों तो उसे सावधानी से साफ कर देना चाहिये और साफ वायु में ले जाना चाहिये। जब शिशु के रुदन में विलम्ब हो रहा हो तो समझना चाहिये कि प्रसव वेदना देर तक हुई है और प्रसव में विलम्ब हुआ है। ऐसी अवस्था में शिशु का दम बन्द होकर मृत्यु तककी आशंका होती है, किन्तु इस समय उजलत नहीं करना चाहिये क्योंकि मृत्यु देर से होती है मगर शिशु मृतवत दशा में देर तक पड़ा रहता है, ऐसी दशा में फुलालैन या कोई गरम मुलायम

वस्त्र से अथवा मोटे और सूती कपड़े से ही शिशु के बदन के गर्दन के नीचे के कुल हिस्से ढक देना चाहिये और शिशु के मुंह पर शीतल जल के छींटे देते रहना चाहिये। यदि अवस्था में कुछ भी सुधार न दिखाई दे तो उसकी छाती पर भी कभी कभी शीतल जल के छींटे देना चाहिये यदि इस पर भी अवस्था न सुधरे तो शिशु की नाक बन्द कर उसके मुंह में ज़ोर से फूंक देना चाहिये। जब देखे कि फेफड़े फूल गए तो शिशु की छाती को धीरे धीरे दबा कर हवा निकाल देना चाहिये और फिर नाक बन्द कर फूंकना और हवा निकालना चाहिये। ऐसा बार २ करने से कुछ ही मिनट में हृदयस्पन्दन और नाड़ी चलने लगती है फिर कोई भय नहीं रह जाता।

शिशु नाभि

नाभि छेदन का समय भी शिशु के लिये खतरे से खाली नहीं है नाल काटने के लिये जो शस्त्र (चाकू या कैंची) हो वह नूतन और तेज होना चाहिये। और उसे गरम पानी से खूब धोता देना चाहिये, नाभि को भी इसी प्रकार धोता देना चाहिये और फिर साफ कपड़े से पोंछ पोंछ कर वायु के कीटाणुओं से बचा रखने के लिये किसी पात्र में छिपा देना चाहिये पात्र, निर्मल श्रेष्ठ होता है और वह बर्तन भी गरम पानी से शुद्ध किया होना चाहिये, नाल काटने वाली दाई युवा सुन्दर और प्रसन्न चित्त की होनी चाहिये और उसे उपदंशादि कोई रोग न होना चाहिये अन्यथा शिशु का भविष्य निरापद न होगा। प्रसव के पूर्व ही गर्भवती को साफ कपड़े पहना देना चाहिये, और दाई को गरम जल तथा साबुन से स्नान करा कर साफ कपड़े पिन्हा देना चाहिये, फिर जब नाल काटने का समय हो तो उस के हाथों को पहले साबुन और गरम पानी से साफ करा कर परमैंगिनेट पोटास के लोशन अथवा पियोर ईथर से धुला कर फिर गरम पानी से धुला कर साफ कपड़े से पोंछ देना चाहिये। नाल काटने वाली दाई के हाथ कम्पित न हों इस पर विशेष ध्यान देने की आवश्कता है। दाई चतुर और क्वालीफाइड होनी चाहिये मूर्खा दाई सब कुछ होने पर भी कुछ गलती अवश्य ही कर जाया करती है। जिस का परिणाम प्रसूता या शिशु दोनों में से एक को अवश्य ही भोगना पड़ता है। जब तक नाल शिशु की नाभि और प्रसूता की योनि से लगा रहेगा तब तक शिशु के शरीर से माता के शरीर में और माता के शरीर से शिशु के शरीर में रक्त बराबर आता जाता रहेगा इस लिये जब शिशु के शरीर में रक्त भरेगा तो शिशु चैतन्य और तन्दुरुस्त दिखाई देगा और जब माता के शरीर में रक्त भरेगा तब शिशु सुस्त और अस्वस्थ दिखाई देगा नाल बांधते समय इस बात पर बराबर ध्यान रखना चाहिये। जब देखें कि रक्त शिशु के शरीर में भर गया है और शिशु की श्वास प्रश्वास क्रिया ठीक है तथा नाल का स्पन्दन बन्द हो गया है, तब नाभि से डेढ़ दो इंच दूर पर मजबूत गांठ देना चाहिये फिर एक ऐसी ही गांठ थोड़ी दूर पर देना चाहिये और बीच में से सावधानी से काट देना चाहिये। नाल काटने के बाद जब तक शिशु को स्नान न कराया जावे, तब तक गरम कपड़े से ढक कर रखना चाहिये फिर स्नान कराने के बाद एक साफ कपड़े की कई

तह करके बीच में से काट लो जिस से कपड़े के बींच एक गोल छिद्र—०—हो जावे। यह कपड़ा चपतदार कम से कम एक बालिश्त का होना चाहिये छिद्र में नाभि डाल कर दोनों सिरे कपड़े के दोनों पार्श्व के तरफ लगा देना चाहिये फिर दो इंच चौड़ा साफ कपड़ा लेकर उसे लम्बा ही चार चपत कर लेना चाहिये। यह कपड़ा लम्वाई में ४-५ इंच होना चाहिये इस चपतदार कपड़े को उंगली में या किसी चिकने लकड़ी में लपेट कर निकाल लेना चाहिये यह आकार में पाइप की तरह होना चाहिये और इस के भीतर नाभि प्रवेश कर पहले कपड़े के छिद्र पर इस प्रकार रखना चाहिये ◔ यह पाइप नारियल के तेल में भीगा होना चाहिये, इस पाइपदार कपड़े से जो भाग नाभि का निकला हो उसे पेट के तरफ मोड़ देना चाहिये और ऊपर से एक मोटे कपड़े को रख बांध देना चाहिये ताकि नीचे के कपड़े और मुड़ा हुआ नाभि हटने न पाये कपड़ा बांधने समय यह ध्यान रखना चाहिये कि कपड़ा कस न जाये, प्रतिदिन एक बार ऐसा ही करना चाहिये।

स्नान

नाल काटने के बाद शिशु के समस्त शरीर में नारियल या सरसों का तेल मलकर गरम जल से स्नान कराकर सूखे और साफ कपड़े से बदन खूब अच्छी तरह पोंछ देना चाहिये जिससे तेल और पानी सभी छूट जाये फिर सूखे और साफ कपड़े से ढक देना चाहिए। प्रतिदिन जल की उष्णता कम करते जाना चाहिए, ताकि ३-४ दिनों में वह शीतल जल प्रयोग के योग्य बनजाय। शिशु के कपड़े हमेशा साफ और शुद्ध होने चाहिये, माता (प्रसूता) को भी सदैव साफ सुथरा रहना चाहिए शिशु और प्रसूता दोनों को मुलायम बिस्तर रखना चाहिए, और रहने का स्थान बिल्कुल साफ सुथरा और हवादार हो, तथा धुवां धूल से वंचित रहना चाहिए।

मल

शिशु योनि द्वार से बाहर होने के कुछ देर बाद पखाना (मल त्याग) करता है। यह सर्व-प्रथम मल गोंद की तरह चिप चिपा काला गाढ़ा या सब्जी लिए हुवे होता है, कभी मलत्याग में विलम्ब भी होता है जिसके कारण पेट अफर जाता है, और कुछ पेट में वेदना भी होने लगती है। ऐसी अवस्था में शिशु को निद्रा का अभाव होजाता है, और हाथ पांव तथा शरीर एंठने लगता है। ऐसी हालत में यदि माता का दूध पिला दिया जाये और खारी नमक ४ रत्ती कास्टर आयल (अरंडी का तेल) १। माशा एक चीनी के खरल में खूब घोटकर जरासा गरम कर नाभी के चारों तरफ लगा दिया जाये, और पान की एक नली (डंठल) लेकर उसपर कास्टरआयल ग्लिसरीन लगाकर गुदा मार्ग में प्रवेश कर भीतर बाहर करने से पाखाना बाहर निकल आता है। किन्तु माता का दूध पीने के कुछ देर इंतजार कर यह क्रिया करनी चाहिए क्योंकि माता का दूध भी विरेचन का काम करता है।

धनुष्टंकार (Tatanus)

कारण:-

जन्म के दूसरे दिन से लेकर एक मास के अन्दर तक यह रोग प्रकाश पाता है, यह रोग

अधिकतर नाल काटने के ही दोष से होता है। तथा अन्य भी कारण हैं जैसे "गन्दगी" गन्दे गृह, गन्दी हवा, गन्दे कपड़े, प्रसूता के भोजन का दोष, नाभी में पाव पड़ना इत्यादि।

लक्षण:—

आरंभ में अधिक रुदन, जबड़ों का बन्द होना, मुख नहीं खुलना दूध नहीं पीना, हाथ पांव का कठिन होना, ऐंठ जाना, मुख से झाग (फेन) निकलना, प्रायः शरीर एंठकर धनुष की तरह आगे या पीछे की तरफ टेढ़ा होजाना (Toine-Contractor or Canveltion) नेत्र की पुतलियां कोने की तरफ चली जाती हैं, और आंखे खुली और फैली हुई होती हैं। इस प्रकार बार बार आक्षेप (फिट)आता रहता है, श्वास कष्ट, नाड़ी अत्यन्त द्रुतगामी, कभी तीव्र ज्वर भी होता है, मांस पेशियों में वेदना, प्यास की अधिकता मुख गला और जीभ का सूखना, कोष्ट बद्ध, कभी मूत्रावरोध भी होता है, अनिद्रा, रोगी का संज्ञाहीन नहीं होना, सांइस्फेटिक (एलो पैथिक) के मत से ब्रिस्टल बेसिलस (Baistle Bacillus) नामक जीवाणु ही इस रोग का कारण होता है और इसमें मृत्यु संख्या अधिक होती है।

नोट:—यदि गाल, होठ और कंठ सूखे हों शरीर और नाखून का रंग नीला हो दिल धड़कने लगे, अथवा दिल की चाल और शारीरिक उष्णता घटने लगे तो ऐसी अवस्था में भूतबाधा का सन्देह होता है। पेट की गड़बड़ी से शिशु छटपटाता है और सोता नहीं है इसलिये शिशु और माता दोनों के खाद्य पदार्थों पर विशेष ध्यान रखना चाहिए। (इतिशम्)



बच्चे का स्वास्थ्य



(ले०—प्रधानाध्यापक व चिकित्सक, दा प्रीन्स होम्यो पैथिक टूनिक्ल कालेज मेरठ शहर)

प्राचीन समय में जब मनुष्य कठिनाईयां सहन करने के अभ्यस्त होते थे तो शैशवावस्था से ही माताएं अपनी प्रिय सन्तान को कठिनाइयां सहन करने का अभ्यस्त बना देती थीं। बच्चों को कठोर एवं पथरीली पृथ्वी पर शयन कराना-व्यायाम कराना-खेलने-कूदने देना स्वतंत्रता से व स्वछन्दता से इच्छानुसार दौड़ने, खेलने देना। ज्यादः गोद में लिए २ न फिरना क्योंकि इस से शिशु कोमल हो जाते हैं और सदैव रोगी ही बने रहते हैं। एक बार हमने किसी पुस्तक में अवलोकन किया था कि जर्मनी में प्रथा थी कि वहां पर प्रसवोपरान्त कोमल शिशु को राईन नदी के बर्फीले ठंडे जल में स्नान कराया जाता था ताकि वहां की तीव्र शीत को यह बच्चे सहन करने के अभ्यस्त हो जाएं। परन्तु भारत उष्णप्रधान देश है इसलिए यहां पर उष्ण जल से स्नान कराना शिशु के लिए अतिशय हितकर है। प्रसव से छः मास पर्यन्त ऋतु के अनुकूल शरीर तापमान के सदृश उष्ण जल से तैलाभ्यंगोपरान्त स्नान कराना चाहिये। अत्युत्तम हो कि आम जल में थोड़ा साबुन-या सोडा अथवा एक कागजी नीम्बू का अर्क डाल लिया जाए। हमारे विचार में ७। ८ मास की आयु के बाद बजाए उष्ण जल के स्वच्छ ताजे जल से स्नान कराना अत्यन्त स्वास्थ्यवर्द्धक है। पर इस में भी १ कागजी नीम्बू का अर्क चाहिए और स्नान से पूर्व तैलाभ्यंग अवश्य कर लेना चाहिए। बच्चों के सर पर एकदम जल का तरड़ा न दें क्योंकि इससे सुबकी आजाती है और ठन्ड होने या दम घुटने का भय रहता है इस से उचित है कि एक टीन के बड़े टब में बैठा कर



(इस बच्चे का शरीर कितना सधा हुआ है पाठक जरा ध्यान से देखें)

स्नान कराया जाए। और ४ मिनट से ज्यादा टबमें न बैठाना चाहिए। पानी से निकाल कर साफ व मुलायम तौलिया से भली प्रकार स्वच्छ करके किसी मुलायम कपड़े में ढक कर और गोदमें लेकर शनैः २ हिलाते डुलाते रहें तदुपरान्त दुग्धपान कराना चाहिए। स्नान ऐसे स्थान में कराना चाहिए

कि जहां पर वायु का तेज झोंका न आता हो एतदर्थ बन्द कमरे में स्नान कराना अत्युत्तम है। दुग्ध पानोपरान्त स्नान कराना अहितकर और रोगोत्पादक है।

बच्चों का व्यायाम

प्रसवोपरान्त के रुदनसे स्पष्ट है कि नवागंतुक शिशु किसी कष्ट या क्षुधा के पीड़ित होकर रुदन नहीं कर रहा है बल्कि स्वच्छ वायु को अन्दर प्रविष्ट करके फुफ्फुसों को संचालन करनेका प्रयत्न कर रहा है श्वासप्रश्वास क्रिया से रक्त का संचार शुरू हो जाता है। स्वच्छ वायु प्रत्येक जीवके लिए अत्यन्त आवश्यक पदार्थ है। गर्भावस्था में शिशु के फुफ्फुस भिचे और सिकुड़े हुए रहते हैं, श्वास क्रिया बन्द रहती है और सारा कार्य श्वास व पोषण का जरायु द्वारा ही होता रहता है परन्तु प्रसव के बाद उसमें बहुत बड़ी तबदीलियां होजाती हैं। सर्व प्रथम जरायु स्पन्दन मस्तिष्क में बन्द होता है तदोपरान्त शनैः २ नीचेके अवयवोंमें बन्द होता हुआ नाभी में रुक जाता है और जरायु ढीला पड़ जाता है तो समस्त रक्तसंचालन क्रिया बच्चे के शरीर में बन्द होजाती है और यह वही समय होता है जब कि बच्चे के चिल्लाने काशब्द सुनाई देता है। इस रुदन से वायु उसके फुफ्फुसों में प्रविष्ट होती है इसलिए सौर गृह ऐसे स्थान में हो जहां शुद्ध स्वच्छ वायु का पर्याप्त मात्रा में संचार हो। सूर्यरश्मि भी आती हो ताकि हानिप्रद और सूक्ष्म कीटाणुओं का संहार होता रहे और जच्चा व बच्चा के स्वास्थ्य पर बुरा प्रभाव न पड़ सके कारण कि एक मास तक बच्चे को भारतवर्ष की प्रथानुसार गृह से बाहर निकालना अशुभ सूचक बतलाया जाता है और दरअसल है ठीक भी क्योंकि कोमल शिशु बाहर की सर्द गर्म व तीक्ष्ण वायु आदि को कोमलता के कारण से सहन नहीं कर सकता और रोगी हो जाता है। पर एक मास के बाद प्रातः सायं माताएं खुद बच्चों को लेकर खुले स्थानों बाग बगीचों में शनैः २ भ्रमण किया करें इससे स्वास्थ ठीक रहता है और शीघ्र ही शिशु व माता हृष्ट पुष्ट हो जाते हैं। बच्चों को खूब खेलने कूदने भागने दौड़ने देना चाहिये क्योंकि यही उनके हृष्ट पुष्ट और स्वास्थ्य ठीक करने का सर्वोत्कृष्ट साधन है। अपने आराम की खातिर बच्चों को खेल कूद व शोरोगुल से रोकना नहीं चाहिये, क्योंकि बचपन में भी व्यायाम की उतनी ही आवश्कता है जितना अधेड़ उमर में। छोटे बच्चों का व्यायाम इतना ही पर्य्याप्त है, कि उन्हें खूब कसे हुए पलंग पर लिटा दें ताकि वह स्वच्छन्दता पूर्वक हाथ पैर हिला कर व्यायाम कर सकें। ४-५ मास तक बच्चों को बैठाना या खड़ा करना हानिकारक है। क्योंकि उनका कोमल व लचकदार पीठ व ग्रीवा की अस्थियां शरीर भार से झुक जाती हैं इस से बच्चा सारी आयु के लिये कुबड़ा ही नहीं बल्कि उसके फुफ्फुस हृदय और मेदे पर भार पड़ने से पाचन क्रिया खराब हो जाती है। बच्चों को ऊंचा उछालना कुदाना भी हानिप्रद है तथा साथ में शयन कराना भी स्वास्थ्य नाशक है। कारण कि विज्ञानवेत्ताओं ने यह प्रमाणित कर दिया है कि दो मनुष्यों के एक साथ शयन करने से जो मनुष्य हृष्ट पुष्ट होगा वह क्षीण या कमजोर

मनुष्य के शरीर वाईलेट पोर्स(Vitality) अपनी ओर खींच लेगा और कमजोर मनुष्य और भी ज्यादा कमजोर हो जायेगा यही कारण है जो बड़े मनुष्य या माता के साथ बच्चों को शयन कराने से वह सदैव रोगी और क्षीण बने रहते हैं। सदैव बच्चों को भली प्रकार ऋतु अनुकूल वस्त्र पहना व उढ़ा कर पालने में प्रथक शयन करने का अभ्यस्त बना देना चाहिए। इससे एक तो स्वास्थ्य ठीक रहेगा दूसरे समय पर ही बच्चा क्षुधित होकर दुग्धपान कर सकेगा यह नहीं कि पास लिटे रहने से जब आंख खुली दूध पीना शुरू कर दिया और अजीर्ण से प्रसित होकर वमन, दस्त होने लगे और रोगी बन गया।

बच्चों के रोगों की चिकित्सा का प्रकरण बहुत वृहत है इसलिए हम उस प्रकरण को यहां पर न लेकर नूतन विधि से बिना औषधि के चिकित्सा व्याख्या करते हैं इससे यथेष्ट लाभ होगा। एक वर्ष के १२ मासों की व्याख्या करते हैं, इसी प्रकार प्रथक २ मास में किस रत्न की पूजा करनीव किसको धारण करने से रोग शांत होता है व्यौरेवार अंकित करते हैं। जिस मास में बच्चा रुग्ण हो कोष्टकानुसार रत्न धारण कराना और पूजा करना तत्क्षण रोग शांत करता है, इस बात का हमने सहस्त्रों बार अनुभव कर लिया है, आप भी अनुभव करके हमारे परिश्रम की सराहना करें और अपनी प्रिय सन्तान को कड़वी आदि तीक्ष्ण औषधियों के विषों से बचायें।

नाम मास	महीना	कौनसा रत्न धारण कराना चाहिए	किस रत्न की शिव मूर्ति बना कर पूजना चाहिए।
माघ	जनवरी	गो मेदक	मेंढर अर्केड
फाल्गुन	फरवरी	एमीथेस्ट	चन्द्रकान्त
चैत्र	मार्च	संगयसब	स्वर्ण
वैसाख	अप्रैल	नीलम	हीरा
ज्येष्ठ	मई	अर्काक	पन्ना
आषाढ़	जून	पन्ना	मुक्ता
श्रावण	जौलाई	पालंक	नीलम
भाद्रपद	अगस्त	रुद्राक्ष	माणिक
क्वार	सितम्बर	कारकीनक	गोमेदक
कार्तिक	अक्टूबर	पारोभद्र	प्रवाल
अगहन	नवम्बर	पुष्पराग	लहसनियां
पूष	दिसम्बर	लाल	पुष्पराग

ग्रहों की शांति के लिये जिस ग्रह का प्रकोप हो उसका रत्न धारण करने से शीघ्र रोग दूर होकर आरोग्यता प्राप्त होती है।

नामग्रह	इसके प्रकोप में कौन रत्न धारण करें।
सूर्य्य	माणिक्य
चन्द्र	मुक्ता
मंगल	मूंगा
बुद्ध	पन्ना
बृहस्पति	पुष्प राग
शुक्र	हीरा
शनिवार	नीलम
राहु	लहसनिया
केतु	जरकून

रत्न को धारण कराके बच्चे को सावधानी से रखना चाहिए ऐसा न हो कि किसी उचक्के को मौका मिल जाये और बच्चे को प्राणों का भी भय हो जाए। रत्नों का शरीर से स्पर्श करते रहना ही फलप्रद होता है इस वास्ते स्वर्णादि धातु में भली प्रकार जड़वाकर शरीर में पहनावें और ऊपर से कपड़ा पहनादें। जो भी रत्न धारण किया जाए २ रत्ती से कम का न हो अन्यथा कोई लाभ नहीं होगा। रत्नों की परीक्षा पर आगामी अंक में प्रकाश डाला जाएगा खूब परीक्षा करके रत्न लेने चाहिए।

बच्चे का स्नान, शिशु का आकार और वजन

(ले०--वैद्यराज डा० धरणीधर शर्मा वैद्यशास्त्री L. M. S. H. M. B, आयुर्वेदाचार्य. कछवा मिर्जापुर ।

"दीपनं वृष्य मायुष्यं स्नानमोजो बलप्रदम् ।
कंडू मल श्रमस्वेद तन्द्रा तृड् दाह पाप्मनुत ॥ भा०

स्नान करने से अग्नि प्रदीप्त होती है, शक्ति, आयु, ओज बढ़ कर उत्साह और बल की वृद्धि होती है, और खुजली, मैल पसीना, परिश्रम, आलस्य, तृषा, दाह और पाप आदि विनष्ट होते हैं । शीतल जल से स्नान करने से शरीर की बाहरी उष्णता भीतर प्रवेश करके मनुष्यकी जठराग्नि को दीप्त कर देती है । इसी कारण से स्नान करने के पश्चात् भूख मालूम पड़ती है । ठंडे जल से ही सर्वदा स्नान करना लाभदायक होता है, किन्तु यदि वात और कफ का प्रकोप होतो उष्ण जल से ही स्नान करना चाहिये । ज्वर, अतिसार, नेत्रदर्द, कर्णशूल, वातरोग, अजीर्ण, अफारा, पीनस, आदि रोगों में स्नान करना वर्जित है । भोजन के पश्चात् स्नान करना स्वास्थ्य के लिये हानिप्रद है । स्नान करने के अनन्तर कोमल वस्त्र से अंगों को भली भांति पोंछ देना चाहिये ।

आरोग्यता के लिये स्नान की कितनी आवश्यकता है यह अच्छी प्रकार विदित हो गया किन्तु अधिकांश अनपढ़ स्त्रियां नवजात शिशु को स्नान कराना बहुत बुरा समझती हैं । यह उन की भारी भूल है । नालच्छेदन और नालबंधन हो जाने के पश्चात् बच्चेका माताको सुप्रबन्ध करना चाहिये । तदन्तर बालक को स्नान कराने के लिये चतुर दाई को तत्पर हो जाना चाहिये । बहुतसी मूर्खा दाइयां अपने पैरों को नङ्गा करके पसार देती हैं और बालक को औंधे मुख उसी पर लिटा कर स्नान कराती हैं । लेकिन यह कुप्रथा अत्यन्त हानिप्रद है । उन्हें इस रीति को परिवर्तन कर निम्न प्रकार से स्नान कराना चाहिये ।

प्रथम बच्चे के शरीर में वैसलीन, सरसों, गरी, या तिल के तैल का मर्दन कर दे । तत्पश्चात् कोमल वस्त्र द्वारा उसके शरीर में का (Vernik-caseosa or cheesy vernish, चिपचिपाहट युक्त एक पदार्थ है) मैल को धीरे २ पोंछ डाले । तदनन्तर बेसन (चने का आटा) अथवा साबुन से ऋतु विशेषानुसार शीतल या उष्ण जल से स्नान करा दे । यदि शीत ऋतु है तो ६०—६४ सेंटिग्रेड की उष्णता का जल पात्र में भरना चाहिये किन्तु जब ३४ सेंटिग्रेड जल की गर्मी रहे तो बालक के स्नानोपयोगी उत्तम होता है । यह नाप (Bath Thermamitor) बाथ थर्मामीटर (उष्ण जल मापक यंत्र) से जानी जाती है । क्रिया यह है कि गरम जल में उक्त यंत्र का पारद वाला भाग डिलाया जाता है तब पारा उसके गर्मी से ऊपर चढ़ने लगता है । जब पारा ३४ सेंटिग्रेड पर पहुंच जाय तो पानी को



[illegible]



वैद्यराज शिवशरण जी वर्मा आचार्य धन्वन्तरि
[illegible]

पापुलर प्रेस देहली।

नीचे उतार कर काम में लावे । यद्यपि ग्रामीण स्त्रियों के हाथों का चमड़ा अधिक कार्य करने से कठोर हो जाता है, अन्यथा वे अपने अंगुलियों द्वारा जल की स्वयं परीक्षा कर सकती हैं। यदि उन्हें परीक्षा करने की आवश्यकता हो तो गरम जल को एक पतले, हलके गिलास में भर कर अपने गालों पर लगावें। यदि साधारण उष्णता उन्हें मालूम हो, जिसे वह सह सकती हों तो वैसे ही जल से स्नान कराने के योग्य समझें। ग्रीष्म ऋतु में ताजे जल से ही स्नान करा देना हानिप्रद न होगा। स्नान कराने के बाद शीघ्र कोमल स्वच्छ वस्त्रों से आच्छादित गद्देदार या कोमल बिछौने पर सुला दें।

स्नान कराते समय इस बात पर ध्यान रखना आवश्यक है कि सहसा बालक को पानी में न डाल दें। स्नान किसी टब या कोई टोंटीदार पात्र से कराना चाहिये। पहले उसका पैर पानी में डालना चाहिए और यदि कमण्डलु आदि टोंटीदार पात्र हो तो बालक के पैर से पानी छोड़ना आरम्भ करें जो कि बहुत ऊंचे भार से न छोड़ा जाय। अगर टब हो तो बालक का मस्तक पानी के ऊपर रख कर स्नान करावें। साबुन और पानी से उसके समस्त शरीर को हल्के हाथ से अच्छी प्रकार धो डालें किन्तु सिर को पूर्ववत् पानी के बाहर रक्खें। तदनन्तर बच्चे को बाहर निकाल कर स्वच्छ फलालेन के टुकड़े अथवा स्पञ्ज (Spunj) से उसके शरीर को मल दें और सिर को विशेष सावधानी के साथ साफ करें। इसके बाद मुलायम तौलिये (अंगोछे) से पोंछ दे और उसके सारे शरीर पर संग जराहत, चावल का आटा या बोरिकएसिड की बुकनी छिड़क दें। उस से त्वचा सम्बन्धी विकार दूर हो जाते हैं। इसी प्रकार ऋतु और बालक के स्वास्थ्य अनुकूल प्रति दिन उबटन सरसों का तेल लगा कर ठंडे जल से स्नान कराया करें। इस से उसकी स्वास्थ्य सदैव उत्तम रहेगी और वह सुख की नींद से सोवेगा। अर्वाचीन युग की स्त्रियां आधुनिक शिक्षा प्रणाली रहन-सहन में बेतुका फंस कर साबुन का अधिक व्यवहार करती हैं। उन्हें इस बात पर किंचित् विचार नहीं कि वे ही तो अपना जीवन और सौन्दर्यता का नाश कर चुकी हैं, तो उन अबोध नवजात शिशुओं की लावण्यता इन कुवस्तुओं के दुरुपयोग से क्यों धूल में मिलावें। साबुन से बालक की सुन्दरता जाती रहती है, क्यों कि त्वचा के नीचे वसा (चर्बी) इस के उपयोग से जमने नहीं पाती और चमड़ी पतली पड़ जाती है। इसका दुष्परिणाम यह होता है कि बच्चे की आदत बिगड़ जाती है और उसे थोड़े ही में सर्दी और थोड़े ही में गर्मी का अनुभव होकर वह अधिकांश अस्वस्थ्य रहता है। मातायें अपनी अनभिज्ञता निर्दोषिता प्रगट कर भूत-प्रेत का प्रकोप मान कर पीर, मसजिद में दौड़ी जाकर अपना बालक धन और धर्म सब नष्ट कर देती हैं। अतः साबुन के स्थान पर यदि चने का बेसन व्यवहार में लावें तो अत्युत्तम हो। जो कि साबुन लगाने में ही अपनी बड़प्पन समझें तो वे इस बात का विशेष ध्यान रक्खें कि बालक के नेत्रों में वह न लगे नहीं तो उसे कष्ट होगा।

आकार और वजन

स्वास्थ्य परीक्षा के लिये बालक को तौलना

डिप्थीरिया (Diphtheria) व नाम गलरोग

(लेखक—वैद्यचक्रवर्ती पं० काशीनाथ शर्मा कविराज आयुर्वेदाचार्य चिकित्सक बाबा काली कमली वाला धर्मार्थ औषधालय मालीवाड़ा देहली ।

यूं तो बालकों के ऐसे बहुतसे रोगहैं जो उनको भयंकर यंत्रणायें अविवेच्य कष्ट कल्पनायें देते हुवे शीघ्र मृत्यु समीप ले जाते हैं परन्तु उन सब में डिप्थीरिया भी अपनी कम शान नहीं रखता यद्यपि अधिकांश चिकित्सा शास्त्रों में जहां तक इसका वर्णन मिलताहै । प्रायः सभी इसको बाल रोग केनाम से संबोधित करतेहैं परन्तु वास्तविकता इससे कुछ विभिन्न है जहां ९६९५ प्रतिशत बच्चों को और वह भी ऐसे जो स्तन पायी हैं होताहै वहां यह ५ प्रतिशत अतिरिक्त आयु में भी होता देखा गया है । जिन चिकित्सकों को इसकी चिकित्सा करने का अवसर प्राप्त हुवा है वह इसकी भयं-करता व दुःखद घटना से पूर्णतया परिचित हैं प्रस्तुत लेख में इस ही पर विचार किया जायगा

निदान

डिप्थीरिया बालकों के गले का सांक्रामिक अति असाध्यरोग है इसका उत्पन्न होना माताओं के आहार विहार पर ही निर्भर है। जो मातायें अजीर्ण पैदा करने वाले गरिष्ठ समय के प्रतिकूल अतिशीत या अतितीक्ष्ण वस्तुओं का इस्तेमाल करती हैं उनका दुग्ध दुष्ट हो जाता है, बच्चे का प्रारम्भिक पोषण द्रव्य दुग्ध ही होता है इस ही के ऊपर शरीर की आरोग्यता तथा सौंदर्यता निर्भर है डिप्थीरिया के अन्दर वायु और कफ की प्राधान्यता होती है, जो दुष्ट दुग्धपान करते हैं उनके Tonsils गलग्रंथि फूल जाते हैं और पांच सात दिन में ही वह भयंकर रूपधारण कर लेते हैं जिससे बच्चे की तमाम

लाकर मैंने लाभ उठाया है, प्रकाशित करता हूं ।

जब बालक अधिक चमक २ कर रोवे, पेट टेढ़ा हो जाय, कानरगड़ खाये, और उदर टटोलने से कठोर मालूम दे तो उसे अवश्य मलावरोध (कब्ज) की शिकायत समझना चाहिए । उक्त अवसर पर बाजारू रेंडी के तेल में सैंधव का सूक्ष्म चूर्ण थोड़ा थोड़ा गर्म कर देवै और उसे उदर पर धीरे २ मर्दन करै । लगभग आधे घंटे तक मर्दन के बाद एक मोटी रुई की गद्दी बना इसी तैल द्वारा तर करके (भिगोकर) नाभी पर १ घंटा तक रक्खा रहने दें । तदनन्तर चनेकी दाल को पानी से पीस फिर उसे थोड़े घी से भून डाले और उसी नाभी पर रखकर ऊपर से १ पत्ता बंगला पान रखकर बांध दे । इस क्रिया से अवश्य दस्त आकर समस्त उदर विकार नष्ट होंगे । जब इससे दस्त न हो तब शुद्ध रेंडी का तैल १०-१५ बूंद माता के दूध में छोड़कर पिलावै इससे अवश्य दस्त होगा । यदि यकृद्विकारादि कारणों से मलावरोध हो तो मुख्यतः उन रोगों की ही चिकित्सा करें । मूलरोग नष्ट होने से कब्ज स्वयं दूर हो जायगा ।

काली खाँसी (Whoopeing Cough)

(लेखक—कविराज पं० धर्मानन्द जी शास्त्री आयुर्वेदाचार्य प्रो० गुरुकुल कांगड़ी ।)

परिचय—

श्वास मार्ग श्लैष्मिक कला के प्रदाह के साथ स्नायविक उत्तेजना के कारण आक्षेप और कुत्ते की तरह शब्द युक्त कास को "हूपिंग कफ" या काली खांसी कहते हैं। यह एक तीव्र संक्रामक रोग है। और एक बार होने पर पुनः आक्रमण की सम्भावना बहुत कम रहती है।

कारण—

यह रोग बाल्यावस्था में विशेषतः २ से १२ वर्ष तक की आयु में होता है। अति शीत और कटुतिक्त कषाय द्रव्योंका अति सेवन, घनी बस्तीमें निवास, दूषित वायु, अधिक परिश्रम, शीत का लगना इस के कारण माने जाते हैं। कास की दशा या प्रतिश्याय में उष्ण तीक्ष्ण द्रव्योंका सेवन करने से ब्रौंकियल या ट्रेकियल ग्लाण्ड्स शोथयुक्त हो जाते हैं। जिससे भेगस स्नायु पर दबाव पड़ता है तो खांसी हो जाती है। परन्तु किन्हींके विचार में इसका विशेष कारण एक प्रकार का कीटाणु है जिसे "बेसिलस परट्सिस" कहते हैं। यह रोगी के थूक श्वास वस्त्र आदि द्वारा दूसरे स्वस्थ मनुष्यों में संक्रमण कर जाता है। अतः घर में एक बालक को यह रोग होने पर दूसरे बच्चों को भी इसके साथ रहने से यह शीघ्र ही घर लेता है और क्रमशः सारी बस्ती के बच्चों में फैल जाता है।

संप्राप्ति—

इसमें पहिले वायु प्रणाली तथा सूक्ष्म वायु प्रणालियों में कफ पित्त का प्रकोप होता है जिस से ये लाल और क्षोभयुक्त हो जाती हैं। बाद को वात प्रकोप होने से या वायु प्रणालियों की श्लैष्मिक झिल्ली में विषजन्य क्षोभ उत्पन्न होता है तो हुउ हुउ का शब्द होने लगता है। साधारणतः यह रोग ४ से २१ दिन तक परन्तु विशेषावस्था में कहीं २ दो या तीन मास तक भी पाया जाता है।

ऐसा हो कि जिसमें स्वच्छ हवा आती हो रोगी के कपड़े रोज़ाना बदलते रहना चाहिए और उन उतरे हुवे कपड़ों को दूसरे कपड़ों में नहीं मिलाना चाहिये उनको कार्बोलिक साबुन से या नीम के साबुन से धुलवा कर दुबारा काम में ला सकते हो। रोगी के अच्छा हो जाने पर फिर वह कपड़े काम में नहीं लाना चाहिए, रोगी के थूक को और नाक के मैल को उसी वक्त जला देना चाहिए और रोगी के परिचारक सुयोग्य आतुर परिचर्या में निपुण जोकि समय समय पर वैद्य की सलाह से काम करने वाले हों होने चाहियें। विषम वाद करने वाली औरतों को पास में नहीं आने देना चाहिये।

लक्षण—

इस रोग की तीन अवस्थायें देखने में आती हैं। (१) सर्दी की अवस्था (Catarrhalstege) (२) आक्षेपक दशा (Spesmodie Stage) (३) आरोग्योन्मुखावस्था।

१ प्रतिश्याय की अवस्था—यह शनैः शनैः और कभी अकस्मात आरम्भ होती है। जिसमें सामान्य ज्वर १००-१०१ तक होता है। नेत्र लाल और नासिका तथा नेत्रों से पानी गिरता है। बार २ छींक आती और सूखी खांसी होती है। जब धीरे २ खांसी बढ़ती जाती और घातिक रूप धारण कर लेती है तो नासिका आदि स्राव बन्द हो जाते हैं और द्वितीय अवस्था आरम्भ हो जाती है।

२—आक्षेपक अवस्था—इसमें घातक कास के वेग आने लगते हैं अर्थात खांसी २—३ मिनट तक लगातार आती है और गले में एक प्रकार का क्षोभ या अवरोधमा प्रतीत होता है जिससे रोगी को पता चलता है कि कब खांसी उठने वाली है। इस अवस्था में रोगी खांसते वक्त भीतर श्वांस नहीं ले सकता केवल बाहर ही फेंकता है। कुछ देर तक लगातार खांसने पर वह एक लम्बा श्वांस लेता है जिससे हूप शब्द निकलता है। खांसते वक्त रोगी का चेहरा नीलवर्ण और नासिका आदि से जल-स्राव होता है। ४—७ बार इस प्रकार वेग उठने पर कुछ गाढ़ी और चिकनी श्लेष्मा निकल आती है या वमन हो जाती है तो रोगी को आराम मालूम होता है। वेग तीव्र होने से खांसते वक्त गले और कपोलों की नसें फूल जाती तथा रोगी स्वेदसे तर हो जाता है। कभी २ किसी के तीव्र वेग के कारण नासारक्त स्राव और मस्तिष्क धमनी के फटने से मूर्छा भी हो जाती है। और हाथ पैरों में तीव्र आक्षेप (झटके) होने लगते हैं। और किसी के खांसने से मूत्र निकल जाना या कांच बाहर निकल आती है। यदि वेग देर तक रहे और विराम मिला हो तो वायु-कोष्ठ विस्तृत हो जाते हैं।

३ आरोग्योन्मुखावस्था—में खांसी का आक्रमण देर में होता है और आक्षेपावस्था क्रमशः घटने लगती है। वमन नहीं होता तथा श्लेष्मा आसानी से निकलने लगती है। रोगी धीरे २ स्वस्थ हो जाता है।

भावीफल

कोई विशेष उपद्रव न होने पर परिणाम शुभ होता है। अधिक रक्तस्राव, मूर्छा तथा अधिक दीर्घ वेग की अवस्था में परिणाम अच्छा नहीं होता है।

चिकित्सा

यह रोग सामयिक होता है अतः और कोई उपद्रव आदि न हो तो चिकित्सा न करने पर कोई हानि नहीं। शरीर तथा वायु प्रणालियों की दुर्बलता दूर होने पर यह स्वतःशान्त हो जाता है। यदि रोगी का खाया पीया हुआ सब निकल जाय और दुर्बलता बढ़ती जाय तो चिकित्सा करना जरूरी है। फिर भी विदेशों की भांति यह रोग हमारे यहां घातक नहीं होता। इसमें पहिले प्रतिश्याय के साथ ज्वर होता है अतः Fererin में थोड़ासा वाइनमर्णपिकाक मिलाकर देना चाहिये।

चेष्टाओं में उसको अत्यन्त दुःख प्रतीत होने लगता है और अत्यन्त विह्वल होजाना है।

लक्षण

इसमें प्रथम गले में साधारण दर्द मालूम होने लगता है और एक सप्ताह के अन्दर २ गले की कुछ झर्सीन्त लाल रंग की ओर गहरासी मालूम होने लगता है इसका कारण यह है कि वातजन्य गले की सूजना से बच्चे के खांसने आदि से गला छिल जाता है और अन्दर लाल-रंग का घाव दिखाई देने लगता है और गलसुओं के ऊपर और आस पास सफेद रंग का चमड़ा दिखाई देने लगता है और अति तीव्र ज्वर हो जाता है ऐसे लक्षण मालूम हों तो समझना चाहिये कि बच्चे को डिफ्थीरिया हो गया है डाक्टर लोग इसको क्रिमिजन्य ही मानते हैं जिस का हमारे आयुर्वेद मतानुसार भी अविरोध है हालांकि आयुर्वेद के रोगों के प्रति दोषों को ही समवायि कारण माना है। क्योंकि सांक्रामक जितने भी रोग होते हैं सब क्रिमिजन्य ही होते हैं संक्रामक रोगों का क्रिमिजन्यत्व सिद्ध चरक के कुष्ठ प्रकरण में किया है क्योंकि कुष्ट भी एक संक्रामक रोग है लिखा है (कुष्ठानि त्रिदोषाणि सांक्रमीणिचोत्पद्यंते) अतः डिफ्थीरिया के अन्दर विषैले क्रिमी गले में जाकर विकार पैदा कर देते हैं, गले में क्योंकि घाव हो जाता है अतः बच्चों को दूध पीने में खांसने छींकने में रोने में भयंकर दर्द मालूम होता है रोगी बच्चे के खांसने छींकने थूकने झूंठा दूध पीने, पास में सोने आदि कारणों से ही अन्य बच्चों को भी यह रोग पैदा हो जाता है, अतः डिफ्थीरिया के रोगी बच्चे को एकांत स्थान में रखना चाहिये और इसके झूंठे बरतनों को अग्नि दिखा कर मांज धोकर गरम जल से काम में लाना चाहिये और छोटे बच्चों को उस बच्चे से दूर रखना चाहिये। क्योंकि इस रोग के कीटाणु रोगी बच्चे के खांसने आदि से फौरन ही दूसरे बच्चे में प्रवेश कर के डिफ्थीरिया पैदा कर देते हैं।

चिकित्सा

हमारे आयुर्वेद शास्त्र में यद्यपि इसका कोई नाम निर्देश नहीं किया तथापि समय की गति के अनुसार वैद्य मात्र को इसकी चिकित्सा तथा लक्षण समझने चाहियें। इसका अन्तर्भाव कण्ठ-गत रोगों में करके दोषानुसार चिकित्सा करनी चाहिये। लिखा है कि—विकार नामा कुशलो न जिह्वीयात् कदाचन: नहिसर्वविकाराणां नामतो-स्ति ध्रुवास्थितिः॥ अतः इसकी चिकित्सा वात कफ को प्रधान और पित्त को गौण मानते हुवे करनी चाहिये। आयुर्वेदमतानुसार इसको स्वतंत्र व्याधि के रूप में नहीं माना जा सकता इसमें कंठ की रोद्यता से और दोषों की आधिक्यता से गले में पैदा हुवे जख्म की व्रणवत् चिकित्सा करनी चाहिये। छोटी इलायची के बीज, शीतल चीनी, कमीला इनको मक्खन में मिला कर लगाना अत्युत्तम है, अथवा मैथिलेटेडस्प्रिट में कापूर मिला कर लगाना चाहिये। अगर बच्चा कुल्ले करने लायक हो तो कचनार की छाल दो तोला को आधा सेर पानी में पका कर गरारे करने चाहियें, ज्वर के लिये अतिविषादि चूर्ण, कपर्द

भस्म शंख भस्म तीनों को मिला कर मधु के साथ चटाना चाहिये। ध्यान रहे की ज्वर एक साथ कम न हो जाय, ज्वर का अतिशीघ्र कम हो जाना खतरनाक होता है आम दोषों को पचाते हुवे ज्वर को धीरे २ कम करें छोटों को ६ मासे से १ तोला तक और बड़ों को २ तोला तक द्राक्षासव पिलाना चाहिये। और ऐसी औषधी भी साथ में देते रहना चाहिये कि जिस से एक दस्त रोजाना साफ आजाया करे, छोटे बच्चों को दस्त न होने पर ग्लेसरीन की बत्ती से दस्त कराना चाहिये और बाहर से गलसुओं को रुई आदि से सुहाता २ सेको और फलों का रस पीने को दे व्याधि की अवस्थानुसार चतुर वैद्य अन्य उपयुक्त औषधियां भी देवे और सफाई पर विशेष ध्यान देता रहे ताकि मकान में रोगोत्पादक कीटाणु न बढ़े।

डिप्थीरिया में टीका

Anti Toxine एन्टी टोक्सीन, यह डाक्टरी में एक ही औषधि इस रोग के लिये विशेषता से मानी गई है जिसका कि इस रोग को अच्छा करने में डाक्टरी में दूसरी औषध कोई मुकाबला नहीं कर सकती इसका टीका लगाया जाता है Hypo dermicNeedleहाई पो डर्मिकनीडील, यह एक सुई है इसके द्वारा यह औषध मांस तक पहुंचाई जाती है। इस टीका लगाने की सुई को थोड़ी देर गरम पानी में उबालो और उस शीशी को जिसमें की एन्टी टोक्सीन है थोड़ी देर Alcohol, शराब में रक्खो बाद को शीशी का मुंह खोल कर औषध सुई में खींचलो और कंधे से कुछ नीचे के भाग को पानी से खूब साफ करके सुखाकर वहां पर Tincture Icodine टिंचर आयोडीन लगा दो और तब त्वचा को ऊपर को अंगुलियों में पकड़ो और टीके की सुई को त्वचा की सीध पर रक्खो और इस तरीके से चुभाओ कि सुई मास तक ही जाने पावे रोगी की अवस्थानुसार ३,००० से ५,००० यूनिट तक औषध डालो। ऐसे एक या दो टीका लगाने से रोगी को आराम हो जाता है यह भयंकर रोग बच्चों में ही नहीं अपितु बड़ों में भी हो जाता है अतः इस रोग के फैलने के समय हरेक मनुष्य को आवश्यक है कि वह नमक मिश्रित जल से कुल्ला करता रहे और नमक के पानी की फुरैरी छोटे बच्चों के गले में लगाता रहे ऐसा करने से श्लैष्मिक माद्दा अन्दर इकट्ठा नहीं होता और पेट की सफाई पर विशेष ध्यान रखता रहे और दूध पिलाने वाली माताओं को भी चाहिये कि अत्यन्त परहेज से रहें क्योंकि बच्चों का स्वास्थ्य माताओं के ऊपर ही निर्भर है और हो सके तो रोग के होने से पहिले ही (Anti toxine) एन्टी टोक्सीन का टीका हरेक बच्चे बड़े को लगवालेना चाहिये जल, वायु, देश और काल इन के ऊपर विशेष ध्यान रखना चाहिये क्योंकि इनके अशुद्ध होजाने से सांक्रामक रोगों की उत्पत्ति होती है रोगी के लिये जहां तक हो सके फिलटर किया हुआ पानी काम में लाना चाहिये। और जिस कमरे में रोगी हो उसको पानी में फिनायल डाल कर धोना चाहिये या क्रिमीनाशक जो द्रव्य हैं जैसे की बच, गूगल, सरसों, नीम के पत्ते आदि इनकी कमरे में धूनी देनी चाहिए कमरा

या मृत्युञ्जय १ रत्तीमें व्योषादिचूर्ण या चातुर्भद्रचूर्ण ३ रत्ती मिलाकर मधु से देना चाहिये। यदि गले में दर्द और शोथ हो तो थोड़ा यूकलिप्टिस का तेल डाल कर वाष्प लेनी चाहिये। या तारपीन युक्त तेल गरम जल में भीगे हुवे वस्त्र से सेक करना चाहिये। और त्रिकुटा चूर्ण (मोटा) को पोटली में बांध कर सूंघना चाहिये, या यूकलिपटिस तेल को रूमाल में डाल कर सूंघना चाहिये। कफ को निकालने के लिये चूसने के योग्य छोटी इलायची बीहदाना, निशास्ता, मुलेठी, खसखस के बीज, कतीरा गोंद एक २ भाग मिश्री ३ भाग की बनी हुई गोलियों में थोड़ा सा पीपरमेंट मिला कर चूसने को देना चाहिये। इस से कण्ठदाह और कास में आराम आता है। यदि श्वास नलियों में जलन अधिक हो तो (जिस से बार २ आक्षेप युक्त कास वेग उठते हैं) दशमूल कषाय के साथ चातुर्भद्र देना चाहिये। अथवा वाइनम इपिकाक, अहिफेनासव, और यवक्षार मिला कर देना चाहियें। यदि वेग और आक्षेप, कास देर तक रहते हों और विराम काल अल्प तथा शुष्क कास हो तो रोगी की रक्षा के लिये "अमोनियम ब्रोमाइड" अल्प मात्रा में देना चाहिये। यदि वमन द्वारा खाया पीया हुआ सब निकल जाय तो पिचकारी में पोषक द्रव्य अंदर पहुंचाना चाहियें।

आरोग्योन्मुखावस्था में भार्ग्यवलेह तथा च्यवनप्राश देने से लाभ होता है। इस रोग में कभी २ काले बांसे का क्षार दशमूल कषाय में बहुत लाभ करता है। भोजन मृदु और सुपाच्य होना चाहिये। गुरु और अधिक भोजन से कष्ट बढ़ जाता है। साथ ही मलावरोध की तरफ भी ध्यान देना चाहिये।

रोमान्तिका और मसूरिका

(लेखक—श्री० कविराज पं० धर्मेन्द्रनाथ जी शास्त्री आयुर्वेदाचार्य धन्वन्तरि)

अभी तक भी ठीक २ यह पता नहीं चला है कि खसरा सबसे पहले किस देश में और किस समय आरम्भ हुआ। अगर इसके इतिहास को उठाकर देखें तो मामूली ज्ञान यह होता है कि अभी तक प्रामाणिक खोज इसके सम्बन्ध में नहीं हुई है, अमेरिका के डा० हण्टरमन और डा० विल्सन ने लिखा है कि सर्व प्रथम यह रोग अमेरिका के देहातों में फैला था उस समय इस रोग को निवारण करने के लिए अनेक साधन काम में लाये गये थे उपरोक्त डाक्टर इसका इतिहास इस प्रकार वर्णन करते हैं कि सन१५२६ में यह रोग अमेरिका के देहातों में फैला था उस समय इस रोग की उत्पत्ति और चिकित्सा पर वहां के अनेक प्रसिद्ध डाक्टरों की राय थी कि यह रोग उन लोगों को नहीं होता जो गाय से दूध निकालते हैं, बस इसी आधार पर आज भी वैक्सीन का प्रयोग किया जाता है यह वैक्सीन गाय के थनों के समीप से प्राप्त होती है और आजकल भारतवर्ष में भी इसी का टीका लगाया जाता है, जो इतिहास पाठकों के सामने रक्खा गया है हो सकता है कि एलोपैथिक चिकित्सा के विद्वानों को इस रोग की उत्पत्ति और चिकित्सा का ज्ञान १७९६ में हुआ हो किन्तु आयुर्वेद में यह रोग अत्यन्त प्राचीन ग्रन्थों में पाया जाता है। इस से पता चलता है कि यह रोग नवीन नहीं किन्तु अत्यन्त प्राचीन है इसमें सन्देह नहीं कि इस रोग में टीका लगाना लाभप्रद सिद्ध हुआ है किन्तु टीका ही इसकी कोई अद्भुत चिकित्सा नहीं है, लाखों टीके लगे हुए रोगी पुनः इस रोग से ग्रसित होते हैं और उनका जीवन मौत की घड़ियां को गिनता है

रोग पैदा होने का समय

यह रोग आमतौर पर छोटे बच्चों के पैदा होता है इसकी उत्पत्ति १ साल के या इससे कम उम्र के बच्चों से लेकर १४–१५ साल तक के बच्चों को अधिक होती है यह रोग स्त्रियों की अपेक्षा पुरुषों के अधिक होता है साधारणतः भारतवर्ष में रोमान्तिका को छोटी माता और मसूरिका को बड़ी माता कहा जाता है

रोमान्तिका का उत्पत्ति काल

छोटी माता निकलने से पहले सारे शरीर में दर्द होता है तथा ज्वर का वेग होता है अकसर ३—४ दिन तक एक सा ज्वर होने के बाद शरीर पर दाने दिखाई पड़ने लग जाते हैं यह दाने अधिकतर लालरंग के होते हैं रोमान्तिका या छोटी माता में कोष्ठावरोध या उदरामय, अरुचि कास और कष्ट से श्वास क्रिया का होना अधिक पाया जाता है रोमान्तिका या छोटी माता में दानों के भली प्रकार बाहर निकलने पर यह रोग कष्ट-साध्य हो जाता है

मसूरिका या बड़ी माता

यह रोग संयोग विरुद्ध भोजन और दूषित जल और वायु से पैदा होता है, मसूरिका या बड़ी माता की पड़िका या फुड़ियां मसूरिका की दाल की शक्ल की होती हैं, इसीलिए इनको मसूरिका कहा जाता है, इस रोग के पैदा होने से पहले सारे रीर में खुजली और दर्द तथा चित्त की स्थिरता भूम ख्याल का फटना, शरीर का रक्तलाल तथा आंखें लाल होना होता है तथा ज्वर का वेग होता है।

रसधातुगत मसूरिका---जलबिम्ब की तरह अर्थात् छोटे फफोले की तरह होती है और फूट-जाने से पानी निकलता है यह सुखसाध्य है इस को आमतौर से लोग दुलारी माता कहते हैं।

रक्तगत मसूरिका—लाल और पतले चर्मयुक्त होती है यह जल्दी पकजाती है और फूटने पर रक्तस्राव होता है रक्त अधिक दूषित न होने से यह भी सुखसाध्य है।

मांसगत मसूरिका– यह कठिन स्निग्ध और मोटे चर्म विशिष्ट होती है इससे शरीर में शूल-वत वेदना, तृष्णा, कण्डू, ज्वर और चित्त में चंचलता होती है

मेदोगत मसूरिका—यह मण्डलाकार, कोमल किंचित् अधिक ऊंची स्थूल वेदनायुक्त होती है इसमें अत्यधिक ज्वर मनोविभ्रम चित्त में चंचलता और सन्ताप आदि उपद्रव होते हैं।

अस्थि और मज्जागत मसूरिका—क्षुद्राकृति, गात्रवर्णयुक्त रूक्ष, चिवड़े की तरह यानि कुटे हुए चौड़े चावल की तरह चिपटी और कुछ ऊंची होती है इसमें अत्यधिक मोह, वेदना, चित्त की अस्थिरता, और मर्म स्थान के फटने की तरह पीड़ा तथा सर्वाङ्ग में भ्रमर के काटने कीसी तक-लीफ होती है।

शुक्रगत मसूरिका—यह चिकनी सूक्ष्म अत्यंत वेदनायुक्त और देखने में पक्के आम की तरह पक्की नहीं होती इसमें गीले कपड़े से शरीर पौंछा गया मालूम पड़ता है और इसमें चित्त की अस्थिरता, मूर्छा, दाह और उन्मत्तता अधिक मालूम पड़ती है।

साध्यासाध्य—

ऊपर लिखी मसूरिका में त्रिदोषज, चर्मदल-गत, मांस, मेद, अस्थि, मज्जा और शुक्रगत मसूरिका असाध्य तथा जो मसूरिका, मूंगे की तरह लाल रक्त कोई जामुन का तरह कोई तमाल फल या भिलिया फल की तरह होती है वह असाध्य जाननी चाहिये। जिस मसू-रिका रोग में, खांसी, हिचकी, चित्त की विभ्रमता तथा अस्थिरता अत्यधिक कष्टप्रद, तीव्र ज्वर, प्रलाप, मूर्च्छा, तृष्णा, दाह गात्र घूर्णन, अतिनिद्रा मुख, और आंख से रक्तस्राव और कंठ से घुर-घुर शब्द और अतिवेदना सहित श्वास आता हो तो उसे असाध्य जानना चाहिये। अगर मसूरिका रोगी को ज्यादा प्यास लगे और हाथ पैर आदि पटकने लगे या उछलने आदि लगें या मुख को छोड़ केवल नासिका से ही लम्बे २ श्वास लेने लगें तो उसकी मृत्यु निश्चय जानना चाहिए।

(रोमान्तिका और मसूरिका की चिकित्सा)

इन दोनों रोगों में अधिक रूक्ष किया या अधिक शीतल किया करना उचित नहीं है अधिक

आरम्भ सहसा होता है। रोगी का स्वास्थ्य साधारण दशा में होता है। रोग के दौरे एक बार आरम्भ होकर उम्र भर तक चल सकते हैं। इन रोगों को एक दूसरे से पहचानने के लिये विशेष लक्षण नीचे तालिका में लिखे गये हैं।

मृगी	हिस्टीरिया
दौरे से पूर्व—प्राय: रोगी किसी न किसी प्रकार का aura (औरा) अनुभव करता है।	**दौरे से पूर्व**—रोगी के गले में गोलाना, अथवा सांस का घुटना अथवा हृदय अवसाद या विचारों की असम्यकता अनुभव करता है।
आरम्भ—सहसा कभी कभी विशेष प्रकार का शोर करता है।	**आरम्भ**—कभी सहसा कभी धीरे २ रोगी प्राय: चिल्लाता है।
कनवलशन्स—कम्पन नियमित रूप से गहरी होती जाती है। पहिले छोटी छोटी फिर तीव्र और जोरदार जो बिलकुल स्वतंत्र तथा बगैर अर्थ (Non Purposive) के होती हैं। मुख नीला हो जाता है। जिव्हा कट सकती है। मल मूत्र का अचेतावस्था में उत्सर्ग हो सकता है। अचेतावस्था में रोगी गिरने से चोट खा सकता है।	**कनवलशन्स**—दौरे की गहराई अनियमित होती है, रोगी चिल्लाता है अङ्गों में सख्ती जरा देर तक रहती है और वह लौट लौट कर हो सकती है। तीव्र कम्पन प्राय: Pusdosive (अर्थ सहित अर्थात् रोगी ठीक होने की कोशिश में जिन अङ्गों से चेष्टा करता है उन्हीं का विशेष संकोच होता है) होते हैं। जिव्हा प्राय: नहीं कटती। मल मूत्र का उत्सर्ग नहीं होता। मुख भी नीला नहीं पड़ता और शायद ही कभी रोगी गिर कर चोट खाता हो।
चैतन्यता—हमेशा नष्ट हो जाता है।	**चैतन्यता**—सर्वथा नष्ट नहीं होता।
आंखो के लक्षण—पुतली फैली हुई और उस पर प्रकाश का कोई प्रभाव नहीं होता। कंजकटाइवा संज्ञा शून्य हो जाता है।	**आंखो के लक्षण**—पुतली पर प्रकाश का प्रभाव बना रहता है और कंजकटाइवा संज्ञा शून्य नहीं होता।
दौरे का अन्तर—दौरा कुछ मिनटों से अधिक देर तक नहीं रहता।	**दौरे का अन्तर**—प्राय: ५ मिनट से अधिक होता है और कभी कभी एक एक घंटा रह कर फिर लौट सकता है।
दौरे का अन्त—रोगी दौरे के उपरान्त पागल सा रहता है और नींद महसूस करता है।	**दौरे का अन्त**—दौरे का अन्त होने पर रोगी रोता है, हंसता है या चिल्लाता है कभी कभी बिल्कुल बेसुध पड़ा रहता है।

रक्त विष—बच्चों में कनवलशन्स के कारणों में इनका मुख्य स्थान है। प्रायः सभी तीव्र ज्वर जिनमें कोई विशेष दूषण (Ingection) पाई जाती है जैसे (Typhoid) टाइफाइड, मसूरिका, रोमान्तिका, प्लेग नमोनिया, आदि की तीव्र दशाओं में कनवलशन्स आरम्भ हो जाते हैं। रिकेटस के रोगियों को भी प्रायः कनवलशन्स के दौरे पड़ा करते हैं। उनका कारण शायद आंत्रिक-विष होता है। बहुत से रोगियों में जिनके मूत्र में दूषण (Bacilluria) होती है। कम्पन के दौरे देखे जाते हैं और इसके कारण को प्रायः हम भूल जाया करते हैं।

Reflex Causes

बहुतसे आन्तरिक विष—जैसे आंत्रिक विष (Intestinal toxines), कोष्ठाबद्धता, पाचनके विकार, अन्त्र के कृमि, दांतों का निकलना आदि मस्तिष्क को उत्तेजित करते रहते हैं जिससे प्रायः कनवलशन्स होजाया करते हैं।

मस्तिष्क की अस्वस्थता—मस्तिष्क के बहुत से रोग जिनमें मस्तिष्क के ऊपर अस्वाभाविक अधिक दबाव पड़ता है उनमें कनवलशन्स उत्पन्न हो जाते हैं। इनमें निम्न रोग विशेष उल्लेखनीय हैं (१) मस्तिष्क के अर्बुद, मस्तिष्कावरण शोथ, Hydrocephalus (मस्तिष्क में तरल वृद्धि) प्रसव के समय शिर पर अधिक भार पड़ जाना इत्यादि। यदि रोगी का सिर तना हुआ या आंखों में भेंगापन (Squint) हो तथा अन्य लक्षण ज्वर इत्यादि के हों तो उस दशा में मस्तिष्कावरण शोथ (Meningitis) का ध्यान हो जाना चाहिये।

मस्तिष्क में बाह्य तथा आन्तरिक कारणों से रक्त स्राव हो जाने से भी कनवलशन्स उत्पन्न हो जाती है और वह कनवलशन्स बहुधा पक्षाघात में अन्त हुआ करती है। कभी कभी cartex (कारटैक्स) में थोड़ा सा रक्तस्राव होने पर कोई विशेष पक्षाघात के लक्षण उत्पन्न नहीं होते परन्तु कुछ समय के उपरान्त मृगी के सदृश दौरे पड़ने आरम्भ होते हैं और वह दौरे जीवन भर पड़ते रहते है। बहुधा रोग के निदान विनिश्चय में धोखा लग जाया करता है। ऐसी दशा में इस बात का निश्चय माता आदि से पूछकर करना चाहिए कि दौरे से पूर्व या उसके साथ में कोई पक्षाघात इत्यादि के लक्षण हुए थे या नहीं? यह देखा गया है कि प्रायः आधे रोगियों में दौरे उसी दिन से आरम्भ हुवे होते हैं जिस दिन रक्तस्राव हुआ हो और अन्यों में कुछ समय उपरात आरम्भ हुए होते है।

मस्तिष्क में रक्तस्राव

श्वासावरोध—ऐसे रोगों में जिनमें श्वास प्रणाली या कण्ठ प्रमित होता है और श्वासावरोध होता है प्रायः कनवलशन्स उत्पन्न हो जाते हैं यह बड़ी तीव्र गतिके होते है। बच्चेको बड़ा कष्ट होता है और अचेतावस्था मे पड़ा हुआ छटपटाता है। यह दौरे प्रायः बुरे परिणाम के सूचक होते हैं और यदि तत्काल ठीक निदान और उचित चिकित्सा न की जाय तो मिनटों में बालक से हाथ धोना पड़ता है। इन रोगों में Laryingismus stridulus स्वर यंत्र शोथ (Laryingitis) तथा डिफ्थीरिया विशेष उल्लेखनीय है।

इन सब के निदान का सहल उपाय यह है कि

बच्चे की आवाज़ और श्वास को पहचानना चाहिए। यदि बच्चे के रोने के अथवा बोलने के स्वर में कुछ परिवर्तन हो और श्वास में घड़-घड़ाहट हो और कष्ट प्रतीत हो तो गले के रोगों का सन्देह उत्पन्न होजाना चाहिये और तत्काल ही उसके उपचार का प्रबन्ध किया जाना चाहिये।

परिणाम (Prognosis) बच्चों की कनवलशन्स का अन्त युवकों की अपेक्षा अच्छा होता है। परन्तु तीव्र ज्वरों तथा श्वासावरोध के रोगियों में बहुत से रोगियों का अन्त निराशा में होता है।

चिकित्सा कनवलशन्स के रोगियों में सब से पहिले चिकित्सा उनके पाचन तथा अंत्र संस्थान की करनी चाहिये। क्योंकि उनका पाचन संस्थान बड़ी शीघ्रता से बिगड़ जाता है और उसके ही फलस्वरूप यह तमाम लक्षण हो सकते हैं। इसलिये बच्चे को पहिले प्रचुर मात्रा में अरंड का तेल तथा चूने का पानी मिलाकर दें और फिर थोड़ा थोड़ा हर चौथे घंटे बाद अन्य चिकित्सा के साथ भी देते रहें। ग्रे पाउडर, मैगनिशिया या सोडा भी प्रयोग किये जा सकते हैं। प्रायः ६० प्रतिशत रोगी इस चिकित्सा से ठीक हो जाते हैं परन्तु अन्यों में भलि प्रकार पूछ ताछ करने के बाद रोग निश्चय करना चाहिये।

कनवलशन्स को शान्त करने के लिए ब्रोमाइड (Bromides) विशेष कर एमोनियम, ब्रोमाइड का १ से १० ग्रेन में प्रयोग करना चाहिये इसके साथ ½ से दो ग्रेन तक क्लोरल हाइड्रे भी दे सकते हैं तेज दशाओं में गर्म जल का स्नान भी लाभदायक सिद्ध हुआ है क्लोरोफार्म का सुंघाना या इन्जैकशन भी बड़ी शीघ्रता से अन्त कर देता है, और बहुत थोड़ी मात्रा ही काफ़ी होती है। श्वासावरोध वाले रोगियों में जिनमें श्वास की अधिक कठिनता हो tracheatomy (श्वासप्रणाली में चीरा देकर उसमें श्वास के लिए एक नली लगा देना) की आवश्यकता पड़ती है।

दौरे के उपरान्त उपचार—जिन रोगियों को बार बार दौरे पड़ते हैं उनकी चिकित्सा दौरे के अन्य दिनों में करनी आवश्यक है। बच्चे के साधारण स्वास्थ्य का सदा ध्यान रखना चाहिये। कब्ज तथा अन्य पाचन के विकार न होने दो। पेट में यदि कृमी हों तो उनको नष्ट करने की चेष्टा करनी चाहिये। भोजन पौष्टिक तथा शीघ्र पचने वाला हो वसा का प्रचुर मात्रा में होना आवश्यक है। फल, दूध, जौ का दलिया मक्खन, टिमाटर, पालक-रोटी अच्छे भोजन हैं। मस्तिष्क तथा शरीर को पुष्ट करने वाले योगों का प्रयोग करना चाहिये। स्वर्ण भस्म, ब्राह्मीघृत, शंखाहूली और अश्वगंधा के योग बड़े लाभदायक हैं। निम्न योग मेरे प्रयोग में बड़े लाभदायक सिद्ध हुवे हैं।

(१) जायफल-जाविश्री-लवंग तथा केशर यह सब बराबर मात्रा में घोटकर १, १ रत्ती की गोलियां बनावें दिन में ४ बार एक एक गोली दें। ४० दिन तक प्रयोग करने पर प्रायः मृगी आदि भी नष्ट हो जाते हैं। बच्चा पुष्ट होता है और शरद काल की हरेक बीमारी नष्ट होती है।

बालशोष

लेखक श्री पं० रामगोपालजी मिश्र गदिया सी. पी.)

सुखौटी रोग—बालशोष—

रजस्वला माता का दूध पीने से अथवा माता के दूषित दुग्ध के कारण से, दूसरी रजस्वला स्त्रियों के द्वारा गोदी में खिलाये जाने से अजीर्ण या अपच से रस दुष्टि होकर यह रोग होता है।



इस बच्चे को अस्थिशान है।

इसमें मंद ज्वर बालक को देह में ... ना रहता है जिससे रक्त उष्ण होकर सूखता जाता है। रक्त की ओर इसका आगमन शुद्ध रूप वाला नहीं होता, बालक के चर्म पर सलवटें पड़ने लगती हैं। चूतड़ सूख जाता है, उसका चमड़ा झूल उठता है। कान में चिमटी देने से बच्चा रोता नहीं। मक्खी मारकर निगलाने से वमन आता नहीं, यह बाल शोष रोग की पहिचान है। कफ, श्वास, खांसी ज्वर से बालक आक्रान्त रहता है, दस्त में कब्ज रहता है, पसलियों और छाती पर चर्म चिपक जाता है।

उपचार—लज्जालु की जड़ो काले धागे में बांध इतवार को धूप देकर गले में बांधे। घुघु की आवाज पर काले धागे में ७-८ गांठ बांध गले में बांधे। मरघट का पैसा गले में बांधे। अर्कमूल के १०-१४ टुकड़ों को काले धागे में पिरोकर इतवार को धूप दे गले में बांधे। त्रिफला क्वाथ ३-६ मासे प्रमाण में मधुयुक्त करके दिन में ३ बार देवें। कुत्ती का दूध मां के दूध में मिलाकर पिलावें। त्रिफला क्वाथ और गोमूत्रयुक्त करके देवे। चिरायता, देवदारु, गिलोय, पित्त पापड़ा, छोटी हरड़, मुनक्का, लाल चन्दन, इनका क्वाथ मधुयुक्त करके देवे। कुमार्यासव या उशीरासव अथवा चन्दनासव या द्राक्षासव बूंदों के प्रमाण में मात्रा का निश्चय करके देवे प्रथम कथित घुट्टियों को भी पाचन सुधारने के लिए देता रहे।

इस निबंध में संक्षिप्त बाल रोगों को चिकित्सा सहित दिया है। लेख बढ़ने के भय से क्षमा चाहते हैं। बाल रोग बहुत प्रकार के हैं जिनमें फिर भी मुख्य रोगों का वर्णन निबंध में प्रायः बहुत कुछ लिखा गया है।

बालशोष पर अनुभूत प्रयोग

(ले० प० बालकराम जी शुक्ल
आयुर्वेदाचार्य (ऋषिकेश)

विषपलाण्डु (कलकंदरा) का स्वरस निकालें। फिर उसमें स्वरस का चतुर्थांश तिल का तैल डाल कर तैल पाक विधि से तैल तैयार करें। रंग के लिये रतन ज्योत पकते समय डाल देवे। इससे रक्त वर्ण का तैल तैयार होगा। इस तैल को प्रातःकाल प्रति दिन बच्चे के सब शरीर में मालिश करें। और अधो लिखित तुत्थादिवटी खाने के लिये देवें।

तुत्थादिवटी

तूतिया को अग्नि पर लोहे के पात्र में रख कर २१ बार दधि का तोड़ उस पर छोड़ें। इस भांति तूतिया शुद्ध हो जाता है, फिर तूतिया से दूना कत्था मिलावे। फिर जल से घोट कर मूंग के बराबर गोली बनावें।

मात्रा १ गोली, अनुपान—मधु, समय प्रातः सांयम, इस प्रयोग से ६० प्रतिशत बालशोष से बच्चे अच्छे हो जाते हैं। वैद्यबन्धु अनुभव करें।

अतिबला (कंघी) का विचित्र प्रभाव

अतिबला (कंघी) का ढाई पत्तियां लेकर लगे हुवे बंगला पान पर रख कर वैद्य उस पान को चबावे। फिर उस चबे हुवे पान की पीक को लेकर बालक के पृष्ट वंश पर गुदा के चार अंगुल ऊपर तक मालिश करे। २५ मिनट तक लगातार मेरुदण्ड पर मालिश करता रहे। फिर शुद्ध वस्त्र से पोंछ देवे। फिर पृष्ठ पर श्वेत कीड़े निकलते हुवे दिखाई पड़ेंगे उन्हे चिमटी से पकड़ कर खींच लेवे। इस भांति कीड़ों को निकाल कर फेंक देवे। यह योग रविवार के दिन किया जाता है। इसी भांति दूसरे रविवार को भी यही प्रयोग करे और गरीब ब्राह्मणों को भोजन दक्षिणा आदि देवे। इस से अवश्यमेव लाभ होता है। कोई वैद्य अपामार्ग का ७ पत्तियां लेकर बंगला पान पर रख कर उपरोक्त विधि का अनुकरण करते हैं। इस से भी लाभ होता है।

उत्फुल्लिका (पेरीटोनाइटिस)

उमारेचन ६ मासा, मुसब्बर १ तोला, कस्तूरी २ माशा, गोरोचन ६ मासा, पान के रस से घोट कर मूंग के बराबर गोली बनावे। मात्रा १ गोली, अनुपान, उष्ण जल से घिस कर तीन २ घंटे के बाद प्रयोग करें। इस से दस्त होने पर श्वास की ऊर्ध्वाग्नि शान्त हो जाती है। और शेर की चर्बी पसलियों पर, छाती पर मालिश कर रूई से सेक देते ही रोग शान्त हो जाता है।

अपस्मार

वात की दृष्टि से मस्तिष्क के ज्ञान तन्तुओं में प्रदाह होने से अथवा मृगीकीट के उत्पन्न होजाने से बालक और बड़ को मृगी रोग होता है, मुंहमें फेन आना, संज्ञानाश, सर्वाङ्गकंप, विस्फारित नेत्र, शून्यता, स्वेद आना, पांव हाथ घिसना इन लक्षणों वाला मृगी रोग होता है। उपचार—टंकण भूनकर दिन में तीन बार मां के दूध में देवें, १-१॥ रत्ती बच मधु या दूध में घिसकर देना। पेठे के रस या ब्राम्ही स्वरस में बच घिसकर देना। अखरोट की बीज निर्गुन्डी रसमें घिसकर अंजन करना! भिलावें की बीज दूध में घिसकर देवें। ब्राम्ही वटी, स्मृतिसागर आदि में से एक ब्राम्ही सिरप से देना।

बालशोष (तालु कटंक)

(लेखक—आयुर्वेद मनीषि, वैद्यराज पंडित देवकरणवाजपेयी, वैद्यशास्त्री, साहित्य रत्न ! उत्तरीपुरा कानपुर)

आजकल बालशोषरोग बहुत अधिक बढ़ रहाहै हमारेयहां इस रोगग्रस्त बालक के शिरमें गढ़े के स्थान पर विशेषतः रविवार या मंगलवार को लोहे की सलाई से दाग देते हैं। यह क्रिया केवल एकबार करने ही से रोगी रोगमुक्त होजाता है। इस उपाय से आज तक लाखों जानें बचाई जाचुकी हैं। मेरे ग्राम के निकटवर्ती एक स्थान में १ नाई के यहां कोई ५० वर्ष से यह क्रिया की जाती है। यहां पर इस रोग के रोगी सकड़ों कोस से आते हैं और लाभ उठाकर जाते हैं। यद्यपि यह क्रिया उत्तम है पर इसे सिद्धहस्त अभ्यासी ही कर सक्ता है।

आज हम इस रोग पर एक ऐसा अत्युत्तम और सरल योग सहस्रोंवार का अनुभूत प्रगट करते हैं जो शतप्रतिशत लाभकारी सिद्ध होगा

इस रोग के कारण—माता का अशुद्ध भोजन दिन में सोना, शोक, तथा चिंता करना, प्रति वर्ष गर्भ धारण का स्वभाव पड़जाना, प्रसूतावस्था में अधिक मैथुन करना, दूध का दूषित होना, बालक को अधिक मीठा खिलाना, माता के दूध में त्यी प्रकृति का होना इत्यादि। इन कारणों का माता के स्तन पर प्रभाव पड़ता है, एवं वह (माताका दूध) दूषित हो जाता है। यह दूषित दूध आंतों की क्रिया को बिगाड़ता है। जिससे आंतों में शोथ और बहुत छोटी २ ग्रन्थियां भी उत्पन्न हो जाती हैं, तथा बालक को दस्त आने लगते हैं। रस, रक्तादि शारीरिक धातु यथोचित नहीं बनने जिससे बालक क्षीण होजाता है।

लक्षण—यह रोग धीरे २ प्रकट होता है। बालक को दिनभर दस्त आया करते हैं। ज्वर सदैव बना रहता है, कभी २ उतर भी जाता है किंतु समग्र नहीं। हाथ पैरों के तलवे गरम, कान ठंडे रहते हैं। पेशाब कम होता है। मुख सूखता है। तालू दब जाता है। शिर में तालु के स्थान पर गढ़ा पड़ जाता है और वहां धीरे २ धकधका होता रहता है।

यकृत्—क्रिया के बिगाड़ से अग्निमांद्य, प्रतिश्यायादि होते हैं। शरीर सूखकर कांटासा हो जाता है। समस्त शरीर में झुरियां पड़जाती है। बालक इतना निर्बल हो जाता है कि वह अपनी ग्रीवा को नही संभाल सकता है। प्यास अधिक लगती है और वमन होती है। बच्चा मां का दूध

नहीं पीता, दिन रात रोया करता है और नाक घिसा करता है। धीरे धीरे सिर हिलाया करता है। यह दशा रोग के प्रबल होने पर होती है। अणुवीक्षण यंत्र से देखने से उसके रक्त में रोगजीवाणु दिखलाई देते हैं। यह रोग छूत वाला है। इसमें बालक के कानका निचला हिस्सा ज़ोर से भी दबाने पर वह रोता नहीं है।

विशेष सूचना—१–माता का दूध पिलाना बिल्कुल बन्द करदे। २–बाहरी (ऊपर) शुद्ध दुग्ध पीने को देवे। ३–मीठा खिलाने से रोग प्रबल होता है अतः मिठाई देना सर्वथा बन्द कर दे। ४–रोगी के वस्त्रों को साबुन से साफकर के धूप में भली भांति सुखाते रहना चाहिये, क्योंकि उनमें बहुत दुर्गन्ध आया करती है।

चिकित्सा

यद्यपि इस रोग का बहुत सी औषधियां हैं परन्तु हम आज अपने प्रिय पाठकों को एक अलभ्य योग भेंट करते हैं। इस के केवल सात दिन के सेवन से बिल्कुल सूखे हुये बालक को भी आश्चर्य जनक लाभ होता है।

सूखा रोगनाशक वटी— मूंगाभस्म, [illegible]भस्म, सोने की सीपभस्म, [illegible] भस्म, घोंघ (शुद्रशंख) की भस्म, [illegible] शुद्ध हल्दी [illegible] माशा, छोटी-पीपल [illegible] तुलसी पत्र ७॥ तोला, चिरचिटा (अपामार्ग) [illegible] ७॥ तोला, लेकर सब को एकत्र [illegible] में खूब अच्छी तरह से मर्दन कर, बाद [illegible] समान वटी बना छाया में शुष्क कर शीशी में भर कर रक्खें।

मात्रा—१ गोली या अवस्थानुसार न्यूनाधिक

समय-प्रातः सायं।

अनुपान—जाड़े के दिनों में शहद के साथ। बरसात में–शरबत अनार या मिश्री के जलाब में दें–(मिश्री के २० तोले जलाब में १ तोला भुना जीरा मिला लेना चाहिये)। गर्मी-के दिनों में शरबत कासनी के साथ दें।

गुण—बालकों का सूखा रोग, ज्वर, दूध-डालना, अनेक प्रकार के दस्तों का आना आदि सम्पूर्ण विकार २१ दिन में अवश्य नष्ट हो जाते हैं। यदि यह औषध ४० दिन सेवन कराई जाये तो बालक पहिले से दूना मोटा ताज़ा हो जाता है।

विशेष अनुभव—श्यामा गौ का १ बोतल मूत्र लेकर उस में से थोड़े से मूत्र में १ तोला असली काश्मीरी केशर घोट कर सम्पूर्ण बोतल में मिला दें और डाट लगाकर ३ दिन तक रख छोड़ें। फिर उसमें से ६ माशे तक लेकर [illegible] के साथ उपरोक्त वटी प्रातः दोपहर और शाम को खिलायें। इससे ३ दिन में ही बालक की हालत बदल जाती है, और १०-१२ दिन में बालक चंगा हो जाता। फिर हम इसी अनुपान से सुबह शाम ४० दिन तक दवा अवश्य देते हैं। मुझे आज तक इससे बढ़ कर कोई अन्य योग नहीं मिला और न किसी रोगी ने आराम न होने की शिकायत की। मैंने इस से असाध्यावस्था तक के रोगियों तक को अच्छा किया है। आप भी बरतें और फलाफल अवश्य प्रकाशित करें।

वैद्यराज पं० महावीरप्रसाद जी के लिये बी० स्टेशन प्रेस, चावड़ी बाजार देहली में छपा।

Enteric Fever or Typhoid Fever
मन्थरज्वर

(ले० अम्बिका प्रसाद मिश्र वैद्यभूषण एल० एच० आयुर्वेदिक कौलिज पीलीभीत ।)



वर्तमान समय में मन्थर ज्वर ([illegible]) का संसार के अन्दर अधिक प्रकोप हो रहा है, बड़े २ डाक्टर तथा वैद्य इस रोग की कठिन अवस्था में चिकित्सा करने में असमर्थता प्राप्त करते हैं, किन्तु कुछ समय से आयुर्वेद समाचार-पत्रों में इसकी चर्चा मिलती है । आज कल इसे 'मोतीझाला' के नाम से सुशोभित कर रक्खा है ? यह रोग प्रायः बच्चों के पाया जाता है । विशेषकर ५-६ वर्ष वाले बालक पर इसका आक्रमण होता है, २७-२८ वर्ष वाले मनुष्य भी इससे पीड़ित पाये जा चुके हैं, किन्तु कम संख्या में । इसको साधारण हिन्दी भाषा में 'मोती झाला' के नाम से पुकारते हैं ।



(डा० त्रि[illegible])

संस्कृत भाषा में इसको—मन्थर ज्वर के नाम से पुकारते हैं ।

अङ्गरेजी English में इसको Typhoid Fever or Enteric Fever के नाम से पुकारते हैं ।

यूनानी के इस रोगको, मुवारकी के नाम से पुकारते हैं । तथा झिल्लतीनाप भी कहते हैं । बहुत से चिकित्सक इसे आन्त्रिक ज्वर कहते हैं ।

इसका विशेषपरिचय—डाक्टरी मतानुसार:—

यह एक गाढ़ संक्रामक रोग होता है, जिसमें क्षुद्रान्त्र के लसीका ग्रन्थि समूह में शोथ और व्रण हो जाते हैं, ज्वर शनैः २ चढ़कर कुछ समय रहकर शनैः २ उतर जाता, इस बुखार में प्रायः तीन सप्ताह लग जाते हैं ।

कारण—इसका कारण एक विशेष प्रकार का दण्डाकार जीवाणु है, जिसे "वैसिलस टाई. फोसिस" कहते हैं यह जीवाणु रोगी के आन्त्रिक व्रण, मूत्राशय, पित्ताशय, प्लीहा, रक्त और

पिड़काओं में रहता है। ये रोगी के मल मूत्र तथा कभी २ स्वेद में भी उपस्थित होते हैं, रोग मुक्त होने के पश्चात् भी यह मल-मूत्र में आते रहते हैं। यह संक्रमवाहकों के मल-मूत्र में भी रहता है। इस दूषित मल-मूत्र से निम्नोक्त प्रकारों से आहार द्रव्यों तक पहुँचकर उनको दूषित करते हैं, और रोग प्रसार का कारण बनते हैं।

मल मूत्र से मक्खी, मच्छर आदि कीटाणुओं को पैरों के साथ लेकर आहार द्रव्यों पर जा बैठते हैं और उन्हें दूषित कर देते हैं।

२ रोगी या संक्रमक वाहक के दूषित वस्त्रों को ऐसी जगह न धोया जाय जहां का पानी पीने वाले पानी में मिल जाये।

३ गन्दी नालियों द्वारा मल नलकों या नदियों में चला जाता है और पीने के जल को दूषित करके रोग फैलने का कारण बनता है।

४ कभी २ यह वायु के सम्पर्क द्वारा शरीर में प्रविष्ट हो जाते हैं और यह रोग उत्पन्न कर देते हैं। इसी प्रकार अन्य कारणों से भी यह रोग उत्पन्न हो जाया करते हैं।

आन्त्रिक ज्वर प्रायः सारे भूमण्डल पर होता है परन्तु अधिकतर उष्ण प्रदेशों में और वहां पर भी ग्रीष्म वर्षा तथा शरद ऋतु में अधिक होता है।

सम्प्राप्ति—रोगाणु अन्त्र में जाकर लसीका ग्रन्थियों के समूह में शोथ उत्पन्न कर देते हैं। यह शोथ धीरे २ बढ़ने लगता है! दूसरे सप्ताह में व्रण बन जाते हैं और उनके ऊपर से श्लैष्मिक कला के टुकड़े झड़ने लगते हैं इसमें यकृत प्लीहा बढ़ जाते हैं।

लक्षण—यह रोग शनैः २ आरम्भ होता है प्रारम्भ में शिर में शूल होता है, अङ्गमर्द विड्बन्ध अरुचि ये लक्षण प्रतीत होते हैं किञ्चित ज्वर भी रहता है दिनों दिन लक्षण तीव्र होते जाते हैं और ज्वर बढ़ता जाता है और दो चार दिन में रोगी अशक्त हो कर शय्या की शरण लेता है।

आयुर्वेदिक मतानुसार

आयुर्वेद सिद्धान्तों के द्वारा यह ज्ञात हुवा है कि नवीन ज्वर में घृत खाने और पसीने के रोकने से ज्वर, दाह, अतीसार, वमन, निद्रानाश, तालु जिह्वा शोथ आदि लक्षणों के सहित गले में उतरते हुये सरसों के बराबर दाने मोती से देख पड़ते हैं, उन्हें मन्थर ज्वर कहते हैं।

आधुनिक मतानुसार मन्थर ज्वर को संतत ज्वर (म्यादी बुखार) कहते हैं यह रोग संक्रामक होता है अनुचित आहार विहार से तथा तरुण ज्वर में घी पान करने से यह रोग उत्पन्न हो जाया करता है। इसलिये कभी २ रोगी के सन्निकट बैठने से तथा रोगी के जूठे बर्तन में खाने पीने से या किसी विशेष सम्पर्क से यह रोग उत्पन्न हो जाया करता है। अतः बालकों को रोगी के पास से सर्वदा पृथक रखना चाहिये। बालकों को यह रोग फुस्फुस प्रदाह (निमोनिया) के बाद भी होते देखा गया है परन्तु विशेष ज्वरादि रोगों में ही यह मन्थर ज्वर पाया जाता है।

लक्षण—इसका आक्रमण बालकों पर एका-एक आ जाता है और एक हफ्ते तक रातदिन एकसा ज्वर चढ़ा रहता है। सिर्फ प्रातःकाल कुछ कम हो जाता है परन्तु फिर ज्यों का त्यों चढ़ जाता है धीरे २ ज्वर का वेग बढ़ने लगता

है प्रथमावस्था में ज्वर का तापमान १०२ डिग्री या इससे ऊपर रहता है। शरीर स्पर्श करने से उष्णता प्रतीत होती है, मस्तिष्क पर स्वेद, शिर में शूल विड्बन्ध होता है। कभी २ पतले दस्त कभी शीत और कभी उष्णता मालूम होती है साथ ही साथ मूर्छा व प्रलाप रहता है, श्वास लेने में कष्ट मालूम होता है तृष्णा अधिक रहती है। जिव्हा मैली रहती है पेट फूला रहता है रात में इसका अधिक प्रकोप रहता है। प्रथम सप्ताह ही में या दूसरे सप्ताह में सरसों बराबर मोती सदृश पिडका गले या छाती पर उत्पन्न हो जाती हैं नाड़ी की गति बलहीन तथा भारी चलने लगती है। नाभि के नीचे दबाते पीड़ा प्रतीत होती है और उस समय ज्वर का तापमान १०४ या १०५ डिग्री तक पहुंच जाता है और कभी २ प्रलाप और कम्पादि लक्षण भी होते हैं, ओठों और दांतों पर मल जमा हो जाता है, आंखें स्तब्ध व तेज-हीन हो जाती हैं। इसमें अति तीव्र ताप "टाकसीमिया" अतिसार, रक्तस्राव या उदरक कला शोथ से मृत्यु हो जाने का भय रहता है, कभी २ यह अवस्था एक सप्ताह से बढ़ कर २-४-६ सप्ताह तक भी चली जाती है इसमें मुख बिलकुल सुर्ख पड़ जाता है कभी कभी शरीर पर विशेषत: ग्रीवा और उदर पर श्वेत वर्ण की साबूदाने के समान छोटी २ पिड़िकायें निकल आती हैं जिनको कि बहुत से लोग आन्त्रिक ज्वर की पिड़कायें कहते हैं परन्तु वास्तव में यह स्वेद ग्रंथियों के मुख पर शोथ के कारण होती हैं जो ग्रीष्म ऋतु में अति स्वेद से प्रत्येक सन्तत ज्वर में हो सकती हैं। तृतीय सप्ताह में शनैः २ ज्वर कम होने लगता है चतुर्थ सप्ताह में ज्वर उतर जाता है परन्तु दुर्बलता रहती है जिससे पुनः होने का भय रहता है आन्त्रिक ज्वर काफी भयानक रोग होता है इस में १५-२० प्रतिशत रोगी मर जाते हैं। बच्चे इस रोग को बड़ों की अपेक्षा अच्छा सह सकते हैं और उनमें मृत्यु संख्या भी कम होती है परन्तु दूध पीते बच्चे इससे कम बचते हैं। अति स्थूल अति क्षीण तथा शराबी मनुष्य के लिये यह रोग बहुत भयानक होता है।

उपद्रव--१ अति तीव्र ताप, २ टाकसीमिया प्रलापादि, ३ आध्मान ४ रक्तस्राव ५ उदरक कला शोथ, ६ फुफ्फुस प्रदाह, ७ वृक्क शोथ-शय्या व्रण।

रोग मीमांसा—पूर्वोक्त लक्षणों से रोग का पहिचानना कठिन नहीं है क्योंकि जिह्वा का वर्ण इसे बिलकुल स्पष्ट करदेते हैं परन्तु जब ज्वर अकस्मात् या शीघ्र ही अपनी सीमा पर पहुंच जाता है तो इसे विषम-ज्वर तथा सन्तत ज्वरों से पृथक करना कठिन होता है। इसकी सीरम की "विडाल परीक्षा" और रक्त, मलमूत्र में से कीटाणु वृद्धि करके पहिचानकर की जाती है। तथा या जो क्रियासिद्धि भी बहुत कुछ रोग के ज्ञान में सहायता देती है।

उपचार—प्रथम सप्ताह से यदि ज्वर रोकने का प्रयत्न किया जाय तो दूसरे सप्ताह में समस्त लक्षणों की तीव्रता हो जाती है। अतिसार तथा प्रलाप संज्ञानाश आदि लक्षण होकर रोग असाध्य हो जाता है यदि कोई उचित कारण न मिला तो तीसरे सप्ताह में ज्वर हल्का हो

जाता है, मोतीझाला के दाने कंठ से हटकर छाती पेट जंघाओं तक आ जाते हैं। नाड़ी की गति कम हो जाती है जिह्वा साफ हो जाती है तथा दस्त कम हो जाते हैं रोगी का बल बढ़ने लगता है तथा भूख लगने लगती है।

चिकित्सा---आन्त्रिक ज्वर के रोगी के मलादि निराकरण का समुचित प्रबन्ध होनाचाहिये परिचारकको स्वच्छता की तरफ विशेष ध्यान देना चाहिए। इसके लिए प्रति शोधक वैक्सीन का इन्जेक्शन भी देना चाहिए इस रोग में भोजन की तरफ विशेष ध्यान देना चाहिये जबतक ज्वर छूट न जाय तबतक भोजन नहीं देना चाहिये। यदि देवे तो मृदु और तरल पदार्थ देना चाहिये कठिन पदार्थ नहीं देना चाहिए। परन्तु बच्चों को लंघन नहीं कराना चाहिए उनको गाय का दूध उबालकर देना चाहिए उसमें तुलसी के पत्ते भी डाल देना चाहिए। रोगी को पूर्ण विश्राम देना चाहिए उसे फिरने न देना चाहिए सदा लेटे रहने से रोगी को शीघ्र आराम होगा परन्तु बहुधा देखा गया है कि सदा लेटे रहने से शय्याव्रण हो जाने का भय रहता है। अत: उसे करवट बदलते रहना चाहिए। इसके अतिरिक्त शरीर पर रेक्टीफाइड स्पिरिट लगाकर जिंक ओक्साइड तथा डस्टिंग पाउडर मल देना चाहिए यदि कोष्ठबद्धता के लक्षण हों तो मृदु विरेचन देना चाहिए और यदि अतिसार हो तो "सिद्ध प्राणेश्वररस, कर्पूररस-शंख भस्म पाठादि क्वाथ या कर्पूरासवद्वारा उपचार कराना चाहिए। रोगी को प्रकाशयुक्त कमरे में रखना चाहिए रोगी के वस्त्र इत्यादि बिलकुल साफ होना चाहिए और कमरे में गूगल की धूप देनी चाहिए, कमरे में मनुष्यों की अधिक संख्या न होनी चाहिए, रोगी को पिलाने के लिए निम्न लिखित क्वाथ देना चाहिए।

मन्थ ज्वर पर अनुभूत योग

नागरमोथा, तुलसीपत्र, गिलोय, वासापत्र, कटेरी की जड़, सोंठ, लौंग, निगुण्डी, पोहकरमूल अजवायन इन समस्त औषधियों को बराबर लेकर इसमें चतुर्गुण जल डालकर चौथाई शेष रहने पर उतार छानकर मन्थरज्वर वाले को प्रातः तथा सायंकाल १ तो० या २ तो० पिला देना चाहिए इससे मन्थरज्वर अवश्य नष्ट हो जावेगा।

पथ्य--रोग मुक्त होजाने पर मूंग का यूष तथा परवल का यूष देना चाहिए तथा ज्वरमुक्त हो जाने पर भी एक सप्ताह तक ज्वर नाशक औषधि का प्रयोग करना चाहिए।

नोट--शिशुओं के दन्तोद्गम काल में विशेषतया दांत निकलने के समय एक प्रकार का विषम ज्वर होता है जिसे साधारणतया दांत निकलने का बुखार कहते हैं। इसमें उससे चिकित्सा की भिन्नता है। मियादी बुखार तो मियाद पर चला जाता है और दन्तज्वर दांत निकलने पर उतर जाता है। (सम्पादक)

शीतला (small pox) या चेचक

(लेखक—आयुर्वेद विशारद पं० प्रभुनारायण त्रिपाठी "सुशील" प्रज्ञावैद्य)

यह एक भयानक रोग है। इसे संस्कृत में शीतला आयुर्वेद में मसूरिका (मसूर की दाल के आकार में निकलने के कारण ही यह नामकरण समझ पड़ता है-मसूराकृति संस्थाना पिड़िका सा मसूरिका) तथा प्रचलित नाम "माता" है। बसंतऋतु में यह रोग अधिक उत्पन्न होता है, इस कारण बंगाली वैद्य इसे वसंत रोग भी कहते हैं। आयुर्वेद में यह रोग रक्तपित्त प्रधान या विस्फोटक आदि से मिलता जुलता ही उन्हीं का एक भेद माना गया है। डाक्टरी मत से इसे स्फोटज्वर कहा जाता है तथा साधारण भाषा में इसे पाकाशय की गरमी से उत्पन्न एक प्रकार का विषैला ज्वर कह सकते हैं। चेचक तो इसका तुर्की नाम है। आयुर्वेद में इसका भली भांति वर्णन आया है। इसके रोकने और इसके होने पर इससे आराम पाने के उपाय काफी लिखे गए हैं।

प्लेग और कौलरा (हैजा) के समान चेचक का रोग भी भयानक तथा एक से दूसरे को लग जाने वाला (contagious) कठिन संक्रामक है। जिस मनुष्य को यह रोग होता है उसके मुख, नाक तथा शरीर के चमड़े में कुछ इस प्रकार का जहरीला असर होता है जो पास में रहने वाले मनुष्य को तुरन्त लग जाता है। फुंसियों की रतूबत व खुरंड की छूत चेचक के रोगी का शरीर छूने से, उसका झूंठा पानी पीने से, झूंठा भोजन करने से, रोगी के मल-मूत्र-थूक-पसीना आदि को स्पर्श या उसके व्यवहार किये गए कपड़ों, बिछौनों, चारपाई या बर्तनों को अपने काम में लाने से स्वस्थ मनुष्यों को यह रोग हो जाता है। वायु द्वारा भी यह रोग एक दूसरे तक बहुत अधिक फैलता है और इस प्रकार से यह रोग तुरन्त विस्तृतक्षेत्र में फैल जाता है। इसका विष वायु के साथ मिलकर उसे दूषित कर देता है। और फिर यह दूषित वायु सांस के द्वारा शरीर में प्रवेश कर विकार उत्पन्न कर देती है। कभी कभी इसकी छूत का प्रभाव गर्भस्थ बालक तक पहुंच जाता है। रोगी के मर जाने पर भी उसके शरीर से विष निकलता रहता है जो आस-पास के लोगों को हानि पहुंचा सकता है। बच्चों में प्रायः यही होता है कि घर के एक बच्चे को चेचक निकली और यदि सावधानी न रक्खी गई तो घर के सब बालकों को चेचक निकलती है। कभी-कभी छुआ-छूत का विशेष ध्यान न रखने से मुहल्ले भर के बालकों को कष्ट उठाना पड़ता है। अस्तु, वे लोग जिन्हें यह रोग पहले कभी

नहीं हुआ, सदा सशंकित रहते हैं, कि न जाने यह बीमारी किसको किस समय लग जाय। वास्तव में यह है भी बड़ा भयानक रोग। एक बार प्रकट हो जाने पर यह चेचक का रोग अपनी अन्तिम दशा पर पहुंच कर ही समाप्त होता है। आरम्भ में इसकी रोक आसानी से की जा सकती है, पर यदि प्रारम्भ में लापरवाही की गई तो प्रति सप्ताह यह रोग १७० मनुष्यों पर आक्रमण कर उनमें से १८२ रोगियों को तो यमलोक अवश्य ही पहुंचा सकता है।

अन्य रोग ही उत्पन्न हो जाना, बच्चों और स्त्रियों में निमोनियां का हो जाना आदि अड़चनों के सिवा अक्सर मृत्युएं तक हो जाती हैं। शीतला से जिह्वाशोथ, गर्भाशय में शोथ, शरीर के अवयवों में शोथ, कोष्टबद्धता, वायु, खांसी पार्श्वशूल, नेत्ररोग, रक्त पित्त, फोला, अण्ड-कोष वृद्धि, गर्भ पात, उन्माद, हलकापन, आदि अन्य अनेक रोग भी हो जाते हैं। अगर रोगी किसी

चेचक (माता) का रोगी



(डा० त्रिलोकीनाथ वर्मा के सौजन्य से प्राप्त)

लोग जितने रोगों से नाना प्रकार के कष्ट पा रहे हैं, उन सब में यह महा कष्टदायक रोग है। इस रोग से लोगों में आंतकसा छा जाता है। रोगियों को अत्यन्त कष्ट और बेचैनी होने के सिवाय उनमें से बहुतेरे तो अङ्ग-भङ्ग हो अंधे बहरे तथा कुरूप हो जाते हैं, सूरत शकल खराब हो जाती है, फेफड़ों का खराब हो जाना और

तरह बच भी जाता है तो रोगी के शरीर पर चेचक के निशान रह जाते हैं। आंखों पर इसका बुरा प्रभाव होता है। कभी-कभी तो एक या दोनों आंखें खराब हो जाती हैं। अनेक लोग इस रोग के द्वारा अपनी आंखें खो बैठते हैं--काणे हो जाते हैं आंखों में फूली पड़ जाती है। अन्य बीमारियों में मनुष्य बीमार होकर जब अच्छा हो जाता है तो कोई चिन्ह शरीर पर नहीं रह जाता है पर इस रोग से बीमार होकर अच्छा होने पर इसके बदसूरत दाग तमाम शरीर पर सदा के लिए मृत्यु पर्यन्त, रह जाते हैं। चेचक रोग से अच्छा

होने पर मनुष्य कतई नहीं पहचाना जा सकता है। सब से बुरी बात तो इस रोग में यह है कि इसके शिकार भारत के भावीसर्वस्व—छोटे छोटे बालक ही होते हैं। निरपराध बच्चे ही इसके चंगुल में अधिक फंसते हैं।

चेचक का भयंकर रोग प्रायः प्रत्येक देशों प्रत्येक ऋतु, प्रत्येक अवस्था, प्रत्येक जाति में होता है। पर अनुभव से देखा गया है कि यह रोग जब दक्षिण दिशा की हवा अधिक चलती है, तब होता है। शहर में उष्णता और तरी अधिक हो तो भी यह बीमारी फूट निकलती है। इसका विशेष प्रभाव शीत देशों की अपेक्षा गर्म देशोंमें, जहां पर न अधिक गर्मी पड़ती है और न अधिक सर्दी वहां इसका असर कम पड़ता है, गोरों की अपेक्षा सांवले और काले रंग वाले मनुष्यों को, जवानों और वृद्धों की अपेक्षा बच्चों को, धनी लोगों की अपेक्षा गरीबों को तथा अन्य ऋतुओं की अपेक्षा शीत काल तथा बसंत ऋतु में अधिक होता है, बशर्ते कि गर्मी थोड़ी बहुत अवश्य रोज पड़े। ग्रीष्म ऋतु में ज्यादा गर्मी पड़े और वर्षा ऋतु में भी कुछ गर्मी शेष हो तो वर्षा ऋतु के बाद भी शीतला निकलती है। खुश्क मिजाज के मनुष्यों को यह बहुत ही कम निकलती है। गर्म प्रकृति के मनुष्यों को इस रोग के होने की अधिक संभावना रहती है। साल भर बाद के बालकों को यह रोग कम होता है। यह रोग जीवन में एक ही बार होता है। यदि संयोगवश दुबारा हो तो वह उतना भयानक नहीं होता। कभी कभी तीसरी बार भी यह रोग हो जाता है परन्तु करोड़ों में किसी एकाध को।

जब चेचक की बीमारी फैल रही हो तो निम्न लिखित उपाय करने चाहिये।

चेचक रोधक प्रयोग

१. नीम की कोमल पत्ती और मुलहठी दोनों को सम भाग में पीस कर दो रत्ती की गोलियां बना लें। दोनों समय दो दो गोलियां ठंडे पानी से खावें।

२. नीम के बीज, हल्दी, बहेड़ा की मींगी सम भाग ठंडे पानी में घोट कर दोनों समय पीने से शीतला नहीं निकलती।

३. नीम की पत्ती ग्यारह अदद और पांच काली मिर्च मिला कर आध पाव जल में पीस नित्य पीने से प्रायः रोग नहीं होता।

४. इमली के बीज को पानी में भिगो कर छिलका निकाल १ तोला बीज ४ तोला पानी में पीस ६ मासा शहद मिला नित्य पीने से रोग नहीं होता।

५. इमली का बीज १ नग, हल्दी १ मासा दोनों को शीतल जल के साथ दोनों समय पीने से रोग नहीं होता।

६. हल्दी को महीन पीस गुलाब के अर्क में घोट गोलियां बना ले, चेचक के मौसम में इनको सेवन कराने से बच्चे चेचक से सुरक्षित रहते हैं। यदि चेचक निकल आई हो तो भी दोनों समय १-१ गोली खिलाने से चेचक फौरन ढल जाती है। मात्रा आयु के विचार से कम ज्यादा कर सकते हैं।

७. घोड़ी के दूध में वस्त्र भिगोकर रखले आवश्यकतानुसार थोड़ा सा वस्त्र पानी में भिगो कर पिलावें तो चेचकसे बच्चा सुरक्षित रहता है।

८. चमेली के पत्तों का रस, केले का पानी, अडूसे के पत्तों का रस, मुलैठी और शहद इन को समान भाग में लेकर पीलें।

९. चमेली के पत्तों का रस निचोड़ कर उसी के बराबर शहद मिला कर पीवे।

१० चन्दन सफेद, मुलैठी, मुनक्का, कुटकी, गिलोय इनका काढ़ा बना कर पीवे।

११. जिस समय बालक उत्पन्न हो तो नाल के रुधिर को बालक के पेट के भीतर न आने दें बाहर की ओर सूतना चाहिये, नाल काटकर उसमें अनविधे मोती १२ संख्या में नाभि की ओर डाल कर ऊपर से बांधे। नाल निकल जाने पर १ मोती प्रतिदिन के हिसाब से १२ दिन तक खिलाये इस से सारी आयु शीतला रोग से बच्चा सुरक्षित रहता है। यदि नाल में न रख सकें तो भी २ सप्ताह तक अवश्य अनविधे मोती खिलाये।

१२. गर्भ चिन्ह प्रकट होने पर गर्भिणी को २१ दिन तक १ मासा रसौत को जल में घोल और पानी को निथार कर पिलावे तो बालक प्रायः शीतला रोग से सुरक्षित रहता है।

१३. गदही के प्रसव होने पर प्रथम दिन का दूध बच्चे को पिलायें तो चेचक नहीं होती।

१४. जिस बच्चे को चेचक निकलने का भय हो उसके शरीर में रुद्राक्ष का बड़ा दाना पहले से ही बांध देना चाहिये। जिनको निकल आई हो उन को बड़ी हड़ की गुठली गूदा व फल सहित जल में घिस कर शहद के साथ चटाने से लाभ होता है। खांसी आने लगी हो तो ४ बूंद अदरख का रस भी मिला देना चाहिये।

चेचक-चिकित्सा—

१. जब शीतला प्रकट होने वाली हो तो केला, सफेद चन्दन, अडूसा, मुलहटी या चमेली के पत्ते का रस किसी एक में शहद मिला कर पीवे तो यह कम निकलें और दूर हों।

२. शीतला के दिनों में यदि एक अनबिधा मोती गुड़ में लपेट कर खिलावे तो दो सप्ताह तक तो शीतला से सुरक्षित रहें और निकले भी बहुत कम।

३. मुनक्का ११ दाने, सोने का वर्क १, केशर १ रत्ती अर्क गावजबान में घोल कर शीतोष्ण जल के साथ पिलाने से दाने शीघ्र निकल आते हैं।

४. खूबकला हाथ की हथेली और पांव के तलवों में मले और उसको पानी में उबाल कर उसका बफारा दे तथा ऊपर से वस्त्र ढक दें ताकि पसीना निकले और मुनक्का व खूबकला को औटा कर मिश्री मिला कर पिलावें तो इससे ज्वर को भी आराम होता है और दाने भी सुगमता से निकलते हैं।

५. शीतला के दाने जब भर जांय तो गधे के दांत को सिरके या अर्क गुलाब में या केवल जल में घिस कर उनके ऊपर लगाया जाय तो जलन व खाज सब नष्ट हो कर बहुत शीघ्र अच्छे हो जाते हैं।

६. खाज आदि करने से जबकि दाने खराब हो जाते हैं तथा भयानक दशा हो जाती है तो गधे का दांत घिस कर उसका लेप बदन पर करने से उन को आरोग्य कर देता है और खुरंड इस प्रकार उतर जाता है कि अचंभा होता है।

७. जब शीतला खूब भर जाती हैं और नाखून से उनके ऊपर का खुरंड उतारा जाता है तब बहुत पीड़ा होती है ऐसी दशा में गधे की लीद की राख बुरकने से या उसकी धूनी देने से जलन आदि की पीड़ा दूर होती है और वह स्थान साफ़ हो जाता है।

८. यदि दानों में खुजली हो तो भोजपत्र व झाऊ की पत्तों की धूनी देना चाहिये।

९. राल का मरहम और काफ़ूर का मरहम लगाने से दानों की खुजली दूर होती है।

१० सफेदचंदन, अड़ूसा, नागरमोथा, गिलोय, दाख समभाग का दूध में काढ़ा बना कर देने से शीतला के ज्वर की पहली अवस्था में लाभ होता है।

११. बड़, गूलर, पीपल, आम, दाख के वृक्षों का चूर्ण बहती हुई शीतला पर छिड़कना बहुत लाभ दायक है।

१२. राल, हींग, लहसन की धूनी देने से शीतला के बहाव में कृमि नहीं पड़ते तथा यदि पड़ गये हों तो आराम हो जाता है।

१३. मुरदासंग, पुराने बांस की जड़, चना, चावल का आटा, पुरानी हड्डी, खरबूजे की मींगी बकाइन की मींगी, कूट, सब को पीस छान मेथी के लुआब व अलसी के लुआब के साथ उबटन की तरह रात को मले और सवेरे भूसी तथा गर्म पानी से धो कर स्नान कर डाले तो शीतला को खुजली व निशान दूर हो जाते हैं।

१४. फुंसियों में पीप वगैरह बहने लगे तो उन पर जंगली कण्डों की राख छिड़कने से घाव सूख आते हैं।

१५. यदि घाव पक जांय तो दूब और जलाशय के अन्दर के कंकर पीस कर लेप करने से लाभ होता है।

१ - कलौंजी के पत्तों का काढ़ा बना कर उस में हल्दी डाल कर पीने से भयंकर से भयंकर शीतला का नाश होता है।

१७. छोटा पंचमूल, बड़ा पंचमूल, आमला, रास्ना, खस, धमासा, गिलोय, धनियां और नागरमोथा इन का काढ़ा इस रोग में अत्यन्त उपयोगी है।

१८. शीतला को शीघ्र सुखाने तथा उस के चिन्ह न पड़ने देने के लिये गोमूत्र का व्यवहार बड़ा लाभ दायक होता है।

१९. यदि शीतला के दाने निकल कर फिर अन्दर चले जांय तो कचनार की छाल का काढ़ा रत्ती भर सोनामक्खी के साथ देना चाहिए।

२०. मंजीठ की छाल, पिलखन की छाल, बड़ की छाल, सिरस का काढ़ा भी गुणकारी है।

२१. बांस की छाल, तालीस, लाख, बिनौला, मसूर का आटा, जौ का आटा, बच, अनोस और घी इन का धूनी देने से बड़ा लाभ होता है।

२२. खैर की छाल, नीम के पत्ते, सिरस की छाल, गूलर की छाल, इन को पीस कर लेप करना बड़ा हितकारी है।

२३. जब स्थिति असाध्य हो तो नीम के पत्ते पित्तपापड़ा, पाढ़ा, परवल, परवलकडुआ, कुटकी, सफेदचन्दन, खस, आमला, अडूसा, धमासा, का काढ़ा देना चाहिये।

२४. अंजीर जर्द ७, मसूर की दाल बिना छिलका की १ मासा, कतीरा, सौंफ, ६-६ माशा

सब को १२ तोला पानी में उबाले ४ तोला शेष रहने पर मसल- छान कर पिलावे।

२५. शीतला के कारण आंख में फोला हो जाय तो शीतला की खुरंड गुलाबजल में घिस कर लगाने से नाश होता है।

२६. आंखों में शीतला के दाने निकलें तो लिसोड़े की छाल पीस कर गाढ़ा गाढ़ा लेप करने से लाभ होता है।

२७. तत्काल निकाला हुआ धनियां का पानी और खट्टे अनार के पानी से आंखों को धोते रहना शीतला रोगी की आंखों की रक्षा के लिए लाभकारी है।

२८. मुलहटी का काढ़ा टपकाना उस समय लाभ दायक है, जब दाने आंख में निकल आवें।

२९. सेब के गूदे का रस आंखों में लगावे तो आंखों को कोई भय नहीं रहता। पहले तो दाने निकलेंगे नहीं, यदि निकलेंगे तो शीघ्र आराम हो जायंगे।

३०. शीतला के निकलने से जिस के नेत्रों में फोला हो जाय तो गधे का दांत।अर्क गुलाब में घिस कर नित्य लगावे तो फोला जाता रहता है।

३१. अर्क गुलाब में माजूफल घिस कर आंख में टपकाने से लाभ होता है।

३२. मेंहदी के ताजे पत्ते पीस कर पैरों के तलुओं पर लेप करने से दाह शांत हो कर चेचक के कारण नेत्रों के बिगड़ने का भय नहीं रहता।

३३. जब छाले अच्छे हो जायें और उन के चिन्ह रह जायं तो चिन्ह दूर करने के लिए सूखे बांस की जड़ का जो आटा, बाक़ला का आटा, खरबूजा की मींगी, चावल, मिश्री, बादाम की मींगी सब को कूट छान मक्खन में मिला कर मला करे तो चिन्ह दूर होते हैं।

मातृ शक्ति

(ले०—श्रीमती इन्दिरादेवी जी शास्त्रिणी वैद्या, आयुर्वेदमणि
नारीआरोग्यमन्दिर, गनेशगंज, लखनऊ ।)



हम देवियाँ थीं निज गृहों में, दिव्य भारतवर्ष था ।
सुख-शान्ति थी, सम्मान था, स्वातन्त्र्य था उत्कर्ष था ॥
वामाङ्ग बन कर भी सदा, दाक्षिण्य दिखलाती रहीं ।
निज कीर्ति की वह वैजयन्ती मंजु फहराती रहीं ॥१॥

* * * *

हम कौन थीं, क्या हो गईं हा, आर्यभारत नारियाँ ।
परतन्त्रता की बेड़ियों से हैं, जड़ी सुकुमारियाँ ॥
जो शक्ति थी अबला हुई वह, अंग चारु अपंग है ।
इस विश्व के वैचित्र्य का, यह भी अनोखा रंग है ॥२॥

माता की महिमा

(ले०—श्री० डा० युद्धवीर सिंह जी, एच० एम० बी० होम्योपैथिक धर्मार्थ औषधालय देहली ।

अपार कष्ट सहने की अद्भुत सीमा देखनी हो तो माता को देखिए, अद्वितीय और अलौकिक अनुपम और स्वर्गीय प्रेम की छटा देखनी हो तो जरा माता की गोद में जा बैठो, निष्काम कर्म, निःस्वार्थ सेवा का पाठ पढ़ना हो तो माता से जा पढ़ो, देश में वीर, धीर, धीमान्, उदार सन्तान पैदा करनी हों तो माता की मिन्नत करो, क्रान्ति उत्पन्न करनी हो तो माता को स्रोत बनाओ। सदाचार और धर्म की शिक्षा कौन देगा ? माता ! सत्य का मंत्र कौन सिखा सकता है ? माता ! युद्ध में जूझ पड़ना कौन सिखा सकता, और बुजदिल कौन बनायेगा ? माता ! माता तू अनन्त शक्ति है, तू ही भक्ति है, ज्ञान कर्म और मुक्ति तू ही है । तेरी गोद में बैठकर जिसने पाठ नहीं पढ़ा वह दुनियां में फेल हुआ । माता ! जिसे तूने जो कुछ सिखाया वही लेकर वह संसार में अवतीर्ण हुआ । मां ! कृष्ण और राम तेरी गोद में पले, ईसा और मूसा, मुहम्मद और दयानन्द शंकर और बुद्ध सबने सब कुछ तुमसे ही पाया । तूने इनको जो पाठ पढ़ाया वही दुनियां को वे पढ़ा गये ।

स्त्री ! तेरा जीवन तुच्छ होता ! तो तुझे कौन गिनता !! तू शायद पुरुषों की भोग सामग्री ही होती, यदि तू माता न होती । तुझमें और पुरुष में क्या फर्क है जो पिता और माता में है । तू मां है अम्मां, वे पिता जी हैं, वे बाबू जी हैं । वे आप हैं तू-तू है, गांधी को तूने गोद में खिलाया है, भगवान बुद्ध को तूने अपना दूध पिलाया है और दयानन्द को तूने स्नेह पूर्वक अपनी गोद में पाला है मां तू सब कुछ है । जाग माता, जाग, अनन्त शक्ति का प्रयोग कर और कष्टों का हरण कर ।

निगहबान तू है, तू ही रक्षकवरी हमारी ।
गौरव न तू है तू ही है जिन्दगी हमारी ॥

दिल है बदन में तू ही बाजू में शक्ति तू ही ।
तेरे ही से खिली है दिल की कली हमारी ॥

तू है फ़रिश्ता दिल में मान हमेशा देवें ।
हर जा तुझे ही आंखें तुमपर भरी हमारी ॥

माता को बार २ नमस्कार करो। आज माता ही के सम्बन्ध में पूज्य पाठिकाओं के सामने कुछ लिखने लगा हूं ।

कौनसी ऐसी माता होगी जिसे माता बनने में गौरव सुख और आनन्द न हो । माता की महिमा महान है-माता का आदर, माता की शक्ति, और माता बनने का आनन्द अपार है । माता बनने की इच्छा भी सबमें अतुलित है, अनन्त है, परन्तु माता बनने की जिम्मेवारी विकट है । माता क्या नहीं कर सकती, पुरुषों को शूरवीर बनाना, घरों को स्वर्ग बनाना, शक्तिशाली वीर सन्तान पैदा करना सब कुछ माता के बायें हाथ के खेल हैं ।

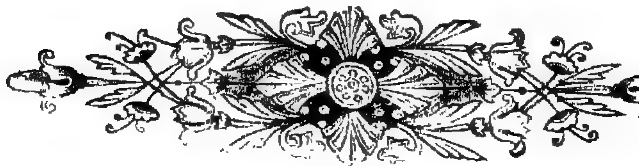
एक पुरानी कहानी याद आती है कि एक समय राजा और रानी में बहस हुई। राजा ने कहा कि अब के जो पुत्र होगा मैं उसे उच्च कोटि का योद्धा -वीर सिपाही बनाऊंगा। रानी ने कहा उचित है, परन्तु आपके हाथ बनाना क्या खाक है, आप तो कुछ नहीं कर सकते सिर्फ बीज बोने के अधिकारी हो। भक्त, योद्धा, दास जो कुछ चाहूं वह तो मैं ही बना सकती हूं। राजा ने कहा घमन्ड की हंसी हंसकर कहा अच्छा देखें बनाना, हमारी तुम्हारी शर्त रही। रानी ने उसी दिन से निश्चय किया कि अब के जो पुत्र उत्पन्न होगा उसको भक्त बनाऊंगी।

भक्तों की कथा सुनना, उनके चित्र देखना, साधु पुरुषों का सत्संग करना उसने आरम्भ किया और अपनी भावना को दृढ़ कर लिया। उत्पन्न होते ही पुत्र को वैसी ही कथा सुनाना और उपदेश देना आरम्भ किया। जब बड़ा होकर पुत्र पिता के अधिकार में आया तो उन्होंने सिपाहियों के कर्तव्य सिखाने शुरू किए, और योद्धा बनाने के उपाय किए। रानी निश्चिन्त थी आखिरकार बीस वर्ष का होते२ पुत्र साधु हो गया, और राजा की एक न चली, राजा ने हार मानी।

कथा पुरानी है, पर उसके बाद एक नहीं लाखों करोड़ों रानियों से राजा हार मान चुके हैं, औरपुरुष जाति अपना हार को उच्च स्वर में स्वीकार कर रानी का स्वत्त्व दे चुकी है।

मातृमान पितृमान् । आचार्यवान् पुरुषोवेद ॥

रानियों! उस रानी ने तो अपना स्वत्त्व सिद्ध किया था, पर आज तो सारे संसार के राजा तुम्हें तुम्हारा स्वत्त्व दे रहे हैं। तुम इसे पहिचानो और ग्रहण करो। वास्तव में माता का काम कोई नहीं कर सकता। माता-माता है। इसलिये हे माताओ! आओ! आपके कर्तव्यों पर थोड़ा विचार करें और देखें कि आज मनुष्य जाति की चलितावस्था और भारत की हीनदशा को सुधारने में आप कितनी मदद कर सकती हैं। आशा है आप इसी विषय पर पूर्ण विचार कर अपनी महान जिम्मेवारी को महसूस कर के दुखी भारत को सुखी बनाने का प्रयत्न करेंगी।



टीका (वैक्सी नेशन Vaccination)

(ले०— प्रो० पं० भगवद्देव शर्मा आयुर्वेदाचार्य 'संपादक')

टीका लगाने की रीति प्राचीन काल से भारतवर्ष और चीन में प्रचलित थी परन्तु १७९६ ईसवी में एडवर्ड जैनर (Edward Janner) ने जब एक ग्वाला के मुंह से यह कहते सुना कि मेरे बाजू में अब गौ को स्तन का चेप लग गई है इसलिये अब मुझे चेचक नहीं निकलेगी, उसने बहुत समय तक यह भी देखा कि गोशालाओं में गौवों के स्तनों पर एक प्रकार की छोटी २ पीपदार फुन्सियां पैदा हो जाती हैं, और फिर एकदम यह रोग ग्वालों में फैल जाता है, और धीरे २ इन ग्वालों में चेचक के प्रति क्षमता (सहनशीलता) उत्पन्न हो जाती है। दूसरी बात उसने यह भी देखी कि जिनको पहले चेचक निकल चुकी है, उन्हें गौओं के द्वारा यह रोग नहीं होता, इससे उसने यह निश्चय किया कि यदि एक बार गौ की चेचक को शरीर में प्रविष्ट करा दिया जावे तो फिर यह रोग या तो पैदा ही न होगा या इस का असर बहुत कम होगा, इस तरह से यह प्रथा बराबर चल सकती है, बस यह घटना थी कि जिस ने उसे टीके के परीक्षण में प्रवृत्त किया और यहीं से टीके का प्रारम्भ भी हुआ। जेनर के समय में चेचक के टीके का खुले तौर पर खूब रिवाज था, क्यों कि उस समय टीका लगाने से जो विकार उत्पन्न होते थे वे इतने तीव्र न होते थे जितना कि स्वयं चेचक रोग। ऐसा कभी नहीं होता था कि चेचक के दाने संख्या में इतने अधिक फूट पड़ें कि न आपस में एक दूसरे से मिल जावें या रक्त जारी हो जावे, जो फुन्सियां निकलती थीं वे अधिक से अधिक २०० दानों से ज्यादह न होती थीं। ईसाइयों के आगमन से बहुत पहिले भी भारत में ब्राह्मण लोग चेचक का टीका लगाया करते थे वे आजकल के चेचक के रोगियों को गतवर्ष के रोगियों के दानों के सूखे हुए छिल्कों से टीका लगाते थे। उस समय यह रिवाज चीन, अरब, तथा अन्य प्रदेशों में प्रचलित था। चेचक को रोकने के वास्ते टीका कितना उपयोगी है यह जेनर साहब ने अच्छी तरह बता दिया। पहले उन्होंने गाय की चेचक की रतूबत एक आदमी के बाजू में पहुंचाई, थोड़े दिनों में जहां टीका लगाया था वहां पर गौ की चेचक की तरह का दाना उठा, फिर उस दाने से रतूबत लेकर दूसरे आदमी के लगाया, जिससे फिर उसी तरह का दाना उठा और उस से फिर दूसरे के लगाया, इस प्रकार उस डाक्टर ने हजारों पर यह कार्य किया और सफल हुवे। जिनके यह टीका लगा वे चेचक से बच गये, कहते हैं इस नवीन रीति के निकालने की प्रशंसा में सरकार से डाक्टर साहब को एक लाख रुपया पारितोषिक मिला,

जब से यह रीति निकली तब से चेचक नहीं निकलती या कम निकलती है, इसका प्रमाण यह है कि दोनों स्थानों की तुलना करलो कि चेचक कहां पर भयंकर और घातकरूप में निकलती है, जिन तरुण मनुष्यों को टीके के बाद चेचक निकलती भी है तो उसका यह कारण है कि उनमें टीके का प्रभाव शनैः कम हो गया है, और फिर भी उतनी घातक रूप में नहीं निकलती।

टीका लगाने का समय—

क्योंकि चेचक ख़ासकर बच्चों का ही रोग है, इसीलिए इसका टीका लगवाने में जल्दी करना बड़ा भारी गलती है। यदि ग्रीष्म-वर्षा ऋतु न हो और बच्चे को पेचिश, अतिसार, खांसी, बुखार, त्वचा रोग, खारिश, उपदंश वगैरा रोग न हों, तन्दुरुस्ती अच्छी हो तो छः सप्ताह की उम्र से तीन मास तक के बच्चे को टीका लगाना उत्तम है। अथवा दांत निकलने से पूर्व ६ मास तक भी टीका लगाना श्रेष्ठ है। परन्तु जबकि आस पास चेचक फैल रही हो तो उस समय आयु का कुछ ख्याल न करके जन्म के तीसरे दिन बाद ही टीका लगवा देवें, यदि आवश्यक समझी जावे तो गर्भवती स्त्री को भी टीका लगा सकते हैं।

टीका लगाने की रीति—

टीके का प्रयोजन यह है कि गाय की चेचक का अंश शरीर के अन्दर पहुंचा कर उसे शोषण किया जावे। टीका प्रायः बाहु के बाह्य भाग पर अंसच्छदा मांस पेशी पर या उसके नीचे अथवा कोहुनी के मोड़ के नीचे लगाया जाता है। टीका लगाने योग्य स्थान को पहले गरम जल और साबुन से या किसी कीटाणु नाशक द्रव्य से अथवा टिंचरआयोडीन से हल्का लेप करना चाहिये, फिर बायें हाथ से उसके हाथ को नीचे की ओर से पकड़ें। जिससे ऊपर या सामने की ओर जिल्द तन जावे, फिर गाय के चेचक की रतूबत लेकर नश्तर की नोक में रक्खें उसे तिरछा करके त्वचा में अन्दर प्रवेश करा दें जिससे नाम मात्र खून भी कुछ निकल आवे क्षणभर नश्तर की नोक को वहीं रहने देना चाहिए। जिससे कि रतूबत बाहर न आये और वहीं सूख सके, फिर नश्तर को निकालकर उस स्थान को अच्छी तरह मसल दें, परन्तु यदि रतूबत निकल जावे या सन्देह हो तो आध आध इंच के अन्तर से फिर इसी प्रकार लगाते हैं। दूसरी विधि यह है कि उपरोक्त विधि से बाहु को पकड़कर त्वचा को सूई से गोद दें फिर रतूबत उस पर लगा देवें।

तीसरी विधिः—

बाहु को उसी प्रकार पकड़ कर वैक्सीन को सुई में भरकर त्वचा में इस तरह ||| अन्दर पहुंचावें। कहीं कहीं शिगाफ़ (चीरा) लगाकर फिर वैक्सीन (रतूबत) को मसल देते हैं। इस की और भी अनेक विधियां हैं। टीके के ऊपर पट्टी वगैरा बांधने की कोई आवश्यकता नहीं है, सिर्फ गौज़ ही काफी है या इसके लिए ढक्कन जैसी चीज़ (कवर) आती है उसका इस्तेमाल करें।

टीका लगाने के पश्चात् चिकित्सा—

टीका लगने के बाद बाहु को कुछ देर तक खुला रक्खें जिस से वह स्थान सूख जाय, फिर

घी या मक्खन लगा दें अथवा वैसलीन और बोरिक एसिड मिलाकर लगाये. सफेदा काशगरी और धुला हुआ मक्खन मिलाकर लगादें। अगर ज्वर हो तो वायु से बचाकर लिटा दें. कास्ट्र ल का हल्का जुलाब देवें. और ढीली बाहों का कुरता पहिनाये जिससे व्रण में रगड़ न लगे, मक्खी, धूल, मिट्टी. वगैरा से रक्षा करें। बच्चे को गधी का दूध पिलाने से और शरीर पर मसलने से चेचक निकलती ही नहीं, इसीलिए सम्भव है हिन्दु शास्त्रों में शीतला की सवारी गधा माना गया है और उसकी पूजा का विधान है।

टीके के अच्छी प्रकार लगने के लक्षण—

जब किसी स्वास्थ शिशु के विधि पूर्वक टीका लगाया जावे. तो पहिले दो दिन तक टीके वाले स्थान पर कोई चिन्ह प्रकट नहीं होता तीसरे दिन उस स्थान पर गोल गोल, चपटी, लाल रंग की, सख्त फुन्सियां निकलती हैं और ५-६ वें दिन इनमें अंडे के समान गोलाकृति, नीलापन लिए, किनारों पर ऊंचा बीच में दबा हुआ फफोला हो जाता है, पहिले यह फफोला देखने में स्वच्छ मोती की तरह चमकता है, परन्तु ज्यों ज्यों बड़ा होता जाता है यह बीच में से दबता जाता है और इसके चारों ओर एक गहरा लाल और उभरा हुआ मंडल बन जाता है। यह आठवें दिन पूर्ण होकर आवरण बन जाता है. ये दाने चेचक की तरह के ही निकलते हैं, आठ दिन बाद यह आवरण पककर रंग में भूरा, तना हुआ और उठा हुआ होता है, इसके नीचे चिपचिपी स्वच्छ लसीका भरी हुई रहती है जो जरा सी किसी चीज के चुभने पर बह निकलती है, इससे अन्य बच्चों को भी टीका लगाया जाता है, फिर ९ वें दिन आवरण पर भी पिडिकायें निकल आती हैं, इसके चारों ओर एक मंडल सा जाता है इस अवस्था में कुछ सार्वाङ्गिक लक्षण जैसे भूख का न होना, बेचनी, जी मिचलाना, वमन, सिर, कमर, पीठ इनमें दर्द, ज्वर हल्का १०० डिग्री के लगभग होता है। इसके बारहवें दिन दानों का लसी का गदली होने लगती है, सूखना मुरझाना प्रारम्भ होता है। सूखने पर श्याम वर्ण लिये फुन्सी हो जाती हैं फिर १४वें दिन सूखकर एक छिलका सा रह जाता है जो कि प्रायः २१वें दिन वह भी उतर जाता है. छिलका उतरने के बाद एक सुर्खी मायल निशान रह जाता है यह निशान चेचकू क्षतांक कहलाता है। यदि उपरोक्त प्रकार से टीका लगाने पर फफोला न पड़े या उसमें नीर (लसीका) न भरे तो समझना चाहिये कि टीका लगाने का कोई असर नहीं हुआ, ऐसी दशा में फिर से टीका लगाना चाहिये, जब टीका उठ आवे तो उसे कटने से बचाना चाहिये यदि वह कपड़े की रगड़ से फूट गया तो उसका पीप बदन में और जगह लग कर भी फोड़े पैदा कर देगा।

क्षमता—

टीका लगाने से शरीर में एक प्रकार का विजातीय द्रव्य प्रवेश कराया जाता है जो स्वभावत: शरीर में पैदा नहीं होता, इसलिये इन विजातीय द्रव्यों के पहुंचने पर शरीर उनकी वृद्धि को रोकने के लिये उनके प्रतिकूल वस्तुयें तैयार करता है, जिनके परिणाम स्वरूप फफोले वगैर

का पड़ना, ज्वर इत्यादि का आना लक्षण प्रकट होते हैं, इन लक्षणों के साथ शरीर में चेचक नाशक वस्तुएं बनती हैं, बस शरीर के अन्दर चेचक नाशक वस्तुओं का तैयार करना ही 'टीका लगाने का उद्देश्य है। यद्यपि टीका लगाने से चेचक नाशक वस्तुयें शरीर में सदा के लिये कायम नहीं रहतीं, जैसे २ समय बीतता जाता है वैसे २ शरीर की तबदीली के साथ २ इन वस्तुओं की शक्ति भी कमजोर होती जाती है। इसलिये यह क्षमता स्थायी नहीं रह सकती, अतएव दुबारा टीका ८-१० वर्ष बाद फिर लगवाना उचित है, यदि कोई व्यक्ति चेचक के प्रति विशेष ग्राही है या उसे चेचक के रोगियों की परिचर्या करनी पड़े अथवा चारों तरफ़ चेचक फैल रही हो तो ऐसी हालत में तीसरी बार भी टीका लगवाना अच्छा है। शेष जीवन के लिये टीके का लगाना अनावश्यक है।

टीके पर आक्षेप—

अनेक मनुष्यों का कथन है कि टीका लगाने से कोई लाभ नहीं क्योंकि टीका लगे मनुष्यों के फिर चेचक का निकलना इस बात के लिये काफी प्रमाण है कि इससे चेचक के प्रति क्षमता पैदा नहीं होती, प्रत्युत इसके विपरीत विजातीय वस्तुओं के प्रवेश से शरीर में अनेक प्रकार के भयंकर रोगों का जन्म होता है जिसके कारण स्वास्थ्य में बड़ी हानी होती है दूसरी बात यह है कि इससे शरीर की रोग नाशक स्वभाविकी शक्ति का ह्रास होता है। इस के अतिरिक्त टीके से कभी कभी आतशक, यक्ष्मा, कुष्ठ, धनुस्तम्भ, विसर्प, त्वचा रोग इत्यादि भी पैदा हो जाते हैं।

उत्तर—

टीका लगाने से पहले यह अवश्य देख लेना चाहिये कि जिस शिशु की चेचक की लसीका से टीका लगाया गया है वह अस्वस्थ तो नहीं है, उसे वंशागत फिरंगोपदंश, यक्ष्मा इत्यादि तो नहीं है, जहां टीके के लिये लसीका बछड़े या गौ वगैरा से ली जाती है। वहां पर फिरंगोपदंश का तो उसमें कोई प्रश्न ही नहीं है, अतएव टीके की लसीका की परीक्षा अच्छे प्रकार करनी चाहिये। परन्तु टीके का लगाना सिद्धान्ततः एक आवश्यकीय चेचक नाशक सर्वोत्तम उपाय है।

टीके की लसीका (लिम्फ)—

यद्यपि टीका लगाने के लिये लसीका कई प्रकार से प्राप्त की जाती है। परन्तु प्रायः जब बच्चे की बाजू पर गाय की चेचक का दाना खूब अच्छी तरह निकले तो उस दाने की रतूबत से टीका लगाते हैं। इसमें कुछ संदेह नहीं कि पहले गाय की चेचक की लसीका से टीका लगा कर फिर उस टीके से रतूबत लेकर दूसरे में उससे फिर तीसरे में इसी तरह लगाना अच्छा नियम है और वास्तव में इस तरह की रतूबत पहुंचाने तथा गाय की चेचक की लसीका में कोई अन्तर नहीं परन्तु फिर भी गाय के थन की चेचक से ताजी लसीका लेकर टीका लगाना अति उत्तम माना जाता है। परन्तु यह सर्वत्र उपलब्ध नहीं हो सकती। इसीलिये जब कभी किसी स्वस्थ बच्चे के चेचक निकली हुई हो तो सातवें या आठवें दिन जब दाने खूब फूल कर उसमें रतूबत भरी हुई हो उस समय दाने की नोक पर धीरे से छेद करें जिससे खून न निकलने पावे और जितनी रतूबत

स्वयं निकले उसे किसी शीशी में ले लें दबावें नहीं. एक दाने में से इतना लसीका प्राप्त हो जाती है जो कि पांच बच्चों को अच्छी प्रकार लग सके। दूध पीता बच्चा और काले लड़कों की लसीका जिनकी त्वचा गोरी और साफ है गोरे बच्चों की अपेक्षा उत्तम समझी जाती है। जब कई टीके लगे हों तो एक दो छोड़ कर बाकी सबों से जो खूब अच्छी तरह उठे हुए हों लसीका ले लेना चाहिये इससे उस बच्चे को कोई हानि नहीं होती।

टीके का खुरण्ड जो कि स्वयं गिरने वाला हो उसे एक पीतल की छोटी खरल में थोड़े जल से पीस कर दूध की तरह कर ले जो कि ज्यादह गाढ़ा और पतला भी अधिक न हो इससे भी टीका लगाना चाहिये क्योंकि खुरण्ड में कई हफ्तों तक चेचक का असर बाकी रहता है. एक बड़ा खुरण्ड दो तीन आदमियों के लिये टीके के वास्ते काफी है। जो टीका ठीक न हो या दानों से पीप निकलता हो, अच्छे प्रकार न उभरे उससे लसीका न लेनी चाहिये।

चुल्लिका ग्रन्थि (Thyroid)

(श्री डाक्टर त्रिलोकीनाथ जी वर्मा सिविल सर्जन)

(स्वास्थ्य और रोग से उद्धृत)

यह ग्रन्थि गर्दन में स्वर यन्त्र के सामने रहता है, कन्याओं में यौवन प्राप्ति के समय यह ग्रन्थि कुछ बढ़ जाया करती है। यह स्वाभाविक बात है। इसकी चिकित्सा की कोई आवश्यकता नहीं है। परन्तु जब जल या भोजन में [illegible] ई कमी होती है और साथ २ [illegible] जल का प्रयोग करने [illegible] गर्दन [illegible] पहाड़ों में यह रोग बहुत होता है। इसे कुओं का जल हमेशा उबाल कर पीना चाहिये। कब्ज दूर करना चाहिये, पाचन शक्ति ठीक करनी चाहिये और औषधियों द्वारा आयोडिन शरीर में पहुंचाना चाहिये। २-३ ग्रेन सोडियम आयोडाइड प्रति दिन खाना फायदा करता है। जब ग्रन्थि बहुत बड़ी हो जाती है और रोग पुराना हो जाता है तो ऑपरेशन द्वारा उसका बढ़ा हुआ भाग निकाल डाला जाता है। ग्रन्थि के बढ़ने से एक रोग ऐसा होता है कि उसमें दिल बहुत तेजी से धड़का करता है, नब्ज बहुत तेज चलती है आंखें आगे को [illegible] है [illegible] और कमजोरी मालूम होता है।

१० मास की कन्या नाभि [illegible] है।

[illegible] वर्ष [illegible] के बाद

मूढ़ता

जब चुल्लिका ग्रन्थि ठीक तरह से काम नहीं करती या नहीं [illegible] है। इस बालक का [illegible] होता है, बाल मोटे होते हैं, आवाज मोटी और जिह्वा मोटी और मुंह से बाहर निकली रहती है। बालक बहुत सुस्ती से काम करता है [illegible] बुद्धि [illegible] कम [illegible] है। उसको नतना नहीं आता, कई [illegible] की आयु का बालक भी नहीं चल पाता। नाक से सांस लेने में [illegible] है। नब्ज बहुत सुस्त

रहती है शरीर का ताप जितना होना चाहिये उससे कम रहता है और हाथ पैर ठंडे रहते हैं। क़द छोटा (बौना) दांत देरी से निकलते हैं और उनमें जल्दी कीड़ा लग जाता है। ऐसे बालक को अकसर क़ब्ज़ रहता है और थोंद निकली रहती है। नाभि अकसर फूली रहती है। ब्रह्मरंध्र (खोपड़ी के अगले भाग में जो गड्ढा होता है) अक्सर खुला रहता है।

चिकित्सा

चुल्लिका ग्रन्थि का रस खिलाने से रोग घट सकता है। रस फायदा करने के लक्षण ये होते हैं—क़ब्ज़ जाता रहता है, त्वचा में सुर्खी आ जाती है, बाल मुलायम और चिकने होने लगते हैं। हाथ पैरों में गर्मी मालूम होने लगती है। आवाज़ साफ़ हो जाती है, बच्चा चैतन्य दिखाई देने लगता है और चलने लगता है, जो वसा (चर्बी) जगह २ इकट्ठी हो गई थी वह अब कम हो जाती है। बच्चा समझ की बातें करता है, कद बढ़ने लगता है। चुल्लिका ग्रन्थि का प्रयोग उम्रभर करना पड़ता है।

शिशु रोगों पर अनुभूत प्रयोग

(लेखक डा० शिवदत्त प्रसाद शर्मा वैद्य० एम० ए० अजगैन उन्नाव यू० पी०)

बालामृत

कलई [illegible] ॥ लेकर चार सेर पानी गरम कर [illegible] उसके ऊपर का पानी निथार [illegible] मुलहठी २ तोला वायविडंग



डाक्टर शिवदत्त प्रसाद शर्मा वाजपेयी वैद्यभूषण H. M. B. अजगैन (उन्नाव)

२ तो. आमला २ तोला हर्र बड़ी १ तो. बहेड़ा १तो. सौंफ १तो. छोटी इलायची ६मा. काकड़ासिंगी ६ मा. सौंठ ६ मा. मिर्च ६ मा. पीपरी ६ मा. नागरमोथा १ तो. [illegible] कर [illegible] काथ कर और [illegible] आने पर उसी चूना से निथारे हुये [illegible] जल [illegible] बराबर मिश्री डाल कर [illegible] बना ले । [illegible] देने [illegible] बाजार में मिलते हैं [illegible] मिलादें । [illegible] बालामृत [illegible] इस [illegible] पान से बच्चे हृष्ट पुष्ट रहते हैं, [illegible] बीमारी आक्रमण नहीं करता तथा [illegible] बहुत ही उपयोगी है ।

बालशोष तैल

मकोय पत्ती स्वरस, तालमखाना पत्ती स्वरस, पानस्वरस, सहदेई स्वरस, कंघो (ककई) स्वरस, भंगरा स्वरस, घीकुमारी स्वरस, प्रत्येक आध पाव, पुनर्नवामूल ऽ= बकरी का दूध ऽ॥ काले तिल का तैल ऽ१, कपूर १ तो. मुलहटी १ तो. देवदारु, वायविडंग, नागरमोथा, काकड़ासिंगी, बच कड़वी, हल्दी, लालचन्दन, कूठ, असगंध, दारुहल्दी, रास्ना प्रत्येक १ तोला कूट कर कल्क बना ले । फिर समस्त वस्तुये एक में डाल कर मध्यम आंच से तैल सिद्ध करले । इस तेल के मर्दन करने और कानों में तथा सिर में लगाने से बच्चों का सूखा

रोग निश्चय आराम हो जाता है। हमारा सैकड़ो बार का अनुभूत है।

उदरामय हर

बेल के कच्चे फ. का गूदा ऽ॥ मोचरस ऽ— आमबीज ऽ— नागरमोथा ऽ— जायफल १ तो. इन्द्रजव १ तो. धाय के फूल १ तो. लेकर कूट ले और ऽ८ जल में काढ़ा बनावे। चतुर्थांश रह जाने पर उतार कर छान ले। फिर उसीमें ऽ२ मिश्री मिला कर चाशनी बनाले। बच्चों के दस्तो के लिये यह शर्बत अत्यन्त उपयोगी है। मात्रा ३ माशा से ६ माशा तक दिन में तीन बार बलानुसार देना चाहिये।

बालकों के चुन्नों (कीड़ों) की दवा

बच्चों के पेट में कीड़े हो जाते हैं जिन्हें स्त्रियां चुन्ने कहती हैं। इन कीड़ों के हो जाने से बालक की गुदा सुर्ख हो जाती है और गुदा स्थानमें बहुत छोटे २ लाल दानेसे प्रतीत होते हैं। तथा साथ ही बच्चों को छोटे २ हरे, पीले रंग के दस्त होने लगते हैं उन दस्त में लाल मिर्च के से बीज दिखाई पड़ते हैं। उस समय बच्चों को सुबह, दोपहर, शाम आर्थरिडीन एक अथवा दो अदद मां के दूध से पीस कर पिलाना चाहिये, अथवा "होमियोपैथिक की दवा "सिना" ३० (Cina 30) सुबह, शाम एक २ बूंद जल में मिला कर या दूध चीनीमें मिला कर देना चाहिये। खाने के प्रयोग के साथ ही बच्चे की गुदामें अरण्ड के पत्तों का स्वरस दिन में तीन बार लगाना चाहिये, अथवा एरण्ड के तेल में काम सैंदूर मिला कर प्रत्येक दस्तके बाद बच्चेकी गुदा में लगा देना चाहिये। उपरोक्त प्रयोगों द्वारा चुन्ने आराम हो कर बच्चों के दस्त अवश्य बन्द हो जाते हैं। हमारा बालमृत भी चुन्नों में लाभकारी है।

बच्चों के मुख रोग के प्रयोग

(१)—सुहागा भुना, सफेद कत्था, छोटी इलायची दाना, हजरउलयहूद समान भाग कूट कपड़छान कर रख ले। इस औषधि को दिन में चार बार तथा रात में दो बार बच्चे के मुंह में सूखा ही लगाने से लाल और सफेद दोनों प्रकार के मुंह आना आराम हो जाते हैं।

(२) सुहागा भूनकर खील करले फिर बारीक पीस कर शहद में मिलाकर रख ले। यह दवा दिन, रात में छः बार लगाने से दोनों प्रकार के मुंह अवश्य आराम हो जाते हैं।

काली खांसी या हूपिंग कफ

(Whooping cough)

श्वास नली की चलायमान उत्पन्न करने वाली झिल्ली के प्रदाह का नाम हूपिंग कफ(काली खांसी) है। यह रोग अधिकतर बच्चों को ही होता है। इसी बीमारी को कुकुर खांसी भी कहते हैं। इसमें बड़ी भयंकर कष्टकर खांसी आती है, खांसतेर बच्चा बेदम हो जाता है, खांसी आने के समय बच्चे का चेहरा सुर्ख हो जाता है, उसके गले से "हु" या "हूप" शब्द होता है इसी कारण इसको हूपिंग कफ कहते हैं। खांसतेर बच्चे को वमन तक हो जाती है तब खांसी शांत होती है। थोड़ी ही देर में फिर आक्रमण होने पर पहले के ही भांति हालत होती है। इसमें बच्चों को बहुत ही

तकलीफ होती है। इस खांसी के लिए हमारा एक अनुभूत प्रयोग है उसे जनता के लाभार्थ प्रकाशित करते हैं।

काकड़ासिंगी १ तो०, मिर्च काली १ तो०, सोंठ १ तो०, पीपरि छोटी १ तो०, भारंगी १ तो०, बड़ी हर्रे का वक्कल १ तो०, बहेड़े का वक्कल १ तो०, आंवला १ तो०, छोटी कटेरी मूल १ तो०, पुष्करमूल १ तो०, सैंधा नमक १ तो०, कटेरी के फूल १ तो०, सांभर नमक १ तो०, काला नमक १ तो०, कच्च-चनमक १ तो०, जवाखार १ तो०, सज्जी खार १ तो०, कटेरी खार १ तो०।

समस्त वस्तुओं को कूट पीस कर चूर्ण बना कर शीशी में रख लें। मात्रा तीन वर्ष तक के बच्चे के लिए १ माशा इससे बड़ों को १॥से दो माशा तक गुनगुने जल से दिन, रात में चार बार देना चाहिए। इस औषधालय के साथ ही यदि वासावलेह भी बलानुसार दो बार दिया जाय तो विशेष उपकारी है।

होमियोपैथिक में ड्रोसेरा "६०" (Drosera), कक्कस कैक्टाई ३०" (Coccus cacti ३०) और "कोरालियम रूब्रम ३०" (Corallium Rubrum ३०) लक्षणानुसार छः २ घंटे पर एक २ बूंद अथवा एक बूंद से दो मात्रा करके जल के साथ देने से अवश्य लाभ होता है।



शीतला

(ले०—श्री कृष्णचन्द्र शर्मा 'मधुकर')

शीतला भारत का प्राचीनतम रोग है और लोक में शीतला, मसूरिका, देवी, माता, चेचक आदि अनेक नामों से विख्यात है। वाग्भट आदि प्राचीन आचार्यों ने इस विस्फोटक रोग के अन्तर्गत माना है और इसका कारण विषैला वायु कहा है, परन्तु माधवाचार्य ने इसका मसूरिका नाम से पृथक ही वर्णन किया है। डाक्टरी और यूनानी वालों ने इसे संक्रामक ज्वर के अन्तर्गत माना है

माधवाचार्य के मतानुसार इस रोग की उत्पत्ति का कारण अधिक चरपरे, खट्टे, खारी पदार्थ, परस्पर विरुद्ध भोजन, अधिक भोजन, दुर्जर शाक और दूषित जल वायु तथा क्रूर ग्रहों का प्रकोप है इन्हीं कारणों से कुपित हुये वातादि दोष दुष्ट रक्त के संसर्ग से मसूर के सदृश पिडिकाओं को उत्पन्न करते हैं।

शीतला के प्रथम ज्वर, कण्डू, शरीर टूटना, तृषा, दाह, अरुचि, चित्तभ्रम, त्वचा पर शोथ लालनेत्र तथा शरीर का रंग बिगड़ जाना आदि लक्षण होते हैं

माधवाचार्य ने वातज, पित्तज, रक्तज, कफज, त्रिदोषज, रोमान्तिका तथा रस, रक्त, मांस मेदोऽस्थि मज्जा शुक्रगत आदि मसूरिकाओं का पृथक २ वर्णन किया है परन्तु भावमिश्र ने इसके सात भेद इस प्रकार माने हैं।

शीतला—अग्नि से जले हुये के समान रंग और पित्त के कोप से ज्वर सहित कहीं २ पर अथवा सम्पूर्ण शरीर में फफोले हो जायें उन्हें शीतला कहते हैं इनकी अवधि २१ दिन की है यह प्रथम सप्ताह में निकलती है, द्वितीय सप्ताह में पकती है और तृतीय सप्ताह में सूख जाती है।

कोद्रवा—कोदों के समान वात और कफ से जो दाने निकलते हैं उन्हें कोद्रवा कहते हैं, इनकी अवधि १४ दिन की होती है ये बिना पके ही शान्त हो जाती हैं।

पाणिसहा—जो दाने गर्मी के कारण उत्पन्न हो जायें और जिनमें खुजली हो उसे पाणिसहा कहते हैं इसकी अवधि सात दिन की होती है।

दुःखकोद्रवा—जो दाने राई के सदृश बालकों के मुख पर उत्पन्न हो जाते हैं उन्हें दुःखकोद्रवा कहते हैं।

चर्मजा—जिसमें बहुत सी छोटी२ फुंसियों के सम्मिश्रण से काले रंग के मंडलाकार चकत्ते से बन जाते हैं उन्हें चर्मजा कहते हैं।

कुष्ठजा—जिसमें उरद के समान दाने के

संमिश्रण से लाल रंग के मंडलाकार चकत्ते से बन जाते हैं उन्हें कुष्टजा कहते हैं।

यहां पर हम प्राचीन ग्रन्थ लक्षणों वा विश्लेषण न करके अर्वाचीन चिकित्सकों की प्रचलित रीति के अनुसार कुछ प्रकाश डालना चाहते हैं डाक्टरी मतानुसार यह रोग तीन भागों में विभक्त है Measles (मीजिल्स) Chicken Pox (चिकन पाक्स) Small Pox (स्माल पॉक्स)।

Measles (मीजेल्स) रोमान्तिका, खसरा

यह एक साधारण संक्रामक रोग है और साधारणतः ३-८ वर्ष की अवस्था वाले बच्चों को अधिक हुआ करता है इस रोग का विष श्वास द्वारा शरीर में प्रवेश करता है इस रोग की अवधि ६- १४ दिन तक की है वैसे तो यह साधारण रोग है, परन्तु ज्वर के साथ कास एवं उदर विकार होने के कारण कभी कभी २ बड़ा भयावह हो जाता है।

इस रोग में सर्व प्रथम प्रतिश्याय (जुकाम) हुआ करता है, फिर ज्वर आ जाता है ज्वर के तीसरे चौथे दिन शरीर में खुजली मालूम होने लगती है और छोटे २ दाने निकल आते हैं इसके दाने सब से पहिले मुख पर निकलते हैं फिर हाथ और गले पर। इसके बाद क्रमशः छाती तथा सम्पूर्ण शरीर में हो जाते हैं इसके दानों में मक्खी के काटने के सदृश पीड़ा होती है और खुजलाने पर कुछ समय के लिए शान्त हो जाती है इसका ज्वर प्रथम सप्ताह ही में कम हो जाता है और त्वचा दूसरे सप्ताह में पूर्ववत हो जाती है परन्तु इस रोग का भय तीन सप्ताह तक बना रहता है इसलिए दूसरे बच्चों को २१ दिन तक इस रोगी से पृथक रखना चाहिये।

नाक तथा आंखों से पानी बहना, आंखों का दुखना, थोड़ी खांसी, ज्वर, श्वास में कष्ट, तृषा, दाह, एकाएक चौंक पड़ना, मुख का वर्ण रक्त होना तथा तीसरे चौथे दिन शरीर पर छोटे छोटे दाने निकल आना, आदि इस रोग के लक्षण हैं इस रोग के कारण रोगी बहुत शिथिल हो जाता है और शरीर का वर्ण लाल हो जाता है दाने कम निकलने के कारण शरीर के भीतर उष्णता का प्रकोप अधिक होता है। इस रोग में ज्वर शान्त करने के लिए विरेचक औषधियों का प्रयोग कभी भूलकर भी न करना चाहिये। इस रोग में ठंडक से बचाने की बड़ी ही आवश्यकता है क्योंकि इसके रोगी को थोड़ी सी ही ठंडक लगने से कास एवं उदर विकार बढ़ जाता है, यदि यह रोग मस्तिष्क की ओर बढ़ता है तो सन्निपात हो जाता है यदि फुफ्फुसों की ओर बढ़ता है तो प्रश्वास क्रिया अधिक वेगवती हो जाती है और फुफ्फुस प्रदाह हो जाता है यदि इसका झुकाव उदर की ओर हो जाता है तो अतिसार (दस्त) आने लगते हैं इसलिये रोगी को बाहर खुली हवा में न निकलने देना चाहिए और रोग बढ़ जाने पर बिछौने पर लिटाकर रखना चाहिए क्योंकि एकाएक शीतल वायु के संसर्ग से रोग के और भी बढ़ जाने की संभावना बनी रहती है।

इस रोग में मांस मछली तथा तेल लगाना निषिद्ध है—यदि उदर विकार तथा खांसी है तो अरारोट आदि हल्का पथ्य देना चाहिए। मुनक्कों की खीर भी लाभदायक है।

Chicken Pox चिकेन पौक्स
(छोटी माता)

यह एक प्रकार का साधारण संसर्गजन्य रोग है इस रोग से स्माल पौक्स के समान विशेष किसी प्रकार की हानि होने की संभावना नहीं रहती। यह रोग बहुधा छोटे बच्चों के ही होता है वैसे तो इस रोग की अवधि १४ दिन तक की है परन्तु अधिकतर इसके दाने पांचवे छटे दिन ही सूख जाते हैं परन्तु इस रोग का भय ४ सप्ताह तक बना रहता है। इस कारण रोगी को १ माह तक दूसरे बच्चों से अलग रखना चाहिये। इस रोग में सर्व प्रथम ज्वर आता है फिर २-१ दिन के अनन्तर सबसे पहिले छाती और पीठ पर दाने निकलते हैं फिर सम्पूर्ण शरीर में हो जाते हैं। परन्तु मुख पर नहीं निकलते दाने निकलने के तीसरे चौथे दिन उनमें से पानी निकलने लगता है और दाने सूख जाते हैं। बहुतेरे व्यक्ति भ्रम-वश उसको स्माल पौक्स समझ लेते है। परन्तु इसमें और स्माल पौक्समें बहुत अन्तर है। स्मौल पौक्स में सबसे पहिले दाने मुख पर निकलते हैं फिर क्रमशः नीचे की ओर सब अङ्गों में निकलते हैं परन्तु इसमें मुख पर दाने निकलते ही नहीं छाती और पीठ से आरम्भ होकर सम्पूर्ण शरीर में फैल जाते हैं इसमें छोटे २ दाने निकलने के कारण स्माल पौक्स के समान मुख जाने पर निशान नहीं बनाते। जैसा स्माल पौक्स में बड़े वेग से ज्वर आने के कारण तापमान अधिक हो जाता है वैसी इसमें नहीं होता। स्माल पाक्स में ज्वर आने के तीसरे चौथे दिन दाने निकलते हैं परन्तु इसमें २-१ दिन में ही निकल आते है।

Small Pox

(स्माल पौक्स) शीतला, बड़ी माता यह बड़ा भयानक अत्यधिक औपसर्गिक रोग है इसकी संक्रामक शक्ति अन्य रोगों से अधिक है इसका विष अधिक दूर तक अपना प्रभाव नहीं छोड़ता शीतला के रोगी को स्पर्श करने से तथा उसके शरीर को दूषित वायु के संसर्ग से अथवा शीतला के दाने का पीव आदि लगने से यह रोग छोटे बच्चे से लेकर वृद्ध तक सब के लिये हो जाया करता है यह रोग अपना स्मारक चिन्ह जीवन भर के लिये रोगी के शरीर पर कुछ न कुछ अवश्य छोड़ जाता है किसी २ को यह अन्धा, काना, लंगड़ा, लूला भी कर डालता है। वसन्त तथा शरद्ऋतु में इसका प्रकोप होता है। यह रोग एक व्यक्ति को प्रायः एक ही बार होता है क्योंकि दूसरी बार रोग के आक्रमण से बचने के लिये उक्तव्यक्ति को शक्ति प्राप्त हो जाती है।

जब शरीर में इस रोग का विष उत्पन्न हो जाता है तो प्रायः १०-११ दिन तक तो शरीर बड़ा ही शिथिल रहता है फिर ज्वर बड़े प्रबल वेग से आता है ज्वर का तापमान १०४ अथवा इससे भी अधिक हो जाता है शिर, पीठ अथवा कमर में पीड़ा होती है वमन तन्द्रा एवं कम्प होता है ज्वर के तीसरे चौथे दिन सबसे पहिले मुख पर मसूर जैसे लाल २ छोटे २ दाने निकल आते हैं दो एक दिन में क्रमशः गले छाती पीठ आदि सब अङ्गों में निकल आते हैं और बड़े छालों के रूप में हो जाते हैं दाने निकलने के अनन्तर ज्वर कम हो जाता है जब दाने निकलते हैं तब लाल २ होते हैं परन्तु दो तीन दिन के अनन्तर इनमें से

पानी निकलने लगता है और पांचवें छटे दिन इनमें पीव पड़ जाती है तो ज्वर का वेग पुनः बढ़ जाता है पके हुये दाने पीले रंग के उठे हुये होते हैं उनका मध्य भाग दबा हुआ होता है उनके चारों ओर का स्थान रक्तवर्ण का होता है पीव पड़ जाने पर यह दाने फूट जाते हैं अथवा काले पड़ कर सूखने लगते हैं उसकी अवधि १२ दिन से २१ दिन तक को होती है परन्तु इसका संसर्ग ७ सप्ताह तक बना रहता है इस कारण १॥ माह तक अन्य व्यक्तियों को रोगी से पृथक् रहना चाहिये।

यदि यह दाने बिना पके ही बैठ जायें तो सांघातिक समझना चाहिये दूर २ पर अलग २ सफेद रंग के दाने अच्छे होते हैं यदि दाने पास पास होने से काले या लाल रंग के चकत्ते से बन जायें तो उन्हें सांघातिक समझना चाहिये।

प्राचीन मतानुसार यदि रोगी के निम्नस्थ लक्षण हों तो उस रोगी की चिकित्सा नहीं करनी चाहिये।

कोई प्रवाल के समान कोई जामुन के समान कोई लोह जाल के समान कोई अलसी के समान दोष के भेद से अनेक वर्ण के दाने हों खांसी, हिचकी, बेहोशी, अत्यन्त वेग से ज्वर, मूर्छा, बकवाद, अत्यन्त तृषा एवं दाह छूटना, तथा मुंह, नाक, आंख से रक्त का बहना व कंठ में घुर २ शब्द करके श्वास बड़े कष्ट से लेता है।

जो रोगी निरन्तर जल्दी २ नासिका से ही श्वास लेता हो ऐसा रोगी भी वायु के दूषित हो जाने से तृषा से दुखी हो शीघ्र ही प्राण त्याग देता है।

शीतला के अन्त में कलई, कोहनी और कंधों का शोथ भी बड़ी कठिनता से चिकित्सा करने योग्य होता है।

डाक्टरी मतानुसार इस रोग से बचने का उत्तम उपाय टीका लगवाना है पहिले तो टीका लगवाने वालों के शीतला निकलता ही नहीं है यदि निकलता भी है तो अपना प्रभाव अधिक नहीं दिखाती। आजकल बहुत से मनुष्यों की यह धारणा हो गई है कि टीका लगवाने से हानि के अतिरिक्त कोई लाभ नहीं होता ऐसे मनुष्यों को यह बात अवश्य स्मरण रखनी चाहिये कि यदि स्वच्छता नहीं रखी जायगी तो उस दशा में टीका लगवाना बिलकुल व्यर्थ होगा दूसरे शीतला का टीका चिकैन पाक्स में लाभ दायक नहीं होता।

जिस घर में शीतला का प्रकोप हो उस घर के बालकों को टीका लगवा देना चाहिये क्योंकि टीका का प्रभाव प्रायः सात वर्ष तक ही रहता है। कभी २ इसकी अवधि घट बढ़ भी जाती है परंतु स्वच्छता प्रत्येक दशा में आवश्यक है।

जिन लोगों को खाज, खुजली, ज्वर, अतीसार, उपदंश आदि रोग हों उन्हें कभी भूल कर भी टीका नहीं लगवाना चाहिये। यदि किसी कारण टीके में घाव हो जायें तो शीतल जल से धोकर बोरिक एसिड लगा देना चाहिये इससे घाव अच्छा हो जायगा।

यह रोग कीटाणुजन्य नहीं अपितु वायु जनित है क्योंकि इस रोग का विष श्वास द्वारा आरोग्य मनुष्य के शरीर में प्रवेश करता है इस लिये शीतला के रोगी को पृथक् किसी ऐसे दूसरे कमरे में रखना चाहिये जिसमें विशुद्ध वायु के

आने जाने का प्रबन्ध हो परन्तु प्रकाश अधिक न हो।

जो मक्खियां शीतला के पीप पर बैठ कर बाजार की मिठाइयों अथवा घर के खाद्य सामग्रियों पर बैठ जाती हैं उनके खाने वालों को यह रोग हो जाता है इस कारण रोग के दिनों में बाजार की मिठाइयां कभी भूल कर भी नहीं खानी चाहिये और घर की खाद्य सामग्रियों पर मक्खियों को न बैठने देना चाहिये।

यह अत्यन्त संक्रामक रोग है इस रोग का विष दानों एवं खुरन्टों तक ही सीमित नहीं है अपितु रोगी से सम्पर्क रखने वाले कपड़ों खिलौनों प्यालों में भी इसका विष पाया जाता है इस कारण रोगी से सम्पर्क रखने वाली वस्तुओं को किसी दूसरे बालक को न देनी चाहिये क्योंकि इससे दूसरे बालकों को भी रोग हो जाता है रोगी के कमरे में चित्र आदि न धुलने वाली वस्तुयें न रखनी चाहिये क्योंकि ऐसी वस्तुओं के संसर्ग से अन्य व्यक्तियों को भी रोग होने की सम्भावना बनी रहती है।

यह रोग अधिकतर मक्खियों द्वारा ही फैलता है इस कारण रोगी के शरीर पर मक्खियों को न बैठने देना चाहिये दरवाजे पर चिक या पर्दा डाल देना चाहिये जिससे मक्खियां रोगी के समीप न पहुंच सकें रोगी की परिचर्या के लिये एक ही व्यक्ति को उसके समीप रहना चाहिये और परिचर्या करने वाले को बड़ी पवित्रता तथा सावधानता से रहना चाहिये क्योंकि रोगी के स्पर्श एवं पीब खुरन्ड आदि के लगने से दूसरों को भी रोग हो जाया करता है।

डाक्टरी मतानुसार शीतला में ज्वरकी अवस्था में दूध, साबूदाना, अरारोड, डबलरोटी, आदि पथ्य देना चाहिये और पीने के लिये शीतल जल देना चाहिये शीतला के दानों के पकने पर दूध तथा पुराने चावल देना चाहिये।

यदि मुख तथा किसी शरीर के किसी भाग में अधिक दाने निकलें तो घी लगाने से दर्द व सूजन शांत हो जाता है।

हाथ पैरों में अधिक जलन होने पर जल से कपड़ा भिगोकर बांध देना चाहिये।

गोले का तेल और चूने का पानी किसी शीशी में मिला कर पिड़िकाओं पर लगाने से विशेष लाभ होता है।

शीतला के रोगी को दूध, घी, तैल, मांस, मछली, गुड़, चटपटे, खट्टे, नमकीन, गुरुपाक, रूक्ष तथा गरम पदार्थों का सेवन तैल मालिश तथा शीतल वायु, चन्दनादि लेप, स्नान, क्रोध, चिन्ता, मैथुन, वमन विरेचन आदि अपथ्य हैं।

यदि रोगी नमक के लिये विशेष आग्रह करे तो सैन्धा नमक दे देना चाहिये वह भी बहुत कम मात्रा में देना चाहिये क्योंकि नमक खाने से खुजली अधिक होती है।

शीतला में उष्ण तथा शीतल पदार्थ अधिक प्रयोग करना हानिकारक है क्योंकि अधिक उष्ण वस्तुओं के प्रयोग से दाने अच्छी तरह नहीं निकलते जिससे रोगी को अधिक कष्ट होता है और शीतल वस्तुओं के अधिक प्रयोग से कास आदि हो जाती हैं।

होलिकोत्सव पर बालकों को अनविधे मोती तथा भुना हुआ गोला (नारियल) खिलाने का

परम्परा गत नियम है वास्तव में इस नियम के पालन करने से प्रायः शीतला का प्रकोप नहीं होता।

शीतला के दिनों में केवल गोला (गरि) बच्चों को खिलाने से शीतला का प्रकोप नहीं होता, दूध पीने वाले बच्चों को शीतला के प्रकोप बचाने के लिये गोला उनकी माताओं को खिलाना चाहिये।

चेचक के दिनोंमें नीम की कोंपल कालो मिर्च के साथ घोंट कर पीने से चेचक का प्रकोप नहीं होता।

बाम्ना का स्वरस मधुके साथ चाटने से शीतला कम निकलती है।

पूर्व रूप में नीम के पत्ते और हल्दी सम भाग लेकर पानी में पीस कर शरीर पर लेप करने से फुन्सियां नहीं निकलतीं।

पथ्य आदि का समुचित प्रबन्ध होना ही इस रोग से बचने का पर्याप्त साधन है इसमें किसी विशेष चिकित्सा की आवश्यकता नहीं इससे बचने का सुलभ उपाय स्वच्छता तथा एक मात्र चिकित्सा, सतर्क शुश्रूषा है।

भारत धर्म प्राधान्य देश है इसी लिये हमारे प्राचीन परम्परागत नियमों में कुछ न कुछ वैज्ञानिक रहस्य अवश्य ही छिपा हुआ है, क्योंकि भारतीय धर्म के नाम से उस कार्य को बड़ी सतर्कता से नियमित रूप से कर लेते हैं। और उसमें किसी प्रकार की त्रुटि नहीं होने देते यही कारण हमारे शीतला के उपचार में है क्योंकि देवी का प्रकोप मानने के कारण उन नियमों को बड़ी ही सतर्कता से पालन करते हैं कहीं देवी अधिक रुष्ट न हो जाय।

जिस परिवार में शीतला का प्रकोप होता है उस परिवार के व्यक्तियों को नमक, हल्दी, तेल, घी के बने पदार्थ, शाक आदि न खाने का परम्परागत विधान है तथा गोबर से लीप कर सुगन्धित द्रव्यों की धूप देने, लौंग का पानी छिड़कने और नीम के पत्तों से हवा करने आदि में वैज्ञानिक रहस्य छिपा हुआ है क्योंकि रोगी को हल्दी देने से उसके शरीर में उष्णता और बढ़ेगी, नमक देने से खुजली और होगी, दूध, घी, तेल, देने से शीघ्र पककर सूखने में बाधा पड़ेगी। इसी कारण ऐसी वस्तुओं के सेवन का निषेध कहा गया है परन्तु सम्पूर्ण परिवार को यह नियम इस कारण पालन करना पड़ता है कि रोगी घर में जिन वस्तुओं को देखेगा उनको अवश्य मांगेगा इसलिए यह नियम सारे परिवार को मानना पड़ता है और अभी तक चला आ रहा है।

गोबर में फिनाइल के समान विषैले कीटाणुओं के मारने की शक्ति है इस कारण लीपने का विधान है सुगन्धित द्रव्यों की धूप देने तथा लौंग का पानी छिड़ने से शीतला की विषैली वायु विशुद्ध होती है नीम की पत्तियों के पंखे बनाकर रोगी की हवा इस कारण की जाती है कि इसकी वायु शीतल होती है इस कारण रोगी को शान्ति मिलती है तथा मक्खियां नहीं बैठने पातीं और वायु शुद्ध होती है।

वास्तव में शीतला के रोगी के लिये नीम के समान सुलभ और अव्यर्थ कोई दूसरी औषधि नहीं, नीम शीतला में अमृत के समान अपना प्रभाव दिखलाता है और मरते रोगी को भी बचा

लेता है आयुर्वेद के मतानुसार टीका के समान प्रभाव दिखाने वाला नीम है, इसके सेवन करने वाले के पहिले तो शीतला निकलती ही नहीं है यदि किसी कारणवश निकलती भी है तो अधिक कष्ट नहीं देती क्योंकि लिखा है:—

रसो निम्बस्य मंजर्या पीतश्चैत्रे हितावहः।
हन्ति रक्तविकारञ्च वात पित्त कफं तथा॥

चैत्र मास में नीम का लाल २ कोपलें पानी में घोंट कर पीना हितकारक है, इसके सेवन से वात, पित्त, कफ, जनित रोग तथा रक्त विकार शांत होता है।

यदि शीतला में उपद्रव न हो तो उस दशा में कभी भूलकर भी औषधि देने की आवश्यकता नहीं है क्योंकि बिना उपद्रव के शीतला नियमानुसार बिना कष्ट के स्वयं ही शांत हो जाती है यदि रोग उपद्रव युक्त हो और रोगी को अधिक कष्ट हो तो अवश्य चिकित्सा करानी चाहिये परन्तु इस दशा में भी केवल नीम के ही प्रयोग से आशातीत लाभ होता है।

रोगी के कमरे में नित्य नये नीम के पत्तों को मंगाकर स्थान २ पर रख देना चाहिये तथा कमरे के दरवाजे पर नीम की बन्दनवाल बांध देनी चाहिये। यदि रोगी को अधिक दाह (जलन) हो तो रोगी के नीचे नीम के पत्तियोंको बिछा देना चाहिये और रोगी के ऊपर पत्तियों का मंडप सा बना देना चाहिये तथा परिचायक को नीम की पत्तियों का चमर बना कर उससे रोगी को हवा करना चाहिये।

यदि रोगी को तृषा अधिक बढ़ जाय तो नीम की पत्तियों का औटाया हुआ पानी देना चाहिये यदि रोगी यह जल न पिये तो नीम की छाल को जलाकर उसका बुझाया हुआ पानी देना चाहिये।

यदि रोगी के छालों में अधिक जलन हो तो नीम की कोपलों को पीस कर उसका लेप कराना चाहिये।

यदि दाने अच्छी तरह न निकले हों तो नीम की लाल २ पत्तियां पीस कर पिला देनी चाहिये।

यदि दाग अधिक गहरे हो गये हों तो नीम का तैल लगाना चाहिये। अस्तु, शीतला का कोई भी उपद्रव हो नीम के उपयोग से तत्क्षण शान्त हो जाता है।

यदि किसी रोगी को उसकी सान्त्वना के लिये औषधि देने की आवश्यकता पड़े तो एक भाग पिसे हुये मोती और उसमें दो भाग सत गिलोय मिलाकर देना चाहिये।

शीतला के पक जानेपर दानों में खुजली अधिक होती है परन्तु ऐसी दशा में खुजलाने से घाव हो जाते हैं और सूखने पर बड़े २ दाग पड़ जाते हैं।

खुरन्ट छुटने पर कपूर मिलाकर तिलका तैल या नारियल का तैल मलना चाहिये।

खुरन्टों के छूट जाने पर नीम के पत्तों का पानी उबाल कर रोगी को स्नान कराना चाहिये और शरीर पर धुली हुई तिली का तैल मलना चाहिये।

रोगी के आरोग्य होने पर उसके अच्छे कपड़ों को उबलते हुये पानी में डालकर धो डालना चाहिये और पुराने कपड़ों को जला देना चाहिए तथा चारपाई आदि को धूप में डाल देना चाहिए।



Wasting in infants.

बच्चों का सूखा रोग

(Dr. B.D Jain, L.M.S.,S.A. (Lond.) Sadar Bazar, Dipnty Ganj, DELHI.)

It may be defined as a condition in infants in which 'presenting symptom' is loss in weight; signs of organic disease being inconspicuous or altogether absent. Wasting occurs more commonly during first 6 months of infants' life.

The chief couses of wasting are.

1. Starvation.

(a) Mere underfeeding either from ignorance or carelessness may be the cause of wasting—such as giving too small feeds or giving greatly diluted milk, condensed or cow's milk.

Inability to suck.

(b) From some mechanical difficulties such as hare-lip, facial paralysis, nose blocking, weakness, such as in premature infants—babies born before the normal term of 9½ months.

Or if suckling is too painful such as from stomatitis.

Or if the hole in the teat is too small.

A mother complained of loss of weight in a baby one month old & weighing 6 lbs.

He was being artificially fed. The slight modification in the diet did not prevent loss in weight. In the first week, he lost 2 ounces & in the

इस बीमारी की खास जाहिरी अलामत हैं, वज़न में कमी का होना, खास बीमारी की अलामतें या तो होती नहीं हैं और जो होती भी हैं तो बहुत कम, आम तौर पर यह बीमारी एक मास से ६ मास तक के बच्चों में पाई जाती है।

सूखारोग के ख़ास कारण

१-(अ) नावाकफियत या सुस्ती की वजह से बच्चों को कम ख़ुराक का देना-

जैसे कि कमती दूध का पिलाना या अगर ऊपर का दूध देते हों तो उसमें ज्यादा पानी का मिलाना।

(ब) चूसने की ताकत का कम होना-

इसके कई कारण हो सकते हैं जैसे होट का मोटा होना, मुंह पर फालिज का होना, नाक का रुका हुआ होना, अठमासा या सतमासा होने के कारण कमज़ोरी का होना, मुंह का आना, अथवा स्तन या चिटकने का सूराख बहुत छोटा हो तो भी बच्चा अच्छी तरह दूध नहीं पी सकता एक दफा एक महिला ने मुझे एक मास के बच्चे को दिखाया जिसे यह रोग था-बच्चे को डिब्बे का दूध दिया जा रहा था उसकी खुराक में तबदीली कर देने पर भी उसके वज़न में कुछ फर्क नहीं पड़ा, एक हफ्ते में उसका एक छटांक वजन कम हुआ अगले हफ्ते में फिर पौन छटांक वजन कमती हो गया। कोई खास कारण प्रतीत न होता

next there was further loss of 1½ ounces. On investigation no cause could be found. At last the feeding bottle was examined, the hole in the teat was found to be very small, which did not allow the child to suck sufficient quantity of milk. The old teat was replaced by a new one & the child gained weight rapidly one pound in 2 weeks.

II. Prematurity.

A baby born before the normal term of 9½ months, usually born at the seventh & eighths is a premature infant. They generally become wasted. There are several reasons for this

(a) They are too weak to suck properly so that they get insufficient quantity of food.

(b) Premature infant requires a large amount of food to maintain its body temperature which leaves no surplus for the purposes of growth.

(c) Such infants have feeble powers of digestion & possibly of essimilation.

III. Improper feeding.

This is a very common cause.

(a) By giving too small & too weak feeds.

(b) By giving too large & too strong feeds. So therefore a child will start gaining wt. when the amount or strength of feeds is reduced.

(c) By giving ill balanced mixture which is too rich in one of the

था। उसकी दूध पिलाने की बोतल देखने पर मालूम हुआ कि उसके त्रिटकने का सूराख़ बहुत छोटा है-एक नया त्रिटकना बदल दिया गया और बच्चे ने अगले दो हफ्तों में वजन में आध सेर तरक्की की।

२—सतमासी या अठमासी पैदायश—

जो बच्चे ९। मास की पूरी अवधि से पहले पैदा हो जाते हैं-खास तौर पर सतमासे या अठमासे बच्चे उनको यह रोग कई कारणों से हो जाता है।

(अ) उनमें दूध चूसने की ताक़त बहुत कम होती है।

(ब) सतमासे या अठमासे बच्चों को अपनी गरमी कायम रखने के लिए ज्यादा खुराक की जरुरत होती है और इसी कारण से उनकी सारी खुराक उनकी गर्मी कायम रखने में खर्च हो जाती है और उन्हें अपना वजन बढ़ाने के लिए खुराक नहीं रहती।

(ज) इन बच्चों के पचाने की शक्ति बहुत क्षीण होती है।

३—गलत खुराक—

यह आम कारण है।

(अ) बहुत कम या बहुत पतला दूध देना।

(ब) बहुत ज्यादा या बहुत गाढ़ा दूध देना। ऐसी हालत में मिक़्दार कम करने या दूध को जरा पतला कर देने से बच्चों का वजन बढ़ने लगता है।

(ज) का इस किस्मका दूध देना जिसमें फैट चर्बी (Fat) कारबो हाइड्रेट (Carbohydrate)

constituents of food, the commonest being the relative excess of fat.

IV Dyspepsia--

Dyspepsia is common either as cause or consequence of wasting.

The symptoms of dyspepsia may arise suddenly and end in cases of summer diarrhoea leading eventually to chronic wasting or more frequently dyspepsia comes on gradually as the result of the continued use of an unsuitable or ill balanced diet.

Some guide as to the nature of feeding error can be derived from a study of the stools.

(i) Excess of fat--

in the diet is the commonest starting point of a dyspepsia is indicated by constipated, pale, soapy stools which do not adhere to the napkin or cloth used for the purpose.

(ii) Excess of casein--

milk curd leads to vomiting of curd, passage of tough white particles in the stools which are insoluble in a mixture of alcohol & ether.

(iii) Suger--

which is most easily digested of all food constituents & least likely to lead to trouble, but if present in the food in amount which is beyond the infant's digestive capacity; the stools are apt to be loose, watery, acid & their passage attended by much flatulence. Usually all these types of

और प्रोटीन (Protein) गलत मिक़दार में मिले हुए हों-श्राम तौर पर गलती ज्यादा फट के होने के कारण होती है।

बदहज़मी

बदहज़मी के कारण सूखा रोग हो जाता है। और सूखा रोग होने के कारण बदहजमी हो जाती है।

कभी तो बदहज़मी शुरू में ही हो जाती है जोकि बढ़ते बढ़ते गरमी के दस्तों में तबदील हो जाती है और इसी कारणसे मरीज़ को सूखा रोग लग जाता है आम तौर पर यह बदहज़मी ठीक क़िस्म के दूध के न मिलने के कारण होती है। बच्चे को दूध ठीक किस्म का मिल रहा है या नहीं यह बात उसके दस्तों से मालूम की जा सकती है।

१—दूध में चिकनाई जैसे मक्खन वगैरा (Fat) की ज्यादती से आम तौर पर बच्चों को बदहज़मी ज्यादह हो जाती है-ऐसी हालत में दस्त पीला-पीला और चिकना (Soapy) होता है। बच्चों के पोतड़े या नेपकिनके साथ चिमटता नहीं है और फटा-फटा होता है बच्चे को क़ब्ज भी होता है।

२—कैसीन (Casein की ज्यादती से बच्चे दूध गेरने लगते हैं दस्त में सख्त सफेद-सफेद ज़र्रे नज़र आते हैं इन ज़र्रों को अगर अलकोहल ईथर) (Alcohol & ether)के मिक्सचर में घोला जाय तो नहीं घुलते।

३—बूरा (Sugar)सबसे जल्दी हज्म होने वाली चीजहै इससे बच्चोंको तकलीफ़ कम ही होती है मगर अगर यह भी दूध में ज्यादह मिक़दार में

dyspepsia are mixed up.

V. Primary or Ideopathic wasting.

A wasting in which no apparent cause can be found for the wasting. There is nothing wrong with food, there are no signs of dyspepsia but the child simply wastes.

Such cases are commonest in very young babies, often the patient is the youngest child of a large family or is a twin or illegitimate. This seems to be a case of true assimilation but why it fails is not quite known. (Its true nature has baffled all investigation).

VI Organic causes.

(Causes of wasting which are in the organs of the body.)

Any organic disease is apt to be attended by wasting as one of its consequences, but here we are only concerned with cases in which wasting is the most obvious symptom & the signs of organic disease are inconspicuous or altogether absent. In this connection, one first thinks of the great wasting disease of childhood. Tuberculosis rectal however it is not common during first 6 months of infancy when wasting usually occurs; besides it has physical signs chest, abdomen or glands. Tuberculosis is most to be suspected when there are no signs of digestion derangement & when rectal temperature is persistently high.

हो तो बच्चों को पतले पतले जोरदार दस्त होने लगते हैं और उनके साथ हवा ज्यादह खारिज होती है।

आम तौर पर यह सब किस्म की बदहज़्म मिली हुई होती है।

एक खास किस्म का सूखा रोग—

बाज मर्तबा ऐसा होता है कि कोई खास मर्ज़ ज़ाहिर नहीं होता-खूराक भी ठीक मिलती है बद-हज़्मी भी नहीं होती मगर फिर भी बच्चा सूखता जाता है।

आम तौर पर यह बीमारी उन बच्चों में पाई जाती है जो या तो ऐसे माता पिता से पैदा हुए हों जिनके उससे पहले बहुत सी संतानें हो चुकी हों या जोड़ले हुये हों और या नाजायज संतान हो। इन हालतों में हाज़मा बिलकुल ठीक होता है फिर भी बच्चा क्यों सूखता जाता है यह बात अभी विज्ञान द्वारा निरधारित नहीं की जा सकी है।

जिसमानी वजूहात (Organic causes)

(सूखा रोग के कारण जो जिस्म के हिस्सों में मौजूद होते हैं।)

जिस्म के किसी भी हिस्से में कोई खास बीमारी हो तो वह सूखा रोग का कारण हो सकती है—(लेकिन यहां पर हम केवल उनही हालतों पर विचार कर रहे हैं जहां रोग का खास लक्षण बच्चे का सूखते जाना है और जहां कोई दूसरी जिसमानी बीमारी प्रतीत नहीं होती) इस सिल-सिले में सबसे पहली जिस्मानी बीमारी जिस पर खयाल जाता है वह है राजयक्ष्मा (Tuberculo-

VII congenital syphilis

Amongst the causes of wasting it is comparatively rare. Syphilitic taint may interfere with nutrition & childre, with syphilitic taint will improve remarkably when they are put on grey powder.

VIII. Diseases of lungs.

Such as chronic broncho-pneumonia latent empyema. The former may be afebrile only a few moist sound of doubtful singificance might be detected with the stethoscope which would suggest it.

Careful percussion would detect dullness which would suggest empyema

IX. The other organic cause is conge-heart disease.

The stethscope would detect murmurs overlaps & these the signs of heart disease. In a few cases heart-disease occurs without murmurs. In some obscure manner it (heart-disease) interferes with nutrition & leads to wasting.

Complication's

The wasted infants are prone to infections such as boils, abscesses, tuberculosis, B Coli infections intestive enteritis broncho pneumonia. acidosis nephritis & idiopathic oedema dehydration—drying of water from the system.

Prognosis

Or Outlook on life is always

sis Rectal) लेकिन यह रोग . मास तक के बालकों को आम तौर पर नहीं होता है और सूखा रोग इन्हो ६ मास तक के बालकों को होता है— और अगर यह रोग उन्हें होता भी है तो फेफड़ों पेट और ग्रन्थियां (Glands) से पता लग जाता है। राजयक्ष्मा का ख्याल उन्हीं बच्चों में करना चाहिये जिनमें हाजमें की कोई खराबी ना मालूम होती हो और जहां उनकी गुदाई हरारत (Temperature) बराबर ज्यादह रहती हो।

पैदाइशी आतशक Congenital Syphilis

सूखा रोग के कारणों में से एक यह भी कारण हो सकता है—परन्तु यह आमतौर पर बहुत कम होता है। आतिशक का माद्दा होने की वजह से बच्चा अपने वजन में तरक्की नहीं कर सकता। जिन बच्चों में पैदाइश से आतशकी माद्दा हो, जो अगर उन्हें ग्रे पाउडर (Grey Powder) दिया जावे तो वह बहुत अच्छी तरक्की करते हैं।

फेफड़ों के रोग

फेफड़ों की झिल्ली में मवाद (Latentemp.-mea) पड़ जाने से और सांस लेने की न. में खराश होजाने से (Brancho Pneumonia) भी यह रोग हो जाता है और स्टेथिसकोप (Stehescope) की नली द्वारा प्रतीत की जासकती है।

दिल का रोग Hert Disease

यह बीमारी स्टैथिस Stethescope) द्वारा प्रतीत हो सकता है। दिल के ऊपर और नीचे के हिस्से से उसकी आमी ऐसी आवाज़ सुन-

doubtful even when everything is going on well, a sudden collapse occurs & proves fatal, on the other-hand sudden & spontaneous improvement may occur at any moment even in worst cases. More frequently there is a gradual improvement chickend by many relapses improvement occurs rapidly after teeth are out.

Treatment.

The treatment of a wasting infant requires great patience & resource on the part of physician & nurse. The treatment is both hygienic & dietetic.

Hygienic.

Freshair, sunshine cleanliness, warmth, especially keeping feet & legs warm & are all great aids to success. Good mothering is also important the infant wants plenty of cuddling & amuzing. Great-care should be taken to see that the wasting infant does not get chilled when being washed. Next comes the important question of feeding.

Feeding is very great importance. Overfeeding does much greater harm than underfeeding. One must not be too eager of increasing weight. Mothers and Nurses are great offenders in this respect.

Once a mother took into her head fatten her 4 months baby too quickly. She started feeding the baby on butter—unknown to other members of the family. The baby

चानी जा सकती है। कभी कभी यह रोग बिना इस आवाज के भी हो जाता है। दिल के रोग खुराक के पाचन में बाधा डालकर सूखा रोग के कारण होते हैं।

सूखा रोग की और बाधायें Complications

सूखा रोग के बच्चों को छूत के रोग भी हो जाया करते हैं जैसे—फुन्सि, फोड़े, तपेदिक़, आंतों की सूजन (Infective Entritis) सांस की नली में खराश का रोग (Broncho Pneumonia) जिस्म की सूजन तथा जिस्म में दस्त व कै से पानी की कमी होना (Dehydration) इत्यादिक।

नतीजा (Prognosis)

इस रोग का आराम होना संदेहात्मक होता है मरीज को ठीक चलते २ एकदम कोई ऐसी बाधा हो जाती है जो उसके जीवन को कठिन बना देती है। लेकिन इसके साथ यह भी बात है कि ठीक औषधि के उपलब्ध होने पर खराब से खराब रोगी भी बहुत जल्द आराम होते देखा गया है।

आमतौर पर रोगी धीरे धीरे तरक्की करता है और इसी दरम्यान में उसे कई बाधाओं को भी लांघना पड़ता है। जब पहले दांत निकल आते हैं तो बच्चे को बहुत जल्द ही आराम होना शुरू हो जाता है।

इलाज—

सूखा रोग से पीड़ित बालकों के इलाज करने वाले और उसकी सेवा शुश्रूषा करने वालों को

got severe diarrhoea. He was passing 12-13 motions a day—nearly all blood with some mucous. The milk was stopped, the child was starved for one day only Glucose water 7% was allowed during this starvation period The diarrhoea abated and the baby gradually recovered. Later his mother confessed to me that she had been feeding him on butter to fatten him.

It is a common and a grave mistake to get the baby to put on weight too quickly, by various devices. This has just the opposite effect and not unoften endangers the life of the baby.

Feeding should be changed reluctantly cautiously Before starting a new food it is well to clear out the bowels with a small dose of castoroil—half tea spoonful made into emulsion and to stop all food if acute symptoms of intoxication have supervised (Glucose and water being allowed) for a few hours, at most for a day but not for too long as wasted infants do not stand starvation well, for long. Glucose and water for one day, Whey and Barley water next day. Then gradually put on milk too. In case the food is rich in sugar it should not be reduced too rapidly or collapse will occur. Breast milk is the best food in most cases ; but in case artificial milk is to be given, one should be selected which is rather poor in fat, rich in carbohydrates and whose protein is in digestible form (that it forms fine curds of casein.

(Nursing) उसकी देख रेख तथा इलाज बहुत इतमीनान और सोच समझकर करना चाहिए।

इलाज में सफाई और खुराक पर खास ध्यान देना आवश्यक है।

सफाई —साफ हवा, सूर्यकी रौशनी, जिस्मानी-सफाई, काफी गरमी, मक्खी तथा मच्छरोंसे बचाव हाथ और पैरों का गरम रखना इत्यादिक बालक को अच्छा होने में बहुत मदद देते हैं। मां को खास अहतयात की जरूरत है। बच्चे को जहां तक हो सके खुश रखने की कोशिश की जाए। सूखा रोग से पीड़ित बालक को निहलाते वक्त ठंड नहीं लगनी चाहिए।

अब खूराकका सबसे जरूरी सवाल आता है -

खुराक—

माताओं तथा देख रेख करने वालों को यह बहुत खयाल होता है कि हमारा बच्चा बहुत जल्द मोटा हो। जिसके परिणामस्वरूप वे उसको बहुत ज्यादा दूध पिलाने लगते हैं। यह बात खास ध्यान रखने वाली है कि बच्चे ज्यादातर खुराक की बहुतायत से बीमार होते है नकि कमी की वजह से।

एक दफा एक माता को यह सूझी कि वह अपने चार महीने के बच्चे को खूब मोटा करे। उसने उसे छिपे छिपे मक्खन खिलाना शुरु कर दिया। नतीजा यह हुआ कि बच्चे को दस्त लग गए और दिन में १२-१३ दस्त होने शुरु हो गए और दस्तों में बहुत ज्यादह खून व आंव (murcus) आनी शुरु हो गई-बच्चे का दूध एक रोज के लिए बिलकुल बन्द कर दिया गया सिर्फ ग्लोकोज वाटर (glucose) थोड़ी थोड़ी मिकदार में

The following two are good digestible.

1. Sweetened condensed milk: 2 drachms—3 ounces of water.

2. half cream dried milk Cow & Gate:

One drahm of half cream milk to one ounce of water.

If stools contain excess of fat which indicates severe fat indigestion, the baby should be fed on whey with Mellin's food. If digestion of casein is at fault—by the presence of indigested curds in stoolsfully peptonized milk 2 gr. to one ounce of milk citrated milk— (2 gr. Soda Citras to ounce of milk) or dried milk should prevent it. In less common cases of sugar indigestion and intoxication the socalled protein milk is often very useful.

As to size of feeds and intervals feeds should be smaller, intervals not too large in proportion to wasting and exhaustion that is, more wasted and exhausted the child, the smaller and more frequent feeds should be given 3 hours.

Drugs.

are not of much use in wasting except to meet certain special indications, such as Colic flatulence etc.

Grey powder does good even if there is no syphilitic taint—possibly by correcting constipation or by stimulating digestive secretions.

Spirits Vinum Gallici is also helpful in cases where there is much exhaustion with subnormal temperature. It is a common custom to anoint wasting

दिया गया दस्त आने बन्द हो गए और बच्चा धीरे२ ठीक होता गया, अन्त में उसकी मां ने मेरे सामने यह क़बूल किया कि वह उसे मोटा करने के लिए मक्खन खिलाती थी।

यह एक आम ग़लती है कि बच्चों को मोटा करने के लिए बहुत से साधनों का उपयोग किया जाता है इसका बिलकुल उलटा परिणाम होता है और कभी २ बालकों की जान तक का खतरा हो जाता है।

खुराक तबदील कर देनी चाहिये और नई खुराक देने से पहिले बच्चे का मेदा थोड़े थोड़े अरंडी के तेल के ऐमुलशन (castoroilemulsion) से साफ़ कर लेना चाहिये और हालत खराब मालूम हो तो कुछ घंटों के लिए दूध को रोक देना मुनासिब है। सूखा रोग के बच्चों को एक दिन से ज्यादा भूखा नहीं रखना चाहिये क्योंकि वह इससे ज्यादा बरदाश्त नहीं कर सकते एक दिन केवल ग्लूकोज़ या जौं के (Glucose or Barle) पानी पर रखने के पश्चात बच्चे को धीरे धीरे दूध देना चाहिये।

अगर पहले बच्चे को दूध में ज्यादह बूरा मिलती रही हो तो इस बूरा को एकदम नहीं घटाना चाहिये वर्ना नुकसान होता है मां का दूध बच्चे के लिये सर्वोत्तम खुराक है लेकिन अगर बच्चे को ऊपर का दूध देना पड़े तो ऐसा दूध देना चाहिये जिसमें (fat) कमती मिकदार में Carbohydrate ज्यादह मिकदार में और (Protain) ऐसी किस्म का होना चाहिये जो जल्दी हज्म हो जाय इस किस्म का दूध अच्छा होता है।

मीठा सुखाया हुआ-दूध (Sweet and Co-

babies with codliver oil, but it is a very dirty practice and highly objectionable, the child can hardly obtain any appreciable amount of nourishment by such a method at the most it can help in retaining some degree of heat Almond Oil would be much less offensive, and could retain that as effective as Codliver Oil, whilst adequate clothing is more effectual than codliver or almond Oil.

Some hints for mothers in the management of the babies.

1. Breast milk is the best of all milk foods. Artificial feeding should only be resorted to unless mother's milk is insufficient for the baby or mother is too weak to suckle it.

2- Feed the baby regularly every 3-4 hours, nothing should be given in between. It would be much better for mother and the baby's digestion if the last feed were given at 10 P. M. and nothing during the night. The next feed should commence at 4-0 or 5-0A.M. when the baby awakens. After a few days the baby will sleep quickly and let the mother sleep peacefully too.

3. After each feed the child should be made to lie down for half an hour but not moved about in the arms.

4. Do not keep the baby always in arms, but let it lie on the cot for most

ndense) माशे दूध डेढ़ छटांक पानी में मिला कर या आधे मक्खन वाला सुखाया हुआ दूध

(Half cream Dried Milk)

६ माशे दूध एक छटांक पानी में मिलाकर अगर दस्तों से (Fat) की ज्यादती मालूम हो तो बच्चों को मेलिन्स फूड़ (Mellins Food) अच्छा रहता है अगर दस्तों से कैसनि (Cassein) की ज्यादती मालूम हो तो दूध में २ रत्ती फी छटांक के हिसाबसे सोडियम सिटरेट (Soda Citrate) मिला देने से यह शिकायत दूर हो जायगी।

दूध की मिकदार और देने का समय बच्चे की सेहत पर निर्धारित है जितना ज्यादह कमजोर बच्चा हो उतना ही थोड़ा थोड़ा दूध ज्यादह दफा देना चाहिये और जितना मजबूत बच्चा हो उतना ही ज्यादह दूध कमती दफा देना चाहिये आम तौर से कमजोर बच्चों के लिये यह समय दो से तीन घंटे तक का होना चाहिये।

दवाइयां—

सूखा रोग में दवाइयां ज्यादा मदद नहीं करती है बल्कि यह सूखा रोग की बाधाओं को दूर करने के काम में लानी चाहियें ग्रे पाउडर(Grey Powder) एक बहुत अच्छी दवा है-चाहे बच्चे को आतशकी मादा न भी हो तो भी यह कब्ज को दूर करके और हाजमे को दुरुस्त करके बच्चे को बहुत फायदा पहुंचाती है।

जब बहुत कमजोर और थका हुआ हो तो (Spt. Vinum Gallicii) बच्चों को फायदा पहुंचाती है।

आम तौर पर डाक्टर लोग बच्चों को कोड-लिवर आयल (Cod Lwer Ail सूखा रोग में मालिश करने को बताते हैं यह फजूल बात है क्योंकि यह बहुत बदबूदार

of the time during the day, otherwise, it will form a habit and would always like to be nursed in the arms, which would be very inconvenient for the mother.

5. Baby's feet should be kept warm and free from dampness especially in cold, damp weather.

6. The baby should not be clothed too heavily as heavy clothes hinder the child's breathing.

7. Avoid the baby catching chill or cold while being washed.

8- Let the child sleep 3-4 hours during the day and let him sleep early at night -7-0 P.M. as an infant requires mostly 2 things eating and sleeping.



होता है। इससे सिर्फ बच्चे की थोड़ी सी गरमी कायम रहती है। बादाम रोगन भी यह काम कर सकता है। और इसमें बू बिलकुल नहीं होती और उतनी ही गरमी क़ायम रखता है परन्तु ठीक वस्त्रों का पहनाना कौ डलिवर आयल या बादाम रोगन से ज्यादह फ़ायदा करता है।

माताओं के लिए कुछ हिदायतें

१--माता का दूध सब दूधों से अच्छी खुराक है। ऊपर का दूध सिर्फ उस ही समय देना चाहिये जब मां को दूध कम आता हो या नहीं आता हो और या मां बहुत कमजोर हो।

२--बच्चे को दूध हर ३-४ घंटे के बाद देना चाहिये। आखरी दफ़ा रात को १० बजे दूध देकर फिर सुबह चार पांच बजे से शुरू करना चाहिये। इससे मां और बच्चा दोनों सुखी रहते हैं।

३-- दूध पिलाने के बाद आध घंटे तक बच्चे को लेटे रहने देना चाहिये। और गोदी में लेकर खिलाना नहीं चाहिये।

४--जहां तक हो सके बच्चे को गोदी की आदत न डालो और पालने में या खाट पर लेटने दो। वरना आगे जाकर इससे बड़ी दिक़्क़त होती है।

५--बच्चे के पैरों को गरम रक्खो। ठंडा और गीला होने से बचाओ। बरसाती हवा और मच्छरों से बचाओ।

६--बच्चे को बहुत भारी और बहुत ज्यादह कपड़े मत पहनाओ। इससे उसकी सांस लेने की क्रिया में बाधा पहुंचती है।

७--निहलाते वक्त खास ख्याल रक्खो कि बच्चे को हवा न लगे।

८--बच्चे को जहां तक हो सोने दो क्योंकि बच्चे की तरक्की के लिये नींद और खुराक की ही ज्यादह जरूरत होती है।

हाइड्रोकफल्ज Hydrocephalus
मास्तिष्कजलसंचय

(लेखक श्री वैद्यराज पं० महावीरप्रसाद जी संचालक आयुर्वेद सुधा)

बच्चों के दिमाग में दो प्रकार का दाह हुआ करता है (१) जो तन्दुरुस्त बच्चों को भी हो जाया करता है। (२) प्राय: सिकराफ्यूलस मिजाज (यक्ष्मा प्रकृति) के बच्चों को ही हुआ करता है। इनमें पहले को इनकैफलाइटिस (Incephlitis) कहते हैं और दूसरे को एक्यूट हाइड्रो कफल्ज कहते हैं।

(१) पहली क़िस्म का प्रदाह बच्चों को बहुत ही कम होता है। (२) दूसरी क़िस्म अर्थात एक्यूट के लक्षण लिखे जाते हैं इसके लक्षणों को तीन दर्जों में विभक्त करते हैं। (१) पहले दर्जे में बहुत सी अलामात दिमाग़ के कंजश्चन (खून के जमाव) की पाई जाती हैं। और बुखार रहा करता है। जिसके उतरने चढ़ने का कुछ निश्चित समय नहीं। बच्चा सुस्त और उसका मिजाज चिड़चिड़ा हो जाता है। चेष्टा करने में सुस्त मालूम होता है, रोजाना की खेल कूद उसे नहीं भाती, कभी २ तबियत में ऐसा हो जाता है कि खेलते २ एक दम रुक जाता है और दौड़ कर अपने सर को माता की गोद में छुपा लेता है और हाथ से सिर को पकड़ कर दर्द सर की शिकायत करता है, या सिर्फ यही कहता है कि मैं अब थक गया हूं और सोना चाहता हूं। कभी २ ऐसा होता है कि उसका सिर घूम जाता है। तब भोचक्का सा खड़ा रहकर इधर उधर ताकता रहता है, जब यह लक्षण खतम हो जाते हैं, तब या तो रो देता है या होश में आकर फिर खेल में लग जाता है। यदि नन्हा बच्चा हो तो मां की गोद में खांस खांसकर लिपट जाता है। जो बच्चे चल फिर सकते हैं वे चलते वक्त अपने एक पांव को घसीट कर और रुक २ कर चलते हैं। मन्दाग्नि रहता है, कभी २ खेलते २ एक दम खाना मांग बैठता है, भोजन देने पर इनकार कर देता है। कभी २ खाते वक्त उबकाईयां आती हैं, और क़ै करना चाहता है, प्यास कम होती है, बाज दफ़े खाने पीने दोनों से ही नफ़रत होती है कभी २ तो सिर्फ खाने के बाद ही क़ै कर देता है। कभी खाली पेट भी क़ै हो जाती है। जिससे सब्ज रंग की रतूबत निकलती है। पर इस वमन से कुछ भी फायदा नहीं होता, यद्यपि दिन में दो तीन बार से ज्यादह क़ै नहीं होती लेकिन कई रोज तक बराबर होती रहती है। सिर भारी उसमें दर्द ज्यादा होता जाता है, पेट बिगड़ा रहता है क्योंकि शुरू ही से कब्ज रहता है। पाखाना कम भिन्न २ रंग का बदबूदार होता है, जिसमें पित्त कम निकलता है, जबान के किनारे और नोक सुर्ख होते हैं बीच का हिस्सा सफेद होता है, नब्ज तेज और बेकायदा, बच्चा प्राय: निद्रा सी में पड़ा रहता है, बाज दफ़े दिन में २-३ बार सोना चाहता है, लेकिन बेचैन रहता है अच्छी प्रकार सो नहीं सकता, दांत पीसता है सोते समय आंखें खुली रहती हैं। जरा सी आहट या बिना कारण

ही खौफ खाकर चौंक पड़ता है। रात के वक्त बत्ती की रोशनी को बर्दाश्त नहीं होती, याद रहे कि ये सारे लक्षण एक ही बच्चे में नहीं पाये जाते। अगर मौजूद भी हों तो बराबर एक सा नहीं

जल मस्तिष्क (Hydrocephalus) हाइड्रोकफल्ज



(प्रो० डा० त्रिलोकीनाथ वर्मा के सौजन्य से प्राप्त)

यह कन्या पांच वर्ष की है, यह अभी अपने सहारे न बैठ सकती है, न खड़ी हो सकती है, बोल भी नहीं सकती, सिर कितना बड़ा है। गर्भाशय ही में रोग हो जाने से इसके मस्तिष्क के कोष्ठों में जल अधिक इकट्ठा होगया। मस्तिष्क फैल कर बड़ा होगया है, इसके साथ साथ खोपड़ी की सकती हुई हड्डियां भी फैल गई हैं, और खोपड़ी बड़ी होगई है, रोग असाध्य है।

रहते। बच्चे की हालत प्रति-क्षण बदलती रहती है। कभी खुश कभी सुस्त हो जाता है। यह दर्जा अक्सर ४-५ रोज तक रहता है। अगर उस समय रोग का निश्चय न होकर इलाज न हो सके तो द्वितीय अवस्था पर रोग पहुंच कर लक्षण प्रकट करता है तब यह असाध्य होता है, इस दर्जे में बच्चा बिल्कुल सुस्त और फिकरमन्द सा रहता है। बैठने की ताकत नहीं रहती प्रायः सोना ही चाहता है। आंखें अक्सर बन्द, माथे पर त्योरी चढ़ी रहती है, हिलने में तकलीफ होती है, जब तक बुलाया न जावे नींद में पड़ा रहता है। बातचीतें होश की करता है, लेकिन बहुत कम, मिजाज, चिड़चिड़ा और ठंडे सांस भरता रहता है या जोर २ से चीखें मारकर दर्द सरकी शिकायत करता है। जब रात आती है तब ये लक्षण बढ़ जाते हैं। इसीलिये कभी तो जोर २ से रोता है कभी बहकता है, नाड़ी निर्बल और आहिस्ता २ चलती है, कै बन्द हो जाती है। कब्ज बढ़ जाता है, पेट दब जाता है।

(३) तीसरा दर्जा—इसमें बच्चा ऐसा गाफिल हो जाता है कि उसे होश में लाना मुश्किल हो जाता है। बाज़ दफे कमेड़ा होकर बच्चा बिलकुल बेहोश हो जाता है। कमेड़े के वक्त शरीर के एक भाग में बनिस्बत दूसरे भाग के ज्यादह पेंठन होती है। कमेड़े के बाद एक हिस्सा या तो बिलकुल निश्चेष्ट हो जाता है। दूसरा भाग आप ही आप हरकत करता रहता है। कमेड़े के वक्तजिधर की तरफ पेंठन ज्यादह होती है, प्रायः वही भाग निश्चेष्ट होता है। जब यह तीसरा दर्जा पूरी तरह हो जाता है तो बच्चा एक पांव फैला देता है दूसरे

को पेट पर सिकोड़कर बेहोश चित्त पड़ा रहता है हाथ कांपते हैं। बच्चा अपने होठ और नाक को नोंचता रहता है यहां तक कि खून निकाल लेता है एक हाथ जननेन्द्रिय पर रखे रखता है दूसरे को अपने चेहरे और सिर पर फेरता रहता है। कभी सिर ठण्डा कभी गरम कभी चेहरा सुर्ख कभी फीका होता है। धमनीस्पन्दन अत्यन्त कमज़ोर होती है। आखिरकार हृदय पर हाथ रखने से ही नब्ज मालूम होती है। आंखों की पुतलियां स्थिर और फैल जाती हैं, बेहोशी की हालत में बच्चेका मुंह खुद ब खुद चलता रहता है मानो कुछ चबा रहा है या निगल रहा है। बाज़दफे एक ही कमेड़े में बच्चा चल देता है या ऐसी हालतमें कुछ दिनों तक जिन्दा रह सकता है। याद रखना चाहिये कि यह रोग जिस तरह वर्णन किया गया है उसी तरह हमेशा प्रकट नहीं होता प्रत्येक रोगी में कुछ न कुछ फर्क अवश्य मिलता है। जैसे किसी के कमेड़ा सारे शरीर में होता है किसी के एक तरफ होता है। किसी को कन्वलशन के बाद फालिज हो जाता है किसी के हाथ पांव खिचकर सिर्फ ऐंठते ही रहते हैं। कोई बीमार हफ्तों तक बेहोश पड़ा रहता है कोई जल्द मर जाता है। लेकिन ऐसी भिन्नता से रोग निर्णय करने में कोई कठिनाई नहीं होती।

पूर्वरूप—

इस रोग के आरम्भ होने से महीनों पहले बच्चे की ताक़त घटती जाती है वह दुबला होता जाता है। कभी २ बुखार, खांसी, क्षुधानाश, प्रायः कब्ज़ रहता है, कभी २ हाथ पांव में दर्द, सिरमें दर्द की शिकायत करता है, दिन ब दिन हालत खराब होती जाती है। बुखार ज्यादह हो जाता है, बच्चा सुस्त हो जाता है, अब सिर के दर्द की शिकायत नहीं करता, यकायक किसी रात को बेचैन हो जाता है, कमेड़े आने लगते हैं, रोग ज़ाहर हो पड़ता है।

मृत्यु पश्चात् रोगी परीक्षा—

मृत्यु बाद दिमाग़ को खोलने से उसके परदे सफेद धुन्धले नज़र आते हैं और जर्द रङ्ग का लिम्फ (रतूबत) और दिमाग के परदों तथा अन्य अङ्गों में ट्युबर कल के छोटे २ दाने पाये जाते हैं दिमाग़ के खानों में खून का पानी पाया जाता है।

निदान—

कोई बच्चा खासकर तपेदिक (यक्ष्मा) रोगसे पीड़ित पिता माता के रज वीर्य से उत्पन्न हो बिना किसी प्रत्यक्ष कारण के हफ्ते या महीनों से बीमार हो और जब कभी वह निद्रा में या सुस्त मालूम हो खांसी की अधिकता हो ऐसी अवस्था में एक्यूट हाइड्रोकफलज की शंका करनी चाहिये। क्योंकि थोड़ी २ और लगातार खुश्क खांसी इस रोग के प्रारम्भ में प्रायः हुवा करती है। कभी २ क़ै(वमन) भी होती है, धमनीस्पन्दन में यदि कमीबेशी होतो इस रोग के पैदा होने में शक नहीं करना चाहिये। यह रोग प्रायः बच्चों में ५ साल से पूर्व ही पैदा होता है।

कारण—

यक्ष्मा की सम्भावना वाले बच्चों को प्रायः होता है दुबलापन, कष्ट से दांतोंका निकलना, सिर पर चोट वगैरा लगना, यकायक डरना, ज्यादह गुस्सा होना, ये सब एकसाइटिङ्ग (सन्निकृष्ट) कारण हैं।

यह बीमारी तीन प्रकार से शुरू हो सकती है, १—मस्तिष्क के लक्षण क्रमशः पैदा होते हैं। २—बिना किसी विशेष पूर्वरूप के एकदम सिर-दर्द, ज्वर और कमेड़े से यह रोग प्रारम्भ होजाता है। ३—यह रोग गुप्त रूप से इस प्रकार प्रारम्भ होता है कि चेचक के दूर होने के बाद या किसी और त्वचा रोग के अन्त में थोड़े २ लक्षण प्रकट होते हैं।

परिणाम—

इसका परिणाम भयंकर होता है, जब यह बीमारी किसी तन्दुरुस्त बच्चे को यकायक तीव्रता से हो जाती है। परिणाम कभी अच्छा भी निकल सकता है, परन्तु जब यह रोग क्रमशः या गुप्त रूप से निर्बल यक्ष्मा प्रकृति के बच्चों को होता है तो इसका परिणाम सदा बुरा ही होता है।

चिकित्सा—

इस रोगकी पूर्वावस्था में ही यदि उपयुक्त चिकित्साकी जावे तो बीमारी रुक सकती है, जब लक्षण पूर्णरूप से प्रकट हो जावें तो चिकित्सा से बहुत कम फायदा होता है। जिस प्रकार यक्ष्मा के रोकने की कोशिश की जाती है। उसी प्रकार इसमें भी कोशिश करते हैं। जिस वंश में इस रोग से पीड़ित होकर कई बच्चे पहले मर चुके हों या वे इस रोग की तरफ विशेष ग्राही हों, तो माता को चाहिये कि वह अपने बच्चे को दूध न पिलावें किसी तन्दुरुस्त धाय का दूध पिलावें और बच्चे को देहात में रक्खें। सर्दी से बचावें, भोजन सादा होना चाहिये, चिरकाल तक केवल बच्चे को दूध ही देते रहें, जब तक उसकी चार डाढ़ें और ऊपर नीचे के सामने के दांत न निकल आवें तबतक दूध देना बन्द न करें। खुली हवा का सेवन अत्यन्त लाभप्रद है। दांत निकलते समय बच्चे की रक्षा का ध्यान अवश्य रखना चाहिये, ताकि काली खांसी या चेचक की छूत न लग जावे। कब्ज न होना चाहिये। पेट की बीमारी को मामूली न समझा जावे,। फौरन ही एरण्डीका तेल या सनाय देकर पेट साफ करें, जब कभी सिर गरम और बच्चा बेचैन मालूम होवे फौरन एक दो ग्रेन कैलोमेल खिलाकर थोड़ा थोड़ी मात्रा में दें। जब तक खुलकर दस्त न आवें सल्फेट ऑफ मगनेशिया इस प्रकार खिलावें—सल्फेट ऑफ मगनेशिया २ ड्राम, सीरप ऑफ ऑरेंज, २ ड्राम, कैरवे वाटर ६ ड्राम सब को मिलाकर रखलें तीन साल के बच्चे को २-२ ड्राम देवें। ज्वर और कब्ज हो तो भी इसको ही देवें। विशेष जरूरत न होवे तो जोकें न लगावें, आवश्यकता पड़ने पर थोड़ी ही लगावें, क्योंकि यक्ष्मा प्रकृति बच्चों को खून निकलवाने की बर्दाश्त बहुत ही कम होती है। रोग से छूटने के बाद शक्तिदायक निम्न लिखित प्रयोग देवें—

इन्फ्यूजनकलाम्बे का क्वाथ २ औंस २ ड्राम इनफ्यूजन रवरब ४॥ ड्राम, टिंचर ऑरेंज्यशाई १॥ ड्राम सबको मिलाकर १ साल के बच्चे को दिन में दो बार ३ ड्राम की मात्रा में पिलावें। सिरदर्द की शिकायत बार २ होती हो तो गर्दन के पीछे सिटिन लगा देवें क्योंकि सिर के पास से पीप निकलते रहने से प्रायः हाइड्रोकफलज का दौरा रुक जाता है। यदि इस रोग के रोकने का अवसर ही न मिले तो इसकी चिकित्सा तीन

प्रकार से होती है ।

१—प्रथम खून निकालने से, २—मुसहिल (जुलाब) देना । ३—पारद के प्रयोग देना ।

(१) जिन बच्चों की यक्ष्मा प्रकृति हो उनके खून निकालनेमें बहुत सावधानी करनी चाहिये रोग की प्रथम अवस्था में जोंक द्वारा खून निकालें परन्तु दूसरे दर्जे के शुरु होने पर फिर खून न निकालें ।

(२) रेचन—

इस रोग में रेचन से बड़ा फायदा होता है । परन्तु खुलकर दस्त आना ही काफी नहीं है, किन्तु कुछ दिन तक दस्त बराबर आते रहना चाहिये । कब्ज दूर होने के बाद थोड़ी २ मात्रा में किसी रेचक औषधिको ४-४ या ६-६ घण्टे बाद खिलाना चाहिये । और कभी २ बस्ति कर्म भी करते रहना चाहिये ।

(३) पारद के प्रयोग—

ये पारे के प्रयोग भी विरेचक औषधियों के साथ ही देना उत्तम है । सिर पर ठण्डे जल का सिंचन करना भी लाभप्रद है ।

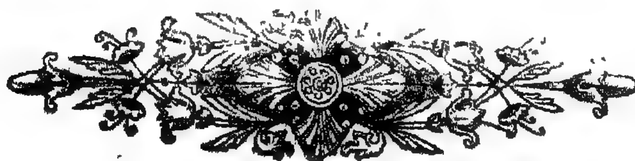
आहार—

जब लक्षण उग्ररूपमें हो, और जीमिचलाता हो, कब्ज रहता हो, ऐसी हालत में बहुत अल्प मात्रामें भोजन देना चाहिये । और बाद में भी बहुत ही हल्की गिजा जैसे साबूदाना देना चाहिये ।

अफीम—

जब यह रोग भयंकर रूप में हो और बच्चे को दीवाने की तरह जोश आ जावे । और रेचन औषधि देने पर दिमागी गरमी और चेहरे की सुर्खी दूर होगई हो और नब्ज भी जल्द और कमजोर चलती हो और फिर भी जोश दूर न हुवा हो तो अफीम के खिलाने से चैन पड़ जाता है और बच्चा सो जाता है । और जागने के बाद भी उसे आराम मालूम पड़ता है ।

और जब यह रोग उग्ररूप में न हो, परन्तु ज्यों २ बढ़ता जाता है, मरीज को प्रलाप, बेचैनी, और दर्द सिर की शिकायत होती जाती है, और उसकी रातें बड़े कष्ट से कटती हैं, उसे तेज इलाज को बिलकुल बर्दाश्त नहीं होती । अतएव इस अवस्था में जब और कोई चिकित्सा काम न दे सके तो अफीम की पूरी मात्रा देने से लाभ होता है ।



बच्चों के साधारण रोग तथा उनकी चिकित्सा

(लेखक—डा० कन्हैयालाल जैन चीफ मैडिकल आफिसर चिल्ड्रन फ्री डिस्पैन्सरी हौज काजी देहली)

यूं तो बच्चों की बीमारियां बहुत हैं परन्तु साधारणतया दो प्रधान हैं। (१) बदहज़मी (२) खांसी। अन्य दो प्रकार के रोग और हैं जिन्हें प्रधान मे गिन सकते हैं (१) लागरी, अर्थात शारीरिक कमज़ोरी (२) नाफहमी, अर्थात मस्तिष्क सम्बन्धी कमज़ोरी। इन्हें छोड़कर बच्चों को और कोई ऐसा ज्यादा खतरनाक मर्ज़ नहीं होता जिनके लिये उनके वारिसान उन्हें किसी चिकित्सक के पास ले जावें, ये ही चार प्रकार की बीमारियां प्रधान हैं जिनके इलाज के लिये किसी चिकित्सक की आवश्यकता पड़ती है। इन चारों रोगों पर एक एक पर एक एक विशाल मजमून लिखा जा सकता है परन्तु यहां हम बदहज़मी पर कुछ थोड़ा सा लिखेंगे।

अगर थोड़ी बहुत अहतयात की जावे और वर वक्त तशखीस की जावे और सही-सही इलाज हो तो बहुत-सी जानें बच सकती हैं, बदहज़मी की तीन खास अलमातें हैं (१) पेट का दर्द (२) क़ै और (३) दस्त का होना, जब कभी मातायें सिर्फ यह ही बयान करें कि बच्चा रोता है कोई नई बात नहीं बेवजह चीखना चिल्लाता है तो फौरन समझ लेना चाहिये कि पेट के दर्द की वजह से बच्चा बेचैन है बच्चे के रोने के और भी असबाब हैं मगर पेट के दर्द का रोना खास तरह का होता है जिनको बच्चों की बीमारियों का तजुर्बा है उनको तशखीश में दिक्कत नहीं होती। दोयम बच्चों का रोना सुनकर हर एक सिर्फ आवाज सुन कर ही पेट के दरद को पहचान सकता है इस दरद को खास पहिचानें हैं—

(१) जब बच्चा रोता है पेट पर घुटनों को सकोड़ लेता है, अगर पेट देखा जावे तो मालूम होगा कि पेट सख्त है और तना हुआ है हाथसे ज़रा दबाइये तो शायद आंतों की हरकत भी महसूस हो। कभी २ तो अंतड़ियां और मामूली तौर पर चलती फिरती नज़र आती हैं तीसरे रिहा खारिज होने से बच्चा रोना बंद कर देता है पाठक ख्याल करेंगे कि बच्चोंमें पेटका दर्द इस कदर आम क्यों है इसका बहुत सी वजूहात हो सकती हैं मेरे खयाल में बच्चो की गिज़ा जो उनको दी जाती है बच्चों के पेट के दर्द मे कारण है अगर वह सही तौर पर हज़म न हो तो इस किस्म के तेजाब बन जाते हैं जिनसे आंतों और मेदे मे खराश पैदा हो जाती है दूसरे अगर ऊपर का दूध दिया जाय और वह भी बेकायदे पिलाया जाय तो मेदे में पहुंच कर दूध बुरी तरह फटता है बड़े २ और सख्त टुकड़े बन जाते हैं। जब वह आगे को बढ़ते हैं तो पेट का दर्द होना लाजमी है तीसरे यह वजह भी हो सकती है कि बदहज़मी की वजह से आंतों में हवायें अधिक बने रियाह रुकने से आंतों में तनाव ज्यादा हो जाता है। सिर्फ तनाव ही ऐसा दरद पैदा कर देता है कि बच्चे उसको बरदाश्त नहीं कर सकते और रोते हैं:—



Dr K L Jain, L S M F.

Medical Officer

Children's Free Dispensaries, Delhi

पापुलर प्रेस देहली

पेट के दरद का इलाज बड़ा आसान है प्रथम एक हलका सा मुसहिल दे फिर बच्चे को चूने का पानी एक चमचा दिन में चार बार दूध के साथ देते रहें अगर दरद की हालतमें यह इलाज किया जाय तो दरद जाता रहेगा और अगर बाद दरद के भी थोड़ा थोड़ा मुसहिल और दूध पानी देते रहें तो कभी दरद की शिकायत नहीं होगी अलावा बदहजमी के पेट का दरद एक और वजह से भी हो सकता है और वह वजह मसाना और गुरदे का दरद है शिकायत बैंगनदाली की वजह से और पाना की निकलास की वजह से आंव आने लगती है यही दरद की वजह होता है अगर बच्चों के निकलाते को आप देखें तो उन पर जर्द रंग के धब्बे और बारीक बारीक बोरिक ऐसिड की कलमें भी नजर आयेंगी।

कै —बच्चों में दूध डालने और कै करने की शिकायतें भी बहुत आम हैं यह शिकायतें एक तो इस तरह की होती हैं कि बच्चे देखने में अच्छे खासे होते हैं कोई दूसरी शिकायत नहीं होती सिवाय दूध डालने और कै करने के। यह शिकायतें अमूमन उन बच्चों को होती हैं जिनके मेदों में गिजा मेदों की जसामत से ज्यादा पहुँच जाये ज्यादा गिजा को वह कै करके निकाल देते हैं ज्यादातर बदनीयत बच्चे इस रोग का शिकार होते हैं खाने के मजे में जो कुछ सामने आताहै खालेते हैं उनका इलाज यही है कि उनके खाने की निगाहदाश्त की जाये और जब यह बदनीयत और लालची बच्चे उसमें मुबतिला हों तो उनको फाका कराया जाये। इसके अलावा जिगर और मेदा की खराबी में भी कै की शिकायत हो जाती है। जिगर की खराबी की वजह से जो कै होती है उसके दौरे रह रह कर पड़ा करते हैं। इसका इलाज भी ज्यादा दुशवार नहीं गिजा कम कर दीजिये और (Glucose) अर्थात् अंगूर की शक्कर का शर्बत पिलाइये एक ही खुराक कतई तौर पर कै को रोक देती है और अगर कै बन्द न भी हो तो रोग ज्यादा देर तक नहीं रहता (Glucose) असर जरूर दिखाती है, कै के दौरे होने पर ज्यादातर जिगर की खराबी को दखल होता है। लेकिन कुछ मइग्रीन (Migrain) के मरीजों को कै भी उसके बहुत मुशाबा होती है माइग्रीन बचपन में होती है और काबिल इलाज के बाद इस बीमारी से बिलकुल निजात मिल जाती है।

मेदे की कै दो तरह की होती है अव्वल फौरी यानि आरजी दोयम पुरानी और देर की। कभी कभी पुरानी कै दाइमी सूरत भी अख्तयार कर लेती है पहिले किस्म की कै की तशखीस और इलाज दोनों बहुत आसान हैं, मरीज को लाने वाला हाल कहता है (१) कै को शुरू हुये ज्यादा अरसा नहीं हुआ थोड़ी देर से शुरू हुई है (२) जब से शुरू हुई है बराबर हो रही है बंद ही नहीं होती (३) कै के साथ बुखार भी है और पिंडा गरम रहता है जबान खुश्क है और चेहरे पर झुर्रियां पड़ी हुई हैं। इस कै का सबब मेदे की खराबी होती है बदहजमी की वजह से या सरदी लग जाने के सबब से मेदे के अन्दरूनी जानिब वरम होता है। इस तरह की कै बाज औक़ात दूसरी बीमारियों में भी होती है। कई एक शदीद अमराज की इब्तदाई अलामत इसी

तरह की कै होती है। मसलन निमोनियां और गरदन तोड़ बुखार में कै और मितली अक्सर हुआ करती है। महज कै की वजह से कोई भी डाक्टर कतई तौर पर यह नहीं बता सकता कि इन बीमारियों में से कौन सी वजह से कै हो रही है। अकलमंद डाक्टर अपनी राय के बताने में जल्दी नहीं करता। तशखीश न बताने के यह मानी नहीं है कि इलाज भी न किया जावे। मेदे की कै में इलाज का एक ही असूल है।

गिज़ा बंद कर दीजिये और इस तरह की चीज़ें दीजिये कि मेदे की झिल्ली पर खलीश पैदा न करें मसलन (Gluese) और (Almin water बहुत अच्छी चीज़ें हैं। नुसख़ा:– Gloese अंगूर की शकर एक ड्राम (चार माशे) पानी आधी छटांक दिन में जितनी मर्तबा बच्चा पानी मांगे दीजिये। अगर कै ज्यादा हो तो सोडा-बाइकार्ब तीन ग्रेन इजाफा कर दीजिये। नुसख़ा नं० २:—ऐलबुमन वाटर भी बहुत आसानी से हर एक बना सकता है इसके अलावा पेट की सफाई के लिये Calomel बहुत अच्छी चीज़ है। बड़ों के मुकाबले में बच्चे कैलोमल बरदाश्त भी खूब कर लेते हैं। कैलोमल ½ सोडा बाइकार्ब २ ग्रेन इस तरह ८ सफूफ बना लीजिये और २-२ घंटे के बाद बच्चे को दीजिये दो चार सफूफ के बाद दवा देने की जरूरत न पड़ेगी।

(२) पुरानी कै रफ्ता रफ्ता देर पाके बढ़ती है इस प्रकार की कै ज्यादा शिद्दत के साथ शुरू नहीं होती। कभी कभी ऐसा जरूर होता है कि एक साथ शुरू हो जाती है इस किस्म की कै में ज्यादा इमकान इसका है कि मेदे की छोटी आंत से मिलने की जगह तंग हो गई है। बच्चों में खासी तादाद इस मरज़ में मुबतला होती है। यह दूसरी बात है कि मर्ज तशखीश न किया जावे, इस मर्ज की सही तशखीश और फौरी इलाज पर बच्चे की जिन्दगी का दारोमदार है अगर गलत तशखीश हो और इलाज में देर की जावे तो इस कदर ज़ईफ़ हो जाता है कि आपरेशन का मुतहम्मिल ही नहीं हो सकता और मेदे के मुंह बंद होने की या तंग होने की हालत में सर्जिकल आपरेशन ही वाहिद इलाज है। इस मर्ज की तशखीश भी ज्यादा कठिन है। अगर नीचे लिखी चन्द अलामात मौजूद हों तो आप आपरेशन का मशवरा दे सकते हैं।

(१) कै बकसरत और दूर तक जावे (२) मेदे के इलाके में पेट पर आंतें चलती फिरती नज़र आयें। इसी जगह पर एक गूमड़ा भी महसूस हो अगर आप पेट को हाथ से दबाकर देखें। (३) कब्ज यह भी बहुत बुरा मर्ज है कई कई दिन तक बूज़ाबत नहीं होती।

दस्त—यह हाज़मे की बेतरतीबी की अलामत है। इनका बहुत ही अहम बीमारी ख्याल करना चाहिये। साठ फी सदी बच्चों की बीमारियां हाज़मे के बिगाड़ की वजह से होती हैं। हाज़मे की बीमारी का इलाज जल्द से जल्द कर देना चाहिये मामूली बातों में दस्त आने लगते हैं। दस्त आने की वजह कई होती हैं (१) मेदे के फेल में कुछ नुक्स। यह कोई बड़ी खराबी नहीं होती सिर्फ मेदा अपने काम में ढीला पड़ जाता है और (Hydro Chloaie and) हाईड्रो क्लोरिक ऐसिड की मिकदार काफी नहीं

बलती मेदे की रतूबत इतनी तेज़ नहीं होती कि गिज़ा को अच्छी तरह हज़म करे और बीमारी के जरासीम जो गिज़ा में शामिल हो जाते हैं उनको मार डालें। बस जरासीम और मेदे में गिज़ा की गड़बड़ से हाज़मा खराब हो जाता है और दस्त आने लगते हैं। दूसरी वजह यह होती है कि गिज़ा जो बच्चे खाते हैं मसलन दूध या फल इन में जरासीम बहुत कसरत से होते हैं और तन्दुरुस्त मेदे की रतूबत भी इनको पूरी तौर पर नहीं मार सकती बच्चों की ज़्यादा तादाद इन ही जरासीम को और दस्त का शिकार होती है। इन दस्तों का बच्चों की सेहत पर जो असर पड़ता है उसके लिहाज़ से उनको तीन किस्मों में तकसीम किया जा सकता है। १—सादा दस्त तन्दुरुस्त बच्चों को भी कभी २ एक आध दस्त आजाता है सिर्फ़ खाने की अहतयात से एक या आध खुराक दवा से बन्द हो जाते हैं और बच्चे की सेहत पर कोई खास असर नहीं पड़ता। २—कमज़ोर करने वाले दस्त बच्चों को गाहे २ आया ही करते हैं। इन दस्तों की वजह से वह कभी पनप ही नहीं पाते, जो गिज़ा खाते हैं हज़म ही नहीं होती जुज़्व बदन नहीं हो पाती दस्तों के रास्ते निकल जाती है। ३—हैज़ा- नुमा दस्त। इन दस्तों के बाद बच्चा बहुत ही नाताकृत हो जाता है आंखों में हलकी और तमाम जिसम पर झुर्रियां पड़ जाती हैं यह तीनों हालतें महज़ दस्तों को देखकर ही तशख़ीश नहीं कर सकते किसके दस्त किस प्रकार के हैं लेकिन हां तमाम बातों को निगाह में रखकर एक डाक्टर आसानी से तशख़ीश कर सकता है दस्तों में दो तरह की अलामत होती हैं एक मुकामी और दूसरी आम।

१—मुकामी अलामत—दस्तों की हालत में अन्तड़ियां बहुत तेज़ हरकत करने लगती हैं और जल्द २ घूमती हैं इसका नतीजा यह होता है कि (Bile) या पित्त गिज़ा में अच्छी तरह नहीं मिल पाता बग़ैर हज़म हुई गिज़ा जल्द खारिज हो जाती है और इसी वजह से दस्तों पर पित्तों का रंग गालिब होता है। यह हमेशा सब्ज़ रंग के होते हैं।

२—दस्त बहुत ही बदबूदार होते हैं उसकी वजह भी यही होती है कि गिज़ा छोटी आंत में इतनी देर नहीं रहती कि अच्छी तरह हज़म हो जावे, बग़ैर हज़म हुवे खारिज हो जाता है और बड़ी आंत में पहुंच कर जब रुकता है तो सड़ना शुरु हो जाता है। इस बदबू में ताकुल पैदा करने वाले की जयादती को बहुत दखल होता है।

३—तेज़ी—इस किस्म के दस्तों में गिज़ा के सड़ने की वजह से एक खास बदबूदार तेज़ाब पैदा होता है। अगर गिज़ा में चरबी ज़्यादा हो तो यह और ज़्यादा कसरत से पैदा होता है इस तेज़ाबियत की वजह से दस्त आने के बाद मख़-रज के इर्द गिर्द जलन हो जाती है करीब की खाल सुर्ख हो जाती है और बाज औकात छाले पड़कर बाद में ज़ख़्म भी हो जाते हैं। दस्त में अगर तेज़ाबियत ज़्यादा हो तो समझो कि बच्चों की गिज़ा में शकर और चरबी की ज़रू-रत से ज़्यादा जुज़ शामिल हैं।

४—पीपदार और चिकनेदस्त—

इस प्रकार के दस्त इस बात का पता देते हैं

रिकैट्स

(लेखक डा० हरीचन्द गुप्त एम० पी० बी० एस फिजिशियन एण्ड सर्जन नई सड़क देहली)

रिकैट्स—

इसको कभी कभी अंग्रेजी बीमारी (इङ्गलिश डिजीज) भी कहते हैं क्योंकि इसको पहले पहल एक अंग्रेज डाक्टर ग्लीसन ने १६५० में सही तौर पर बयान किया था, रिकट्स (Rickets) शब्द एक फ्रांसीसी भाषा ((Riquits) से निकाला गया है, जिसका अर्थ है रीढ की हड्डी की बनावट की खराबी Deformiter डिफॉर्मिटर और वह आदमी जिसको डिफॉर्मिटीज हो। यह एक बीमारी है. जोकि गिजा में कुछ अनासर कम होने की वजह से बच्चों को खास तौर पर होती है, जिससे कि हड्डियां नरम पड़ जाती हैं और फिर बोझ की वजह से मुड़ जाती हैं। और कुछ तन्दरुस्ती हिस्से में तबदीली हो जाती है यह रोग इस मुल्क में प्रायः पाया जाता है। इस रोग के कारण मृत्यु भी अधिक होती है।

कारण—

स्त्रियों का अपने बच्चों को दूध न पिलाना, स्त्रियों का ऐसे काम में लगा रहना जैसे कि मिलों या फैक्टरियों में जिससे बच्चों की परवरिश पूरी नहीं हो सकती हैं। ज्यादह गुंजान आबादी जिससे कि तमाम तन्दुरुस्ती खराब हो जाती है। निर्धनता, अज्ञान भी कारण है। इस बीमारी के बारे दो प्रकार के सिद्धान्त हैं। (१) एक सिद्धान्त वाले यह कहते हैं कि भोजन में एक विशेष प्रकार की चीज (विटामीन डी) के न होने से होती है। और विटामीन डी प्रायः स्नैहिक पदार्थों में पाई जाती है. यह चीज चूने को शरीर में जज्ब करती है। इसके न होने से चूना शरीर से बाहर निकल जाता है। और हड्डियां चूने रहित रह जाती हैं। जिसके कारण हड्डियां नरम होकर मुड़ जाती हैं। (२) दूसरे सिद्धान्त वाले कहते हैं कि यह बीमारी ताजा हवा की कमी, ज्यादह आबादी, व्यायाम की कमी, प्रायः सूरज की रोशनी की कमी से होती है, सम्भव है दोनों ही कारण होते हों।

लक्षण—इस रोग के दो प्रकार के लक्षण जानने चाहियें (१) लम्बी अस्थियों के सिरे मोटे हो जाते हैं। यद्यपि वे अच्छी प्रकार मुड़ी हुई नहीं होतीं, क्योंकि इस बीमारी में अस्थि बनाने

कि वहां आंतों में खराबी आगई है। इन दस्तों के साथ में आम अलामात भी खास तौर पर नुमायां होती हैं। जबान और जिल्द देख कर भी तशखीश में बड़ी मदद मिलती है और जिल्द में झुर्रियां पड़ जायें और वह लोच और लचक बाकी न रहे जो स्वस्थ बच्चे में होती है तो यह बहुत ही खतरनाक अलामत है।



की ज्यादह कोशिश होती है और कामयाबी के साथ बहुत कम हड्डी बनती है। जिसका लाजमी नतीजा यह निकलता है कि वह जगह जहां से कि हड्डी बननी शुरू होती है यानी सिरे पर ज्यादह मोटी होती है, इसी वजह से पसलियों के सिरे भी मोटे होते हैं। और छाती की हड्डी के इर्द गिर्द गोल २ उभरे हुये दाने मालूम होते हैं। जो कि माला की तरह लगते हैं जोकि (Rickety-rose) रिकैटिरोजि कहलाती है। इसी तरह खोपड़ी की हड्डियां भी बीच में मोटी हो जाती हैं।

दूसरे प्रकार के लक्षण—जो हड्डी में होते हैं वे ये हैं कि हड्डी नरम हो जाती है अर्थात इसमें चूना कम हो जाता है (कैल्सियम-फोस्फा-इट) जिसकी वजह से हड्डियां मुड़ जाती हैं। टांग और बाजू की हड्डियां खम खा जाती हैं।

आभ्यन्तरिक अङ्गों में परिवर्तन—फेफड़े, मेदे, आंतों की सूजन, जिससे निमोनिया, खांसी, कै, दस्त वगैरा ऐसे रोगी बच्चों को खूब और बार बार होते हैं। दूसरा परिवर्तन यह होता है कि अन्दरूनी हिस्से बढ़ जाते हैं। जैसे तिल्ली जिगर के ये परिवर्तन अस्थियों की तब-दीली से ज्यादा खतरनाक हैं।

रोग के भेद—

(१) एक्यूट रिकेटस—जिसमें कि बीमारी बहुत जल्द आती है, और अन्दरूनी अङ्गों के लक्षण खास तौर पर पाये जाते हैं। हड्डी की तबदीलियां बहुत कम होती हैं। हड्डियोंमें दर्द होता है और बच्चेको पसीना बहुत आता है।

(२) दूसरा रिकेटस—जिसमें खास तर पर हड्डियों की तबदीलियां ज्यादह पाई जाती हैं। औसेसटाईप (Osseos-type) कहलाती है। इसमें हड्डियां ज्यादह मुड़ता हैं और वे शस्त्राच-कित्सा से ठीक होती हैं।



(डा० ... ... शर्मा के सौजन्य से प्राप्त)

(३) तीसरा भेद—जिसमें आभ्यन्तरिक अङ्गों में सूजन होती है, (कटारल वैराइटि Catarr-hal-variety) इसी किस्म में बच्चों की हड्डियां तो ठीक ... ... हैं। लेकिन वे अतीसार, खांसी वगैरह ... से पीड़ित रहते हैं।

(४) चौथा [illegible] जोड़ ढीले हो जाते हैं [illegible] जा सकते हैं, जैसे कि [illegible] और [illegible] वेटिक [illegible] है। [illegible] याद रखना चाहिये कि अगर तुम [illegible] बच्चे को देखो जिस [illegible] वह [illegible] सकता हो तो [illegible] बातों में से एक [illegible] होगी। (१) [illegible] (२) डिमागी [illegible] (३) [illegible] (जांजिल) यह बीमारी ३ मास की उम्र से पहले नहीं होती और एक [illegible] होती है।

निदान—

(१) बच्चे बहुत देर से पुष्ट होते हैं, और देर में निकलते हैं, [illegible] लगते हैं। बैठना और चलना देर से सीखते हैं। (२) हड्डी के सिरे मोटे होते हैं और खासकर पसलियों में (३) हड्डियां मुड़ जाती हैं (४) सिर [illegible] एक और बीमारी है जिसका सम्बन्ध [illegible] है। जिसे हाइड्रोक [illegible] कहते हैं, रिकैटि बच्चे का सिर ऐसा मालूम होता है कि किसी संदूक में बन्द करके चौकोर बनाया गया हो। उसका माथा चौड़ा और चपटा होता है यानी आंखों के ऊपर बिल्कुल सीधी लकीर में जाता है, ऐसा ही वह बिलकुल कनपटी पर चपटा मालूम होता है। हाइड्रोकफलाज के बच्चे का सिर गोलाई में होता है और माथा आंखों पर झुका हुआ होता है इसी [illegible] कनपटी पर भी बाहर को झुका हुआ होता।

हाइड्रोकफलाज में—सिर की चोटी भी गोलाई में होती है, अर्थात् रिकैटि का सिर लम्बा चौड़ा चपटा होता है।

(५) पांचवा भेद—बाज दफे रीढ़ की हड्डी में रीकैटिक किस्म में टेढ़ा सा खम हो जाता है जो कि रीढ़ की हड्डी की तपैदिक (पोट्स डिजीज) Pots disease से मिलता हुआ होता है लेकिन जांच करना बिलकुल आसान है। अगर बच्चे को बगलों से पकड़ के ऊपर उठाया जावे तो रिकैटी का मोड़ (टेढ़ापन) या खम [illegible] जाता रहता है और तपैदिक का मोड़ वैसा ही रहता है। (६) रिकैटी बच्चेका असूमन बड़ा पेट होता है। जो कि बाहर को निकला हुआ होता है, क्योंकि आम तौर पर बच्चों के आदमियों का निस्बत बड़ा जिगर और अन्दर छोटी पैल्विस Pelvis होती है ये दोनों सबब रिकैटस में ज्यादा बढ़ जाते हैं यानी जिगर बड़ा हो जाता है और पैल्विस बहुत छोटा हो जाती है।

२—दूसरा—रिकैटी बच्चों के पट्ठे ढीले होते हैं, इसीलिये पेट बाहर को निकल आता है।

३—तीसरी बात—इन बच्चों के मेदों और आंतों की बीमारियां आम तौर से होती हैं जिनसे ज्यादह हवा खांपने और पेट बाहर को आ जाता है, ऐसे बच्चों में और निशानियां तुम रिकैटस की पाओ तो तशखीश निश्चित हो जाती है।

इलाज:—

१-सब से पहले बच्चे की ताकत हाज़मा ठीक करना चाहिये क्योंकि उसके मेदों और आंत वग़ैरा में सूजन होती है। इसलिये पहले पहल दस्त, कै, भूकका न लगनाके मुआफ़िक़ इलाज करो।

२-इसके बाद उसकी खूराक तबदील करो और वह किस तरह करनी चाहिये के निशासता और शक्कर को कम करो। और घृत और परोटीन को ज्यादा करो। गाय का दूध (Cod liver oil) और १॥ साल के बच्चे को २ (Point) १। सेर २४ घंटे में देना चाहिये बहुतसी चीजें हैं जिनकी बच्चोंको जरूरत होती है। इसमें घृत बेरोटीन, फासफोरस, लोहा वगैरा है और यह ऐसी बीमारी में जल्दी शुरु कर देना चाहिये। चुने के नमक देने की कोई जरूरत नहीं क्योंकि दूध में यह बहुत होते हैं। अगर बच्चे में कमी चुना हों तो (Iron) नमक दो गिजा के साथ २ रोशनी, हवा का जरूर ख्याल रखना चाहिये। सूरजकी रोशनीमें बच्चेको बैठाना चाहिये। खासतौर पर सुबहको अगर सूरज की रोशनी न मिल सके तो Ultre Violet Rays डालना चाहिये। हमारे मुल्क में सूरज की रोशनी की कोई कमी नहीं, लेकिन जल्दी अच्छा कराने के लिये (Ultra Violet. Ray) के (Exposure) भी ठीक रहते हैं। हड्डियों के मुड़ जाने को ठीक करने के लिये कभी सरजन की मदद लेनी पड़ती है लेकिन यह बात खूब याद रखने की है यह हड्डियों का मुड़ जाना बीमारी के ठीक होने के बाद खुद बखुद भी ठीक हो जाता है बाज दफा हड्डियों को मुड़ने से बचाने के लिये बीमारी के दौरान में हमको दोनों टांगें इकट्ठी बांध देनी चाहियें या टांग पर (Splints) लगाना चाहिये जो के पैर के नीचे तक जावे।

आजकल (Vi.tam) की अदवियात खास आती है उनको इस्तेमाल करने से बहुत जल्द बीमारी ठीक हो जाती है।

इनके बाक़ायदा इस्तेमाल से बहुत फायदा होता है यही चीजें अगर गर्भवती स्त्री को पिछले तीन माह गर्भ में दी जावें तो बच्चे को यह बीमारी होती ही नहीं।

६ या ७ साल या १२ साल की उमर में होती है इस में हड्डियों की बीमारी ज्यादा होती है इसका इलाज सरजन कर सकता है और वैसे इसको रोकने के लिये वही अदवियात काम आती हैं।

बच्चोंका कमेडा (आक्षेप Convulsion)

(ले०— आ० वि० प० श्री देवदत्त जी शर्मा वैद्य शास्त्री शंकरगढ़ गुरुदासपुर (पंजाब)

वातज आक्षेप के कारण बालकों की मृत्यु संख्या दिन-दिन बढ़ती जा रही है। इसीसे आज इस भयानक और कष्टदायक रोग के विषय में उचित चर्चा की जाती है। देश में प्रतिमास हजारों नहीं लाखों बच्चे इस पाजी रोग का शिकार बनते हैं और बच्चों ने नहीं हजारों ही घर इसने उजाड़ दिये हैं। लेखक ने अपने जीवन में अनेक स्त्रियां ऐसी देखी हैं जो कई-कई बच्चे जनकर भी निःसन्तान रही हैं।

निदान— यह रोग सर्वत्र प्रसिद्ध है, सभी इस रोग से परिचित हैं इसलिये इस रोग का निदान देकर अधिक विषय बढ़ाना अच्छा नहीं समझता केवल इतना ही लिख देना है कि इस रोग के दौरे के समय बच्चे के मुंह से झाग आकर बच्चा बेहोश हो जाता है। जब तक इस रोग का दौरा फिर समाप्त नहीं होता बच्चे को होश नहीं आती। बहुत से बच्चे बेहोशी में ही इस संसार से सदा को चल बसते हैं। इस रोग में बच्चों की मृत्यु प्रायः दम घुटकर होती है, इसलिये इस रोग से खूब सचेत रहना चाहिये। जरासी असावधानी बालकों की मृत्यु का कारण बन जाती है, क्योंकि वह बहुत ही कोमल होते हैं। जिस बच्चे को आरम्भ में मुख में झाग (फेन) आकर बेहोशी (मूर्छा) हो, समझ लेना चाहिये कि इसे वातज आक्षेप (कमेड़े) का रोग है। इस बच्चे के लिए उसी समय आगे बताये हुए उचित उपचार का प्रबन्ध करना चाहिए।

चिकित्सा

आयुर्वेद के मतानुसार यह रोग वातज है। यूनानी हकीम खून (रक्त) की गर्मी-खुश्की से ही इस रोग का होना मानते हैं। जब बच्चे को इस रोग का दौरा हो, उसे उसी समय खुली हवा में इसलिये छोड़ दो कि जिससे श्वास-प्रश्वास करने से बालक की मृत्यु न हो जाय। अनेक स्त्रियां दौरे के समय बच्चों को गोद में लेकर बैठ जाती हैं और मुंह सिर सब कपड़ों से लपेट देती हैं, यह बात ठीक नहीं है। कभी कभी मुंह पर कपड़ा डालने से बच्चों का दम रुक जाता है और मृत्यु हो जाती है। इसलिये दौरे के समय कभी बच्चे के मुंह को न ढको।

दौरे के समय किसी लकड़ी, कलम, पेन्सिल चम्मच या कलछी की डंडी आदि का सिरा बच्चे के मुंह में फौरन इसलिये दे दो, कि जबड़े बन्द न होने पावें। यदि जबड़े बन्द हो जायेंगे तो फिर अधिक कष्ट होगा और जबड़े भी बड़े यत्न से खुलेंगे, इसलिये यह उपाय शीघ्रता पूर्वक करो। तब तक यह बालक के मुंह से न निकालो जब तक कि बालक रोने न लगे। समय पर यदि कुछ न मिले तो अपने हाथ की अंगुलियों में ही कपड़ा लपेटकर अंगुली बच्चे के मुंह में डाल दो और तब तक न निकालो जब तक बच्चा रोने न लगे।

अथवा यूं करें कि, जब कमेड़ का दौरा हो उसी समय मन्दोष्ण दूध किसी चम्मच, सीपी या रुई के फोहे से बालक के मुंह में डाल दो। दूध डालने में देर न करो, उसी समय डालो। समय पर दूध के अभाव में कवोष्ण जल ही डाल दो। दूध और जल एक बार में २ तोला से अधिक न डालो। धीरे धीरे कई बार करके दो। जब तक दूध या जल पहली बार का अन्दर न पहुंच जाय तब तक ऊपर से दूसरा बार न दो। अन्यथा दूध या जल से श्वासावरोध होने की आशंका बनी रहती है।

इस रोग में जब कफ का गले की घूंटी जम घुट जाती है तभी बच्चे की मृत्यु होती है, इस लिये बच्चे का मुंह बंद न होने दो। मुंह बंद न करने से श्वास आता रहेगा और मुंह में दूध या पानी आने से गले में तरी रहेगी, जिससे फिर घूंटी घुटने का भय न रहेगा। बच्चा अवश्य बच जायगा।

कुछ अनुभूत औषधि

(१) श्वेत रंग की दूर्वा (दूब) घास सर्वत्र खेतों में सुगमता से प्राप्त होती है। इसके दो-चार पत्ते और एक काली मिर्च डालकर जरा से पानी के साथ रगड़ लें। अब छानकर अग्नि पर जरा कवोष्ण कर पिलावें। जिस बच्चे के अन्दर यह पहुंच जायगी वह अवश्य अल्पकाल के बाद ही रोने लगेगा। मृत्यु के भय से बचाने के लिये यह एक ही दिव्य वनस्पति है। यह शीघ्र ही बच्चे को होश में ले आती है। इस रोग के लिये यह ब्रह्मास्त्र के समान काम करती है। यह होनी चाहिये ताजी, सूखी हुई कुछ भी प्रभाव नहीं दिखाती ऐसा हमारा अनुभव है।

जहां जगह पर सफेद दूब न मिले वहां हरी दूब ही श्वेत दूब के समान देवो। यह भी लाभ तो अवश्य करती है, पर जरा देर में।

जहां कुछ न मिले वहां कवोष्ण जल ही दे दो। पर देना कुछ जरूर। जब मुंह में झाग आना प्रारम्भ हो उसी समय दूध या पानी २०-३० बूंद बालक के मुंह में डाल दो। दूध भी इस रोग में दौरे को शीघ्र समाप्त कर देने के लिये अद्भुत औषधि है। अनेक बालकों के प्राण इसी ने बचाये हैं।

आक्षेपान्तक—

कृष्णाभ्रकभस्म, लाल माणिक्य रस, [illegible] कस्तूरी, जावित्री, जायफल, लौंग, [illegible] प्रत्येक डेढ़-डेढ़ माशा और तुलसी की मंजरी २ तोला।

विधि—

सबको खूब कूट कर चूर्ण करें और फिर सब खरल में डाल कर पान और काली तुलसी के स्वरस की १-१ भावना देकर बाजरे के बराबर गोली बनावें। छाया में सुखा कर रखें।

मात्रा—

आधी से एक गोली तक।

अनुपान—

तुलसी का रस। तुलसी अनुपान में कोई भी ली जा सकती है, पर जंगली तुलसी न होनी चाहिये।

समय—

दिन में २ बार। रोग की प्रबल अवस्था में ३ बार।

गुण-

मृगी, वायुका कमेड़ा, तड़का इत्यादि वायु रोगों में लाभ दायक है। योगरत्नाकर का लक्ष्मी नारायण रस भी इस रोग के लिये विशेष लाभदायक सिद्ध हुआ है इसलिये यहां उसका योग भी दिया जाता है।

लक्ष्मी नारायण रस-

शुद्ध शिंगरफ १ तोला शुद्ध वत्सनाभ १ तोला इन दोनों को खरल में डाल कर अदरख के रस में ३ घंटे तक खूब घोटो। फिर इनमें शुद्ध गंधक १ तोला, फुलाया हुआ सुहागा १ तोला, कुटकी का चूर्ण १ तोला, अतीस का चूर्ण १ तोला, पीपल छोटी का चर्ण १ तोला, कुड़ा छाल का चूर्ण १ तोला अभ्रक भस्म १ तोला और लाहौरी नमक १ तोला मिलालो और एक घंटे तक घोटो। फिर दन्ती (जमाल गोटे की जड़) का क्वाथ बनाकर इनमें डालो और तीन दिन तक घोटे बाद में मैनफल का क्वाथ मिलाकर ३ दिन तक खूब घोटाई कराओ और गोली बनने लायक होने पर २-२ रत्ती की गोली बना छाया में सुखा कर किसी शीशीमें बंदकर चिट लगाकर रख दो। यही लक्ष्मी नारायण रस है। मात्रा १ से तीन गोली तक। अनुपान अदरख का रस। आक्षेप आदि में ३-३ घंटे के अन्तर से जब तक आराम न हो देते रहें। १८ गोली से अधिक एक दिन में किसी को न दें। बच्चों को खूब विचार करदें। उनकी आयु के अनुसार मात्रा प्रथम ठीक करलें और फिर विचारपूर्वक दें।

गुण-पीड़ाशामक, ज्वरघ्न, स्वेदल। उपयोग-सन्निपात, हिस्टेरिया, बच्चों का कमेड़ा, आधा शीशी, शूल, शूलयुक्त अन्य रोग, अतिसर और सूतिका रोगों में उपयोगी है। निमोनिया रोग की तृतीयावस्था में जब वातविकार और प्रलाप अधिक हो उस समय लक्ष्मीनारायण रसकी २-२ गोली तगरादि क्वाथ (इसका योग भी योग रत्नाकर के प्रलापक सन्निपाताधिकार में हैं।) के साथ दिन में तीन बार देने से अद्भुत लाभ दिखाई देता है। हमने सैकड़ों बार परीक्षा करके यह बात जानी है। वैद्यों को अवश्य इस रसको बनाकर लाभ उठाना चाहिये। हमारे प्रतिदिन व्यवहार की औषध है। सभी प्रकार के रोगों में (विशेषकर वात रोगों में) विचार पूर्वक लक्ष्मीनारायण रस देकर लाभ उठाया जा सकता है।

आङ्गल-योग

एन्टी पाईरीन (Antipyrin) नामक आंग्ल औषध सर्वत्र बाजारों में डाक्टरी दुकानों से सस्ते मूल्य पर मिल जाती है। डाक्टर लोग विषम ज्वर या अन्य ज्वर कम करने के लिये इसका व्यवहार करते हैं। हमने इसे कमेड़े में अधिक लाभदायक पाया है। इसी से यहां इसका उल्लेख किया जाता है।

एन्टी पाईरीन का व्यवहार उसी समय करे जब कमेड़े का दौरा हो। कमेड़े के दौरे के समय यदि बच्चा आठ दस वर्ष के अन्दर का हो तो २ रत्ती दवा एक चमच गरम दूध में घोल कर उसी समय पिला दें। २ वर्ष से आठ वर्ष तक के बच्चे को १ रत्ती एन्टी पाईरीन एक चमच गरम दूध में मिलाकर दें। दो वर्ष से कम आयु के बच्चे के लिये केवल आधी रत्ती दवा का व्यवहार करना चाहिये।

कण्ठ शालूक (Tonsils गदूद)

(ले०—साहित्याचार्य वैद्य पं० घनानन्द पन्त विद्यार्णव बाजार सीताराम देहली)

इस गलग्रन्थि (शालूक) (Tonsils) में दाह और शोथ होता है (Acutetonsilitis) साथ ही दाह शोथ के अन्य लक्षण भी होते हैं। यह रोग कहीं प्रधान और कहीं अन्य रोग के साथ उपद्रव भूत भी होता है। प्रधान के दो भेद होते हैं। नवीन और पुराना। अनेक रोगों में इनके मुंह के सब अंकुर विकृत हो जाते हैं अथवा इनके भीतर पीप पड़ जाती है। अर्थात्--विद्रधि बन जाती है। इनमें से विद्रधि रूप ही कठिन होता है। इसकी चिकित्सा अच्छी प्रकार जाननी चाहिये।

कारण—माता पिताको शालूक (टौन्सिल) हो तो सन्तान को भी होता है, शरीर में ठंड लगने से भी होता है आमवात होने से प्रथम या हो जाने पर लोगोंका शालूक (टौन्सिल) बढ़जाता है।

लक्षण—(१) ज्वर १०२ से १०५ तक, (२) गले की वेदना कान तक फैलती है, (३) निगलने बोलने में क्लेश, (४) गले के भीतर घाव होता है, गला सदा शुष्क मालूम होता है, स्वर बदल जाता है, ग्रीवा का संचालन कम होता है, (५) गले के भीतर परीक्षा करने पर शालूक बढ़ा हुआ रक्तवर्ण देख पड़ता है और गले के नीचे का रास्ता (सप्तपथ) रुकने को हो रहता है। बढ़कर दोनों शालूक-परस्पर आपस में एक दूसरे को स्पर्श करते हैं। पहिले पहिला फिर दूसरा शालूक या दोनों साथ ही बढ़ते हैं, जिह्वा के पीछे

एन्टीपाईरीन (Antipyrin) के स्थान पर एन्टी फेब्रीन (Anti Febrin) और ब्रोमाइड आफ पोटास (Bromide of Potash) का भी व्यवहार किया जा सकता है। मात्रा और अनुपान एन्टी पाईरीन के समान ही है। जिन घरों में बच्चे को यह रोग हो उनके माता पिता को प्रथम से ही इन औषधों में से किसी औषध को अपने घर में रखना चाहिये।

एक और आकुल योग

R.

Pulvis Rhei Co. Gr. XX.
Gum Ammoniaci Gr. X.
Balsam Peru M. X.
Balsam Tolu M. X
Syrup Scilla D. II.
Olei Anisi M. VI.
Infusi Senaga D. IV.
Aquae Camphori D. VI.
M. Ft. Mixture

Signa A Teaspoonful to be given every four hours.

R.

अर्थात्—एक ड्राम (६० बूंद) चार-चार घंटे बाद दें। जब कमेडा उठे उसी समय एक छोटा चमच भरकर बच्चे को दे दें। लाभ होगा।

गले के भीतर दोनों तरफ दोनों शालूक फूलकर सुपारी के दाने के समान हो जाते हैं। दोनों के सूज जाने पर प्रलाप भी हो जाता है। तालुदेश और जिह्वा शोथ से लाल हो जाती हैं, जिह्वा बड़ी हो जाती है। पहले यह शोथस्थान, शुष्क होता है पश्चात चिपकदार लसिका से आवृत होता है कुछ निगला नहीं जाता है, मुख से लार अपने आप टपक पड़ती है मुख के भीतर जावड़े में वेदना होती है। अतएव रोगी मुंह नहीं खोल सकता, इससे गले के भीतर देखने में बड़ी असुविधा होती है। परीक्षा करने के लिये मुख के भीतर धीरे २ तर्जनी को प्रवेश कर शालूक की अवस्था देखने पर प्रायः शालूक टॉन्सिल में जगह २ श्वेत वर्ण क्षत होते हैं और आस पास लाल होता है बाहर जावड़े के पास समस्त कफ ग्रन्थियां फूल जाती हैं, अनिद्रा होता है (६) शिरोरुजा, अरति, मैली जिह्वा, मुखदुर्गन्धि, श्वासदुर्गन्धि, भूख कम, कोष्टकाठिन्य, मूत्रघोररक्तवर्ण होता है। यह कंठशालूक का प्रदाह औषध प्रयोग से ठीक आराम भी हो जाता है। यदि आराम नहीं होता है तो शालूक क्रमशः पक जाता है। यदि नहीं पकता है तो ३ दिन से १२ दिन में अच्छा हो जाता है। परन्तु अच्छा हो जाने पर भी वह स्वाभाविक की अपेक्षा बड़ा रह जाता है। जो शालूक पकता है उससे ३-४ दिन बाद जाड़ा लगकर ज्वर आता है, अत्यन्त वेदना होती है, और शालूक के भीतर गरम राहट होती है ऐसा होनेपर समझना चाहिये कि शालूक (टॉन्सिल) पक गया है। साधारणतः शालूक अपने आप ही फूट जाता है। यदि नींद की हालतमें फूटता है तो पीप रक्त पेट में चला जाता है। अन्य समय फटने पर मुख से बाहर निकलता है। स्थानिक लक्षण द्वारा रोग निर्णय सहज है भावि फल शुभ होता है परन्तु कभी २ श्वासरोध वा पोषण भाव से मृत्यु हो जाती है।

नूतन कंठ शालूक (टॉन्सिल) चिकित्सा

प्रथमावस्था में सुचिकित्सा हो जाने से शालूक पकता नहीं, बालक व युवाओं को विष के योग हिंगुलेश्वर, कफकेतु, आदि विशेष फल देते हैं। वृद्धों के शालूक में विष को नहीं देना चाहिये। शालूक होने के ३-४ घन्टा मध्य में विष के योगों के प्रयोग विशेष लाभ देते हैं। २४ घंटे बाद विष के योगों का व्यवहार न करे। प्रथम एक रेचक औषधि देकर ४-४ घन्टे बाद आनन्द भैरव, बृहत्कफकेतु, हिंगुलेश्वरादि का प्रयोग रोगी की अवस्था की मात्रा से करें, यदि २४ घंटे के भीतर ज्वर, प्रदाह यन्त्रणा कम न हो तो फिर विष के योगों को काम में न लावे। आमवात वाले रोगियों के कण्ठ शालूक में योगराज गूगल चन्द्रप्रभा गूगल आदि औषधि देवें। महालक्ष्मी विलास सब अवस्थाओं में हितकर होता है। शालूक के रोगी का पेट मृदु विरेचन से प्रति-दिन साफ रखें। रोग की प्रथमावस्था में यदि शालूक (टॉन्सिल) को चीर दिया जाय तो (विस्राव्य कण्ठ शालूकं साधयेत्त् गिडकेरिवन। सु०) वेदना दूर हो जाती है पकने की भी सम्भावना नहीं रहती। इस प्रकार चीरा दें कि रक्त अधिक निकले फिर थोड़ा सोहागा छोड़कर या स्वतन्त्र पंचवल्कल क्वाथ से, केवल गूलर के पत्तों के क्वाथ से कुल्ले करावें। इस प्रकार दस बारह बार एक

दिन में कुल्ले करावें। रसौत के पानी में घोलकर कुल्ला करावें। वातघ्न दशमूलादि क्वाथों का नाड़ी स्वेद (भपारा) भी देवें। गले के बाहर जिस तरफ का शाल्लूक बढ़ा हो। दोनों ओर हो तो दोनों तरफ अलसी की खल वा गोधूम की भुस्सी में थोड़ा लवण मिलाकर उपनाह स्वेद (पुलटिस) करने से भी वेदना शोथ प्रभृति शान्त होते हैं। इससे शाल्लूक (टॉन्सिल) पकने वाला हो तो पक भी जाता है। जब शाल्लूक पककर पीप बाहर निकल जाय तो बाद में बीमार को ताकतवर दवा अभ्र, लोह, मकरध्वज, अग्नि तुण्डी वटी, प्रवालादि योग दें। आमवात रोगी को आमवातघ्न रसोनपिण्डादि का भी प्रयोग करावें।

पथ्य—

प्रदाहावस्था में दूध में वरक डाल कर दें और जब पकने लगे तब जितना गरम २ दूध पिया जाय उतना ही अच्छा। जिनके शालूक में फिर २ प्रदाह हो जाता है उनके लिये नीचे लिखी प्रतिषेधक चिकित्सा करनी चाहिये।

(१) गले के चारों तरफ प्रति दिन ठण्डे जल से धोवें।

सोहगा २ रत्ती, अकरकरा का चूर्ण १ मासे जल एक छटांक मिला कर प्रति दिन कुल्ले करने से पुनराक्रमण नहीं होता।

पुराने शालूक की चिकित्सा—

शाल्लूक (टॉन्सिल) का प्रदाह पुनः २ होने से शूल इतना बढ़ जाता है कि शाल्लूक वाले बालक की छाती कबूतर की सी हो जाती है, कभी ज्वर भी रहता है, स्वास्थ्य अच्छा नहीं रहता। रोगीको श्वास लेने में क्लेश होता है, शब्द अच्छी तरह नहीं सुन सकता, मुंह से श्वास लेने से जो २ रोग हो सकते हैं वे तो होते ही हैं इनके अतिरिक्त बालक की बुद्धि मन्द हो जाती है, शकल बदल जाती है, चेहरा देखने से बालक बेवकूफ सा विदित होता है, पढ़ने में अपने सहपाठियों से भी पीछे रहता है। खांसी रहती है, गला आ जाता है, जरा २ जुकाम हो जाता है। श्वास वायु पूरा न पहुंचने से रक्त ठीक शुद्ध नहीं होता। ऐसे अवसर पर शाल्लूक को निकलवा देना चाहिये।

यदि शाल्लूक (टॉन्सिल) अपेक्षा से छोटा हो तो (१) पंचवल्कल त्रिफलादि संकोचक औषधों के क्वाथ से (२) अकरकरा त्रिफलादिचूर्ण एक को वा समस्त मधु से मलें। गरारे करवाने से अच्छा लाभ होता है। (३) चरकोक्त कालक चूर्ण के मर्दन से भी लाभ होता है। (४) खदिरादि गुटी का चूसना भी लाभप्रद है। यदि रोगी कण्ठमाला क्षय प्रकृति ग्रस्त हो तो प्रातः सायं मात्रा से च्यवनप्राश, मकरध्वज, नवायस चूर्ण का सेवन करावें, रोगी धनी हो तो समुद्र के किनारे की जल वायु परिवर्तन करे, इस प्रकार पुराना बड़ा भी शाल्लूक (टॉन्सिल) ठीक हो जाता है। शाल्लूक के अतिरिक्त गले के भीतर नाक के पीछेके भागमें छोटी २ रस ग्रन्थियां एडिनोइड्स होती हैं। ज्यों २ बालक बड़ा होता जाता है ये ग्रन्थियां स्वतः छोटी हो जाती हैं। परन्तु कुछ बालकोंमें यह ग्रन्थियां बढ़ी ही रहती हैं यदि शाल्लूक दोनों तरफ या एक तरफ बढ़ा रहे जैसा प्रायः होता है तो इनसे भी स्वास्थ्य बच्चे का बिगड़ता है, पुष्टि नहीं होती। इनका सम्बन्ध कान के साथ

नेत्र रोग

(लें०—Dr. N. S. Mitra Incharge of Dr. Shroff's Charitible Eye Hospital Delhi)

शिशु जीवन में जो साधारण नेत्र रोग देखे जाते हैं उनके विषय में आप लोगों को कुछ कहने का अवसर जीवन सुधा के सम्पादक महाशय ने दिया है।

(१) Trachoma—यह रोग भारतवर्ष में और विशेष कर हमारे प्रान्त में बहुत साधारण है। पलक के अन्दर में दाने हो जाते हैं और उनकी रगड़ से Cornea के ऊपर जख्म भी हो जाते हैं। ग्रामों में अशिक्षिता माता अपने शिशुओं की आखों के अन्दर इस रोग को अच्छा करने के लिये अपनी मनमानी दवाईयां भर देती हैं। यह दवाइयां साधारणतः बहुत Irritants होती हैं और इससे नेत्रों को बहुत नुकसान भी पहुंचता है। गत दश वर्ष में हमने कितने सहस्र ऐसे नेत्रों को देखा जो कि माता की अविवेचना से समस्त जीवन के लिये बिगड़ गई हैं।

(२) शिशु के जन्म के समय यदि माता को Gonorrhae हो तो जन्म के बाद बच्चे की आंख लाल हो जाती है और इसमें से पीले रंग का मवाद आने लगता है। यह बहुत खतरे की बात है क्योंकि इससे बच्चे साधारणतः अन्धे हो जाते हैं। पश्चिमी देशों में इस रोग का प्रचार पहिले बहुत अधिक था, परन्तु आजकल Crade की व्यवस्था और Maternity hygeine की उन्नति से इस रोग का प्रचलन बहुत कम होगया है। इस रोग के प्रतिशोध के लिये शिशु के जन्म के बाद उसके नेत्रों में 1 Silver nitrate solution एक एक बूंद डाल दिया जाता है। माता की उपयुक्त चिकित्सा से और शुद्ध व्यवस्था से इस रोग का विस्तार प्रायः बन्द हो सकता है।

होने से कान के कठिन रोग होते हैं। श्वास लेने में कलेश होनेसे विशेषतः निद्रितावस्था में बालक घुरघुराता है, बच्चा बेवकूफ होता है, शुष्क कास, पुरानी सर्दी, मुख आधा खुला रहता है। कभी कफके साथ मिला खून भी निकलताहै। अतएव इन्हें इडिनॉइड्स उपशालूक नाम से कहें तो उचित ही होगा। शालूक का कण्ठरोहिणी (डिप्थीरिया) से क्वचित निदान में सन्देह होवे और निश्चित निदान न होसकने पर तत्काल न हो सकने पर तत्काल डिफ्थीरीया का इन्जेक्शन देना उचित नहीं मानते हैं।

उपशालूक रस ग्रन्थियों की चिकित्सा—

दिन में ३–४ बार खदिर, बब्बूलादि कषाय युक्त क्वाथसे गरारे और ४ रत्ती स्वर्जिसार १ छटांक पानी की पिचकारी से गला धोवें। इनसे लाभ न होने पर अन्य चिकित्सा करें।

१. शालूक में यदि कानों से कम सुनाई दे तो स्वर्ण वङ्ग के सेवन से लाभ होता है।

(३) माता पिता के आतशक होने के कारण उसका प्रभाव शिशु के नेत्रों में भी पड़ता है। साधारणत: ५ से १२ वर्ष तक की अवस्था में बालक के नेत्रों में Interostial keratitis हो जाता है। इसके साथ जन्म गत आतशक के और लक्षण भी पाये जाते हैं, दांतों की खराबी कान की खराबी, और नेत्रों की खराबी एक साथ पायी जाती है। इसके प्रतिशोध के लिये प्रथम कर्त्तव्य यह है कि पिता माता के रोग की उपयुक्त चिकित्सा हो। जिस वंश में माता का हमल गिरने का या विकलाङ्ग शिशु के जन्म का इतिहास हो उनके रक्त की परीक्षा होनी चाहिये। और इस रोग के प्रारम्भ से ही रक्त के शोधन के लिये शिशु की उपयुक्त चिकित्सा होनी चाहिये।

(४) उपयुक्त आहार न मिलने के कारण समस्त शरीर पर जैसा असर होता है उस प्रकार नेत्रों में भी खराबी पायी जाती है। आप लोगों को ज्ञात होगा कि हमारे खाद्यों के साथ Vitamin का होना कैसा आवश्यकीय है। इस vitamin के अभाव से बच्चों की आंखें सूख जाती हैं और किसी किसी अवस्था में २८ घंटे के अन्दर पिघल भी जाती हैं। प्राय: यह बच्चे बचते नहीं हैं। हम लोगों को उचित है कि प्रत्येक शिशु के आहार पर अधिक ध्यान दें। ताकि Xerosis या Keratomalacia होने का अवसर न हो। हमारे दरिद्र देशमें Infanitile marasmus का प्रादुर्भाव अत्यन्त अधिक है। जबतक देश की सामाजिक और आर्थिक अवस्था की उन्नति न होगी तबतक इस रोग को हम दूर नहीं कर सकेंगे।

(५) ग्राम प्रान्तों में शिक्षा के अभाव और कुसंस्कार के कारण चेचक का टीका लगवाने का प्रचार बहुत कम है। चेचक का दाना जिस प्रकार समस्त शरीर में निकलता है, उसी प्रकार नेत्र में भी हो जाता है और उसके कारण जख्म होकर बालक अन्धे हो जाते हैं। इसलिये यह अत्यन्त आवश्यकीय है कि टीका लगने का प्रचलन और अधिक हो जाय।

(६) भगवान् ने हमको दो आंखें दी हैं इस कारण कि हम दोनों से अपना काम लिया करें। आप लोगों ने देखा होगा कि बहुत से बच्चों की १ आंख वेंहगी होती है। इसका इलाज यदि आरम्भ से ही कराया जाय तो बड़े होने पर भी बालक दोनों आंखों से काम ले सकता है। इसकी चिकित्सा बहुत परिश्रम और धैर्य साध्य है परन्तु माता पिता की सहयोगिता होने पर इसका फल अधिक आशाप्रद है।

इस लेख का यह उद्देश्य नहीं है कि बालकों के नेत्र रोग का सम्पूर्ण विवरण आप लोगों को दीयाजाय, उसके लिए पृथक पुस्तककी आवश्यकता होगी। हम आपका ध्यान इस ओर दिलाना चाहते हैं कि शिशु-जीवन से ही दृष्टि शक्ति की प्रयोजनीयता का यथायोग्य अनुभव आपको होना चाहिए। और न कि केवल नेत्र रोग की चिकित्स परन्तु दृष्टि की उत्कर्ष साधना करना और इस उद्देश्य से राजशक्ति और प्रजाशक्ति की सम्मलित चेष्टा होनी चाहिये।

नेत्राभिष्यन्द

(ले०—डा० के० डी० तलनियां चिकित्सक चूड़ामणि भिषगाचार्य प्रिन्सिपल श्री शिव कैलाश आयुर्वेद विद्यालय बागेश्वर अल्मोड़ा)

अक्सर शिशुओं को नेत्राभिष्यन्द (आंख उठना या दुखना) विशेष देखा जाता है यह रोग बड़ा उम्र वालों को बहुत कम होता है बालकों की गुहाइयों पर इस रोग के विकार प्रविष्ट रहते हैं। जो मक्खियों के द्वारा अन्य स्वस्थ्य बालकों में इसका रोगाणु प्रविष्ट होता है और वे बालक भी इस रोग से कष्ट उठाते हैं नेत्र की लाली, आंख न खोल सकना, तेज कड़क व जलन, इसका प्रधान चिन्ह है। इस पर भी शीत ऋतु में इसका विकार कम व ऊष्ण तथा वर्षा ऋतु में विशेष संक्रामण पाया जाता है ज्यों ही मार्च शुरू हुआ यह रोग फैलने लगता है एवं कुटम्ब के जहां एक बालक को यह रोग आ घेरता है वहां अन्य बालक भी इस रोग से नहीं छूटने पाते इतना ही नहीं एक बार का आक्रमण दो चार दिन शान्त होने पर भी पुनः फिर से नया आक्रमण प्रारम्भ हो ६ माह तक एवं अनवरत क्रम से बालकों को यह रोग सताता आता है। गुरु भोजन, ऊष्ण वीर्य पदार्थ व शीत तथा मैला रहना इस रोग को पाले रहना है।

यदि यह रोग हो जाय तो इस बात का विशेष स्मरण रहे कि ३ रोज तक आंख में कोई दवा न डाली जाय पश्चात तीन रोज के दवा डालना प्रारम्भ करें।

तथा असावधानी व अन्ट सन्ट दवा डालने से यह रोग अपना भयंकर रूप धारण कर आंख को ले डूबता है अस्तु इसके निवारणार्थ शतशोनुभूत योग आगे दिये हैं।

हर किस्म की आँख दुखने पर

आई ड्रोपलेशन नं० १ Eye Drop Lotion No 1

जिंक सल्फ (Zinc Sulph) ३ ग्रेन
बोरिक एसिड (Boric acid) १० ग्रेन
कोकीन हाइड्रो क्लोर (Cocain hydroch) २ ग्रेन
डिस्टिल्ड वाटर १ औन्स

सबका मिश्रण स्वच्छ शीशी में रख लो।

मात्रा—दो तीन बूंद हर चार घंटे पश्चात डालो।

यह दवा आंखों में नहीं लगती।

आई ड्रोप लोशन नं० २ Eye Drop Lotion No. 2

नेत्र बिन्दु नं० २
आरगीरोल Argyrol ४५ ग्रेन
डिस्टिल्ड वाटर १॥ औन्स

नोट—डिस्टिल्ड वाटर के स्थान में नं० १ का गुलाब जल डालने से दवा और भी गुणप्रद हो जाती है।

दोनों का मिश्रण तय्यार कर हर दूसरे घंटेमें दो रोज तक डाल एक या दो रोज नागा कर दो जरूरत पड़ने पर पुनः डालो दवा आंखों में नहीं लगती बराबर डालना ठीक नहीं।

Eye Drop Lotion No. 3

नेत्रबिन्दु नं० ३

अरजेन्टी नाइट्रास	
Argenti nitras	४ ग्रेन
डिस्टिल्ड वाटर	२ औन्स

दोनों का मिश्रण २-२ बूंद हर ५-५ घन्टे पश्चात् डालो।

Eye Drop Lotion No. 4

नेत्रबिन्दु नं० ४

Silver proteinite	
प्रोटारगोल	१ औन्स
उम्दा गुलाब जल Rose water	२ पौंड

दोनों का मिश्रण तैयार कर बोतल में कर लो।

हर १-१ घन्टे बाद २-३ बूंद डालो नेत्राभिष्यन्द, नेत्र की लाली जलन व कड़क पर बहुत फायदा करता है पर याद रहे १ हफ्ता लगातार डालने पश्चात् फिर १ हफ्ता नहीं डालना चाहिये। वर्ना आंखें कुरूप हो जावेंगी। विशेष कर बच्चों के लिये ये बहुत मुफीद है और दवा आंखों में डालते ही शीतलता लाती है। लाली तथा रोगी को तत्काल चैन देती है बाज २ बालकों को १ या २ बार के डालने मात्र से ही फायदा नजर आता है इस दवा का विशेष गुण ग्रीष्म व शरद कालिक नेत्राभिष्यन्द पर होता है। वर्षा व हेमन्त ऋतु में इससे कम फायदा देखने में आया है। तथा बनी हुई दवा कभी खराब नहीं होती।

नेत्रबिन्दु नं० ५

Eye Drop Lotion No. 5

बोरिक ऐसिड	४० ग्रेन
कास्टिक	१० ग्रेन
उम्दा गुलाब जल	४ औन्स

उपरोक्त सब द्रव्यों का मिश्रण तय्यार कर हर दूसरे घन्टे में २-३ बूंद डालो।

गुण—नेत्राभिष्यन्द सुर्खी व जलन पर शीघ्र गुणप्रद है।

नेत्राभिष्यन्द पर

Zinci Oxide

(१) जिंक ऑक्साइड १-२ ग्रेन माता के दूध में घोल आंख पर डालो दिन को २-२ मरतबा डालो यह नेत्र रोगों पर उत्तम है विशेष कर नेत्राभिष्यन्द पर।

(२) नेत्रों के रोगों—लाली जलन व कड़क पर माता का दूध बार बार आंखों में टपकाना चाहिये।

(३) शुद्ध रसौत	१ औन्स
गुलाब जल	४ औन्स
शुद्ध फिटकरी	१ औन्स

सबका एकत्रित मिश्रण दिन के दो तीन बार आंख में डालो इस योग से शीतऋतु व वर्षाऋतु की आंख दुखनी (नेत्राभिष्यन्द) शीघ्र अच्छी होती है पर दवा जरा लगती है।

(४) झण्डा मार्का गुलाबी रंग, शुद्ध फिटकड़ी, बोरिक ऐसिड, भीमसेनी कपूर सबको बराबर ले १ प्रहर खरल कर शीशी में रखलो इसे शुद्ध शीशे की सलाई से आंख में आंजने से आंखों

नेत्राभिष्यन्द

(ले०—डा० के० डी० तलनियां चिकित्सक चूड़ामणि भिषगाचार्य प्रिन्सिपल श्री शिव कैलाश आयुर्वेद विद्यालय बागेश्वर अल्मोड़ा)

अक्सर शिशुओं को नेत्राभिष्यन्द (आंख उठना या दुखना) विशेष देखा जाता है यह रोग बड़ो उम्र वालों को बहुत कम होता है बालकों की गुहाइयों पर इस रोग के विकार प्रविष्ट रहते हैं। जो मक्खियों के द्वारा अन्य स्वस्थ्य बालकों में इसका रोगाणु प्रविष्ट होता है और वे बालक भी इस रोग से कष्ट उठाते हैं नेत्र की लाली, आंख न खोल सकना, तेज कड़क व जलन, इसका प्रधान चिन्ह है। इस पर भी शीत ऋतु में इसका विकार कम व ऊष्ण तथा वर्षा ऋतु में विशेष संक्रामण पाया जाता है ज्यों ही मार्च शुरू हुआ यह रोग फैलने लगता है एवं कुटम्ब के जहां एक बालक को यह रोग आ घेरता है वहां अन्य बालक भी इस रोग से नहीं छूटने पाते इतना ही नहीं एक बार का आक्रमण दो चार दिन शान्त होने पर भी पुनः फिर से नया आक्रमण प्रारम्भ हो ६ माह तक एवं अनवरत क्रम से बालकों को यह रोग सताता आता है। गुरु भोजन, ऊष्ण वीर्य पदार्थ व शीत तथा मैला रहना इस रोग को पाले रहना है।

यदि यह रोग हो जाय तो इस बात का विशेष स्मरण रहे कि ३ रोज तक आंख में कोई दवा न डाली जाय पश्चात् तीन रोज के दवा डालना प्रारम्भ करे।

तथा असावधानी व अन्ट सन्ट दवा डालने से यह रोग अपना भयंकर रूप धारण कर आंख को ले डूबता है अस्तु इसके निवारणार्थ शतशोनुभूत योग आगे दिये हैं।

हर किस्म की आंख दुखने पर

आई ड्रोपलेशन नं० १ Eye Drop Lotion No 1

जिंक सल्फ (Zinc Sulph) १ ग्रेन
बोरिक एसिड (Boric acid) १० ग्रेन
कोकीन हाइड्रो क्लोर (Cocain hydroch) २ ग्रेन
डिस्टिल्ड वाटर १ औन्स

सबका मिश्रण स्वच्छ शीशी में रख लो।

मात्रा—दो तीन बूंद हर चार घंटे पश्चात डालो।

यह दवा आंखों में नहीं लगती।

आई ड्रोप लोशन नं० २ Eye Drop Lotion No. 2

नेत्र बिन्दु नं० २
आरगीरोल Argyrol ५४ ग्रेन
डिस्टिल्ड वाटर १॥ औन्स

नोट—डिस्टिल्ड वाटर के स्थान में नं० १ का गुलाब जल डालने से दवा और भी गुणप्रद हो जाती है।

दोनों का मिश्रण तय्यार कर हर दूसरे घंटेमें दो रोज तक डाल एक या दो रोज नागा कर दो जरूरत पड़ने पर पुनः डालो दवा आंखों में नहीं लगती बराबर डालना ठीक नहीं।

Eye Drop Lotion No. 3

नेत्रबिन्दु नं० ३

अरजेन्टी नाइट्रास	
Argenti nitras	४ ग्रेन
डिस्टिल्ड वाटर	२ औन्स

दोनों का मिश्रण २-२ बूंद हर ५-५ घन्टे पश्चात डालो।

Eye Drop Lotion No. 4

नेत्रबिन्दु नं० ४

Silver proteinite	
प्रोटारगोल	१ औन्स
उम्दा गुलाब जल Rose water	२ पौंड

दोनों का मिश्रण तैयार कर बोतल में कर लो।

हर १-१ घन्टे बाद २-२ बूंद डालो नेत्राभिष्यन्द, नेत्र की लाली जलन व कड़क पर बहुत फायदा करता है पर याद रहे १ हफ्ता लगातार डालने पश्चात फिर १ हफ्ता नहीं डालना चाहिये। वर्ना आंखे कुरूप हो जावेंगी। विशेष कर बच्चों के लिये ये बहुत मुफीद है और दवा आंखों में डालते ही शीतलता लाती है। लाली तथा रोगी को तत्काल चैन देती है बाज २ बालकों को १ या २ बार के डालने मात्र से ही फायदा नजर आता है इस दवा का विशेष गुण ग्रीष्म व शरद कालिक नेत्राभिष्यन्द पर होता है। वर्षा व हेमन्त ऋतु में इससे कम फायदा देखने में आया है। तथा बनी हुई दवा कभी खराब नहीं होती।

नेत्राबिन्दु नं० ५

Eye Drop Lotion No. 5

बोरिक ऐसिड	४० ग्रेन
कास्टिक	१० ग्रेन
उम्दा गुलाब जल	४ औन्स

उपरोक्त सब द्रव्यों का मिश्रण तय्यार कर हर दूसरे घन्टे में २-३ बूंद डालो।

गुण—नेत्राभिष्यन्द सुर्खी व जलन पर शीघ्र गुणप्रद है।

नेत्राभिष्यन्द पर

Zinci Oxide

(१) जिंक औक्साइड १-२ ग्रेन माता के दूध में घोल आंख पर डालो दिन को २-२ मरतबा डालो यह नेत्र रोगों पर उत्तम है विशेष कर नेत्राभिष्यन्द पर।

(२) नेत्रों के रोगों—लाली जलन व कड़क पर माता का दूध बार बार आंखों में टपकाना चाहिये।

(३) शुद्ध रसौत	१ औन्स
गुलाब जल	४ औन्स
शुद्ध फिटकरी	१ औन्स

सबका एकत्रित मिश्रण दिन के दो तीन बार आंख में डालो इस योग से शीतऋतु व वर्षाऋतु की आंख दुखनी (नेत्राभिष्यन्द) शीघ्र अच्छी होती है पर दवा जरा लगती है।

(४) मछवा मार्का गुलाबी रंग, शुद्ध फिटकड़ी, बोरिक ऐसिड, भीमसेनी कपूर सबको बराबर ले १ प्रहर खरल कर शीशी में रखलो इसे शुद्ध शीशे की सलाई से आंख में आंजने से आंखों

का दुखना लाली व आंखों के कई रोग दूर होते हैं पर दवा लगती बहुत है। ५ वर्ष से कम उम्र के बालकों पर इसे प्रयोग नहीं करना चाहिये। योग उत्तम है।

(५) श्वेत गुलाब के फूल का स्वरस ले—किञ्चित् शुद्ध फिटकड़ी मिला आंख में डालने से आई आंख अच्छी होती है। यह कुछ कम लगती है व अच्छी है।

(६) नीम पत्र स्वरस में शुद्ध फिटकड़ी मिला आंख में २-३ बूंद डालने से नेत्राभिष्यन्द नष्ट होता है, दवा लगती है।

हे

हे शिशु !

रचयिता—श्री धरणीधर शर्मा शास्त्री आयुर्वेदाचार्य कछवा, मिर्ज़ापुर।

सुनि तव तोतर बात,
पवि हियहु हुलसात।
आनंद-कानन-नेह-नहाते,
आशा मलय समीर बहाते,
सुख-बसन्त पितु हिय उमंगाते,
जब मधुरी मुसकात,
सुन तव तोतर बात ॥१॥

चंचल चखन चपल चित किलकत,
इत-उत झपटि मगन मन थिरकत,
निर्निमेष वत्सलता निरखत,
परसि प्रफुल्लित गात।
सुन तव तोतर बात ॥२॥

वीर युवा बनि कीर्ति कमाते,
अरिमुख दरि रण रङ्ग मचाते,
सद्‌शाली कुटुम बनाते,
जनि जननी पुलकात।
सुनि तव तोतर बात ॥३॥

होगा भावी देशोत्थान,
पितरों को दोगे जलदान,
तुम से है कल्याण महान्,
आओ सुख मय तात।
सुनि तव तोतर बात ॥४॥

दर्शन, काव्य तर्क विज्ञाना,
बढ़ो, लहो, जग यश सन्माना,
अन्य देश को शिष्य बनाना,
हो ऋषियों की जात।
सुन तव तोतर बात ॥५॥

शिशु

शिशुपालन और हमारी भूलें

(लेखक—कविराज श्री शिवशरण जी वर्मा, फगवाड़ा)

प्रिय पाठक वृन्द !

शिशुओं की शोचनीय दशा आप से छिपी नहीं है। हमारे बच्चों का स्वास्थ्य दिन प्रति दिन गिर रहा है। रोग बढ़ रहे हैं। आप तनिक ध्यान से देखें तो मालूम होगा कि इनकी मृत्यु संख्या पहले से बहुत अधिक है। भारतवासियों की अधोगति के कारणों में शिशुपालन में की गई भूलों को भी शामिल किया जा सकता है। मेरा यह सदैव प्रयत्न रहा है कि वैद्य सम्मेलनों में पधारने वाले वैद्यों के सन्मुख इसका सही सही फोटो खींचा जावे। सम्मेलनों में सभी का अधिक ध्यान बूंटी प्रचार, सिद्धयोग सुनने वा सुनाने अथवा अनावश्यक प्रस्तावों के पास करवाने की ओर ही लगा रहता है। स्त्रियों व बच्चों की शारीरिक अधोगति की ओर बहुत कम ध्यान दिया जाता है। यही कारण है कि सम्मेलनों में साधारण जन समूह अधिक भाग नहीं लेते। सम्मेलनों के साथ २ बच्चों की नुमायश का भी प्रबन्ध होना चाहिये, ताकि वहां पर गृहस्थियों को बहुत उत्तमता से व सरलता पूर्वक शिशुपालन पर शिक्षा दी जा सके। माताओं को उनकी भूलों से आगाह किया जावे। आशा है आप इस सम्मति को पसन्द करेंगे। मेरा विचार है कि आगामी वर्ष फगवाड़े में जब पंजाब प्रान्तीय वैद्य सम्मेलन का अधिवेशन होगा तो मैं इस प्रोग्राम को अमली जामा पहनाऊंगा। इस वर्ष परोपकार सेवा समिति फगवाड़ा के वार्षिकोत्सव पर मैंने इसी प्रोग्राम को पेश किया था। जनता ने इसे बहुत पसन्द किया, कोई ८० बच्चों की शारीरिक परीक्षा की गई उन ८० बच्चों में से केवल १५ बच्चे ऐसे निकले जो कि सही २ मानों में स्वस्थ व सुन्दर कहे जा सकते थे। मेरा विचार था कि शायद स्त्रियां अपने बच्चों को नुमायश में लाकर तुलवाने व परीक्षा करवाने से हिचकचावें। परन्तु मेरा ख्याल उल्टा निकला। हमारी देखा देखी फगवाड़े की निकटवर्ती आर्य समाजों के वार्षिकोत्सवों पर भी इसी प्रोग्राम को अपनाया जाने लगा है। बच्चों के पालने का विषय बड़ा सरल व सुगम समझा जाता है पर यदि वास्तव में सोचा जावे तो मानना पड़ेगा कि यह विषय बड़ा विकट बड़ा पेचीदा और बड़ा ही ज़िम्मेवारी का है। नव मातायें तो इस में सर्वथा अनभिज्ञ होने के कारण बच्चों के लिये अधिक हानि का कारण बन जाती हैं। नवजात बच्चों की देख रेख प्रत्येक प्रकार से करनी पड़ती है। ऋतु का ख्याल, आहार का ख्याल, वस्त्रों का ध्यान, शुद्धताई का ख्याल, बच्चे के मिज़ाज का ध्यान तथा अन्य रोगों का ध्यान रखना आवश्यक होता है। माताओं को झट मालूम करना होता है कि बच्चे को किसी प्रकार का कष्ट अथवा पीड़ा तो नहीं, रात्रि को ज्वर तो नहीं हो जाता। कहीं कर्ण पीड़ा तो नहीं। क्या पाखाने का रंग ठीक है। इत्यादि इत्यादि। आप तनिक साधारण लोगोंके घरों में जाकर देखें पता चलेगा कि उनके मकानात में न तो शुद्ध वायु के

प्रवेश के लिये कोई झरोखा ही है और न ही धुआं निकलने के लिये चिमनी। बच्चों व माताओं को मकानों की निचली मंजिल में सीले व अन्धेरे कमरों में जीवन व्यतीत करना पड़ता है। सील धुआं व गंदा वायु शिशु व प्रसूता पर बहुत बुरा प्रभाव डालती है। बच्चों के बीमार होने पर किसी योग्य वैद्य से सलाह लेनी अनावश्यक समझी जाती है। आप विदेश के बच्चों के स्वास्थ्य पर ख़याल दौड़ाईये वहां लाखों रुपया बच्चों को खूबसूरत व स्वस्थ बनाने वाले नियमों के प्रचार पर लगा दिया जाता है। वहां के लोग ठोस कार्य करते हैं। इसी अभिप्राय के लिये बड़ी २ सभायें स्थापित हैं वे सभायें प्रयत्न करती हैं कि ग्रामों में जाकर स्त्रियों को इन सब बातों के सम्बन्ध में आगाह करते हैं। हम इस को एक दम से भूल गये हैं। माना कि बड़े बड़े शहरों में सरकारी तौर पर बच्चों की नुमायश का प्रबन्ध होता है। परन्तु वहां पर जनता पर पाश्चात्य चिकित्सा प्रणाली का प्रभाव डाला जाता है। आयुर्वेद को न तो ऐसी होने वाली नुमायशों से लाभ है और न लोगों के दिलों पर आयुर्वेद चिकित्सा प्रणाली के लिये किसी प्रकार का लगाव व प्रेम ही पैदा होता है। हमारे सम्मेलन तब तक सफल नहीं कहलाये जा सकते जबतक कि साधारण स्त्री पुरुष हमारे प्रोग्राम से लाभ न उठा सकें। मेरी हार्दिक इच्छा है कि इस अपील को प्रत्येक हृदय तक पहुंचाया जावे। मैं इसे क्रियात्मक रूप में देखना चाहता हूं।

बच्चों की बढ़ती मृत्यु संख्या के कारणों को कई भागों में विभक्त किया जा सकता है, तथापि उनका सदोष आहार इसका एक मुख्य कारण है। उन्हें जरूरत से कम या अधिक खिलाना पिलाना, बे समय खिलाना पिलाना, दोषयुक्त आहार दूधादि का देना, उन्हें उचित समय से पूर्व ही अन्नादि का देने लग जाना, मिट्टी खाना, दूध में खांड का प्रयोग अधिक करना अथवा बिलकुल ही न करना इत्यादि २ ऐसी बहुत सी बातें हैं कि जिसके कारण बच्चे का शरीर दुर्बल होना शुरू हो जाता है। कमजोरी दिन प्रति दिन बढ़ती रहती है। यहां तक कि वह सूख कर कांटा सा हो जाता है। उसकी शक्ल अत्यन्त डरावनी मुरझाई हुई, ग्रीवा पतली, टांगें कमज़ोर, रंग पीला, व अंग ढील पड़ जाते हैं। पाखाने का समय स्थिर नहीं रहता। प्रायः कब्ज़ रहता है। पाखाना हरा पीलासा, अथवा भूरा, या श्वेत व चिपकने वाला लेसदार होता है। अन्न का अनपचा भाग इसमें अधिक होता है। मातायें प्रेम वश अधिक दूध उन्हें पिला देती हैं। जिस का नतीजा बदहज़मी होता है। माता के अस्वस्थ होने से अथवा उसके अधिक समय तक दूध पिलाते रहने से वह दूध बच्चे के शरीर के लिये आवश्यक अवयव पहुंचाने के अयोग्य होता है। विलायती दूध के डिब्बे लाखों की संख्या में भारतवर्ष में बिकते हैं। साधारणतया समझा जाता है कि उक्त डिब्बे बच्चों के लिये लाभ कारी होते हैं पर यदि अधिक छान बीन से काम लिया जावे तो वह इत ने प्रयोजनीय सिद्ध नहीं होते जितना कि गाय का ताजा दूध अथवा धात्री व माता का अपना क्षीर। उनके आवश्यक अवयव (वाईटेमीन) बहुत घटे हुये होते हैं। उनसे पले हुये बच्चे इतने मजबूत नहीं होते।

बच्चों को बिस्कुट खिलाने का रिवाज दिन प्रति दिन बढ़ रहा है। बड़े बच्चों के लिए तो यह इतने हानिकारक नहीं पर दो वर्ष से नीचे की आयु वाले बच्चों के लिए बहुत बुरे साबित होते हैं। इन में निशास्ता अधिक होता है। और वह बहुत देर से पचता है। छोटे बच्चों के दांत नहीं होते और उनका आमाशय कोमल होने के कारण ऐसे भारी पदार्थ का आत्मीकरण नहीं कर सकता। तब हाजमे का खराब हो जाना अनिवार्य ही है। निर्धन गृहस्थी अपनी आर्थिकावस्था के कारण दूध का यथेष्ट प्रबन्ध नहीं कर सकते। दूसरी ओर धनाढ्य व्यक्ति भी इस दोष से मुक्त नहीं हैं। वे दूधके साथ २ मक्खन खोया मलाई का अधिक प्रयोग करते हैं। अतः दोनों श्रेणियों के बच्चे बीमार रहते हैं। यह कहा जा सकता है कि ग्रामों में बच्चे तनिक स्वस्थ व भारी वजनी होते हैं उसका कारण वहां की खुली वायु है। यदि शहरी बच्चों का भी खुली वायु में रोजाना घुमाने का प्रबन्ध हो जाय तो यह कमी बहुत हद तक पूरी हो सकती है। ग्रामों की गन्दगी मैले के ढेर, इस प्रोग्राम में बाधा डाल सकते हैं। इस बात के लिए वहां के लोगों में प्रचार की आवश्यकता है कि ऐसी गंदगी व ढेरादि फलांर रोग का कारण हो जाते हैं। शीतला, मसूरिका, विषैले ज्वर, मलेरिया, प्लेग हैजा, पेचिश ऐसी ही बातों से पैदा होते हैं। अमीर गृहस्थियों के बच्चों की खुराक में यदि कार्बोहाईड्रेट खांडादि का भाग बढ़ा दिया जावे और गरीब बच्चों के आहार में कार्बोहाईड्रेट को कम कर दिया जावे तथा वसा का भाग बढ़ा दिया जावे तो आमाशयिक रोगों की दशा कुछ सुधर सकती है। ये अमीर बच्चे जो अधिक मक्खन मिठाई के खाने के कारण खूब फूले हुए मोटे २ दिखाई देते हैं वास्तव में इतने मजबूत नहीं होते। वे शीघ्र थक जाते हैं और शीघ्र २ वमन दस्त ज्वरादि रोगों में फंसे रहते हैं। उनके माता पिता सदा ही डाक्टरों की राय से ग्राईपवाटरादि औषधियों का प्रयोग करते २ उनके मेदे को एक तरह से दुर्बल बना डालते हैं लेकिन असली कारण की ओर ध्यान तक नहीं देते। उनके आहार में यदि खांडादि का भाग बढ़ा दिया जावे तो आमाशय तनिक ठीक सा हो जाता है। पर यह देखने में बात आती है कि खांड के अधिक देने से चुनमुने पैदा हो जाते हैं पेट में जलन हो जाती है और अफारा हो जाता है।

अतः ऐसी दशा में गन्ने की खांड न देकर अंगूरी शर्करा अथवा ग्लूकोज देनी चाहिए। दूध में यदि मुनक्का के दो तीन दाने उबाल कर डाल दिये जावें तो भी बच्चे को बहुत लाभ पहुंचता है। पर कभी२ फीका दूध देना भी लाभकारी होता है। अफारा हटाने के लिए सोए का पानी दूध में डाल देना चाहिए। मातायें यदि तनिक ध्यान से काम लें तो बच्चों की बीमारियां उनके आहार का ख्याल रखने से ही दूर हो सकती हैं। पर हमारी मातायें असली कारण पर ध्यान न देकर धागे तावीज पर अपना विश्वास जमाए रहती हैं। इसमें माताओं का दोष भी क्या है जब उनको इस बात का पता ही नहीं है कि आहार के दोष से भी बच्चे बीमार हो सकते हैं, तो वह बहुत हद तक इस बात से

सर्व बालरोगों पर सर्वोत्तम स्वादिष्ट अर्क

(ले० - डा० के० डी० तलनियां भिषगाचार्य अलमोड़ा)

चूना कलई बिना बुझा हुआ) ढाई २॥ सेर चीनी (दानेदार बूरा-शर्करा) ढाई ऽ२॥ सेर अमलतास (गूदामात्र नया) पाव सेर-२० तो० हरड़ व शुद्ध टंकण—१५-१५ तोला गुलबनफशा, सौंफ स्वेतजीरा, गुलाब के फूल, उन्नाब, वायविडिंग, मुनक्का (द्राक्षा) सौंठ आठों १०-१० तोले, मुलैठी, पीपल छोटी काकड़ासिंगी तीनों ५-५ तोले, अतीस. सत्व नीबू दोनों १॥ २॥ तोले, इत्रगुलाब, चन्दन तेल, सत्व नौसादर, तेल दाल चीनी, १-१ तोला, कपूर देशी, फूल पोदीना (पिपरमन्ट) ६-६ माशे, सत्व अजवायन ३ माशे Tinct-Capsicum टिंचर कैपसीकम एक ड्राम Spt Choloroform स्पिरिट क्लोरोफार्म चार ड्राम Acid HydroCyanic dil. येसिड हाइड्रो स्यानिक डिल दो ड्राम।

विधि—चीनी, इत्र गुलाब, पिपरमेन्ट, कापूर, सत अजवायन, दोनों तेल, सत्व नीबू, सत्व नौसादर, टिंचर कैप्सीकम, स्पिरिट क्लोरोफार्म, येसि डहाइड्रो स्यानिक डिल, इनको छोड़ शेष सब वस्तुओं को जौकुट कर लो। चूने को साफ औटते १॥ऽ मन पानी में बुझालो। चूना घंटे-घंटे बाद एक बड़ी कलाईदार करछी से हिलाइये ऐसा १७ बार करके ३ घंटे बाद चूने के ऊपर जमी हुई मलाई फेंक दें। पानी धीरे कलई दार एक बड़े डेग या मिट्टी के मटके में डाल औ कुट वाली औषधियां भी डाल दे व हल्की आंच से पकावे अष्टमांश क्वाथ शेष रहने पर साफ कपड़े से तीन मरतबा छान २॥ सेर चीनी मिला पुनः आंच दे। एक तार की चाशनी हो जाने पर उतार ले व शीतल हो जाने पर पुनः छान नीबू सत्व व नौसादर सत्व का महीन चूरा मिला रख दे। दो रोज तक घंटे-घंटे भर बाद दवा हिलाते जावे पश्चात ७ रोज तक दवा के बरतन को न हिलावे फिर नवें रोज बाद ऊपर का अर्क या तो पिचकारी से खींच ले या धीरे से निथार ले। नीचे का जमा फाक उसमें न मिलने पावे। अब इस अर्क में काफूर अजवायन पेपरमिन्ट का पिघलाया हुआ अर्क और टिंचर कैपिसकिम, स्पिरिट क्लोरोफार्म, एसिड हाइड्रो स्यानिक डिल, गुलाब इत्र, तेल चन्दन व तेल दाल चीनी मिला कागदार शीशियों में भर ले।

गुण—यह बच्चों के सर्व रोगों पर उत्तम है।

बरी ठहराई जा सकती हैं। इस बात के दोषी हम स्वयं हैं जो इधर ध्यान तक नहीं देते। यह बल पूर्वक कहा जा सकता है कि हमारे बच्चों की मृत्यु संख्या दिन प्रति दिन बढ़ रही है, और बढ़ती रहेगी। अतः यही निवेदन है कि इसकी रोक थाम के लिए आवश्यक कदम उठाना चाहिए।

दुग्ध वर्द्धन का अनुभूत योग

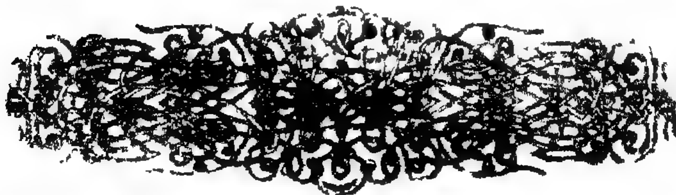
शतावर उत्तम	ऽ।।	शालव पञ्जे की	ऽ।।
असगन्ध	ऽ।	मूसली श्वेत	ऽ≈
मूसली स्याह	ऽ।	बीजबन्द काले	ऽ।
सौंठ	ऽ।	* गोला (खोपड़ा)	ऽ।।
* छुहारा	ऽ।	* बादामगिरी	ऽ।।
नागकेशर असली	ऽ–	*पिस्ता	ऽ≈
* दाखा बीज रहित	ऽ१	जायफल	ऽ–
लौंग	१ तोला	पीपल छोटा	१ तोला
मिर्च काली	२ तोला	त्रिफला	ऽ≈
अष्टवर्ग (निश्चित)	ऽ।।	क्षीर विदारी कन्द	ऽ६
बहमन श्वेत	ऽ।	* शहद	ऽ२
*मिश्री	ऽ५	* घी गाय का	ऽ१।।
* स्वर्णवर्क	१ तोला	तालमखाना	ऽ≈
कमलगट्टे	ऽ=	सिंघाड़े	ऽ=
गोक्षुर बड़े	ऽ=	* सत्व गिलोय	ऽ=
*ताजा खोवा	ऽ२		

निर्माण विधि—(*) इस निशान की वस्तुओं को छोड़कर अलग अलग सुखा कूट कपड़ छन कर ठीक ठीक तोलकर एक पात्र में करते जावो।

फिर शहद, मिश्री, घी, खोवा को छोड़ सब शेष समान की सिल बट्टे पर पिट्ठी कर लो। पश्चात इसे भी चूर्णों पर खूब मिलालो। अब ताजे खोये को घी में इतना भूनों कि बादामी रंग का हो जाय पर जलने न पावे पश्चात् जमीन में चासनी को उतार मिश्री का चूरा मिला लो जब मिश्री पिघल जाय तो उपरोक्त चूर्णादिक द्रव्य मिला खूब घोट लो। याद रहे शहद चासनी व दवा के शीतल होने पर ही मिलाया जावे। अब २-२ तोले के लड्डू बांध बाहर से यदि चाहो तो चांदी के वर्क लपेट दो।

मात्रा—१ लड्डू, पाव भर धारोष्ण गोदुग्ध के साथ यदि धारोष्ण दुग्ध न मिले तो स्वच्छ उबाला हुआ दूध ही पर्याप्त है।

गुण—माता को काफी दूध उतरेगा, निर्बलता दूर हो पौष्टिकता आवेगी तथा रक्त का सञ्चार होगा दिल दिमाग को पूर्ण ताजगी मिलेगी प्रसूता के सर्व रोग दूर हो आनन्द प्राप्त होगा तथा ये दुग्ध वर्द्धक लड्डू खाने में अत्यन्त स्वादिष्ट होंगे। तथा बालक को भी इसके सेवन से बलिष्ठ शुद्ध दुग्ध मिलेगा।



[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

"जीवन-सुधा के शिशुरोगविज्ञान का

सम्पादकीय

शिशु पालन

वैद्यक चिकित्सा के सुविख्यात पत्र जीवनसुधा का शिशु रोग-विज्ञान अङ्क पाठकों के सामने है। विद्वान लेखकों ने बालरोग सम्बन्धी और शिशु पालन विषयक बहुज्ञान संकलित लेखों से पत्र के इस विशेषांक की श्री वृद्धि की है। आगे चल कर पाठक उन्हें खुद ही पढ़कर उनसे लाभ उठायेंगे।

शिशु पालन और शिशुओं की व्याधि सम्बन्धी ज्ञानकारी पुस्तकें आजतक हिंदी भाषा में दुर्लभ क्या नहीं के बराबर हैं।

शिशु पालन के लिए जो कोई खास ज्ञान और विद्या की आवश्यकता है यह बात कम से कम हमारे देश में किसी ने भी नहीं सोची।

हमारी माताओं को तो शिशु पालन विषयक परमात्मादत्त प्राकृतिक ज्ञान के सिवाय और कुछ मालूम ही नहीं। पहले जमाने में शायद हमारी पूर्वजायें कुछ जानती थीं, लेकिन आजकल की लड़कियां इन बातों से इतनी अनभिज्ञ हैं कि देखने में दुःख मालूम होता है। आजकल भले ही लड़कियों के स्कूल और कालिजों में ज्योमिट्री, बीजगणित और भूगोल की काफी शिक्षा मिले, इतिहास की बड़ी घटनायें रात दिन रट के याद रक्खें लेकिन नारी जाति की जीवन मरण समस्या मातृत्व और शिशु पालन सम्बन्धी ज्ञान प्राप्त करने का कोई साधन नहीं। इस लिए ऐसे २ पत्रांक जिसमें इन विषयों पर सुप्रकाश डाला गया है। हमारे लिए विशेषतः स्त्रियों के लिए और शिशु चिकित्सकों के लिए परमावश्यक है।

मानव जाति का सार धन शिशु हैं। जिस देश और जिस जाति में स्वस्थ सबल और सुसन्तानों की जननी न हो तो उस जाति का धरातल से बिलुप्त होना अथवा निर्बल बनकर पराधीन और गुलाम होकर जिन्दगी बिताना सुनिश्चित है। भारतवर्ष में सन्तानों की जन्म संख्यामें कोई कमी नहीं है। लोक संख्या दिन पर दिन बढ़ती जा रही है।

बल्कि ३२ करोड़ से साढ़े पैंतीस करोड़ हो गये। भारत में शिशुओं की जन्म संख्या तथा मृत्यु संख्या में कोई कमी नहीं है। यहां पर साधारणतया एक२ और एक डेढ़ दर्जन बच्चे भी कुछ ज्यादा नहीं समझे जाते हैं। अधिक सन्तान वतीको भाग्यवती करके ही मानते हैं। निःसन्ताना नारी तो समाज और परिवार में घृणा और अश्रद्धा से देखी जाती है। "पुत्रार्थं क्रियते भार्या:।" यह एक संस्कृत कहावत है। पुत्र भारतीय जीवन का गृहस्थाश्रम का चरम लक्ष्य है, पुत्र ही पिन्डदाता नरक त्राता, पुत्र जनक जननी के परम सुख का कारण है। अतएव सन्तान प्राप्ति के लिए भारतीय नारियां जो कुछ करती हैं और कर सकती हैं सो भी थोड़ा है। निःसंताना

नारियों का देव पूजन, बार व्रत नेम आचार, तीर्थ, जप मंत्र करना यहां कौन नहीं जानता है? लेकिन उन्हीं गोदी के लाल आखों के तारों को किस ढंग से पालन करना होगा। किस प्रकार परवरिश करने से वह तन्दुरुस्त ताक़तवर और हर क़िस्म की बीमारियों के शिकार न बन कर सुखी जीवन व्यतीत कर सकते है इसी ज्ञान की अपूर्णता भारत के हर प्रान्त की स्त्रियों में है। सन्तान प्राप्ति के लिए उन्हें जितने रक़म बेरक़म के धर्माचरण सिखाई जाती हैं। सन्तान पालन के लिए कहीं शतांश से एकांश भी वह नहीं जानती हैं। यह उनका दोष नहीं है। यह हमारा दोष है। शिशु पालन, चिकित्सा विज्ञान का ही एक विभाग है। देश की चिकित्सक मण्डली को चाहिये कि सन्तान पालनऔर शिशु रोग चिकित्सा सम्बन्धी बातों पर प्रकाश डाल कर जन साधारण का उपकार करें।

शिशु जन्म के बाद नहीं बल्कि गर्भस्थ होने के दिन से ही शिशु की प्रकृति पालन पर ध्यान देना चाहिये। स्वस्थ माता पिता की सन्तान ही स्वस्थ होते हैं। दूषित रोग ग्रस्त माता अथवा पिता को सन्तानकी आशा करना व्यर्थ है। अतएव हरएक सन्तान कामी मनुष्य को अपनी सेहत के बारे में ध्यान रखना चाहिये। पितृ रोग, जिसमें फिरंग रोग (Syphilis) सर्व प्रधान है प्रधानत: यौवनावस्था के अत्याचार का फल है इस रोग में सूज़ाक की भांति लोग नि:सन्तान नहीं बनते, अपितु अधिक सन्तान, और विशेषत: रोग दूषित विकृत सन्तान उत्पन्न होती हैं। इस रोग में अधिकांश गर्भ नष्ट भी हो जाता है। इस रोग से ग्रस्त पिता को सन्तान बलवान और स्वस्थ होनी प्राय: असम्भव है। गूंगा, बहरा बनना दिमागी कमजोरी हड्डियों और ग्रन्थियों की बीमारियां लेकर आजीवन दुख भोगना उनके लिये मानो कर्म फल चुकाना है।

इस रोग की चिकित्सा आजकल बड़ी आसानी से हो सकती है। अस्तु उक्त रोग ग्रस्त व्यक्ति पिता अथवा माता बनने से पहिले भावी सन्तान की कल्याणशा कामना से अपने को निरोग बना लें, वरना इनके लिए नि:संतान ही होना अच्छा है। तपैदिक़ भी वैसा ही और एक भयंकर रोग है जो वंशगत व्याधि समझी जाती है। आज कल अवश्य तपैदिक़ (यक्ष्मा) आबो हवा के दोष से जनाकीर्ण शहरों में बहुत होने लगा है, लेकिन वंश गत होने के कारण सन्तानों पर शीघ्र आक-मण करना सम्भव है। मूर्छा, मृगी, वात व्याधि आदि भी वंशगत रोगों में शामिल हैं।

वंशगत रोगों को छोड़कर गर्भावस्था में भी माता के स्वास्थ्य के अनुसार सन्तान दीर्घायु, क्षीणायु बलिष्ठ, अथवा निर्बल हो सकती है। गर्भावस्था में माता का खाद्य, वस्त्र, परिश्रम, विश्राम, रहन-सहन आदि सभी बातों का असर भावी संतान पर होता है। अतएव सुसंतान प्राप्ति के लिये पहला कर्तव्य है गर्भवती माता की हिफाजत करना। गर्भकालीन अवहेलना की वजह से कितने अकर्मण्य, चिर रोगी जन्म लाभ करके वृथा भार से जगत को सताते हैं इसका क्या कोई ठिकाना है? गर्भिणी की शुश्रूषा की ओर काफी ध्यान देना चाहिये। आजकल हर सभ्य देश में गर्भावस्था में शिशु पालन

(Cantenetal clinics) के ऊपर बहुत जोर देरहे हैं। हमारे देश में भी वैद्यक ग्रन्थों में गर्भोपचार के लिये अनेक प्रकार के नियम सयम और पान भोजन की व्यवस्था है। अगर हम उन्हें न पालन करें और दुःख उठायें तो दोष हमारा ही है। जमीन की शक्ति लेकर ही तो बीज पैदा होकर शक्तिशाली वृक्ष बनता है। क्षेत्र ठीक नहीं हो तो फल कैसे ठीक होगा। माता का शरीर ही असल क्षेत्र है। मातृधर्म पालन करना प्रत्येक सुमाता का कर्तव्य है।

गर्भिणी चिकित्सा नारीरोग चिकित्सा का एक प्रधान अङ्ग है। गर्भ कालीन उपचारों को हर बालिका को सिखाना जरूरी है। बालिकाओं के स्कूल कालेज की पाठविधि से अन्य विषयों को हटा कर मातृ भाषा में जननी उपयोगी विषयों को सिखाना शिक्षा विभाग का कर्त्तव्य है। माता और शिशुओंके ऊपर ध्यान न देने तक हमारी जाति की प्राकृतिक उन्नति होना सर्वथा असम्भव है।

शिशु जीवन तीन भागों में बांटा जा सकता है। (१) गर्भ कालीन (Cautenatal) (२) शिशु कालीन (Infantlife) (३) बाल्यावस्था (Childhood)। गर्भकालीन जीवन तो दशचान्द्र मान मास यूं साधारण भाषा में नौ महिना दश दिन है। वह नौ महीना दश दिन माता के शरीर के रक्त से ही शिशु का पालन होता है। इन दिनों माता के शरीर की रक्त शुद्धि के ऊपर ही सन्तान का भावी समुदाय जीवन निर्भर है। गर्भ कालीन माता की हरेक पीड़ा का प्रभाव शिशु के ऊपर होता है। यूं भी देखने में आता है कि बसन्त मोतीझारा आदि रोगका गर्भस्थ शिशुके ऊपर भी प्रकोप हुआ है। इसलिए जहां तक बने माता को नीरोग स्थान में शुद्ध वायु युक्त कमरों में आनन्द पूर्वक संयमी जीवन बिताना चाहिए। अतिरिक्त नशीली चीजों को बरतना। अधिक मैथुन, अथवा परिश्रम, रंज, फिक्र, गुस्सा, गर्मी इन बातों से सन्तान रोगी और विकलांग पैदा होती है। अगर शारीरिक वैकल्य न भी हो तो मानसिक विकृति, कुस्वभावी होना तो अधिक सम्भव है। गर्भावस्था मे अभिमन्यु की जननी और नेपोलियन की माता युद्ध कथा श्रवण करती थीं और उनके अभिमन्यु और नेपोलियन जैसे वीर सन्तानों की उत्पत्ति इतिहास प्रसिद्ध है। माता जो कुछ करती है, जो कुछ सोचती है और जो कुछ बोलती है सभी बातों का असर सन्तान पर कुछ न कुछ होता है। भारतवर्ष में सन्तानों की कमी नहीं है। लेकिन दीर्घजीवी सुसन्तानों की खास कमी है। हर साल एक एक बच्चा जन देना और बाद में उन्हें अपने भाग्य से ही बचने के लिए छोड़ देना पशुओं का भी धर्म नहीं है। पशु सन्तान से मनुष्यसंतान जन्म समय में अधिक निसहाय और अपनी रक्षा करने में सर्वथा असमर्थ ही होती है। इसलिए मनुष्य जैसा बुद्धिमान प्राणी अपनी सन्तान के लिए हर विषयों को तैयार रखता है। माता के पास नौ महीने का समय है। इस नौ महीना के अन्दर भावी संतान के लिये सब कुछ तैयार रखना कर्तव्य है। बाज घरों में संतान प्रसव के समय मैंने देखा है एक टुकड़ा साफ कपड़ा, एक लोटा गरम पानी का भी मिलना मुश्किल हो जाता है। सिर्फ अशिक्षित घरों में नहीं पढ़े लिखे अच्छे २ परिवारों में भी यह बाते होती हैं। मानों संतान

प्रसव जैसी एक अचानक दैवी घटना है ? यह क्या कम मूर्खता है ? इस देश में छूतछात का बहुत परहेज है। अतएव प्रसूति घर में छूत छात की असम्भव प्रकार की व्यवस्थाएं होती हैं गर्भ कोई रोग नहीं है। सन्तान प्रसव भी कोई बीमारी नहीं। छूत की असली बीमारी मोतीझारा चेचक, हैजा, तपेदिक से लोग इतना परहेज नहीं करते हैं, जितना कि मामूली जापे में परहेज और छूतछात का वृथा आडम्बर फैला देते हैं, जिस से कभी २ प्रसूता और नवजात शिशु का भी जीवन संशय में हो जाता है। जापे के हरेक काम मैल और गन्दगी से भरे होते हैं। घर के जितने बेकार और मैले २ कपड़े तथा घर का सब से छोटा अन्धेरा बगैर ताजी हवा का कमरा, नीच जाति की धाय, फिर हजारों किस्म के रस्म रिवाजों की जकड़बंदी में भारतीय लालों के जन्म का शुभ मुहूर्त प्रारम्भ होता है। यह जन्म स्थान क्या ? कैदखाना में बंद होना जैसा है। अधिकांश घरों में भूत प्रेत के भय से ग्रसित घर वालों ने रोगों का भी इलाज न करवाके सयाने दिवाने गंडा तावीजों की शरण में प्रसूता और शिशु को छोड़ देते हैं। शिशु का धनुष्टंकार रोग जो कि आंवल नाल को मैली कैंची या छुरी से कतरने से होता है, उसका कारण भूतों का ही उपद्रव बतलाया जाता है। वैसे ही (nickets) सुखा अथवा श्मशान रोग (बालशोष) जो कि शरीर के अन्दर उपयुक्त खाद्याभाव के कारण होता है उसे भी लोग भौतिक व्याधि समझते हैं।

जापे से जो गड़बड़ी शुरू होती है, वह आगे भी चलती रहती है। शिशुकाल में शिशु को किस ढंग से पालन करना चाहिए, प्राय: माताएं यह जानतीं ही नहीं, बच्चों को समय असमय दूध पिलाना, जब रोवे जब जी चाहे स्तन दान करना माता और संतान दोनों के लिए हानि कर है। हर तीसरे घंटे में रात दिन में छै बार प्रथम छै माह के लिए ठीक है। रात को बच्चा और जच्चा दोनों को ही सोना चाहिये। रात भर बच्चे के मुंह में छाती लगा कर रखना बुरी आदत है, इससे सिवाय बदहजमी आदि बच्चे के रोगों और माता की कमजोरी के कुछ नहीं होता, बच्चे को ज्यादा दूध पिला कर बीमार करने के बाद (Boby weter) बेबी वाटर, ग्राईप वाटर, बालामृत आदि सेवन कराना, अथवा अपने दूध को खराब समझ कर छुड़वा कर डिब्बे के दूध पिलाना अथवा अन्न को देदेना हमारी माताओं का शिशु पालना विषयक ज्ञानाभाव का ही कारण है। बड़े घरानों में इन्हीं कारणों से बहुत बच्चे मरते हैं। अपने बच्चे को खूब दूध न पिला कर नीच जातीय उपमाता के हाथों सम्भाल देना फिर अपने बच्चे से उसे छुड़ा कर वह चाहे कोई भी देश में और कैसे भी बड़े से बड़े घर में हो बड़ी बुरी बात है। बच्चे को नियम पूर्वक दूध पिलाने में माता की सेहत और तन्दुरुस्ती नहीं बिगड़ती है।

माता का दूध धी शिशु के लिए अमृत है। जो इस अमृत से शिशु जीवन में वंचित हुआ है वह बड़ा अभागा है। जिस शरीर से शिशु की उत्पत्ति होती है, उसी शरीर का सार रस दूध ही उस सन्तान के जीवन का प्रारंभिक एक वर्ष, कम से कम दान्त निकलने तक खाद्य होना

उचित है। प्रथम छै माह तो केवल स्तन दुग्ध ही पिलाना चाहिए। अगर कोई कारणवश माता का शरीर अस्वस्थ हो और वह बच्चे को अपने दूध से पाल न सके तो बकरा का गधी का अथवा गौ का दूध ही पिलाना चाहिए। उपयुक्त जल मिश्रण से यह दूध विशेषतः बकरी का दूध बच्चों के लिए बड़ा मुफीद होता है। मगर डिब्बे का दूध जैसा ग्लाक्सो, हर्लिक्स आदि हो तो उसके संग फलों का रस जैसा अंगूर, अनार टिमाटर, सन्तरा आदि का रस सेवन करवाना चाहिए। एक मास की उम्र से चाय के चम्मच के बराबर दोनों वक्त देना चाहिए। फलों के रस में 'जीवनी का' (विटा मिन्म Vita mines) होती हैं। Vitamines शरीर धारण के लिए खाद्यों में अति आवश्यक वस्तु है। इस जीवनी का अभाव से ही मशान का मर्ज (Nichets) हड्डियां, टेढ़ी हो जाती हैं।

शिशुओं के उदर रोग और दन्तोद्‌भेद कालीन पीड़ायें होती हैं। माता के दूध में जीवनी का प्रचुर परिमाण में होना आवश्यक है। इस लिए माता के खाद्य में भी फल, ताजा दूध, मक्खन आदि होना चाहिए। खाद्य की कमी के कारण ही बहु शिशु मृत्यु होती है।

शिशु पालन में छः विषयों पर विशेष ध्यान देना चाहिए (१) खाद्य, (२) समय (३) नियम (४) विश्राम (५) वस्त्र (६) वजन

शिशु प्राकृतिक प्राणी है उसे शुरू से जो आदतें डाल दी जायेंगी, वह उसे ठीक ठीक पालन करता जायगा। जिन बच्चों को समय पर दूध पीना, नहाना, सोना इत्यादि की आदत पड़ जाती है वह नीरोग और माता को कम सताने वाले होते हैं। वे ही आदतें भविष्य में अच्छी आदतों की नींव बन जाती हैं।

खाने के अलावा बच्चों के कपड़ों के ऊपर भी काफी ध्यान देना चाहिए, रंग बिरंगी रेशम और नफीस कपड़े और जेवरों के बजाय जो कपड़े बदन पर ठीक आजावें और आवश्यकताओं को पूरा करें वही कपड़े अच्छे हैं। अधिकांश घरों में नवजात शिशु को कुरता वगैरा पहिनाना देशाचार के विरुद्ध समझते हैं, लेकिन आज बीसवीं सदी में इन देशाचारों के पीछे पड़ जाना बेवकूफी है। शिशु के जन्म से पहले ही उसके लिए कपड़ा लत्ता बनवा कर रखना चाहिए।

हवा और रोशनी हर पेड़ पत्तों के लिए जैसी आवश्यक है बच्चे के लिए भी वैसी ही चाहिए। शरीर के ऊपर काफी कपड़ा हो तो सर्दी में भी किवाड़ खोलकर कमरे में सो सकते हैं। इन मामूली बातों की उपेक्षा करके ही लाखों बीमारियों में आए दिन फंसकर हमारे अनमोल लाड़ले लाल दुनिया से चल बसते हैं। इस लिए हर देश की जन्म और मौत की संख्या से औसतन भारत की संख्या अधिक है। जहां ग्रेट ब्रिटेन और अमेरिका के संयुक्त राष्ट्रों में सैकड़ा छः बच्चे एक साल की उम्र में गुजरते हैं वहां हमारे देश में आधा से भी ज्यादा बच्चे गुजर जाते हैं। दिन पर दिन अमेरिका और अन्यान्य सभ्य देशों में जैसे सन्तानिग्रह के ऊपर नारियों का बड़ा ध्यान है, अगर भारत में जन्म की संख्या उसी परिमाण में कम होने लगे तो शीघ्रतया हमारी जाति का ह्रास होना सम्भव है।

आजकल के ज़माने मे हर साल एक २ बच्चा होना और मर जाने से कहीं सन्तति निग्रह के नियमों को पालन करना ही अच्छा है।

एक बच्चे की तीन साल की आयु के पहले दूसरे बच्चे का जन्म हो तो दोनों के लिए और उनसे बढ़कर माता के लिए मौत के बराबर है। कमजोर दस बच्चों की अपेक्षा स्वस्थ सम्पन्न दो ही सन्तान अच्छी हैं।

प्राचीनकाल म स्वस्थ दीर्घायु होने के लिए लोग संयमी नियमी और ब्रह्मचारी रहते थे। होनहार सन्तान के लिए माता पिता तपस्या करते थे। आजकल वह सुनहरा अतीत स्वप्नवत् है। हमने पाश्चात्य जाति का अनुकरण किया है तो अन्धानुकरण किया है। उनके अच्छे गुणों को तो अपनाया नहीं, उनके शिशु पालन स्वास्थ्याचार आदि का कोई असर हमारे ऊपर नहीं पड़ा है, हमने अपनाया है उनके फैशनों को, उनके सिनेमाओं को, उनकी देश की चीजों को। भारत जैसे विशाल देश में इस बीसवीं सदी में भी एक उपयुक्त शिशु-संस्था या शिशु आश्रम की शिशु शाला नहीं है, और उधर रूस जर्मनी आदि देशों में हजारों शिशु-शालायें (क्रेशे) आदि खुल गए हैं। हजारों नारियां शिशु-पालन कारिणी धात्री बन रही हैं। हमारी नारियों को ऐसे क्या काम हैं? लाखों विधवायें किस मुसीबत की रोटी खाती हैं। उन्हें बड़ी जल्दी और बहुत ज्यादा संख्या में चाहिए कि इन लोकहितकर कार्यों में हाथ बटावें। फिजूल गप्प लड़ाना, ताश, शतरंज खेलना और बहुत समय सो, बैठकर खोना मानों बड़े घरानों की स्त्रियों का उच्च कुलका अभिमान है। पुरुष जाति के हर क्षेत्र में प्रवेशाधिकार लाभ करने के लिये कौन्सिल असेम्बली तक में लड़ने वालियों के लिये यह तो एक ऐसा क्षेत्र है जहां पुरुषों का कोई अधिकार ही नहीं। देश और जाति को बनाने वाली माताओं का ही शिशु-पालन कार्य सबसे प्रधान और पहिला कर्तव्य है। पुरुष की जननी, पुरुष की धात्री, पुरुष को जिलाने वाली नारी-शक्ति क्या कोई साधारण वस्तु है। दुनियां अगर किसी के कब्जे में है तो नारियों के ही हाथों में है। नारी जाति अपना कर्तव्य नहीं समझ पाई है, इसलिए दुनियां में इतना द्वन्द और दुख है।

हमें कर्म चाहिये, कर्म म आनन्द है नारी का आनन्द शिशु-पालन में है। इसलिये शिशु-रोग चिकित्सा धीरे धीरे नारियों के हाथों में जाने लगी है। एक माता शिशु को जैसा समझ सकती है पुरुष का वैसा समझना कठिन है।

शिशुओं के रोगों में सब से प्रधान दांत निकलते समय की व्याधियां हैं। दांत निकलना शिशु-जीवन का एक संकट काल है। लेकिन दांत निकालना भी प्राकृतिक है। पहले से आहार विहार के नियमों को ठीक तरह पालने से दांत निकलने में तकलीफ कम होती है। आज कल बिजली के नेकलेस (गुलुबन्द) बहुत इस्तेमाल करते हैं। दांत निकलते समय माता को बड़ी सावधानी से खाना पीना और रहन-सहन की ओर खूब ध्यान देना होगा। दूध के दांत जिनमें कीलें (खवन्त) सब से ज्यादा तकलीफ होती है निकलने के बाद शिशुत्व समाप्त होकर बाल्य जीवन आरम्भ होता है। प्रथम का तीन वर्ष काल ही वही समय है। इसके बीच माता के और बच्‌-

संतान हो जाय तो बड़ी मुसीबत की बात होती है। इसी तीन वर्षकाल में बच्चा बोलना जो कि मनुष्य का सर्व श्रेष्ठ गुण है सीखता है। अगर किसी बच्चे में बोलना और सुनने का कोई व्याति क्रम है तो इसी उम्र में उसका जहां तक बने इलाज भी [illegible] लेना चाहिये।

[illegible] पांच वर्ष की आयु तक बच्चे के [illegible] का [illegible] भाग [illegible] बाल्य जीवन का प्रारम्भ है। पांच वर्ष [illegible] बाद बच्चे-विद्यारम्भ करने लायक हो जाते हैं।

यह [illegible] ही शिशु-जीवन-काल है। इसमें जो [illegible] और बीमारियां होती हैं, वा [illegible] [illegible] जो कुछ रोग होता है उसका फल मनुष्य [illegible] जीवन भोगता है।

शिशु-जीवन के प्रधान रोगों में माता [illegible], डिफ्थीरिया, [illegible] रोग (बालशोष) सर्दी, जुकाम, [illegible], मिरगी बात (Convulsions) प्रधान हैं। बाकी मनुष्यों को जो कुछ रोग होते हैं, [illegible] रोग और [illegible] तपेदिक शिशुओं को [illegible] है। चेचक के लिये बचपन में ही [illegible] टीका लगवा लेना अच्छा है। इसके बाद दो वर्ष के अन्दर और एक बार लगवा ले तो और भी उत्तम है। बचपन में [illegible] से टीका लग जाय तो बड़ा माता का भय बहुपरिमाण में जाता रहता है। चेचक से शकल सूरत बिगड़ जाती है। अनेक बार एक आंख बिकल और बेकार भी हो जाते हैं। गौओं को तपैदिक बहुत होता है और बकरियों को बिलकुल नहीं। इसलिए बच्चों को बकरी का दूध तो पिलाना अच्छा है ही अगर गाय का दूध पिलावें तो उबालकर ही पिलाना चाहिए। शिशु को जल देने में कभी रोकना नहीं चाहिये, नवजात शिशु को मीठा अथवा शहत मिला कर जल पिलाना चाहिये। रात को अथवा दिन के अन्य समय में प्यास हो तो दूध न पिलाकर जल पिलाना चाहिये, शुद्ध जल उबाल कर अलहदा सुराही में अथवा कोई [illegible] साफ पात्र में ढक कर रख लेना चाहिये।

शिशु एक प्राकृतिक प्राणी है। उसे प्रकृति के अनुसार ही पालना चाहिये अपने मनमर्जी नियमों से नहीं। फिर शिशु मूक प्राणी है। अपने रोग का कष्ट कह कर बताना उसके वश में नहीं है, इसलिये शिशु की जरासी भी तकलीफ को प्रारम्भ से ही गौर से इलाज करना चाहिये और शिशु रोगों के अभिज्ञ चिकित्सक व [illegible] वैद्य व डाक्टरों से ही चिकित्सा करानी चाहिये। झाड़ना फूंकना गंडा तावीज ही [illegible] चिकित्सा का प्रधान उपाय नहीं है। इन उत्पातों के कारण शिशुओं का [illegible] होता है। बच्चा पैदा होने के [illegible] लेना चाहिये। नवजात शिशु का वजन ७ से १२ पौंड यानी [illegible] सेर से [illegible] सेर तक होता है। [illegible] पौंड के नीचे के वजन वाले बच्चों का जीना और पलना मुश्किल है। स्वस्थ शिशु छै मास के बाद दुगुना और एक साल के बाद तिगुना वजन का होता है ६, १२, १८ पौंड, अथवा ७, १४, २१ पौंड वजन साधारण भारतीयों के बच्चों के लिये ठीक है। दूसरे वर्ष में २८ पौंड और तीसरे वर्ष में ३२ पौंड ठीक वजन है। वजन लेने में वहम करने की कोई बात नहीं, वजन से ही बच्चे की

सेहत का ठीक २ पता चलता है।

अतएव शिशु पालन के लिए इन दश नियमों को हमेशा ध्यान में रखना चाहिये।

१ शिशु प्राकृतिक प्राणी है प्रकृति अनुसार उसके सब काम के लिये समय नियत होना आवश्यक है समय पर दूध पिलाना, निहालाना, सुलाना और खिलाना चाहिये।

२ शिशु बुद्धिजीवो मनुष्य प्राणी है। उसे पशुओं की भांति पालन न करके बचपन से जैसे उसकी बुद्धि का विकास हो इस ढंग से पालना चाहिये। शिशु रंगीन चित्रों को और उजाले को बहुत चाहता है। शिशु के मनोरंजन के ऊपर सर्वदा ध्यान रखना चाहिए।

३ शिशु के लिये शुद्ध वायु और सूर्य किरण चाहियें।

४ शिशु के लिये मातृ दुग्ध अमृत है। उस का खाद्य और, पानीय शुद्ध, हल्का और बल वर्द्धक होना चाहिये।

५ शिशु को अच्छी आदतों के आधीन करना चाहिये।

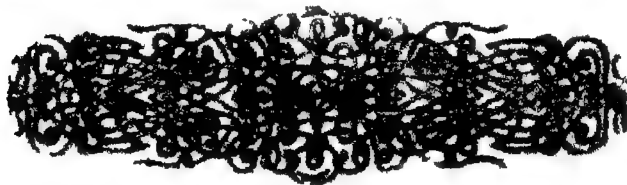
६ शिशु का वजन तोलना चाहिये।

७ सर्वदा उसे साफ सुथरा रखना चाहिये। निहलाना, मुख, दांत, केश, नाखून और चर्म परिष्कार रखना चाहिये।

८ शिशु के वस्त्रादि साफसुथरे ऋतु अनुसार हलके, ऊनी, सूती आदि होने चाहिए। भारी जेवर, वस्त्र और अत्यधिक आभूषणों का आवश्यकता नहीं है। वस्त्र शरीरोपयोगी न ज्यादा ढीला अथवा तंग हो। रोजाना कपड़े बदल देना चाहिए टट्टी पेशाब से सने हुए कपड़ों में बच्चे न रहने पावें। इन दस नियमों को ध्यान देकर शिशु का पालन किया जावे तो आशा है माताओं को शिशु वियोग और रोगग्रसित शिशुओं के लिए दुःख उठाना नहीं पड़ेगा।

भारत के हर प्रांतमें शिशुशालाओं और शिशु पालन सम्बन्धी शिक्षा संस्थाओं का आवश्यकता है। जन साधारण और सरकार दोनों को इस ओर ध्यान देना चाहिए।

अब मैं खुद और अधिक कुछ शिशुपालन के बारे में लिखकर शिशुपालन और शिशु रोगों के बारे में विद्वान लेखकों के लेखों की तरफ पाठकों का ध्यान दिलाती हूं। मुझे आशा है इस विशेषाङ्क की विशेषता से सर्व साधारण लाभ उठायेंगे। —डा० कुन्तलकुमारी देवी



अनुभूत प्रयोग

नं० १ बच्चों की घुट्टी—

यदि कब्ज हो तो बनफशा, सनाय, अमलतास का गूदा हर एक तीन माशा बड़ी हैड़, छोटी हैड़, बायविड़ंग, बाबनुम्बा, गुलाब का फूल हर एक दो माशा, दाख उन्नाब, हर एक ३ दाने १० तोला पानी में भिगो कर २,४ उबाल देलें, छानकर थोड़ी सी तुरंजबीन और बूरा मिलाये, दिन में २, ३ बार कपड़े की बत्ती से चुसाये।

नं० २ जन्म घुट्टी—

सौंफ मा० १, मुनक्का दा० १, बायविड़ंग, बाकसु, नर कचूर, बकल हैड़ बड़ी, गुलाब का फूल, सनाय, हर एक १ माशा उन्नाब दा० १ अमलतास का गूदा मा० ६ (यदि बच्चे को तीन दस्त से अधिक आवें तो इस घुटी को देना बन्द करदें)

नं०३—(बाज बच्चों में पैदा होने से दूसरे से पांचवें दिन तक कामला (आंखें पीली होना) रोग हो जाता है। यदि यह हल्का सा हो तो दो तीन दिन में स्वयं ही जाता रहता है नहीं तो उसकी माता को ये दवाइयां पिलानी चाहियें। (A) अर्क मकोय ५ तो० अर्क कासनी ५ तो० शर्बत अनार ३ तो० मिलाकर प्रातः व सायंकाल पिलावे। १०,१० बूंद शर्बत दीनार बच्चे को चटायें।

(B) कसौंदी की १ पत्ती मां के दूध में पीसकर बच्चे को पिलावें।

(C) यदि कब्ज होवे तो पहले अरंडी का तेल माशे २ मां के दूध में मिलाकर पिलाए बाद में हाइडूरजराई कम कोटा ½ ग्रेन, सोडा बाई कार्ब २ ग्रेन, पल्वरियाई कम्प० २ ग्रेन इसकी १ पुड़िया बनावे। ऐसी १-१ पुड़िया सुबह शाम मां के दूध में मिलाकर बच्चे को पिलावें।

नं० ४—बच्चे की नाभि फूलना Umbilical Hermia जिसमें नाफ बाहर को उभर आती है। प्रयोग—कपड़े की १ गद्दी रखकर बारीक रबड़ की पट्टी से लपेट दें। या शीशे का बुरादा या सुरमा पोटली में बांधकर फूली हुई नाभि पर रख के कपड़ा या रबड़ की पट्टी लपेट दें। यह प्रयोग ३, ४ महीने तक बराबर जारी रक्खे।

नं०५—बच्चे का नाभिशोथ

नाल काटने के बाद यदि बच्चे की नाभि पक जावे तो उसे नीम के पानी या कार्बोलिक लोशन से धो दिया करें और यह लेप करें, मुरदासंग, सेंदूर, सेलखड़ी इन्हें सुर्मे के मानिन्द बारीक पीसकर रुई से जख्म पर छिड़क दें। बच्चे को कब्ज न होने दे।

नं० ६—बच्चे की आंख दुखना।

प्रयोग, एक रत्ती फिटकरी २॥ तोले गुलाब के अर्क में घोलकर १, १ बून्द दिन में दो तीन बार डालें। और आंख के चारों तरफ गिलेअरमनी फिटकरी, छोटी हड़, मैंहदी के पत्ते हर एक २ माशे, अफीम १ रत्ती मां के दूध में पीस कर लेप करें।

नं० ७—बच्चों की खांसी—

काकड़ासिंगी बहुत बारीक पीसकर थोड़े शहद में मिलाकर दिन में कई बार करके बच्चे को चटावे। अगर कब्ज और सीने पर बलगमव हुत हो तो गुलबनफ़शा, मुलहठी, गाजुवां, सौंफ, हंसराज, १-१ मा० मबीज मुनक्का दो दाने, अंजीर चौथाई दा०, खत्मी, खुब्बाजी १-१ मा० सबको दो छंटाक पानी में उबाल लें जब चौथाई रह जावे तो छानकर शहद या पुराना गुड़ ६मा० मिलाकर थोड़ा थोड़ा पिलावें। यदि बच्चे को पैदायश के वक्त से चालीस रोज तक ३ मा० शहद रोज़ाना चटा दिया करें तो पसली की बीमारी न होगी।

नं० ८—बच्चों की काली खांसी—

(Whooping cough)

अफीम चार माशे, जाफ़रान तीन माशे, दालचीनी ३ मा०, सौंफ ४ मा०, गुग्गल ४ मा०, गोन्दकतीरा ४ मा०, जहरमोहरा ४ मा०, काकड़ासिंगी ४ मा०, बारहसिंगा जला हुआ ४ मा०, सबको बारीक पीसकर मीठे अनार के जुलाब में बाजरे बराबर गोलियां बनावें। बहुत छोटे बच्चे को एक गोली, उससे बड़े को दो, मां के दूध में या अर्क गाजुवां के साथ दें अकसीर है।

नं० ९—बच्चों की पसली रोग—

सोंठ ३ मा०, काली मिर्च ३ मा०, पीपल ३ मा०, यवक्षार ३ माशा, जदवार ३ माशा, चोक ३ मा०, सुहागा भुना हुआ ३ माशा सबको लेकर शहद में घोटकर बाजरे बराबर गोलियां बनावें। दो रत्ती गोलियां मां के दूध में घोलकर दें, ज्यादा बड़े बच्चे को उसकी उमर के मुताबिक।

नं० १०—बच्चों की छाती पर बलगम बोलना—

इसमें रोगनबादाम में मोम डाल कर पिघलाकर छाती पर मालिश करें।

नं० ११—बच्चों की पसली (डब्बा)—

अमलतास का गूदा माशा ३, कुड़े की छाल माशा ३, सिंभालू के बीज नग २, चिड़ियों की बीट नग ४, दस तोला पानी में उबालें जब ढाई तोला रहे छानकर १ तोला शहद मिलावें। दिन भर में ३-४ बार करके पिलावें।

(अनुभूत आयुर्वेदाचार्य पं० देवकीनन्दन शर्मा देहली)

नं० १२—बच्चे की हिचकी—

बच्चे की बदहज्मी का इलाज करें, गर्दन तक पानी में बिठावें। अर्क सौंफ, अर्क पोदीना या अर्क सोया थोड़ा थोड़ा पिलावें। मोर के पंख का चन्दा जलाकर थोड़ा सा शहद में मिलाकर चटावें।

नं० १३—बच्चे को ज्यादा प्यास लगना—

इसमें बंशलोचन ६ माशा, कमलगट्टे की गिरी १ तोला इसको एक मिट्टी के बर्तन में आधपाव अर्क गाजुवां में भिगोवें इसी में से जरा जरासा पिलाते रहें।

नं० १४—बच्चे का पेट अफरना—

अरंडी के तेल में २-४बून्द तारपीन का तेल मिलाकर पेट पर चुपड़ दें और रुई से हल्का हल्का सेकें। सौंफ, नरकचूर, कालीहड़ हर एक ४ माशा, सुहागा भुना हुआ १ माशा, १ रत्ती हींग सबको पीसकर अदरक के पानी में मूंग बराबर गोलियां बनावें। एक गोली दिन में २-३ बार दें।

पुस्तक परिचय

(१) पंचभूत विज्ञान—

मूल संस्कृत और हिन्दी भाषानुवाद सहित, आकार २०×३० १६ पेजी, पृष्ठ संख्या ३१० पुस्तक की छपाई वगैरा प्रशंसनीय है। मूल्य २) प्रणेता और प्रकाशक आयुर्वेदिक एण्ड यूनानी तिब्बि कालेज देहली के सीनियर प्रोफेसर, आयुर्वेद के प्रकाण्ड पंडित कविराज श्री उपेन्द्रनाथ दास जी भिषगाचार्य काव्य, व्याकरण, सांख्य तीर्थ, सांख्य सागर सदर बाजार (देहली)। यद्यपि आयुर्वेद शास्त्र के भित्ति स्वरूप पंचभूतों का वर्णन चरक सुश्रुत आदि आयुर्वेदीय तथा पुराण, दर्शन वेदादि में विद्यमान होते हुये भी उन २ आचार्यों के मत भेद तथा प्रकारान्तर से विशेष वर्णन करने के कारण अब कुछ दिन से पाश्चात्य वैज्ञानिक सम्प्रदाय इस पाञ्चभौतिक सिद्धान्त को कपोल कल्पना एवं अवैज्ञानिक बता कर इसका मूलोच्छेद करना चाहते हैं। इसी पंच भूत के स्वरूप निर्णयार्थ गत नवम्बर मास में पुण्य क्षेत्र बनारस में एक अभूत पूर्व विद्वत सम्मेलन हुआ था, उस सम्मेलन में पञ्चभूत पर जितने भी आक्षेप हो सकते थे वे सब २० प्रश्न विचारार्थ सम्मेलन में पेश किये गये थे। उन्हीं प्रश्नों को लक्ष्य कर श्री कविराज जी ने प्रस्तुत पुस्तक में अपनी अकाट्य युक्ति व तर्क द्वारा प्रमाणों सहित पञ्चभूतों का स्वरूप निर्णय करते हुये आधुनिक विज्ञान वाद के साथ तुलना की है, और स्थान २ पर पाश्चात्य वैज्ञानिक सिद्धान्तों की अपूर्णता व अस्थिरता को दिखाया है, निःसन्देह इस पुस्तक में पाञ्च भौतिक जैसे गूढ़ सिद्धान्त को ऐसा सरल हिन्दी भाषा द्वारा समझाया गया है, कि जिससे इस एक ही पुस्तक को पढ़ने के बाद पञ्चभूत विषयक ज्ञान में अन्य पुस्तक देखनेकी आवश्यकता नहीं रहती। वैद्यबन्धु तथा विद्वान पाठकों से हम अनुरोध करते हैं कि वे इस अभूत पूर्व रचना से लाभ उठाकर कविराज जी के परिश्रम को सफल करें।

त्रिदोष विज्ञान—

इसके भी रचयिता, प्रकाशक, साइज, छपाई वगैरा सब उपरोक्त पञ्च-भूत विज्ञानवत् ही हैं। केवल भेद इतना है कि इसकी पृष्ठ-संख्या २८० और मूल्य १।।) है। आयुर्वेद के आधार भूत त्रिदोष सिद्धान्त पर आधुनिक वैद्यों ने भी त्रिदोष के स्वरूप, गुण, धर्मादि के विषय में कितने विरुद्ध मत मतान्तरों की सृष्टि करदी है, यह बात आयुर्वेदज्ञों से छिपी नहीं है, उन आक्षेपों का निराकरण करके त्रिदोष का सिद्धान्ततः स्वरूप, गुण, धर्मादि सिद्ध करने के लिये काशी विद्वत्सम्मेलन में जो विचार्य विषय रक्खे गये थे उन्हीं को लक्ष्य कर क्रमशः यह पुस्तक लिखी गई है, प्रस्तुत पुस्तक में विद्वान लेखक ने दर्शन और विज्ञान की सहायता से सिद्धान्ताभास विरुद्ध मत मतान्तरों का खण्डन करके त्रिदोषवाद के सिद्धान्त को इस प्रकार सरल और सार गर्भित युक्तियों से वर्णन किया है जिनको समझ लेने के बाद त्रिदोष वाद में सन्देह करने का अवकाश ही नहीं रहता, परन्तु इस पुस्तक को पढ़ने से पूर्व पञ्चभूत विज्ञान को अवश्य पढ़ लेना चाहिये, हमारी सम्मति में इन दोनों पुस्तकों को आयुर्वेद विद्यालयों के पाठ्य क्रम में रखना चाहिये, क्योंकि प्रायः अर्ध शिक्षित वैद्य व छात्र ही आधुनिक विज्ञान से मोहित होकर आयुर्वेद के सिद्धान्तों की उपेक्षा करने लगते है। हम कविराज जी की इन दोनों अपूर्व रचनाओं का हृदय से स्वागत करते हैं और अपने कृपालु ग्राहकों से अनुरोध करते हैं कि वे कम से कम एक बार आपकी इन दोनों पुस्तकों को मंगा कर अवश्य पढ़ें।

—सम्पादक

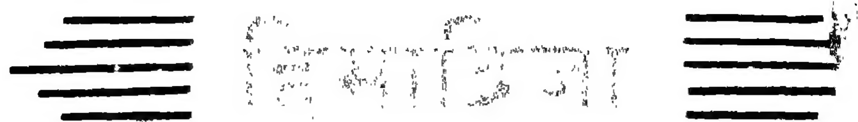
निवेदन

प्रिय पाठक गण !

आज हम उस परम पिता जगन्नियन्ता भगवान् की कृपासे जीवन सुधा का यह "शिशुरोग-विज्ञान" आपके कर कमलों में उपस्थित कर रहे हैं। हमारी उत्कट इच्छा थी कि हम इस विशेषाङ्क को और भी सर्वाङ्गपूर्ण एवं सुन्दर सुपाठ्य ठोस सामग्री से परिपूर्ण करते परन्तु विशेषाङ्क का कलेवर बढ़ जाने के भय से फिर भी इसको सफल एवं उपयोगी बनाने के लिये निरन्तर परिश्रम करके जो कुछ हम तैयार कर सके हैं वही आपकी भेंट करते हैं।

सब से प्रथम हम अपने कृपालु श्रद्धेय माननीय श्री० डा० त्रिलोकीनाथ जी वर्मा सिविल-सर्जन महोदय के अत्यन्त आभारी हैं जिन्होंने अपने अमूल्य चित्रों को देकर इस विशेषाङ्क के सुन्दर बनाने में बड़ी सहायता दी है, और साथ ही हम अपने ओजस्वी लेखक महोदय श्री० डा० वेदव्यास दत्त जी शर्मा शास्त्री तथा श्रीमती डाक्टर कुन्तलकुमारी जी देवी के अत्यन्त अनुगृहीत हैं जिन्होंने हमारी प्रार्थना पर अपना अमूल्य समय देकर इस विशेषांक का सम्पादन कार्यभार स्वीकार कर अपनी अमृतमयी रचनाओं से इसे विभूषित किया है। इसी प्रकार हम अपने कृपालु लेखक श्री डा० कन्हैया-लाल जी जैन मैडीकल आफिसर children free dispensary काजीहौज देहली महोदय का अत्यन्त धन्यवाद करते हैं कि जिनकी कृपा से ही हमें स्थानीय योग्य डाक्टर महोदयों की अमूल्य रचनायें प्राप्त हुईं और अन्त में हम अपने कृपालु श्रद्धेय लेखकों को भी नहीं भूल सकते कि जिन्होंने अपने अमूल्य लेख भेज कर इस विशेषाङ्क को सुन्दर सुपाठ्य रचनाओं से पूर्ण किया है, परन्तु फिर भी हम अपने कृपालु लेखकोंसे एक नम्र निवेदन करना चाहते हैं कि हमने विशेषाङ्क की विषयसूची में यह लिख दिया था कि जो लेखक महोदय जिस विषय पर लिखना स्वीकार करें वे उन विषयों की सूचना दे दें ताकि शेष विषयों को भी पूरा कर दिया जावे परन्तु लेखक वर्ग ने हमारे निवेदन पर ध्यान नहीं दिया। फल यह हुआ कि एक ही विषय पर कई लेखों के आने से पुनरावृत्ति हो गई। किसी किसी महानुभाव ने सभी विषयों पर थोड़ा २ लिख दिया। इसलिये हम सम्मानास्पद लेखक मंडल से नम्र निवेदन करते हैं कि वे अपने लेखों में मौलिकता व अनुभवपूर्ण खोजों का ही अवश्य ध्यान रखें, केवल ग्रन्थानुवाद से काम नहीं चल सकता। अन्त में मैं अपने माननीय लेखक वर्ग तथा कृपालु ग्राहकों से सविनय निवेदन करता हूं कि वे भविष्य में भी सदा स्नेह पूर्ण दृष्टि रखेंगे। तथा विशेषाङ्क के विस्तार के भय से जिनकी अमूल्य रचनायें हम नहीं छाप सके हैं उनके लेख भविष्य में अवश्य छापे जावेंगे।

सम्पादक भगवद्देव शर्मा



रक्त विकार की अचूक औषधि

हिमालय पर्वत की उन दुर्गम चोटियों की जो हज़ारों मन बर्फ़ से ढकी रहती हैं, एक विशेष जड़ी पाई जाती है। प्राचीन काल से ऋषि मुनि इस औषधि का प्रयोग करते आये हैं। १२० वर्ष हुये जब हमें पहले पहल यह बूटी एक पहाड़ी रियासत के राजा साहिब की कृपा से प्राप्त हुई थी। तब से आज तक लाखों रोगियों पर इसे आज़माया गया और हमेशा गुणकारी पाया है।

के कारण पैदा हुये तमाम रोगों की एक मात्र अचूक दवाई है। एक पैकेट सात दिन के लिये काफ़ी है क़ीमत १ पैकेट केवल १) डाक व्यय पृथक।

बृहत् आयुर्वेदीय औषध भाण्डार, चांदनी चौक, देहली

Title Printed at the [illegible] Press Darba Kalan DELHI